२. गरुड़ की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९. १०)।

वातस्कंध—पुराणों में निर्दिष्ट एक देवतासमूह, जिस में सात मरुत् गणों के देवता समविष्ट हैं (ब्रह्मांड. २.५. ७८-८०, मरुत् देखिये)।

२. इन्द्रसभा का एक महर्षि (म. स. ७.१२)।

वातापि—एक असुर, जो ह्राद नामक असुर का पुत्र, एवं इल्वल नामक असुर का छोटा भाई था। अगस्त्य ऋषि के द्वारा, इसका एवं इल्वल का गर्वहरण होने की कथा महाभारत में प्राप्त है (म. व. ९७.४९३*)। पुराणों में इसे विप्रचित्ति राक्षस का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ६.२६; विष्णु. १.२१.११)।

ब्रह्मांड में इसे तेरह सैंहिकेय असुरों में से एक कहा गया है, एवं परशुराम के द्वारा इसका वध होने की कथा वहाँ प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६.१८-२२)।

२. एक राक्षस, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३. ६.१८-२२)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

वातायन—उल नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम।

वातावत—वृषशुष्मन् नामक आचार्य का पैतृक नाम।

वात्सतरायण—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वात्सप्र—एक व्याकरणकार, जिसके 'य' कार एवं 'व' कार के सूक्ष्म उच्चारण के संबंधित मतों का निर्देश 'तैत्तिरीय-प्रातिशाख्य' में प्राप्त है (तै. प्रा. १०.२३)

वातिक—एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध के काल में वृत्तनिवेदन एवं वृत्तप्रसारण का काम करता था।

दुर्योधन एवं युधिष्ठिर ने क्रमशः 'वैष्णवयज्ञ' एवं राजसूय यज्ञ किये। इन दोनों यज्ञसमारोह में वातिक लोग उपस्थित थे, जिन्होंने सारे कुरुराज्य में वृत्त फैलाया कि, युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के हिसाब में दुर्योधन का वैष्णव यज्ञ बिलकुल फीका, अतएव अयशस्वी था (म. व. २४३.३-४)।

भारतीय युद्ध के निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रसंगों में भी वातिकों के उपस्थित होने का निर्देश प्राप्त है:-१. जयद्रथ-वध के समय हुआ संकुलयुद्ध (म. द्रो. १२०.७२); २. अश्वत्थामा-द्रुपदयुद्ध (म. द्रो. १३५. ३९); ३. दुर्योधन-भीम द्वंद्वयुद्ध (म. श. ५४); ४. दुर्योधन की मृत्यु (म. श. ५७. ५९)।

आगे चल कर वातिकों के द्वारा ही, दुर्योधनवध की वार्ता अश्वत्थामन्, कृप एवं कृतवर्मन् को प्राप्त हुई (म. श. ६४.१)। संभव है, संजय भी वातिकों में से एक था।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६२)।

वात्सि—सर्पि नामक आचार्य का पैतृक नाम। वत्स का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा (ऐ. ब्रा. ६.२४.१६)।

वात्सीपुत्र—एक आचार्य, जो पाराशरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)। अन्यत्र इसे भारद्वाजीपुत्र का शिष्य कहा गया है (बृ. उ. ६.४. ३१ माध्यं.)। इसके शिष्य का नाम पाराशरीपुत्र ही था। वत्स के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने के कारण, इसे 'वात्सीपुत्र' नाम प्राप्त हुआ होगा।

वात्सीमांडवीपुत्र—एक आचार्य, जो पाराशरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम भारद्वाजीपुत्र था (बृ. उ. ६.४.३० माध्यं.)।

वात्स्य—एक आचार्य (सां. आ. ८.३; बाध्व देखिये)। ऐतरेय आरण्यक में इसे बाध्व कहा गया है।

२. एक आचार्य, जो कुश्रि नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शांडिल्य था (बृ. उ. ६.५. ४ काण्व.)।

३. एक आचार्य, जो शांडिल्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम गौतम था (बृ. उ. २. ६.३, ४.६ काण्व.)। शतपथब्राह्मण में भी इसका निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. ९.५.१.६२; १०.६.५.९)।

४. एक ऋषि, जो वत्स्य नामक ऋषि का शिष्य था। यह जनमेजयसर्पसत्र के समय उपस्थित था (म. आ. ४८.९)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से भी यह मिलने आया था। इसके नाम पर कई ज्योतिषशास्त्रविषयक ग्रंथ उपलब्ध हैं (C.C.)।

५. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

६. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में शाकल्य नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

७. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'वत्स'।

वात्स्यायन—एक आचार्य, जो 'वात्स्यायन कामसूत्र' नामक सुविख्यात कामशास्त्रविषयक ग्रंथ का रचयिता था।

विष्णुशर्मनकृत पंचतंत्र में वात्स्यायन एवं अश्वशास्त्रकार शालिहोत्र को वैद्यकशास्त्रज्ञ कहा गया हैं। मधुसुदन सरस्वतीकृत 'प्रस्थानभेद' में भी वात्स्यायनप्रणीत कामसूत्र को आयुर्वेदशास्त्रान्तर्गत ग्रंथ कहा गया हैं।

व्यक्तिपरिचय--वात्स्यायन यह इसका व्यक्तिनाम न हो कर गोत्रनाम था। सुबन्धु के अनुसार, इसका सही नाम मल्लनाग था। यशोधर के द्वारा लिखित 'कामसूत्र' के टीका में भी इसे आचार्य मल्लनाग कहा गया है। वात्स्यायन स्वयं ब्रह्मचारी एवं योगी था, ऐसा कामसूत्र के अंतिम श्लोक से प्रतीत होता है। कामसूत्र में अवंति, मालव, अपरान्त, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र एवं आंध्र आदि देशों के आचारविचारों के काफ़ी निर्देश प्राप्त हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि, यह पश्चिम या दक्षिण भारत में रहनेवाला था।

कामसूत्र के 'नागरक वृत्त' नामक अध्याय में नागर नामक एक नगर का निर्देश प्राप्त है। यशोधर के अनुसार, कामसूत्र में निर्दिष्ट 'नागर' पाटलिपुत्र है। अन्य कई अभ्यासक उसे जयपूर संस्थान में स्थित नागर ग्राम मानते हैं।

कालनिर्णय--वात्स्यायन का काल ३०० ई. स. माना जाता है। वेबर के अनुसार, इसका 'वात्स्यायन' नाम लाट्यायन, बौधायन जैसे सूत्रकालीन आचार्यों से मिलता जुलता प्रतीत होता है (वेबर पृ. १६४)। कौटिल्य अर्थशास्त्र एवं कामसूत्र की निवेदनपद्धति में काफ़ी साम्य है। कामसूत्र में प्राप्त 'ईश्वरकामितम्' (राजाओं की भोगतृष्णा) नामक अध्याय में प्रायः आंध्र राजाओं का ही वर्णन किया गया है। आयुर्वेदीय 'वाग्भट' ग्रंथ में कामसूत्र के 'वाजीकरण' संबंधी उपचार उद्धृत किये गये हैं। इन सारे निर्देशों से कामसूत्र का रचनाकाल ई. स. ३ री शताब्दी निश्चित होता है।

पूर्वाचार्य--कामसूत्र में प्राप्त निर्देश के अनुसार, इस शास्त्र की निर्मिति शिवानुचर नंदी के द्वारा हुई, जिसने सहस्त्र अध्यायों के 'कामशास्त्र' की रचना की। नंदी के इस विस्तृत ग्रंथ का संक्षेप औद्दालकि श्वेतकेतु नामक आचार्य ने किया, जिसका पुनःसंक्षेप आगे चल कर बाभ्रव्य पांचाल ने किया। बाभ्रव्य का कामशास्त्रविषयक ग्रंथ सात 'अधिकरणों' में विभाजित था। बाभ्रव्य के इसी ग्रंथ का संक्षेप कर वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र की रचना की।

उपर्युक्त ग्रंथकारों के अतिरिक्त, वात्स्यायन के कामसूत्र में निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का, एवं उनके विभिन्न ग्रंथों का निर्देश प्राप्त हैः—दत्तकाचार्य—वैशिक; चारायणाचार्य—साधारण अधिकरण; सुवर्णनाभ—सांप्रयोगिक; घोटकमुख—कन्यासंप्रयुक्त; गोनर्दीय—भार्याधिकारिक; गोणिकापुत्र—पारदारिक; कुचुमार—औपनिषदिक।

इस ग्रंथ की निम्नलिखित टीकाएँ विशेष सुविख्यात हैः—१. वीरभद्रकृत 'कंदर्पचूडामणि,' २. भास्कर नृसिंहकृत 'कामसूत्रटीका,' ३. यशोधरकृत 'कंदर्पचूडामणि'। वेबर के अनुसार, सुबंधु एवं शंकराचार्य के द्वारा भी 'कामसूत्र' पर भाष्य लिखे गये थे।

कामसूत्र—वात्स्यायन का 'कामसूत्र' सात 'अधिकरणों' (विभागों) में विभाजित है, एवं उसमें कामशास्त्र से संबंधित तीन मुख्य उपांगों का विचार किया गया हैः—१. कामपुरुषार्थ का आचारशास्त्र, जिसमें धर्म, अर्थ एवं मोक्ष इन तीन पुरुषार्थों से अविरोध करते हुए भी कामपुरुषार्थ का आचार एवं उपभोग किस प्रकार किया जा सकता है, इसका दिग्दर्शन किया गया है; २. शृंगाररसशास्त्र, जिसमें स्त्रीपुरुषों को उत्तम रतिसुख किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है इसका वर्णन प्राप्त है; ३. तत्कालीन भारत में प्राप्त कामशास्त्रविषयक आचारविचारों का वर्णन, जिसमें विभिन्न देशाचार, 'वैशिक' (वेश्याव्यवसाय) एवं 'पारदारिक' (स्त्री पुरुषों के विवाहबाह्यसंबंध) आदि विषयों की चर्चा की गयी है।

कामसूत्र का तत्त्वज्ञान—प्राचीन भारतीय तत्वज्ञान के अनुसार, धर्म एवं अर्थ के समान 'काम' भी एक पुरुषार्थ माना गया है, जिसकी परिणति वैवाहिक सुखप्राप्ति में होती है। काम मनुष्य की सहजप्रवृत्ति है, जो मानवी शरीर की स्थिति एवं धारणा के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसी कारण धर्म, अर्थ एवं काम पुरुषार्थों का रक्षण कर मनुष्य को जितेंद्रिय बनाना, यह वात्स्यायन कामसूत्र का प्रमुख उद्देश्य है—

रक्षन् धर्मार्थकामानां स्थितिं स्वां लोकवर्तिनीम्।
अस्य शास्त्रस्य तत्त्वज्ञः भवत्येव जितेंद्रियः॥

(का. सू. ७.२.५६)।

वात्स्यायन कामसूत्र में कामसेवन की तुलना मानवी आहार से की गयी है। उस ग्रंथ में कहा गया है कि, आहार एवं काम का योग्य सेवन करने से मनुष्य को आरोग्यप्राप्ति होती है। किन्तु उसीका ही आधिक्य होने

से हानी पहुँचती है। इसी कारण, मनुष्यजाति को काम का सुयोग्य एवं प्रमाणित सेवन करने को सिखाना, यह कामशास्त्र का प्रधान हेतु है। जनावरों के भय से कोई खेती करना नहीं छोड़ते है, उसी प्रकार कामविकार के डर से कामसेवन का त्याग करना उचित नहीं है (का. सू. १.२.३८)।

श्रेष्ठत्व—स्त्री-पुरुषों का रतिसुख मानवी-जीवन का साध्य नहीं, बल्कि यशस्वी विवाह का केवल साधनमात्र ही है, यह तत्त्वज्ञान आचार्य वात्स्यायन ने सर्वप्रथम प्रस्थापित किया। स्त्री-पुरुषों के रतिसुख पर ही केवल जोर देनेवाले पाश्चात्य कामशास्त्रज्ञों की तुलना में, वात्स्यायन का यह तत्त्वज्ञान कतिपय श्रेष्ठ प्रतीत होता है।

किन्तु अपना यह तत्त्वज्ञान प्रस्तुत करते समय, विवाह के यशस्वितता के लिए, स्त्री-पुरुषों का रतिसुख अत्यधिक आवश्यक है, यह तत्त्व वात्स्यायन के द्वारा दोहराया गया है, जो आधुनिक शारीरशास्त्र की दृष्टि से सुयोग्य प्रतीत होता है। इसी कारण, वात्स्यायन कामसूत्र के अंतर्गत रतिशास्त्रविषयक चर्चा भी क्रांतिदर्शी मानी जाती है।

२. एक न्यायदर्शनकार, जो अक्षपाद गौतम नामक आचार्य के द्वारा लिखित 'न्यायसूत्र' का प्राचीनतम भाष्यकार माना जाता है। इसके ग्रंथ पर उद्योतकर ने 'न्यायवार्तिक' नामक सुविख्यात भाष्यग्रंथ की रचना की है।

दक्षिण भारत के सुविख्यात विद्याकेंद्र कांची में यह निवास करता था। इसका काल ई. स. ४७० लगभग माना जाता है।

३. पंचपर्ण नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. आ. १.७.२)। 'वात्स्य' का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

४. एक ज्योतिषशास्त्रज्ञ (C. C.)।

वात्स्यायनि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाद—अमिताभदेवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.५४)।

वादुलि—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

वाधूल—एक कृष्णयजुर्वेदी आचार्य, जो श्रौतसूत्र आदि अनेकानेक ग्रंथों का रचयिता था। कल्पसूत्रों के सुविख्यात भाष्यकार महादेव ने यजुर्वेदीय कल्पसूत्रों के आचार्यों में, इसका निर्देश बौधायन, हिरण्यकेशी, वैखानस आदि ग्रन्थकारों के साथ किया है। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रन्थ प्राप्त हैं:—१. वाधूलश्रौतसूत्र; २. वाधूलवृत्तिरहस्य; ३. वाधूलगृह्यागमवृत्तिरहस्य; ४. वाधूलस्मृति।

वाध्र्यश्व—सुमित्र नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का नामान्तर (ऋ. १०.६९.१)। वध्र्यश्व का पुत्र होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. अग्नि की एक उपाधि (ऋ. १०. ६९.५)।

३. यमसभा का एक राजा (म. स. ८.१२)।

वानर—दक्षिण भारत में निवास करनेवाला एक प्राचीन मानवजातिसमूह, जिसका अत्यंत गौरवपूर्ण उल्लेख वाल्मीकि-रामायण में प्राप्त है।

इन लोगों का राज्य किष्किंधा में था एवं वालिन्, सुग्रीव एवं अंगद उनके राजा थे। वानरराज सुग्रीव का प्रमुख अमात्य हनुमत् था, जो आगे चल कर भारतीयों की प्रमुख देवता बन गया। सुग्रीव, हनुमत् आदि वानरों की सहाय्यता से ही राम दाशरथि ने लंका के बलाढ्य राक्षस राजा रावण को परास्त किया (राम दाशरथि देखिये)।

राज्य एवं समाजव्यवस्था--रामायण में निर्दिष्ट वानर, मनुष्यों की तरह बुद्धिसंपन्न हैं, मानवभाषा बोलते हैं, कपड़े पहनते हैं, घरों में निवास करते हैं, विवाह संस्कार को मान्यता देते हैं, एवं राजा के शासन के अधीन रहते है। इससे स्पष्ट है कि, रामायणकाल में ये लोग आज की तरह गिरे हुए जानवर नहीं, बल्कि वास्तव में एक मानवजाति के लोग थे।

पुराणों में--इन ग्रंथों में वानरों को हरि नामांतर दिया गया है, एवं उन्हे पुलह एवं हरिभद्रा की संतान बताया गया हैं।

ब्रह्मांड के अनुसार, पुलह ऋषि की कुल बारह पत्नियाँ थी, जो क्रोधा की कन्याएँ थी। उनके नाम निम्न थे:--१. हरिभद्रा; २. मृगी; ३. मृगमंदा; ४. इरावती; ५. भूता; ६. कपिशा; ७. दंष्ट्रा; ८. ऋषा, ९. तिर्या; १०. श्वेता; ११. सरमा; १२. सुरसा (ब्रह्मांड. ३.७.१७१-१७३)।

अपनी उपर्युक्त पत्नियों से पुलह को अनेकानेक प्राणि पुत्र के रूप में प्राप्त हुए, जिनमें से हरिभद्रा की संतति निम्नप्रकार थी:--वानर, गोलांगुल, नील, द्वीपिन्, नील, मार्जार, तरक्षु, किन्नर। हरिभद्रा नामक माता से उत्पन्न होने के कारण, वानरों को 'हरि' नामांतर प्राप्त हुआ।

वानरसमूह—ब्रह्मांड में वानरों के ग्यारह प्रमुख कुल दिये हैं, जिनके नाम निम्नप्रकार हैं:-द्वीपिन्, शरभ, सिंह, व्याघ्र, नील, शल्यक, ऋक्ष, मार्जार, लोहास, वानर, मायाव। ये सारे वानर किष्किंधा में रहते थे, एवं उनका राजा वालिन् था (ब्रह्मांड. ३.७.१७६; ३२०)।

वानरवंश--ब्रह्मांड में ऋक्ष, सुग्रीव, केसरी एवं अग्नि इन चार प्रमुख वानरों के वंश निम्नप्रकार दिये गये हैं :-

(१) **ऋक्षशाखाः**—ऋक्ष (पत्नी विरजाकन्या चारुहासिनी)–महेंद्र–सुग्रीव एवं वालिन् (पत्नी सुषेणकन्या तारा)–अंगद (मैंदकन्या)–ध्रुव (ब्रह्मांड. ३.७.२४६–२७५)।

(२) **सुग्रीवशाखाः**—ऋक्ष–सुग्रीव (पत्नी पनसकन्या रुमा)–तीन पुत्र।

(३) **केसरीशाखाः**— केसरिन् (पत्नी कुंजरकन्या अंजना)–हनुमत्, श्रुतिमत्, केतुमत्, मतिमत्, धृतिमत्।

(४) **अग्निशाखाः**—अग्नि–नल–तार, कुसुम, पनस, गंधमादन, रुपश्री, विभव, गवय,, विकट, सर, सुषेण, सघनु, सुबंधु, शतदुंदुभि आदि (ब्रह्मांड. ३.७.२४५।

जैन ग्रन्थों में—इन ग्रंथों में राक्षस एवं वानर इन दोनों को एक ही विद्याधरवंश की विभिन्न शाखाएँ मानी गयी हैं। ये दोनों जातियाँ मानववंशीय ही थी, किंतु उन्हे आकाशगमित्व, कामरूपित्व आदि ऐंद्रजालिक विद्याएँ अवगत थी। वानरवंशीय विद्याधरों की ध्वजाओं तथा महलों तथा के शिखरों पर वानर की प्रतिमा रहती थी।

वानर कौन थे—चिं. वि. वैद्य के अनुसार, ये सचमुच ही वानर के समान दिखते थे, अतः इन्हे वानर नाम प्राप्त हुआ था। कई अन्य अभ्यासकों के अनुसार, आजकल के आदिवासियों के समान ये लोग वानर, ऋक्ष, गीध आदि की पूजा करते थे। इसी कारण इन विभिन्न प्राणियों की पूजा करनेवाले आदिवासियों को क्रमशः वानर, ऋक्ष (जांबवत्), एवं गीध (जटायु, संपाति) नाम प्राप्त हुए।

रे. बुल्के के अनुसार, रामकथा में निर्दिष्ट वानर विंध्यप्रदेश एवं मध्यभारत में रहनेवाली अनार्य जातियाँ थी। छोटा नागपूर में रहनेवाली उराओं तथा मुण्डा जातियों में, आज भी तिग्गा, हल्मान, बजरंग, गड़ी नामक गोत्र प्राप्त हैं, जिन सब का अर्थ 'बंदर' ही है। सिंघभूम की भुईयाँ जाति के लोक अपना वंश 'पवन' अथवा 'हनुमत्' बताते हैं (बुल्के, रामकथा पृ. १२१-१२२)।

वानदृष्ट—पृथुक देवों में से एक।

वान्दव दुवस्यु—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १००)।

वाम—श्रीकृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१७)।

२. एकादश रुद्रों में से एक, जो भूत एवं सरूपा का पुत्र था (भा. ६.६.१७)।

वामकक्षायण—एक आचार्य, जो वात्स्य एवं शांडिल्य का शिष्य था (श. ब्रा. १०.५.६.९; बृ. उ. ६.५.४. काण्व.)।

वामदेव—एक सुविख्यात वैदिक सूक्तद्रष्टा (वामदेव गोतम देखिये)।

२. एक ऋषि, जो अंगिरस् एवं सुरूपा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.१)। मत्स्य में इसकी माता का नाम स्वराज दिया गया है।

यह अंगिराकुल का गोत्रकार, मंत्रकार एवं ऋषि था। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था। स्यमंतपंचक क्षेत्र में यह श्रीकृष्ण से मिलने आया था (भा. १०.८४. ५)। इसके द्वारा दिये गये भस्म से एक ब्रह्मराक्षस का उद्धार हुआ था (स्कंद. ३.३.१५-१६)। रथन्तरकल्प में, मेरु पर्वत के कुमारशिखर पर इसका स्कंद से संवाद हुआ था (शिव. कै. २२)।

इसने बकुलासंगमतीर्थ पर तपस्या की थी (पद्म. उ. १३८)। मनुस्मृति में इसकी एक कथा प्राप्त है, जिसके अनुसार एक बार इसने क्षुधार्त होने के कारण, कुत्ते का माँस खाने की इच्छा प्रकट की थी। किन्तु यह पापकर्म आपद्धर्म में किये जाने के कारण, इसे कुछ दोष न लगा (मनु. १०.१०६)।

३. एक ऋषि, जो अथर्वन् अंगिरस् का पुत्र था। इसके पुत्रों के नाम असिज एवं बृहदुक्थ थे (वायु. ६५. १००)। यह तपस्यामग्न परशुराम से मिलने गया था (ब्रह्मांड. ३.१.१०५)।

४. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो कुशद्वीप के हिरण्यरेतस् राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.१४)।

५. मोदापूर देश का एक राजा, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २४.

१०)। इसका शल राजा से झगड़ा हुआ था (शल. ३. देखिये)।

६. एकादश रुद्रों में से एक।

७. गुवाहासिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

८. एक त्रिशूलधारी शिवावतार, जो मनु एवं शतरूपा के सात पुत्रों में से एक था। इसके मुख, हाथ, जंघा एवं पावों से क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों की उत्पत्ति हुई (मत्स्य. ४.२७.३०)। आगे चल कर इसका सृष्टि के उत्पत्ति का कार्य ब्रह्मा के द्वारा स्थगित किया गया, जिस कारण इसे 'स्थाणु' नाम प्राप्त हुआ (मत्स्य. ४.३१)।

शिव के इस अवतार को पाँच मुख थे। बृहस्पति-पत्नी तारा का हरण सोम के द्वारा किये जाने पर, इसने सोम से युद्ध किया था (मत्स्य २३.३६)। इसने पार्वती को 'शिवसहस्त्र' नाम का पाठ सिखाया था (पद्म. भू. २५४)।

९. राम दाशरथि के सभा का एक ऋषि।

वामदेव गोतम--एक आचार्य एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसे अपनी माता के गर्भ में ही आत्मानुभूति प्राप्त हुई थी। ऋग्वेद के प्रायः समग्र चौथे मंडल का यह प्रणयिता कहा जाता है। इस मंडल के केवल ४२-४४ सूक्तों का प्रणयन त्रसदस्यु, पुरुमीह्ळ एवं अजमीह्ळ के द्वारा किया गया है; बाकी सारे सूक्त वामदेव के द्वारा प्रणीत ही है। किन्तु इस मण्डल में केवल एक ही स्थान पर इसका प्रत्यक्ष निर्देश प्राप्त है (ऋ. ४.१६.१८)। अन्य वैदिक ग्रंथों में भी इसे ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल का प्रणयिता कहा गया है (का. सं. १०.५; मै सं. २.१.१३; ऐ. आ. २.२.१)।

जन्म—वैदिक ग्रंथ में इसे सर्वत्र गोतम ऋषि का पुत्र कहा गया है (ऋ. ४.४.११)। इसी कारण यह स्वयं को 'गोतम' कहलाता था।

इसके जन्म के संबंधी अस्पष्ट विवरण वैदिक साहित्य में प्राप्त है (ऋ. ४.१८; २६.१; ऐ. आ. २.५)। अपने जन्म के संबंधी ज्ञान इसे माता के गर्भ में ही प्राप्त हुआ था। तब इसने सोचा कि, अन्य लोगों के समान मेरा जन्म न हो। इसी कारण इसने अपनी माता का उदर विदीर्ण कर बाहर आने का निश्चय किया। इसकी माता को यह बात ज्ञात होते ही, उसने अदिति का ध्यान किया। उस समय इंद्र के साथ अदिति वहाँ उपस्थित हुई, जहाँ गर्भ से ही इसने इंद्र के साथ तत्त्वज्ञान के संबंधी चर्चा की (ऋ. ४.१८; वेदार्थदीपिका)।

ऋग्वेद में अन्यत्र वर्णन है कि, योगसामर्थ्य से श्येन पक्षी का रूप धारण कर, यह अपनी माता के उदर से बाहर आया (ऋ. ४.२७.१)। ऐतरेय उपनिषद के अनुसार, इसके जन्म के पूर्व इसे अनेकानेक लोह के कारागार में बंद करने का प्रयत्न किया गया, जिन्हे तोड़ कर यह श्येन पक्षी की भाँति पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ (ऐ. उ. ४.५)। वामदेव के जन्म के संबंधी सारी कथाएँ रुपकात्मक प्रतीत होती है, जहाँ गर्भवास को कारागृह कहा गया है।

संबंधित व्यक्ति--ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल के अधिकांश सूक्तों में सुदास, दिवोदास, सृंजय, अतिथिग्व, कुत्स आदि राजाओं का निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, इसका इन राजाओं से घनिष्ठ संबंध था।

बृहद्देवता में इंद्र एवं वामदेव के संबंध में कई असंगत कथाओं का निर्देश प्राप्त हैं, जिनका सही अर्थ समझ में नहीं आता है। एक बार जब यह कुत्ते की अँतडियाँ पका रहा था, तो इंद्र एक श्येनपक्षी के रूप में इसके सम्मुख प्रकट हुआ था (बृहद्दे. ४.१२६)। इसी ग्रंथ में प्राप्त अन्य कथा के अनुसार, इसने इंद्र को परास्त कर अन्य ऋषियों को उसका विक्रय किया था (बृहद्दे. ४.१३१)। सीग ने बृहद्देवता में प्राप्त इन कथाओं को ऋग्वेद में प्राप्त इसकी जन्मकथाओं से मिलाने का प्रयत्न किया है (सीग, सा. ऋ. ७६)।

तत्त्वज्ञान--पुनर्जन्म के संबंध में विचार करनेवाले तत्वज्ञों में वामदेव सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। मनु एवं सूर्य नामक अपने दो पूर्वजन्म इसे ज्ञात हुए थे, एवं माता के गर्भ में स्थित अवस्था में ही इसे सारे देवों के भी पूर्वजन्म ज्ञात हुए थे।

पुनर्जन्म के संबंधी वामदेव का तत्त्वज्ञान 'जन्मत्रयी' नाम से सुविख्यात है, जिसके अनुसार हर एक मनुष्य के तीन जन्म होते हैं:--**पहला जन्म**, जब पिता के शुक्र-जंतु का माता के शोणित द्रव्य से संगम होता है; **दूसरा** जन्म, जब माता की योनि से बालक का जन्म होता है; **तीसरा** जन्म जब मृत्यु के बाद मनुष्य को नया जन्म प्राप्त होता है। अमरत्व प्राप्त करने की इच्छा करनेवाले साधक कों के लिए, वामदेव का यह तत्त्वज्ञान प्रमाणभूत माना जाता है।

आत्मानुभूति—आत्मानुभूति प्राप्त होने पर इसने कहा था, 'मैंने ही सूर्य को प्रकाश प्रदान किया था, मनु मेरा ही रूप था' (अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहम्) (ऋ. ४. २६.१; बृ. उ. १.४.१०)। वामदेव का यह आत्मकथन मराठी संत तुकाराम के आत्मकथन से मिलता-जुलता प्रतीत होता है, जहाँ उन्होंने अपना पूर्वजन्म शुकमुनि के रूप में बताया था (डॉ. रानडे, उपनिषद्रहस्य पृ. ३१२)।

वामदेवी—ऋचि ऋषि की पत्नी (म. आ. ९०. २३)। पाठभेद–'सुदेवी'।

वामदेव्य—ऋग्वेद में प्राप्त एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित वैदिक सूक्तद्रष्टाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:—अंहोमुच (ऋ. १०.१२७); बृहदुक्थ (ऋ. सर्वानुक्रमणी; श. ब्रा. ८.२.२.१४); मूर्धन्वत् (ऋ. १०. ८८)।

वामन--श्री विष्णु का पाँचवाँ अवतार, जो इंद्र के संरक्षण के लिए, एवं बलि वैरोचन नामक दैत्य के 'बंधन' के लिए अवतीर्ण हुआ था। भागवत में इसे विष्णु का पंद्रहवाँ अवतार कहा गया है (भा. १.३.१९)।

वैदिक साहित्य में—वामन अवतार के कल्पना का अस्पष्ट उद्गम ऋग्वेद में पाया जाता है, जहाँ श्रीविष्णु के द्वारा तीन पगों में समस्त पृथ्वी, द्युलोक एवं अंतरिक्ष का व्यापन होने का निर्देश प्राप्त है—

> इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्।
> समळहमस्य पांसुरे ॥ (ऋ. १.२२.१७–१८)।

(श्रीविष्णु ने तीन पगों में समस्त सृष्टि का व्यापन किया)।

ऋग्वेद में श्रीविष्णु का स्वतंत्रदेवता के रूप में निर्देश नहीं है, बल्कि उसे सूर्यदेवता का ही एक रूप माना गया है। इसी विष्णुरूपी सूर्यदेवता का वर्णन करते समय, उसके द्वारा तीन पगों में पृथ्वी का व्यापन करने का निर्देश ऋग्वेद में किया गया है।

निरुक्त में विष्णु के तीन पगों की निरुक्ति प्राप्त है, जहाँ शाकपूणि एवं और्णवाभ नामक दो आचार्यों के अभिमत उद्धृत किये गये हैं (नि. १२.१९)। शाकपूणि के अनुसार, पृथ्वी, अंतरिक्ष एवं आकाश को; तथा और्णवाभ के अनुसार, समारोहण (उदयगिरि), विष्णुपद (खस्वस्तिक) एवं गयाशिरस् (अस्तगिरि) को श्रीविष्णु ने अपने पगों के द्वारा व्याप लिया।

तैत्तिरीय संहिता में विष्णु एवं सूर्य की एकात्मता स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट है, एवं अपने मित्र इंद्र का विगत राज्य उसे पुनः प्राप्त कराने के लिए श्रीविष्णु ने पृथ्वी पर अवतार लेने की कथा वहाँ प्राप्त है (तै. सं. २.४. १२.२)।

वामन-अवतार की उत्क्रान्ति—वैदिक साहित्य में प्राप्त इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, वामन अवतार की कल्पना का उद्गम प्रथम सूर्यदेवता के आकाश संचरण के रूप में हुआ, एवं श्रीविष्णु सूर्य का ही एक प्रतिरूप होने के कारण, आकाश संचरण का यह पराक्रम श्रीविष्णु का ही मानने जाने लगा। आगे चल कर, श्रीविष्णु के दशावतार की कल्पना जब प्रसृत हुई, तब तीन पगों में समस्त पृथ्वी का व्यापन करनेवाले श्रीविष्णु का वैदिक रूप, उत्तरकालीन वैदिक ग्रन्थों में एवं पुराणों में वामनावतार के रूप में निर्धारित हुआ।

वामन-अवतार का सर्वप्रथम निर्देश तैत्तिरीय संहिता में अस्पष्ट रूप में प्राप्त है। एक बार तीनों लोगों के स्वामित्व के लिए देव एवं असुरों में संग्राम हुआ। उस समय श्रीविष्णु ने अपने 'वामन-स्वरूप' की आहुति दे कर तीनों लोगों को जीत लिया (तै. सं. २.१.३)।

शतपथ ब्राह्मण में-इस ग्रंथ में श्रीविष्णु के वामन अवतार की कथा प्राप्त है, जो पुराणों में निर्दिष्ट कथा से सर्वथैव विभिन्न है। एक बार देवासुरों के संग्राम में, देवों का पराजय हो कर वे भाग गये। तदुपरान्त असुर समस्त पृथ्वी का बटवारा करने के लिए बैठे। उस समय विष्णु के नेतृत्व में देवगण असुरों के पास गये, एवं पृथ्वी का कुछ हिस्सा प्राप्त होने के लिए असुरों की प्रार्थना करने लगे। उस समय असुर विष्णु के तीन पगों इतनी ही छोटी भूमि देवों को देने के लिए तैयार हुए। फिर वामनरूपधारी विष्णु ने विराट रूप धारण कर समस्त तीनों लोगों का व्यापन किया, एवं इस तरह देवताओं को त्रैलोक्य का राज्य प्राप्त हुआ (श. ब्रा. १. २.२.१-५)।

पुराणों में—इन ग्रंथों में इसे कश्यप एवं अदिति का पुत्र कहा गया है। इसकी पत्नी का नाम कीर्ति एवं पुत्र का नाम बृहत्श्लोक था।

इसका जन्म भाद्रपद शुक्ल द्वादशी के दिन श्रवण नक्षत्र में एवं अभिजित् मुहूर्त में हुआ था (भा. ८.१८. ५-६)। अपना विष्णुरूपी वास्तवदर्शन ब्रह्मा एवं अदिति को प्रकट करने के बाद, इसने ब्राह्मण ब्रह्मचारिन्

का रूप धारण किया। महाभारत में इसका विस्तृत स्वरूप-वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे मुण्डी, यज्ञोपवीती, कृष्णजिन-धारी, शिखी, पलाशदण्डधारी कहा गया है। इसी ब्राह्मण बटु के रूप में यह बलि वैरोचन के यज्ञमण्डप में प्रविष्ट हुआ।

वामन ने बलि वैरोचन से त्रिपाद भूमि की याचना की, जिसे बलि ने 'तथास्तु' कहा। तत्पश्चात् वामन ने विराट रूप धारण कर पहले दो पगों में पृथ्वी एवं स्वर्ग का व्यापन किया, एवं तीसरा पग बलि के मस्तक पर रखने के लिए उद्यत हुआ (भा. ८.१८.२१)। उस समय वीरभद्रादि असुर युद्ध करने के लिए उद्यत हुए, जिन्हें वामन ने परास्त किया। उस समय बलि, प्रह्लाद एवं बलिपत्नी विंध्यावालि ने वामन की स्तुति की। फिर वामन ने प्रसन्न हो कर बलि को नमुचि, शंबर, प्रह्लाद आदि असुरों के साथ 'सुतल' नामक पाताल लोक में स्थापित किया, एवं इंद्र को त्रिभुवन का राज्य समर्पित किया (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति ३११-३७४; वामन. ३१; स्कंद. १.१.१८-१९; मत्स्य. २४४-२४६)।

वामन-अवतार का अन्वयार्थ—प्राचीन भारत के बिहार प्रदेश में वामन का अवतार हुआ, ऐसा माना जाता है। बलि वैरोचन का बंधन कर वामन ने उसे उसके परिवार के साथ समुद्र में ढकेल दिया। बंगाल की खाड़ी में 'बलिद्वीप' नामक प्रदेश आज भी दिखाई देता है, जो आधुनिक काल में आग्नेय एशिया में स्थित 'बाली' देश नाम से प्रसिद्ध है। इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है कि, प्रागैतिहासिक काल में पूर्व-भारत में लंबे कद एवं मोटे शरीर के कई लोग रहते थे, जिन्हे उत्तरीपूर्वदिशा से भारत में प्रवेश करनेवाले छोटे कद के कई कृश लोगों ने परास्त किया। यही कारण है कि, पूर्व भारत में आज भी मंगोलवंशीय लोग अधिक रूप में पाये जाते हैं।

उपासना—कुरुक्षेत्र में वामन का एक मंदिर बनवाया गया था, जो आज भी विद्यमान है (मत्स्य. २४४. २-३)। भाद्रपद शुक्ल द्वादशी के जिस दिन वामन अवतीर्ण हुआ, वह दिन आज भी 'वामन द्वादशी' नाम से सुविख्यात है।

बिहार प्रदेश में शहाबाद ज़िले में बक्सार ग्राम में वामन का आश्रम दिखाया जाता है, जो सिद्धाश्रम नाम से प्रसिद्ध है। इस स्थान पर सर्वप्रथम वामन का आश्रम था, जहाँ आगे चल कर विश्वामित्र ने अपना आश्रम प्रस्थापित किया।

वामन पुराण में वामन के एक सौ इकतीस वामनस्थानों का निर्देश प्राप्त है, जहाँ विभिन्न नामों से वामन की पूजा की जाती थी (वामन. ९०)। इससे प्रतीत होता है कि, एक समय भारत के सारे प्रदेशों में वामन को देवता मान कर उसकी पूजा की जाती थी।

२. एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

४. एक पक्षिराज, जो गरुड के पुत्रों में से एक था।

५. एक दिग्गज, जो इरावती के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य तीन भाईयों के नाम ऐरावत, सुप्रतीक एवं अंजन थे (ब्रह्मांड. ३.७.२९२)। घटोत्कच के सैन्य में से एक राक्षस का यह वाहन था (म. भी. ६०.५१)।

वामानिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२३)।

वामरथ्य—अत्रिवंश का एक गोत्रकार एवं प्रवर।

वामा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म.श.४५. १२)। पाठभेद—'भ्रमा'।

वायत—पाशद्युम्न नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ.२. ३३. २)। वयत् का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वाम्नेय—बृहदुक्थ वामदेव नामक आचार्य का नामान्तर (बृहदुक्थ वामदेव देखिये)।

वायु—एक वैदिक अंतरिक्षदेवता, जिसका एक संपूर्ण सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ४.४६)। एक देवता के रूप में इसका निर्देश प्रायः सर्वत्र इंद्र के साथ प्राप्त है, तथा इंद्र एवं वायु में से कौनसा भी एक देव वैदिक अंत-रिक्ष-देवताओं का प्रतिनिधित्व कर सकता है, ऐसा निर्देश निरुक्त में प्राप्त है (नि. ७.५)।

जन्म एवं स्वरूपवर्णन—विश्वपुरुष की श्वास से इसकी उत्पत्ति हुई (ऋ. १०.९०)। त्वष्टृ इसका जामात था, एवं इसने आकाश के गर्भ में से मरुतों को उत्पन्न किया था (ऋ. ८.२६; १.१३४)।

यह सुंदर, मनोजव एवं सहस्त्रनेत्रोंवाला बताया गया है (ऋ. १.२३)। इसके पास एक प्रकाशमान रथ था, जिसे हज़ार अश्वों का एक दल खींचता था (ऋ. १.

२३)। इसी कारण, इसे 'नियुत्वत्' (एक दल के द्वारा खींचा जानेवाला) कहा गया है।

अन्य देवों की भाँति यह भी सोमप्रेमी था, एवं सभी देवों में 'क्षिप्र' होने के कारण, यह सर्वप्रथम अपना पेयभाग प्राप्त करता था (श. ब्रा. १३.१.२)।

एक बार सोम प्राप्त कराने के लिए देवताओं में होड़ लगी, जिस समय यह एवं इंद्र क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय पहुँच गये (ऐ. ब्रा. २.२५)।

इसकी उपासना करने से यश, संतान एवं संपत्ति प्राप्त होती है (ऋ. ७.९०)। यह शत्रुओं को भगाता है एवं निर्बलों की रक्षा करता है (ऋ. १.१३४)।

पुराणों में--इन ग्रन्थों में इसे वायुतत्त्व की देवता कहा गया है, एवं इसका जन्म आकाश से होने का निर्देश प्राप्त है। यह भूवर्लोक का अधिपति था, इस कारण इसे 'भुवस्पति' एवं 'मातरिश्वन्' नामान्तर प्राप्त थे। शाकद्वीप में प्राणायाम के द्वारा इसकी उपासना की जाती थी (भा. ५.१५.१५)। मत्स्य में कृष्णमृग पर सवार हुए इसकी प्रतिमा के पूजन का निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. २६१.१९)।

परिवार—पुराणों में इसके अंश से उत्पन्न हुए, निम्नलिखित संतानों का निर्देश प्राप्त है:—१. इला (भा. ४.१०.२); २. मुदा नामक अप्सरासमूह; ३. भीमसेन पाण्डव; ४. 'मनोजव' हनुमत् (विष्णु. १.८.११)।

२. एक आचार्य, जो मृत्यु नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम इंद्र था (वं. ब्रा. २)।

३. एक राक्षस, जो वायु के अनुसार अनुह्राद नामक राक्षस का पुत्र था (वायु. ६३.१२)।

वायुचक्र—मंकणक ऋषि के सात पुत्रों में से एक (मंकणक देखिये)।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.११)।

वायुज्वाल एवं **वायुबल**—मंकणक ऋषि के पुत्र।

वायुभक्ष--एक ब्रह्मर्षि, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.११; शां. ४७.६६*)। हस्तिनापुर जानेवाले श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुई थी (म. उ. ३८८.८*)।

वायुमंडल एवं **वायुरेतस्**—मंकणक ऋषि के पुत्र।

वायुवेग--मंकणक ऋषि के सात पुत्रों में से एक। इसके नाम के लिए 'वातवेग' पाठभेद भी प्राप्त है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.२)।

३. एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५८)। भारतीययुद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

वायुहन--मंकणक ऋषि का एक पुत्र।

वाय्य सत्यश्रवस्--एक वैदिक आचार्य (ऋ. ५.७९.१०२)। वय्य का वंशज होने से इसे 'वाय्य' पैतृक नाम प्राप्त था।

इस पर अनुग्रह करने के लिए, आत्रेय सत्यश्रवस् नामक ऋषि के द्वारा उषस् की प्रार्थना की गयी थी।

वारकि—कंस नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

वारक्य—जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त है:- कंस, कुबेर, जनश्रुत, जयंत एवं प्रोष्ठपद (जै. उ. ब्रा. ३. ४१.१)। 'वरक' का वंशज होने के कारण, इन आचार्यों को यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वारण--(सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार चंप राजा का, एवं वायु के अनुसार चित्ररथ राजा का पुत्र था।

वाराह—श्रीविष्णु के वराह नामक तृतीय अवतार का नामान्तर (भा. ११.४.१८; वराह देखिये)।

२. एक असुर (मत्स्य. १७२)।

वाराहि—अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकारद्वय।

वाराही—सात मातृकाओं में से एक, जिसका वाहन बैल था (ब्रह्मांड. ४.१९.७)।

वारिप्लव—रैवत मन्वन्तर के 'पारिप्लव' नामक देवगण का नामान्तर।

वारिषेण--यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.१८)। पाठभेद-'वारिसेन'।

वारिसार--(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चंद्रगुप्त मौर्य राजा का पुत्र, एवं अशोकवर्धन राजा का पिता था (भा. १२.१.१३)।

वारुणि—धर्मसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

२. एक पक्षिराज, जो कश्यप एवं विनता के पुत्रों में से एक था।

३. एक पैतृक नाम, जो अगस्त्य, भृगु एवं वसिष्ठ आदि ऋषियों के लिए प्रयुक्त किया जाता है (ऐ. ब्रा. ३.३४.१; श. ब्रा. ११.६.१.१)। ब्रह्मा के यज्ञ में से ये सारे ऋषि उत्पन्न होने पर, वरुण ने इनका पुत्र के रूप में

स्वीकार किया, जिस कारण इन्हें 'वारुणि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ।

४. वानरों का एक राजा (ब्रह्मांड. ३.७.२३४)।

वारुणी--स्वायंभुव मन्वन्तर के वरुण की पत्नी।

२. अरण्य प्रजापति की कन्या, जो चक्षुष् राजा की पत्नी, एवं चक्षुष् मनु की माता थी (ब्रह्मांड. २ ३६. १०२-१०४)।

वार्कलि अथवा **वार्कलिन्**--एक आचार्य (श. ब्रा. १२.३.२.६)। वृकला का वंशज होने से इसे यह मातृक नाम प्राप्त हुआ था। ऐतरेय आरण्यक में इसे 'वार्कलिन्' कहा गया है, किन्तु वह अशुद्ध रूप प्रतीत होता है (ऐ. आ. ३. २.२)।

वार्कारुणीपुत्र--एक आचार्य, जो आर्तभागीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वार्कारुणीपुत्र (द्वितीय) था (बृ. उ. ६.४.३१ माध्यं.)।

वार्कारुणीपुत्र (द्वितीय)--एक आचार्य, जो वार्कारुणीपुत्र (प्रथम) का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पाराशरीपुत्र था (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)।

वार्क्षी--प्रचेतस् पत्नी मारिषा का पैतृक नाम।

वार्जिनीवत--श्वाहि नामक यादव राजा का पैतृक नाम। वृजिनवत् नामक राजा का पुत्र होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

वार्धक्षत्रि--सौवीर देश के जयद्रथ राजा का नामांतर (म. व. २४८.६)।

वार्धक्षेमि--पांचाल देश के सुशर्मन् राजा का पैतृक नाम (सुशर्मन् ३. देखिये)। वृद्धक्षेम राजा का पुत्र होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

२. त्रिगर्त देश के सुशर्मन् राजा का पैतृक नाम (म. उ. १६८.१६; सुशर्मन् १. देखिये)।

वार्षगण--असित नामक आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.४.३३ माध्यं.)। वृषगण का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्षगणीपुत्र--एक आचार्य, जो गौतमीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शालंकायनीपुत्र था। वृषगण के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने से, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्षगण्य--एक आचार्य, जिसका एक सांख्ययोगाचार्य के नाते निर्देश प्राप्त है (व्यासकृत योगशास्त्रभाष्य ४. ५३)। जैमिनिकृत उपकर्मांगतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (जै. गृ. १.१४)।

२. सुश्रवस् नामक राजा का पैतृक नाम (सुश्रवस् वार्षगण्य देखिये)।

वार्षागिर--एक पैतृक नाम, जो ऋग्वेद में निम्नलिखित राजाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:--अंबरीष, ऋज्राश्व, भयमान, सहदेव एवं सुराधस् (ऋ. १.१००. १७)। वृषागिर के वंशज होने के कारण, उन्हें यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्ष्टिहव्य--उपस्तुत नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.११५)।

वार्ष्ण--एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:--१. गोबल (तै. ब्रा. ३. ११.९.३; जै. उ. ब्रा. १.६.१); २. बर्कु (श. ब्रा. १. १.१. १०; बृ. उ. ४.१.८ माध्यं.); ३. ऐक्ष्वाक (जै. उ. ब्रा. १.५.४)। 'वृषन्', 'वृष्णि' अथवा 'वृष्ण' के वंशज होने से, उन्हे यह पैतृकनाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्ष्णायन--धूम्रपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वार्ष्णिवृद्ध--उल नामक आचार्य का पैतृक नाम (कौ. ब्रा. ७.४)। वृष्णिवृद्ध का पुत्र होने से, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्ष्णेय--शूष नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. ब्रा. ३.१०)। वृष्णि का वंशज होने से, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. निषधराज नल राजा का सारथी। नल के वनवास के समय, यह ऋतुपर्ण राजा का सारथी बना था।

वार्ष्ण्य--एक आचार्य, जिसका याज्ञवल्क्य के साथ 'देवयजन' के संबंध में संवाद हुआ था (श. ब्रा. ३.१. १.४)। इसे 'वार्ष्ण' नामान्तर भी प्राप्त था।

वार्ष्यायणि--एक वैय्याकरण, जिसका निर्देश एक पूर्वाचार्य के नाते यास्क के 'निरुक्त' में प्राप्त है (नि. १.२)।

वालखिल्य--एक ऋषिसमुदाय, जो अंगुष्ठ के आकार के साठ हज़ार ऋषियों से बना हुआ था। प्रजा उत्पन्न करने के लिए तपस्या करनेवाले प्रजापति के केशों से ये उत्पन्न हुए थे (तै. आ. १.२३.३)।

वैदिक साहित्य में--ऋग्वेद में वालखिल्य नामक ग्यारह सूक्त हैं (ऋ. ८. ४९--५९), जिनका निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में ऋग्वेद के परिशिष्टात्मक सूक्तों के नाते से किया गया है (ऐ. ब्रा. ५.१५.१; ३; कौ. ब्रा. ३०.४.८; पं. ब्रा. १३.११.३; ऐ. आ. ५.२.४)। तैत्तिरीय आरण्यक में इन सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इन्हीं ऋषियों

को दिया गया है (तै. आ. १.२३)। एक ब्रह्मचारी ऋषिगण के नाते इनका निर्देश मैत्र्युपनिषद में प्राप्त है (मैत्र्यु. २.३)।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रंथों में इन्हें ब्रह्मापुत्र क्रतु के पुत्र कहा गया है, एवं इनकी माता का नाम सन्नति अथवा क्रिया बताया गया है (विष्णु. १.१०; भा. ४.१.९)। वायु के अनुसार, इनका जन्म कुशदर्भों से हुआ था, एवं वारुणियज्ञ के कारण इन्हें अप्रतिहत तपःसामर्थ्य प्राप्त हुआ था (वायु. ६५.५५; १०१. २१३)। इसी कारण, इन्हें 'मनोजव,' सर्वगत' एवं 'सार्वभौम' कहा गया है।

स्वरूपवर्णन—इस समुदाय में से हरएक ऋषि कद से बहुत ही छोटा, याने कि अंगुष्ठ के मध्यभाग के बराबर शरीरवाला था। सूर्य के अनन्य भक्त होने के कारण, ये सूर्यलोक में रहते थे, एवं वहाँ पक्षियों की भाँति एक एक दाना बीन कर उसीसे ही अपना जीवननिर्वाह करते थे। सूर्यकिरणों का पान करते हुए, ये तपस्या में व्यग्र रहते थे (म. स. ११. १२२)। ब्रह्मांड के अनुसार, ये ब्रह्मलोक में रहते थे, एवं केवल वायु भक्षण करते थे (ब्रह्मांड. २.२९.४)।

अपने पिता क्रतु के समान ये भी पवित्र, सत्यवादी एवं व्रतपरायण थे (म. आ. ६०.८)। प्रातःकाल से सायंकाल तक ये सूर्य के 'गौरवस्तोत्र' गाते गाते उसीके ही सम्मुख चलते थे। मृगछाला, चीर एवं वल्कल ये इनके वस्त्र रहते थे। ये वटवृक्ष की शाखा पर उल्टे लटक कर तपस्या करते थे।

इन्द्र का निर्माण—एक बार कश्यप ऋषि ने पुत्र-प्राप्ति के लिए एक यज्ञ का आयोजन किया। उस समय यज्ञ में सहाय्यता करने के लिए एक छोटी सी पलाश की टहनी पर लटक कर ये उपस्थित हुए। इनकी अंगुष्ठमात्र शरीरयष्टि देख कर बलाढ्य इंद्र ने इनका उपहास किया। तदुपरान्त अत्यधिक क्रुद्ध हो कर इन्होंने एक नया इंद्र निर्माण करने का निश्चय किया, एवं इस हेतु एक यज्ञ का आयोजन किया। उस समय कश्यप ऋषि ने इन्हें बार बार समझाया एवं कहा, 'देवराज इंद्र के स्थान पर अन्य इन्द्र को उत्पन्न करना उचित नहीं है। अतएव यही अच्छा है कि, आप देवों के नहीं, बल्कि पक्षियों के इन्द्र का निर्माण करे'। इसी समय, इंद्र भी इनकी शरण में आया।

फिर कश्यप ऋषि के अनुरोध पर, देवेंद्र का निर्माण करने का अपना निश्चय इन्होंने छोड़ दिया, एवं अपने यज्ञ का फल कश्यप को प्रदान किया। वही फल आगे चल कर कश्यप ने विनता को दिया, जिससे खगेन्द्र गरुड का निर्माण हुआ (म. आ. २६-२७; गरुड देखिये)।

तपःसामर्थ्य—अपनी तपस्या के बल पर ये सिद्धमुनि एवं ऋषि बन गये थे (मत्स्य. १२६.४५)। ये सर्व धर्मों के ज्ञाता थे, एवं अपनी तपस्या से सृष्टि के समस्त पापों को दग्ध कर, अपने तेज से समस्त दिशाओं को प्रकाशित करते थे। इनके तपोबल पर ही सारा जग निर्भर था, एवं इन्ही की तपस्या, सत्य, एवं क्षमा के प्रभाव से संपूर्ण भूतों की स्थिति बनी रहती थी (म. अनु. १४१-१४२)।

इन्होंने सरस्वती नदी के तट पर यज्ञ किया था (म. व. ८८.९)। ये पृथु राजा के मंत्री बने थे (म. शां. ५९.११७)। दिवाली के समय, प्रकाशित किये जाने वाले आकाशदीप का महत्त्व सर्वप्रथम इन्होंने ही कथन किया था (स्कंद. २.४.७)। इन्होंने चित्ररथ को कौशिक ऋषि की अस्थियाँ सरस्वती नदी में विसर्जित कर मुक्ति प्राप्त कराने की सलाह दी थी (मा. ६.८. ४०)।

परिवार—इनकी पुण्या एवं आत्म सुमति नामक दो कनिष्ठ बहनों का निर्देश वायु में प्राप्त है (वायु. २८.३३)।

वालायनि—बाष्कलि नामक अंगिराकुलोत्पन्न ऋषि के तीन शिष्यों में से एक। बाष्कलि ने 'वालखिल्य संहिता' का प्रणयन कर, उसे दो अन्य शिष्यों के साथ इसे सिखायी थी (बाष्कलि ३. देखिये)।

वालिन्—किष्किंधा देश का सुविख्यात वानरराजा, जो महेंद्र एवं ऋक्षकन्या विरजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३. ७.२१४-२४८; मा. ९.१०.१२)। वाल्मीकि रामायण के प्रक्षिप्त काण्ड में इसे ऋक्षरजस् नामक वानर का पुत्र कहा गया है (वा. रा. उ. प्रक्षिप्त. ६)।

इसके छोटे भाई का नाम सुग्रीव था, जिसे इसने यौवराज्याभिषेक किया था (वा. रा. उ. ३४)। इसकी पत्नी का नाम तारा था, जो इसके तार नामक अमात्य की कन्या थी (वा. रा. उ. ३४; म. व. २६४.१६)। वाल्मीकि रामायण में अन्यत्र तारा को सुषेण वानर की कन्या कहा गया है (वा. रा. कि. २२; ब्रह्मांड. ३.७. २१८)। वालिन् स्वयं अत्यंत पराक्रमी वानरराज था, जो राम दाशरथि के द्वारा किये गये इसके वध के कारण रामकथा में अमर हुआ है।

जन्म––वाल्मीकि रामायण के दाक्षिणात्य पाठ में, वालिन् एवं सुग्रीव को ब्रह्मा के अश्रुबिंदुओं से उत्पन्न हुए ऋक्षरजस् वानर के पुत्र कहा गया है। एक बार ब्रह्मा के तपस्या में मग्न हुआ ऋक्षरजस् पानी में कूद पड़ा। पानी के बाहर निकलते ही उसे एक लावण्यवती नारी का रूप प्राप्त हुआ, जिसे देख कर इंद्र एवं सूर्य कामासक्त हुए। उनका वीर्य क्रमशः स्त्रीरूपधारिणी ऋक्षरजा के बाल एवं ग्रीवा पर पड़ गया। इस प्रकार इंद्र एवं सूर्य के अंश से क्रमशः वालिन् एवं सुग्रीव का जन्म हुआ (वा. रा. कि. १६.२७–३९)।

जन्म होने के पश्चात्, इंद्र ने अपने पुत्र वालिन् को एक अक्षय्य सुवर्णमाला दे दी, एवं सूर्य ने अपने पुत्र सुग्रीव को हनुमत् नामक वानर सेवा में दे दिया। पश्चात् ऋक्षरजस् को ब्रह्मा की कृपा से पुनः पुरुषदेह प्राप्त हुआ, एवं वह किष्किंधा का राजा बन गया (वा. रा. बा. दाक्षिणात्य. १७.१०; ऋक्षरजस् देखिये)।

पराक्रम—वालिन् के पराक्रम की अनेकानेक कथाएँ वाल्मीकि रामायण एवं पुराणों में प्राप्त हैं। एक बार लंकाधिपति रावण अपना बलपौरुष का प्रदर्शन करने इससे युद्ध करने आया, किंतु इसने उसे पुष्करक्षेत्र में परास्त किया था (वा. रा. उ. ३४; रावण देखिये)। गोलभ नामक गंधर्व के साथ भी इसने लगातार पंद्रह वर्षों तक युद्ध किया, एवं अंत में उसका वध किया था (वा. रा. कि. २२.२९)। इसके बाणों में इतना सामर्थ्य था कि, एक ही बाण से यह सात साल वृक्षों को पर्णरहीत करता था (वा. रा. कि. ११.६७)। पंचमेद्रू नामक राक्षस से भी इसने युद्ध किया था, जिस समय उस राक्षस ने इसे निगल लिया था। तदुपरांत शिवपार्षद वीरभद्र ने उस राक्षस को खड़ा चीर कर, इसकी मुक्तता की थी (पद्म. पा. १०७)।

दुंदुभिवध––दुंदुभि नामक महाबलाढ्य राक्षस का भी वालि ने वध किया था। उस राक्षस के द्वारा समुद्र एवं हिमालय को युद्ध के लिए ललकारने पर, उन्होंने उसे वालि से युद्ध करने के लिए कहा। अतः दुंदुभि ने महिष का रूप धारण कर इसे युद्ध के लिए ललकारा। इसने अपने पिता इंद्र के द्वारा प्राप्त सुवर्णमाला पहन कर दुंदुभि को द्वंद्वयुद्ध में मार ड़ाला, एवं उसकी लाश एक योजन दूरी पर फेंक दी। उस समय दुंदुभि के कुछ रक्तकण ऋष्यमूक पर्वत पर स्थित मातंग ऋषि के आश्रम में गिर पड़े। इससे क्रुद्ध हो कर मातंग ऋषि ने वालि को शाप दिया, 'मेरे आश्रम के निकट एक योजन की कक्षा में तुम आओंगे, तो तुम मृत्यु की शिकार बनोंगे' (वा. रा. कि. ११)। यही कारण है कि, ऋष्यमूक पर्वत वालि के लिए अगम्य था।

सुग्रीव से शत्रुत्व––दुंदुभि के वध के पश्चात्, उसका पुत्र मायाविन् ने वालि से युद्ध शुरु किया, जिसके ही कारण आगे चल कर, यह एवं इसका भाई सुग्रीव में प्राणांतिक शत्रुता उत्पन्न हुई। एक बार वालि एवं सुग्रीव मायाविन् का वध करने निकल पड़े। इन्हें आते देख कर मायाविन् ने एक बिल में प्रवेश किया। तदुपरांत इसने सुग्रीव को बिल के द्वार पर खड़ा किया, एवं यह स्वयं मायाविन् का पीछा करता बिल के अंदर चला गया।

इसी अवस्था में एक वर्ष बीत जाने पर, एक दिन सुग्रीव ने बिल में से फेन के साथ रक्त निकलते देखा, एवं उसी समय असुर का गर्जन भी सुना। इन दुश्चिन्हों से सुग्रीव ने समझ लिया कि, वालि मारा गया है। अतः उसने पत्थर से बिल का द्वार बंद किया, एवं वह अपने भाई की उदकक्रिया कर के किष्किंधा नगरी लौटा। वालिवध की वार्ता सुन कर, मंत्रियों ने सुग्रीव की इच्छा के विरुद्ध उसका राज्याभिषेक किया। अपनी पत्नी रुमा एवं वालि की पत्नी तारा को साथ ले कर, सुग्रीव राज्य करने लगा।

तदुपरांत मायाविन् का वध कर वालि किष्किंधा लौटा। वहाँ सुग्रीव को राजसिंहासन पर देख कर यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं इसने उसकी अत्यंत कटु आलोचना की। सुग्रीव ने इसे समझाने का काफ़ी प्रयत्न किया, किंतु यह यही समझ बैठा कि, सुग्रीव ने यह सारा षड्यंत्र राज्यलिप्सा के कारण ही किया है। अतएव इसने उसे भगा दिया, एवं उसकी रुमा नामक पत्नी का भी हरण किया। सुग्रीव सारी पृथ्वी पर भटक कर, अंत में वालि के लिए अगम्य ऋष्यमूक पर्वत पर रहने लगा (वा. रा. कि. ९-१०)।

राम-सुग्रीव की मित्रता—ऋष्यमूक पर्वत पर राम एवं सुग्रीव की मित्रता प्रस्थापित होने पर, राम ने अपना बलपौरुष दिखाने के लिए अपने एक ही बाण से वहाँ स्थित सात ताड़ तरुओं का भेदन किया। आनंद रामायण में, इन सात ताड़ वृक्षों के संदर्भ में एक कथा प्राप्त है। एक बार ताड़ के सात फल वालि ने ऋष्यमूक पर्वत की गुफा में रक्खे थे। पश्चात् एक सर्प उस गुफा में आया, एवं सहजवश उन ताड़फलों पर बैठ गया। वालि ने

क्रुद्ध हो कर सर्प से शाप दिया, 'इन फलों से तुम्हारे शरीर पर ताड़ के सात वृक्ष उगेंगे'। तब साँप ने भी वालि से शाप दिया, 'इन सातों ताड़ के वृक्ष जो अपने बाण से तोड़ेगा, उसीके द्वारा तुम्हारी मृत्यु होगी'। राम के द्वारा इन वृक्षों का भेदन होने के कारण, उसीके हाथों वालिवध हुआ (आ. रा. ८)।

वालिवध—राम के कहने पर सुग्रीव ने वालि को द्वंद्वयुद्ध के लिए ललकारा (वा. रा. कि. १४)। पहले दिन हुए वालि एवं सुग्रीव के द्वंद्वयुद्ध के समय, ये दोनों भाई एक सरीखे ही दिखने के कारण, राम अपने मित्र सुग्रीव को कोई सहायता न कर सका। इस कारण सुग्रीव को पराजित हो कर ऋष्यमूक पर्वत पर लौटना पड़ा।

दूसरे दिन राम ने 'अभिज्ञान' के लिए सुग्रीव के गले में एक गजपुष्प की माला पहनायी, एवं उसे पुनः एक बार वालि से द्वंद्वयुद्ध करने भेज़ दिया। सुग्रीव का आह्वान सुन कर, यह अपनी पत्नी तारा का अनुरोध ठुकरा कर पुनः अपने महल से निकला। इंद्र के द्वारा दी गयी सुवर्णमाला पहन कर, यह युद्ध के लिए चल पड़ा। आनंद रामायण के अनुसार, गले में सुवर्णमाला धारण करनेवाला वालि युद्ध में अजेय था, जिस कारण युद्ध के पूर्व, राम ने एक सर्प के द्वारा इसकी माला को चुरा लिया था (आ. रा. ८)। तत्पश्चात् हुए द्वंद्वयुद्ध के समय, राम ने वृक्ष के पीछे से बाण छोड़ कर इसका वध किया (वा. रा. कि. १६३.१६)।

राम की आलोचना—मृत्यु के पूर्व, इसने वृक्ष के पीछे से बाण छोड़ कर अपना वध करनेवाले राम का अक्षत्रिय वर्तन बताते समय, राम की अत्यंत कटु आलोचना की—

अयुक्तं यदधर्मेण त्वयाऽहं निहतो रणे।
(वा. रा. कि. १७.५२)।

इसने राम से कहा, 'मैंने तुम्हारे साथ कोई अन्याय नहीं किया था। फिर भी जब मैं सुग्रीव के साथ युद्ध करने में व्यस्त था, उस समय तुमने वृक्ष के पीछे से बाण छोड़ कर मुझे आहत किया। तुम्हारा यह वर्तन संपूर्णतः अक्षत्रिय है। तुम क्षत्रिय नहीं, बल्कि खुनी हो। तुम्हें मुझसे युद्ध ही करना था, तो क्षत्रिय की भाँति चुनौति दे कर युद्धभूमि में चले आते। मैं तुम्हारा आवश्य ही पराजय कर लेता'।

वालि ने आगे कहा, 'ये सब पापकर्म तुमने सीता की मुक्ति के लिए ही किये। अगर यह बात तुम मुझसे कहते, तो एक ही दिन में मै सीता की मुक्ति कर देता। दशमुखी रावण का वध कर, उसकी लाश की गले में रस्सी बाँध कर एक ही दिन में मै तुम्हारे चरणों में रख देता। मैं मृत्यु से नहीं डरता हूँ। किन्तु तुम जैसे स्वयं को क्षत्रिय कहलानेवाले एक पापी पुरुष ने विश्वासघात से मेरा वध किया है, यह शल्य मैं कभी भी भूल नहीं सकता'।

अंत्यविधि—वालि के इस आक्षेप का राम ठीक प्रकार से जवाब न दे सका (राम दाशरथि देखिये)। मृत्यु के पूर्व वालि ने अपनी पत्नी तारा एवं पुत्र अंगद को सुग्रीव के हाथों सौंप दिया।

स्वभावचित्रण—राम का शत्रु होने के कारण, उत्तरकालीन बहुत सारे रामायण ग्रन्थों में एक क्रूरकर्मन् राजा के रुप में वालि का चरित्रचित्रण किया गया है। राम के द्वारा किये गये इसके वध का समर्थन देने का प्रयत्न भी अनेक प्रकार से किया गया है।

किन्तु ये सारे वर्णन अयोग्य प्रतीत होते हैं। वालि स्वयं एक अत्यंत पराक्रमी एवं धर्मनिष्ठ राजा था। इसने चार ही वेदों का अध्ययन किया था, एवं अनेकानेक यज्ञ किये थे। इसकी धर्मपरायणता के कारण स्वयं नारद ने भी इसकी स्तुति की थी (ब्रह्मांड. ३.७.२१४-२४८)। मृत्यु के पूर्व राम के साथ इसने किया हुआ संवाद भी इसकी शूरता, तार्किकता एवं धर्मनिष्ठता पर काफ़ी प्रकाश डालता है।

२. वरुणलोक का एक असुर (म. स. ९.१४)।

वालिशय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वालिशिख—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

वालिशिखायनि—एक आचार्य (सां. आ. ७.२१)।

वाल्मीकि—एक व्याकरणकार, जिसके विसर्गसंधी के संबंधित अभिमतों का निर्देश तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में प्राप्त है (तै. प्रा. ५.३६; ९.४; १८.६)।

२. एक पक्षिराज, जो गरुडवंशीय सुपर्णपक्षियों के वंश में उत्पन्न हुआ था। दास के अनुसार, ये पक्षी न हो कर, सप्तसिंधु की यायावर आर्य जाति थी (ऋग्वेदिक इंडिया, पृ. ६५, १४८)। ये कर्म से क्षत्रिय थे, एवं बड़े ही विष्णुभक्त थे (म. उ. ९९.६; ८)।

३. एक व्यास (व्यास देखिये)।

४. एक शिवभक्त, जिसने शिवभक्ति के संबंध में अपना अनुभव युधिष्ठिर को कथन किया था (म. अनु. १८.८-१०)।

वाल्मीकि ' आदिकवि '--एक सुविख्यात महर्षि, जो ' वाल्मीकि रामायण ' नामक संस्कृत भाषा के आद्य आर्ष महाकाव्य का रचयिता माना जाता है।

नाम--वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड के फलश्रुति-अध्याय में आदिकवि वाल्मीकि का निर्देश प्राप्त है (वा. रा. यु. १२८.१०५)। वहाँ वाल्मीकि के द्वारा प्राचीन काल में विरचित 'रामायण' नामक आदिकाव्य के पठन से पाठकों को धर्म, यश एवं आयुष्य प्राप्त होने की फलश्रुति दी गयी है। समस्त प्राचीन वाङ्मय में आदिकवि वाल्मीकि के संबंध में यह एकमेव निर्देश माना जाता है।

रामायण के बाल एवं उत्तर काण्डों में--आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, वाल्मीकि-रामायण के दो से छः तक काण्डों की रचना करनेवाला आदिकवि वाल्मीकि, एवं वाल्मीकि-रामायण के बाल एवं उत्तर काण्डों में निर्दिष्ट राम दशरथि राजा के समकालीन वाल्मीकि दो विभिन्न व्यक्ति थे। किन्तु ई. पू. १ ली शताब्दी में, इस ग्रंथ के बाल एवं उत्तर काण्ड की रचना जब समाप्त हो चुकी थी, उस समय आदिकवि वाल्मीकि एवं महर्षि वाल्मीकि ये दोनों एक ही मानने जाने की परंपरा प्रस्थापित हुई थी।

वाल्मीकि-रामायण के उत्तर-काण्ड में निर्देशित महर्षि वाल्मीकि प्रचेतस् ऋषि का दसवाँ पुत्र था, एवं यह जाति से ब्राह्मण तथा अयोध्या के दशरथ राजा का मित्र था (वा. रा. उ. ९६.१८; ४७.१६)।

आश्रम--वाल्मीकि-रामायण के बालकाण्ड में इसे तपस्वी, महर्षि एवं मुनि कहा गया है (वा. रा. बा. १.१; २.४; ४.४)। इसका आश्रम तमसा एवं गंगा के समीप ही था (वा. रा. बा. २.३)। यह आश्रम गंगा नदी के दक्षिण में ही था, क्यों कि, सीता त्याग के समय, लक्ष्मण एवं सीता अयोध्या से निकलने के पश्चात् गंगा नदी पार कर इस आश्रम में पहुँचे (वा. रा. उ. ४७)। बाद में प्रस्थापित हुए एक अन्य परंपरा के अनुसार, वाल्मीकि का आश्रम गंगा के उत्तर में यमुनानदी के किनारे, चित्रकूट के पास मानने जाने लगा (वा. रा. अयो. ५६.१६ दाक्षिणात्य; अ. रा. २.६. रामचरित. २. १२४)। आजकल भी वह बाँदा जिले में स्थित है।

वाल्मीकि-रामायण में इसे अपने आश्रम का कुलपति कहा गया है। प्राचीन भारतीय परंपरा के अनुसार, ' कुलपति ' उस ऋषि को कहते थे, जो दस हज़ार विद्यार्थियों का पालनपोषण करता हुआ उन्हें शिक्षा प्रदान करता था। इससे प्रतीत होता है कि, वाल्मीकि का आश्रम काफ़ी बड़ा था।

आख्यायिकाएँ--वाल्मीकि के पूर्वायुष्य से संबंधित अनेकानेक आख्यायिकाएँ महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं। किंतु वे काफ़ी उत्तरकालीन होने के कारण अविश्वसनीय प्रतीत होती हैं।

महाभारत एवं पुराणों में वाल्मीकि को 'भार्गव'(भृगुवंश में उत्पन्न) कहा गया है। महाभारत के ' रामोपाख्यान ' का रचयिता भी भार्गव बताया गया है (म. शां. ५७.४०)। भार्गव च्यवन नामक ऋषि के संबंध में यह कथा प्रसिद्ध है कि, वह तपस्या करता हुआ इतने समय तक निश्चल रहा की, उसका शरीर ' वल्मीक ' से आच्छादित हुआ (भा.९.३; च्यवन भार्गव देखिये)। यह कथा ' वाल्मीकि ' (जिसका शरीर वल्मीक से आच्छादित हो): नाम से मिलती-जुलती होने के कारण, वाल्मीकि एवं च्यवन इन दोनों के कथाओं में संमिश्रण किया गया, एवं इस कारण वाल्मीकि को भार्गव उपाधि प्रदान की गयी।

अध्यात्म रामायण में--वाल्मीकि के द्वारा वल्मीक से आच्छादित होने का इसी कथा का विकास, उत्तरकालीन साहित्य में वाल्मीकि को दस्यु, ब्रह्मघ्न एवं डाकू मानने में हो गया, जिसका सविस्तृत वर्णन स्कंद पुराण (स्कंद. वै. २१), एवं अध्यात्म रामायण में प्राप्त है।

इस कथा के अनुसार, यह जन्म से तो ब्राह्मण था, किंतु निरंतर किरातों के साथ रहने से, एवं चोरी करने से इसका ब्राह्मणत्व नष्ट हुआ। एक शूद्रा के गर्भ से इसे अनेक शूद्रपुत्र भी उत्पन्न हुए।

एक बार इसने सात मुनियों को देखा, जिनका वस्त्रादि छीनने के उद्देश्य से इसने उन्हें रोंक लिया। फिर उन ऋषियों ने इससे कहा, ' जिन कुटुंबियों के लिए तुम नित्य पापसंचय करते हो, उनसे जा कर पूछ लो की, वे तुम्हारे इस पाप के सहभागी बनने के लिए तैयार हैं, या नहीं '। इसके द्वारा कुटुंबियों को पूछने पर उन्होंने इसे कोरा जवाब दिया, ' तुम्हारा पाप तुम सम्हाल लो, हम तो केवल धन के ही भोगनेवाले हैं '।

यह सुन कर इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ, एवं इसने उन ऋषियों की सलाह की अनुसार, निरंतर ' मरा ' (' राम ' शब्द का उल्टा रूप) शब्द का जप करना प्रारंभ किया। एक सहस्त्र वर्षों तक निश्चल रहने के फलस्वरूप, इसके शरीर पर ' वल्मीक ' बन गया।

कालोपरांत ऋषियों ने इसे बाहर निकलने का आदेश दिया, एवं कहा, 'वल्मीक में तपस्या करने कारण तुम्हारा दूसरा जन्म हुआ है। अतएव आज से तुम वाल्मीकि नाम से ही सुविख्यात होंगे' (अ. रा. अयो. ६. ४२-८८)।

स्कंद पुराण में भी यही कथा प्राप्त है, किंतु वहाँ ऋषि बनने के पूर्व का इसका नाम अग्निशर्मन् दिया गया है।

आख्यायिकाओं का अन्वयार्थ—कई अभ्यासकों के अनुसार, पुराणों में प्राप्त इन सारे कथाओं में वाल्मीकि की नीच जाति प्रतिध्वनित होती है। किंतु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन हैं। जो कुछ भी हो, इन कथाओं के मूल रूप में 'रामनाम' का निर्देश अप्राप्य है। इससे प्रतीत होता है की, रामभक्तिसांप्रदाय का विकास होने के पश्चात्, यह सारा वृत्तांत रामनाम के गुणगान में परिणत कर दिया गया है (बुल्के, रामकथा पृ. ४७)। पुराणों में इसे छब्बीसवाँ वेदव्यास एवं श्रीविष्णु का अवतार कहा गया है (विष्णु. ३.३.१८)। यह निर्देश भी इसका महात्म्य बढाने के लिए ही किया गया होगा।

क्रौंचवध—इसकी शिष्य शाखा काफ़ी बडी थी, किन्तु उसमें भरद्वाज ऋषि प्रमुख था। एक बार यह भरद्वाज के साथ नदी से स्नान कर के वापस आ रहा था। मार्ग में इसने एक व्याध मैथुनासक्त क्रौंच पक्षियों में एक पर शरसंधान करते हुए देखा। उस समय उस पक्षी के प्रति इसके मन में दया उत्पन्न हुई, एवं इसके मुख से छंदोबद्ध आर्तवाणी निःसृत हुईः- '

> मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
> यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥
> (वा. रा. बा. २.१५)।

अकस्मात् मुख से निकले हुए शब्दों को एक वृत्तबद्ध अनुष्टुभ् श्लोक का रूप प्राप्त होने का चमत्कार देख कर, इसे मन ही मन अत्यंत आश्चर्य हुआ। इसके साथ ही साथ, क्रोध में एक निषाद को इतना कड़ा शाप देने के कारण, इसे अत्यंत दुःख भी हुआ।

इसी दुःखित अवस्था में यह बैठा था कि, ब्रह्मा वहाँ प्रकट हुए एवं उन्होंने कहा, 'पछताने का कोई कारण नहीं है। यह श्लोक तुम्हारी कीर्ति का कारण बनेगा। इसी छंद में तुम राम के चरित्र की रचना करो'।

ब्रह्मा के इस आदेशानुसार, इसने चौबीससहस्र श्लोकों से युक्त रामायण ग्रन्थ की रचना की (वा. रा. बा. २)।

रामायण की जन्मकथा—रामकथा की रचना करने की प्रेरणा वाल्मीकि को कैसी प्राप्त हुई, इस संबंध में इसने नारद के साथ किये एक संवाद का निर्देश वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। एक बार तप एवं स्वाध्याय में मग्न, एवं भाषणकुशल नारद से इसने प्रश्न किया, 'इस संसार में ऐसा कौन महापुरुष है, जो आचार विचार, एवं पराक्रम में आदर्श माना जा सकता है'। उस समय नारद ने इसे रामकथा का सार सुनाया, जिसे ही श्लोकबद्ध कर, इसने अपने 'रामायण' महाकाव्य की रचना की (वा. रा. बा. १)।

इस आख्यायिका से प्रतीत होता है कि, तत्कालीन समाज में रामकथा से संबंधित जो कथाएँ लोककथा के रूप में वर्तमान थी, उन्हींको वाल्मीकि ने छंदोबद्ध रूप दे कर रामायण की रचना की।

सीता संरक्षण—राम के द्वारा सीता का त्याग होने पर इसीने उसे सँभाला, एवं उसकी रक्षा की। उस समय सीता गर्भवती थी। बाद में यथावकाश उसे दो जुड़वे पुत्र उत्पन्न हुए। उनका 'कुश' एवं 'लव' नामकरण इसीने ही किया, एवं उन्हें पालपोस कर विद्यादान भी किया। वे कुमार बड़े होने पर, इसने उन्हें स्वयं के द्वारा विरचित रामायण काव्य सिखाया। पश्चात् कुश लव ने वाल्मीकि के द्वारा विरचित रामायण का गायन सर्वत्र करना शुरू किया। इस प्रकार वे अयोध्या नगरी में भी पहुँच गये, जहाँ राम दाशरथि के अश्वमेध यज्ञ के स्थान पर उन्होंने रामायण का गान किया (वा. रा. उ. ९३-९४)।

रामसभा में—कुशलव के द्वारा किये गये रामायण के साभिनय गायन से राम मंत्रमुग्ध हुआ, एवं जब उसे पता चला कि, ये ऋषिकुमार सामान्य भाट नही, बल्कि उसीके ही पुत्र है, तब वह बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने सीता को अपने पास बुलवा लिया। उस समय वाल्मीकि स्वयं सीता के साथ रामसभा में उपस्थित हुआ, एवं इसने सीता के सतीत्व की साक्ष दी। उस समय इसने अपने सहस्र वर्षों के तप का, एवं सत्यप्रतिज्ञता का निर्देश कर सीता का स्वीकार करने की प्रार्थना राम से की (वा. रा. उ. ९६.२०)। पश्चात् इसीके कहने पर सीता ने पातिव्रत्य की कसम खा कर भूमि में प्रवेश किया।

पौराणिक वाङ्मय की प्रस्थानत्रयी—पौराणिक साहित्य में रामायण, महाभारत एवं भागवत ये तीन प्रमुख ग्रंथ माने जाते है, एवं इस साहित्य में प्राप्त तत्त्वज्ञान की 'प्रस्थानत्रयी' भी इन्हीं ग्रंथो से बनी हुई मानी जाती है। वेदांत ग्रंथों की प्रस्थानत्रयी में अंतर्भूत किये जानेवाले भगवद्गीता, उपनिषद् एवं ब्रह्मसूत्र की तरह, पौराणिक साहित्य की प्रस्थानत्रयी बनानेवाले ये तीन ग्रंथ भी भारतीय तत्त्वज्ञान का विकास एवं प्रसार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

उपर्युक्त ग्रंथों में से रामायण एवं भागवत क्रमशः कर्मयोग, और भक्तितत्त्वज्ञान के प्रतिपादक ग्रंथ हैं। इसी कारण दैनंदिन व्यवहार की दृष्टि से, रामायण ग्रंथ भागवत से अधिक हृदयस्पर्शी एवं आदर्शभूत प्रतीत होता है। इस ग्रंथ में आदर्श पुत्र, भ्राता, पिता, माता आदि के जो कर्तव्य बतायें गये हैं, वे एक आदर्श बन कर व्यक्तिमात्र को आदर्श जीवन की स्फूर्ति प्रदान करते हैं।

व्यक्तिगुणों का आदर्श–इस प्रकार रामायण में भारतीय दृष्टिकोन से आदर्श जीवन का चित्रण प्राप्त है, किन्तु उस जीवन के संबंधित तत्त्वज्ञान वहाँ ग्रथित नहीं है, जो महाभारत में प्राप्त है। महाभारत मुख्यतः एक तत्त्वज्ञानविषयक ग्रंथ है, जिसमें आदर्शात्मक व्यक्तिचित्रण के साथ साथ, आदर्श–जीवन के संबंधित भारतीय तत्वज्ञान भी ग्रथित किया गया है। व्यक्तिविषयक आदर्शों को शास्त्रप्रामाण्य एवं तत्त्वज्ञान की चौखट में बिठाने के कारण, महाभारत सारे पुराण ग्रंथों में एक श्रेष्ठ श्रेणि का तत्वज्ञान–ग्रंथ बन गया है।

किन्तु इसी तत्त्वप्रधानता के कारण, महाभारत में वर्णित व्यक्तिगुणों के आदर्श धुंधले से हो गये हैं, जिनका सर्वोच्च श्रेणि का सरल चित्रण रामायण में पाया जाता है। इस प्रकार जहाँ महाभारत की सारी कथावस्तु परस्पर स्पर्धा, मत्सर, कुटिलता एवं विजिगिषु वृत्ति जैसे राजस एवं तामस वृत्तियों से ओतप्रोत भरी हुई है, वहाँ रामायण की कथावस्तु में स्वार्थत्याग, पितृपरायणता, बंधुप्रेम जैसे सात्विक गुण ही प्रकर्ष से चित्रित किये गये है।

यही कारण है कि, वाल्मीकि-रामायण महाभारत से कतिपय अधिक लोकप्रिय है, एवं उससे स्फूर्ति पा कर भारत एवं दक्षिणीपूर्व एशिया की सभी भाषाओं में की गयी रामकथाविषयक समस्त रचनाएँ, सदियों से जनता के नित्यपाठ के ग्रंथ बन चुकी हैं (राम दाशरथि देखिये)।

इस प्रकार, जहाँ महाभारत में वर्णित व्याक्तितत्त्वज्ञान-विषयक चर्चाओं के विषय बन चुकी है, वहाँ वाल्मीकि-रामायण में वर्णित राम, लक्ष्मण एवं सीता देवतास्वरूप पा कर सारे भरतखंड में उनकी पूजा की जा रही है।

महाभारत से तुलना—संस्कृत साहित्य के इतिहास में रामायण एवं महाभारत इन दोनों ग्रंथों को महाकाव्य कहा जाता है। किंतु प्रतिपाद्य विषय एवं निवेदनशैली इन दोनों दृष्टि से वे एक दूसरे से बिल्कुल विभिन्न हैं। जहाँ महाभारत एक इतिहासप्रधान काव्य है, वहाँ रामायण एक काव्यप्रधान चरित्र है। महाभारत के अनुक्रमणीपर्व में उस ग्रंथ को सर्वत्र 'भारत का इतिहास' (भारतस्येतिहास), भारत की ऐतिहासिक कथाएँ (भारतसंज्ञिताः कथाः) कहा गया है (म. आ. १.१४. १७)। इसके विरुद्ध रामायण में, 'राम एवं सीता के चरित्र का, एवं रावणवध का काव्य मैं कथन करता हूँ' ऐसे वाल्मीकि के द्वारा कथन किया गया है—

> काव्यं रामायणं कृत्स्नं सीतायाश्चरितम् महत्
> पौलस्त्यवधमित्येव चकार चरितव्रतः॥
>
> (वा. रा. बा. ४.७.)।

इस प्रकार महाभारत की कथावस्तु अनेकानेक ऐतिहासिक कथाउपकथाओं को एकत्रित कर रचायी गयी है। किन्तु वाल्मीकि–रामायण की सारी कथावस्तु राम एवं उसके परिवार के चरित्र से मर्यादित है। राम, लक्ष्मण, सीता, दशरथ आदि का 'हसित,' 'भाषित' एवं 'चेष्टित' (पराक्रम) का वर्णन करना, यही उसका प्रधान हेतु है (वा. रा. बा. ३.४)।

इन दोनों ग्रंथों का प्रतिपाद्य विषय इस तरह सर्वतोपरि भिन्न होने के कारण, उनकी निवेदनशैली भी एक दूसरे से विभिन्न है। रामायण की निवेदनशैली वर्णनात्मक, विशेषणात्मक एवं अधिक तर काव्यमय है। उसमें प्रसाद होते हुए भी गतिमानता कम है। इसके विरुद्ध महाभारत की निवेदनशैली साफ़सुथरी, नाट्यपूर्ण एवं गतिमान् है।

रामायण की श्रेष्ठता—इसी कारण हिन्दुधर्मग्रंथों में रामायण की श्रेष्ठता के संबंध में डॉ. विंटरनिट्झ से ले कर विनोबाजी भावे तक सभी विद्वानों की एकवाक्यता है। श्री. विनोबाजी ने लिखा है, 'चित्तशुद्धि प्रदान करनेवाले समस्त हिन्दुधर्म ग्रंथों में वाल्मीकिरामायण भगवद्गीता से भी अधिक श्रेष्ठ है। जहाँ भगवद्गीता नवनीत

है, वहाँ रामायण माता के दूध के समान है। नवनीत का उपयोग मर्यादित लोग ही कर सकते है, किन्तु माता का दूध तो सभीं के लिए लाभदायक रहता है'।

इसीलिए वाल्मीकि रामायण के प्रारंभ में ब्रह्मा ने रामायण के संबंधित जो आशीर्वचन वाल्मीकि को प्रदान किया है, वह सही प्रतीत होता है:-

यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले
तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति ॥
(वा. रा. बा. २.३६)।

(इस सृष्टि में जब तक पर्वत खड़े है, एवं नदियाँ बहती है, तब तक रामकथा का गान लोग करते ही रहेंगे)।

रामायण की ऐतिहासिकता—डॉ. याकोबी के अनुसार, वर्ण्य विषय की दृष्टि से 'वाल्मीकि-रामायण' दो भागों में विभाजित किया जा सकता है:-१. बाल एवं अयोध्या कांड में वर्णित अयोध्य की घटनाएँ, जिनका केंद्रबिंदु इक्ष्वाकुराजा दशरथ है; २. दंडकारण्य एवं रावणवध से संबंधित घटनाएँ, जिनका केंद्रबिंदु रावण दशग्रीव है। इनमें से अयोध्या की घटनाएँ ऐतिहासिक प्रतीत होती है, जिनका आधार किसी निर्वासित इक्ष्वाकुवंशीय राजकुमार से है। रावणवध से संबंधित घटनाओं का मूल-उद्गम वेदों में वर्णित देवताओं की कथाओं में देखा जा सकता है (याकोबी, रामायण पृ. ८६; १२७)।

रामकथा से संबंधित इन सारे आख्यान-काव्यों की रचना इक्ष्वाकुवंश के सूतों ने सर्वप्रथम की, जिनमें रावण एवं हनुमत् से संबंधित प्रचलित आख्यानों को मिला कर वाल्मीकि ने रामायण की रचना की।

जिस प्रकार वाल्मीकि के पूर्व रामकथा मौखिक रूप में वर्तमान थी, उसी प्रकार दीर्घकाल तक 'वाल्मीकि-रामायण' भी मौखिक रूप में ही जीवित रहा। इस काव्य की रचना के पश्चात्, कुशीलवों ने उसे कंठस्थ किया, एवं वर्षों तक वे उसे गाते रहे। किंतु अंत में इस काव्य को लिपिबद्ध करने का कार्य भी स्वयं वाल्मीकि ने ही किया, जो 'वाल्मीकि रामायण' के रूप आज भी वर्तमान है।

इसीसे ही स्फूर्ति पा कर भारत की सभी भाषाओं में रामकथा पर आधारित अनेकानेक ग्रन्थों की रचना हुई, जिनके कारण वाल्मीकि एक प्रातःस्मरणीय विभूति बन गया:—

मधुममय-भणतीनां मार्गदर्शी महर्षिः।

आदिकवि वाल्मीकि—वाल्मीकिप्रणीत रामायण संस्कृत भाषा का आदिकाव्य माना जाता है, जिसकी रचना अनुष्टुम् छंद में की गयी है।

वाल्मीकि रामायण के पूर्वकाल में रचित कई वैदिक ऋचाएँ अनुष्टुम् छंद में भी थी। किंतु वे लघु गुरु-अक्षरों के नियंत्रणरहित होने के कारण, गाने के लिए योग्य (गेय) नहीं थी। इस कारण ब्राह्मण, आरण्यक जैसे वैदिकोत्तर साहित्य में अनुष्टुम् छंद का लोप हो कर, इन सारे ग्रन्थों की रचना गद्य में ही की जाने लगी।

इस अवस्था में, वेदों में प्राप्त अनुष्टुम् छंद को लघु-गुरु अक्षरों के नियंत्रण में बिठा कर वाल्मीकि ने सर्वप्रथम अपने 'मा निषाद' श्लोक की, एवं तत्पश्चात् समग्र रामायण की रचना की। छंदःशास्त्रीय दृष्टि से वाल्मीकि के द्वारा प्रस्थापित नये अनुष्टुम् छंद की विशेषता निम्नप्रकार थी:—

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पंचमम्।
द्विचतुःपादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः॥

(वाल्मीकि के द्वारा प्रस्थापित अनुष्टुम् छंद में, श्लोक के हर एक पाद का पाँचवाँ अक्षर लघु, एवं छठवाँ अक्षर गुरु था। इसी प्रकार समपादों में से सातवाँ अक्षर ह्रस्व, एवं विषमपाद में सातवाँ अक्षर दीर्घ था)।

इसी अनुष्टुम् छंद के रचना के कारण वाल्मीकि संस्कृत भाषा का आदि-कवि कहलाया गया। इतना ही नहीं 'विश्व' जैसे संस्कृत भाषा के शब्दकोश में 'कवि' शब्द का अर्थ भी 'वाल्मीकि' ही दिया गया है।

गेय महाकाव्य—वाल्मीकि के द्वारा रामायण की रचना एक पाठ्य काव्य के नाते नहीं, बल्कि एक गेय काव्य के नाते की गयी थी। रामायण की रचना समाप्त होने के पश्चात्, इस काव्य को नाट्यरूप में गानेवाले गायकों कि खोज वाल्मीकि ने की थी:-

चिन्तयामास को न्वेतत् प्रयुञ्जादिति प्रभुः॥
पाठ्ये गेये च मधुरं प्रमाणैस्त्रिभिरन्वितम्।
जातिभिः सप्तभिर्युक्तं तंत्रीलय-समन्वितम्॥
(वा. रा. बा. ४.३; ८)।

(रामायण की रचना करने के पश्चात्, इस महाकाव्य के साभिनय गायन का प्रयोग त्रिताल एवं सप्तजाति में

तथा वीणा के स्वरों में कौन गायक कर सकेगा, इस संबंध में वाल्मीकि खोज करने लगा।)

वाल्मीकि के काल में रामायण का केवल गायन ही नही, बल्कि अभिनय भी किया जाता था, ऐसा स्पष्ट निर्देश वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। वहाँ रामायण का गायन करनेवाले कुशलव को 'स्थानकोविद' (कोमल, मध्य एवं उच्च स्वरोच्चारों में प्रवीण), 'मार्गगानतज्ज्ञ' (मार्ग नामक गायनप्रकार में कुशल) ही नहीं, बल्कि 'गांधर्वतत्वज्ञ' (नाट्यशास्त्रज्ञ), एवं 'रूपलक्षणसंपन्न' (अभिनयसंपन्न) कहा गया है (वा. रा. बा. ४.१०. ११; कुशीलव देखिये)।

वाल्मीकिप्रणीत रामकथा को आधुनिक काव्य के गेय छंदों में बाँध कर गीतों के रूप में प्रस्तुत करने का सफल प्रयत्न, मराठी के सुविख्यात कवि ग. दि. माडगूळकर के द्वारा 'गीतरामायण' में किया गया है। गेय रूप में रामायणकाव्य अधिक मधुर प्रतीत होता है, इसका अनुभव 'गीतरामायण' के श्रवण से आता है।

आर्ष महाकाव्य—जिस प्रकार वाल्मीकि संस्कृत भाषा का आदिकवि है, उसी प्रकार इसके द्वारा विरचित रामायण संस्कृत भाषा का पहला 'आर्ष महाकाव्य' माना जाता है। 'आर्ष महाकाव्य' के गुणवैशिष्ट्य महाभारत में निम्नप्रकार दिये गये है—

इतिहासप्रधानार्थं शीलचारित्र्यवर्धनम्।
धीरोदात्तं च गहनं श्रव्यैर्वृत्तैरलंकृतम्॥
लोकयात्राक्रमश्चापि पावनः प्रतिपाद्यते।
विचित्रार्थपदाख्यानं सूक्ष्मार्थन्यायबृंहितम्॥

(इतिहास पर आधारित, एवं सदाचारसंपन्न आदर्शों का प्रतिपादन करनेवाले काव्य को आर्ष महाकाव्य कहते हैं। वह सद्‌गुण एवं सदाचार को पोषक, धीरोदात्त एवं गहन आशय से परिपूर्ण, श्रवणीय छंदों से युक्त रहता है)।

वाल्मीकि रामायण में प्राप्त भूगोलवर्णन—इस ग्रंथ में उत्तर भारत, पंजाब एवं दक्षिण भारत के अनेकानेक भौगोलिक स्थलों का निर्देश एवं जानकारी प्राप्त है। कोसल देश एवं गंगा नदी के पडोस के स्थलों का भौगोलिक स्थान, एवं स्थलवर्णन उस ग्रंथ मे जितने स्पष्ट रूप से प्राप्त है, उतनी स्पष्टता से दक्षिण भारत के स्थलों का वर्णन नही मिलता। इससे प्रतीत होता है कि, वाल्मीकि को उत्तर भारत एवं पंजाब प्रदेश की जितनी सूक्ष्म जानकारी थी, उतनी दक्षिण भारत एवं मध्यभारत की नहीं थी। कई अभ्यासकों के अनुसार, वाल्मीकि स्वयं उत्तर भारत का निवासी था, एवं गंगा नदी को मिलने वाली तमसा नदी के किनारे अयोध्या नगरी के समीप इसका आश्रम था। वाल्मीकि रामायण में निर्दिष्ट प्रमुख भौगोलिक स्थल निम्न प्रकार है:—

(१) **उत्तर भारत के स्थल:**—१. अयोध्या (वा. रा. बा. ६.१); २. सरयू नदी (वा. रा. बा. २४.१०); ३. तमसा नदी (वा. रा. बा. २.४); ४. कोसल देश (वा. रा. अयो. ५०.१०); ५. शृंगवेरपुर (वा. रा. अयो. ५०.२६); ६. नंदिग्राम (वा. रा. अयो. ११५.१२); ७. मिथिला, सिद्धाश्रम, गौतमाश्रम, एवं विशाला नगरी (वा. रा. बा. ३१.६८); ८. गिरिव्रज अथवा राजगृह (वा. रा. अयो. ६८.२१); ९. भरद्वाजाश्रम (वा. रा. अयो. ५४.९); १०. बाह्लीक (वा. रा. अयो. ६८.१८); ११. भरत का अयोध्या-केकय-गिरिव्रज प्रवास (वा. रा. अयो. ६८. १२–२१; ७१.१–१८)।

(२) **दक्षिण भारत के स्थल**—१. पंचवटी (वा. रा. अर. १३.१२); २. पंपा नदी, (वा. रा. अर. ६.१७); ३. दण्डकारण्य (वा. रा. बा. १०.२५); ४. अगस्त्याश्रम (वा. रा. अर. ११. ८३); ५. जनस्थान (वा. रा. उ. ८१.२०); ६. किष्किंधा (वा. रा. कि. १२.१४) ७. लंका (वा. रा. कि. ५८.१९-२०); ८. विंध्याद्रि (वा. रा. कि. ६०.७)।

रामायण का रचनाकाल—रामायण के सात कांडों में से, दूसरे से ले कर छटवे तक के कांडों (अर्थात् अयोध्या, अरण्य, किष्किंधा, सुंदर एवं युद्ध) की रचना स्वयं वाल्मीकि के द्वारा की गयी थी। बाकी बचे हुए दो कांड (अर्थात् पहला बालकांड, एवं सातवा उत्तरकांड) वाल्मीकि के द्वारा विरचित 'आदि रामायण' में अंतर्भूत नही थे। उनकी रचना वाल्मीकि के उत्तरकालीन मानी जाती है। इन दोनों कांडों में वाल्मीकि का एक पौराणिक व्यक्ति के रूप में निर्देश प्राप्त है।

आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, वाल्मीकि के 'आदिकाव्य' का रचनाकाल महाभारत के पूर्व में, अर्थात् ३०० ई. पू. माना जाता है; एवं वाल्मीकि के प्रचलित रामायण का रचनाकाल दूसरि शताब्दी ई. पू. माना जाता है।

वाल्मीकि के 'आदिकाव्य' के रचनाकाल के संबंध में विभिन्न संशोधकों के अनुमान निम्नप्रकार हैं:—— १.

डॉ. याकोबी–६ वी शताब्दी ई. पू; २. डॉ. मॅक्डोनेल ६ वी शताब्दी ई. पू.; ३. डॉ. मोनियर विल्यम्स–५ वी शताब्दी ई. पू.; ४. श्री. चिं. वि. वैद्य–५ वी शताब्दी ई. पू.; ५. डॉ. कीथ–४ शताब्दी ई. पू.; ६. डॉ. विंटरनित्स–३ री शताब्दी ई. पू.।

उपर्युक्त विद्वानों में से, डॉ. याकोबी, डॉ. विल्यम्स, श्री. वैद्य, एवं डॉ. मॅक्डोनेल वाल्मीकि के 'आदिकाव्य' की रचना बौद्ध साहित्य के पूर्वकालीन मानते हैं। किंतु बौद्ध साहित्य में जहाँ रामकथा संबंधी स्फुट आख्यान आदि का निर्देश प्राप्त है, वहाँ वाल्मीकि रामायण का निर्देश अप्राप्य है। इससे उस ग्रन्थ की रचना बौद्ध साहित्य के उत्तरकालीन ही प्रतीत होती है।

पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में भी वाल्मीकि अथवा वाल्मीकि रामायण का निर्देश अप्राप्य है। किंतु उस ग्रंथ में कैकेयी, कौसल्या, शूर्पणखा आदि रामकथा से संबंधित व्यक्तियों का निर्देश मिलता है (पां. सू. ७.३.२; ४.१.१५५; ६. २.१२२)। इससे प्रतीत होता है कि, पाणिनि के काल में यद्यापि रामकथा प्रचलित थी, फिर भी वाल्मीकि रामायण की रचना उस समय नही हुई थी।

महाभारत में प्राप्त रामायण के उद्धरण—महाभारत एवं 'वाल्मीकि रामायण' में से रामायण ही महाभारत से पूर्वकालीन प्रतीत होता है। कारण कि, महाभारत में वाल्मीकि के कई उद्धरण प्राप्त हैं, पर रामायण में महाभारत का निर्देश तक नही आता।

सात्यकि ने भूरिश्रवस् राजा का प्रायोपविष्ट अवस्था में शिरच्छेद किया। अपने इस कृत्य का समर्थन देते हुए, सात्यकि वाल्मीकि का एक श्लोकार्ध (हनुमत्–इंद्रजित् संवाद, वा. रा. यु. ८१.२८) उद्धृत करते हुए कहता है :—

> अपि चायं पुरा गीतः श्लोको वाल्मीकिना भुवि।
> न हन्तव्या स्त्रियश्चेति यद्ब्रवीषि प्लवंगम॥
> सर्वकालं मनुष्येण व्यवसायवता सदा॥
> पीडाकरममित्राणां यत्स्यात्कर्तव्यमेव तत्॥
> (म. द्रो. ११८.४८.९७५--९७६*)।

महाभारत में अन्यत्र रामायण को प्राचीनकाल में रचा गया काव्य (पुरागीतः) कहा गया है (म. व.२७३.६)।

वाल्मीकि रामायण के संस्करण--इस ग्रंथ के संप्रति चार प्रामाणिक संस्करण उपलब्ध हैं, जिनमें १०–१५ सर्गों से बढ़ कर अधिक विभिन्नता नही हैं :—

(१) **उदिच्य पाठ**, जो निर्णयसागर प्रेस एवं गुजराती प्रिन्टिंग प्रेस, बंबई के द्वारा प्रकाशित है। इस पर नागोजीभट्ट के द्वारा 'तिलक टीका' प्राप्त है, जो रामायण की सब से विस्तृत एवं उत्कृष्ठ टीका मानी जाती है।

(२) दाक्षिणात्य पाठ, जो मध्वविलास बुक डेपो, कुंभकोणम् के द्वारा प्रकाशित है। इस संस्करण पर श्रीमध्वाचार्य के तत्त्वज्ञान का काफ़ी प्रभाव प्रतीत होता है। फिर भी, यह संस्करण 'उदिच्य पाठ' से मिलता-जुलता है।

(३) गौडीय पाठ, जो डॉ. जी. गोरेसियो के द्वारा संपादित, एवं कलकत्ता संस्कृत सिरीज में १८४३–१८६७ ई. के बीच प्रकाशित हो चुका है।

(४) **पश्चिमोत्तरीय (काश्मीरी) पाठ**, जो लाहोर के डी. ए. व्ही. कॉलेज के द्वारा १९२३ ई. में प्रकाशित किया गया है।

ग्रन्थ—'वाल्मीकि रामायण' के अतिरिक्त इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैः—१. वाल्मीकिसूत्र; २. वाल्मीकिशिक्षा; ३. वाल्मीकिहृदय; ४. गंगाष्टक (C. C.)।

वाल्मीकि भार्गव--एक ऋषि, जो वरुण एवं चर्षणी के दो पुत्रों में से एक था (भा. ६.१८.४)। इसके भाई का नाम भृगु था। केवल भार्गव नाम से ही इसका निर्देश अन्यत्र प्राप्त है (म. शां. ५७.४०)।

महाभारत में इसे एवं च्यवन भार्गव ऋषि को एक ही माना गया है, एवं इसीके द्वारा 'रामायण' की रचना किये जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। किंतु वह सही नही प्रतीत होता है (वाल्मीकि आदिकवि देखिये)।

वासना—अर्क नामक वसु की पत्नी (भा. ६.६.१३)।

वासव—इंद्र का नामान्तर (ब्रह्मांड. २.१८.४४)।

वासवी--सत्यवती (मत्स्यगंधा) का पैतृक नाम (म. आ. ५७.५७)। यह उपरिचर वसु की कन्या थी, जिस कारण इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ। इसकी माता का नाम अद्रिका था, जो स्वयं एक मत्स्यी थी। इसका विवाह पराशर ऋषि से हुआ था, जिससे इसे व्यास नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (वायु. १.४०)।

वासाश्व—एक मंत्रद्रष्टा ऋषि, जो वैश्य जाति में उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. १४५.११६)।

वासिष्ठ—एक पैतृक नाम, जो ऋग्वेद में एवं उत्तर-कालीन वैदिक संहिताओं में निम्नलिखित आचार्यों के

लिए प्रयुक्त किया गया हैः- इंद्रप्रमति, उपमन्यु, कर्णश्रुत, चित्रमहस्, चैकितानेय, द्युम्नीक, प्रथ, मन्यु, मृळीक, रौहिण, वसुक्र, वृषगण, व्याघ्रपाद, शक्ति, एवं सात्यहव्य (ऋ. ९. ९७; तै. सं. ६.६.२.१; का. सं. ३४.१७; तै. आ. १.१२.७)।

२. एक आचार्यसमूह (जै. उ. ब्रा. ३.१५.२)।

३. वसिष्ठपुत्र शक्ति का नामान्तर (शक्ति देखिये)।

वासिष्ठ मित्रयु—एक आचार्य, जो व्यास के छः पुराणप्रवक्ता शिष्यों में से एक था (वायु. ६१.५६; ब्रह्मांड. २.३५.६५)।

वासुकि--नागों का एक राजा, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम शतशीर्षा था (म. उ. ११५.४६०*)। जरत्कारु ऋषि की पत्नी जरत्कारु इसकी बहन थी (म. आ. ३५.३८९*)।

देवासुरों के समुद्रमंथन के समय, यह मंथनदण्ड की रस्सी बन गया था (म. आ. १६-१२)। इसका निवासस्थान 'नागधन्वातीर्थ' में था, जहाँ देवताओं ने नागराज के पद पर इसका अभिषेक किया था। धृतराष्ट्र नामक नाग ने इसे विष्णुपुराण कथन किया था, जो आगे चल कर इसने वत्स को कथन किया (विष्णु. ६. ८.४६)।

यह शिव का अनन्य भक्त था, एवं शिव के ही शरीर पर निवास करता था। त्रिपुरदाह के समय, यह शिव के धनुष की प्रत्यंचा, एवं उसके रथ का कूबर बन गया था (म. द्रो. परि. १.२५.१२; क. २४.२५८*)।

सर्पसत्र—जनमेजय के सर्पसत्र में इसके निम्नलिखित पंद्रह कुल जल कर भस्म हुएः-१. कोटिश; २. मानस; ३. पूर्ण; ४. शल; ५. पाल; ६. हलीमक; ७. पिच्छल; ८. कौणप; ९. चक्र; १०. कालवेग; ११. प्रकालन; १२. हिरण्यबाहु; १३. शरण; १४. कक्षक एवं १५. कालदन्तक (म. आ. ५२.५-६)।

आस्तीक नामक ऋषि इसका भतिजा था, जिसने इसके बाकी कुलों को संहार से बचा लिया।

वासुक्र—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया हैः—वसुकरण (ऋ. १०.६५); वसुकृत् (ऋ. १०.२०)।

वासुदेव—श्रीविष्णु के श्रीकृष्ण नामक आठवें अवतार का नामान्तर (कृष्ण देखिये)। भगवान् विष्णु के उपासक वासुदेव कृष्ण के रूप में ही प्रायः उसकी उपासना करते है (विष्णु देखिये)।

२. एक वास्तुशास्त्रज्ञ, जिसका वास्तुशास्त्रविषयक ग्रन्थ उपलब्ध है (मत्स्य. २५२.३)।

३. पुंड्र देश के वासुदेव नामक राजा का नामान्तर (पौण्ड्रक वासुदेव देखिये)।

वास्तु—विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वास्तुपश्य—एक ब्राह्मण (जै. ब्रा. ३.१२०)। पाठभेद—'वास्तुपस्य'।

वास्य--एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से वेदमित्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसे वत्स, वात्स्य, एवं मत्स्य नामान्तर प्राप्त थे (व्यास देखिये)।

वाहन--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्य परंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे कृत का शिष्य कहा गया है (ब्रह्मांड. २.३५.५१)।

वाहनप—गौरपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसे 'वाहयौज' नामान्तर भी प्राप्त था।

वाहिक--एक वेदवेत्ता ब्राह्मण, जो दुःस्थिति के कारण नमक बेच कर अपनी जीविका चलाता था। इसने जीवन में अनेकानेक पापकर्म किये। अंत में यह एक शेर के द्वारा मारा गया। किंतु इसका मांस गंगा नदी में गिरने के कारण, इसका उद्धार हुआ (स्कन्द. २.४.१-२८)।

वाहिनी--सोमवंशीय कुरु राजा की पत्नी, जिसे अभिष्वत् आदि पाँच पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ८९. ४५)।

वाहिनीपति--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाहीक—एक लोकसमूह, जो पंजाब प्रदेश में विपाशा नदी के तटपर स्थित था (म. क. ४४.२०-२६; मी. १०.४५)। महाभारत में इन्हे, 'माद्र,' 'जार्तिक' 'आरट्ट' एवं 'पंचनद' आदि नामान्तर दिये गये हैं।

वाहीक का शब्दशः अर्थ 'बाहर के' होता है। उत्तर पंजाब प्रदेश में हिमालय की तलटही में दरद लोगों के नजदीक रहनेवाले 'वाहलिक' लोग, सरस्वती नदी के कारण, मध्यदेश में रहनेवाले आर्य लोगों से अलग हो गये। इसी कारण, इन्हें वाहीक नाम प्राप्त हुआ। आगे चल कर पंजाब में रहनेवाले कंबोज, यवन, दरद आदि सारे लोगों को वाहीक सामूहिक नाम प्राप्त हुआ।

महाभारत में प्राप्त कर्ण-शल्यसंवाद में इन लोगों की कर्ण ने कटु आलोचना की है। शल्य स्वयं मद्र एवं

वाहीक लोगों का राजा था। इन लोगों की उत्पत्ति के बारे में एक कल्पनारम्य एवं व्यंजनायुक्त कथा वहाँ दी गयी है। विपाशा (व्यास) नदी के किनारे 'वही' एवं 'हीक' नामक निशाचर पिशाचों का एक जोड़ा रहता था, जिसकी संतान आगे चल कर 'वाहीक' नाम से प्रसिद्ध हुई (म. क. ३०.४४)।

वाहुरि--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाह्निक--एक राजकुल, जिसमें तीन राजा समाविष्ट थे (वायु. ९९. ३७३)।

वाह्यक--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाह्यका--एक राजकन्याद्वय, जो मत्स्य के अनुसार संजय राजा की कन्याएँ, एवं यादव राजा सात्वत भजमान राजा की पत्नियाँ थी। इनके पुत्रों के नाम निमि, क्रमिल एवं वृष्णि थे (मत्स्य. ४४.४९-५०)।

वाह्यमय--नीलपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाह्यायन--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'महामाग।

विंश--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार क्षुप राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कल्याण था (वायु. ८६.६)।

२. (सू. इ.) इक्ष्वाकु राजा का पुत्र, जिसके पुत्र का नाम विविंश था (म. आश्व. ४.५)।

विकचा--विरूपक नामक नैर्ऋत राक्षस की पत्नी, जिसे भूमिराक्षस नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (ब्रह्मांड. ३.७.२३२)।

विकट--धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.३)। भीमसेन को घायल करनेवाले धृतराष्ट्र के चौदह पुत्रों में से यह एक था। अन्त में भीमसेन ने इसका वध किया (म. क. ३५.१४)।

२. रावणपक्षीय एक राक्षस, जो अंगद के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. १२५)।

३. रुद्रगणों में से एक।

४. एक राक्षस, जिसे गंगाजल पिने के कारण मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. उ. २०४-२०५)।

विकटा--एक राक्षसी, जो अशोकवन में सीता पर पहरा देनेवाली राक्षसियों में से एक थी (वा. रा. सुं. २३.१४)।

विकटानन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र विकट का नामान्तर।

विकंपन--रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो राम-रावण युद्ध में मारा गया (भा. ९.१०.१८)।

२. रुद्रगणों में से एक।

विकर्ण--धृतराष्ट्र का एक महारथि पुत्र, जो कौरव पक्ष के ग्यारह महारथियों में से एक था। द्रौपदी स्वयंवर में यह उपस्थित था।

यह बड़ा न्यायी था, एवं द्रौपदीवस्त्रहरण के समय, विदुर की तरह इसने भी इस पापकर्म की ओर घृणा प्रकट की थी (म. स. ६१.१२-२४)। भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था:- सुतसोम (म. भी. ४३.५६); सहदेव (म. भी. ६७.२०); घटोत्कच (म. भी. ८८.३२); नकुल (म. द्रो. ८२.३०)। अंत में भीमसेन ने इसका वध किया, जिस समय, इसके लिए उसने काफ़ी दुःख प्रकट किया था (म. द्रो. ११२.३०)।

विकर्तन--कोढ़ से पीड़ित एक सूर्यवंशीय राजा, जो साभ्रमती नामक नदी में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ। उस स्थान को 'राजखड्ग' कहते है (पद्म. उ. १३५)।

विकुक्षि--इक्ष्वाकु राजा के शशाद नामक पुत्र का नामांतर (शशाद देखिये)।

विकुंज--एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में कौरव-पक्ष में शामिल था (म. भी. ५२.९)।

विकुंजन अथवा **विकुंठन**--(सो. पूरु.) एक राजा, जो सोमवंशीय हस्तिन् राजा का पुत्र था। त्रिगर्तराज की कन्या यशोधरा इसकी माता थी। दशार्ण राजकन्या सुदेवा इसकी पत्नी थी, जिससे इसे अजमीढ़ नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.३८)।

विकुंठ अथवा **वैकुंठ**--रैवत मन्वन्तर का एक देव-तासमूह, जिसमें निम्नलिखित चौदह देव शामिल थे:-- अजेय, कृश, गौर, जय, भीम, दम, ध्रुव, नाथ, यश, विद्वस्, वृष, शुचि, भेतृ, एवं दांत (ब्रह्मांड. २.३६.५७)।

विकुंठा--एक देवी, जो रैवत मन्वन्तर में उत्पन्न विकुंठ नामक देवताओं की माता मानी जाती है। चाक्षुष मन्वन्तर में उत्पन्न वैकुंठ नामक देवतावतार भी इसीका ही पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.४.३१; विष्णु. ३.१.४१)। इसके पति का नाम शुभ्र था।

विकुंडल--निषध नगर का एक पापी पुरुष, जिसे यमुना नदी में स्नान करने के कारण मुक्ती प्राप्त हुई (पद्म. स्व. ३०)।

विकुंभ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

विकृत—ब्राह्मण का वेश धारण किया हुआ कामदेव, जिसने इसी वेश में इक्ष्वाकु राजा के साथ संवाद किया था (म. शां. १९३.८३-११६)।

विकृति--(सो.क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार जीमूत राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भीमरथ था। मत्स्य में इसे 'विमल' कहा गया है।

२. रुद्रगणों में से एक।

विक्रम—धृतराष्ट्रपुत्र बलवर्धन का नामांतर।

विक्रमशील--एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम कालिंदी, एवं पुत्र का नाम दुर्गम था (मार्क. ७२)।

विक्रमित्र--शुंगवशीय वज्रमित्र राजा का नामांतर (वायु. ९९.३४१)।

विक्रांत--(सू. दिष्ट.) एक प्रजाहितदक्ष राजा, जो दम राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुधृति था (वायु. ८६.१३)।

२. एक प्रजापति, जो वालेय गंधर्वों का जनक माना जाता है (वायु. ६५.५३; ६९.१८)।

विक्षम—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार।

विक्षर--एक असुर, जो कश्यप एवं दनायु के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य तीन भाइयों के नाम बल, वीर एवं वृत्र थे (म. आ. ५९.३२)। आगे चल कर, यही पृथ्वी पर वसुमित्र राजा के रूप में अवतीर्ण हुआ (म. आ. ६१.३९)।

विक्षोभण—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

विखनस—एक कृष्णयजुर्वेदी आचार्य, जिसका निर्देश 'वैखानसधर्मप्रश्न' नामक ग्रंथ में एक पूर्वाचार्य के नाते किया गया है (वै. ध. २.५.९; ३.१५.१४)। वसिष्ठधर्मसूत्र में भी इसके सूत्र का निर्देश प्राप्त है (व. ध. ९.१०), जहाँ इसने वानप्रस्थाश्रम लेने के अनेकानेक विधि बताये हैं। अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह की संतति के लिए कौनसे व्यवसाय सुयोग्य है, इस संबंध में भी इसके उद्धरण प्राप्त हैं।

विख्यात—एक राक्षस, जो तेरह सैंहिकेयों में से एक माना जाता है।

विगाहन—मुकुटवंश में उत्पन्न एक कुलांगार राजा, जिसने अपने दुर्व्यवहार के कारण अपने जातिबांधवों का एवं स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७२.१६)।

विग्रह--एक स्कंदपार्षद, जो समुद्र के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम संग्रह था (म. श. ४४.४६)।

विघन--रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

विघ्न—वध नामक राक्षस का पुत्र (वायु. ६९.१३०)।

२. नरमांसभक्षक एक राक्षस, जो कालि एवं अयोमुखी नामक राक्षस का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.५९.१०)।

विघ्नेश--श्रीगणेश नामक देवता का नामांतर। ब्रह्मांड में इसके इक्कावन नामान्तर दिये गये हैं (ब्रह्मांड. ४. ४४.६३-६६)।

विचकाक्ष—एक राजा, जिसने मांसभक्षण का त्याग किया था (म. अनु. १७७.७१)।

विचक्षण ताण्ड्य--एक आचार्य, जो गर्दभीमुख शांडिल्यायन नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शाकदास भाडितायन था (वं. ब्रा. १.)।

विचक्षुष--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद- 'विवर्धक'।

विचख्नु--एक राजा, जो 'यज्ञकर्म में अहिंसाव्रत का पालन करना चहिए' इस तत्व का प्रतिपादक था। अपने इस मत के प्रतिपादन के लिए इसने 'विचख्नु गीता' की रचना की थी, जो भीष्म ने युधिष्ठिर को निवेदित की थी। पाठभेद- 'विचख्यु' (म. शां. २५७.१)।

विचारिन् काबन्धि--एक आचार्य, जो मांधातृ राजा के यज्ञ में उपस्थित था (गो. ब्रा. १.२.९; १८)। कबन्ध का वंशज होने से इसे 'कार्बन्धि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विचारु—कृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.९)।

विचित्र—रौच्य मनु के पुत्रों में से एक (वायु. १००.१०८)।

२. देवसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (भा. ८. १३.३०)।

३. एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५१.५६)। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। पाठभेद-'विचित्य'।

४. यम का एक लेखक (स्कंद. ७.१.१४३)।

विचित्रवीर्य—(सो. पूरु.) एक राजा, जो शंतनु एवं सत्यवती से उत्पन्न दो पुत्रों में कनिष्ठ पुत्र था। इसके ज्येष्ठ भाई का नाम चित्रांगद था।

गंधर्व युद्ध में इसके ज्येष्ठ बन्धु चित्रांगद की मृत्यु हो गयी, जिस कारण कनिष्ठ होते हुए भी भीष्म ने इसे राजगद्दी पर बैठाया (म. आ. ९५.१३)। यह भीष्म की आज्ञा से ही राज्यशासन करता था।

विवाह एवं मृत्यु—भीष्म ने काशिराज की कन्याएँ अंबा, अंबिका एवं अंबालिका को स्वयंवर में जीत लिया, एवं उनका विवाह इससे करना चाहा। किन्तु उनमें से अंबा ने इससे विवाह करने से इन्कार कर दिया। इसी कारण, भीष्म ने बिका एवं अंबालिका से इसका विवाह करा दिया। असंयमपूर्ण जीवन के कारण, यह राजयक्ष्मा का शिकार बन गया, एवं अल्पवय में ही अनपत्य अवस्था में इसकी मृत्यु हुई (म. आ. ९६.५७–५८)।

इसकी मृत्यु के पश्चात्, भीष्म ने इसकी पत्नियाँ अंबिका एवं अंबालिका को नियोग-पद्धति से संतति उत्पन्न करने की आज्ञा दी। तदनुसार, कृष्णद्वैपायन व्यास से अंबिका एवं अंबालिका को क्रमशः धृतराष्ट्र एवं पाण्डु नामक पुत्र उत्पन्न हुए। अंबिका की दासी से विदुर उत्पन्न हुआ (म. आ. ९०.६०)।

२. एक शिवभक्त, जो शिव की उपासना के कारण जीवन्मुक्त हुआ था (स्कंद. १.३३)।

विचेतस्—भव्य देवों में से एक।

विजय—(सो. अनु.) एक राजा, जो बृहन्मनस् राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सत्या था।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार जय राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम ऋत (ऋतु) था (भा. ९.१३.२५)।

३. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार संजय राजा का पुत्र था। वायु में इसे संजय राजा का पौत्र, एवं जय राजा का पुत्र कहा गया है।

४. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुरूरवस् एवं उर्वशी का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भीम था (भा. ९.१५.१–३)। अन्यत्र इसे 'अमावसु' कहा गया है।

५. (सो. वसु.) एक यादव राजा, जो वसुदेव एवं उपदेवी का पुत्र था (मत्स्य. ४६.१७)।

६. (सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, वायु एवं मत्स्य के अनुसार जयद्रथ राजा का पुत्र था। इसके का नाम धृति था।

७. (सू. इ.) एक क्षत्रियविजेता सम्राट्, जो भागवत के अनुसार चंप राजा का, एवं वायु, विष्णु एवं भविष्य के अनुसार चंचु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम रुरुक था।

८. विष्णु के जय-विजय नामक दो द्वारपालों में से एक (जय-विजय देखिये)।

९. कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक।

१०. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.२१.१६)।

११. (आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो यज्ञश्री (यज्ञ) राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम चंद्रविज्ञ था। इसने छः वर्षों तक राज्य किया था (भा. १२.१.२७)।

१२. राम दाशरथि राजा के अष्टप्रधानों में से एक।

१३. राम दाशरथि राजा की सभा का एक विदूषक।

१४. भव्य देवों में से एक।

१५. पृथुक देवों में से एक।

१६. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१३०)।

१७. अज्ञातवास के समय अर्जुन के द्वारा धारण किया गया एक गुप्त सांकेतिक नाम (म. वि. ५.३०)। अर्जुन के सुविख्यात नामांतरों में से 'विजय' एक था, एवं इसी नाम से उसने कालकेयों को परास्त किया था (भा. १.९.३३)।

१८. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में, इसने जय एवं दुर्जय नामक अपने भाइयों को साथ ले कर, नील, काश्य एवं जयत्सेन राजाओं से युद्ध किया था (म. द्रो. २४.४३)। इसने सात्यकि एवं अर्जुन से भी युद्ध किया था (म. द्रो. ९२.८)।

१९. (सू. इ.) एक राजा, जो सुदेव राजा का पुत्र, एवं भरुक राजा का पिता था (भा. ९.८.१)।

२०. मगधदेश का एक ब्राह्मण, जिसने घटोत्कचपुत्र बर्बरिक को देवी की कृपा प्राप्त करानें में सहाय्यता दी थी (स्कंद. १. २.६०–६६)।

२१. लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

२२. भैरववंश में उत्पन्न वाराणसी नगरी का एक राजा, जिसने खाण्डवी नगरी नष्ट कर, वहाँ खाण्डववन का निर्माण किया था। पश्चात् वह वन इसने इंद्र को क्रीडा करने के लिए दिया। इसके कुल तेरह पुत्र थे, जिनमें उपरिचर सर्वाधिक बलवान् एवं धार्मिक था (कालि. ९२)।

विजया—शल्य राजा की कन्या, जो सहदेव पाण्डव की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुहोत्र था (म. आ. ९०.८७)। महाभारत के कई संस्करणों में इसे मद्र देश के द्युतिमत् राजा की कन्या कहा गया है। भागवत में इसे पर्वत राजा की कन्या कहा गया है (भा. ९.२२. ३१)।

२. श्रीकृष्ण की पत्नियों में से एक (मत्स्य. ४७.१४)।

३. एक योगमाया, जो पार्वती की सखी थी (भा. १०. २.११)। पार्वती का मानसपुत्र वीरक को लाने के लिए इसे भेजा गया था (मत्स्य. १५४.५४९)। इसने पार्वती के साथ तप किया था।

४. दशार्ह राजा की कन्या, जो सम्राट् भुमन्यु की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुहोत्र था (म. आ. ९०.३५)। पाठभेद—'जया'।

विजर अथवा **विज्वर**—एक राक्षस, जो अनायुषा नामक राक्षसी का पुत्र था। इसे खर एवं कालक नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे।

विजिताश्व 'अंतर्धान'—एक राजा, जो पृथु वैन्य राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम अर्चि था।

सौ अश्वमेध का निश्चय कर, इसने निन्यानवें अश्वमेध यज्ञ पूर्ण किये। इस पर इंद्र को डर उत्पन्न हुआ कि, यह शायद इंद्रपद ले लेगा। अतएव उसने इसका अश्वमेधीय अश्व चुरा लिया।

उस समय इंद्र से किये युद्ध में इसने काफ़ी पराक्रम दर्शा कर, अपना अश्व पुनः प्राप्त किया, जिस कारण इसे 'विजिताश्व' नाम प्राप्त हुआ। इसी समय इंद्र ने प्रसन्न हो कर इसे अंतर्धान होने की विद्या सिखायी, इस लिये इसे 'अंतर्धान' नाम प्राप्त हुआ। यज्ञकर्म में किये जानेवाले पशुहवन का यह पुरस्कर्ता था, जिस कारण इसने अपने आयुष्य में अनेकानेक यज्ञ किये।

परिवार—इसे शिखण्डिनी एवं नभस्वती नामक दो पत्नियाँ थी। उनमें से शिखण्डिनी से इसे पावक, पवमान एवं शुचि नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए। नभस्वती से इसे हविर्धान नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (भा. ४.१८-१९)।

विठ्ठल—विष्णु की एक सुविख्यात प्रतिकृति, जिसकी उपासना मुख्यतः आंध्र कर्नाटक एवं महाराष्ट्र में की जाती है (पद्म. उ. १७६.५७)। विठ्ठल की उपासना के संबंध में, वै. गोपाल अण्णा कन्हाडकर कृत 'विठ्ठलभूषण' ग्रंथ सुविख्यात है (विष्णु देखिये)।

विडूरथ—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय सम्राट्। परशुराम जब पृथ्वी निःक्षत्रिय कर रहा था, तब इसकी माता ने इसे ऋष्यवत् पर्वत पर एक ऋषि के आश्रम में छिपा कर रखा था। वहाँ एक रीछ ने इसकी रक्षा की।

अपना क्षत्रियसंहार समाप्त कर परशुराम जब शूर्पारक क्षेत्र में चला गया, तब यह ऋष्यवत् पर्वत से नीचे उतरा, एवं पुनः राज्य करने लगा (म. शां. ४९.६७)। पाठभेद—'विदूरथ'।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो कुरु राजा एवं दाशार्ही शुभांगी का पुत्र था। मधुकुल में उत्पन्न संप्रिया इसकी पत्नी थी, जिससे इसे अनश्वन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.४१-४२)। पाठभेद—'विदूर'।

वितत्य—एक ऋषि, जो गृत्समदवंशीय विहव्य ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सत्य था (म. अनु. ३०.६२)।

वितथ—(सो. पूरु.) एक राजा, जो दुष्यन्तपुत्र भरत राजा का पुत्र था। भरत राजा ने भरद्वाज ऋषि को गोद में लिया, एवं उसका नाम 'वितथ' रखा गया। इसी कारण, इसे 'वितथ भरद्वाज' भी कहते थे।

यह बृहस्पति के वीर्य से उत्पन्न हुआ था। इस कारण यह जन्म से ब्राह्मण था, किन्तु आगे चल कर क्षत्रिय बन गया। इसी लिये इसे 'ब्रह्मक्षत्रिय' भी कहते थे।

कई पुराणों के अनुसार, भरत राजा ने भरद्वाज ऋषि को नहीं, बल्कि उसके पुत्र को गोद में लिया था, जिसका नाम वितथ था। इसे भरत राजा के गोद में दे कर भरद्वाज स्वयं वन में चला गया (ब्रह्म. १३.५९-६१; ह. वं. १.३२.१६-१८)।

वितद्रु—एक यादव, जिसकी गणना यादवों के सात प्रधान मंत्रियों में की जाती थी (म. स. १३. १५९*)।

वितर्क—एक राजा, जो कुरु राजा के वंशज धृतराष्ट्र का पुत्र था (म. आ. ८९.५१*)।

वितर्दन—रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. यु. ६४.२२)।

वितान—भौत्य मन्वन्तर के बृहद्भानु नामक अवतार की माता (भा. ८.१३.३५)।

विति—तुषित अथवा साध्य देवों में से एक।

वित्त—एक आचार्य, जो कुथुमि नामक आचार्य का शिष्य था (ब्रह्मांड. २.३५.४३)।

२. प्रतर्दन देवों में से एक।

३. सुख देवों में से एक।

वित्तदा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२७)।

विदग्ध शाकल्य—एक आचार्य, जिसने विदेह जनक के राजसभा में याज्ञवल्क्य के साथ वाद-विवाद किया था। वाद-विवाद में पराजित होने के कारण, इसे पूर्व-नियोजित शर्त के अनुसार, मृत्यु की स्वीकार करनी पड़ी (बृ. उ. ३.९.१; ४.१.७ माध्यं; जै. उ. ब्रा. २.७६; श. ब्रा. ११.६.३.३)। पौराणिक साहित्य में इसका निर्देश 'देवमित्र शाकल्य' नाम से किया गया है (देवमित्र शाकल्य देखिये)।

२. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था (व्यास देखिये)।

विदण्ड—एक राजा, जो अपने पुत्र दण्ड के साथ द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-' सुदण्ड '।

विदथिन् बार्हस्पत्य—भरद्वाज ऋषि के पुत्र वितथ का नामान्तर।

विदन्वत् भार्गव—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. १३.११.१०; जै. उ. ब्रा. ३.१)। भृगु का वंशज होने से इसे ' भार्गव ' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विदद्श्व—एक राजा, तो तरंत एवं पुरुमीढ नामक राजाओं का पिता था (बृहद्दे. ५.५०.८१; ऋ. ५.६१)।

विदर्भ—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो ऋषभदेव राजा के नवखंडाधिपति नौ पुत्रों में से एक था। ऋषभदेव के नौ खंडों में से एक खंड का राज्य इसे प्राप्त हुआ, जो आगे चल कर ' विदर्भखंड ' नाम से सुविख्यात हुआ। अगस्त्यपत्नी लोपामुद्रा संभवतः इसीकी ही कन्या होगी (भा. ५.४.१०)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो ज्यामघ राजा का पुत्र था।

नारदपुराण में इसका पैतृक नाम 'काश्यप' बताया गया है (नारद. १.८.६३)। इसकी माता का नाम ' शैब्या ' अथवा ' चैत्रा ' औशिनरी था। इसका विवाह भोजराजकन्या उपदानवी से हुआ था, जो इसके जन्म के पूर्व ही, इसके पिता ज्यामघ के द्वारा युद्ध में जीत कर लायी गयी थी (ज्यामघ देखिये)। उससे इसे रोमपाद (लोमपाद), क्रथ एवं कौशिक नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए, जिनमें से रोमपाद अत्यंत सुविख्यात था (ह. वं. १.३६.१८-२०)। इसके केशिनी एवं सुमति नामक दो कन्याओं का निर्देश भी प्राप्त है, जो सगर राजा को दी गयी थीं।

३. एक क्षत्रिय राजा, जो कार्तवीर्य अर्जुन का मित्र था। परशुराम ने इसका बध किया (ब्रह्मांड. ३. ३९.२)।

४. एक लोकसमूह, जिसे सहदेव ने अपने दक्षिण-दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २८.४१)। इस लोकसमूह में उत्पन्न निम्नलिखित व्यक्तियों का निर्देश महाभारत में प्राप्त हैः— भीष्मक, दमयंती (म. व. ५०-२१); भीम, जो दमयन्ती का पिता था; रुक्मिणी, जो भीष्मक राजा की कन्या थी; रुक्मिन्, जो भीष्मक राजा का पुत्र था।

विदर्भिन् कौंडिन्य—एक आचार्य, जो वत्सनपात् बाभ्रव्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम गालव था (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८ माध्यं.)।

विदल—एक राक्षस, जो पार्वती के द्वारा अपने साथी उत्पल के साथ काशी नगर में गेंद के प्रहार से मारा गया। इसी कारण, काशी में स्थित शिवलिंग को ' कंदुकेश्वर ' कहते हैं (शिव. रुद्र. यु. ६९)।

२. सूर्यवंशीय ध्रुवसंधि राजा का प्रधान।

विदारण—सिंधुनरेश जयद्रथ राजा के भाइयों में से एक (म. व. २५०.१२)।

विदारुण—चंपकनगरी का एक दुष्ट राजा। ब्राह्मणों एवं वेदों की निंदा करने के कारण इसके शरीर में कोढ़ उत्पन्न हुआ, जो वेत्रवती नदी में स्नान करने के कारण नष्ट हुआ (पद्म. उ. १३५)।

विदुर—एक नीतिवेत्ता धर्मपुरुष, जो व्यास ऋषि का दासीपुत्र एवं कौरवों का मुख्यमंत्री था (म. स. ५१.२०)। व्यास ऋषि के द्वारा, विचित्रवीर्य राजा की पत्नी अंबिका की दासी के गर्भ से यह उत्पन्न हुआ था (ब्रह्म. १५४; भा. ९.२२)।

महाभारत में वर्णित जीवन-चरित्रों में से विदुर एवं कर्ण ये दोनों शापित प्रतीत होते है, जिनका सारा पराक्रम एवं बुद्धिमत्ता केवल हीन जन्म के दाग़ के कारण चूर मूर हो गया। इसी दाग़ के कारण, इन्हें सारा जीवन अवमानित अवस्था में जीना पड़ा, एवं अनेकानेक प्रकार के कष्ट उठाने

पड़े। इसी 'दैवायत्त' शाप की कृष्णछाया कर्ण के समान विदुर के ही सारे जीवन को ग्रस्त करती हुई प्रतीत होती हैं।

महाभारत में वर्णित व्यक्तियों में से कृष्ण, युधिष्ठिर, भीष्म एवं विदुर ये चार ही व्यक्ति, सत्य के मार्ग से चल कर अपने अपने पद्धति से जीवन का सही अर्थ खोजने का प्रयत्न करते हैं। इनमें से अध्यात्म का एवं ब्रह्मज्ञान का अधिक बडिवार न करते हुए भी, सदाचरण, नीति एवं मानवता के परंपरागत पद्धति से, सत्य की खोज करनेवाला विदुर सचमुच ही एक धर्मात्मा प्रतीत होता है।

विदुर केवल तत्त्वज्ञ ही नहीं, बल्कि श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ राजपुरुष भी था। धृतराष्ट्र, दुर्योधन, युधिष्ठिर आदि भिन्न भिन्न लोगों को सलाह देने का कार्य इसने आजन्म किया, परन्तु कभी भी अपने श्रेष्ठ तत्त्वों से एवं सत्यमार्ग से यह च्युत नही हुआ। धृतराष्ट्र के प्रमुख सलाहगार के नाते, यह उसे सत्य एवं शांति का मार्ग दिखाता रहा, परन्तु यह कार्य इसने इतनी सौम्यता से किया कि, इसके द्वारा कहे गये अप्रिय भाषण सुन कर भी धृतराष्ट्र आजन्म इसका मित्र ही रहा।

विदुर का हीनकुलीनत्व-एक समस्या—महाभारत में समस्त पात्रों में से केवल विदुर एवं कर्ण ही हीनयोनि के क्यों माने जाते है, यह एक अनाकलनीय समस्या है। विदुर के पाण्डु एवं धृतराष्ट्र ये दोनों भाई 'नियोगज' संतान थे, एवं अपने पिता विचित्रवीर्य की मृत्यु के पश्चात्, अंबालिका एवं अंबिका को व्यास के द्वारा उत्पन्न हुए थे। पांडवों का जन्म भी अपने पिता पांडु के द्वारा नहीं, बल्कि विभिन्न देवताओं के द्वारा हुआ था। ऐसी स्थिति में इन सारे लोगों को हीन जन्म का दोष न लगा कर, केवल विदुर एवं कर्ण ही इस दोष के शिकार क्यों बने है, यह निश्चित रूप से कहना मुष्किल है।

इस विरोधाभास के केवल दो ही कारण प्रतीत होते है। एक तो क्षत्रिय स्त्रियों के द्वारा की गयी नियोग की विवाहबाह्य संतति महाभारत काल में धर्म्य मानी जाती थी, एवं दूसरा यह कि, व्यक्ति का कुल उसके पिता के कुल से नहीं, बल्कि माता के कुल से मूल्यांकित किया जाता था। संभवतः इसी मातृप्रधान समाजव्यवस्था के कारण, अंबिका, अंबालिका एवं कुंती आदि के पुत्र उच्चकुलीन क्षत्रिय राजपुत्र कहलाये, एवं विदुर एवं कर्ण जैसे दासीपुत्र एवं सूतपुत्र हीनकुलीन माने गये।

जन्म—कुरु राजा विचित्रवीर्य की निःसंतान अवस्था में मृत्यु होने के पश्चात्, उसकी माता सत्यवती ने अपनी स्नुषा अंबिका को व्यास से पुत्रप्राप्ति कराने की आज्ञा दी। अंबिका को व्यास से धृतराष्ट्र नामक अंधा पुत्र उत्पन्न हुआ। अतएव सत्यवती ने अंबिका को पुनः एक बार व्यास के पास जाने के लिए कहा। किन्तु उस समय अंबिका ने स्वयं न जा कर, अपनी दासी को व्यास के पास भेज दिया। तदुपरान्त उस दासी को व्यास से एक तेजस्वी एवं बुद्धिमान् पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम विदुर रखा गया (म. आ. १००.२६-२७)। दासी से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'क्षत्ता' भी कहते थे। शूद्रा के गर्भ से ब्राह्मण के द्वारा उत्पन्न होने के कारण, इसको राज्य की प्राप्ति न हुई थी।

पूर्वजन्म—महाभारत में इसके पूर्वजन्म की कथा प्राप्त है। एक बार अणिमांडव्य ऋषि का यमधर्म से झगड़ा हुआ, जिसमे उसने यमधर्म को शूद्रयोनि में जन्म लेने का शाप दिया। उसी शाप के कारण, यमधर्म ने विदुर के रूप में जन्म लिया था (म. आ. १०१. २५-२७; माण्डव्य देखिये)।

पाण्डवों की सहाय्यता—विदुर की प्रवृत्ति बाल्यकाल से ही धर्म तथा सत्य की ओर थी। भीष्म ने धृतराष्ट्र एवं पाण्डु के साथ इसका भी पालन-पोषण किया था। इसका पाण्डवों पर असीम स्नेह था, तथा यह उन्हें प्राणों से भी अधिक मानता था। इसने समय समय पर पाण्डवों का साथ दिया, उन्हें सांत्वना दी, तथा मृत्यु से बचाया। भीमसेन जब नागलोग में चला गया था, तब इसने कुंती का धीर बधाया था।

दुर्योधन के द्वारा पाण्डवों को लाक्षागृह में जलवा देने की योजना, इसी के ही कारण असफल हुई। इसने कौरवों के षड्यंत्र से बचने के लिए, सांकेतिक भाषा में युधिष्ठिर को सारे वस्तुस्थिति का ज्ञान कराया। लाक्षागृह में सुरंग बनाने के लिए इसने खनक नामक अपने दूत को पाण्डवों के पास भेजा था। लाक्षागृह से मुक्तता होने के पश्चात्, एक माँझी की सहाय्यता से इसने उन्हे गंगा नदी के पार पहुचाने के लिए सहाय्यता की थी। लाक्षागृहदाह की वार्ता सुन कर दुःखित हुए भीष्म को, वस्तुस्थिति का ज्ञान इसने ही कराया था (म. आ. १३५-१३७)।

धृतराष्ट्र का सलाहगार— यह अत्यंत निःस्पृह राजनीतिशास्त्रज्ञ था, जिस कारण अंधे धृतराष्ट्र राजा ने

इसे अपना मुख्य मंत्री नियुक्त किया था, एवं यद्यपि यह उससे उम्र में छोटा था, फिर भी वह इसीके ही सलाह से राज्य का कारोबार चलाता था।

दुर्योधन एवं शकुनि के द्वारा द्यूतक्रीडा का षड्यंत्र जब रचाया गया, तब इसने संभाव्य दुष्परिणामों की चेतावनी धृतराष्ट्र को दी थी। इसने द्यूत-क्रीडा का तीव्र विरोध किया था, तथा जुएँ के अवसर पर दुर्योधन की कटु आलोचना की थी।

जिस समय दुर्योधन ने द्रौपदी को पकड़ कर सभा-भवन में लाने का आदेश दिया, उस समय इसने पुनः एक बार दुर्योधन को चेतावनी दी। सभागृह में द्रौपदी ने भीष्म से अपनी रक्षा करने के लिए कई तात्विक प्रश्न पूछे, तब इसने प्रह्लाद-सुधन्वन् के आख्यान का स्मरण भीष्म को दे कर, द्रौपदी के प्रश्नों का विचारपूर्वक जबाब देने के लिए उससे प्रार्थना की थी (म. स. ५२-८०)। किन्तु इसके सारे प्रयत्न दुर्योधन की जिद एवं धृतराष्ट्र की दुर्बलता के कारण सदैव असफल ही रहे।

पाण्डवों के वनवाससमाप्ति के पश्चात्, इसने उनका राज्य वापस देने के लिए धृतराष्ट्र को काफ़ी उपदेश दिया। इस समय इसने अतीव राज्यतृष्णा एवं कौटुंबिक कलह के कारण, राजकुल विनाश की गर्ता में किस तरह जाते हैं, इसका भी विदारक चित्र धृतराष्ट्र को कथन किया था। श्रीकृष्णदौत्य के समय, श्रीकृष्ण को धोखे से कैद कर लेने की योजना दुर्योधन आदि ने बनायी। उस समय भी इसने उसे चेतावनी दी थी, 'इस प्रकार का दुःशाहस तुमको मिटा देगा (म. उ. ९०)।

विदुरनीति--कृष्णदौत्य के पूर्वरात्रि में, आनेवाले युद्ध की आशंका से धृतराष्ट्र अत्यधिक व्याकुल हुआ, एवं उसने सारी रात विदुर के साथ सलाह लेने में व्यतीत की। उस समय विदुर से धृतराष्ट्र के द्वारा दिया गया उपदेश महाभारत के 'प्रजागर पर्व' में प्राप्त है, जो 'विदुर-नीति' नाम से सुविख्यात है। विदुर-नीति का प्रमुख उद्देश्य, संभ्रमित हुए धृतराष्ट्र को सुयोग्य मार्ग दिखलाना है, जो श्रीकृष्ण के द्वारा अर्जुन को कथन किये गये भगवद्गीता से साम्य रखता है। किन्तु जहाँ भगवद्गीता का सारा उद्देश्य अर्जुन को युद्धप्रवण करना है, वहाँ 'विदुर-नीति' में सार्वकालिन शांतिमय जीवन का एवं युद्धविरोध का उपदेश किया गया है।

अपने द्वारा की गयी गलतियों के परिणाम मनुष्य ने भुगतना चाहिये, एवं इस प्रकार किया गया पश्चात्ताप-विधि एक तरह की तपस्या ही मानी जा सकती है, यह 'विदुर-नीति' का प्रमुख सूत्रवाक्य है। अपना यह तत्त्व-ज्ञान विदुर के द्वारा अनेकानेक नीतितत्त्व एवं सुभाषितों की सहायता से कथन किया गया है। जिस प्रकार उपनिषदों के बहुसंख्य विचार श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता में अंतर्भूत किये है, उसी प्रकार तत्कालीन राजनीतिशास्त्रज्ञों के बहुत सारे विचार विदुर के द्वारा 'विदुर-नीति' में ग्रथित किये हैं। इन विचारों के कारण, महाभारत भारतीययुद्ध का इतिहास कथन करनेवाला एक सामान्य, इतिहास ग्रंथ न हो कर, राजनीतिशास्त्र का एक श्रेष्ठ ग्रंथ बन गया है।

विदुर के द्वारा किये गये इस उपदेश से धृतराष्ट्र अत्यधिक संतुष्ट हुआ। किन्तु दुर्योधन के संबंध में अपनी असहाय्यता प्रकट करते हुए उसने कहा, 'तुम्हारे द्वारा कथन की गयी नीति मुझे योग्य प्रतीत होती है। फिर भी दुर्योधन के सामने इन सारे उच्च तत्त्वों को मैं भूल बैठता हूँ'।

तत्पश्चात् मनःशान्ती के लिए कुछ धर्मोपदेश प्रदान करने की प्रार्थना धृतराष्ट्र ने विदुर से की। इस पर विदुर ने कहा, 'मैं शूद्र हूँ, इसी कारण तुम्हें धर्मविषयक उपदेश प्रदान करना मेरे लिए अयोग्य है'। तत्पश्चात् विदुर के कहने पर, धृतराष्ट्र ने सनत्सुजात से अध्यात्मविद्याविषयक उपदेश सुना (म. उ. ३३-४१; सनत्सुजात देखिये)।

विदुर-तीर्थयात्रा—इस प्रकार भारतीय-युद्ध रोकने में असफलता प्राप्त होने के कारण, यह अत्यधिक उद्विग्न हुआ, एवं युद्ध में भाग न ले कर तीर्थयात्रा के लिए चला गया। विदुर के द्वारा किये गये इस तीर्थ-यात्रा का निर्देश केवल भागवत में ही प्राप्त है।

भारतीय-युद्ध के समाप्ति की वार्ता इसे प्रभास क्षेत्र में ज्ञात हुयी। वहाँ से यमुना नदी के तट पर जाते ही, इसे उद्धव से श्रीकृष्ण के महानिर्याण की वार्ता विदित हुई। मृत्यु के पूर्व श्रीकृष्ण ने कथन की 'उद्धव-गीता' इसने गंगाद्वार में मैत्रेय से पुनः सुन ली। यह मैत्रेय-विदुर संवाद तत्त्वज्ञान की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है, जिसमें देवहूति-कपिलसंवाद, मनुवंशवर्णन, दक्षयज्ञ, ध्रुवकथा, पृथुकथा, पुरंजनकथा आदि विषय शामिल हैं (भा. ३-४)।

युधिष्ठिर के राज्यकाल में—हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बैठने के उपरांत, युधिष्ठिर ने अपने मंत्रिमंडल की रचना की, जिस समय राज्यव्यवस्था की मंत्रणा एवं निर्णय के मंत्री नाते विदुर की नियुक्ति की गयी थी। युधिष्ठिर के

मंत्रिमंडल के अन्य मंत्री निम्न प्रकार थे :-भीम-युवराज; संजय-अर्थमंत्री; नकुल-सैन्यमंत्री; अर्जुन-परचक्रनिवारण मंत्री (म. शां. ४१.८-१४)।

युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के लिए धनप्राप्ति के हेतु अर्जुनादि पाण्डव हिमालय में धन लाने गये थे। वे हस्तिनापुर के समीप आने पर, विदुर ने पुष्पमाला, चित्र-विचित्र पताका, ध्वज आदि से हस्तिनापुर सुशोभित किया, एवं देवमंदिरों में विविध प्रकारों से पूजा करने की आज्ञा दी (म. आश्व. ६९)। धृतराष्ट्र एवं गांधारी से मिलने के पश्चात्, पाण्डव विदुर से मिलने आये थे (म. आश्व. ७०.७)।

अंतिम समय—विदुर के कहने पर धृतराष्ट्र भागीरथी के पावन तट पर तपस्या करने लगा। इस प्रकार जिस नीति एवं मनःशान्ति का उपदेश इसने धृतराष्ट्र को आजन्म किया, वह उसे प्राप्त हुई। अपने जीवित की यह सफल फलश्रुति देख कर विदुर को अत्यधिक समाधान हुआ, एवं वल्कल परिधान कर यह शतयूपाश्रम एवं व्यासाश्रम में आ कर, धृतराष्ट्र एवं गांधारी की सेवा करने लगा।

कालोपरान्त मन वश में कर के इसने घोर तपस्या करना प्रारंभ किया (म. आश्र. २५)। विदुर के यकायक अंतर्धान होने के कारण, युधिष्ठिर अत्यधिक व्याकुल हुआ। उसने धृतराष्ट्र से विदुर का पता पूछते हुए कहा, 'मेरे गुरु, माता, पिता, पालक एवं सखा सभी एक विदुर ही है। उसे मैं मिलना चाहता हूँ'।

इस पर धृतराष्ट्र ने अरण्य में घोर तपस्या में संलग्न हुए विदुर का पता युधिष्ठिर को बताया। वहाँ जा कर युधिष्ठिर ने देखा, तो मुख में पत्थर का टुकडा लिये जटाधारी, कृशकाय विदुर उसे दिखाई पडा। यह दिगंबर अवस्था में था, एवं वन में उड़ती हुई धूल से इसका शरीर आवेष्टित था (म. आश्र. ३३. १५-२०)।

मृत्यु—शुरु से ही विदुर की यही इच्छा थी कि, मृत्यु के पश्चात् इसके अस्तित्व की कोई भी निशानी बाकी न रहे। इसने कहा था, 'जिस प्रकार प्रज्ञावान् मुनियों के कोई भी पदचिह्न भूमि पर नही उठते है, ठीक उसी प्रकार के मृत्यु की कामना मैं मन में रखता हूँ'।

मृत्यु के संबंध में विदुर की यह कामना पूरी हो गयी, एवं विदुर को महाभारत के सभी व्यक्तियों से अधिक सुंदर मृत्यु प्राप्त हुई।

जब युधिष्ठिर विदुर के पीछे वन में गया, तब किसी वृक्ष का सहारा ले कर यह खड़ा हो गया। पश्चात् युधिष्ठिर इसके आगे खड़े होने पर, यह उसकी ओर एकटक देखने लगा, एवं उसकी दृष्टि में अपनी दृष्टि डाल कर एकाग्र हो गया। अपने प्राणों को उसके प्राणों में, तथा अपनी इंद्रियों को उसकी इंद्रियों में स्थापित कर, यह उसके भीतर समा गया। इस प्रकार योगबल का आश्रय लेकर यह युधिष्ठिर के शरीर में विलीन हो गया (म. आश्र. ३३.२५)।

पद्म के अनुसार, माण्डव्य ऋषि के द्वारा दिये गये शाप की अवधि समाप्त होते ही, यह साभ्रमती एवं धर्ममती नदियों के संगम पर गया। वहाँ स्नान करते ही शूद्रयोनि से मुक्ति पा कर, यह स्वर्गलोक चला गया (पद्म. उ. १४१)। भागवत के अनुसार, इसने प्रभासक्षेत्र में देहत्याग किया था (भा. १.१५.४९)।

अन्त्यसंस्कार—मृत्यु की पश्चात् विदुर का शरीर वृक्ष के सहारे खड़ा था। आँखे अब भी उसी तरह निर्निमिष थी, किन्तु अब वे चेतनारहित बन गयी थी। युधिष्ठिर ने विदुर के शरीर का दाहसंस्कार करने का विचार किया, किन्तु उसी समय आकाशवाणी हुयी :—

ज्ञानदग्धस्य देहस्य पुनर्दाहो न विद्यते।
(म. आश्र. ३५.३७*)।

(ज्ञान से दग्ध हुए शरीर को अंतिम दाहकर्म की जरूरी नही होती है)।

इससे प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में संन्यासियों का दाहकर्म धर्मविरुद्ध माना जाता था। जहाँ भीष्म जैसे सेनानी की लाश रेशमी वस्त्र एवं मालाएँ पहना कर चंदनादि सुगंधी काष्ठों से जलायी गयी, वहाँ विदुर जैसे यति का मृतदेह बिना दाहसंस्कार के ही वन में छोड़ा गया (म. अनु. १६८.१२-१८)।

परिवार—देवक राजा की 'पारशवी' कन्या से विदुर का विवाह हुआ था। अपनी इस पत्नी से विदुर को कई पुत्र भी उत्पन्न हुए थे, किन्तु विदुर के पत्नी एवं पुत्रों के नाम महाभारत में अप्राप्य है (म. आ. १०६.१२-१४)।

२. एक वेश्यागामी ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम बहुला था। अपनी पत्नी के द्वारा किये गये पुण्यों के कारण, इसे मुक्ति प्राप्त हुई (बहुला देखिये)।

३. पांचाल देश का एक क्षत्रिय, जो सोमवती अमावस्या के दिन प्रयाग के गंगासंगम में स्नान करने के कारण, ब्रह्महत्या के पातक से मुक्त हुआ (पद्म. उ. ९१-९२)।

पद्म में निर्दिष्ट इस कथा का संकेत सम्भवतः महाभारत में निर्दिष्ट धर्मात्मा विदुर से ही होगा, जिसे पूर्वजन्म में अणीमाण्डव्य ऋषि से शाप प्राप्त हुआ था (विदुर १. देखिये)।

विदुला—एक प्राचीन क्षत्रिय स्त्री, जो महाभारत में निर्देशित 'विदुला-पुत्र संवाद' के कारण अमर हो गयी है।

यह सौवीर देश के राजा की पत्नी थी, जिसके पुत्र का नाम संजय था। इसका पुत्र जब छोटा था, उस समय इसका पति मृत हुआ। यही सुअवसर पा कर, सौवीर देश के पास ही बसे हुए सिन्धुनरेश ने संजय पर आक्रमण किया, एवं उसे रणभूमि से भगा कर उसका राज्य छीन लिया। रणभूमि से भाग कर आये हुए अपने पुत्र की इसने कटु आलोचना की, जिसका पुनर्निवेदन कुंती ने युधिष्ठिर को युद्धप्रवृत्त बनाने के लिए किया था। महाभारत में यही संवाद 'विदुला-पुत्र संवाद' नाम से प्रसिद्ध है (म. उ. १३१-१३४)। इसके नाम के लिए 'विदुरा' पाठभेद भी प्राप्त है।

विदुला-पुत्र संवाद—महाभारत में राजनैतिक दृष्टि से उपदेश देनेवाले जो भी कुछ संवाद प्राप्त है, उनमें यह संवाद श्रेष्ठ माना जाता है। इस संवाद में महाभारत के नाम से प्रसिद्ध हुए बहुत सारे सुभाषित ग्रथित किये गये है। इसने अपने पुत्र से कहा था, 'पराक्रमी पुरुष के लिए यही योग्य है कि, पौरुषहीन जीवन दीर्घकाल तक जीने की अपेक्षा, वह अल्पकाल तक ही जी कर सारे संसार को अपने पराक्रम से स्तिमित करे (मुहूर्तं ज्वलितं श्रेयः न तु धूमायितं चिरम्)। आत्मसंतुष्टता के कारण ऐश्वर्य विनष्ट होता है (संतोषो वै श्रियं हन्ति)। इसी कारण पराक्रमी पुरुष ने सदैव कार्यरत रहना चाहिए, एवं इसी धारणा से काम करना चाहिए कि, जान जायें, मगर मस्तक नीचा न हो जायें (उद्यच्छेदेव न नमेदुद्यमो ह्येव पौरुषम्) (म. उ. १३१.१३; ३१; १३२.३८)।

इसने आगे कहा था, 'उद्योगी पुरुष को यही चाहिये कि—

> उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भूतिकर्मसु।
> भविष्यतीत्येव मनः कृत्वा सततमव्यथैः॥
> (म. उ. १३३.२७)।

(सदैव विजिगिषु एवं जागृत रह कर ऐश्वर्य संपादन करें। जो कार्य अंगीकृत कियाहै, वह यशस्वी होनेवाला ही है, ऐसी धारणा मन में रख कर सतत प्रयत्न करते रहें)।

विदुला के इसी संवाद का निर्देश युधिष्ठिर ने कुंती के पास पुनः एक बार किया था (म. आश्व. २२. २०)। 'जय' नामक महाभारत की रचना भी, इसी संवाद को आधारभूत मान कर की गयी है।

विदुष—(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार धृत राजा का पुत्र था।

विदूर—पूरु राजा विदूरथ का नामान्तर (विदूरथ देखिये)।

विदूरथ—(सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भजमान राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७१.१३६)।

२. (सो. यदु. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो चित्ररथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम शूर था (भा. ९.२४.१८)।

३. (सो. यदु. वृष्णि.) एक वृष्णिवंशीय क्षत्रिय, जो वृद्धशर्मन् एवं वसुदेवभगिनी श्रुतदेवा का पुत्र था। इसके भाई का नाम दन्तवक्र था। यह रुक्मिणी तथा द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १८६)।

यह शिशुपाल, शाल्व, जरासंध आदि का मित्र था, एवं जरासंध ने मथुरा नगरी के पूर्वद्वार का संरक्षण करने के लिए इसकी नियुक्ति की थी। इसका भाई दन्तवक्र तथा शाल्व, शिशुपाल आदि का श्रीकृष्ण के द्वारा वध होने के पश्चात्, उनकी मृत्यु का बदला लेने के लिए इसने कृष्ण पर आक्रमण किया। किन्तु उसने इसका मस्तक काट कर इसका वध किया (भा. १०.७८.११-१२)।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो लोमपाद-वंशीय विभूति राजा का पुत्र था। इसे 'उदर्क' एवं 'दाशार्ह' नामान्तर प्राप्त थे (अग्नि. २७५.१९-२०)। पद्म, एवं मत्स्य में इसे निर्वृति राजा का पुत्र कहा गया है, एवं दशार्ह राजा का पिता कहा गया है (पद्म. सृ. १३; मत्स्य. ४४.४०)।

५. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ४.१.९४)।

६. (सो. पूरु.) एक राजा, जो सुरथ राजा का पुत्र एवं सार्वभौम राजा का पिता था (भा. ९.२२.१०)।

७. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का भाई।

८. दक्षिण भारत का एक राजा, जिसने अपनी कन्या दिष्टवंशीय राज्यवर्धन राजा को विवाह में प्रदान की थी।

९. एक राजा, जो भलंदन ऋषि का मित्र था। इसके सुनीति एवं सुमति नामक दो पुत्र, एवं मुदावती नामक एक कन्या थी।

कुजृंभ से युद्ध—एक बार यह जंगल में मृगया के हेतु गया था, जहाँ इसने बहुत बडी दरार देखी, जो कुजृंभ राक्षस की जमुहाई से भूमि पर पड़ी हुई दरारों में से एक थी। वहाँ पास ही बैठे हुए सुव्रत मुनि ने इसे बताया, 'कुजृंभ राक्षस के पास एक दैवी मूसल है, जिसके कारण वह अजेय बन कर पृथ्वी के सारे लोगों त्रस्त कर रहा है।

आगे चल कर कुजृंभ ने इसकी कन्या मुदावती का हरण किया, एवं उसका वध करने गये सुनीति एवं सुमति नामक इसके दोनो पुत्रों को कैद किया। फिर इसके मित्र भलंदन ऋषि के पुत्र वत्सप्रि ने कुजृंभ का वध किया, एवं मुदावती की मुक्तता कर उससे विवाह किया (मार्क. ११३)।

विदेघ माथव—एक राजा, जो विदेघ लोगों का प्रमुख था (श. ब्रा. १.४.१.१०)। ये 'विदेघ' लोग ही आगे चल कर 'विदेह' नाम से सुविख्यात हुए। मथु का वंशज होने से, इसे 'माथव' पैतृक नाम हुआ होगा।

शतपथ ब्राह्मण में—इस राजा के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है, जिसके अनुसार इसने अपने मुख में अग्नि को बँध कर रखा था। मुँह खोलने से अग्नि बाहर आयेगा, इस आशंका से यह किसी से भी बात न करता था। इसके पुरोहित का नाम रहूगण गौतम था, जिसने इसके मुख में बँध रखे हुए अग्नि को बाहर लाने के लिए अनेकानेक प्रयत्न किये। उसने अग्नि की विविध प्रकार से स्तुति भी की, किन्तु उसका कुछ असर न हुआ।

एक बार गौतम ने सहजवश 'घृत' शब्द का उच्चारण किया, जिससे इसके मुख में बंद किया गया अग्नि अपनी सहस्त्र जिह्वाएँ फैला कर बाहर आया। वह अग्नि सारे संसार को जलाने लगा, एवं विदेघ एवं गौतम को दग्ध करने लगा। उसने सृष्टि की नदियाँ भी सुखाना प्रारंभ किया।

अग्नि के इस दाह को शांत कराने के लिए, विदेघ राजा ने अपने राज्य की सीमा पर बहनेवाली 'सदानीरा' नदी में स्वयं को झोंक दिया, जहाँ अग्नि आखिर शान्त हुआ। फिर भी सदानीरा नदी का पानी अविरत बहता ही रहा। इसी कारण, वह नदी सदानीरा नाम से सुविख्यात हुई (श. ब्रा. १.४.१.१०-१७)।

सायणाचार्य के अनुसार, आज भी उपर्युक्त नदी कोसल एवं विदेह देश के सीमा पर ही बहती है।

विदेह—विदेह देश के सीरध्वज जनक राजा का नामान्तर (भा. ११.२.१४; जनक देखिये)।

२. विदेह देश के निमि राजा का नामान्तर (निमि देखिये)।

३. एक लोकसमूह, जिस पर विदेहवंशीय राजा राज्य करते थे (बौ. श्रौ. २.५; २१.१३)। इसकी राजधानी मिथिला नगरी में थी। पाण्डुराजा ने अपने दिग्विजय के समय मिथिला पर आक्रमण किया था, एवं विदेहवंशीय क्षत्रिय राजाओं को परास्त किया था (म. आ. १०५-११)। इसी वंश में हयग्रीव नामक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था।

वैदिक साहित्य में—इन लोगों का सर्वप्रथम निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त विदेघ माथव की कथा में आता है, जहाँ इस देश के पश्चिम में स्थित कोशल देश की संस्कृति विदेह से श्रेष्ठतर बतायी गयी है।

आगे चल कर इस देश के जनक राजा ने विदेह देश को नयी प्रतिष्ठा प्रदान की। बृहदारण्यक उपनिषद के काल में सांस्कृतिक दृष्टि से यह एक श्रेष्ठ देश मानने जाने लगा (बृ. उ. ३.८.२)।

कौषीतकि उपनिषद में विदेह लोगों का निर्देश काशि एवं कोसल लोगों के साथ किया गया है, एवं इन तीनों को 'प्राच्य' सामूहिक नाम प्रदान किया गया है (कौ. उ. ४.१)। इन तीनों देशों का 'जल जातूकर्ण्य' नामक एक ही पुरोहित होने का निर्देश प्राप्त है (सां. श्रौ. १६.२९.५)।

इस देश का पर आट्णार नामक राजा कोसल देश के हिरण्यनाभ राजा का रिश्तेदार ही था (सां. श्रौ. १६. २९.५)। शतपथ ब्राह्मण में पर आट्णार को हिरण्यनाभ का वंशज, एवं कोसल देश का राजा कहा गया है। पंचविंश ब्राह्मण में नमी साप्य नामक विदेह देश के अन्य एक राजा का निर्देश प्राप्त है (पं. ब्रा. २५.१०.१७)।

कोसल एवं विदेह देशों की सीमा सदानीरा (आधुनिक गण्डक) नदी से बँध गयी थी। यह नदी नेपाल से निकल कर पटना के पास गंगा नदी को मिलती है।

महाभारत में—पूर्वोत्तर भारत का एक जनपद के नाते विदेह देश का निर्देश महाभारत में प्राप्त है, जिसे परशुराम, कर्ण एवं भीम आदि वीरों ने जीता था (म. द्रो. परि. १.८.८४६; क. ५.१९; स. २६.४)। इस देश का सबसे से सुविख्यात राजा सीरध्वज जनक था, जिसकी कन्या सीता का विवाह राम दाशरथि से हुआ था।

ब्रह्मांड के अनुसार, जरासंध के भय से मथुरा से विजनवासी हुए यादव लोग विदेह देश में रहने के लिए आये थे (ब्रह्मांड. २.१६.५४)।

४. (सो. वसु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक था।

विदैवत--एक पिशाच, जो पूर्वजन्म में हरिवीर नामक क्षत्रिय था। नास्तिकता के कारण, इसे पिशाच-योनि प्रप्त हुई (पद्म. पा. ९५; ९८)।

विद्ध—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं प्रवर। पाठ–' क्षितिमुखाविद्ध '।

विद्या—एक देवता, जो वैदिक साहित्य में मुख्यतः तीन वेदों के ज्ञान (त्रयी विद्या) की देवता मानी गयी है। सायणाचार्य के ऋग्वेद भाष्य की प्रस्तावना में इस देवता के संबंधी एक कथा दी गयी है। एक बार यह एक ब्राह्मण के पास गयी, एवं इसने उसे कहा, 'मैं तुम्हारी अमानत (शेवधि) हूँ। तुम्हारा यही कर्तव्य है कि, तुम्हारे शिष्यों में से जो पवित्र, ब्रह्मचारी, नियमनिष्ठ, निधिरक्षक एवं अनवधानशून्य होंगे, उन्हींको तुम मुझे प्रदान करना। असूया करनेवाले शिष्यों से मैं अत्यधिक घृणा करती हूँ, इसी कारण तुम मुझे उन्हें प्रदान नहीं करना (सायणाचार्य, ऋग्वेद प्रस्तावना)।

विद्याचंड—कांपिल्य नगरी के सुदरिद्र नामक ब्राह्मण के चार पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

विद्याधर—एक देवयोनिविशेष। पुराणों में इनके राजाओं का नाम चित्रकेतु, चित्ररथ अथवा सुदर्शन दिया गया है (भा. ६.१७.१; ११. १६. २९)। वायु में पुलोमन् को 'विद्याधरपति' कहा गया है (वायु. ३८. १६)। इन लोगों की स्त्रियाँ ' विद्याधरी ' कहलाती थी (ब्रह्मांड. ३.५०.४०)।

इन देवताओं के शैवेय, विक्रान्त एवं सौमनस नामक तीन प्रमुख गण थे (वायु. ३०.८८)। इन देवताओं का विद्याधरपुर नामक नगर ताम्रवर्ण सरोवर एवं पतंग पहाडियों के बीच बसा हुआ था (मत्स्य. ६६.१८)।

विद्याधीश—सुराष्ट्र देश के सोमकांत राजा का प्रधान।

विद्यापति—उज्जैनि के इंद्रद्युम्न राजा का उपाध्याय (स्कंद. २.२.८)।

विद्युच्छत्रु—एक राक्षस, जो मार्गशीर्ष माह में सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३१)।

विद्युज्जिह्व--एक राक्षस, जो खशा राक्षसी का पुत्र, एवं शूर्पणखा का पति था। पूर्वजन्म में यह कालकेंद्र नामक दानव था (वा. रा. उ. १२.२)। राम ने इसका वध किया था।

२. रावण का एक प्रधान, जिसने माया-जाल से राम का टूटा हुआ मस्तक, एवं धनुष्य सीता को दिखाया था। इसने सीता को रावण के वश में जाने के लिए पुनः पुनः अनुरोध किया, किन्तु सीता अपने सतीत्व पर अटल रही।

३. एक राक्षस, जो विश्रवस् एवं वाका के पुत्रों में से एक था। यह महातल नामक पाताललोक में स्थित अर्वाक्तलम् नामक नगर में रहता था (वायु. ५०.३५)।

४. घटोत्कच का साथी एक राक्षस, जिसका दुर्योधन के द्वारा वध हुआ (म. भी. ८७.२०)।

५. अमृत की रक्षा करनेवाले दो सर्प (म. आ. २९. ५-६)। विद्युत् के समान जिह्वा होने के कारण, इन्हें यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

विद्युज्जिह्वा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.८)।

विद्युत्--एक राक्षस, जो यातुधान नामक राक्षस का पुत्र, एवं रसन नामक राक्षस का पिता था (ब्रह्मांड. ३.७. ९५)।

२. सहिष्णु नामक शिवावतार का एक शिष्य।

विद्युता—कुबेरसभा की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र से स्वागतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु. ५०.४८)।

विद्युत्केश—एक राक्षस, जो हेति राक्षस का पुत्र था। भयासुर की कन्या इसकी माता थी। संध्या की कन्या सालकटंकटा से इसका विवाह हुआ था। कालोपरांत उसने इससे उत्पन्न हुआ गर्भ मंदर-पर्वत पर छोड़ दिया, जिसका भरण-पोषण शिव ने किया।

विद्युत्पर्णा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५९.४८)।

विद्युत्प्रभ—एक ऋषि, जिसकी इंद्र से ' पापमोचन ' एवं ' सूक्ष्म-धर्म ' के संबंध में चर्चा हुई थी (म. अनु. १२५.४५-५७)।

२. एक दानव, जिसे रुद्रदेव की कृपा से एक लाख वर्षों तक तीनों लोगों का आधिपत्य, शिव का नित्यपार्षदपद एवं कुशद्वीप का राज्य, वरों के रूप में प्राप्त हुए थे (म. अनु. १४.८२-८४)।

विद्युत्प्रभा—उत्तर दिशा में रहनेवाली दस अप्सराएँ (म. उ. १०९.१८)।

विद्युदक्ष—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

बलि का बंधन किये जाने पर इसने वामन की स्तुति की, एवं बलि के लिए अभयदान माँगा (भा. ८.२०.१७)।

विंध्याश्व—(सो. अज.) एक राजा, जो इंद्रसेन राजा का पुत्र था। मेनका नामक अप्सरा से इसे जुड़वी संतान उत्पन्न हुई थी।

विपक्व--मरीचिगर्भ देवों में से एक।

विपश्चित्--स्वारोचिष मन्वन्तर का इंद्र।

२. एक राजा, जो विदर्भराजकन्या पीवरी का पति था। अपनी पत्नी से किये पापकर्म के कारण, इसे नरक की प्राप्ति हुई (मार्के. १३.१३-१५)।

विपश्चित् दृढजयंत लौहित्य--एक आचार्य, जो दक्षजयन्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)। लोहित का वंशज होने से, इसे 'लौहित्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य--एक आचार्य, जो आषाढ उत्तर पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य था। पराशर का वंशज होने से, इसे 'पाराशर्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विपाट—कर्ण का एक भाई, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ३१.५९)।

विपाठा--दुर्गम राजा की पत्नियों में से एक (मार्के ७२. ४६; रेवती १. देखिये)।

विपाद—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक पिशाचगण (ब्रह्मांड. ३. ७. ३७७)।

विपाप--दमन नामक शिवावतार का एक शिष्य।

विपाप्मन्-निश्चवन नामक अग्नि का पुत्र, जो वास्तुकार्य में अधिष्ठाता देवता माना जाता है।

२. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार आयु राजा का पुत्र था।

विपुल--(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४६)।

२. एक भृगुवंशीय ऋषि, जो देवशर्मन् नामक ऋषि का शिष्य था। इसकी गुरुपत्नी 'रुचि' पर इंद्र आसक्त हुआ। उस समय इसने इंद्र से उसका संरक्षण किया। इसके इस गुरुनिष्ठा से प्रसन्न हो कर, देवशर्मन् ऋषि ने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये (म. अनु. ४०-४५)।

३. सौर देश का एक यवन राजा, जिसे 'वित्तल,' 'सुमित्र,' एवं 'दत्तमित्र' आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। पाण्डु राजा ने इसे जीतने का प्रयत्न किया था, किन्तु वह यशस्वी न हो सका। अन्त में अर्जुन ने इसका वध किया (म. आ. परि १. ८०. ४०-४६)।

विपुलस्वान्--एक ऋषि, जिसके सुकृष एवं तुंबुरु नामक दो पुत्र थे (मार्के. ३. १५)।

विपूजन शौराकि (सौराकि)--कृष्ण यजुर्वेद संहिताओं में निर्दिष्ट एक आचार्य (मै. सं ३.१.३; क. सं. २.७.५)।

विपृथु--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार चित्रक राजा का पुत्र था (वायु. ९६. ११३)। जरासंध के संग्राम में, श्रीकृष्ण ने इसे मथुरानगरी के उत्तरद्वार का रक्षण करने के लिए नियुक्त किया था। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था। सुभद्राहरण के समय, बलराम की ओर से इसने अर्जुन से युद्ध किया था (म. आ. १७७.१७; २११.१०; स. ४.२६)। प्रभासक्षेत्र में हुए 'यादवी युद्ध' में यह मारा गया (विष्णु. ५.३७.४६)।

विपृष्ठ--(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं वृकदेवा के पुत्रों में से एक था।

विप्र--(सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सुतंजय राजा का, एवं विष्णु के अनुसार श्रुतंजय राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'महाबाहु' कहा गया है (महाबाहु ३. देखिये)। इसके पुत्र का नाम शुचि था।

विप्रचित्ति अथवा **विप्रजित्ति**—एक आचार्य, जो व्यष्टि नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. २.६.३ काण्व.; २.५.२२ माध्यं.)।

२. एक दानव राजा, जो कश्यप एवं दनु के सौ पुत्रों में से प्रमुख पुत्र था (भा. ६.६.३१)। महाभारत में दनु के पुत्रों की संख्या चौंतीस दी गयी है, जिनमें इसे प्रमुख कहा गया है (म. आ. ५९.२१)। इसके भाइयों में ध्वज नामक असुर प्रमुख था (वायु. ६७.६०)।

पराक्रम—वृत्रासुर एवं हिरण्यकशिपु के द्वारा इंद्र से किये गये युद्ध में, यह असुर पक्ष में शामिल था (म. स. ५१.७; भा. ६.७०)। बलि वैरोचन एवं इंद्र के युद्ध में भी यह सहभागी थी। वामन के द्वारा किये गये 'बलिबंधन' के समय, यह वामन से युद्ध करने के लिए उद्यत हुआ था (म. स. परि. २१.३३७)। देवासुरों के द्वारा किये गये 'अमृतमंथन' के समय भी, यह उपस्थित था (मत्स्य. २४५.३१)।

परिवार—अपनी सिंहिका नामक पत्नी से इसे एक सौ एक पुत्र उत्पन्न हुए थे, जो 'सैंहिकेय' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। एक राहु एवं सौ केतु मिल कर, ये १०१ सैंहिकेय राक्षस बने थे (भा. ६.६.३७)।

भागवत के अतिरिक्त, ब्रह्म, मत्स्य आदि बाकी सारे पुराणों में इसके पुत्रों की संख्या तेरह दी गयी है। हरिवंश, विष्णु एवं ब्रह्मांड में वह बारह बतायी गयी है।

विप्रचित्ति के पुत्रों की हरिवंश में प्राप्त नामावलि, अन्य पुराणों में प्राप्त पाठभेदों के साथ नीचे दी गयी है :—१. **अंजिक** (अजन, अंजक, सुपुंजिक); २. **इल्वल**; ३. **कालनाभ**; ४. **खस्त्रुम** (शलभ, श्वसृप); ५. **नभ** (नल, भौम); ६. **नमुचि**; ७. **नरक** (कनक) ८. **राहु** (पोतरण, सरमाण, स्वर्भानु); ९. **वज्रनाभ** (कालवीर्य, चक्रयोधिन्, बल); १०. **वातापि**; ११. **व्यंश** (वंश्य, व्यंस, सव्यसिव्य); १२. **शुक** (विख्यात, केतु, शंभु) (ह. वं. १.३; मत्स्य. ६; विष्णु. १.२१; ब्रह्म. ३; ब्रह्मांड. ६.१८.२२)।

२. एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का सेवक था (विष्णु. १.१९.५२)।

विप्रजूति वातरशन--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.३)।

विप्रबंधु गौपायन (लौपायन)--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२४.४; १०.५७.६०)।

विबुध--(सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार कृति राजा का, एवं वायु के अनुसार देवमीढ राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'विसृत', एवं अन्य पुराणों में 'विश्रुत' कहा गया है।

विभा--दुर्गम राजा की पत्नियों में से एक। इसकी माता का नाम कावेरी था।

विभांड--एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने आया था।

विभांडक--कश्यपकुल में उत्पन्न एक ऋषि, जो ऋश्यशृंग ऋषि का पिता था। इसके पुत्र ऋश्यशृंग ऋषि के जन्म की, एवं अंग देश के चित्ररथ राजा के शान्ता नामक कन्या से उसके विवाह की अनेकानेक चमत्कृतिपूर्ण कथाएँ महाभारत में प्राप्त है (म. व. ११०.११; ऋश्यशृंग देखिये)।

इसके नेत्र हरे-पिले रंग के थे, एवं सर से ले कर पैरों के नाखूनों तक इसके शरीर के सारे भागों पर केश ही केश थे (म. व. १११.१९)। इसका आश्रम कौशिकी नदी पर था। इसने हिमालय पर्वत पर रहनेवाले सनत्कुमार से ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया था (म. शां. परि. १.२०)।

विभांडक काश्यप--एक आचार्य, जो ऋश्यशृंग ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। इसके शिष्य का नाम मित्रभू काश्यप था (वं. ब्रा. २)।

विभाव--जिताजित् देवों में से एक।

विभावरी—ब्रह्मा की एक मानसकन्या, जो रात्रि का प्रतीकरूप देवता मानी जाती है। ब्रह्मा की आज्ञा से इसने देवी उमा के शरीर में प्रवेश किया, जिस कारण वह कृष्णवर्णीय बन गयी (मत्स्य. १५४.५७-९६; ब्रह्मन् देखिये)।

विभावसु—प्रतर्दन देवों में से एक।

२. विवस्वत् के पुत्रों में से एक (म. आ. १.४०)।

३. एक दैत्य, जो मुर नामक दैत्य का पुत्र था। कृष्ण ने इसका वध किया (मुर २. देखिये)।

४. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर का विशेष आदर करता था। पाण्डवों के वनवासकाल में, यह द्वैतवन में उनके साथ रहता था (म. व. २७.२४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'ऋतावसु'।

५. एक क्रोधी महर्षि, जो सुप्रतीक नामक ऋषि का भाई था। अपने भाई के शाप के कारण, यह एक कछुआ बन गया। इसके इसी अवस्था में गरुड ने इसका भक्षण किया (म. आ. २५.१२)।

६. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। वृत्र-इंद्र युद्ध में यह वृत्र-पक्ष में शामिल था (भा. ६.६.३०)।

७. एक वसु, जिसकी पत्नी का नाम द्युति था। सोम के प्रीति के कारण, द्युति ने इसका त्याग किया (मत्स्य. २३.२४)।

८. एक वैश्य, जो अपने पूजापाठ के समय अभद्र घंटा का निनाद करता था। इस पापकर्म के कारण, मृत्यु के पश्चात् इसे घंटा के आकार का मुख प्राप्त हुआ। इसी कारण, इसे 'घंटामुख' नाम प्राप्त हुआ।

विकास—जित देवों में से एक।

२. अमिताभ देवों में से एक।

३. वशवर्तिन् देवों में से एक।

विभिंदु--एक राजा, जिसके दानशूरता की प्रशंसा मेधातिथि काण्व नामक आचार्य के द्वारा की गयी है। इसने मेधातिथि को ४८ हज़ार गायें दान में दी थी

(ऋ. ८.२.४१-४२)। पंचविंश ब्राह्मण में भी इस कथा का निर्देश प्राप्त है, किन्तु वहाँ इसे 'विभिंदुक' कहा गया है (पं. ब्रा. १५.१०.११)।

हॉपकिन्स के अनुसार, विभिंदुक एक स्वतंत्र व्यक्ति न हो कर, वह मेधातिथि का ही पैतृक नाम था, एवं इस शब्द का सही पाठ 'वैभिंदुक' था (हॉपकिन्स, ट्रा. सा. १५.६०)।

विभिंदुक—'विभिंदु' राजा का नामान्तर (विभिंदु देखिये)। इसीके वंश में उत्पन्न हुए 'विभिंदुकीय' पुरोहितों का निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. ३.२३३)।

विभीषण—रावण का कनिष्ठ भाई, जो विश्रवस् ऋषि एवं कैकसी के तीन पुत्रों में से एक था (वा. रा. उ. ९.७)। भागवत के अनुसार, इसकी माता का नाम केशिनी अथवा मालिनी था (भा. ४.१.३७)। वाल्मीकि-रामायण में वर्णित विभीषण धार्मिक, स्वाध्यायनिरत, नियताहार, एवं जितेंद्रिय है (वा. रा. उ. ९.३९)। इसी पापभीरुता के कारण, अपने भाई रावण का पक्ष छोड़ कर यह राम के पक्ष में शामिल हुआ, एवं जन्म से असुर होते हुए भी, एक धर्मात्मा के नाते प्राचीन साहित्य में अमर हुआ।

जन्म--कैकसी को विश्रवस् ऋषि से उत्पन्न हुए रावण एवं कुंभकर्ण ये दोनों पुत्र दुष्टकर्मा राक्षस थे। किंतु इसी ऋषि के आशीर्वाद के कारण, कैकसी का तृतीय पुत्र विभीषण, विश्रवस् के समान ब्राह्मणवंशीय एवं धर्मात्मा उत्पन्न हुआ (वा. रा. उ. ९.२७)। भागवत के अनुसार, यह स्वयं धर्म का ही अवतार था (भा. ३७.१४)।

तपस्या—इसने ब्रह्मा की घोर तपस्या की थी, एवं उससे वरस्वरूप धर्मबुद्धि की ही माँग की थी (वा. रा. उ. १०.३०)। इस वर के अतिरिक्त, ब्रह्मा ने इसे अमरत्व एवं ब्रह्मास्त्र भी प्रदान किया था (वा. रा. उ. १०.३१-३५)।

रावण से विरोध—यह लंका में अपने भाई रावण के साथ रहता था, किंतु स्वभावविरोध के कारण इसका उससे बिल्कुल न जमता था। रावण के द्वारा सीता का हरण किये जाने पर, सीता को राम के पास लौटाने के लिए इसने उसकी बार बार प्रार्थना की थी। किन्तु रावण ने इसके परामर्श की अवज्ञा कर के, सीता को लौटाना अस्वीकार कर दिया (वा. रा. सुं. ५.३७)।

सीता की खोज में आये हुए हनुमत् का वध करने को रावण उद्यत हुआ। उस समय भी, इसने रावण से प्रार्थना की, 'दूत का वध करना अन्याय्य है। अतः उसका वध न कर, दण्डस्वरूप उसकी पूँछ ही केवल जला दी जाये'। हनुमत् के द्वारा किये गये लंकादहन के समय, उसने इसका भवन सुरक्षित रख कर, संपूर्ण लंका जला दी थी (वा. रा. सुं. ५४.१६)।

रावण की सभा में—राम-रावण युद्ध के पूर्व, रावण ने अपने मंत्रिगणों की एक सभा आयोजित की थी, जिस समय विभीषण भी उपस्थित था। उस सभा में इसने सीताहरण के कारण सारी लंकानगरी का विनाश होने की सूचना स्पष्ट शब्दों में की थी, एवं सीता को लौटाने के लिए रावण से पुनः एक बार अनुरोध किया था (वा. रा. यु. ९)। उस समय, रावण ने विभीषण की अत्यंत कटु आलोचना की, एवं इसे राक्षसकुल का कलंक बताया (रावण दशग्रीव देखिये)। इस घोर भर्त्सना से घबरा-कर, अनल, पनस, संपाति एवं प्रमाति नामक अपने चार राक्षस-मित्रों के साथ यह लंकानगरी से भाग गया एवं राम के पक्ष में जा मिला।

शरणागत विभीषण—वानरसेना के शिबिर के पास पहुँच कर अपना परिचय राम से देते हुए इसने कहा, "मैं रावण का अनुज हूँ। उसने मेरे सलाह को ठुकरा कर मेरा अपमान किया है। अतः मैं अपना परिवार छोड़ कर, तुम्हारी शरण में आ गया हूँ (त्यक्त्वा पुत्रांश्च दारांश्च राघवं शरणं गतः) (वा. रा. यु. १७.१६)।

इस अवसर पर विभीषण का वध करने की सलाह सुग्रीव ने राम से दी, किन्तु राम ने शरणागत को अवध्य बता कर इसे अभयदान दिया (वा. रा. यु. १८.२७; राम दाशरथि देखिये)।

अनंतर विभीषण ने रावण की सेना एवं युद्धव्यवस्था की पूरी जानकारी राम को बता दी, एवं युद्ध में राम की सहायता करने की प्रतिज्ञा भी की। तब राम ने विभीषण को लंकानगरी का राजा उद्घोषित कर, इसे राज्याभिषेक किया (वा. रा. यु. १९.१९)।

राम की सहायता—रामरावण युद्ध में राम का प्रमुख परामर्शदाता विभीषण ही था। इसीके ही परामर्श पर, राम ने समुद्र की शरण ली, एवं वालिपुत्र अंगद को दूत के नाते रावण के पास भेज दिया। रामसेना का निरीक्षण करने आये हुए शुक, सारण, शार्दूल आदि रावण के गुप्तचरों को पहचान कर पकड़वाने का कार्य भी इसीने ही किया

। । रावणसेना का समाचार लाने के लिए इसने अपने मंत्रिगण भेज दिये थे। कुंभकर्ण एवं प्रहस्त का परिचय इसीने ही राम को कराया था। मायासीता के वध के प्रसंग में भी, रावण की माया के रहस्य का उद्घाटन भी इसने ही राम के पास किया था। इंद्रजित् एवं रावण के द्वारा किये जानेवाले 'आसुरी यज्ञ' का विध्वंस करने की सलाह भी इसने ही राम को दी थी।

मायावी युद्ध--रामरावण युद्ध में विभीषण ने स्वयं भाग भी लिया था, एवं प्रहस्त, धूम्राक्ष आदि राक्षसों का वध किया था (वा. रा. यु. ४३; म. व. २७०.४)। मायावी युद्ध में प्रवीण होने के कारण, इसने इंद्रजित् से युद्ध करते समय काफ़ी पराक्रम दर्शाया था, एवं उसके सेना में से पर्वण, पूतन, जंभ, खर, क्रोधवल, हरि, प्रसज, आसज, प्रघस आदि क्षुद्र राक्षसों का वध किया था (वा. रा. यु. ८९.९०३; म. व. २६९.२-३)।

इंद्रजित् के बहुत सारे सैनिक स्वयं अदृश्य रह कर युद्ध करते थे। रामसेना में से केवल विभीषण ही उन अदृश्य सैनिकों को देखने में समर्थ था। अंत में, इसने कुबेर से ऐसा दैवी जल प्राप्त किया कि, जो आँखो में लगाने से अदृश्य प्राणी दृष्टिगोचर हो सके। इसने उस जल से प्रथम सुग्रीव एवं रामलक्ष्मण, तथा अनंतर रामसेना के प्रमुख वानरों के आँखें धोयीं, जिस कारण वे सारे इंद्रजित् की अदृश्य सेना से युद्ध करने में सफल हो गयें (म. व. २७३.९-११)।

युद्ध के अंतिम कालखंड में, इसने लक्ष्मण से युद्ध करनेवाले रावण के रथ के सारे अश्व मार डाले (वा. रा. यु. १००)। इस प्रकार राम को समय-समय पर उचित सलाह एवं सहायता दे कर, इसने उसे युद्ध में विजय पाने के लिए मदद की।

रावण का अंत्यसंस्कार--रावणवध के तश्चात्, इसने रावण के दुष्टकर्मों का स्मरण कर, उसका दाहकर्म करना अस्वीकार कर दिया। किन्तु राम ने इसे समझाया, 'मृत्यु के पश्चात् मनुष्यों के वैर समाप्त होते है। इसी कारण उनका स्मरण रखना उचित नही है (मरणान्तानि वैराणि)' (वा. रा. यु. १११.१००)। फिर राम की आज्ञा से, इसने रावण का उचित प्रकार से अन्त्यसंस्कार किया। रावण के वध पर विभीषण के द्वारा किये गये विलाप का एक सर्ग वाल्मीकिरामायण के कई संस्करणों में प्राप्त है (वा. रा. उ. दाक्षिणात्य. १०९)। किन्तु वह सर्ग प्रक्षिप्त प्रतीत होता है।

राज्याभिषेक--अयोध्या पहुँचने के बाद, श्रीराम ने विभीषण को राज्याभिषेक करने के लिए लक्ष्मण को लंका भेज दिया था (वा. रा. यु. ११२)। बाद में अपने परिवार के लोगों के साथ विभीषण अयोध्या गया, एवं वहाँ राम के राज्याभिषेकसमारोह में सम्मिलित हुआ (वा. रा. यु. १२१; १२८)। राज्याभिषेक के पश्चात् राम ने विभीषण को राजकर्तव्य का सुयोग्य उपदेश प्रदान किया, एवं बड़े दुःख से इसे विदा किया।

अश्वमेधयज्ञ में--राम के द्वारा किये गये अश्वमेध-यज्ञ के समय विभीषण उपस्थित था। उस समय, ऋषियों की सेवा करने की जिम्मेदारी इस पर सौंपी गयी थी (पूजां चक्रे ऋषीणाम्) (वा. रा. उ. ९१.२९)।

राम का आशीर्वाद--अपने देहत्याग के समय, राम ने विभीषण को आशीर्वाद दिया था :--

> **यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावत्तिष्ठति मेदिनी।**
> **यावच्च मत्कथा लोके तावद्राज्यं तवास्त्विह॥**
> (वा. रा. उ. १०८.२५)।

(जिस समय तक आकाश में चंद्र एवं सूर्य रहेंगे, एवं पृथ्वी का अस्तित्व होगा, एवं जिस समय तक मेरी कथा से लोग परिचित रहेंगे, उस समय तक लंका में तुम्हारा राज्य चिरस्थायी रहेगा)।

परिवार--शैलूष गंधर्व की कन्या सरमा विभीषण की पत्नी थी (वा. रा. उ. १२.२४-२५)। पुराणों में में इसकी पत्नी का नाम महामूर्ति दिया गया है (पद्म. पा. ६७)। अशोकवन में बंदिस्त किये गये सीता के देखभाल की जवाबदारी सरमा पर सौंपी गयी थी, जो सीता के 'प्रणयिनी सखी' के नाते उसने निभायी थी (वा. रा. यु. ३३.३)।

सरमा से इसे कला नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (वा. रा. सुं. ३७)। अन्यत्र इसकी कन्या का नाम नंदा दिया गया है (वा. रा. सुं. गौडीय. ३५.१२)।

२. लंकानगरी का एक विभीषणवंशीय राजा, जिसे सहदेव 'पाण्डव' ने अपने दक्षिण दिग्विजय के समय जीता था। यह रामकालीन विभीषण से काफ़ी उत्तरकालीन था, एवं इन दोनों में संभवतः ३०-३५ पीढियों का अन्तर था। इस कालविसंगति का स्पष्टीकरण पौराणिक साहित्य में राम-कालीन विभीषण को चिरंजीव मान कर किया गया है। किन्तु संभव यही है कि, यह विभीषण के वंश में ही उत्पन्न कोई अन्य राजा था।

इसके राजप्रासाद एवं नगरी का सविस्तृत वर्णन महाभारत में प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, लंका का वैभव इसके राज्यकाल में चरमसीमा पर पहूँच गया था (म. स. ३१)।

सुग्रीव के दूत के नाते घटोत्कच इसके दरबार में आया था। उस समय युधिष्ठिर का परिचय सुन कर, इसने घटोत्कच का उचित आदर-सत्कार किया, एवं उसे युधिष्ठिर के पास पहुँचाने के लिए निम्नलिखित 'उपायन' वस्तुएँ प्रदान कीः—हाथी के पीठ पर बिछाने योग्य स्वर्ण से बने हुए आसन, बहुमूल्य आभूषण, सुंदर मूँगे, स्वर्ण एवं रत्न से बने हुए अनेकानेक कलश, जलपात्र, चौदह सुवर्णमय ताड़ वृक्ष, मणिजडित शिबिकाएँ, बहुमूल्य मुकुट, चंद्रमा के समान उज्वल शतावर्त शंख, श्रेष्ठचंदन से बनी हुयी अनेकानेक वस्तुएँ आदि (म. स. २८. ५०-५३; परि. १.१५. पंक्ति २३५-२५३)।

३. एक यक्ष (म. स. १०.१३)।

विभीषणा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२२)।

विभु--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक देव, जो यज्ञदेव एवं दक्षिणा के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१.७)।

३. (स्वा.) एक राजा, जो प्रस्ताव एवं नियुत्सा के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम रति, एवं पुत्र का नाम पृथुषेण था (भा. ५.१५.६)।

४. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो सत्यकेतु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुविभु था (वायु. ९२. ७१)।

५. सौवीर देश के शकुनि राजा का भाई, जो अपने चार भाइयों के साथ भीमसेन के रात्रियुद्ध में मारा गया (म. द्रो. १३२.२०-२१)।

६. एक ऋषि, जो भृगु वारुणि का पुत्र था। इसे वरेण्य नामान्तर प्राप्त था।

७. साध्य देवों में से एक (वायु. ६६.१६)।

८. तुषित देवों में से एक।

९. रैवत मन्वन्तर का इंद्र (विष्णु. ३.१.२०)।

१०. स्वायंभुव मन्वन्तर में उत्पन्न श्रीविष्णु का एक अवतार।

११. एक भव देव, जो भग एवं सिद्धि के पुत्रों में से एक था (भा. ६.१८.२)।

१२. जिताजित् देवों में से एक।

१३. अमिताभ देवों में से एक।

१४. (सो. मगध.) मगधवंशीय महाबाहु राजा का नामान्तर (मत्स्य. २७१.२४; महाबाहु ३. देखिये)

१५. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो पृथु वैन्य एवं अर्चिष्मती के पुत्रों में से एक था।

१६. स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

इसे स्वयंभुव मनु का पौत्र भी कहा गया है (वायु. ३१.१७)।

विभूति--विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५७)।

विभूवस—एक ऋषि, जो त्रिन ऋषि का पिता था (ऋ. १०.४६.३)।

विभ्राज—(सो. पूरु.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार सुकृति राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार सुकृत राजा का पुत्र था। कई अभ्यासकों के अनुसार भागवत में निर्दिष्ट पार राजा एवं यह दोनों एक ही थे, किन्तु वह अयोग्य प्रतीत होता है (पार. २. देखिये)।

२. पांचाल देश का एक राजा, जो ब्रह्मदत्त राजा का पिता था। इसे 'अनत्र' नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. २१.११-१६)।

विभ्राज सौर्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७०)।

विमद ऐंद्र प्राजापत्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. २०-२६)। ऋग्वेद के इन सूक्तों में इसका स्पष्ट नामोल्लेख, तथा इसके 'विमल' नामक परिवार का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.२०.१०; २३.७)।

यह इंद्र एवं आश्वियों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था (ऋ. १.११२.१९; ११६.१; ११७.२०; १०. ३९.७; ६५.१२)। यह इंद्र एवं 'प्रजापति' का मानसपुत्र था, जिस कारण इसे 'ऐंद्र' एवं 'प्राजापत्य' पैतृक नाम प्राप्त हुए थे।

पुरुमित्र की कन्या कमद्यु इसकी पत्नी थी, जिसने इसका स्वयंवर में वरण किया था। इस कारण स्वयंवर के लिए उपस्थित हुए अन्य राजाओं ने इससे युद्ध शुरु किया। उस समय अश्वियों ने इसे अपने शत्रुओं को परास्त करने में साहाय्य किया, एवं कमद्यु को रथ में बैठा कर इसके पास पहुँचा दिया (अ. वे. ४.२९.४; ऐ. ब्रा. ५. ५.१)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, ऋग्वेद का सूक्तद्रष्टा विमद, एवं आश्वियों का कृपापात्र विमददो अलग व्यक्ति

थे। लुदविग के अनुसार, वत्स काण्व एवं आश्वियों का कृपापात्र विमद दोनों एक ही थे (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद ३.१०५)। ऋग्वेद की एक ऋचा में विमद एवं वत्स का एकत्र निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.९.१५)।

विमनुष्या—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी (ब्रह्मांड. ३.७.५)।

विमर्द--एक किरात राजा, जिसका शिवपूजा के कारण उद्धार हुआ (स्कंद. ३.३.४)।

विमल—दक्षिणापथ का एक राजा, जो इल (सुद्युम्न) राजा का पुत्र था (भा. ९.१.४१)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो जीमूत राजा का पुत्र, एवं भीमरथ राजा पिता था (मत्स्य. ४४.४१)। पाठ, 'विकृति'।

३. हिमालय की तलहटी में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जिसे ब्रह्मा की तपस्या के कारण पुत्रप्राप्ति हुई थी (पद्म. उ. २०७)।

४. रत्नातट नगरी का एक राजा, जिसने राम के अश्वमेध यज्ञ के समय शत्रुघ्न को सहाय्यता की थी (पद्म. पा. १७)।

५. एक यक्ष, जो मणिवर एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

विमलपिंडक--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

विमला—एक गाय, जो सुरभिपुत्री रोहिणी के दो कन्याओं में से एक थी। दूसरी कन्या का नाम अनला था (म. आ. ६०.५५१*)।

अनला से पिण्डाकार फल देनेवाले सात वृक्ष निर्माण हुए (म. आ. ६०.६६)।

विमुख--दक्षिण भारत में रहनेवाला एक ऋषि (वा. रा. उ. १)।

विमौद्गल--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वियति—एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार नहुष राजा का पुत्र था (भा. ९.१८.१; विष्णु. ४.१०.१)।

विरज--(स्वा. नाभि.) एक राजा, जो त्वष्टृ एवं विरोचना के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम विशुचि था, जिससे इसे शतजित् आदि सौ पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुई।

२. चाक्षुष मन्वन्तर का एक ऋषि।

३. सावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

४. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

५. (स्वा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पूर्णिमत् राजा का पुत्र था।

६. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्‌शिष्य परंपरा में से जातूकर्ण्य नामक आचार्य का शिष्य था (भा. १२.६.५८)।

विरजस्—भगवान् नारायण का एक मानसपुत्र, जिसने अपना राज्य छोड़ कर संन्यासव्रत की दीक्षा ली। इसके पुत्र का नाम कीर्तिमत् था (म. शां. ५९.९४-९६)।

२. नारायण नामक शिवावतार का एक शिष्य।

३. लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

४. चाक्षुष मन्वन्तर का एक ऋषि, जो वसिष्ठ एवं ऊर्जा के सात पुत्रों में से एक था (भा. ४.१.४१)।

५. वशवर्तिन् देवों में से एक।

६. एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

७. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११३.११३५*, पंक्ति. २-५)।

८. एक प्रजापति, जो वारुणि कवि नामक ऋषि के आठ पुत्रों में से एक था। इसके अन्य सात भाईयों के नाम निम्न प्रकार थे:--कवि, काव्य, धृष्णु, उशनस्, भृगु, विरजस् एवं काशि। इसकी विरजा एवं नड्वला नामक दो कन्याएँ, एवं सुधन्वन् नानक एक पुत्र था। इनमें से विरजा का विवाह ऋक्ष वानर से, एवं नड्वला का विवाह चाक्षुष मनु से हुआ था। वैराज नामक पितर भी इसीके ही पुत्र कहलाते हैं (ब्रह्मांड. ३.७.२१२)।

विरजस्क--सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

विरजा--विरजस् नामक प्रजापति की कन्या, जो शुकपुत्र ऋक्ष वानर की पत्नी थी। इसे इंद्र एवं सूर्य से क्रमशः वालिन् एवं सुग्रीव नामक पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. ३. ७. २१२-२१५)। वाल्मीकिरामायण के दाक्षिणात्य पाठ में, वालि एवं सुग्रीव को स्त्रीरूपधारी ऋक्षरजस् वानर के पुत्र कहा गया है (वालिन् देखिये)।

२. सुस्वधा नामक 'आज्यप' पितरों की कन्या, जो नहुष की पत्नी, एवं ययाति की माता थी (मत्स्य. १५.२३)।

३. एक राक्षसी, जिसने अदितिपुत्र महोत्कट का वेष धारण किये हुए श्रीगणेश को भक्षण किया। महोत्कटरूपी श्रीगणेश इसका उदर विदीर्ण कर बाहर आया। अन्त में उसीके ही स्पर्श से इसे मुक्ति प्राप्त हुई।

४. कृष्ण की एक प्रियपत्नी, जो राधा की सौत थी। सवती-मत्सर के कारण राधा ने इसे नदी बनने का शाप दिया, जिस कारण, यह विरजा नामक नदी बन गयी। क्षार-समुद्रादि अष्टसमुद्र इसीके ही पुत्र माने जाते हैं (ब्रह्मवै. ४.२)।

विरजामित्र—स्वायंभुव मन्वन्तर के 'विरजस्' नामक वसिष्ठपुत्र का नामान्तर। इस शब्द का शुद्ध पाठ विरजस्+मित्र होने की संभावना है।

विरथ--(सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंशीय बहुरथ राजा का नामान्तर। मत्स्य में इसे नृपंजय राजा का पुत्र कहा गया है।

विरस—एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)

विराज्—(स्वा. नाभि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार नर राजा का पुत्र था।

२. स्वायंभुव मनु का नामान्तर (मत्स्य. ३.४५; ब्रह्मांड. २.९.३९; मनु स्वायंभुव देखिये)।

विराज--(सो. कुरु) एक राजा, जो कुरु राजा का पौत्र, एवं अविक्षित् राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.४५)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भीम के द्वारा मारा गया (म. भी. ९९.२६)।

विराट--मत्स्य देश का सुविख्यात राजा, जो मरुद्गणों के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. वि. ३०.६; आ. ६१.७६)। मत्स्य देश में स्थित विराट-नगरी में इसकी राजधानी थी। इसी कारण संभवतः इसे विराट नाम प्राप्त हुआ था।

यह अपने समय का एक श्रेष्ठ एवं आदरणीय राजा था। अपने पुत्र उत्तर एवं शंख के साथ यह द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.८)। यह मगधराज जरासंध का मांडलिक राजा था। जरासंध के द्वारा उत्तरदिग्विजय के लिए नियुक्त किये गये मांडलिक राजाओं में से यह एक था (ह. वं. २.३५; जरासंध देखिये)। युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ के समय, सहदेव के द्वारा किये दक्षिणदिग्विजय में, उसने इसे जीता था (म. स. २८.२)। उस यज्ञ के समय, इसने युधिष्ठिर को सुवर्णमालाओं से विभूषित दो हज़ार हाथी उपहार के रूप में दिये थे (म. स. ४८.२५)।

पाण्डवों का अज्ञातवास—वनवास समाप्ति के पश्चात् अपने अज्ञातवास का एक वर्ष पाण्डवों के द्वारा विराट-नगरी में ही व्यतीत किया गया। उस समय अपने समस्त शस्त्रसंभार को शमीवृक्ष में छिपा कर, पाण्डव विराटनगरी में पहुँच गये। युधिष्ठिर के दुर्भाग्य की कहानी सुन कर, यह मत्स्यदेश का अपना सारा राज्य उसे देने के लिए उद्यत हुआ। किन्तु युधिष्ठिर ने उसका इन्कार कर, स्वयं को एवं अपने भाइयों को अज्ञात अवस्था में एक वर्ष तक रखने के लिए इसकी प्रार्थना की। (म. वि. ९)।

पाण्डवों के अज्ञातवास की जानकारी प्रथम से ही विराट को थी, यह महाभारत में प्राप्त निर्देश अयोग्य, एवं उसी ग्रंथ में अन्यत्र प्राप्त जानकारी से विसंगत प्रतीत होता है।

पश्चात् पाँच पाण्डव एवं द्रौपदी विराट-नगरी में निम्नलिखित नाम एवं व्यवसाय धारण कर रहने लगे:--१. युधिष्ठिर (कंक)--विराट का द्यूतविद्याप्रवीण राजसेवक (म. वि. ६.१६); २. अर्जुन (बृहन्नला)--विराट के अंतःपुर का सेवक, जो विराटकन्या उत्तरा को गीत, वादन, नृत्य आदि सिखाने के लिए नियुक्त किया गया था (म. वि. १०.११-१२); ३. भीमसेन (बल्लव)-पाकशालाध्यक्ष (म. व. ७.९-१०); ४. नकुल (ग्रंथिक अथवा दामग्रंथी)-अश्वशालाध्यक्ष (म. वि. ११.९-१०); ५. सहदेव (तंतिपाल अथवा अरिष्टनेमि)—गोशाला-ध्यक्ष (म. वि. ९.१४); ६. द्रौपदी (सैरंध्री)--विराट-पत्नी सुदेष्णा की सैरंध्री (म. वि. ३.१७; ८)।

कीचकवध---इस प्रकार पाण्डव छद्म नामों से अपने अपने कार्य करते हुए रहने लगे। इतने में विराट के सेनापति कीचक ने द्रौपदी पर पापी नजर डाल दी, जिस कारण वह भीम के द्वारा मारा गया (म. वि. ६१.६८; परि. १. क्र. १९. पंक्ति ३१-३२)।

सुशर्मन् से युद्ध--सेनापति कीचक की मृत्यु से इसकी सेना काफ़ी कमजोर हो गयी। यही सुअवसर पा कर, त्रिगर्तराज सुशर्मन् ने मत्स्य-देश पर आक्रमण किया, एवं इसकी दक्षिण दिशा में स्थित गोशाला लूट ली। यह देख कर अपनी सारी सेना एकत्रित कर, विराट ने सुशर्मन् पर हमला बोल दिया। इस सेना में, इसके शतानीक एवं मदिराक्ष नामक दो महारथी भाई; उत्तर एवं शंख नामक दो पुत्र, एवं अर्जुन को छोड़ कर बाकी चार ही पाण्डव शामिल थे (म. वि. ३१.५८*)।

काफ़ी समय तक युद्ध चलने पर, सुशर्मन् ने इसे जीवित पकड़ कर बन्दी बना लिया। जैसे ही युधिष्ठिर को यह पता चला, उसने भीमसेन को एवं उसके चक्ररक्षक के रूप में नकुल-सहदेव को इसे छुड़ाने के लिए भेज दिया। शीघ्र ही भीम ने सुशर्मन् को चारों ओर से घिरा

कर परास्त किया, एवं इसकी तथा इसके गायों की मुक्तता की। पश्चात् सुशर्मन् को बाँध कर वह उसे युधिष्ठिर के सामने ले आया, किन्तु युधिष्ठिर ने सुशर्मन् की मुक्तता करने के लिए भीम को आज्ञा दी। पश्चात् सुशर्मन् ने विराट की क्षमायाचना की, एवं वह त्रिगर्त देश चला गया (म. वि. २९.३२)। इस प्रकार सुशर्मन् के साथ हुए युद्ध में पाण्डवों ने काफ़ी पराक्रम दर्शाने के कारण, विराट ने उनका बहुत ही सम्मान किया (म. वि. ६६)।

दुर्योधन से युद्ध--उपर्युक्त युद्ध के समय, सुशर्मन् के अनुरोध पर दुर्योधन ने मत्स्य देश की गोशालाओं पर आक्रमण किया, एवं इसकी गायों का हरण किया (म. वि. ३३)। उस समय स्वयं विराट सुशर्मन् से युद्ध करने में व्यस्त था, इस कारण इसके पुत्र उत्तर ने बृहन्नला को अपना सारथी बना कर, कौरवों पर आक्रमण किया (म. वि. ३५)।

सुशर्मन् को जीत कर विराट अपनी नगरी में लौट आते ही इसे सूचना प्राप्त हुई कि, उत्तर भी कौरवो को परास्त कर गायों के साथ आ रहा है। तत्काल इसने उत्तर के स्वागत के लिए अपनी सेना भेज़ दी, एवं यह स्वयं कंक (युधिष्ठिर) के साथ द्यूत खेलने बैठ गया।

युधिष्ठिर का अपमान--द्यूत खेलते समय विराट ने अपने पुत्र उत्तर की वीरता का गान युधिष्ठिर को सुनाना प्रारंभ किया। युधिष्ठिर इस बात को न सह सका, एवं सहजवश कह बैठा, 'बृहन्नला जिसका सारथी हो उसे विजय प्राप्त होनी ही चाहिए'। कंक की यह वाणी सुन कर विराट क्रुद्ध हुआ, एवं इसने जोश में आ कर कंक के मुख पर जोर से पाँसा फेंक मारा, जिस कारण उसकी नाक से खून बहने लगा। उसी समय उत्तर वहाँ आ पहुँचा, एवं उसने बृहन्नला के पराक्रम की वार्ता कह सुनायी। पश्चात् उसने इसे युधिष्ठिर की क्षमा माँगने के लिए भी कहा।

उत्तरा-अभिमन्यु-विवाह--पाण्डवों का अज्ञातवास समाप्त होने पर, उनकी सही जानकारी जब विराट को ज्ञात हुई, तब इसे बड़ा दुःख हुआ। पाण्डवों के उपकारों का बदला चुकाने, तथा उनका सत्कार करने की दृष्टि से, इसने अपनी कन्या उत्तरा का विवाह अर्जुन के साथ करना चाहा। किन्तु अर्जुन ने इस प्रस्ताव का इन्कार किया, एवं अपने पुत्र अभिमन्यु का उत्तरा के साथ विवाह कराने की इच्छा प्रकट की। अर्जुन का यह प्रस्ताव सुन कर विराट को अत्यंत आनंद हुआ, एवं इसने अपने उपप्लव्य नामक नगरी में उत्तरा एवं अभिमन्यु का विवाह संपन्न कराया (म. वि. ६६-६७)।

भारतीय युद्ध में--इस युद्ध के समय, यह यद्यपि अत्यंत वृद्ध हुआ था, फिर भी अपने बन्धु एवं पुत्रों के साथ यह पाण्डवों के पक्ष में युद्ध करने के लिए उपस्थित हुआ था। युधिष्ठिर के सात प्रमुख सेनापतियों में से यह एक था (म. उ. १५४.१०-११)। इस युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध हुआ था:--१. भगदत्त (म. भी. ४३.४८); २. अश्वत्थामन् (म. भी. १०६. ११;१०७.२१); ३. जयद्रथ (म. भी. ११२.४१-४२); ४. विंद एवं अनुविंद (म. द्रो. २४.२०); ५. शल्य (म. द्रो. १४२.३०)।

मृत्यु--जयद्रथ वध के उपरान्त हुए रात्रियुद्ध में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १६१. ३४)। इसकी मृत्यु पौष कृष्ण एकादशी के दिन प्रातःकाल में हुई थी (भारत-सावित्री)। इसकी मृत्यु के उपरान्त युधिष्ठिर ने इसका दाह-संस्कार किया (म. स्त्री. २६.३३), एवं इसका श्राद्ध भी किया (म. शां ४२.२)। मृत्यु के उपरान्त यह स्वर्ग में जा कर विश्वेदेवों में सम्मिलित हुआ (म. स्व. ५.१३)।

परिवार--इसकी कुल दो पत्नियाँ थीः--१. कोसलराज-कुमारी सुरथा, जिससे इसे श्वेत एवं शंख नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे; २. केकय देश के सूत राजा की कन्या सुदेष्णा, जो इसकी पटरानी थी (म. वि. ८.६); एवं जिससे इसे उत्तर (भूमिंजय), एवं बभ्रु नामक दो पुत्र, एवं उत्तरा नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी।

इसके कुल ग्यारह भाई थे, जिनके नाम निम्नप्रकार थे:--१. शतानीक; २. मदिराक्ष (मदिराश्व, विशालाक्ष); ३. श्रुतानीक; ४. श्रुतध्वज; ५. बलानीक; ६. जयानीक; ७. जयाश्व; ८. रथवाहन; ९. चंद्रोदय; १०. समरथ; ११. सूर्यदत्त (म. द्रो. १३३.३९-४०)। इन भाइयों में से शतानीक इसका सेनापति था, एवं मदिराक्ष 'महारथी' था।

इसके सारे पुत्र एवं सारे भाई भारतीय युद्ध में शामिल थे। उनमें से शंख, सूर्यदत्त एवं मदिराक्ष द्रोण के द्वारा, श्वेत एवं शतानीक भीष्म के द्वारा, एवं उत्तर शल्य के द्वारा मारे गये।

२. सुतप देवों में से एक (वायु. १००.१५)।

३. आनंद नामक गालव्यकुलोत्पन्न ब्राह्मण का मानस-पुत्र (आनंद १. देखिये)।

४. प्रतर्दन देवों में से एक (वायु. ६२.२६)।

५. स्वायंभुव मनु का नामांतर (मत्स्य. ३.४५)।

विराडप—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'बिडालज'।

विराध—वितल नामक पाताललोक में रहनेवाला एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (वायु. ५०.२८)।

२. दंडकारण्य में रहनेवाला एक राक्षस, जो जव एवं शतह्रदा का पुत्र था। राम ने इसका वध किया, एवं लक्ष्मण ने एक गड्ढा खोद कर इसे गाड़ दिया।

पूर्वजन्म में यह तुंबुरु नामक गंधर्व था, जिसे रंभा पर अत्याचार करने के कारण, राक्षसयोनि प्राप्त हुई थी (वा. रा. अर. २.१२; ४.१३-१९; म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति ५१९)।

विराव—अमिताभ देवों में से एक।

विराविन्—धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

विरुद्ध—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण (भा. ८.१३.२२)।

विरूप—एक असुर, जो श्रीकृष्ण के द्वारा मारा गया था (म. स. ९.१४)।

२. क्रोध के द्वारा लिया गया मानवी रूप, जिस रूप में उसने इक्ष्वाकु राजा के साथ तत्त्वज्ञानपर संवाद किया था। महाभारत में 'विरूप-इक्ष्वाकु संवाद' विस्तृत रूप में दिया गया है।

महाभारत में अन्यत्र 'विकृत-विरूप संवाद' भी प्राप्त है, जो इसने मानवरूपधारी 'काम' से किया था (म. शां. १९२.८८-११६)।

३. श्रीकृष्ण के महारथी पुत्रों में से एक (भा. १०. ९०.३४)।

४. (सू. नाभाग.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अंबरीष राजा का पुत्र, एवं पृषदश्व राजा का पिता था (भा. ९.६.१)।

विरूप आंगिरस—अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार एवं प्रवर, जिसका निर्देश ऋग्वेद में एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते किया गया है (ऋ. १.४५.३; ८.७५.६)। ऋग्वेद-अनुक्रमणी में भी एक सूक्तकार के नाते इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.४३; ४४.७५))। ऋग्वेद में अन्यत्र भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.४५.३; ८.७५.६)।

महाभारत में इसे अंगिरस् ऋषि के आठ पुत्रों में से एक कहा गया है, एवं इसे 'वारुण' एवं 'अग्नि' पैतृक-नाम प्रदान किये गये हैं। इसके अन्य सात भाइयों के नाम निम्नप्रकार थे :—बृहस्पति, उतथ्य, पयस्य, शान्ति, घोर, संवर्त, एवं सुधन्वन् (म. अनु. ८५.१३०-१३१)।

विरूपक—एक राक्षस, जो नैर्ऋत (आलंबेय) राक्षस गण का अधिपति था। ये सारे राक्षस शिव के उपासक थे, जिस कारण स्वयं को रुद्र-गण कहलाते थे।

इसकी पत्नी का नाम नीलकन्या विकचा था, जिससे इसे दंष्ट्राकराल आदि भूमि-राक्षस उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. ३.७.१४०-१४३; १५३; वायु. ६९.१७४)।

२. एक दानव, जो प्राचीनकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५१)।

विरूपाक्ष—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के चौंतीस पुत्रों में से एक था। इंद्र-वृत्र युद्ध में यह वृत्र के पक्ष में शामिल था (वायु. ६८.११)। आगे चल कर यह चित्रवर्मा राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ.६१.२३)।

२. रावणपक्षीय एक राक्षस, जो माल्यवत् राक्षस का पुत्र था (वा. रा.उ. ५.३५)। यह रावण के सेनापतियों में से एक था, एवं सुग्रीव से इसका युद्ध हुआ था (म. व. २६९.८; वा. रा. यु. ९.३; ९६.३४; ९९.१)। हनुमत् ने इसका वध किया।

३. एक राक्षस, जो घटोत्कच का सारथी था। कर्ण-घटोत्कच युद्ध में यह कर्ण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १५०.९२)।

४. एक राक्षस, जो नरकासुर का सेनापति था। 'औदका' के अंतर्गत लोहितगंगा नदी के पास श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. स. ३५. परि. १. क्र. २१ पंक्ति. १०१२)।

५. एक राक्षस, जो महिषासुर का अमात्य था (दे. भा. ५.११)।

६. एक राक्षस, जो सुमालि राक्षस का अमात्य था। सुग्रीव ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ९६)।

७. रुद्र-शिव का नामान्तर (ब्रह्मांड. २.२५.६४)।

८. एकादश रुद्रों में से एक (मत्स्य. ५.२९)।

९. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (मत्स्य. १९५. १९)। इसे अंगिरस्-कुल का मंत्रकार भी कहा गया है।

१०. एक राक्षसराज, जो राजधर्मन् नामक बक का मित्र था (राजधर्मन् देखिये)।

विरोचन—एक राक्षससम्राट्, जो प्रह्लाद के तीन पुत्रों में से ज्येष्ठ था। सुविख्यात राक्षससम्राट् बलि-वैरोचन का यह पिता था। सप्त पातालों में से पाँचवें पाताल में इसका अधिराज्य था। दैत्यों के द्वारा किये गये पृथ्वी-

दोहन के समय, यह 'वत्स' (बछडा) बना था (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ८०२)।

प्रल्हाद की न्यायप्रियता—इसके पिता प्रह्लाद के न्यायनिष्ठुरता के संबंध में एक कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार केशिनी नामक सुंदर राजकन्या से यह एवं अंगिरस् ऋषि का पुत्र सुधन्वन् एकसाथ ही प्रेम करने लगे। उस समय केशिनी ने इन दोनों से कहा, 'तुम दोनों में से जो अपने को श्रेष्ठ साबित करेगा, उससे मैं विवाह करूँगी'।

श्रेष्ठता के संबंध में इसका एवं सुधन्वन् का काफ़ी वादविवाद हुआ। अंत में इस वाद का निर्णय करने के लिए, ये दोनों विरोचन के पिता असुरराज प्रह्लाद के पास गये। इनका यह भी तय हुआ कि, इनमें से जो श्रेष्ठ साबित होगा, उसका दूसरे के प्राणों पर अधिकार होगा।

असुरराज प्रह्लाद इन दोनों की श्रेष्ठता के संबंध में कुछ भी निर्णय न दे सका, जिस कारण उसने कश्यप ऋषि की सलाह ली। उसीके कहने पर, प्रह्लाद ने अपने पुत्र की अपेक्षा सुधन्वन् को श्रेष्ठ ठहराया, एवं उसे कहा, 'तुम विरोचन के प्राणों के मालिक हो, उसका जीवन तुम्हारी मुठ्ठी में है'। प्रह्लाद की यह अपत्य-निरपेक्ष न्यायप्रियता देख कर, सुधन्वन् अत्यधिक प्रसन्न हुआ, एवं उसने विरोचन का जीवन उसे वापस दे दिया, एवं इसे शतायु बनने का आशीर्वाद दिया (म. स.६१. ५८-७९)।

इंद्र-विरोचनआख्यान—छांदोग्य उपनिषद में इंद्र एवं विरोचन की आत्मज्ञान के संबंध में एक कथा प्राप्त है। एकबार देव एवं असुरों को ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई, एवं इस हेतु वे प्रजापति के पास गये। उनके प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रजापति ने उन्हे कहा, 'पृथ्वी के निष्पाप, अजर, अमर, अकाम एवं संकल्परहित आद्य तत्त्व को आत्मा कहते है'। तदुपरांत इसी आत्मा के सत्य स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कराने के हेतु देवों ने इंद्र को, एवं असुरों ने विरोचन को प्रजापति के पास शिष्य के नाते भेज दिया।

ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए इंद्र एवं विरोचन बत्तीस साल तक प्रजापति के पास रहे। फिर भी प्रजापति ने इनको ब्रह्मज्ञान न दिया, एवं इनकी परीक्षा लेने के लिए-इनसे अनृत (असत्य) वचन कहे, 'आँखों में, पानी में, आइने में अपनी जो परछाई नज़र आती है, वही आत्मा है'।

प्रजापति का यह अनृत-कथन सत्य मान कर, विरोचन ने उत्तम स्नान किया, एवं उत्कृष्ट वस्त्र एवं अलंकार परिधान कर, अपनी परछाई का पानी में निरीक्षण किया। पश्चात् उसी परछाई को आत्मा मान कर, उसी तत्त्व का प्रचार यह अपने अनुगामियों में करने लगा। इसीके कारण, देह को ही आत्मा समझने-वाले असुरों का 'आसुरी सांप्रदाय' निर्माण हुआ। यह सांप्रदाय देवों से संपूर्णतः विभिन्न था, जो शारीरिक एवं मानसिक बंधनों से अतीत, शुद्ध एवं स्वसंवेद्य आत्मतत्त्व को ही आत्मा मानते थे (छां. उ. ८.७.२; ९.२; रक्षस् एवं देव देखिये)।

मृत्यु—देवासुरों के बीच संपन्न हुए 'तारकामय युद्ध' में असुरों के एक सेनादल का यह सेनापति था (म. स. परि. १ क्र. २१ पंक्ति. ३६७)। इसी युद्ध में यह इंद्र के द्वारा मारा गया (म. शां. ९९.४८; ब्रह्मांड. २.२०.३५; मत्स्य. १०.२१; पद्म. सृ. १३)।

गणेश पुराण में इसकी मृत्यु की संबंध में एक कल्पनारम्य कथा दी गयी है। सूर्य के प्रसाद से इसे एक मुकुट प्राप्त हुआ था। उसके संबंध में शर्त थी कि, यह मुकुट किसी दूसरे के हाथों लग जायेगा, तो इसकी मृत्यु होगी। कालोपरांत इसके द्वारा देवों को अत्यधिक त्रस्त किये जाने पर, श्रीविष्णु ने स्त्रीरूप धारण कर इसे मोहित किया, एवं इसका मुकुट हस्तगत कर के इसका विनाश किया (गणेश. २.२९)।

नारदपुराण के अनुसार, श्रीविष्णु ने ब्राह्मणवेष धारण कर, इसकी धर्मनिष्ठ पत्नी विशालाक्षी का बुद्धिभ्रंश करवाया, एवं कपट से इसका वध किया (नारद. २. ३२)।

परिवार—इसकी विशालाक्षी एवं देवी नामक दो पत्नियाँ थी (नारद. २.३२; भा. ६.१८.१६)। इनमें से देवी से इसे बलि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. आ. ५९.१९-२०; पद्म. सृ. ६)। इसकी कन्या का नाम यशोधरा था (ब्रह्मांड. ३.१.८६; यशोधरा देखिये)।

इसके निम्नलिखित पाँच भाई थेः— कुंभ, निकुंभ, आयुष्मत्, शिबि एवं बाष्कलि। इसकी बहन का नाम विरोचना था (वायु. ८४.१९)।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.२)। भारतीय-युद्ध में यह भीमसेन के द्वारा मारा गया। इसे 'दुर्विरोचन' एवं 'दुर्विमोचन' नामांतर भी प्राप्त थे।

विरोचना--असुरराज प्रह्लाद की कन्या, जो विरोचन दैत्य की बहन थी। इसका विवाह त्वष्टृ से हुआ था, जिससे इसे विरज नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ५. १५.१५)। वायु में विश्वरूप त्रिशिरस् नामक मुनि को भी इसीका ही पुत्र कहा गया है (वायु. ८४.१९)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. २८)।

विरोध--एक राक्षस, जो वात नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम जनान्तक था (ब्रह्मांड. ३.७. ९६)।

विरोहण--तक्षक कुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र दग्ध हुआ था।

विलास--पश्चिमी घाट में रहनेवाला एक तपस्वी। इसके मित्र का नाम भास था। 'विमलज्ञान' की प्राप्ति हो कर ये दोनों मुक्त हुए (यो. वा. ५.६५-६७)।

विलोमन्--(सो. कुकुर.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वह्नि राजा का, एवं विष्णु के अनुसार कपोतरोमन् राजा का पुत्र था। भागवत में इसे कपोतरोमन् का पिता कहा गया है (भा. ९.२४.१९-२०)।

विलोहित--एक रुद्र, जो कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक था।

२. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था। इसके तीन सिर, तीन पैर एवं तीन हाथ थे (वायु. ६९.७६)।

विवक्षु--(सो. कुरु. भविष्य.) कुरुवंशीय निमिचक्र राजा का नामान्तर। मत्स्य में इसे अधिसोमकृष्ण राजा का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ५०.७८; निमिचक्र देखिये)।

विवर्धक--वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार विचक्षुप् का नामान्तर।

विवर्धन--युधिष्ठिर की सभा का एक राजा (म. स. ४.१८)।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

विवस्वत्--एक देवता, जो संभवतः उदित होनेवाले सूर्य का प्रतिनिधित्व करता है।

ऋग्वेद में विवस्वत्, आदित्य, पूषन्, सूर्य, अर्यमन्, मित्र, भग आदि सूर्य से संबंधित (सौर्य) देवताओं को विभिन्न देवता माना गया है (ऋ. ५.८१.४; १०.१३९. १)। किंतु वे स्वतंत्र देवता न हो कर एक ही सूर्य देवता की विभिन्न रूप प्रतीत होते है (सूर्य देखिये)।

ऋग्वेद में--इस ग्रंथ में यद्यपि विवस्वत् का स्वतंत्र सूक्त अप्राप्य है, फिर भी एक स्वतंत्र देवता के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद में प्रायः तीस बार आया है। इसे अश्वियों का एवं यम का पिता कहा गया है (ऋ. १०. १७; १०.१४.१; ५८.१)। ऋग्वेद में अन्यत्र सभी देवताओं को भी विवस्वत् की संतान (जनिमा) कहा गया है (ऋ. १०.६३.१)। त्वष्टृ की कन्या सरण्यू इसकी पत्नी थी (ऋ. १०.१७.१-२)।

दूत--ऋग्वेद में एक ही बार मातरिश्वन् को विवस्वत् का दूत कहा गया है (ऋ. ६.८.४)। अन्यथा सर्वत्र अग्नि को इसका दूत कहा गया है (ऋ. १.५८.१; ४.७.४; ८. ३९.३; १०.२१.५)।

निवासस्थान--विवस्वत् के सदन का निर्देश ऋग्वेद में अनेकबार प्राप्त है। देवगण एवं इंद्र इस सदन में आनंद मनाते है (ऋ. ३.५१), एवं इसी सदन में गायक-गण इंद्र एवं जल की महानता का गुणगान करते है (ऋ. १. ५३; १०.७५)

देवताओं का मित्र--विवस्वत् का सब से बड़ा मित्र इंद्र है, जिसकी यह पुनः पुनः स्तुति करता है। इंद्र इसकी स्तुति से प्रसन्न होता है (ऋ. ८. ६), एवं अपना समस्त धनकोश विवस्वत् के बगल में रख देता है (ऋ. २. १३)। विवस्वत् की दस उँगलियों के द्वारा इंद्र द्युलोक से जल नीचे गिराता है (ऋ. ८.६१)।

विवस्वत् का अन्य एक मित्र सोम है। वह विवस्वत् के साथ ही रहता है (ऋ. ९.२६.४), एवं विवस्वत् की कन्याएँ (उँगलियाँ) सोम को स्वच्छ करती है (ऋ. ९.१४)। विवस्वत् की स्तुतियाँ पिशंग नामक सोम को प्रवाहित करती है (ऋ. ९.९९)। इसका आशीर्वाद प्राप्त कर लेने पर, सोम की धाराएँ बहने लगती है (ऋ. ९.१०)।

अश्विनीकुमार भी इसके साथ रहते है (१.४६. १३)। अश्वियों के रथ जोतने के समय, विवस्वत् के उज्वल दिनों कों का प्रारंभ होता है (ऋ. १०. ३९; श. ब्रा. १०.५.१)।

एक उपास्य-देवता के नाते, वरुण एवं अन्य देवताओं के साथ विवस्वत् का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.६५) अपने उपासकों के द्वारा उपासित् विवस्वत् एक आक्रमक देवता है, जो यम से एवं आदित्यों से उनकी रक्षा करती है (अ. वे. १८. ३; ऋ. ८.५६)।

व्युत्पत्ति--अग्नि एवं उषस् के संदर्भ में विवस्वत् शब्द कई बार 'दैदीप्यमान' अर्थ में प्रयुक्त किया गया है (ऋ. १.९६; ७.९)। विवस्वत् का शब्दशः अर्थ 'प्रकाशित होना' है, जो उषस् (उदय होना) से काफ़ी मिलता जुलता है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, यह दिन एवं रात्रि को प्रकाशित (विवस्ते) करता है, इसी कारण इसे विवस्वत् नाम प्राप्त हुआ (श. ब्रा. १०.५.२)।

विवस्वत् देवता का अन्वयार्थ--व्युत्पत्तिजन्य अर्थ, अग्नि, अश्विनों एवं सोम के साथ इसका संबंध, एवं यज्ञस्थल में इसका निवास, इन सारी सामग्री की ओर संकेत कर, कई अभ्यासकों का कहना है कि, उदित होनेवाला सूर्य ही वैदिक विवस्वत् है। अन्य कई अभ्यासक इसे सूर्यदेवता ही मानते है (सूर्य देखिये)। बर्गेन के अनुसार, विवस्वत् मुख्यतः एक अग्निदेवता है, जिसका ही एक रूप सूर्य है (बर्गेन. १.८८)।

एक देवता के नाते विवस्वत् का महत्त्व वैदिकोत्तर साहित्य में कम होता गया, एवं अन्त में इसका स्वतंत्र अस्तित्व विनष्ट हो कर यह सूर्य एवं आदित्य देवताओं में विलीन हो गया (सूर्य देखिये)।

२. मानवजाति का प्रथम यज्ञकर्ता, जो मनु एवं यम का पिता माना जाता है (ऋ. ८.५२; १०.१४.१७)। मनु इसका पुत्र होने के कारण, उसे 'विवस्वत्' एवं 'वैवस्वत' पैतृक नाम से भूषित किया गया है (अ. वे. ८.१०; श. ब्रा. १३.४.३)। तैत्तिरीय संहिता में मनुष्यों को भी विवस्वत् की संतान कहा गया है (तै. सं. ६.५.६)।

महाभारत में भी यम एवं मनु को विवस्वत् की संतान कहा गया है (म. आ. ७०.१०; ९०.७)।

ईरानी साहित्य में--इस साहित्य में निर्दिष्ट विवन्ह्वन्त् (यिम के पिता) से विवस्वत् काफ़ी साम्य रखता है। जिस प्रकार विवस्वत् पृथ्वी के अग्नि का आद्यजनक माना जाता है, उसी प्रकार 'विवन्ह्वन्त्' को 'हओम' बनानेवाला पहला व्यक्ति कहा गया है।

३. एक आदित्य, जो बारह आदित्यों में से एक माना जाता है (वायु. ३.३; ६६.६६; विष्णु. १.१५.१३१)। यद्यपि ऋग्वेद में विवस्वत् को अदिति का पुत्र नहीं कहा गया है, फिर भी यजुर्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में विवस्वत् को आदित्य कहा गया है (वा. सं. ८.५; मै. सं. १.६)।

महाभारत में इसे कश्यप एवं अदिति के बारह पुत्रों में से एक कहा गया है (म. आ. ७०.९)। इसका निर्देश एक स्वतंत्र आदित्य के नाते नहीं, बल्कि लोकेश्वर सूर्य के नाते ही किया गया प्रतीत होता है।

पुराणों में इसे अदिति का नहीं, बल्कि दाक्षायणी का पुत्र कहा गया है। इसे श्रावण माह का आदित्य एवं प्रजापति भी कहा गया है (वायु. ६५.५३)। इन ग्रंथों में भी इसे सूर्य का ही प्रतिरूप माना गया है, एवं मनु, श्राद्धदेव, यम एवं यमी को इसकी संतान मानी गयी हैं (विष्णु. ४.१.६)।

महाभारत में इसकी पत्नी का नाम संज्ञा दिया गया है, एवं नासत्य एवं दस्र नामक दो अश्विनीकुमार इसके पुत्र बताये गये हैं, जो वस्तुतः इसकी नहीं, बल्कि सूर्य की ही संतान हैं। इसने वेदोक्त विधि के अनुसार यज्ञ कर के अपने पिता आचार्य कश्यप को दक्षिणा के रूप में एक दिशा का दान कर दिया था। इसी कारण, उस दिशा को दक्षिण दिशा कहते है।

४. एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१३)।

५. ज्येष्ठ माह में प्रकाशित होनेवाला सूर्य, जिसकी चौदह सौ किरणें रहती है (मत्स्य. १.७८)। भागवत एवं ब्रह्मांड के अनुसार, यह नभस्य (भाद्रपद) माह में प्रकाशित होता है।

६. चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मत्स्य. ९.२३)।

७. एक असुर, जो गरुड के द्वारा मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

८. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३१)।

विविंश--(सू. इ.) एक सूर्यवंशीय राजा, जो महाभारत, विष्णु एवं वायु के अनुसार विंश राजा का पुत्र था (म. आश्व. ४.५; वायु. ८६.६)। इसके खनीनेत्र आदि पंद्रह पुत्र थे।

२. एक राजा, जो क्षुप राजा का पुत्र था। विदर्भकन्या नंदिनी इसकी माता थी (मार्क. ११६)।

विविंशति--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक महारथी पुत्र। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१)। दुर्योधन के द्वारा विराट की गोशाला पर किये गये आक्रमण में भी यह उपस्थित था (म. भी. ३३.३)। भारतीय युद्ध में यह भीम के द्वारा मारा गया।

२. एक राजा, जो चाक्षुष राजा का पुत्र, एवं रंभ राजा का पिता था (भा. ९.२.२४-२५)।

विविक्त--कुशद्वीप का एक राजा, जो हिरण्यरेतस् राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.२४)।

विवित्सु--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. क. ३५.११)।

विविंद--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

विविंध्य--एक दानव, जो शाल्व का अनुयायी था। कृष्ण पुत्र चारुदेष्ण ने इसका वध किया (म. व. १७. २६)।

विविसार--(शिशु. भविष्य.) शिशुपालवंशीय 'विधिसार' एवं 'बिन्दुसार' राजा का नामान्तर (विधिसार एवं बिन्दुसार देखिये)।

विव्रि काश्यप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६३)।

विशठ--बलराम एवं रेवती के पुत्रों में से एक (वायु. ३१.६)।

विशत--त्रित देवों में से एक।

विशद--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार जयद्रथ राजा का पुत्र, एवं सेनजित् राजा का पिता था (भा. ९.२१.२३)।

विशाख--इंद्रसभा का एक ऋषि (म. स. ७.१२)।

२. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो आयु राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. १२)।

३. स्कंद के तीन छोटे भाइयों में से एक। इसके अन्य दो भाइयों के नाम शाख एवं नैगमेय थे।

इसके जन्म के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार स्कंद अपने पिता शिव से मिलने जा रहा था। उस समय शिव, पार्वती, अग्नि एवं गंगा चारों ही एकसाथ मन ही मन सोचने लगे कि, स्कंद उनके पास रहने आये तो अच्छा होगा। उनके मनोभाव को समझ कर, स्कंद ने योगबल से अपने स्कंद, विशाख, शाख एवं नैगमेय नामक चार रूप बना दिये, जो क्रमशः शिव, पार्वती, अग्नि एवं गंगा के पास रहने लगे। स्कंद से उत्पन्न होने के कारण, ये परस्पर अभिन्न माने जाते हैं (म. श. ४४.३४)।

४. स्कंद का एक रूप। एक समय इंद्र ने स्कंद पर वज्र का प्रहार किया, जिस कारण उसकी दायी पँसली पर गहरी चोट लगी। इस चोट में से स्कंद का एक नया रूप प्रकट हुआ, जिसकी युवावस्था थी। उसने सुवर्णमय कवच धारण किया था, एवं उसके हाथ में एक शक्ति थी। वज्र के घाव से उसकी उत्पत्ति होने के कारण, उसे 'विशाख' नाम प्राप्त हुआ।

विशाखयूप--(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो पालक राजा का पुत्र, एवं राजक राजा का पिता था। वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने पचास वर्षों तक, तथा मत्स्य के अनुसार इसने तिरपन वर्षों तक राज्य किया।

विशाखा--सोम की पत्नियों में से एक।

विशाल--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत, ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार तृणबिंदु राजा का पुत्र था। इसने वैशाली नामक नगरी की स्थापना की (भा. ९.२.३३; ब्रह्मांड. ३.६१.१२; विष्णु. ४.१.१६; वायु. ८६.१५-२२)। किन्तु रामायण के अनुसार वैशाली नगरी की स्थापना इसके द्वारा नहीं, बल्कि इक्ष्वाकु के पुत्र के द्वारा हुई थी (वा. रा. बा ४७.११-१७)।

इसके पुत्र का नाम हेमचंद्र था। विशाल एवं हेमचंद्र को वैशालराजवंश के संस्थापक माने जाते हैं (भा. ९.२. ३३-६६)।

वैशाली नगरी--इस नगरी का सविस्तृत वर्णन वाल्मीकि रामायण, बौद्धधर्मीय जातक ग्रंथ, एवं ह्यु-एन्-त्संग आदि चिनी प्रवासियों के प्रवासवर्णनों में प्राप्त है, जहाँ इस नगरी के वैभव एवं विस्तार की जानकारी दी गयी है। इस नगरी के खण्डहर आधुनिक बिहार राज्य में मुज़फरपुर जिले में बसाड ग्राम में प्राप्त है, जो गण्डकी नदी के बायें तट पर बसा हुआ है। इस नगरी में इक्ष्वाकु राजाओं के समान, लिच्छवी गण की एवं वज्जीराज्यसंघ की राजधानी भी स्थित थी। जैनों का चौबीसवाँ तीर्थंकर महावीर, एवं बौद्ध धर्म का संस्थापक गौतम बुद्ध इस नगरी में धर्मप्रचारार्थ आये थे। इसी कारण, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों में इस नगरी का निर्देश पुनः पुनः प्राप्त है।

वैशाल राजवंश-- वैशाल राजवंश की विभिन्न जानकारी भागवत एवं वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है, जो निम्न प्रकार है :—

(१) भागवत में--इस ग्रंथ में सूर्यवंश के दिष्टशाखा के तृणबिंदुपुत्र विशाल राजा को 'वैशालराजवंश' का संस्थापक कहा गया है, एवं उसकी वंशावलि निम्नप्रकार दी गयी है :- विशाल-हेमचंद्र-धूम्राक्ष-संयम-सहदेवपुत्र कृशाश्व-सोमदत्त-सुमति-जनमेजय (भा. ९.२.३३-३६)।

(२) वाल्मीकि रामायण में--इस ग्रंथ में इक्ष्वाकुपुत्र विशाल को विशालापुरी (वैशाली), एवं वैशालराजवंश का संस्थापक कहा गया है, एवं उसका राजवंश निम्नप्रकार दिया गया है :—विशाल-हेमचंद्र-सुचंद्र-धूम्राक्ष संजय-

सहदेव-कुशाश्व-सोमदत्त-काकुत्स्थ-सुमति (वा. रा. बा. ४७.११-१७)।

वायु में सोमदत्त से सुमति राजाओं तक का वंशक्रम सोमदत्त-जनमेजय-सुमति इस क्रम से दिया गया है (वायु. ८६.१५-२२)। विष्णु में भी 'वैशालक नृपों' का निर्देश प्राप्त है, एवं इस वंश के हेमचंद्र, सुचंद्र एवं पुष्कराक्ष के साथ परशुराम का युद्ध होने का निर्देश वहाँ किया गया है (विष्णु. ४.१.१६)।

२. लंका नगरी का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६.२६)।

३. कृष्ण का एक बालमित्र (भा. १०.२२.३१)।

४. एक राजा, जो विश्रवस् राजा एवं अलंबुषा अप्सरा का पुत्र था।

५. एक राजा। इसकी कन्या का नाम वैशालिनी था, जो परिक्षित् राजा की पत्नी थी (वैशालिनी देखिये)।

विशालक--कुबेर सभा का एक यक्ष (म. स. १०.१५)।

२. एक राजा, जिसने अपनी भद्रा नामक कन्या वसुदेव को विवाह में दी थी। किन्तु शिशुपाल ने उसका हरण किया (म. स. ४२.११)।

विशाला--सोमवंशीय अजमीढ राजा की पत्नी (म. आ. ९०.३९)। पाठ-'विमला'।

२. महावीर्यपुत्र भीम राजा की पत्नी, जिससे इसे त्र्य्यारुणि, पुष्करिन् एवं कपि नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए (वायु. ३७. १५८)। मत्स्य में इसे उरुक्षय राजा की पत्नी कहा गया है।

३. वरुण की कन्या, जो ययातिपत्नी अश्रुबिन्दुमती की सखी थी (पद्म. भू. ७७)।

४. कौशिक राजा की पत्नी (कौशिक ११. देखिये)।

विशालाक्ष--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.९)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया था (म. भी. ८४.२५)।

३. विराट राजा का छोटा भाई, जिसे 'मदिराक्ष' नामान्तर भी प्राप्त था। कीचकवध के पश्चात् यह विराट का सेनापति हुआ (म. वि. ३१.१५; मदिराश्व १. देखिये)।

४. मिथिला देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. १०.८२.२६)।

५. एक वास्तुशास्त्रकार, जो वास्तुशास्त्रविषयक अठारह प्रमुख ग्रंथकारों में से एक माना जाता है।

विशालाक्षी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.३)।

विशिख--एक पक्षिराज, जो गरुड एवं शुकी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

विशिरा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

विशिशिप्र--एक आचार्य, जिसका निर्देश सदापृण नामक ऋषि के सूक्त में प्राप्त है। वहाँ मनु ने इसे वाद-विवाद में जीतने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.४५.६)।

विशोष--दमन नामक शिवावतार का एक शिष्य।

विशोक--एक केकय राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ७.३)।

२. भीमसेन का सारथि (म. स. ३०.३०; भी. ७३.२५)। भारतीय युद्ध के समय इसका एवं भीम का बाणों के विविध जातियों के संबंध में संवाद हुआ था (म. क. ५४.१४-१५)।

३. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं त्रिवक्रा के पुत्रों में से एक था। यह नारद का शिष्य था, एवं इसने 'सात्वत तंत्र' नामक ग्रंथ की रचना की थी, जिसमें स्त्रियों, शूद्र एवं गुलाम लोगों के लिए विविध प्रकार का उपदेश दिया गया है (भा. १०.९०.३४)।

४. दमन नामक शिवावतार का एक शिष्य। पाठ-'विशोष'।

विशोका--कृष्ण की एक पत्नी (म. स. परि. १. २२.१४१२)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.५)।

विश्पला--खेल नामक राजा की पत्नी। किसी युद्ध में इसका पाँव टूट गया। उस समय अश्विनों ने इसे एक लोहे का (आयसी) पैर प्रदान किया, एवं एक रात्रि में ही इसे पुनः एक बार युद्ध के लिए योग्य बनाया। पिशेल के अनुसार, विश्पला एक स्त्री का नाम न हो कर एक अश्व का नाम था (वेदिशे स्टूडियन. १.१७१-१७३)। किन्तु यह तर्क अयोग्य प्रतीत होता है।

विश्रवस्--(स्वा.) एक ऋषि, जो वैश्रवण कुबेर का पिता था (वायु. ५९.९०-९१; ब्रह्मांड. २.३३.९८-१००)। इसके भाई का नाम अगस्त्य था।

जन्म--भागवत में इसे पुलस्त्य एवं हविर्भू का पुत्र कहा गया है (भा. ४.१.३६-३७)। ब्रह्मांड में इसकी माता का नाम इलविला दिया गया है, जो तृणबिंदु एवं

अलंबुषा की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.३९-४२)। वायु में इसकी माता का नाम द्रविडा दिया गया है (वायु. ८६.१६)। इलविला एवं द्रविडा इसकी माता का नाम था, या पत्नी का, इस संबंध में पुराण में एकवाक्यता नहीं है।

परिवार—इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थी:—१. इडविडा (इलविला, इडविला); २. केशिनी (कैकसी); ३. पुष्पोत्कटा; ४. राका (वाका); ५. बलाका; ६. चेडविडा; ७. देववर्णिनी; ८. मंदाकिनी (पद्म. पा. ६); ९. मालिनी (म. व. २५९.६०)।

अपनी उपर्युक्त पत्नियों से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए:—

(१) **इडविडापुत्र**—कुबेर वैश्रवण।

(२) **केशिनीपुत्र**—रावण, कुंभकर्ण, बिभीषण नामक पुत्र एवं शूर्पणखा नामक कन्या।

(३) **पुष्पोत्कटापुत्र**—महोदर, प्रहस्त, महापांशु एवं खर नामक पुत्र, एवं कुंभीनसी नामक कन्या।

(४) **राकापुत्र**—त्रिशिरस्, दूषण, विद्युज्जिह्व नामक पुत्र, एवं असलिका नामक कन्या (वायु. ७०.३२-३५; ४१; ४९-५०)।

महाभारत के अनुसार, इसकी पत्नियों में से पुष्पोत्कटा, राका एवं मालिनी ये तीनों राक्षसकन्याएँ थी, जो कुबेर ने अपने पिता की सेवा के लिए नियुक्त की थी।

महाभारत में विभीषण को मालिनी का, कुंभकर्ण एवं रावण को पुष्पोत्कटा का, एवं खर एवं शूर्पणखा को राका की संतान बतायी गयी है (म. व. २५९.७-८)।

आश्रम—विश्रवस् ऋषि का आश्रम आनर्त देश की सीमा में स्थित था। इसी आश्रम में कुबेर का जन्म हुआ था।

२. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो तृणबिन्दु का पुत्र था।

३. एक राजा, जो द्रविड राजा का पौत्र, एवं विशाल राजा का पुत्र था (वायु. ८६.१६)।

विश्रुत—एक यादव राजकुमार, जो भागवत के अनुसार वसुदेव एवं सहदेवी के पुत्रों में से एक था।

२. अमिताभ देवों में से एक।

३. पारावत देवों में से एक।

विश्रुतवत्—एक राजा, जो वायु के अनुसार सरस्वत् राजा का पुत्र, एवं बृहद्वल राजा का पिता था (वायु. ८८.२१२)।

विश्व—एक राजा, जो मयूर नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था। भारतीय युद्ध में, यह कौरवों के पक्ष में शामिल था (म. आ. ६१.३३)।

२. एक गंधर्व, जो 'तपस्य' (फाल्गुन) माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.४०)।

३. सत्य देवों में से एक।

विश्वक कार्ष्णि (कृष्णिय)—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८६)। यह अश्विनों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिन्होंने विष्णापु नामक इसका खोया हुआ पुत्र इसे पुनः प्रदान किया था (ऋ. १.११६.२३; ११७.७; ८.८६.१; १०.६५.१२)। कृष्ण आंगिरस नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पुत्र होने के कारण, इसे 'कार्ष्णि' अथवा 'कृष्णिय' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (कृष्ण ३. देखिये)।

विश्वकर्मन्—एक शिल्पशास्त्रज्ञ, जो स्वायंभुव मन्वन्तर का 'शिल्पप्रजापति' माना जाता है। महाभारत एवं पुराणों में निर्दिष्ट देवों का सुविख्यात शिल्पी त्वष्टृ इसी-का ही प्रतिरूप माना जाता है (त्वष्टृ देखिये)।

वैदिक साहित्य में—एक देवता के रूप में विश्वकर्मन् का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. १०.८१-८२)। वैदिक साहित्य में इसे 'सर्वद्रष्टा' प्रजापति कहा गया है (वा. सं. १२.६१)।

स्वरूपवर्णन—यह सर्वद्रष्टा है, एवं इसके शरीर के चार ही ओर नेत्र, मुख, भुजा एवं पैर हैं। इसे पंख भी हैं। विश्वकर्मन् का यह स्वरूपवर्णन पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट चतुर्मुख ब्रह्मा से काफ़ी मिलता जुलता है।

गुणवर्णन—प्रारंभ में विश्वकर्मन् शब्द 'सौर देवता' की उपाधि के रूप में प्रयुक्त किया जाया जाता था। किन्तु बाद में यह समस्त प्राणिसृष्टि का जनक माना जाने लगा। ब्राह्मण ग्रंथों में विश्वकर्मन् को 'विधातृ' प्रजापति के साथ स्पष्टरूप से समीकृत किया गया है (श. ब्रा. ८.२.१.३), एवं वैदिकोत्तर साहित्य में इसे देवों का शिल्पी कहा गया है।

ऋग्वेद में इसे द्रष्टा, पुरोहित एवं समस्त प्राणिसृष्टि का पिता कहा है। यह 'धातृ' एवं 'विधातृ' है। इसने पृथ्वी को उत्पन्न किया, एवं आकाश को अनावरण किया। इसीने ही सब देवों का नामकरण किया (ऋ. १०.८२.३)। इसी कारण, एक देवता मान कर इसकी पूजा की जाने लगी (ऋ. १०.८२.४)।

महाभारत एवं पुराणों में—महाभारत में इसे 'शिल्पप्रजापति' एवं 'कृतीपति' कहा गया है (भा. ६.६.१५)। ब्रह्मांड में इसे त्वष्टृ का पुत्र एवं मय का पिता कहा गया है (ब्रह्मांड. १.२.१९)। किन्तु यह वंशक्रम कल्पनारम्य प्रतीत होता है (मय देखिये)। यह प्रभास वसु एवं बृहस्पति भगिनी योगसिद्धा का पुत्र था। भागवत में इसे वास्तु एवं आंगिरसी का पुत्र कहा गया है। ब्रह्मा के दक्षिण वक्षभाग से यह उत्पन्न होने की कथा भी महाभारत में प्राप्त है (म. आ. ६०.२६-३२)।

शिल्पशास्त्रज्ञ—यह देवों के शिल्पसहस्त्रों का निर्माता एवं 'वर्धकि' बढ़ई था। देवों के सारे अस्त्र-शस्त्र, आभूषण एवं विमान इसीके द्वारा ही निर्माण किये गये थे। इसी कारण, यह देवों के लिए अत्यंत पूज्य बना था।

इसके द्वारा निम्नलिखित नगरियों का निर्माण किया गया था:— १ **इंद्रप्रस्थ** (धृतराष्ट्र के लिए) (म. आ. १९९.१९२७*. पंक्ति. ३-४); २. **द्वारका** (श्रीकृष्ण के लिए) (भा. १०.५०; ह. वं. २.९८); ३. **वृन्दावन** (श्रीकृष्ण के लिए) (ब्रह्मवै. ४.१७); ४. **लंका** (सुकेशपुत्र राक्षसों के लिए) (वा. रा. उ. ६.२२-२७); ५. **इन्द्रलोक** (इंद्र के लिए) (भा. ६.९.५४); ६. **सुतल नामक पाताललोक**—(भा. ७.४.८); ७. **हस्तिनापुर** (पाण्डवों के लिए) (भा. १०.५८.२४); ८. **गरुड का भवन** (मत्स्य. १६३.६८)।

अस्त्रों का निर्माण—श्रीविष्णु का सुदर्शन, शिव का त्रिशूल एवं रथ,तथा इंद्र का वज्र एवं विजय नामक धनुष्य आदि अस्त्रों का निर्माण भी विश्वकर्मन् के ही द्वारा किया गया था। इनमें से शिव का रथ इसने त्रिपुरदाह के उपलक्ष्य में, एवं इंद्र का वज्र इसने दधीचि ऋषि की अस्थियाँ से बनाया था (म. क. २४.६६; भा. ६.१०)।

इन अस्त्रों के निर्माण के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा पद्म में प्राप्त है। इसकी संज्ञा नामक कन्या का विवाह विवस्वत् (सूर्य) से हुआ था। विवस्वत् का तेज वह न सह सकी, जिस कारण वह अपने पिता के पास वापस आयी। अपनी पत्नी को वापस लेने के लिए विवस्वत् भी वहाँ आ पहुँचा। पश्चात् विवस्वत् का थोड़ा ही तेज बाकी रख कर, उसका उर्वरित सारा तेज़ इसने निकाल लिया, एवं उसी तेज़ से देवताओं के अनेकानेक अस्त्रों का निर्माण किया।

परिवार—इसकी कृति (आकृति) नामक भार्या का निर्देश भागवत में प्राप्त है। उसके अतिरिक्त इसकी रति, प्राप्ति एवं नंदी नामक अन्य तीन पत्नियाँ भी थी (म. आ. ६०.२६-३२)।

(१) **पुत्र**—इसके निम्नलिखित पुत्र थेः— १. मनु चाक्षुष; २. शम, काम एवं हर्ष, जो क्रमशः रति, प्राप्ति एवं नंदी के पुत्र थे; ३. **नल वानर** (म. व. २६७.४१);

४. **विश्वरूप**, जो इसने इंद्र के प्रति द्रोहबुद्धि होने से उत्पन्न किया था; ५. **वृत्रासुर**, जो इसने विश्वरूप के मारे जाने पर इंद्र से बदला लेने के लिए उत्पन्न किया था (म. उ. ९.४२.४९)।

(२) **कन्याएँ**—इसकी निम्नलिखित कन्याएँ थीः— १. **बर्हिष्मती**, जो प्रियव्रत राजा की पत्नी थी; २. **संज्ञा एवं छाया** जो विवस्वत् की पत्नियाँ थी; ३. तिलोत्तमा, जिसे इसने ब्रह्मा की आज्ञा से निर्माण किया था (म. आ. २०३.१४-१७)

ग्रंथ—इसके नाम पर शिल्पशास्त्रविषयक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है (मत्स्य. २५२.२१; ब्रह्मांड. ४.३१.६-७)।

२. विश्वकर्मन् का एक ब्राह्मण अवतार। अपने पूर्वजन्म में इसने क्रोध में आ कर घृताची नामक प्रिय अप्सरा को शूद्रकुल में जन्म लेने का शाप दिया, जिसके अनुसार वह एक ग्वाले की कन्या बन गयी। ब्रह्मा की कृपा से इसे भी ब्राह्मणवंश में जन्म प्राप्त हुआ। इस प्रकार ब्राह्मण पिता एवं ग्वाले की कन्या के संयोग से दर्जी, कुम्हार, स्वर्णकार, बढ़ई आदि तंत्रविद्याप्रवीण जातियों का निर्माण हुआ। इसी कारण, ये सारी जातियाँ स्वयं को विश्वकर्मन् के वंशज कहलाते है (ब्रह्मवै. १. १०)।

३. वशवर्तिन् देवों में से एक। यह प्रभात वसु एवं भुवना के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.३६.२९)।

विश्वकर्मन् भौवन—एक सुविख्यात वैदिक राजा। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, इसे कश्यप ने ऐंद्र अभिषेक किया था, जिस समय इसने कश्यप को दक्षिणा के रूप में पृथ्वी का दान दिया था (ऐ. ब्रा. ८. २१. ८)। शतपथ ब्राह्मणमें इसके द्वारा 'सर्वमेधयज्ञ' में कश्यप को समस्त पृथ्वी का दान देने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १३.७.१.१५)।

किन्तु इन दोनों ही अवसरों पर, पृथ्वी ने अपना इस प्रकार दान दिया जाना अस्वीकृत कर दिया। इस कारण, क्रुद्ध हो कर इसने समस्त प्राणिसृष्टि की, एवं अंत में स्वयं की यज्ञ में आहुति दे दी (ऋ. १०.८१.१; ऐ. ब्रा. ८. १०; नि. १०.२६)।

यज्ञसंस्था के प्रारंभिक काल में भूमिदान घृणास्पद माना जाता था, जिसका ही संकेत विश्वकर्मन् की उपर्युक्त कथा में किया हुआ प्रतीत होता है।

विश्वकाय--हिरण्यकशिपु की सभा का एक राक्षस (पद्म. सृ. ४५)।

विश्वकृत्--एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१. ३६)।

विश्वग--(स्वा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पूर्णिमत् राजा का पुत्र था।

विश्वगश्व--(सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार, पृथु वैन्य राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। इसे 'विश्वरंधि,' 'वृषदश्व,' 'विष्टराग,' एवं 'विश्वग' नामान्तर भी प्राप्त थे।

विश्वचर्षणि--एक पैतृक नाम, जो द्युम्न विश्वचर्षणि आत्रेय नामक आचार्य के लिए प्रयुक्त किया गया है (ऋ. ५.२३)।

विश्वचित्ति--हिरण्यकशिपु के दरबार का एक राक्षस (पद्म. सृ. ४५)।

विश्वजित्--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो वायु के अनुसार बृहद्रथ राजा का, एवं विष्णु के अनुसार जयद्रथ राजा का पुत्र था (वायु. ९९.१७२)। मत्स्य में इसे 'अश्वजित्' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम सेनजित् था।

२. एक अग्नि, जो बृहस्पति के पुत्रों में से एक था (म. व. २०९.१६)। यह समस्त विश्व की बुद्धि को अपने वश में रखता है। इसलिए अध्यात्मशास्त्र के विद्वानों के द्वारा इसे 'विश्वजित्' नाम दिया गया है।

३. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार सत्यजित् राजा का पुत्र था। वायु में इसे वीरजित् कहा गया है।

४. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। एक समय यह समस्त पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२७.५३; वायु. ६८.६)।

विश्वदंष्ट्र--एक दैत्य, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२७.५३)।

विश्वदत्त--सोमवंश का एक राजा, जो बकुलासंगम पर श्रीगणेश की उपासना करने के कारण, उस देवता के गणों का आधिपति बन गया।

विश्वदेव--जिताजित् देवों में से एक।

२. पारावत देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.१३.९५)।

३. विश्वेदेव नामक देवता समूह का नामान्तर (वायु. ६२.२२; विश्वेदेव देखिये)।

विश्वधा--वशवर्तिन् देवों में से एक।

विश्वन्तर सौषद्मन--एक राजा, जिसके पुरोहित श्यापर्ण थे। अपने उन पुरोहितों का त्याग कर, इसने कई अन्य पुरोहितों के द्वारा यज्ञ का आयोजन किया। आगे चल कर, श्यापर्ण पुरोहितगणों में से राम मार्गवेय नामक आचार्य ने इसे समझा कर, पुनः एक बार श्यापर्णों की राजपुरोहित के नाते नियुक्ति करवायी, एवं एक सहस्र गायें उन्हें दिलवायीं (ऐ. ब्रा. ७.२७.३.४; ३४.७.८)।

सुषद्मन् का वंशज होने से इसे 'सौषद्मन' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विश्वपति--मनु नामक अग्नि का द्वितीय पुत्र। यह वेदों के संपूर्ण विश्व का पति था, जिस कारण इसे विश्वपति नाम प्राप्त हुआ था (म. व. २११.१७)।

विश्वपात्--पितरों में से एक।

विश्वपाल--एक राजा, जो व्युत्थिताश्व (ध्युषिताश्व) राजा का पुत्र, एवं हिरण्यनाभ कौसल्य राजा का पिता था। विष्णु एवं वायु में इसे 'विश्वसह' कहा गया है।

विश्वभुज-- पाकयज्ञ का एक अग्निदेवता, जो बृहस्पति के चार पुत्रों में से चतुर्थ पुत्र था। यह समस्त प्राणियों के उदर में रह कर उनके द्वारा खाये हुए पदार्थों को पचाता है। गोमती नदी इसकी पत्नी मानी जाती है (म. व. २०९.१७)।

२. पाण्डवों के रूप में प्रकट होनेवाले पाँच इंद्रों में से एक। अन्य चार इंद्रों के नाम भूतधामन्, शिबि, शांति, एवं तेजस्विन् थे (म. आ. १८९.१९१६*)।

३. पितरों में से एक।

विश्वमनस् वैयश्व--एक ऋषि, जो इंद्र का मित्र था (ऋ. ८.२३.२; २४.७; पं. ब्रा. १५.५.२०)। 'वरोसुषामन्' को धनप्राप्त कराने के लिए एक सूक्त के द्वारा इसने प्रार्थना की है (ऋ. ८.२३.२८)। सायणाचार्य के अनुसार, यहाँ 'वरोसुषामन्' किसी व्यक्ति का नाम नहीं था।

यह 'व्यश्व' का वंशज था, जिस कारण इसे 'वैयश्व' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय भी इसे दिया गया है (ऋ. ८. २३-२६)।

विश्वमहत्--(सू. इ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार कृतशर्मन् राजा का पुत्र था। विष्णु एवं भागवत में इसे 'विश्वसह' कहा गया है।

विश्वंभर--विराटनगर का एक व्यापारी, जिसे लोमश ऋषि ने तीर्थों का माहात्म्य कथन किया था (गरुड. २.६)।

विश्वमानुष--एक व्यक्ति (ऋ. ८. ४५.२२)। कई अभ्यासकों के अनुसार, यह व्यक्तिनाम न हो कर इससे अखिल मानवजाति की ओर संकेत किया गया है।

विश्वरथ--विश्वामित्र ऋषि का नामान्तर (ब्रह्म. १०.५६)।

विश्वरंधि--(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय विश्वगश्व राजा का नामान्तर (विश्वगश्व देखिये)।

विश्वरूप--वरुणसभा का एक राक्षस (म. स. ९.१४)।

विश्वरूप त्रिशिरस् त्वाष्ट्र--एक आचार्य, जो देवों का पुरोहित था। किन्तु प्रारंभ से ही यह देवों से भी अधिक असुरों पर प्रेम करता था, जिससे प्रतीत होता है कि, यह स्वयं देव न हो कर असुर ही था।

वैदिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे त्रिशिरस् (तीन सिरोंवाला) दैत्य कहा गया है (ऋ. १०. ८)। यह त्वष्टृ का पुत्र था, जिस कारण इसे 'त्वाष्ट्र' कहा गया है (ऋ. १०.७६)। यद्यपि यह असुरों से संबंधित था, फिर भी इसे देवों का पुरोहित कहा गया, है (तै. सं. २.५.१)।

इंद्र के द्वारा किये गये इसके वध की कथा तैत्तिरीयसंहिता में प्राप्त है। यद्यपि यह देवों का पुरोहित था, फिर भी यज्ञ का अधिकतर हविर्भाग यह असुरों को देता था। इस कारण इंद्र ने अपने वज्र से इसके तीनों सिर काट कर इसका वध किया।

इसका वध करने के कारण, इंद्र को ब्रह्महत्या का पातक लग गया। अपने इस पातक के इंद्र ने तीन भाग किये, एवं वे पृथ्वी, वृक्ष एवं स्त्रियों में बाँट दिये। इस कारण, पृथ्वी में सड़ने का, वृक्षों में टूटने का, एवं स्त्रियों में रजस्राव होने का दोष निर्माण हुआ। इसी कारण रजस्वला स्त्री से संभोग करना त्याज्य माना गया एवं ऐसे संभोग से दोषयुक्त संतति उत्पन्न होने लगी (तै. सं. २.५.१)।

आगे चल कर, त्रित ने इसका वध किया, एवं इंद्र की ब्रह्महत्या के पातक से मुक्तता की (श. ब्रा. १.२.३.२)।

महाभारत एवं पुराणों में--इन ग्रंथों में इसे प्रजापति त्वष्टृ का द्वितीय पुत्र माना गया है, एवं इसे वृत्र से समीकृत किया गया है (भा. ६.५; म. उ. ९. ४; शां. २०१.१८)। इसकी माता का नाम विरोचना (वैरोचनी, रचना अथवा यशोधरा) था, जो असुरराज प्रह्लाद की कन्या, एवं विरोचन दैत्य की छोटी बहन थी (भा. ६.६.४४; वायु. ८४.१९; ब्रह्मांड. ३.१.८१; गणेश. १.६६.१२)।

स्वरूपवर्णन--इसे तीन सिर थे, जिनमें से एक मुख से यह अन्न भक्षण करता था (अन्नाद), दूसरे से यह सोमपान करता था (सोमपीथ), एवं तीसरे से यह सुरापान करता था (सुरापीथ)। महाभारत के अनुसार, अपने तीन मुखों में से, एक से यह वेद पढता था, दूसरे से सुरापान करता था, एवं तीसरे से दुनिया देखा करता था (म. शां. ३२९.२३)।

देवों का पुरोहित--एक बार इंद्र ने देवगुरु बृहस्पति का अपमान किया, जिस कारण वह देवपक्ष का त्याग कर चला गया। इस कारण इंद्र ने विश्वरूप को देवों का पुरोहित बनाया।

वध--शुरु से ही यह असुर पक्ष को देव पक्ष से अधिक चाहता था (म. शां. ३२९.१७)। यह ज्ञात होते ही, इंद्र ने इसके पास अनेकानेक अप्सराएँ भेज कर इसे देवगुरुपद से भ्रष्ट करना चाहा। किन्तु इसने इंद्र का षड्यंत्र पहचान लिया, एवं यह इंद्रवध के लिए तपस्या करने लगा (म. शां. ३२९.३४)।

इसका वध करने में इंद्र का वज्र भी विफल हुआ। फिर इंद्र ने तक्षन् के द्वारा कुठार से इसके तीनों मस्तक तोड़ डाले (म. उ. ९.३४)। महाभारत में अन्यत्र, दधीचि ऋषि के अस्थियों से बने हुए अस्त्रों से इंद्र के द्वारा इसका वध होने का निर्देश भी प्राप्त है (म. शां. ३२९.२७)।

इसकी मृत्यु के पश्चात् इसके 'सोमपीथ', 'सुरापीथ' 'अन्नाद' मस्तकों से क्रमशः कपिंजल, कलविंक एवं तित्तिर पक्षियों का निर्माण हुआ।

अपने पुत्र के वध से त्वष्टृ अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इंद्रवध करने के लिए अपने तपःप्रभाव से वृत्र नामक असुर निर्माण किया। पश्चात् देवों ने जृम्भिका के द्वारा वृत्र का वध किया (म. उ. ९.४-३४; भा. ६. ६-९)।

परिवार--सूर्यकन्या विष्टि इसकी पत्नी थी, जिससे इसे निम्नलिखित भयानक पुत्र उत्पन्न हुए थेः-- गण्ड, रक्ताक्ष, क्रोधन, व्यय, दुर्मुख एवं हर्षण।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वृषभदेव पुत्र भरत राजा के पंचजनी नामक पत्नी का पिता था।

३. अजित देवों में से एक।

विश्वरूपा--धर्म ऋषि की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम धर्मव्रता था (वायु. १०७.२)।

विश्ववार--एक वैदिक यज्ञकर्ता। यज्ञ एवं मायिन् नामक 'होताओं' के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.४४.१)।

विश्ववारा आत्रेयी--एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री (ऋ. ५.२८)।

विश्ववेदिन्--एक राजनीतिज्ञ, जो शौरि राजा का मंत्री था। शौरि एवं उसके चार भाई खनित्र, उदावसु, सुनय एवं महारथ ये प्रजापति के पुत्र थे। इन भाइयों में से खनित्र मुख्य अधिपति था, एवं शौरि, उदावसु, सुनय एवं महारथ क्रमशः उसके राज्य के पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर भागों का कारोबार देखते थे। इन चार राजाओं के चार पुरोहित थे, जिनके नाम निम्न प्रकार थेः-- अत्रिकुलोत्पन्न सुहोत्र, गौतमकुलोत्पन्न कुशावर्त, कश्यपकुलोत्पन्न प्रमति, एवं वसिष्ठ।

इसने उपर्युक्त चार ही पुरोहितों को खनित्र के विरुद्ध जारणमारणादि उपाय करने की प्रार्थना की। तदनुसार, इन चार पुरोहितों ने चार कृत्याओं का निर्माण किया, जिन्होंने आगे चल कर खनित्र पर आक्रमण किया। किन्तु खनित्र के शुद्धाचरण के कारण, चार ही कृत्या परास्त हो कर लौट आयी, एवं उन्होंने अपने निर्माण कर्ता चार पुरोहितों के साथ इसका भी भक्षण किया (मार्क. ११४)।

विश्वसह--एक राजा, जो भागवत के अनुसार ऐडविड राजा का, एवं विष्णु के अनुसार इलवील राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम खट्वांग था (भा. ९.९.४१; विष्णु. ४.४.७५)।

२. (सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय विश्वपाल राजा का नामांतर। विष्णु में इसे व्युषिताश्व राजा का, एवं वायु में ध्युषिताश्व राजा का पुत्र कहा गया है।

३. (सो. क्रोष्टु.) लोमपादवंशीय एक राजा, जो श्वेत राजा का पुत्र था।

विश्वसामन् आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२२)। इसके सूक्त में अग्नि के उपासना की प्रेरणा दी गयी है।

विश्वसाह्न--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो महत्वत् राजा का पुत्र, एवं प्रसेनजित् राजा का पिता था (भा. ९.१२.७)।

विश्वसृज--एक आचार्यसमूह, जिन्होंने सहस्र संवत्सरों तक चलनेवाले एक यज्ञसत्र का आयोजन किया था। आगे चल कर उसी सत्र से सृष्टि का निर्माण हुआ (पं. ब्रा. २५. १८)। भाष्य के अनुसार, यहाँ संवत्सर शब्द का अर्थ 'दिन' ही लेना चाहिए।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के एक अवतार का पिता।

विश्वफाणि अथवा **विश्वस्फूर्ति**--(मगध.भविष्य.) मगध देश का एक सार्वभौम राजा, जिसे पुरंजय नामांतर भी प्राप्त था (पुरंजय ६. देखिये)। इसने अपने राज्य के ज्ञातियों की पुनर्रचना की थी। इसने क्षत्रियों का वर्चस्व विनष्ट कर, उनका स्थान कैवर्त, मद्रक, पुलिंद, ब्राह्मण, पंचक आदि नवनिर्मित जातियों को दे दिया। इसकी मृत्यु गंगातीर पर हुई (ब्रह्मांड. ३.७४.१९०-१९३; वायु. ९९.३७०-३८२)।

विश्वा--प्राचेतस् दक्ष एवं असिक्नी से उत्पन्न एक कन्याद्वय, जिनका विवाह क्रमशः धर्म एवं कश्यप से हुआ था। इनसे क्रमशः विश्वेदेव, तथा यक्ष एवं राक्षस उत्पन्न हुए।

विश्वाची--प्राधा अप्सरा की कन्या (म. स. १०. ११)। यह ययाति राजा के साथ रत हुई थी (म. आ. ८०.८३८. पंक्ति. १-२)।

विश्वाधार--मेधातिथि का पुत्र।

विश्वानर--एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम शुचिष्मती था। शिव की कृपा से इसे गृहपति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसने तीन वर्षों के अल्पावधि में सांगवेदों का अध्ययन कर, शिव से दीर्घायुष्य प्राप्त किया (स्कंद. ४.१.११)।

विश्वामित्र--(सो. अमा.) एक सुविख्यात ऋषि, जो अपने युयुत्सु, विजिगिषु एवं युगप्रवर्तक व्यक्तित्व के कारण, वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में अमर हो चुका है। कान्यकुब्ज देश के कुशिक नामक सुविख्यात क्षत्रियकुल में उत्पन्न हुआ विश्वामित्र, ज्ञानोपासना एवं तपःसामर्थ्य के कारण, एक श्रेष्ठतम ऋषि एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा आचार्य बन गया। इस कार्य में देवराज वसिष्ठ जैसे परंपरागत

ब्राह्मण आचार्यों से इसे आमरण संघर्ष करना पड़ा। अंत में इस संघर्ष में पूरी तरह से यशस्वी हो कर, यह एवं इसके वंश के लोग सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण मानने जाने लगे, जो इसके जीवन की सब से बड़ी फलश्रुति कही जा सकती है।

व्युत्पत्ति--इसके 'विश्वामित्र' नाम की व्युत्पत्ति आरण्यके ग्रंथों में 'विश्व का मित्र' शब्दों में दी गयी है (ऐ. आ. १.२.२)। व्याकरणशास्त्रीय दृष्टि से 'विश्वामित्र' एक अनियमित रूप है। पाणिनि के अनुसार, 'मित्र' शब्द के पहले जब 'विश्व' शब्द का उपयोग होता है, एवं उस शब्द का अर्थ ऋषि होता है, तब उक्त शब्द 'विश्वमित्र' नही, बल्कि 'विश्वामित्र' बनता है (पा. सू. ६.३.१३०)।

जन्म--विश्वामित्र का जन्म कान्यकुब्ज देश के सुविख्यात अमावसु वंश में हुआ था, एवं यह कुशिक राजा का पौत्र, एवं गाथिन् (गाधि) राजा का पुत्र था। इसका जन्मनाम विश्वरथ था। विश्वामित्र यह नाम इसे ब्राह्मण होने के पश्चात् प्राप्त हुआ।

वेदार्थ दीपिका में विश्वामित्र के जन्म के संबंध में निम्न कथा प्राप्त है। इसका पितामह कुशिक स्वयं एक अत्यंत बलाढ्य राजा था, एवं अपने पिता इषीरथ के समान प्रजाहितदक्ष था। इंद्र के समान तेजस्वी पुत्र प्राप्त होने के लिए कुशिक ने तपस्या की। उस समय स्वयं इंद्र ने ही गाथिन नाम धारण कर, कुशिक-पुत्र के रूप में जन्म लिया, एवं इसी गाथिन्‌रूपधारी इंद्र से विश्वामित्र का जन्म हुआ। इस प्रकार विश्वामित्र का वंशक्रम निम्नप्रकार कहा जा सकता है:--इषीरथ--कुशिक--गाथिन् (इंद्र)--विश्वामित्र (वेदार्थ. ३.१)।

वाल्मीकि रामायण में विश्वामित्र का वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है:--प्रजापति--कुश--कुशनाभ--गाथिन्--विश्वामित्र (वा. रा. बा. ५१)।

समवर्ती लोग--विश्वामित्र के पितामह कुशिक की पत्नी का नाम पौरुकुत्सी था, जो अयोध्या के पुरुकुत्स राजा की कन्या थी। इसकी बहन का नाम सत्यवती था, जिसका विवाह ऋचीक भार्गव ऋषि से हुआ था। सत्यवती के पुत्र का नाम जमदग्नि था। इस प्रकार जमदग्नि ऋषि एवं उसका पुत्र परशुराम जामदग्न्य ये दोनों विश्वामित्र के समवर्ती एवं निकट के रिश्तेदार थे।

राज्यप्राप्ति--अपने पिता के पश्चात् विश्वामित्र कान्यकुब्ज देश का राजा बन गया। पुराणों में इसका निर्देश कुशिक एवं गाथिन् राजाओं का 'दायाद' (उत्तरकालीन राजा) नाम से किया गया है।

आगे चल कर, इसने क्षत्रियधर्म का त्याग कर ब्राह्मण बनने का निश्चय किया, एवं यह सरस्वती नदी के किनारे 'रुषंगु-तीर्थ' पर तपस्या करने चला गया (म. श. ३८.२२-३४; ४१.२३०७; वा. रा. बा. ५१-५६)। वायु के अनुसार, इसने 'सागरानूप प्रदेश' में तपस्या की थी (वायु. ९१.९२-९३)। इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, विश्वामित्र का तपस्यास्थान आधुनिक राजपुताना के रेगिस्तान में कहीं था, जो प्रदेश प्राचीनकाल में पश्चिम समुद्र का तटवर्ती प्रदेश माना जाता था।

घोर तपस्या के द्वारा विश्वामित्र को ब्राह्मणत्व प्राप्त होने का निर्देश अनेकानेक वैदिक संहिता एवं ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है (का. सं. १६.१९; मै. सं. २.७.१९; तै. सं. २.२.१.२; ऐ. ब्रा. ६.१८.१; कौ. ब्रा. १५.१; जै. उ. ब्रा. २.३.१३; ऐ. आ. २.२.३; बृ. उ. २.२.४)। इससे प्रतीत होता है कि, विश्वामित्र का यह वर्णांतर प्राचीन काल में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण घटना मानी गयी थी।

वसिष्ठ से विरोध--विश्वामित्र को क्षत्रियधर्म छोड़ कर ब्राह्मण बनने की इच्छा क्यों हुई, इस संबंध में एक कल्पनारम्य कथा महाभारत एवं वाल्मीकि रामायण में प्राप्त हैं। एक बार यह वसिष्ठ ऋषि के आश्रम में अतिथि के नाते गया, जहाँ वसिष्ठ ने अपनी नंदिनी नामक कामधेनु की सहाय्यता से इसका उत्तम आदरातिथ्य किया। अनेकानेक दैवी गुणों से युक्त नंदिनी कामधेनु को देख कर, यह अत्यधिक प्रसन्न हुआ, एवं इसने उस धेनु की माँग वसिष्ठ से की। वसिष्ठ ने उसका इन्कार करने पर, यह उस धेनु की प्राप्ति के लिए अपना सारा राज्य देने के लिए सिद्ध हुआ। फिर भी वसिष्ठ ने इसे नंदिनी न दी।

पश्चात् इसने अपने सैन्यबल से नंदिनी का हरण करना चाहा। किंतु उस धेनु से उत्पन्न हुए शक, यवन, पह्लव, बर्बर, किरात आदि लोगों ने विश्वामित्र की सेना को परास्त किया, एवं इस प्रकार नंदिनी का हरण करने का इसका प्रयत्न असफल ही रहा।

तदुपरांत वसिष्ठ का पराजय करने के लिए, इसने अनेकानेक प्रकार के अस्त्र संपादन करने का निश्चय किया, एवं उस हेतु अत्यंत कठोर तपस्या भी की। किंतु अस्त्रप्राप्ति के पश्चात् भी वसिष्ठ अजेय ही रहा, एवं इसे जीवन में सर्वप्रथम ही साक्षात्कार हुआ कि, क्षत्रबल से ब्रह्मबल अधिक श्रेष्ठ है। पश्चात् वसिष्ठ के समान ब्रह्मबल प्राप्त करने के हेतु इसने स्वयंब्राह्मण बनने का

निश्चय किया, एवं तत्प्रीत्यर्थ कौशिकी नदी और 'रुषंगु तीर्थ' पर घोरतपस्या करके यह ब्राह्मण बन गया (म. व. ८५.९;१२; वा, रा. बा. ५१-५६)।

महाभारत में प्राप्त उपर्युक्त कथा कालदृष्टि से विसंगत प्रतीत होती है। नंदिनी गाय का पालनकर्ता वसिष्ठ ऋषि 'वसिष्ठ देवराज' न हो कर 'वसिष्ठ अथर्वनिधि' था, जो विश्वामित्र से काफ़ी पूर्वकालीन था (वसिष्ठ अथर्वनिधि देखिये)। फिर भी महाभारत में विश्वामित्र ऋषि के समकालीन देवराज वसिष्ठ को नंदिनी का पालनकर्ता चित्रित किया गया है। अतएव विश्वामित्र-वसिष्ठ संघर्ष की कारणपरंपरा बतानेवाली महाभारत में प्राप्त उपर्युक्त सारी कथा अनैतिहासिक प्रतीत होती है।

आपत्प्रसंग—ब्राह्मणपद प्राप्त होने के पश्चात्, विश्वामित्र ने अपनी पत्नी एवं पुत्र कोसल देश में स्थित एक आश्रम में रख दीं, एवं यह स्वयं पुनः एक बार सागरानूप तीर्थ पर तपश्चर्या करने चला गया। इसकी अनुपस्थिति में कोसल देश में बड़ा भारी अवर्षण आया, एवं विश्वामित्र की पत्नी एवं पुत्र भूख के कारण तड़पने लगे। अन्न प्राप्त कराने के लिए अपने एक पुत्र के गले में रस्सी बाँध कर, उसे खुले बाजार में बेचने का आपत्प्रसंग विश्वामित्र ऋषि की पत्नी पर आया, जिस कारण उस पुत्र को 'गालव' नाम प्राप्त हुआ।

त्रिशंकु की सहाय्यता—उस समय कोसल देश के त्रैय्यारुण राजा के पुत्र सत्यव्रत (त्रिशंकु) विश्वामित्रपत्नी की सहाय्यता की, तथा उसकी एवं विश्वामित्र पुत्रों की जान बचायी। त्रिशंकु स्वयं जंगल से शिकार कर के लाता था, एवं वह माँस विश्वामित्र के परिवार को खिलाया करता था। इन्हीं दिनों में एक बार त्रिशंकु राजा ने वसिष्ठ ऋषि के नंदिनी नामक गाय का वध कर, उसका मांस विश्वामित्र परिवार को खिलाने की कथा पुराणों में प्राप्त है। किन्तु जैसे पहले ही कहा गया है, नंदिनी का पालनकर्ता वसिष्ठ विश्वामित्र के समकालीन नहीं था। इसी कारण, यह कथा कल्पनारम्य एवं विश्वामित्र वसिष्ठ का शत्रुत्व बढ़ाने के लिए वर्णित की गयी प्रतीत होती है।

बारह वर्षों के पश्चात् अपनी तपस्या समाप्त कर विश्वामित्र कोसल देश को लौट आये। वहाँ अपने न होने के काल में त्रिशंकु ने अपने परिवार के लोगों की अच्छी तरह से देखभाल की, यह बात जान कर इसे त्रिशंकु के प्रति काफ़ी कृतज्ञता प्रतीत हुई। देवराज वसिष्ठ के द्वारा अयोध्या के राजगद्दी से पदभ्रष्ट किये गये उस राजकुमार को पुनः राजगद्दी पर बिठाने का आश्वासन इसने दे दिया।

त्रिशंकु का राजपुरोहित—आगे चल कर विश्वामित्र ने अयोध्या के राजपुरोहित देवराज वसिष्ठ को परास्त कर, त्रिशंकु को अयोध्या के राजगद्दी पर बिठाया। त्रिशंकु ने भी अपने राजपुरोहित देवराज वसिष्ठ को हटा कर उसके स्थान पर विश्वामित्र की नियुक्ति की, एवं इस प्रकार ब्राह्मण बन कर वसिष्ठतुल्य राजपुरोहित बनने की विश्वामित्र की आकांक्षा पूर्ण हो गयी।

त्रिशंकु का सदेह स्वर्गारोहण—आगे चल कर विश्वामित्र ने त्रिशंकु के अनेकानेक यज्ञों का आयोजन किया। यही नहीं, सदेह स्वर्गारोहण करने की उस राजा की इच्छा भी अपने तपःसामर्थ्य से पूरी की। इस संबंध में अपने पुराने शत्रु देवराज वसिष्ठ से इसे अत्यंत कठोर संघर्ष करना पड़ा। देवराज इंद्र के द्वारा त्रिशंकु के स्वर्गारोहण के लिए विरोध किये जाने पर, इसे उससे भी घोर संग्राम करना पड़ा। किन्तु अन्त में यह अपने कार्य में यशस्वी हो कर ही रहा (त्रिशंकु देखिये)।

पार्गिटर के अनुसार, त्रिशंकु के स्वर्गारोहण की पुराणों में प्राप्त सारी कथा कल्पनारम्य प्रतीत होती है। आकाश में स्थित ग्रहों में से एक ग्रहसमूह को विश्वामित्र ने त्रिशंकु का नाम दिलवाया, यही इस कथा का तादृश अर्थ है। वाल्मीकि रामायण में भी, त्रिशंकु का वर्णन चंद्रमार्ग पर स्थित एक ग्रह के नाते गुरु, बुध, मंगल आदि अन्य ग्रहों के साथ किया गया है (वा. रा. अयो. ४१.१०)।

उपर्युक्त कथा में वर्णित इंद्र-विश्वामित्र संघर्ष भी कल्पनारम्य प्रतीत होता है, एवं देवराज वसिष्ठ से विश्वामित्र के द्वारा किये गये संघर्ष का वर्णन, वहाँ देवराज इंद्र के संघर्ष में परिवर्धित किया गया है।

विश्वामित्र के कार्य का महत्त्व—विश्वामित्र के द्वारा त्रिशंकु को पुनः राज्य प्राप्त होने की घटना, अयोध्या के इक्ष्वाकु राजवंश के इतिहास में महत्त्वपूर्ण घटना मानी जाती है। अयोध्या के पुरातन इक्ष्वाकु राजवंश को दूर हटा कर वहाँ अपना स्वयं का राज्य स्थापन करने का प्रयत्न देवराज वसिष्ठ कर रहा था। उसे असफल बना कर, इक्ष्वाकु राजवंश का अधिराज्य अबाधित रखने का कार्य विश्वामित्र ने किया। इस प्रकार, 'त्रिशंकु-वसिष्ठ-विश्वामित्र' आख्यान का वास्तव नायक इक्ष्वाकुराज त्रिशंकु ही है। उसे गौण स्थान प्रदान कर; विश्वामित्र एवं वसिष्ठ-

का जो संघर्ष रामायण महाभारतादि ग्रन्थों में सविस्तृत रूप में वर्णित किया गया है, वह अनैतिहासिक प्रतीत होता है।

हरिश्चंद्र के राज्यकाल में—सत्यव्रत त्रिशंकु के राज्यकाल में शुरू हुआ इसका एवं देवराज वसिष्ठ का संघर्ष सत्यव्रत के पुत्र हरिश्चंद्र, एवं पौत्र रोहित के राज्यकाल में चालु ही रहा। सत्यव्रत के सदेह स्वर्गारोहण के पश्चात्, उसके पुत्र हरिश्चंद्र ने विश्वामित्र को अपना पुरोहित नियुक्त किया। किन्तु उसके राजसूय यज्ञ में बाधा उत्पन्न कर, वसिष्ठ ने अपना पौरोहित्यपद पुनः प्राप्त किया।

सत्यव्रत के विजनवास में, उसका पुत्र हरिश्चंद्र वसिष्ठ के ही मार्गदर्शन में पालपोस कर बड़ा हुआ था। अयोध्या के ब्राह्मण लोग भी पहले से ही विश्वामित्र के विरुद्ध थे। इन दोनों घटनाओं की परिणति हरिश्चंद्र के राजसूय यज्ञ के समय हुई, जहाँ हरिश्चंद्र ने विश्वामित्र को दक्षिणा देने से इन्कार कर दिया। इस अपमान के कारण रुष्ट हो कर इसने अयोध्या का पुरोहितपद छोड़ दिया, एवं यह पुष्करतीर्थ में तपस्या करने के लिए चला गया।

मार्कंडेय पुराण में—इस संदर्भ में मार्कंडेय-पुराण में वसिष्ठ एवं विश्वामित्र के संघर्ष की, अनेकानेक कल्पनारम्य कथाएँ प्राप्त है, जहाँ विश्वामित्र के द्वारा हरिश्चंद्र राजा को दक्षिणा प्राप्ति के लिए त्रस्त करने का, इसने एक पक्षी बन कर वसिष्ठ पर आक्रमण करने का, एवं वसिष्ठ के सौ पुत्रों का वध करने का निर्देश प्राप्त है (मार्कं. ८-९)। इन तीनों कथाओं में से पहली दो कथाएँ संपूर्णतः कल्पनारम्य हैं, एवं तीसरी हरिश्चंद्रकालीन विश्वामित्र की न हो कर, सुदासकालीन विश्वामित्र की प्रतीत होती है (विश्वामित्र ४. देखिये)।

हरिश्चंद्र के ही राज्यकाल में उसके पुत्र रोहित को यज्ञ में बलि देने का, एवं इक्ष्वाकु राजवंश को निर्वंश करने का षड्यंत्र वसिष्ठ के द्वारा रचाया गया था। किन्तु विश्वामित्र ने रोहित की, एवं तत्पश्चात् उसके स्थान पर बलि जानेवाले अपने भतीजे शुनःशेप की रक्षा कर, इक्ष्वाकु राजवंश का पुनः एक बार रक्षण किया। तदुपरांत विश्वामित्र ने शुनःशेप को अपना पुत्र मान कर, उसका नाम देवरात रख दिया (ऐ. ब्रा. ७.१६; सां. श्रौ. १५.१७; शुनःशेप देखिये)।

ब्रह्मर्षिपद की प्राप्ति—क्षत्रिय विश्वामित्र को ब्रह्मर्षिपद कैसे प्राप्त हुआ, इसकी कथाएँ वाल्मीकि रामायण एवं पुराणों में प्राप्त है। रुषंगु-तीर्थ पर तपस्या करने के कारण यह ब्राह्मण बना गया। शुनःशेप का संरक्षण करने के पश्चात्, कौशिकी नदी के तट पर तपस्या करने के कारण, इसे ब्रह्मर्षिपद प्राप्त हुआ। इतना होते हुए भी, यह क्रोध, मोह आदि विकार काबू में न रख सकता था। इसी कारण अपने तपस्या का भंग करने के लिए आयी हुई रंभा को इसने शिला बनाया था। पश्चात् काम क्रोध पर विजय पाने के लिए इसने पुनः एक बार तपस्या की, जिस कारण इसे जितेंद्रियत्व एवं ब्रह्मर्षिपद प्राप्त हुआ (वा. रा. बा. ६२-६६; स्कंद. ६.१.१६७-१६८)। ब्रह्मर्षिपद प्राप्त होने के पश्चात्, इसे इंद्र के साथ सोमपान करने का सन्मान प्राप्त हुआ (म. आ. ६९.५०)। इंद्र के कृपापात्र व्यक्ति के रूप में आरण्यक ग्रंथों में इसका निर्देश प्राप्त है (ऐ. आ. २.२.३; सां. आ. १.५)।

सत्वपरीक्षा—विश्वामित्र को ब्रह्मर्षिपद कैसे प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार धर्म ऋषि इसके पास आया एवं इसके पास भोजन माँगने लगा। धर्म के लिए यह चावल पकाने लगा, जितने में वह चला गया। पश्चात् यह सौ वर्षों तक धर्मऋषि की राह देखते वैसा ही खड़ा रहा। इतने दीर्घकाल तक खड़े रह कर भी इसने अपनी मनःशांति नही छोड़ी, जिस कारण धर्म ने इसकी अत्यधिक प्रशंसा की, एवं इसे ब्रह्मर्षि-पद प्रदान किया (म. उ. १०४.७-१८)। महाभारत में अन्यत्र त्रिशंकु-आख्यान, रंभा को शाप, विश्वामित्र के द्वारा कुत्ते का माँसभक्षण आदि इसके जीवन से संबंधित कथाएँ एकत्र रूप दी गयी हैं।

भविष्यपुराण के अनुसार, ब्रह्मा को अत्यंत प्रिय 'प्रतिपदा' का व्रत करने के कारण, इसे देहान्तर न करते हुए भी ब्राह्मणत्व की प्राप्ति हो गयी (भवि. ब्राह्म. १६.)। मृत्यु के पश्चात् यह शिवलोक गया, जो फल इसे हिरण्या नदी के संगम पर स्नान करने के कारण प्राप्त हुआ था (पद्म. उ. १४०)।

आश्रम—विश्वामित्र का आश्रम कुरुक्षेत्र में सरस्वती तीर नदी के पश्चिम तट पर स्थाणु-तीर्थ के सम्मुख था (म. श. ४१.४-३७)। इस आश्रम के समीप, सरस्वती नदी पर स्थित रुषंगु-आश्रम में विश्वामित्र ने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था (म. श. ३८.२२-३२)।

विश्वामित्र का अन्य एक आश्रम आधुनिक बक्सार में 'ताटका-वन' के समीप था। महाभारत के अनुसार, इसका आश्रम कौशिकी नदी (उत्तर बिहार की आधुनिक कोशी नदी) के तट पर स्थित था

एवं उस नदी का 'कौशिकी' नाम भी इसीके 'कौशिक' पैतृक नाम से प्राप्त हुआ था (म. आ. ६५.३०)। यह वही पुण्य स्थान था, जहाँ पूर्वकाल में वामन ने बलि वैरोचन से त्रिपाद भूमि की माँग की थी। यही स्थानमाहात्म्य जान कर इसने 'सिद्धाश्रम' में अपना आश्रम बनाया था (वा. रा. बा. २७–२९)। संभवतः यह आश्रम आद्य विश्वामित्र ऋषि का न हो कर, रामायणकालीन विश्वामित्र महर्षि का होगा।

इनके अतिरिक्त इसके देवकुण्ड (वेदगर्भपुरी), एवं विश्वामित्री नदी के तट पर स्थित अन्य दो आश्रमों का निर्देश भी प्राप्त है।

परिवार—विश्वामित्र के कुल एक सौ एक पुत्र थे, जिनमें से मँझले (इक्कावनवे) पुत्र का नाम मधुच्छन्दस् था। अपने भतिजे शुनःशेप को पुत्र मान लेने पर, विश्वामित्र ने उसे 'देवरात' नाम प्रदान कर, अपना ज्येष्ठ पुत्र नियुक्त किया, एवं अपने बाकी सारे पुत्रों को उसका 'ज्येष्ठपद' मानने की आज्ञा दी। विश्वामित्रपुत्रों में से पहले पचास पुत्रों ने विश्वामित्र की यह आज्ञा अमान्य कर दी, जिस कारण इसने उन्हें म्लेंच्छ बनने का शाप दिया। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, अपने इन पुत्रों को इसने अन्ध्र, पुण्ड्र, शबर, पुलिंद, मूतिब आदि अन्त्य जाति के लोग बनने का शाप दिया (ऐ. ब्रा. ७.१८; रैभ्य एवं ऋषभ याज्ञतुर देखिये)। मधुच्छंदस् एवं अन्य पचास कनिष्ठ पुत्रों ने विश्वामित्र की आज्ञा मान ली, जिस कारण इसने उन्हें अनेकानेक आशीर्वाद प्रदान किये।

विश्वामित्र के उपर्युक्त शाप के कारण, इसके पुत्रों की एवं वंशजों की निम्नलिखित दो शाखाएँ बन गयी:—

१. कुशिक शाखा,—जो विश्वामित्र के कृपापात्र पुत्रों से उत्पन्न हुयी, जिनमें देवरात प्रवर आता है (भा. ९. १६.२८–३७);

२. विश्वामित्र शाखा,—जो विश्वामित्र के शाप के कारण हीनकुलीन बन गये।

पत्नियाँ—विश्वामित्र की पत्नियाँ, एवं उनसे उत्पन्न इसके पुत्रों की जानकारी ब्रह्म, हरिवंश, वायु, ब्रह्मांड आदि पुराणों में प्राप्त है, जो संक्षेपरूप में नीचे दी गयी है:—

पत्नी का नाम	पुत्रों के नाम
१. रेणु	रेणु, सांकृति, गालव, मधुच्छंदस्, जय, देवल, कच्छप, हरित, अष्टक।
२. शालावती	हिरण्याक्ष, देवश्रवस्, कति।
३. सांकृति	मौद्गल्य, गालव।
४. माधवी	अष्टक।
५. दृषद्वती	कृत, ध्रुव, पूरण। वायु में दृषद्वती का पुत्र केवल अष्टक ही बताया गया है।

(ह. वं. १.३२; ब्रह्म. १०; वायु. ९१.९९–१०३)।

पुत्र—विश्वामित्र के पुत्रों की नामावली महाभारत, वाल्मीकि रामायण एवं विभिन्न पुराणों में प्राप्त है, जो निम्न दी गयी है:—

महाभारत में—अक्षीण, अंभोरुद, अरालि, आंध्रिक, आश्वलायन, आतुरायण, उज्जयन, उदापेक्षिन्, उपगहन, उलूक, ऊर्जयोनि, कपिल, कारीष, कालपथ, कूर्चामुख, गार्ग्य, गार्दभि, गालव, चक्रक, चांपेय, चारुमत्स्य, जंगारि, जाबालि, तंतु, ताडकायन, देवरात (शुनःशेप), नवतंतु, नाचिक, नारद, नारदिन्, नैकदृश, पर, पर्णजंघ (वल्गुजंघ), पौरव, बकनख, बभ्रु, बाभ्रवायणि, भूति, मधुच्छंदस्, मारुतंतव्य, मार्दम, मुसल, यति, यमदूत, याज्ञवल्क्य, लीलाढ्य, वक्षोग्रीव, वज्र, वातघ्न, वादुलि, विभूति, शकुन्त, शिरीशिन्, शिलायूप, शुचि, श्यामायन, संश्रुत्य, सालंकायन, सित, सुरकृत, सुश्रुत, सूत, सैयन, सैंधवायन, स्थूण, हिरण्याक्ष (म. अनु. ४.४९–५९)। इन पुत्रों में से हिरण्याक्ष को छः पुत्र उत्पन्न हुए थे।

(२) रामायण में—दृढनेत्र, मधुष्पंद, महारथि एवं हविष्पंद (वा. रा. बा. ५७)। विश्वामित्र के ये सारे पुत्र ब्राह्मणवंशविवर्धक एवं गोत्रकार माने जाते हैं।

(३) हरिवंश एवं पद्म में—कवि, क्रोधन, स्वस्रुम (स्वस्रुप), पितृवति (पितृवर्तिन्), पिशुन, वाग्दुष्ट, हिंस्र (ह. वं. १.२१.५; पद्म. सृ. १०)।

(४) अन्य ग्रंथों में—हिरण्याक्ष, देवश्रवस् (देवरात, शुनःशेप), कति, रेणु (रेणुक, रेणुमत्), सांकृति, गालव, मधुच्छन्दस्, जय (नय), देवल (देव), कच्छप, हरित (हारित), अष्टक, कृत, ध्रुव, पूरण। इनमें से

काति एवं अष्टक को क्रमशः कात्यायन एवं लौहि नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

(५) **वायु एवं ब्रह्मांड में**—मधुच्छन्दस्, नय एवं देव (वायु. ९१.९६; ब्रह्मांड. ३. ६६)।

(६) **ब्रह्म में**—मौद्गल्य, गालव, कात्यायन (ब्रह्म. (१०.१३)।

विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रनाम—विश्वामित्रकुल में उत्पन्न निम्नलिखित गोत्रों की नामावलि महाभारत एवं पुराणों में दी गयी है:—१. उदुंबर, २. कारूषक (करीषय, कारीषव, कारीषि); ३. कौशिक (कुशिक); ४. गालव; ५. चांद्रव (यमसुंचत); ६. जाबाल; ७. तालकायन (तारक, तारकायन); ८. देवरात; ९. देवल. १०. ध्यानजाप्य; ११. पणिन (पाणिन्, पाणिनि); १२. पार्थिव; १३. बभ्रु; १४. बादर; १५. बाष्कल (वास्कल); १६. मधुच्छंदस्; १७. यमदूत (यामदूत, यामभूत); १८. याज्ञवल्क्य; १९. रेणव; २०. लालाक्य (ददाति); २१. लौहित (लोहित, लोहिण्य); २२. वाताङ्य (उदुम्लान); २३. शालंकायन; २४. श्यामायन (शालावत्य); २५. समर्षण; २६. सांकृत (स्यंकृत); २७. सैंधवायन; २८. सौश्रव (सोश्रुत, सोश्रुम); २९. हिरण्याक्ष (म. अनु. ४.५०–६०; वायु. ९१.९७–१०२; ब्रह्मांड. ३.६६.६९–७४; ह. वं. २७.१४६३–१४६९; ब्रह्म. १०.६१–६३; १३)।

उपर्युक्त नामावलि में से १०–२६ नाम ब्रह्म के तेरहवें अध्याय में, एवं १२–२६ नाम ब्रह्म के दसवें अध्याय में अप्राप्य हैं।

विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रकार—इन गोत्रकारों के त्रिप्रवरान्वित (तीन प्रवरोंवाले) एवं द्विप्रवरान्वित (दो प्रवरोंवाले) ऐसे दो प्रमुख प्रकार है:—

(१) **त्रिप्रवरान्वित गोत्रकार**—विश्वामित्रकुल के बहुसंख्य गोत्रकार 'तीन प्रवरोंवाले' ही हैं, किंतु प्रवर-भेद के अनुसार उनके अनेक उपविभाग हैं, जिनकी जानकारी नीचे दी गयी हैं:—

(अ) **उद्दल, देवरात एवं विश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार**—अभय, आयतायन, उलूप (ग, उलप), औपहाव (ग), करीष (ग), खरवाच, जनपादप (ग), जाबाल (ग), देवरात, पयोद (ग), बाभ्रव्य (ग), याज्ञवल्क्य (ग), वतंड, वास्तुकौशिक (ग), विश्वामित्र, वैकृतिगालव (वैकलिनायन), शलंक, श्यामायन (ग), संश्रुत (ग), संश्रुत्य (ग), साश्वित (ग), सैंधवायन् (ग), हलयम (ग)।

(ब) **वैश्वामित्र, दैवश्रवस, दैवरात प्रवरों के गोत्रकार**—कारुकायण (कामुकायन, ग), कुशिक, देवश्रवस्, वैदेहरात, वैदेहजात, वैदेहनात, वैदेवराज (ग), सुजातेय, सौमुक (तौसुक)।

(क) **वैश्वामित्र, माधुच्छंदस, आज (आद्य) प्रवरों के गोत्रकार**—कपर्देय, धनंजय, परिकूट, पाणिनि।

(ड) **अघमर्षण, मधुच्छंदस् एवं विश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार**—आद्य, माधुच्छंदस, विश्वामित्र।

(इ) **आश्मरथ्य, वंजुलि एवं वैश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार**—अश्मरथ्य (ग), कामलायनिज, वंजुलि।

(ई) **ऋणवत्, गतिन् एवं विश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार**—उदरेणु, विश्वामि, उदाहि, क्रथक।

(उ) **खिलिखिलि, आज (विद्य) एवं वैश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार**—उदुंबर, करीराशिन्, त्राक्षायणि, मौंजायनि (कौञ्जायनि), लावकि, शाठ्यायनि (कात्यायनि), शालंकायनि, सैबिरिटि। इन गोत्रकारों के लिए खिलि, क्षितिमुखाविद्ध, एवं विश्वामित्र ये प्रवर भी कई पुराणों में प्राप्त हैं।

(२) **द्विप्रवरान्वित गोत्रकार—विश्वामित्र, एवं पूरण दो प्रवरों के गोत्रकार**—अष्टक, पूरण, लोहित (मत्स्य. १९८)।

२. एक ऋषि, जिसे ऊर्वशी अप्सरा से शकुंतला नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (भा. ९.१६.२८–३७)। यह ऋषि पूरुवंशीय दुष्यंत एवं भरत राजाओं का समकालीन था। इस प्रकार, अयोध्या के त्रिशंकु, हरिश्चंद्र आदि राजाओं से यह काफ़ी उत्तरकालीन था।

३. एक ऋषि, जिसने अयोध्या के राम दाशरथि के द्वारा ताटका राक्षसी, एवं मारीच, सुबाहु आदि राक्षसों का वध करवाया था (वा. रा. बा. २४–२७; राम दाशरथि देखिये)। यह साक्षात् धर्म का अवतार था, एवं इसके समान पराक्रमी एवं विद्यावान् सारे संसार में दूसरा कोई न था (वा. रा. बा. २१)।

४. एक ऋषि, जो उत्तर पंचाल देश के पैजवन सुदास राजा का पुरोहित था (ऋ. ३.५३; ७.१२)। ऋग्वेद के तृतीय मंडल के प्रणयन का श्रेय इसे एवं इसके वंश में उत्पन्न ऋषियों को दिया गया है।

ऋग्वेद में इसने स्वयं को 'कुशिक' का वंशज कहलाया है (ऋ. ३.५३.५)। इसी कारण इसका निर्देश

'कुशिक' नाम से भी प्राप्त है (ऋ. ३.३३.५)। इसके परिवार के लोगों को भी 'कुशिकाः' कहा गया है। इसके परिवार के लोगों को 'विश्वामित्र' उपाधि भी प्राप्त है (ऋ. ३.५३.१३; १०.८९.१७)।

गाथिन् का वंशज—विश्वामित्र 'गाथिन्' राजा का वंशज था, जिस कारण इसे 'गाथिन' पैतृक नाम प्राप्त है। विश्वामित्र गाथिन के द्वारा विरचित अनेक सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त हैं [ऋ. ३.१-१२; २४; २५; २६ (१-६; ८; ९); २७-३२; ३३ (१-३,५,७,९,११-१३); ३४; ३५; ३६ (१-९, ११); ३७-५३; ५७-६२; ९.६७.१३-१५; १०.१३७.५; १६७]। पुराणों में भी इसे कुशिककुलोत्पन्न कहा गया है (वायु. ९१.९३)।

नदीसूक्त—इसके द्वारा विरचित एक सूक्त में विपाश् एवं शुतुद्री (आधुनिक बियास् एवं सतलज नदियाँ) नदियों की संगम पर राह देने के लिए प्रार्थना की गयी है (ऋ. ३.३३)। अभ्यासकों का कहना है कि, इस सूक्त के प्रणयन के समय विश्वामित्र पैजवन सुदास राजा का पुरोहित था, एवं पंजाब के संवरण राजा पर आक्रमण करनेवाली सुदास की विजयी सेना को मार्ग प्राप्त कराने के लिए इसने इस 'नदीसूक्त' की रचना की थी (गेल्डनर, वेदिशे स्टूडियन. ३.१५२)।

सायण के अनुसार, सुदास राजा से विपुल धनसंपत्ति प्राप्त करने के पश्चात्, विश्वामित्र के कई विपक्षियों ने इसका पीछा करना शुरु किया। उस समय भागते हुए विश्वामित्र ने इस नदीसूक्त की रचना थी (ऋ. ३.३३, सायणभाष्य)। किन्तु सायण का यह मत अयोग्य प्रतीत होता है। स्वयं यास्क भी सायण के इस मत से असहमत है (नि. २.२४)।

वसिष्ठ से विरोध—ऋग्वेद में प्राप्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, यह शुरु में सुदास राजा का पुरोहित था (ऋ. ३.५३)। किन्तु इसके इस पदसे भ्रष्ट होने के पश्चात्, वसिष्ठ सुदास का पुरोहित बन गया। तदुपरांत यह सुदास के शत्रुपक्ष में शामिल हुआ, एवं इसने सुदास के विरुद्ध दाशराज्ञ-युद्ध में भाग लिया (वसिष्ठ देखिये)।

इसी संदर्भ में इसने 'वसिष्ठ-द्वेषिण्यः' नामक कई ऋचाओं की रचना की, जो शौनक के काल से सुविख्यात हैं। वसिष्ठगोत्र में उत्पन्न लोग आज भी इन ऋचाओं का पठन नहीं करते। ऋग्वेद का एक भाष्यकार दुर्गाचार्य ने स्वयं वसिष्ठगोत्रीय होने के कारण, इन ऋचाओं पर भाष्य नहीं लिखा है (ऋ. ३.५३.२०-२४; नि. १०.१४)।

शक्ति का वध—वसिष्ठ ऋषि के पुत्र शक्ति से विश्वामित्र के द्वारा किये गये संघर्ष का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है। सुदास राजा के यज्ञ के समय हुए वादविवाद में शक्ति ने इसे परास्त किया। फिर विश्वामित्र ने जमदग्नि ऋषि से 'ससर्परी' विद्या प्राप्त कर, शक्ति को परास्त किया (ऋ. ३.५३.१५-१६, वेदार्थदीपिका)। आगे चल कर इसने सुदास के सेवकों के द्वारा शक्ति का वध करवाया (तै. सं. ७.४.७.१; ऋ. सर्वानुक्रमणी ७.३२)।

शक्ति ऋषि से हुए वादविवाद में इसने कथन की हुई ऋचाएँ 'मौनी विश्वामित्र' की ऋचाएँ नाम से प्रसिद्ध हैं, जिनमें इसने कहा है, 'आप लोग इस 'अन्तक' (विश्वामित्र) के पराक्रम को नहीं जानते। इसी कारण मुझे वादविवाद में स्तब्ध देख कर आप हँस रहे हैं। किंतु आप नहीं जानते, कि विश्वामित्र अपने शत्रु से लड़ना ही जानता है। शत्रु से शरणागति उसे मंजुर नहीं है (ऋ. ३.५३.२३-२४)।

ब्राह्मण ग्रंथों में निम्नलिखित वैदिक मंत्रों के प्रणयन का श्रेय भी विश्वामित्र को दिया गया है:—१. संपात ऋचाएँ—जिनका प्रणयन एवं प्रचार क्रमशः विश्वामित्र एवं वामदेव ऋषियों ने किया (ऐ. ब्रा. ६.१८); २. रोहित-कूलीय सामसंत्र—जिनका प्रणयन सौदन्ति लोगों से मिलने के लिए जानेवाले विश्वामित्र ने नदी को लाँघते समय किया था (पं. ब्रा. १४.३.१३)।

५. एक धर्मशास्त्रकार, जिसका निर्देश 'वृद्धयाज्ञवल्क्य स्मृति' में प्राप्त है। 'अपरार्क', 'स्मृतिचंद्रिका', जीमूतवाहनकृत 'कालविवेक' आदि धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथों में विश्वामित्र के निम्नलिखित विषयों से संबंधित अभिमत उद्धृत किये है:—व्यवहार, पंचमहापातक श्राद्ध, प्रायश्चित्त आदि।

इसके द्वारा विरचित नौ अध्यायों की 'विश्वामित्र-स्मृति' मद्रास राज्य के द्वारा प्रकाशित की गयी है (मद्रास राज्य कृत पाण्डुलिपियों की सूचि पृ. १९८५, क्रमांक २७१७)।

६. एक ऋषि, जो रैभ्य नामक ऋषि का पिता, एवं अर्वावसु एवं परावसु ऋषियों का पितामह था। यह चेदि देश का राजा वसु एवं बृहद्युम्न राजाओं का समकालीन था (यवक्रीत एवं भरद्वाज देखिये)।

७. वैवस्वत मन्वन्तर का एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. ८.१३.५; १०.७४.८)। यह स्यमंतपंचक क्षेत्र में श्रीकृष्ण से मिलने आया था, एवं कृष्ण के द्वारा किये गये यज्ञ का यह पुरोहित था (भा. १०.८४.३; ११.१.१२)।

८. एक ऋषि, जो फाल्गुन माह के सूर्य के साथ घूमता है (विष्णु. २.१०.१८)।

९. ब्रह्मराक्षसों का एक समूह, जो 'रात्रिराक्षसों' के चार समूहों में से एक माना जाता है (ब्रह्मांड. ३.८.५९-६१)। इन्हें 'कौशिक' नामान्तर भी प्राप्त था।

विश्वायु--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार पुरूरवस् राजा के छः पुत्रों में से एक था (वायु. ९१.५२)।

२. वशवर्तिन् देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.२९)।

३. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३४)।

विश्वावसु—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १३९)। तैत्तिरीय संहिता में इसे एक गंधर्व कहा गया है (तै. सं. १.१.११.१)। गायत्री के द्वारा लाये गये सोम की इसने चोरी की थी (श. ब्रा. ३.२.२.२)।

२. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था। इसने सोम से चाक्षुषी विद्या सीखी थी, जो आगे चल कर इसने चित्ररथ गंधर्व को प्रदान की थी (म. आ. १५८.४०-४२)।

गंधर्व एवं अप्सराओं के द्वारा, गंधर्वमधु प्राप्त करने के लिए किये गये पृथ्वीदोहन में इसे वत्स बनाया गया था (भा. ४.१८.१७)। इंद्र-नमुचि युद्ध में यह इंद्रपक्ष में शामिल था (भा. ८.११.४१)। याज्ञवल्क्य ऋषि के साथ इसने अध्यात्मविषयक चर्चा की थी, जिस समय इसने उसे चौबीस प्रश्न पूछे थे (म. शां. ३०६. २६-८०)।

मेनका अप्सरा से इसे प्रमद्वरा नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (म. आ. ८.६)। इसका चित्रसेन नामक एक अन्य पुत्र भी था। कर्दम प्रजापति की पत्नी देवहूति से इसका प्रथमदर्शन में ही प्रेम हुआ था (भा. ३. २०.३९)।

ब्राह्मणों के शाप के कारण, इसे पृथ्वीलोक में कबंध राक्षस के रूप में जन्म प्राप्त हुआ था। आगे चल कर, राम दाशरथि के द्वारा यह मारा गया, एवं इसे मुक्ति प्राप्त हुई (म. व. २६३.३३-३८)।

३. एक गंधर्व, जो श्रावण माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३७)।

४. एक ऋषि, जो जमदग्नि ऋषि के पाँच पुत्रों में से एक था। जमदग्नि के शाप के कारण, अपने अन्य भाइयों के साथ यह पाषाण बना था। किंतु आगे चल कर, इसके भाई परशुराम ने इसे शापमुक्त कराया (म. व. ११६.१७; परशुराम देखिये)।

५. एक राक्षस, जो मधु राक्षस की पत्नी कुंभीनसी का पिता था। इसकी पत्नी का नाम अनला था, जो माल्यवत् राक्षस की कन्या थी (वा. रा. उ. ६१)।

६. एक गंधर्व, जो पुरूरवस् एवं उर्वशी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६६.२३)। इसने ही उर्वशी को पृथ्वीलोक से स्वर्गलोक वापस लाया था।

७. एक वसु, जो धर्म एवं सुदेवी के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १७१.४६)।

विश्वेदेव—एक यज्ञीय देवतासमूह, जिसे ऋग्वेद के चालीस से भी अधिक सूक्त समर्पित किये गये हैं।

वैदिक साहित्य में—विश्वेदेव का शब्दशः अर्थ अनेक देवता है। यह एक काल्पनिक यज्ञीय देवतासमूह है, जिसका मुख्य कार्य सभी देवताओं का प्रतिनिधित्व करना है, क्यों कि, यज्ञ में की गई स्तुति से कोई देवता छूट न जाय। वेदों के जिन मंत्रों में अनेक देवताओं का संबंध आता है, एवं किसी भी एक देवता का निश्चित रूप से उल्लेख नही होता है, वहाँ 'विश्वेदेव' का प्रयोग किया जाता है। भाषाशास्त्रीय दृष्टि से यह सामासिक शब्द नही है, बल्कि 'विश्वे + देवाः' ये दो शब्द मिल कर बना हुआ संयुक्त शब्द है। इसी कारण इसे 'सर्वदेव' नामांतर भी प्राप्त है।

विश्वेदेवों से संबंधित सूक्तों में सभी श्रेष्ठ देवता एवं कनिष्ठ देवताओं की क्रमानुसार प्रशस्ति प्राप्त है। यज्ञ करानेवाले पुरोहितों को जिस समय समस्त देवतासमाज को आवाहन करना हो, उस समय वह आवाहन विश्वेदेवों के उद्देश्य कर किया गया प्रतीत होती है।

नामावलि—कई अभ्यासकों के अनुसार, ऋग्वेद में प्राप्त 'आप्री सूक्त' विश्वेदेवों को उद्देश्य कर ही लिखा गया है, जहाँ बारह निम्नलिखित देवताओं को आवाहन किया गया है:— १. सुसमिद्ध, २. तनुनपात्, ३. नराशंस, ४. इला, ५. बर्हि, ६. द्वार, ७. उषस् एवं रात्रि, ८. होतृ नामक दो अग्नि, ९. सरस्वती, इला, एवं भारती (मही) आदि देवियाँ, १०. त्वष्ट्र, ११. वनस्पति,

१२. स्वाहा (ऋ. १.१३)। इस सूक्त में निर्दिष्ट ये बारह देवता एक ही अग्नि के विभिन्न रूप हैं।

ऋग्वेद में प्राप्त विश्वेदेवों के अन्य सूक्तों में इस देवता-समूह में त्वष्टृ, ऋभु, अग्नि, पर्जन्य, पूषन्, एवं वायु आदि देवता; बृहद्दिवा आदि देवियाँ, एवं अहिर्बुध्न्य आदि सर्प समाविष्ट किये गये हैं।

ऋग्वेद में निर्दिष्ट 'मरुद्‌गण' ऋभुगण' आदि देवगणों जैसा 'विश्वेदेव एक देवगण प्रतीत नहीं होता है। फिर भी कभी-कभी इन्हें एक संकीर्ण समूह भी माना गया प्रतीत होता है, क्यों कि, 'वसु' एवं 'आदित्यों' जैसे देवगणों के साथ इन्हें भी आवाहन किया गया है (ऋ. २.३.४)।

ऐतरेय ब्राह्मण में---इस ग्रंथ में विश्वेदेवों का एक देवतासमूह के नाते निर्देश प्राप्त है, जहाँ आविक्षित कामप्रि राजा के यज्ञ में इनके द्वारा यज्ञीय सभासद के नाते कार्य करने का निर्देश प्राप्त है:—

> मरुतः परिवेष्टारः मरुत्त यावसन्गृहे।
> आविक्षितस्य कामप्रेः विश्वेदेवाः सभासद इति॥
> (ऐ. ब्रा. ३९.८.२१)।

पुराणों में---विश्वेदेवों का उत्क्रांत रूप पौराणिक साहित्य में पाया जाता है, जहाँ इन्हें स्पष्टरूप से देवता-समूह कहा गया है। वायु में इन्हें दक्षकन्या विश्वा एवं धर्म ऋषि के पुत्र कहा गया हैं, एवं इनकी संख्या दस बतायी गयी हैं। राज्यप्राप्ति के लिये इनकी उपासना की जाती है।

नामावलि—पुराणों में प्राप्त इनकी नामावलि निम्न प्रकार है:---१. क्रतु, २. दक्ष, ३. श्रव, ४. सत्य, ५. काल, ६. काम, ७. मुनि, ८. पुरूरवस्, ९. आर्द्रवास (आर्द्रव), १०. रोचमान (ब्रह्मांड. ३.१२;४.२.२८)। कई अन्य पुराणों में, इनके वसु, कुरज, मनुज, बीज, धुरि, लोचन, आदि नामांतर भी प्राप्त है (भा. ६.६.६०; मत्स्य. २०२; सांब. १८)। महाभारत में भी इनकी विस्तृत नामावलि दी गयी है, जहाँ इनका निवासस्थान 'भुवर्लोक' बताया गया है (म. अनु. ९१.२८)।

ये स्वयं अप्रज (संततिहीन) थे, एवं इन्द्र की उपासना करते इन्द्रसभा में उपस्थित थे (भा. ६.६.६०)। देवासुर संग्राम में देवपक्ष में शामिल होकर, इन्होंने पौलोमों के साथ युद्ध किया था (भा. ८.१०.३४)। सोम के द्वारा किये गये राजसूय यज्ञ में इन्होंने 'चमसाध्वर्यु' के नाते काम किया था (मत्स्य. १७.१४)। मरुत्त के यज्ञ में भी ये सभासद थे (भा. ९.२.२८)। इन्हींके ही कृपा से ज्यामघ को पुत्रप्राप्ति हुई थी (भा. ९.२.२८)।

ब्रह्मा की उपासना—इन्होंने हिमालय पर्वत पर पितरों की एवं ब्रह्मा की, उपासना की थी, जिस कारण उन्होंने प्रसन्न हो कर इन्हें आशीर्वाद दिया, 'आज से मनुष्यों के द्वारा, किये गये श्राद्धविधियों में तुम्हें अग्रमान प्राप्त होगा। देवों से भी पहले तुम्हारी पूजा की जायेगी। तुम्हारी पूजा करने से श्राद्ध का संरक्षण होगा, एवं पितर सर्वाधिक तृप्त होंगे' (वायु. ७६.१-१५; ब्रह्मांड. ३.३. १६)।

कौन-कौन से श्राद्धविधियों में कौनसे विश्वदेवों को प्राधान्य दिया जाता है, इसकी जानकारी 'निर्णयसिंधु' में प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है:—१. पार्वणश्राद्ध–पुरूरव, आर्द्रव; २. महालय श्राद्ध–धूरि, लोचन; ३. नान्दी श्राद्ध–सत्य, वसु; ४. जिवत्पितृक श्राद्ध–क्रतु, दक्ष (निर्णय-सिंधु पृ. २७९)।

भागवत में इन्हें वर्तमानकालीन वैवस्वत मन्वन्तर के देवता कहा गया है (भा. ९.१०.३४) विश्वामित्र के शाप के कारण, इन्हें द्रौपदी के पाँच पुत्रों के रूप में जन्म प्राप्त हुआ था। आगे चल कर ये पाँच हि पुत्र अश्वत्थामन् के द्वारा मारे गये (मार्क. ६२-६९)।

विश्वेश्वर–शिव का एक अवतार, जो काशी में अवतीर्ण हुआ था (शिव. शत. ४२)। इसे अविमुक्तेश्वर नामान्तर भी प्राप्त है (शिव. कोटि. १)।

२. एकादश रुद्रों में से एक।

विष---शिव देवों में से एक।

२. एक असुर, जो नकुलि देवी के द्वारा मारा गया था (ब्रह्मांड ४. २८.३९)।

३. एक असुर, जो दनायुष नामक असुर का पुत्र था (वायु. ६८.३०)।

विषया—चन्दनावती नगरी के दुष्टबुद्धि प्रधान की कन्या (चन्द्रहास देखिये)।

विषाणिन्--एक ज्ञातिसमूह, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा के पक्ष में शामिल था (ऋ. ७.१८.७)। रौथ इन्हें सुदास राजा के विपक्षी मानते हैं, किंतु वह अयोग्य प्रतीत होता है।

अलिन, भलानस, शिव, एवं पक्थ लोगों के साथ इनका निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि,

ये उन्हींके समान, उत्तरीपश्चिम भारत में रहनेवाले लोग होंगे।

'विषाणिन्' का शब्दशः अर्थ 'सींगयुक्त' है। ये लोग संभवतः सींग के आकार का अथवा सींगों से अलंकृत शिरस्त्राण धारण करते होंगे, जिस कारण इन्हें 'विषाणिन्' नाम प्राप्त हुआ था।

विषूची—विरज् नामक राक्षसराज की पत्नी, जिससे इसे सौ पुत्र, एवं एक कन्या उत्पन्न हुई थी (भा. ५.१५.१५)। इसे विष्वक्सेन की माता भी कहा गया है (भा. ८.१३.२३)।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर के श्रीविष्णु की माता।

विष्कर—एक राक्षस, जो पूर्वकाल मे पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५२)।

विष्टराश्व—इक्ष्वाकुवंशीय विश्वगश्व राजा का नामान्तर (विश्वगश्व देखिये)। विष्णु के अनुसार इसके पुत्र का नाम चंद्राश्व था।

विष्टि—धर्मसावर्णि मन्वंतर का एक ऋषि।

२. विवस्वत् एवं छाया की एक कन्या, जो दिखने में अत्यंत भयंकर थी। इसी कारण त्वष्टृपुत्र विश्वरूप राक्षस से इसका विवाह हुआ।

विष्णापु—एक ऋषिकुमार, जो विश्वक 'कृष्णिय' नामक अश्वियों के कृपापात्र ऋषि का पुत्र था। एक बार यह खो गया था, जिस समय अश्वियों ने इसे इसके पिता के पास पहुँचा दिया था (ऋ. १.११६.२३; ११७.७; ८.८६.३; १०.६५.१२)।

विष्णु—जगत्संचालक एक आद्य देवता, जिसकी पूजा जगत्संहार का आद्य देवता माने गये रुद्र-शिव के साथ सारे भरतखंड में भक्तिभाव से की जाती है। वैदिक देवताविज्ञान में निर्दिष्ट देवताओं में से विष्णु एवं रुद्रशिव ये दो देवता ही ऐसे हैं कि, जिनके प्रति भारतीयों की श्रद्धा एवं भक्ति स्थलकालादि सारे बंधन लाँघ कर सदियों से अबाधित रही है। यही कारण है कि, ये देवता भारतीय जनता के केवल दैवत ही नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति का एक अविभाज्य भाग बन गये हैं।

मानवाकृति दैवतोपासना का आद्य प्रतीक—भारतीय दैवतशास्त्र के इतिहास में, विष्णु एवं रुद्र-शिव मानवाकृति दैवतोपासना के आद्य प्रतीक माने जाते है। इन देवताओं का मानवीकरण उत्तर वैदिककाल में हुआ, जब वेदों के द्वारा प्रणीत यज्ञयागात्मक उपासना-पद्धति आधिकाधिक तंत्रबद्ध, एवं नित्याचरण के लिए कठिन होती जा रही थी। इस अवस्था में, जिस प्रकार वेदों में निर्दिष्ट रुद्र-शिव का परिवर्धित मानवी स्वरूप शैव-उपासना पद्धति के द्वारा साकार हुआ, उसी प्रकार वेदों में निर्दिष्ट विष्णु देवता का परिवर्धित मानवी रूप वैष्णव-उपासना सांप्रदायों के द्वारा आविष्कृत हुआ।

विष्णु देवता के इस नये परिवर्धित स्वरूप में, वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट विष्णु को, सात्वत लोगों के द्वारा पूजित वासुदेव से, एवं ब्राह्मणादि ग्रंथों में निर्दिष्ट जगत्संचालन के नारायण देवता से सम्मिलित करने का यशस्वी प्रयत्न किया गया। आगे चल कर पौराणिक साहित्य में विष्णु के अनेकानेक अवतारों की कल्पना प्रसृत हुई, जिसके अनुसार कृष्ण, राम दाशरथि आदि देवतातुल्य पुरुषों को विष्णु के ही अवतार मान कर, वैष्णव उपासना की कक्षा और भी संवर्धित की गयी। इस प्रकार ऋग्वेद में चतुर्थ श्रेणि का देवता माना गया विष्णु पौराणिक काल में एक सर्वश्रेष्ठ देवता बन गया।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में निर्दिष्ट इन्द्र, वरुण, अग्नि आदि देवताओं की तुलना में विष्णु का स्थान काफ़ी कनिष्ठ प्रतीत होता है। ऋग्वेद के केवल पाँच हि सूक्त विष्णु को उद्देश्य कर रचे गये है। इन सूक्तों में इसे स्वतंत्र अस्तित्व अथवा पराक्रम प्रदान नहीं किये गये है, बल्कि सूर्यदेवता का ही एक प्रतिरूप इसे माना गया है, एवं इन्द्र के सहायक के नाते इसका वर्णन किया गया है।

स्वरूपवर्णन—एक बृहदाकार शरीरवाले नवयुवक के रूप में ऋग्वेद में इसका स्वरूपवर्णन प्राप्त है। इसे 'उरुगाय' (विस्तृत पादप्रक्षेप करनेवाला) एवं 'उरुक्रम' (चौड़े पग रखनेवाला) कहा गया है, एवं अपने इन पगों से यह सारे विश्व को नापता है, ऐसा निर्देश भी वहाँ किया गया है।

निवासस्थान—अपने तीन पगों के द्वारा विष्णु ने पृथ्वी अथवा पार्थिव स्थानों को नाप लिया था, ऐसे निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त हैं। इनमें से दो पग अथवा स्थान मनुष्य को दिखाई देते है, किन्तु इसका तीसरा अथवा उच्चतम पग मनुष्योंके दृक्कक्षा के बाहर है। यही नहीं, पक्षियों के उड़ान के भी बाहर है (ऋ. १.१५५.५)। विष्णु के इस उच्चतम स्थान (परमं पदम्) अग्नि, के उच्चतम स्थान के समान माना गया है। वहाँ अग्नि, विष्णु के रहस्यात्मक गायों (मेघ) की रक्षा करता है (ऋ. ५.३३)।

इस स्थान पर विष्णु का निवास रहता है, एवं पुण्यात्मा लोग आनंद से रहते हैं। वहाँ मधु का एक कूप है, जहाँ

देवतागण सुखपूर्वक रहते हैं (ऋ. १.१५४.५; ८.२९)। इसी तेजस्वी निवासस्थान में इन्द्र एवं विष्णु का निवास रहता है, एवं वहाँ पहुँचने की कामना प्रत्येक साधक करता है। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे तीन निवासस्थानोंवाला (त्रिषधस्थ) कहा गया है (ऋ. १.१५६.५)।

ऋग्वेद में अन्यत्र विष्णु को पर्वत पर रहनेवाला (गिरिक्षित्), एवं पर्वतानुकूल (गिरिष्ठा) कहा गया है (ऋ. १.१५४)।

पराक्रम—विष्णु के पराक्रम की अनेकानेक कथाएँ ऋग्वेद में प्राप्त है। इसे साथ लेकर इंद्र ने वृत्र का वध किया था (ऋ. ६.२०)। इन दोनों ने मिल कर दासों को पराजित किया, शंबर के ९९ दुर्गों को ध्वस्त किया, एवं वर्चिन् के दल पर विजय प्राप्त किया (ऋ. ७.९८)।

विष्णु के तीन पग—विष्णु का सब से बड़ा पराक्रम (विक्रम) इसके 'त्रिपदों' का है, जहाँ इसने तीन पगों में समस्त पृथ्वी, द्युलोक एवं अंतरिक्ष का व्यापन किया था (ऋ. १.२२.१७-१८)। अधिकांश युरोपीय विद्वान् एवं यास्क के पूर्वाचार्य और्णवाभ, विष्णु के इन त्रिपदों का अर्थ सूर्य का उदय, मध्याह्न, एवं सूर्यास्त मानते हैं।

किन्तु बर्गेन, मॅक्डोनेल आदि युरोपीय विद्वान एवं शाकपूणि आदि भारतीय आचार्य, उपर्युक्त प्रकृत्यात्मक व्याख्या को इस कारण अयोग्य मानते है कि, उसमें विष्णु के अत्युच्च तृतीय पग (परमं पदं) का स्पष्टीकरण प्राप्त नहीं होता। विष्णु के इस तृतीय पग को सूर्यास्त मानना अवास्तव प्रतीत होता है। इसी कारण इन अभ्यासकों के अनुसार, यद्यपि विष्णु एक सौर देवता है, फिर भी उसके तीन पगों का अर्थ, सूर्योदय, मध्याह्न, सूर्यास्त आदि न हो कर, पृथ्वी, अंतरिक्ष, एवं आकाश इन तीन लोगों का विष्णु के द्वारा किया गया व्यापन मानना ही अधिक योग्य होगा। ऐसे माने से विष्णु का 'परम पद' स्वर्लोक से समीकृत किया जा सकता है, जो समीकरण 'परम पद' के अन्य वर्णनों से मिलता जुलता है।

नियमबद्ध गतिमानता—पराक्रमी होने के साथ साथ, विष्णु अत्यंत गतिमान्, द्रुतगामी एवं तेजस्वी भी है। यह अग्नि, सोम, सूर्य, उषस् की भाँति विश्व के विधि-नियमों का पालन करनेवाला, एवं इन नियमों का प्रेरक भी है। इसी कारण, इसे 'क्षिप्र' 'एष', 'एवया', 'स्वर्दृश,' 'विभूतद्युम्न' 'एवयावन्' कहा गया है (ऋ. १.१५५.५; १५६.१)।

एक सौरदेवता—ऋग्वेद में प्राप्त उपर्युक्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, अपने विस्तृत पगों के द्वारा समस्त विश्व को नियमित रूप से पार करनेवाले सूर्य के रूप में ही विष्णुदेवता की धारणा वैदिक साहित्य में विकसित हुई थी। प्रत्येकी चार नाम (ऋतु) धारण करनेवाले अपने नब्वें अश्वों (दिनों) को विष्णु एक घूमते पहिये के भाँति गतिमान बनाता है, ऐसा एक रूपकात्मक वर्णन ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.१५५.६)। यहाँ साल के ३६० दिनों को प्रवर्तित करनेवाले सूर्यदेवता का रूपक स्पष्टरूप से प्रतीत होता है।

ब्राह्मण ग्रंथों में विष्णु का कटा हुआ मस्तक ही सूर्य बनने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १४.१.१.१०)। इसके हाथ में प्रवर्तित होनेवाला चक्र है, जो सूर्य के सदृश ही प्रतीत होता है (ऋ. ५. ६३)। विष्णु का वाहन गरुड है जिसे 'गरुत्मत्' एवं 'सुपर्ण' ये 'सूर्यपक्षी' अर्थ की उपाधियाँ प्रदान की गयी है (ऋ. १०.१४४.४)। विष्णु के द्वारा अपने वक्षःस्थल पर धारण किया गया कौस्तुभ मणि, इसके हाथ में स्थित पद्म, इसका पीतांबर एवं इसके 'केशव' एवं 'हृषीकेश' नामान्तर ये सारे इसके सौरस्वरूप की ओर संकेत करते हैं।

कई अभ्यासकों के अनुसार, विष्णुदेवता की आविष्कृति सर्वप्रथम 'सूर्यपक्षी' के रूप में हुई थी, एवं ऋग्वेद में निर्दिष्ट 'सुपर्ण' (गरुड पक्षी) यही विष्णु का आद्य स्वरूप था (ऋ. १०.१४९.३)। विष्णु के 'श्रीवत्स' 'कौस्तुभ' 'चतुर्भुजत्व' 'नाभिकमल' आदि सारे गुण-विशेष एवं उपाधियाँ, इसके इस पक्षीस्वरूप के ही द्योतक प्रतीत होते हैं।

भक्तवत्सलता—विष्णु के भक्तवत्सलता का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है। अपने सारे पराक्रम इसने त्रस्त मनुष्यों को आवास् प्रदान करने के लिए एवं लोकरक्षा के लिए किये थे (ऋ. ६.४९.१३; ७.१००; १.१५५)। विष्णु की इसी भक्तवत्सलता का विकास आगे चल कर विष्णु के अनेकानेक अवतारों की कल्पना में आविष्कृत हुआ, जहाँ नानाविध स्वरूप धारण करने की श्रीविष्णु की अद्भुत शक्ति का भी सुयोग्य उपयोग किया गया (ऋ. ७.१००.१)।

विष्णु के अवतारों का सुस्पष्ट निर्देश यद्यपि ऋग्वेद में अप्राप्य है, फिर भी वामन एवं वराह अवतारों का धुँधलासा संकेत वहाँ पाया जाता है (ऋ. १.६१.७);

८.७७.१०)। इन्हीं अवतार-कल्पनाओं का विकास आगे चल कर ब्राह्मण ग्रंथों में किया हुआ प्रतीत होता है।

अवंध्यता का देवता—डॉ. दांडेकरजी के अनुसार, ऋग्वेद में निर्दिष्ट विष्णु अवंध्यता (फर्टिलिटी) का एक देवता है, एवं 'इंद्र-वृषाकपि-सूक्त' में निर्दिष्ट 'वृषाकपि' स्वयं विष्णु ही है (ऋ. १०.८६)। ऋग्वेद में अन्यत्र विष्णु को 'शिपिविष्ट' (गूढरूप धारण करनेवाला) कहा गया है, एवं इसकी प्रार्थना की गयी है 'अपने इस रुप को हमसे गुप्त न रक्खो' (ऋ. ७. १००.६)। यह भ्रुणों का रक्षक है, एवं गर्भाधान के लिए अन्य देवताओं के साथ इसका भी आवाहन किया गया है (ऋ. ७.३६)। एक अत्यंत सुंदर बालक गर्भस्थ करने के लिए भी इसकी प्रार्थना की गयी है (ऋ. १०. १८४.१)।

व्युत्पत्ति—विष्णु शब्द का मूल रूप 'विष' (सतत क्रियाशील रहना) माना जाता है। मॅक्डोनेल, श्रेडर आदि अभ्यासकों ने इसी मत का स्वीकार किया है, एवं उनके अनुसार सतत क्रियाशील रहनेवाले सौर स्वरूपी विष्णु को यह उपाधि सुयोग्य है। अन्य कई अभ्यासक विष्णु शब्द का मूल रूप 'विश्' (व्यापन करना) मानते है, एवं विश्व की उत्पत्ति करने के बाद विष्णु ने उसका व्यापन किया, यह अर्थ वे 'विष्णु' शब्द से ग्रहण करते है। पौराणिक साहित्य में भी इसी व्युत्पत्ति का स्वीकार किया गया है, जैसा कि विष्णुसहस्र-नाम की टीका में कहा गया हैः—

चराचरेषु भूतेषु वेशनात् विष्णु रुच्यते।

डॉ. दांडेकरजी के अनुसार, विष्णु का मूल रूप 'वि+स्नु' था; एवं उससे हवा में तैरनेवाले पक्षी की ओर संकेत पाया जाता है (डॉ. दांडेकर, पृ. १३५)।

ब्राह्मण ग्रन्थों में—ऋग्वेद में कनिष्ठ श्रेणी का देवता माना गया विष्णु ब्राह्मण ग्रन्थों में सर्वश्रेष्ठ देवता माना गया प्रतीत होता है (श. ब्रा. १४.१.१.५)।

यज्ञविधि में सर्वश्रेष्ठ देवता विष्णु है, एवं सर्वाधिक कनिष्ठ देवता अग्नि है, ऐसा स्पष्ट निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त हैः—

अग्निर्वै देवानामवमो, विष्णुः परमः।
तदन्तरेण सर्वाः अन्याः देवताः॥

(ऐ. ब्रा. १.१)।

अथर्ववेद में यज्ञ को उष्णता प्रदान करने के लिए विष्णु का स्तवन किया गया है। ब्राह्मणों में विष्णु के तीन पगों का प्रारंभ पृथ्वी से होकर वे द्युलोक में समाप्त होते है, ऐसा माना गया है। विष्णु के परमपद को वहाँ मनुष्यों का चरम अभीष्ट, सुरक्षित शरणस्थल माना गया है (श. ब्रा. १.९.३)।

विष्णु का श्रेष्ठत्व—ब्राह्मण ग्रन्थों में प्राप्त विष्णु देवता के वर्णन से प्रतीत होता है कि, उस समय विष्णु एक सर्वश्रेष्ठ देवता मानना जाने लगा थी। उसी श्रेष्ठता का साक्षात्कार कराने के लिए अनेकानेक कथाएँ उन ग्रन्थों में रचायी गयी है, जिनमें से निम्न दो कथाएँ प्रमुख हैं।

एक बार देवों ने ऐश्वर्यप्राप्ति के लिए एक यज्ञ किया, जिस समय यह तय हुआ कि, जो यज्ञ के अंत तक सर्व-प्रथम पहुँचेगा वह देव सर्वश्रेष्ठ माना जायेगा। उस समय यज्ञस्वरूपी विष्णु अन्य सारे देवों से सर्वप्रथम यज्ञ के अंत तक पहुँच गया, जिस कारण यह सर्वश्रेष्ठ देव साबित हुआ। आगे चल कर इसका धनुष टूट जाने के कारण, इसका सिर भी टूट गया, जिसने सूर्यबिंब का आकार धारण किया (श. ब्रा. १४.१.१)। उसी सिर को अश्विनों के द्वारा पुनः जोड़ कर, यह द्युलोक का स्वामी बन गया (तै. आ. ५.१.१-७)।

एक बार देवासुर-संग्राम में देवों की पराजय हुई, एवं विजयी असुरों ने पृथ्वी का विभाजन करना प्रारंभ किया। वामनाकृति विष्णु के नेतृत्व में देवगण असुरों के पास गया, एवं पृथ्वी का कुछ हिस्सा माँगने लगा। फिर विष्णु की तीन पगों इतनी ही भूमि देवों को देने के लिए असुर तैयार हुएँ। तत्काल विष्णु ने विराट रूप धारण किया, एवं अपने तीन पंगों में तीनों लोक, वेद, एवं वाच् को नाप लिया (श. ब्रा. १.२.५; ऐ. ब्रा. ६.१५)।

अवतारों का निर्देश—उपर्युक्त वामनावतार की कथा के अतिरिक्त, विष्णु के वाराह अवतार का भी निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है, जहाँ वाराहरूपधारी विष्णु पृथ्वी का उद्धार करने के लिए जल से बाहर आने की कथा दी गयी है (श. ब्रा. १४.१.२)। वहाँ इस वाराह का नाम 'एमूष' बताया गया है।

विष्णु के दो अन्य अवतारों के स्रोत भी ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है, किन्तु उन्हें स्पष्ट रूप से विष्णु के अवतार नही कहा गया है। प्रलयजल से मनु को बचानेवाला मत्स्य, एवं आद्यजल में भ्रमण करनेवाला कश्यप ये शतपथब्राह्मण में निर्दिष्ट दो अवतार पौराणिक साहित्य

में विष्णु के अवतार के नाते सुविख्यात हुए (श. ब्रा. १.८.१; ७.५१)।

उपनिषदों में— मैत्री उपनिषद् में, समस्त सृष्टि धारण करनेवाले अन्नपरब्रह्म को भगवान् विष्णु कहा गया है। कठोपनिषद् में साधक के आध्यात्मिक साधना का अंतिम 'श्रेयस्' विष्णु का परम पद बताया गया है। इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, उपनिषद् काल में, विष्णु इस सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ देवता माना जाने लगा था। डॉ. भांडारकरजी के अनुसार, उपनिषदों में वर्णित 'परब्रह्म' की कल्पना वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट विष्णु के 'परमपद' की कल्पना से काफ़ी मिलतीजुलती है। इसी कल्पनासाधर्म्य के कारण, वैदिकोत्तर काल में विष्णु तत्त्वज्ञों के द्वारा पूजित एक सर्वमान्य देवता बन गया।

गृह्यसूत्रों में—आगे चल कर, विष्णु भारतीयों के नित्यपूजन का देवता बन गया। आपस्तंब, हिरण्यकेशिन्, पारस्कर आदि आचार्यों के द्वारा प्रणीत विवाहविधि में, सप्तपदी-समारोह के समय निम्नलिखित मंत्र वैदिक मंत्रो के साथ अत्यंत श्रद्धाभाव से पठन किया जाता है:—

विष्णुस्त्वां आनयतु।
(पा. गृ. १.७.१)।

(इस जीवन में विष्णु सदैव तुम्हारा मार्गदर्शन करता रहे)।

महाभारत में—इस प्रकार विष्णु देवता का माहात्म्य बढ़ते बढ़ते, महाभारतकाल में यह समस्त सृष्टि का नियन्ता एवं शास्ता देवता माना जाने लगा। महाभारत में प्राप्त ब्रह्मदेव-परमेश्वर संवाद में, ब्रह्मा के द्वारा 'परमेश्वर' को नारायण, विष्णु एवं वासुदेव आदि नामों से संबोधित किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में ये तीनों देवता एकरूप हो कर, सम्मिलित स्वरूप में इन तीनों की उपासना प्रारंभ हुई थी (म. भी.६१.६२)।

महाभारत में प्राप्त 'अनुगीता' में वासुदेव कृष्ण एवं श्रीविष्णु का साधर्म्य स्पष्टरूप से प्रतीत होता है। भगवद्गीता तक के समस्त वैष्णव साहित्य में एक ही एक 'वासुदेव कृष्ण' की उपासना प्रतिपादन की गयी है, एवं वहाँ कहीं भी विष्णु का निर्देश प्राप्त नहीं है, जो सर्वप्रथम ही अनुगीता में पाया जाता है।

भारतीय-युद्ध के पश्चात्, द्वारका आते हुए भगवान् श्रीकृष्ण की भेंट भृगुवंशीय उत्तंक ऋषि से हुई। भारतीय युद्ध के संहारसत्र की वार्ता सुन कर उत्तंक ऋषि अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं श्रीकृष्ण को शाप देने के लिए प्रवृत्त हुआ। इस समय कृष्ण ने उसे 'अनुगीता' के रूप में अध्यात्म-तत्त्वज्ञान कथन किया, एवं उत्तंक को अपना वहीं विराट स्वरूप दिखाया, जो भगवद्गीता कथन के समय उसने अर्जुन को दिखाया था। किन्तु उस विराट स्वरूप को अनुगीता में 'विष्णु का सही स्वरूप' (वैष्णव रूप) कहा गया है, जिसे भगवद्गीता में 'वासुदेव का सही स्वरूप' कहा गया था (म. आश्व. ५३-५५)।

महाभारत में अन्यत्र युधिष्ठिर के द्वारा किये गये कृष्ण-स्तवन में कृष्ण को विष्णु का अवतार कहा गया है (म. शां. ४३)। महाभारत में बहुधा सर्वत्र विष्णु को 'परमात्मा' माना गया है, फिर भी विष्णुस्वरूपों में से नारायण एवं वासुदेव-कृष्ण के निर्देश वहाँ अधिकरूप में पाये जाते हैं।

विष्णु-उपासना के तीन स्त्रोत—जैसे पहले ही कहा गया है, महाभारत में एवं उस ग्रंथ के उत्तरकाल में प्रचलित विष्णु-उपासना में, वैदिक विष्णु में वासुदेव कृष्ण एवं नारायण ये दो देवता सम्मीलित किये गये है। विष्णु-उपासना में प्राप्त, वैदिक विष्णु के अतिरिक्त अन्य दो स्त्रोतों की संक्षिप्त जानकारी निम्न दी गयी है:—

(१) **वासुदेव-कृष्ण उपासना**—वासुदेव उपासना का सर्वाधिक प्राचीन निर्देश पतंजलि के व्याकरणमहाभाष्य में प्राप्त है, जहाँ वासुदेव को एक उपासनीय देवता कहा गया है (महा. ४.३.९८)। इससे प्रतीत होता है की, पाणिनि के काल में वासुदेव की उपासना की जाती थी।

राजपुताना में स्थित घोसुंडि ग्राम में प्राप्त २०० ई. पू. के शिलालेख में वासुदेव एवं संकर्षण की उपासना का निर्देश प्राप्त है। बेसनगर ग्राम में प्राप्त हेलिओदोरस के २०० ई. पू. के शिलालेख में भी वासुदेव की उपासना प्रीत्यर्थ एक गरुडध्वज की स्थापना करने का निर्देश प्राप्त है, जहाँ उसने स्वयं को भागवत कहा है। इससे प्रतीत होता है कि, पूर्व मालव देश में २०० ई. पू. में वासुदेव की देवता मान कर पूजा की जाती थी, एवं उसके उपासकों को भागवत कहा जाता था। हेलिओदोरस स्वयं तक्षशिला का युनानी राजदूत था, जिससे प्रतीत होता है कि, भागवतधर्म का प्रचार उत्तरी-पश्चिम प्रदेश में रहनेवाले युनानी लोगों में भी प्रचलित था। इसी प्रकार नानाघाट में प्राप्त ई. स. १ ली शताब्दी

के शिलालेख में भी वासुदेव एवं संकर्षण देवताओं का निर्देश प्राप्त है।

पतंजलि के महाभाष्य में वासुदेव–देवता का स्पष्टीकरण देते समय, यह वृष्णि-वंश में उत्पन्न क्षत्रिय राजा न हो कर, एक स्वतंत्र दैवी देवता है, ऐसा स्पष्टीकरण प्राप्त है। किन्तु फिर भी भागवत–सांप्रदाय में सर्वत्र वासुदेव–कृष्ण को वृष्णि राजकुमार ही माना जाता है, जिस परंपरा का निर्देश पतंजलि के उपर्युक्त स्पष्टीकरण में प्राप्त है।

डॉ. भांडारकरजी के अनुसार, वासुदेव, संकर्षण एवं अनिरुद्ध ये तीनों वृष्णि अथवा सात्वत राजकुमार थे, जिनमें से वासुदेव की पूजा एक परमात्मन् के नाते पतंजलि-काल से सात्वत लोगों में की जाती थी। वासुदेव-कृष्ण की इसी पूजा का निर्देश मेगॅस्थिनीस के प्रवासवर्णनों में प्राप्त है, जहाँ यमुना नदी के तट पर स्थित शूरसेन देश में इस देवता की उपासना प्रचलित होने का उल्लेख है। किन्तु इस प्राचीनकाल में केवल वासुदेव की ही पूजा की जाती थी।

२. नारायण उपासना—महाभारत के शांतिपर्व में 'नारायणीय' नामक उपाख्यान में नारायण की उपासना की सविस्तार जानकारी प्राप्त है। इस जानकारी केअ नुसार इस सृष्टि का परमात्मन नारायण है, जिसने अपने एकांतिक धर्म का कथन सर्वप्रथम नारद को किया था, जो आगे चल कर उसने 'हरिगीता' के द्वारा जनमेजय को कथन किया था। यही उपदेश कृष्णरूपधारी नारायण ने भारतीय युद्ध के प्रारंभ में अर्जुन को किया था। इस सात्वत धर्म का कथन स्वयं नारायण हर एक मन्वन्तर के प्रारंभ में करते है, एवं मन्वन्तर के अन्त में वह नष्ट हो जाता है। इस मन्वन्तर के प्रारंभ में भी नारायण ने अपने इस धर्म का निवेदन दक्ष, विवस्वत्, मनु एवं इक्ष्वाकु राजाओं को किया था।

इस धर्म में, यज्ञ में की जानेवाली पशुहिंसा एवं ऋषियों के द्वारा अरण्य में की जानेवाली तपस्या त्याज्य मानी गयी है, एवं इन दोनों उपासनाओं के बदले में नारायण की निष्ठापूर्वक भक्ति प्रतिपादन की गयी है। इसी संदर्भ में बृहस्पति के द्वारा की गयी यज्ञसाधना, एवं एकत, द्वित, एवं त्रित आदि के द्वारा हज़ारों वर्षों तक की गयी तपःसाधना निष्फल बतायी गयी है, एवं इन दोनों उपासनापद्धति को त्याग कर हरि की भक्ति करनेवाला उपरिचर वसु राजा श्रेष्ठ बताया गया है।

इससे प्रतीत होता है कि, यज्ञमार्ग एवं तपस्यामार्ग छोड़ कर आरण्यकों में निर्दिष्ट मार्गों से निर्लेप भक्ति सिखाने वाला 'नारायण सांप्रदाय' एक श्रेष्ठ श्रेणि का भक्तिसांप्रदाय है। बौद्ध एवं जैन धर्मों को प्रतिक्रिया स्वरूप में इस सांप्रदाय का प्रथम जन्म हुआ, एवं इसीसे आगे चल कर वैष्णव सांप्रदाय का विकास हुआ।

इस सांप्रदाय में कंसवध के लिए मथुरा में उत्पन्न हुए कृष्ण को 'नारायण' अथवा 'वासुदेव' का अवतार कहा गया है। नारायण के इसी अवतार के द्वारा प्रणयन किये गये 'भगवद्गीता' के द्वारा वैष्णवधर्म का पुनरुत्थान हुआ, एवं एक देशव्यापी धार्मिक आंदोलन के रूप में यह सांप्रदाय पुनराविष्कृत हुआ।

विष्णु देवता की उत्क्रान्ति—वैदिक साहित्य में एक सौर देवता के नाते वर्णन किया गया विष्णु, ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञदेवता बन गया। आगे चल कर यज्ञयागादि कर्मकाण्डों की लोकप्रियता जब कम होने लगी, तब इन कर्मकाण्डों से प्राप्त होनेवाला पुण्य केवल विष्णु की उपासना से ही प्राप्त होता है, ऐसी धारणा समाज में दृढमूल हुई (मै. उ. ६.१६)। इसी काल में ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश इस त्रिमूर्ति की कल्पना प्रचलित हुई, एवं इन तीन देवता क्रमशः सृष्टि के उत्पत्ति, स्थिति एवं लय की अधिष्ठात्री देवता बन गये (मै. उ. ४.५; शिखा. २)। इसी समय, विष्णु को ॐ कार उपासना में स्थान प्राप्त हुआ, एवं ॐ कार में से 'उ' कार के साथ श्रीविष्णु को समीकृत किया जाने लगा (नृसिंहोत्तर तापिनी. ३)। उपनिषदों में अन्यत्र विष्णु के नाम से एक गायत्रीमंत्र दिया गया है, एवं गोपीचंदन को 'विष्णुचंदन' कहा गया है (वासु. उ. २.१)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे सत्त्वगुण प्रधान देवता माना गया है, एवं जगत्संचालन एवं पालन का कार्य इसीके ही अधीन माना गया है। इसी कारण विभिन्न युगों में, यह नानाविध अवतार धारण कर पृथ्वी पर अवतीर्ण होता है, तथा दुष्टों के संहार का एवं पृथ्वी के पालन का कार्य निभाता है।

स्वरूपवर्णन-विष्णु का विस्तृत स्वरूपवर्णन पुराणों में प्राप्त है, जहाँ इसे चतुर्हस्त, एवं शंख, चक्र पद्म, गदाधारी बताया गया है। इसके आयुधों में शार्ङ्ग धनुष एवं नंदन खड्ग प्रमुख थे। इसके आभूषणों में पितांबर, वनमाला, किरीटकुंडल एवं श्रीवत्स प्रमुख थे। इसकी पत्नी का नाम लक्ष्मी है, जिसके साथ यह वैकुंठलोक में निवास करता

है। कभी-कभी यह क्षीरसागर में शेषनाग पर शयन करता है। विष्णु के इन्हीं गुणवैशिष्ट्यों को अंतर्भूत कर इसके सहस्र नाम बताये गये हैं, जो 'विष्णुसहस्रनाम' में उपलब्ध हैं।

विष्णुदेवता का निम्नलिखित वर्णन भागवत में प्राप्त है :—

क्षीरोदं मे प्रियं धाम, श्वेतद्वीपं च भास्वरम्॥
श्रीवत्सं कौस्तुभं मालां, गदां कौमोदकीं मम।
सुदर्शनं पाञ्चजन्यं सुपर्णं पतगेश्वरम्॥
शेषं मत्कलां सूक्ष्मां श्रियं देवीं मदाश्रयाम्।
(भा. ८.४.१८–२०)।

विष्णु की उपासना—स्कंद में विष्णु की उपासना सविस्तृत रूप में बतायी गयी है, जहाँ हर एक माह में उपासनायोग्य विष्णु के नाम, एवं उसके प्रिय फूल, एवं फल बताये गये हैं:—

विष्णु का नाम	फूल	फल
विष्णु	अशोक	अंनार
मधुसूदन	मोगरा	नारियल
त्रिविक्रम	पाटली	आम
श्रीधर	कलंब	कटहल
हृषीकेश	करवीर	खजूर
पद्मनाभ	जाई	ताड़फल
दामोदर	मालती	रायआंवला
केशव	सूर्यकमल	बेलफल
नारायण	चंद्रविकासी कमल	नारंगी
माधव	जुही	पुगीफल
गोविंद	उंडली	करौंदा
?	?	जायफल

(स्कंद २.४४)।

विष्णु के अवतार—वैदिक साहित्य में केवल प्रजापति के ही अवतार दिये गये है। किन्तु पुराणों में विष्णु, रुद्र, गणपति, आदि सारे देवताओं के अवतार दिये गये हैं।

पुराणों में निर्दिष्ट इन अवतारों के अतिरिक्त, द्वादश देवासुर संग्रामों में विष्णु एवं रुद्र ने स्वतंत्र अवतार लिये थे (देव देखिये)।

महाभारत में प्राप्त नारायणीय में विष्णु के अवतारों की जानकारी दी गयी है, जहाँ विष्णु के द्वारा दुष्टों के संहारार्थ, एवं सज्जनों के रक्षणार्थ लिये गये 'पार्थिव' रूपों को ही केवल अवतार कहा गया है। वहाँ विष्णु के निम्नलिखित दस अवतार बताये गये है:— वाराह, नारसिंह, वामन, परशुराम, राम दाशरथि, वासुदेव कृष्ण (सात्वत), हंस, कूर्म, मत्स्य, एवं कल्कि (म. शां. ३२६.८३५)।

वायु में विष्णु के अवतार दस बताये गये हैं, किन्तु वहाँ हंस, कूर्म एवं मत्स्य के स्थान पर दत्तात्रेय, वेदव्यास एवं एक अनामिक अवतार बताया गया है (वायु. ९८. २११; वराह. ११३)। उसी पुराण में अन्यत्र इन अवतारों की संख्या ७७ बतायी गयी हैं (वायु. ९७. ६४)।

भागवत में विष्णु के बाईस अवतार बताये गए है, जहाँ कपिल, दत्तात्रेय, ऋषभ, एवं धन्वंतरि को विष्णु के अवतार कहा गया है। इनमें से ऋषभ जैनों का प्रथम तीर्थंकर माना जाता है। मत्स्य में प्राप्त दशावतारों में नारायण, मानुष-सप्त, वेदव्यास एवं गौतम बुद्ध ये नये अवतार बताये गये हैं (मत्स्य. ४७.२३७–२५२)। वराह एवं नृसिंह में भी दशावतारों की जानकारी प्राप्त है (वराह. ११३; नृसिंह ५४.६)।

हरिवंशादि पुराणों में विष्णु के अवतारों की संख्या अनन्त बातायी गयी है—

प्रादुर्भावसहस्राणि अतीतानि न संशयः।
भूयश्चैव भविष्यन्तीत्येवमाह प्रजापतिः॥
(ह. वं. १.४१.११; ब्रह्म. २१३.१७)।

(विष्णु के अनन्त अवतार पूर्वकाल में हुए हैं, एवं उतने ही अवतार भविष्यकाल में होनेवाले है)।

नामावलि—महाभारत एवं विभिन्न पुराणों में प्राप्त विष्णु के अवतारों की नामावलि निम्नप्रकार हैं :—

(१) **अजित** (विभु)—चाक्षुष एवं स्वारोचिष मन्वंतरों में तुषित के पुत्र के रूप में उत्पन्न (भा. ८.५.९)।

(२) **अनिरुद्ध**—(चतुर्व्यूह देखिये)।

(३) **अपान्तरतम सारस्वत व्यास**—कृष्ण द्वैपायन व्यास का पूर्वजन्म (म. शां. ३३७.३८–४०)।

(४) **इंद्र**—इसने अंधक, प्रह्लाद, विरोचन, वृत्र आदि असुरों का पराजय किया (पद्म. सृ. १३)।

(५) **उरुक्रम**—यह नाभि एवं मेरुदेवी का पुत्र था (भा. १.३.१३)।

(६) **ऋषभ**--दक्षसावर्णि मन्वंतर में उत्पन्न एक अवतार, जो नाभि एवं सुदेवी का पुत्र था (भा. २.७.९; ५.३; स्कंद. वैष्णव. १८)।

(७) **कच**--बृहस्पतिपुत्र (ह. वं. २.२२.३९)।

(८) **कपिल**--सांख्यशास्त्रप्रवर्तक एक आचार्य, जो स्वायंभुव मन्वतर में उत्पन्न हुआ था। इसके शिष्य का नाम आसुरि था (भा. १.३.१०; २.७.३; ३.२४; ८.१.६; म. शां. ३२६.६४; स्कंद. वैष्णव. १८)।

(९) **कल्कि विष्णुयशस्**--यह अवतार गंगा-यमुना नदियों के बीच में स्थित संभलग्राम में संपन्न होगा (म. शां. ३२६. ७२; अग्नि. १६.८-१०; ब्रह्म. २१३.१६४; ब्रह्मवै. प्रकृति. ७.५८; पद्म उ. २५२; भा. १.३.२५; २.७. ३८; ११. ४.२२; मत्स्य. ४७; वायु. ९८.१०४-११५; ह. वं. १. ४१.१६२-१६६; ब्रह्मांड. ३. ७३.१०४)।

(१०) **कूर्म**— म. शां. ३२६. ७२; भा. १. ३. १६; २.७.१३; ११.४.१८; ह. वं. २.२२.४२; विष्णु. १.४.८; अग्नि. ३)।

(११) **कृष्ण**—(अग्नि. १२; पद्म. उ.२४५-२५२; ब्रह्म. २१३.१५९-१६२; भा. १.३.२८; २.७.२६-३५; १०; ११.४.२२; ह. वं. १.४१.१५६-१६०; २.२२. ४८; वायु. ९८.९४-१०३; ब्रह्मांड. ३.७३.९३-९४)।

इसका वर्ण कृत, त्रेता, द्वापर, एवं कलियुगों में क्रमशः श्वेत, रक्त, पीत, एवं कृष्ण रहता है (म. व. १४८.१६-३३; शां. ३२६.८२-९३)।

(१२) **चतुर्व्यूह**—चार अवतारों का एक देवतासमूह, जिसमें निम्नलिखित अवतार शामिल थेः—

नाम	गुणवैशिष्टय	कार्य
वासुदेव	ज्ञान, ऐश्वर्यादि से युक्त	मुक्तिप्राप्ति
संकर्षण	ज्ञान-बलयुक्त	शास्त्रप्रवर्तन, संहार
प्रद्युम्न	ऐश्वर्य-वीर्ययुक्त	धर्मनयन, सृष्टि निर्माण
अनिरुद्ध	शक्ति तेजोयुक्त	तत्त्वगमन एवं सृष्टिरक्षण

(म. शां. ३२६.३५-४३; ६८-६९; ब्रह्म. १८०; कूर्म. पूर्व. ५१.३७-५०; स्कंद. वैष्णव. वासुदेव. १८; रामानुजदर्शन पृ. ११५)।

इनके नाम नर, नारायण, हरि तथा कृष्ण भी प्राप्त है (म. शां. ३२१.८-१८)।

(१३) **जामदग्न्य राम**- -(परशुराम देखिये)।

(१४) **दत्तात्रेय**--(ब्रह्म. २१३.१०६; भा. १.३.११; मत्स्य. ४७; वायु. ९८.८९; ब्रह्मांड. ३.७३.८८; ह. वं. १.४१.१०४-११०; २.४८.१९-२०)।

(१५) **धन्वंतरि**—(भा. १.३.१७; २.७.२१)।

(१६) **धर्मसेतु**—धर्मसावर्णि मन्वंतर में उत्पन्न एक अवतार।

(१७) **नरनारायण**—धर्म एवं मूर्ति के पुत्र। हरि एवं कृष्ण इन्हींकी ही मूर्तियाँ हैं (भा. १.३.९; २.७.६; ११.४.६-१६; म. शां. ३२६.११; ९९)।

(१८) **नरसिंह**—(नृसिंह देखिये)।

(१९) **नारद**—सात्वतधर्मोपदेशक (भा. १.३.८; २.७.१९)।

(२०) **नारायण**—हिरण्यकशिपु का वधकर्ता (मत्स्य. ४७; ह. वं. २.७१.२४; वायु. ९८.७१-७३; ब्रह्मांड. ३. ७३.७२)।

(२१) **नृसिंह**—(म. स. ३५. परि. १.२१.३१०; शां. ३२६.७३; ३३७.३६; अग्नि. ४.३-४; ब्रह्म. २१३.४३-१०४; विष्णु. १.२०; भा. १.३.१८; २.७. १४; ७.८; ११.४.१९; ह. वं. १.४१.३९-७९; २.२२. ३७; ४८.१७; ७१.३३; ब्रह्मांड. ३.७२.७३; ७३.७४; वायु. ९८.७३; मत्स्य. ४७; पद्म. उ. २३८)।

(२२) **पद्मनाभ**—(ह. वं. २.७१.२९)।

(२३) **परशुराम जामदग्न्य**-(म. शां. ३२६.७७; अग्नि ४.१२-१९; पद्म. उ. २४१; ब्रह्म. २१३.११३-१२३; ह. वं. १.१४१.१११-१२१; २.८.२०; भा. १.३.२०; २.७.२२; मत्स्य. ४७; ब्रह्मांड. ३.७३.९०-९१; वायु. ९८.९१)।

(२४) **पौष्करक**--(ब्रह्म. २१३.३१; भा. १.३.१-२; ह. वं. १.४१.२७; म. स. परि. १.२१.१४०; शां. ३२६.६९)।

(२५) **बलराम**--(भा. १.३)।

(२६) **बालमुकुंद**--(म. व. १८६.११४-१२२; १८७.१-४७)।

(२७) **बुद्ध**--(म. शां. ३२६.७२; नृसिंह. ३६.९; अग्नि. १६.१-८; पद्म. उ. २५२; मत्स्य. ४७)।

(२८) **बृहद्भानु**—भौत्य मन्वंतर का एक अवतार।

(२९) **मत्स्य**--(म. शां. ३२६.७२; अग्नि. २; भा. १.३; २.७.१२; ११.४.१८; विष्णु १.४.८)।

(३०) मांधातृ चक्रवर्तिन्—(मत्स्य. ४७.१५; वायु. ९८.९०; ब्रह्मांड. ३.७३.९०)।

(३१) मोहिनी—(म. आ. १६.२९; भा. १.३.१७; ८.८; ह. वं. २.२२.४१; विष्णु. १.९.१०६–१०९)।

(३२) यज्ञ—पद्मनाभ का नामांतर (ह. वं. २.७१. ३०; भा. १.३.१२; ८.१.६)।

(३३) राम दाशरथि—(अग्नि. ५–११; वायु. ९८. ९२; म. व. २५७–२७६; शां. ३२६.७८–८१; व.१४६. १५७; भा. २.७.२५; ११.४.२१; ह. वं. १.४१.१२१–१५५; २.२२.४४; ४८.२२; ७१.३८; मत्स्य. ४७.२४; ब्रह्मांड. ३.७३.९१–९२; विष्णु. ४.४.४०; ब्रह्म. २१३. १२४–१५८; पद्म. उ. २४२–२४४)।

(३४) रामकृष्ण—(भा. १.३.२३)।

(३५) रुद्र—त्रिपुरदहन (पद्म. सृ. १९१)।

(३६) वराह—(म. स. ३५; परि. १.२१.१४०–१६९; शां. २०२.१५–२८; ३२६.७२; ३३७.३६; भा. १.३.७; २.७.१; ३.१३-१९; ११.७.१८; ह. वं. १. ४०; ४१.२८.३९; २.२२.४०; ४८.१२–१३; ७१.३३; विष्णु. १.४.८; अग्नि. ४.१-२; ब्रह्म. २१३.३२–७३; ब्रह्मांड. ३.७२.७३; पद्म. सृ. १३.१९४; उ. २३७)।

(३७) वामन—(म. स.३५; परि १.२१.३७०; शां. ३२६.७४–७५; ब्रह्मांड. ३.७३.७७; ३३७.३६; भा. १. ३.१९; २.७.१७; ११.४.२०; ह. वं. १.४१.७९–१०६; २.२२.४३; ४८.१८; ७१.३४; मत्स्य. ४७; ब्रह्म. २१३.१०५; वायु. ९८.७४-७७. ब्रह्मांड. ३.७२.७३; पद्म. सृ. २३९-२४०; अग्नि. ४.७–११)।

(३८) विष्वक्सेन—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार।

(३९) वैकुण्ठ—रैवत एवं चाक्षुष मन्वन्तर का एक अवतार।

(४०) व्यास—(भा. ३.१.२१; २.७.३६; मत्स्या ४७; ह. वं. १.४१.१६१–१६२; वायु. ९८.९३; ब्रह्मांड. ३.७३.९२–९३; कूर्म. पूर्व. ५१.१–११; म. शां. ३३४ ९; ३३७.३८–४०; ५३–५७)।

(४१) शिव (भव) (ह. वं. २.२२.३९)।

(४२) संकर्षण—(भा. ५.२५.१)।

(४३) सत्य (सत्यसेन)—उत्तम मन्वन्तर का एक अवतार।

(४४) सनक; (४५) सनत्कुमार; (४६) सनंदन, (४७) सनातन—(भा. २.७.५; ३.१२.४; ४.८.१)।

(४८) सार्वभौम—सावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार।

(४९) सुयज्ञ—रुचि एव आकृति का पुत्र (भा. २. ७.२)।

(५०) स्वधामन्—रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार।

(५१) हंस—(म. शां. ३२६.९४; भा. ११.१३)।

(५२) हयग्रीव—(म. शां. ३२६.५६; ९४; ३३५; भा. २.७.११; ११.४.१७)।

(५३) हरि—१. गजेन्द्रमोक्ष (भा. ८.२–४; १०); २. चतुर्व्यूह अवतारों में से एक (म. शां. ३२१.८–१७; नरनारायण देखिये)।

विष्णु सांप्रदाय के ग्रंथ—इस सांप्रदाय के निम्न-लिखित ग्रन्थ प्रमुख हैं जो, 'पंचरत्न' सामुहिक नाम से प्रसिद्ध हैं। 'पंचरत्न' में समाविष्ट पाँच आख्यान महाभारत एवं भागवत में समाविष्ट है, एवं विष्णु के उपासक उसका नित्य पठन करते हैं :—

(१) भगवद्गीता–भगवान् कृष्ण ने यह अर्जुन को कथन की थी। यह वैष्णव सांप्रदायांतर्गत 'एकान्तिक धर्म' का आद्य ग्रन्थ माना जाता है।

(२) विष्णुसहस्रनाम—महाभारत के अनुशासन पर्व में विष्णुसहस्रनाम प्राप्त है, जिसमें १०७ श्लोकों में विष्णु के सहस्रनाम दिये गये है। इस ग्रंथ पर आद्य शंकराचार्य के द्वारा लिखित भाष्य उपलब्ध है। इसके अंतर्गत विष्णु के बहुत सारे नाम वैदिक साहित्य में से (ऋषिभिः परिगीतानि) उद्धृत किये गये हैं। इन्हीं नामों का कथन भीष्म के द्वारा युधिष्ठिर को एक सर्वश्रेष्ठ जपसाधन के रूप में किया गया था (म. अनु. १४९.१४–१२०)।

(३) अनुगीता—यह कृष्ण के द्वारा उत्तंक को कथन की गयी थी (म. आश्व. ५३–५५)।

(४) भीष्मस्तवराज—इसमें भीष्म के द्वारा की गयी विष्णु की स्तुति संग्रहित की गयी है।

(५) गजेंद्रमोक्ष–यह आख्यान शुक के द्वारा परिक्षित् राजा को सुनाया गया था, जहाँ उत्तम मन्वन्तर में हुए 'गजेंद्रमोक्ष' की कथा सुनायी गयी है (भा. ८.२–४)

उपर्युक्त आख्यानों के अतिरिक्त निम्नलिखित पुराण-ग्रन्थ भी विष्णु से संबंधित, अतएव 'वैष्णव' कहलाते हैं :—१. गरुडपुराण; २. नारदपुराण; ३. भागवत-पुराण; ४. विष्णुपुराण, जिसमें विष्णुधर्मोत्तर पुराण भी समाविष्ट है (स्कंद. शिवरहस्यखंड. संभवकाण्ड.२.३४)।

विष्णु के तीर्थस्थान--महाभारत एवं पुराणों में विष्णु के निम्नलिखित तीर्थस्थानों का निर्देश प्राप्त है:-

(१) **विष्णुपदतीर्थ**--यह कुरुक्षेत्र में था। यही नाम के अन्य तीर्थ भी भारतवर्ष में अनेक थे इस तीर्थ में स्नान कर के वामन की पूजा करनेवाला मनुष्य विष्णुलोक में जाता है (म. व. ८१.८७)।

(२) **विष्णुपद**-- गया में स्थित एक पवित्र पर्वत, जहाँ धर्मरथ ने यज्ञ किया था (मत्स्य. ४८.९३)। ब्रह्मांड में निषद पर्वतों में स्थित एक सरोवर का नाम भी 'विष्णुपद' दिया गया है (ब्रह्मांड. २.१८.६७)। इसी ग्रन्थ में अन्यत्र गंगानदी के उगमस्थान को 'विष्णुपद' कहा गया है, एवं ध्रुव का तपस्यास्थान भी वही बताया गया है (ब्रह्मांड. २.२१.१७६)।

कई प्रमुख वैष्णव सांप्रदाय---श्रीविष्णु एवं वासुदेव-कृष्ण की उपासना के अनेकानेक सांप्रदाय ऐतिहासिक काल में उत्पन्न हुए थे, जिन्होंने विष्णु-उपासना का स्त्रोत सदियों तक जागृत रखने का महनीय कार्य किया।

विष्णु उपासना के निम्नलिखित सांप्रदाय प्रमुख माने जाते है:--१. रामानुज-सांप्रदाय (११ वीं शताब्दी); २. माध्व अथवा आनंदतीर्थ-सांप्रदाय (११ वीं शताब्दी); ३. निंबार्क-सांप्रदाय (१२ वीं शताब्दी); ४. नामदेव एवं तुकाराम-सांप्रदाय (१३ वीं शताब्दी); ५. कबीर-सांप्रदाय (१५ वीं शताब्दी); ६. वल्लभ-सांप्रदाय (१५ वी शताब्दी); ७. चैतन्य-सांप्रदाय (१५ वीं शताब्दी); ८. तुलसीदास-सांप्रदाय (१६ वीं शताब्दी)।

२. एक धर्मशास्त्रकार, जिसके द्वारा रचित स्मृतिग्रंथ में संस्कार एवं आश्रमधर्म का प्रतिपादन किया गया है। यह स्मृति त्रेतायुग में कलापनगरी में कथन की गयी थी। इस स्मृति के पाँच अध्याय हैं, एवं व्यंकटेश्वर प्रेस के द्वारा मुद्रित 'अष्टादशस्मृतिसमुच्चय' में यह उपलब्ध है।

इसके 'वृद्धविष्णुस्मृति' का निर्देश संस्कारकौस्तुभ ग्रंथ में, एवं विज्ञानेश्वर के द्वारा किया गया है।

३. एक अग्नि, जो भानु (मनु) नामक अग्नि का तृतीय पुत्र था। यह अंगिरसगोत्रीय था, एवं इसे धृतिमत् नामान्तर भी प्राप्त था। दर्शपौर्णमास नामक यज्ञ में इसे हविष्य समर्पण किया जाता है (म. व. २११.१२)।

४. आमूतरजस् देवों में से एक।

५. एक सूर्य, जो कार्तिक माह में अश्वतर नाग, रंभा अप्सरा, गंधर्व एवं यक्षों के साथ घूमता है। इसे उरुक्रम नामान्तर भी प्राप्त था (भा. १२.११.४४; उरुक्रम देखिये)।

६. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (मत्स्य. १९५.२०)।

७. पाण्डवों के पक्ष का एक राजा, जो कर्ण के द्वारा मारा गया था।

८. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

९. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

१०. भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

विष्णु प्रजापति--एक प्रजापति, जिसके मानसपुत्र का नाम विरजस् था। महाभारत में विरजस् राजा का वंश निम्नप्रकार दिया गया है:--विरजस्--कीर्तिमत्--कर्दम--अनंग--अतिबल (पत्नी-सुनीथा)--वेन--पृथु वैन्य (म. शां. ५९.९३-९९)।

विष्णु प्राजापत्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १८४)।

विष्णुगुप्त चाणक्य--एक आचार्य, जो कौटिलीय 'अर्थशास्त्र'नामक सुविख्यात राजनैतिक ग्रंथ का कर्ता माना जाता है।

यह एक ऐसा अद्भुत राजनीतिज्ञ था कि, एक ओर इसने मगध देश के नंद राजाओं के द्वारा शासित राजसत्ता को विनष्ट कर, उसके स्थान पर मौर्य साम्राज्य की प्रतिष्ठापना की, एवं दूसरी ओर 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' जैसे राजनीतिशास्त्रविषयक अपूर्व ग्रंथ की रचना कर, संस्कृत साहित्य के इतिहास में अपना नाम अमर कर दिया। (विष्णु. ४.२४.६-७; भा. १२.१.१२-१३)।

इसी कारण कौटिलीय अर्थशास्त्र के अन्त में इसने स्वयं के संबंध में जो कथन किया है वह योग्य प्रतीत होता है:-

> येन शास्त्रं च शस्त्रं च नंदराजगता च भूः।
> अमर्षेणोद्धृतान्याशु तेन शास्त्रमिदं कृतम्॥
> (कौ. अ. १५.१.१८०)।

(नंदराजाओं जैसे दुष्ट राजवंश के हाथ में गये पृथ्वी, शस्त्र एवं शास्त्रों को जिसने विमुक्त किया, उसी आचार्य के द्वारा इस ग्रंथ की रचना की गयी है)।

राजनीतिशास्त्र जैसे अनूठे विषय की चर्चा करने के कारण ही केवल नही, बल्कि चंद्रगुप्त मौर्यकालीन भारतीय शासनव्यवस्था की प्रामाणिक सामग्री प्रदान करने के कारण, 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है। उसकी तुलना मेगॅस्थिनिस के द्वारा लिखित 'इंडिका' से ही केवल हो सकती है, जो ग्रंथ

अपने संपूर्ण स्वरूप में नही, बल्कि टूटेफूटे एवं पुनरुद्धृत रूप में आज उपलब्ध है।

नाम—यद्यपि इसे चाणक्य, कौटिल्य आदि नामान्तर प्राप्त थे, फिर भी इसका पितृप्रदत्त नाम विष्णुगुप्त था। ई. स. ४०० में रचित 'कामंदकीय नीति-सार' में इसका निर्देश विष्णुगुप्त नाम से ही किया गया है :—

> **नीतिशास्त्रामृतं धीमानर्थशास्त्रमहोदधेः।**
> **समुद्दध्रे नमस्तस्मै विष्णुगुप्ताय वेधसे॥**

(अर्थशास्त्ररूपी समुद्र से जिसने नीतिशास्त्ररूपी नवनीत का दोहन किया, उस विष्णुगुप्त आचार्य को मैं प्रणाम करता हूँ)।

चणक नामक किसी आचार्य का पुत्र होने के कारण, इसे संभवतः 'चाणक्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। कौटिलीय अर्थशास्त्र में इसने स्वयं का निर्देश अनेक बार 'कौटिल्य' नाम से किया है, जो संभवतः इसका गोत्रज नाम था। कई अभ्यासकों के अनुसार, यह राजनीतिशास्त्र में कुटिल नीति का पुरस्कर्ता था, जिस कारण इसे 'कौटिल्य' नाम प्राप्त हुआ था। म. म. गणपतिशास्त्री के अनुसार, इसके नाम का सही पाठ 'कौटल्य' था, जो इसके 'कुटल' नामक गोत्रनाम से व्युत्पन्न हुआ था।

नामांतर––हेमचंद्र के 'अभिधानचिंतामणि' में इसके निम्नलिखित नामांतर प्राप्त हैं:—वात्स्यायन, मल्लनाग, कुटिल, चणकात्मज, द्रामिल, पक्षिलस्वामिन्, विष्णुगुप्त, अंगुल (अभिधान. ८५३–८५४)।

जीवनवृत्तांत––इसके जीवन के संबंध में प्रामाणिक सामग्री अनुपलब्ध है, एवं जो भी सामग्री उपलब्ध है वह प्रायः सारी आख्यायिकात्मक है। उनमें से बहुतसारी सामग्री विशाखदत्त कृत 'मुद्राराक्षस' नाटक में प्राप्त है, जहाँ यह 'ब्राह्मण' चित्रित किया गया है, एवं महापद्म नंद राजा के द्वारा किये अपमान का बदला लेने के लिए, इसने चंद्रगुप्त मौर्य को मगध देश के राजगद्दी पर प्रतिष्ठापित करने की कथा वहाँ प्राप्त है।

कौटिलीय अर्थशास्त्र––यह एक राजनीतिशास्त्रविषयक ग्रंथ है, जिसमें राज्यसंपादन एवं संचालन के शास्त्र को 'अर्थशास्त्र' कहा गया है। इस ग्रंथ में पंद्रह अधिकरण, एक सौ पचास अध्याय, एक सौ अस्सी प्रकरण एवं छः हजार श्लोक है। यह ग्रंथ प्रायः गद्यमय है, जिस कारण इसकी श्लोकसंख्या अक्षरों की गणना से दी गयी है।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राज्यशासन से संबंधित समस्त अंगोपांगों का सविस्तृत परामर्ष लिया गया है। इस ग्रंथ में चर्चित प्रमुख विषय निम्नप्रकार हैं, जो उसमें प्राप्त अधिकरणों के क्रमानुसार दिये गये हैः—
१. विनयाधिकारिक (राजा के लिए सुयोग्य आचरण); २. अध्यक्षप्रचार (सरकारी अधिकारियों के कर्तव्य); ३. धर्मस्थीय (न्यायविधि); ४. कंटकशोधन (राज्य की अंतर्गत शांति एवं सुव्यवस्था); ५. योगवृत्त (फितुर लोगों का बंदोबस्त); ६. मंडलयोनि (राजा, अमात्य आदि 'प्रकृतियों' के गुणवैशिष्ट्य); ७. षाड्गुण्य (परराष्ट्रीय राजकारण); ८. व्यसनाधिकारिक (प्रकृतियों के व्यसन एवं उनका प्रतिकार); ९. अभियास्यत्कर्म (युद्ध की तैयारी); १०. सांग्रमिक (युद्धशास्त्र); ११. संघवृत्त (राज्य के नानाविध संघटनाओं के साथ व्यवहार); १२. आबलीयस (बलाढ्य शत्रु से व्यवहार); १३. दुर्गलंभोपाय (दुर्गों पर विजय प्राप्त करना); १४. औपनिषदिक (गुप्तचरविद्या); १५. तंत्रयुक्ति (अर्थशास्त्र की युक्तियाँ)।

इस प्रकार इस ग्रंथ में, राज्यशासन के अंतर्गत पर–राष्ट्रीय, युद्धशास्त्रीय, आर्थिक, वैधानिक, वाणिज्य आदि समस्त अंगों का सविस्तृत परामर्ष लिया गया है, यहाँ तक की, राज्य में उपयोग करने योग्य वजन, नाप एवं काल–मापन के परिमाण भी वहाँ दिये गये हैं।

भाषाशैली––इस ग्रंथ की भाषाशैली आपस्तंब, बौधायन आदि सूत्रकारों से मिलती जुलती है। इस ग्रंथ में उपयोग किये गये अनेक शब्द पाणिनीय व्याकरण, एवं प्रचलित संस्कृत भाषा में अप्राप्य है। उदाहरणार्थ, इस ग्रंथ में प्रयुक्त 'प्रकृति' (सम्राट्); 'युक्त' (सरकारी अधिकारी); 'तत्पुरुष' (नोकर); 'अयुक्त' (बिनसरकारी नोकर) ये शब्द संस्कृत भाषा में अप्राप्य, एवं केवल अशोक शिलालेख में ही निर्दिष्ट हैं।

पूर्वाचार्य––अपने ग्रंथ में इसने अर्थशास्त्रसंबंधी ग्रंथ-रचना करनेवाले अनेकानेक पूर्वाचार्यों का निर्देश किया है, एवं लिखा है, 'पृथिवी की प्राप्ति एवं उसकी रक्षा के लिए पुरातन आचार्यों ने जितने भी अर्थशास्त्रविषयक ग्रंथों का निर्माण किया है, उन सब का सार–संकलन कर प्रस्तुत अर्थशास्त्र की रचना की गयी है' (कौ. अ. १.१.११)।

इसके द्वारा निर्देशित पूर्वाचार्यों में मनु, बृहस्पति, द्रोण–भरद्वाज, उशनस्, किंचलक, कात्यायन, घोटकमुख,

बहुदंतीपुत्र, वातव्याधि, विशालाक्ष, पाराशर, पिशुन (नारद), शुक्राचार्य, कौणपदन्त प्रमुख हैं। महाभारत के अनुसार, प्रारंभ में धर्म, अर्थ एवं काम इन तीन शास्त्रों का एकत्र विचार 'त्रिवर्गशास्त्र' नाम से किया जाता था। इस त्रिवर्गशास्त्र का आद्य निर्माता ब्रह्मा था, जिसका संक्षेप सर्वप्रथम शिव ने 'वैशालाक्ष' नामक ग्रंथ में किया, एवं उसी ग्रंथ का पुनःसंक्षेप इंद्र ने 'बाहुदंतक' नामक ग्रंथ में किया। आगे चल कर बृहस्पति ने इसी ग्रंथ का पुनः एक बार संक्षेप किया, जिसमें अर्थवर्ग को प्रधानता दी गयी थी।

ये सारे ग्रंथ 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के रचनाकाल में यद्यपि अनुपलब्ध थे, फिर भी उशनस् का 'औशनस अर्थशास्त्र,' पिशुन का 'अर्थशास्त्र' एवं द्रोण भारद्वाज का 'अर्थशास्त्र' उस समय उपलब्ध था, जिनके अनेक उद्धरण 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' में प्राप्त है (कौ. अ. १.७; १५-१६; ५.६; ८.३)।

कौटिलीय अर्थशास्त्र का प्रभाव--प्राचीन भारतीय साहित्य में से वात्स्यायन, विशाखदत्त, दण्डिन्, बाण, विष्णुशर्मन् आदि अनेकानेक ग्रंथकार एवं मल्लिनाथ, मेधातिथिन् आदि टीकाकार 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' से प्रभावित प्रतीत होते है, जो उनके ग्रंथों में प्राप्त उद्धरणों से स्पष्ट है। दण्डिन् के 'दशकुमारचरित' में प्राप्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, राजकुल में उत्पन्न राजकुमारों के अध्ययनग्रंथों में भी इस ग्रंथ का समावेश होता था (दशकुमार. ८)।

आगे चल कर 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' में प्रतिपादित व्यापक राजनीतिशास्त्रविषयक सिद्धान्तों को लोग भूल बैठे, एवं इस ग्रंथ में प्राप्त विषप्रयोगादि कुटिल उपचारों के लिए ही इस ग्रंथ का पठनपाठन होने लगा। इस कारण, इस ग्रंथ को कुख्याति प्राप्त हुई, एवं समाज में इसकी प्रतिष्ठा कम होने लगी। इसी कारण, बाणभट्ट ने अपनी 'कादम्बरी' में इस ग्रंथ को अतिनृशंस कार्य को उचित माननेवाला एक हीन श्रेणी का ग्रंथ कहा है।

यही कारण है कि, मेधातिथिन् के उत्तरकालीन ग्रंथों में 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के कोई भी उद्धरण प्राप्त नहीं होते है, जो इस ग्रंथ के लोप का प्रत्यंतर माना जा सकता है।

'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के आधुनिक कालीन पुनरुद्धार का श्रेय सुविख्यात दाक्षिणात्य पण्डित डॉ. श्यामशास्त्री को दिया जाता है, जिन्होंने इस ग्रंथ की प्रामाणिक आवृत्ति सानुवाद रूप में ई. स. १९०९ में प्रथम प्रकाशित की थी।

मेगॅस्थिनिस के 'इंडिका' से तुलना--कौटिलीय अर्थशास्त्र एवं मेगॅस्थिनिस के 'इंडिका' में अनेक साम्यस्थल प्रतीत होते है, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं:--१. इन दोनों ग्रंथों में गुलाम लोगों का निर्देश प्राप्त हैं; २. राज्य की सारी जमीन का मालिक स्वयं राजा है, जो उसे अपने प्रजाजनों को उपयोग करने के लिए देता है; ३. इन दोनो ग्रंथों में निर्दिष्ट मजदूर एवं व्यापार विषयक विधि-नियम एक सरीखे ही है।

इन साम्यस्थलों से प्रतीत होता है कि, उपर्युक्त दोनों ग्रंथों का रचनाकाल एक ही था, जो मनु, नारद, याज्ञवल्क्य आदि स्मृतियों से काफ़ी पूर्वकालीन था। इस प्रकार इस ग्रंथ का रचनाकाल ३०० ई. पू. माना जाता है।

विष्णुदास--एक ब्राह्मण, जो विष्णु का परमभक्त था (चोल. २. देखिमे)।

विष्णुधर्मन्--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक।

विष्णुयशस् कल्कि--विष्णु का दसवाँ अवतार, जो वर्तमान युग के अंत के समय सम्भल नामक ग्राम में अवतीर्ण होनेवाला है (भा. १.३.२५; १२.२.१८)। विष्णु का यह अवतार अश्वारूढ एवं खड्गधारी होगा।

विष्णु का यह अवतार याज्ञवल्क्य के पुरस्कार से उत्पन्न होनेवाला है। यह अत्यंत पराक्रमी, महात्मा, सदाचारी एवं प्रजाहितदक्ष होगा। इच्छा करते ही नाना प्रकार के अस्त्र, वाहन, कवच इसे प्राप्त होंगे।

अवतार-हेतु--कलियुग का अंत करने के लिए इसका प्रादुर्भाव होगा। यह म्लेच्छों का एवं बौद्धधर्मियों का संहार करेगा, एवं इस प्रकार नये सत्ययुग का प्रवर्तन करेगा (म. व. १८८.८९-९३)।

इसके अश्व का नाम देवदत्त होगा। इस अश्व की सहायता से यह अश्वमेध करेगा, एवं सारी पृथ्वी विधिपूर्वक, ब्राह्मणों को दे देगा। यह सदैव दस्युवध में तत्पर रह कर, समस्त पृथ्वी पर फिरता रहेगा। अपने द्वारा जीते हुए देशों में यह कृष्ण, मृगचर्म, शक्ति, त्रिशूल आदि अस्त्रशस्त्रों की स्थापना करेगा।

इसके द्वारा दस्युओं का नाश होने पर अधर्म का भी नाश हो जायेगा, एवं धर्म की वृद्धि होने लगेगी। इस प्रकार सत्ययुग का प्रारंभ होगा, एवं पृथ्वी के सभी मनुष्य सत्यधर्मपरायण होंगे। सत्ययुग के इस प्रारंभकाल में, चंद्र, सूर्य, गुरु एवं शुक्र ये चारों ग्रह एक राशि में आयें-

गे। इस प्रकार सत्ययुग की स्थापना करनेवाला विष्णुयशस् चक्रवर्ती एवं युगप्रवर्तक सम्राट माना जाएगा।

इस प्रकार अपना अवतारकार्य समाप्त करनेपर यह वन में तपस्या के लिए चला जायेगा। किन्तु इस जगत् के निवासी इसके शील स्वभाव का अनुकरण करते ही रहेंगे (कूर्म. १.३१.१२; वायु. ९८.१०४-११५ ब्रह्मांड. ३.७३.१०४-११०; ह. वं. १.४१.६४-६७)।

विष्णुरात--परिक्षित् राजा का नामान्तर (भा. १. १२.१६)।

विष्णुवृद्ध--(सू. इ.) एक राजा, जो त्रसदस्यु राजा का पुत्र था। यह पहले क्षत्रिय था, किन्तु आगे चल कर तपस्या के कारण ब्राह्मण हुआ (ब्रह्मांड. ३.६६.८८; वायु. ९१.११४)। इसके वंशज अंगिरस् कुलोत्पन्न क्षत्रिय ब्राह्मण बन गये (वायु. ६५.१०७)।

विष्णुशर्मन्--एक राजा, जो शिवशर्मन् राजा का पुत्र था। इसने इंद्र को अपनी शरण में लाया था (पद्म. भू. ३) 'निगमोद्बोधक तीर्थ' में स्नान करने के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. उ. २००-२०५)।

विष्णुसावर्णि--भौत्य मनु का नामान्तर।

विष्णुसिद्धि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद--'विष्णुवृद्ध'।

विष्णुहरि--एक विष्णुभक्त (स्कंद. २.८.१)।

विष्वक्सेन--एक आचार्य, जो नारद का शिष्य था।

२. इंद्रसभा का एक ऋषि (म. स. ७.१३)।

३. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.२१.२६)।

४. (सो. पूरु.) एक राजा, जो ब्रह्मदत्त राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम गो था। मत्स्य में इसे योगसूनु राजा का पुत्र कहा गया है। इसने जैगीषव्य ऋषि के मार्गदर्शन में 'योगतंत्र' नामक ग्रंथ की रचना की थी।

इसके पुत्र का नाम उदक्स्वन था (भा. ९.२१.२५)। ब्रह्मदत्त राजा ने इसे अपना राज्य प्रदान किया, एवं वह वन में चला गया।

५. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न होनेवाला एक अवतार।

६. एवं चौदहवाँ मनु, जो भविष्यकाल में होनेवाला है (मत्स्य. ९; पद्म. सृ. ५)।

विश्वगश्व--(सू. इ.) एक राजा, जो पृथु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अद्रि था (म. आ. १९३. २-३)।

विश्वगश्व गौरव--एक पूरुवंशीय सम्राट, जिसे अर्जुन ने उत्तरदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २४.१३)।

विश्रुत--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार देवमीढ राजा का पुत्र। विष्णु एवं वायु में इसे विबुध कहा गया है। इसके पुत्र का नाम महाधृति था (भा. ९.१३.१६)।

विसर्जन--एक यदु-जाति, जिसका यादवी युद्ध में संहार हुआ (भा. ११.३०.१८)।

विस्फूर्जन--एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

विहंग--ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ ५२.१०)।

विहंगम--धर्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

२. खर राक्षस का एक अमात्य (वा. रा. अर. २३. ३१)।

विहव्य--एक ऋषि, जो गृत्समदवंशीय वर्चस् ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वितथ्य था (म. अनु. ३०.६२)।

विहव्य आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२८)।

विहुंड--एक राक्षस, जो हुंड राक्षस का पुत्र था। इसके पिता हुंड का नहुष के द्वारा वध हुआ था। इस कारण यह अत्यंत क्रोधित हुआ, एवं नहुषवध के हेतु शिव की तपस्या करने लगा। किन्तु विष्णु ने सुंदर स्त्री का रूप धारण कर, इसकी तपस्या में बाधा उत्पन्न की। अन्त में पार्वती के द्वारा इसका वध हुआ (पद्म. भू. ११८-१२१)।

वीतहव्य--(सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार सुनय राजा का पुत्र था। भागवत में इसे शुनक राजा का पुत्र कहा गया है।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो हैहयवंशीय तालजंघ राजा का पुत्र था। यह सुविख्यात हैहय सम्राट कार्तवीर्य अर्जुन का प्रपौत्र, एवं जयध्वज राजा का पौत्र था। इसे कुल सौ भाई थे।

परशुराम के द्वारा किये गये क्षत्रियसंहार के समय यह अपना राज्य छोड़ कर भाग गया। रास्ते में इसने अपने पिता तालजंघ को देखा, जो परशुराम के बाणों से आहत हुआ था। उसे रथ पर बिठा कर यह हिमालय प्रदेश में में गया, एवं वहीं एक दर्रे में छिप गया।

आगे चल कर क्षत्रियसंहार से परशुरामके निवृत्त होने पर, यह हिमालय से लौट आया, एवं इसने माहिष्मती नामक नगरी की स्थापना की। पश्चात् इसने अयोध्या पर आक्रमण किया, एवं वहाँके इक्ष्वाकुवंशीय फल्गुतंत्र राजा को पराजित किया। आगे चल कर, इसने काशि देश पर आक्रमण किया, किन्तु यह उस देश पर विजय न पा सका, एवं इसका एवं काशिराजाओं का युद्ध पीढ़ियों तक चलता रहा।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे हैहय कहा गया है, एवं इसकी दस पत्नियों का निर्देश वहाँ प्राप्त है। अपनी इन पत्नियों से इसे प्रत्येक से दस पुत्र उत्पन्न हुए, जिन्होंने काशि देश के हर्यश्व, सुदेव एवं दिवोदास राजाओं को पराजित किया।

आगे चल कर, काशि के दिवोदास राजा को भरद्वाज मुनि के कृपाप्रसाद से प्रतर्दन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। प्रतर्दन ने इसके सारे पुत्रों का वध किया, एवं इस पर भी इतना जोरदार आक्रमण किया कि, यह भृगु ऋषि के आश्रम में जा कर छिप गया।

इसका पीछा करते हुए प्रतर्दन भृगुऋषि के आश्रम में पहुँच गया, एवं इसे ढूँढने लगा। इस पर भृगुऋषि ने प्रतर्दन से कहा कि, उसके आश्रम में रहनेवाले सारे लोग ब्राह्मण ही है, एवं वहाँ क्षत्रिय कोई भी नहीं है। पश्चात् भृगुऋषि के कहने पर इसने अपने क्षत्रियधर्म को छोड़ दिया, एवं यह ब्राह्मण बन गया।

तपस्वी—आगे चल कर भृगुऋषि के कृपाप्रसाद से यह ब्रह्मर्षि बन गया, एवं इसे गृत्समद नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. ३०.५७-५८)। इसका गोत्र भार्गव था एवं यह उस गोत्र का मंत्रकार भी था। वीतहव्य नामक एक जीवन्मुक्त ऋषि की कथा वसिष्ठ ने राम से कथन की थी, जो संभवतः इसीकी ही होगी। कई अभ्यासक, वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट वीतहव्य आंगिरस नामक ऋषि एवं यह दोनों एक ही मानते है।

वीतहव्य आंगिरस—एक राजा, जो ऋग्वेद के कई सूक्तों का प्रणयिता माना जाता है (ऋ. ६.१५)। ऋग्वेद में सुदास राजा के समकालीन के रूप में, एवं भरद्वाज ऋषि के साथ साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६.१५.२-३; ७.१९.१३)।

अथर्ववेद में, एक गाय (अथवा ब्राह्मण स्त्री) का हरण करने के कारण, इसका एवं इसके 'वैतहव्य' नामक अनुगामियों का पराजय होने की एक संदिग्ध कथा प्राप्त है। वहाँ उस गाय का संबंध जमदग्नि एवं असित ऋषियों के साथ निर्दिष्ट है (अ. वे. ५.१७.६-७; १८.१०-१२)। किन्तु इस कथा का सही अर्थ अस्पष्ट है।

अथर्ववेद में अन्यत्र इसे सृंजयों का राजा बताया गया है, एवं इसीके द्वारा भृगुऋषि का वध होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (अ. वे. ५.१९.१)। संभवतः इस कथा का संकेत परशुराम के पिता जमदग्नि भार्गव की मृत्यु से होगा, एवं इस कथा में निर्दिष्ट वीतहव्य हैहय वंशीय होगा। यदि यह सच हो, तो हैहयवंशीय वीतहव्य एवं यह दोनों एक ही होंगे (वीतहव्य २. देखिये)।

वीतहव्य श्रायस—एक राजा (तै. सं. ५.६; ५.३; का. सं. २२.३; पं. ब्रा. २५.१६.३)। यह संभवतः वीतहव्य आंगिरस के वंश में ही उत्पन्न हुआ होगा। पंचविंश ब्राह्मण में इसे 'निर्वासित जीवन व्यतीत करनेवाला' (निरुद्ध) राजा बताया गया है (पं. ब्रा. ९.१.९)। किन्तु भाष्यकार इसे एक राजा नहीं, बल्कि एक ऋषि मानते है।

संतति प्रदान करनेवाले यज्ञ की प्रशंसा करते समय, इसका निर्देश उदाहरण के रूप में प्राप्त है, जहाँ ऐसा ही एक यज्ञ करने के कारण इसे १००० पुत्र उत्पन्न होने की जानकारी दी गयी है।

वीति—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक अग्निविशेष।

वीतिमत्—एक राजा, जो रैवत मनु का पुत्र था (पद्म. सृ. ७)।

वीतिहोत्र—हैहयवंशीय वीतहव्य राजा का नामान्तर (वीतहव्य २. देखिये)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रियव्रत एवं बर्हिष्मती के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्रों के नाम रमणक एवं धातकि थे (भा. ५.१.२५;२०.३१)।

३. (सु. नरि.) एक राजा, जो इंद्रसेन राजा का पुत्र, एवं सत्यश्रवस् राजा का पिता (भा. ९.२.२०)।

४. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो सुकुमार राजा का पुत्र, एवं भर्ग राजा का पिता था (भा. ९.१७.९)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'वैनहोत्र' एवं 'वेणुहोत्र' कहा गया है।

५. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था।

वीर—एक असुर, जो कश्यप एवं दनायु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.३२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

३. एक अग्नि, जो भरद्वाज एवं वीरा के पुत्रों में से एक था (म. व. २०९.९-१०)। इसे 'रथप्रभु' 'रथध्वत्' एवं 'कुंभरेतस्' नामान्तर भी प्राप्त थे। इसकी पत्नी का नाम सरयु था, जिससे इसे सिद्धि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. व. २०९.११)। सोमदेवता के साथ द्वितीय 'आज्यभाग' इसी को ही प्राप्त होता है।

४. एक अग्नि, जो पांचजन्य अग्नि का पुत्र था (म. व. २१०.९)।

५. एक राजा, जो कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में उपस्थित था (म. शां. ४.७)।

६. (सो. अनु) अनुवंशीय पुरंजय राजा का नामान्तर।

७. तामस मन्वन्तर का एक देव।

८. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था।

९. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक था।

१०. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

११. एक राजा, जो अविक्षित्पत्नी लीलावती का पिता था (लीलावती ४. देखिये)।

१२. सोमवंश में उत्पन्न एक राजा, जिसके पुत्र का नाम तोण्डमान था।

वीरक--चाक्षुष मन्वन्तर का ऋषि (भा. ८.५.८)।

२. शिव के वीरभद्र नामक पार्षद का नामान्तर (वीरभद्र देखिये)।

वीरकेतु--पांचालराज द्रुपद के पुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह द्रोण के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ९८.३५)।

२. हंसध्वज राजा के सुमति नामक प्रधान का पुत्र।

वीरजित्--(सो. मगध. भविष्य) मगधवंशीय विश्वजित् राजा का नामान्तर (विश्वजित् ३. देखिये)। वायु में इसे सत्यजित् राजा का पुत्र कहा गया है।

वीरण--चाक्षुष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जिसे सनत्कुमार के द्वारा सात्वत धर्म का ज्ञान प्राप्त हुआ था। यही ज्ञान इसने आगे चल कर रैभ्यऋषि को प्रदान किया था (म. शां. ३३६.३७)।

इसकी कन्या का नाम असिक्नी (वीरिणी) था, जो दक्ष की पत्नी थी।

वीरणक--धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१७पाठ.)।

वीरणि--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

वीरद्युम्न--एक राजा, जिसका तनुविप्र नामक ऋषि के साथ आशा-निराशा के संबंध में तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (म. शां. १२६.१४)। इसका भूरिद्युम्न नामक पुत्र वन में खो गया था, जिसके संबंध में यह संवाद हुआ था (कृशतनु देखिये)।

वीरधन्वन्--त्रिगर्त देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था। धृष्टकेतु के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. ८२.१६-१७)।

वीरधर्मन्--एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

वीरबाहु--धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह भीम के द्वारा मारा गया। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'भीमबाहु'।

२. चेदि देश का एक राजा, जिसका विवाह दशार्णराज सुदामन् की कन्या के साथ हुआ था। दमयंती को वन में अकेली छोड़ कर, नल जब चला गया, उस समय, इसने ही दमयन्ती को आश्रय दिया था (म. व. ६६.१३)।

इसके पुत्र का नाम सुबाहु एवं कन्या का नाम सुनंदा था। किन्तु महाभारत के कुंभकोणम् संस्करण में इसे ही सुबाहु कहा गया है।

३. सुग्रीवसेना का एक वानर (वा. रा. किं. ३३.१०)।

४. एक गंधर्व, जिसने तक्षक के साथ युद्ध किया था (विष्णुधर्म. १.२६१.७)।

५. कांपिल्य नगरी का एक राजा (स्कंद. २.५.४)।

वीरभद्र--एक शिवपार्षद, जो शिव के क्रोध से उत्पन्न हुआ था।

जन्म--स्वायंभुव मन्वंतर में दक्ष प्रजापति के द्वारा किये गये यज्ञ में शिव का अपमान हुआ। इस अपमान के कारण क्रुद्ध हुए शिव ने अपनी जटाओं को झटक कर, इसका निर्माण किया (भा. ४.५; स्कंद. १.१-३; शिव. रुद्र. ३२)।

इसके जन्म के संबंध में विभिन्न कथाएँ पद्म एवं महाभारत में प्राप्त हैं। क्रुद्ध हुए शिव के मस्तक से पसीने का जो बूँद भूमि पर गिरा, उसीसे ही यह निर्माण हुआ (पद्म. सृ. २४)। यह शिव के मुँह से उत्पन्न हुआ था (म. शां. २७४. परि. १. क्र. २८. पंक्ति

७०-८०; वायु. ३०. १२२)। भविष्य में स्वयं शिव ही वीरभद्र बनने की कथा प्राप्त है (भवि. प्रति. ४.१०)।

दक्षयज्ञविध्वंस---उत्पन्न होते ही इसने शिव से प्रार्थना की, 'मेरे लायक कोई सेवा आप बताइये'। इस पर शिव ने इसे दक्षयज्ञ का विध्वंस करने की आज्ञा दी। इस आज्ञा के अनुसार, यह कालिका एवं अन्य रुद्रगणों को साथ ले कर दक्षयज्ञ के स्थान पर पहुँच गया, एवं इसने दक्षपक्षीय देवतागणों से घमासान युद्ध प्रारंभ किया।

रुद्र के वरप्रसाद से इसने समस्त देवपक्ष के योद्धाओं को परास्त किया। तदुपरांत इसने यज्ञ में उपस्थित ऋषियों में से, भृगु ऋषि की दाढी एवं मूँछे उखाड़ दी, भग की आँखें निकाल ली, पूषन् के दाँत तोड़ दिये। पश्चात् इसने दक्ष प्रजापति का सिर खड्ग से तोड़ना चाहा। किंतु वह न टूटने पर, इसने घूँसे मार कर उसे कटवा दिया, एवं वह उसीके ही यज्ञकुंड में झोंक दिया। तत्पश्चात् यह कैलासपर्वत पर शिव से मिलने चला गया (भा. ४.५; म. शां. परि. १. क्र. २८; पद्म. सृ. २४; स्कंद. १.१.३-५; कालि. १७; शिव. रुद्र. स. ३२.३७)।

भविष्य के अनुसार, दक्षयज्ञविध्वंस के समय दक्ष एवं यज्ञ मृग का रूप धारण कर भाग रहे थे। उस समय वीरभद्र ने व्याध का रूप धारण कर उनका वध किया, एवं एक ठोकर मार कर दक्ष का सिर अग्निकुंड में झोंक दिया (भवि. प्रति. ४.१०; लिंग. १.९६; वायु. ३०)। इसने अपने रोमकुपों से 'रौम्य' नामक गणेश्वर निर्माण किये थे (म. शां. परि. १.२८)।

वरप्राप्ति---दक्षयज्ञविध्वंस के पश्चात्, यह समस्त सृष्टि का संहार करने के लिए प्रवृत्त हुआ, किन्तु शिव ने इसे शान्त किया। तदुपरान्त शिव ने आकाश में स्थित ग्रहमालिका में 'अंगारक' अथवा 'मंगल' नामक ग्रह बनने का इसे आशीर्वाद दिया, एवं वरप्रदान किया, 'तुम समस्त ग्रहमंडल में श्रेष्ठ ग्रह कहलाओगे। सकल मानवजाति द्वारा तुम्हारी पूजा की जायेगी, एवं जो भी मनुष्य तुम्हारी पूजा करेगा, उसे आयुष्य भर आरोग्य, एवं ऐश्वर्य प्राप्त होगा' (भा. ७.१७; वायु. १०१.२९९; पद्म. सृ. २४)।

दक्षयज्ञविध्वंस के पश्चात्, शिव की आज्ञा से इसने अपने तेज का कुछ अंश अलग किया, जिससे आगे चल कर आद्य शंकराचार्य का निर्माण हुआ (भवि. प्रति. ४.१०)।

पराक्रम---यह शिव का प्रमुख पार्षद ही नहीं, बल्कि उसका प्रमुख सेनापति भी था। शिव एवं शत्रुघ्न के युद्ध में, इसने पुष्कल से पाँच दिनों तक युद्ध किया था, एवं अंत में इसने उसका मस्तक विदीर्ण किया था। त्रिपुरदाह के युद्ध में भी, इसने त्रिपुर का सारा सैन्य निमिषार्ध में विनष्ट किया था (पद्म. पा. ४३)। शिव एवं जालंधर के युद्ध में भी इसने रौद्र पराक्रम दर्शाया था (पद्म. उ. १७)।

देवों का संरक्षणकर्ता---यह असुरों का आतंक, एवं देवों का संरक्षणकर्ता था। एक बार शौकट पर्वत पर कश्यपादि सारे ऋषि, एवं समस्त देवगण दावाग्नि में घिर कर भस्म हुए। तदुपरांत इसने समस्त दावाग्नि का प्राशन किया, एवं मंत्रों के साथ सिद्ध किये गये भस्म से सारे ऋषियों को, एवं देवताओं को पुनः जीवित किया।

इसी प्रकार एक सर्प के द्वारा निगले गये देवताओं की भी, उस सर्प के दो टुकड़े कर इसने मुक्तता की थी।

एक बार पंचमेदू नामक राक्षस ने समस्त देवता, ऋषि एवं वालिसुग्रीवों को निगल लिया था। उस समय भी इसने पंचमेदू से दो वर्षों तक खड्ग एवं गदायुद्ध कर, उसका वध किया।

इस प्रकार देवता एवं ऋषिओं के तीन बार पुनः जीवित करने के इसके पराक्रम के कारण, शिव इससे अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उसने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये। जिस भस्म की सहायता से इसने देवताओं को पुनः जीवित किया था, उसे 'त्रायुष' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. पा. १०७)। आगे चल कर, देवताओं ने भी इसकी स्तुति की थी (लिंग. १.९६)।

वीरक-आख्यान---पद्म में प्राप्त 'पार्वती-आख्यान' में इसे 'वीरक' कहा गया है, एवं इसे पार्वती का प्रिय पार्षद कहा गया है। गौरवर्ण प्राप्त करने के हेतु, पार्वती जब तपस्या करने गयी थी, उस समय उसने इसे शिव की सेवा करने के लिए नियुक्त किया था (पद्म. सृ. ४३-४४)।

नृसिंहदमन---लिंग में वीरभद्र को शिव का 'भैरव-स्वरूप' कहा गया है, एवं इसके द्वारा किये गये नृसिंह-दमन की कथा भी वहाँ प्राप्त है। विष्णु का नृसिंहअवतार हिरण्यकशिपु के वध के पश्चात्, जब विश्वसंहार के लिए उद्यत हुआ, तब शिव ने वीरभद्र को उसका दमन करने की आज्ञा दी।

सर्वप्रथम इसने नृसिंह की स्तुति कर उसे शांत करने का प्रयत्न किया। किंतु न मानने पर, इसने उसका दमन किया, एवं उसे अदृश्य होने पर विवश किया (लिंग. १.९६)।

उपासना--महाराष्ट्र में स्थित घारापुरी एवं वेरूल के गुफाशिल्पों में, शिव के पार्षद के नाते वीरभद्र की प्रतिमाएँ पायी जाती है, जहाँ यह अष्टभुजायुक्त एवं अत्यंत रौद्रस्वरूपी चित्रांकित किया गया है। महाराष्ट्र में होली के दिनों में, वीरों की पूजा की जाती है, एवं उनका जुलूस भी निकाला जाता है।

ग्रंथ--इसके नाम पर 'वीरभद्रकालिका-कवच' एवं 'वीरभद्रतंत्र' नामक दो ग्रंथ उपलब्ध हैं।

२. सोमवंशीय मनोभद्र राजा के दो पुत्रों में से एक। एक गृध्रराज के द्वारा इसे पूर्वजन्म का ज्ञान प्राप्त हुआ था (पद्म. क्रि. ३; गर देखिये)।

३. एक राजा, जो अविक्षित् राजा की निभा नामक पत्नी का पिता था (मार्क. ११९.१७)।

४. यशोभद्र राजा का भाई (यशोभद्र देखिये)।

वीरभद्रक--गौड देश का एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम चंपकमंजरी था। अपने बुद्धिसागर नामक प्रधान के कथनानुसार इसने एक बड़ा तालाव बँधवाया था (नारद. १.१२)।

वीरमणि--एक शिवभक्त राजा, जिसकी पत्नी का नाम श्रुतवती था (पद्म. पा. ६७)। इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, स्वयं शिव ने योगिनियों से युद्ध किया था। किंतु अंत में योगिनियों ने इसे परास्त किया (पद्म. पा. ३९-४६)।

२. एक राजा, जिसने अपने पुत्र रुक्मांगद की सहायता से राम का अश्वमेधीय अश्व रोंकने की कोशिश की थी। किंतु इस प्रयत्न में यह असफल रहा (रुक्मांगद ३. देखिये)।

वीररथ-- (सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंशीय बहुरथ राजा का नामांतर। वायु में इसे नृपंजय राजा का पुत्र कहा गया है (बहुरथ देखिये)।

वीरव्रत--सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

३. साध्य देवों में से एक।

वीरवर--ताल्ध्वज नगरी के माधव राजा की पत्नी सुलोचना के द्वारा पुरुषवेष में धारण किया गया नाम (माधव ५. देखिये)।

वीरवर्मन्--सारस्वत नगरी का एक राजा, जो यम-कन्या मालिनी का पति था। पाण्डवों का अश्वमेधीय अश्व इसने रोंक दिया था, एवं अपने श्वशुर यम की सहायता से कृष्णार्जुनों के साथ घोर संग्राम किया था। आगे चल कर कृष्ण ने इससे संधि किया, एवं अश्वमेधीय अश्व छुड़वा दिया।

इसके सुमाल, सुलभ, लोल, कुवल एवं सरस नामक पाँच पुत्र थे (जै. अ. ४७-४९)।

२. द्रविड देश का एक राजा, जिसकी पत्नी हेमांगी अपने पूर्वजन्म में मोहिनी नामक अप्सरा थी (पद्म. उ. २२०)।

वीरवाहन--एक राजा, जो ब्रह्महत्या के कारण अत्यंत दुःखी हुआ था (मुनिशर्मन् देखिये)।

२. विराधनगरी का एक राजा, जिसने वसिष्ठ ऋषि के साथ धर्मसंबंधी चर्चा की थी (गरुड. २.६)।

वीरविक्रम--एक शूद्र, जिसने वचनपूर्ति के लिए अपनी कन्या का विवाह एक चांडाल से कर दिया। आगे चल कर, कृष्ण ने उन दोनों का उद्धार कर दिया (पद्म. ब्र. २६)।

वीरव्रत--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार मधु राजा एवं सुमनस् का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम भोजा था, जिससे इसे मंथु एवं प्रमंथु नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ५.१५.१५)।

वीरसिंह--एक राजा, जो वीरमणि राजा का पुत्र एवं रुक्मांगद का बन्धु था। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने शत्रुघ्न से युद्ध किया था (पद्म. पा. ४०)।

वीरसेन--निषध देश का एक राजा, जो नल राजा का पिता था। यह स्वयं धर्मज्ञ एवं तपस्वी था (नल १. देखिये)। इसने जीवन में मांसभक्षण नहीं किया था (म. अनु. ११५.७४)।

२. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. १०.७४.९)।

३. एक राजा, जो ऋतुपर्ण राजा का पुत्र, एवं सुदास राजा का पिता था (ब्रह्मांड. ३.६३.१७४)।

४. अवंति नगरी का एक राजा, जिसने तीन राजसूय एवं सोलह अश्वमेध यज्ञ किये थे (पद्म. उ. १२८)।

५. दक्ष राजा का श्वसुर, जिसे स्वप्न में दक्ष को कन्या देने के लिए दृष्टान्त हुआ था (गणेश. १.२६-२७)।

वीरहोत्र--(सो. सह.) एक सुविख्यात हैहय सम्राट, जो हैहय-राजवंश का आद्यपुरुष माना जाता है। इसे

वीतहव्य नामान्तर भी प्राप्त था (वीतहव्य २. देखिये)। वायु में इसे तालजंघ का पुत्र कहा गया है (वायु. ९४. ५२)।

वीरा--एक राजस्त्री, जो वीर्यचंद्र राजा की कन्या, करंधम राजा की पत्नी, एवं अविक्षित् राजा की माता थी (मार्कं. ११९.२)। एक बार सर्पों ने समस्त सृष्टि को अत्यंत त्रस्त किया था, जिस कारण इसने अपने पौत्र मरुत्त के द्वारा सर्पसंहार प्रारंभ किया। पश्चात् सारे सर्प इसकी स्नुषा अविक्षित्पत्नी वैशालिनी की शरण में गये, जिसने अपने पति अविक्षित् के द्वारा सर्पसत्र बन्द करवाया (मार्कं. १२६)।

२. शंयुपुत्र भरद्वाज नामक अग्नि की पत्नी। इसके पुत्र का नाम वीर था (म. व. २०९.१०)।

वीरिणी—वीरण प्रजापति की कन्या, जो दक्ष प्राचेतस की पत्नी थी। यह ब्रह्मा के बाये पैर के अंगूठे से उत्पन्न हुई थी (म. आ. ७०.५)।

इसे कुल एक हज़ार पुत्र, एवं पचास कन्याएँ उत्पन्न हुई थी। इसके पुत्रों में सुव्रत प्रमुख था।

२. शुकपत्नी पीवरी का नामान्तर।

३. वीरसेन राजा की कन्या, जो ब्रह्मा की पौत्री, एवं चाक्षुष राजा की पत्नी थी (मत्स्य. ४.३९)।

वीरुधा—एक नागकन्या, जो नागमाता सुरसा के तीन कन्याओं में से एक थी। इसकी अन्य दो बहनों का नाम अनला एवं रुहा था। इसकी संतानों में लता, गुल्म, वल्ली आदि वनस्पतिविशेष प्रमुख थे (म. आ. ६०.५५२*)।

वीर्यचंद्र--करंधम-पत्नी वीरा का पिता (वीरा १. देखिये)।

वीर्यवत्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३१)।

वृक—एक राजा, जो द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)। भारतीय-युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। नकुल के पराजय के पश्चात्, ग्यारह पाण्डव वीरों के साथ हुए युद्ध में यह शामिल था (म. क. ६२.४८)। अन्त में किसी पर्वतीय नरेश के द्वारा यह मारा गया।

२. पाण्डवों के पक्ष का एक राजा। भारतीय युद्ध में यह अपने अश्व एवं सारथि के साथ द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. २०.१६)।

३. एक सदाचारी राजा, जिसने अपने जीवन में मांस-भक्षण वर्ज्य किया था (म. अनु. ११५.७२)।

४. एक राजा, जो पृथु वैन्य एवं अर्चिष्मती के पुत्रों में से एक था। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात्, यह उसके पश्चिम साम्राज्य का अधिपति बन गया (भा. ४.२२.५४)।

५. एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का अनुयायी था (भा. ७.२.१८)। यह शकुनि नामक राक्षस का पुत्र था। इसकी जीवनकथा भस्मासुर के जीवन से काफ़ी साम्य रखती है।

इसे शिव से आशीर्वाद प्राप्त हुआ था कि, जिसके मस्तक पर यह हाथ रखेगा वह जल कर भस्म हो जायेगा। फिर यह उन्मत्त हो कर स्वयं शिव को ही दग्ध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। पश्चात् विष्णु ने ब्रह्मचारिन् का रूप धारण कर, इसे स्वयं के ही मस्तक पर हाथ रखने के लिए प्रवृत्त किया, जिस कारण यह भस्म हुआ (भा. १०.८८. १३–१६)।

६. (सू. इ.) एक राजा, जो भरुक राजा का पुत्र, एवं बाहुक राजा का पिता था (भा. ९.८.२)।

७. एक राजा, जो शूर एवं मारिषा के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम दुर्वाक्षी था, जिससे इसे तक्ष एवं पुष्कर नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.२४.२९; ४३)।

८. एक यादव-राजकुमार, जो कृष्ण एवं मित्रविंदा के पुत्रों में से एक था (भा. १०.६१.१६)।

९. एक यादव राजकुमार, जो वत्सक यादव एवं मिश्रकेशी नामक अप्सरा के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४. ४३)।

१०. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो शिष्ट एवं सुच्छाया के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ४.३९)।

११. (सू. इ.) एक राजा, जो रोहित राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.३८)।

१२. पुष्टि (सृष्टि) एवं छाया के पुत्रों में से एक (वायु. ६२.८३)। पाठ–'वृकल'।

१३. एक यादव-राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या (माद्री) के पुत्रों में से एक था (भा. १०.९०.३३)।

१४. हरित राजा का नामान्तर।

वृकद्वरस्—शण्डिल लोगों का एक राजा, जिसके विरुद्ध किये गये एक युद्ध का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. २.३०.४)। रौथ एवं ओल्डेनबर्ग के अनुसार,

इसका सही पाठ 'वृकध्वरस्' था। हिलेब्रांट के अनुसार, यह इरान से संबंधित किसी राजा का नाम था।

वृकदेवा अथवा **वृकदेवी**--देवक राजा की सात कन्याओं में से एक, जो वसुदेव की पत्नी थी। इसे अवगाहक एवं नंदक नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे (वायु. ९६.१३०)।

वृकल--वृक राजा का नामान्तर (वृक १२. देखिये)।

२. अक्रूर के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.२९)।

वृकोदर--भीमसेन पाण्डव का नामान्तर (भा. १. ७.१३)।

वृकोदरी--पूतना राक्षसी की बहन (आदि. १८. १०१)।

वृक्षावासिन्--कुबेरसभा का एक यक्ष।

वृचया--कक्षीवत् नामक ऋषि की पत्नी, जो उसे अश्विनों के द्वारा प्रदान की गयी थी (ऋ. १.५१.३; कक्षीवत् देखिये)।

वृचीवत्--एक ज्ञातिसमूह, जिसे सृंजयराज दैववात ने जीत लिया था (ऋ. ६.२७.५)। ऋग्वेद में इनका निर्देश तुर्वश लोगों के साथ प्राप्त है। ऋग्वेद के इसी सूक्त में अभ्यावर्तिन् चायमन के द्वारा इन लोगों का हरियूपीया नदी के तट पर पराजित होने का निर्देश प्राप्त है। ओल्डेनबर्ग के अनुसार, ये लोग एवं तुर्वशलोग सृंजयों के विपक्ष में थे (ओल्डेनबर्ग, बुद्ध. ४०४)। त्सीमर के अनुसार, ये एवं तुर्वश लोग दोनों एक ही थे (त्सीमर, अल्टिबिडशे लेबेन. १२४)। किन्तु यह तर्क अयोग्य प्रतीत होता है।

पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार, ये एवं जह्नु लोगों में राजसत्ता प्राप्त करने के लिए संघर्ष हुआ था, जिसमें जह्नु लोगों का राजा विश्वामित्र ने इन्हें परास्त किया था (तां. ब्रा. २१.१२.२)।

वृजिन्वत्--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो क्रोष्टु राजा का पुत्र एवं स्वाही राजा का पिता था (भा. ९.२३. ३१)। महाभारत में इसके पुत्र का नाम उषङ्गु दिया गया है (म. अनु. १४७.२८-२९)।

वृत्त--एक सर्प, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो शिष्ट एवं सुच्छाया के पुत्रों में से एक था।

वृत्ति--मनु नामक रुद्र की पत्नी (भा. ३. १२.१३)।

२. अमिताभ देवों में से एक।

वृत्र--एक अंतरिक्षीय दैत्य, जो इंद्र के प्रमुख शत्रु था। यास्क ने इसे 'मेघ दैत्य' माना है, जो आकाशस्थ जल का अवरोध करता है। प्रभंजनों के स्वामी इंद्र ने अपने वज्र (विद्युत्) से इस असुर का विच्छेद किया, एवं पृथ्वी पर जल वर्षा की। इसीका वध करने के लिए इंद्र ने जन्म लिया था, जिस कारण उसे ऋग्वेद में 'वृत्रहन्' उपाधि दी गयी है (ऋ. ८.७८)। वृत्र के साथ इंद्र ने किये संघर्ष को ऋग्वेद में 'वृत्रहत्या' एवं 'वृत्रतूर्य' कहा गया है।

जन्म--वृत्र की माता का नाम दानु था, जो शब्द ऋग्वेद में जलधारा के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है (ऋ. १. ३२)। इसी शब्द का पुल्लिंगी रूप 'दानव' एक मातृक नाम के नाते वृत्र अथवा सर्प के लिए, और्णवाभ नामक दैत्य के लिए, एवं इंद्रद्वारा वधित सात दैत्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है (ऋ. २.११; १२; १०.१२०.६)।

स्वरूपवर्णन--वृत्र का रूप सर्पवत् माना गया है, अतः इसके हाथ एवं पैर नहीं है (ऋ. ३.३०.८)। किंतु इसके सर का एवं जबड़ों का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.५२.१०; ८.६.६; ७३.२)। सर्प की भाँति यह फूँफकारता है (ऋ. ८.८५); एवं गर्जन्, विद्युत् एवं झंझावात इसके आधीन है (ऋ. १.८०)।

निवासस्थान--वृत्र का एक गुप्त (निणय) निवासस्थान था, जो एक शिखर (सानु) पर स्थित था (ऋ. १.३२; ८०)। इसी निवासस्थान में इंद्र ने जलधाराएँ छोड़ कर वृत्र का वध किया था, एवं बहुत उँचाई से इसे नीचे गिराया था (ऋ. ८.३)। इसके निन्यानब्वे दुर्ग थे, जो इन्द्र ने इसकी मृत्यु के समय ध्वस्त किये थे (ऋ. ७.१९; १०.८९)।

पराक्रम--वृत्र के निम्नलिखित पराक्रमों का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है:--१. जलधाराओं को रोकना (ऋ. २. १५.६); २. गायों का हरण करना (ऋ. २.१९.३); ३. सूर्य को ढँकना (ऋ. २.१९.३); ४. सूर्योदय (उषस्) को रोकना (ऋ. ४.१९.८)। ऋग्वेद में अन्यत्र वृत्र के द्वारा मेघो को अपने उदर में छिपाने का निर्देश भी प्राप्त है (ऋ. १.५७)। शंबर, बल, अहि आदि दानवों के लिए भी ऋग्वेद में यही पराक्रम वर्णित है।

वध--इसका वध करने के लिए देवों ने इंद्र का वध किया (ऋ. ३.४९.१; ४.१९.१)। इंद्र एवं वृत्र का युद्ध

त्रिककुद् पर्वत पर हुआ। इंद्र ने इसका वध किया, एवं इसके द्वारा बद्ध किये गये मेघों को मुक्त कर (अपव्र) उसी जल से इसे डुबो दिया (वृत्रं अवृणोत; ऋ. ३.४३)। इसकी मृत्यु की वार्ता वायु के द्वारा सर्व विश्व को ज्ञात हुई।

वृत्र-इंद्रयुद्ध की तिथिनिर्णय लो. तिलकजी के द्वारा किया गया है, जो उनके द्वारा १० अक्तूबर के दिन निश्चित किया गया है (लो. तिलक, आर्यों का मूलस्थान पृ. २०८)।

व्युत्पत्ति—'वृत्र' शब्द 'वृ' (आवृत्त करना, ढँकना) धातु से व्युत्पन्न हुआ माना जाता है। इसने जलों को आवृत कर दिया था (अप वारिवांसम्)। इस कारण इसे 'वृत्र' नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. २.१४)। यास्क के अनुसार, इसे 'मेघ दैत्य' कहा गया है, एवं त्वष्टृ असुर के पुत्र (त्वाष्ट्र असुर) मानने के ऐतिहासिक परंपरा को अयोग्य बताया गया है (नि. २.१६)।

सामूहिक नाम—ऋग्वेद में 'वृत्र' शब्द का बहुवचनी रूप 'वृत्राणि' अनेक स्थान पर प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, एक सामूहिक नाम के नाते वृत्र के अतिरिक्त कई अन्य असुरों के लिए भी यह शब्द प्रयुक्त किया जाता था। ऐसे कई विभिन्न असुरो के नामों का ऋग्वेद में उल्लेख प्राप्त है (ऋ.७.१९)। दधीचि ऋषि के अस्थियों से बने हुए अस्त्रों की सहायता से, इंद्र ने निन्यानब्बे वृत्रों का वध किया था (ऋ. १.८४)। ऋग्वेद में जहाँ सामान्य विरोधक अथवा शत्रु को 'दास' अथवा 'दस्यु' कहा गया है, वहाँ दैत्य शत्रुओं को 'वृत्र' कहा गया है।

इस प्रकार सामूहिक रूप में 'वृत्र' शब्द 'दानवी अवरोधक' अर्थ में ही प्रयुक्त किया गया प्रतीत होता है। अवेस्ता में 'वेरथ' शब्द 'विजय' अर्थ में प्रयुक्त किया गया है, जो अवरोध का ही विकसित रूप प्रतीत होता है।

तैत्तिरीय संहिता में—इस ग्रंथ में वृत्र को त्वष्टृ का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी जन्मकथा निम्नप्रकार दी गयी है। एक बार त्वष्टृ ने यज्ञ किया, जहाँ यज्ञ में सिद्ध किया गया सोम उसने समस्त देवताओं को दिया, किन्तु अपने पुत्र विश्वरूप का वध करनेवाले इंद्र को नही दिया। इंद्र के हिस्से का सोम उसने अग्नि में डाल दिया, जिससे आगे चल कर वृत्र का जन्म हुआ।

बड़ा होने पर, इसने समस्त सृष्टि को त्रस्त करना प्रारंभ किया। इसके भय से विष्णु ने स्वयं के तीन भाग किये, एवं उन्हें तीनों लोकों में छिपा दिये। इंद्र ने विष्णु की सहायता से इसे ज्यादा बढ़ने न दिया, एवं अपने पेट में समा लिया। किन्तु वहाँ भी इसने भूख का रूप धारण कर सारी सृष्टि को त्रस्त करना पुनः प्रारंभ किया (तै. सं. २.४.१२)।

इंद्र के द्वारा इसके वध के संबंधी एक कथा तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त है। वृत्र के द्वारा विदेह देश की गायों का निर्माण हुआ, जिनमें कृष्ण ग्रीवायुक्त एक बैल भी था। इंद्र ने उस बैल का अग्नि में हवन किया, जिससे प्रसन्न हो कर अग्नि ने इंद्र को वृत्र का वध करने के लिए समर्थ किया (तै. सं. २.१.४)।

ब्राह्मण ग्रन्थों में—इन ग्रंथों में वृत्र एवं इंद्र को क्रमशः चंद्र एवं सूर्य की उपमा दी गई है। जिस प्रकार अमावास्या के दिन सूर्य चंद्र को निगल लेता है, उसी प्रकार इंद्र ने वृत्र को डुबो देने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। एक बार असुरों ने वेद एवं वेदविद्या हस्तगत की, जिस कारण सारा देवपक्ष हतबल हुआ। आगे चल कर, इंद्र ने विश्वकर्मन्‌पुत्र वृत्र नामक ब्राह्मण से तीनों वेद (ऋक्, यजुः। साम) जीत लिये, एवं वृत्र का वध किया (श. ब्रा १.१.३.४; ३.१.३.१२; ४.१.३.१; ५.५.५.१)।

महाभारत एवं पुराणों में—महाभारत में इसे कृतयुग का एक असुर कहा गया है, एवं इसके पिता एवं माता के नाम क्रमशः कश्यप एवं दिति (दनायु) दिये गये हैं। दिति के बल नामक पुत्र का इंद्र ने वध किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर दिति ने इन्द्र का वध करनेवाला पुत्र निर्माण करने की प्रार्थना कश्यप से की। इस पर कश्यप ने अपनी जटा झटक कर अग्नि में हवन की। इसी अग्नि से अजस्रकाय वृत्र का निर्माण हुआ (पद्म. उ. ९)।

भागवत में इसे त्वष्टृ का पुत्र कहा गया है, जो उसने अपने पुत्र विश्वरूप का वध करनेवाले इंद्र का बदला लेने के लिए निर्माण किया था (भा. ६.९-१२)। ब्रह्मांड में इसकी माता का नाम अनायुषा दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६.३५)।

तपस्या—अपने पिता की आज्ञा से इसने ब्रह्मा की अत्यंत कठोर तपस्या की, जिस कारण ब्रह्मा ने प्रसन्न हो कर इसे वर प्रदान किया, 'आज से तुम अमर होगे, तथा लोह एवं काष्ठ, आर्द्र एवं शुष्क आदि कौनसे भी अस्त्र से दिन में या रात में तुम्हें मृत्यु न आयेगी (दे. भा. ६.१.७)। आगे चल कर इसी वर के प्रभाव से, इसने

इंद्र को परास्त कर इंद्रपद प्राप्त किया (वा. रा. उ. ८४-८६)।

भागवत में इसे ब्राह्मण एवं श्रीविष्णु का परमभक्त कहा गया है (भा. ६.९; पद्म. भू. २५)। इस कारण इंद्र-वृत्र युद्ध में श्रीविष्णु ने गुप्त रूप से ही इंद्र की सहायता की थी। यह ब्राह्मण होने के कारण, इसका वध करने से इंद्र को ब्रह्महत्त्या का दोष लग गया था।

इंद्र से युद्ध--इंद्र-वृत्र युद्ध की अनेकानेक कथाएँ पुराणों में प्राप्त है, जहाँ युद्धसामर्थ्य से नहीं बल्कि छल कपट से इंद्र के द्वारा इसका वध होने के निर्देश प्राप्त हैं। इंद्र ने रंभा अप्सरा के द्वारा इसे शराब पिलवायी, एवं शराब की उसी नशीली एवं व्रतहीन अवस्था में जब यह समुद्र किनारे सोया था, उसी समय इससे संधि कर, आधा इंद्रपद पुनः प्राप्त किया (पद्म. भू. २५; वा. रा. उ. ८४-८६; स्कंद. १.१.१६)।

वध--आगे चल कर जब यह असावधान अवस्था में था, तब इंद्र ने इस पर हमला किया, एवं दधीचि ऋषि की अस्थियों से बने हुए वज्र पर समुद्र का झाग लपेट कर उससे इसका वध किया (दे. भा. ६.१.६; पद्म. भू. २४; भा. ६.९; म.व. १००; उ. १०)। इंद्र ने इसका वध संध्यासमय किया, एवं इस प्रकार ब्रह्मा के द्वारा इसे प्राप्त हुए वर के शर्तों की पूर्ति करते हुए ही, इंद्र ने इसका वध किया।

भागवत के अनुसार, वृत्रवध के समय इंद्र ने सर्वप्रथम इसका एक हाथ काट दिया। इतने में इंद्र का वज्र नीचे गिर गया। इसने इंद्र को अपना वज्र उठाने के लिए कहा, जब उसने इसका दूसरा हाथ काट दिया। पश्चात् यह इंद्र के उदर में प्रविष्ट हुआ, जहाँ से बाहर आने पर इंद्र ने इसका शिरच्छेद किया (भा. ६.१२)।

इंद्र-वृत्रयुद्ध में निम्नलिखित असुर इसके पक्ष में शामिल थे:--अनर्वन्, अंबर, अयोमुख, उत्कल, ऋषभ, नमुचि, पुलोमत्, प्रहेति, विप्रचित्ति, वृषपर्वन्, शंकुशिरस्, शंबर, हयग्रीव, हेति एवं पाताल में रहनेवाले कालेय अथवा कालकेय राक्षस (भा. ६.१०; स्कंद. १.१.१६; पद्म. पा. १९)।

तत्त्वज्ञ--पूर्वजन्म में यह चित्रकेतु नामक विष्णुभक्त राजा था (भा. ६.१४)। मृत्यु के पूर्व इसने इंद्र को भागवधर्म का उपदेश प्रदान किया था। सनत्कुमारों से इसे योगज्ञान की प्राप्ति हुई थी, जिस कारण इसे मृत्यु के पश्चात् सद्गति प्राप्त हुई (म. शां. २८१)। महाभारत में उशनस् ऋषि के साथ इसका किया 'वृत्र-उशनस् संवाद' प्राप्त है, जहाँ ज्ञान से मोक्षप्राप्ति किस तरह हो सकती है, इसकी चर्चा प्राप्त है। उसी ग्रंथ में 'वृत्र-गीता' का निर्देश भी मिलता है।

परिवार--इसके पुत्र का नाम मधुर था (वा. रा. उ. ८४.१०)। ब्रह्मांड में इसे अनायुषा का पुत्र कहा गया है, एवं इसका वंश विस्तृत रूप में दिया गया है। अनायुषा के कुल पाँच पुत्र थे:-- १. अररु; २. बल; ३. वृत्र; ४. विज्वर; ५. वृष। ये पाँच ही भाइयों को महेंद्रानुचर एवं ब्रह्मवेत्ता पुत्र उत्पन्न हुए, जो निम्न प्रकार थे:-- १. वृत्रपुत्र-बक आदि सहस्त्र पुत्र; २. **बलपुत्र**-निकुंभ एवं चक्रवर्मन्; ३. विज्वरपुत्र-कालक एवं खर; ४. **वृषपुत्र**-श्राद्धाह, यज्ञह ब्रह्म एवं पशुह; ५. **अररुपुत्र**- धुंधु, जो कुवलाश्व ऐक्ष्वाक के द्वारा मारा गया (ब्रह्मांड. ३.६.३५-३७)।

२. एक असुर, जो हिरण्याक्ष का सेनापति था। इंद्र-हिरण्याक्ष युद्ध में, इंद्र ने इसकी शिखा पकड़ कर खड्ग से इसका वध किया था (पद्म. भू. ७३)।

वृत्रघ्न--एक राजा, जिसने यमुना एवं गंगा नदियों के तट पर अश्वों को बाँधा था (ऐ. ब्रा. ८.२३.५)। रौथ के अनुसार, यहाँ वृत्रघ्न इंद्र की ओर संकेत किया गया है।

वृत्रघातक--विष्णु के बारह अवतारों में से नौवाँ अवतार (मत्स्य. ४७.४४)।

वृद्धकन्या--एक बालब्रह्मचारिणी, जो कुणि गर्ग महर्षि की कन्या थी। इसके पिता ने इसका विवाह करना चाहा, किन्तु यह जन्म से ही अत्यंत विरक्त होने के कारण, इसने विवाह करने से इन्कार कर दिया।

तपस्या--आगे चल कर इसने घोर तपस्या प्रारंभ की। किन्तु नारद इसे आ मिला, एवं उसने इसे कहा कि, विवाह-संस्कार किये बगैर स्त्री के लिए स्वर्गलोक की प्राप्ति असंभव है।

नारद के कथनानुसार, इसने विवाह करने का निश्चय किया, एवं अपना आधा पुण्य प्रदान करने की शर्त पर गालव ऋषि के शिष्य शृंगवत् ऋषि से विवाह किया। विवाह करते समय शृंगवत् ने इसे कहा था कि, केवल एक रात के लिए ही वह इसके साथ रहेगा। अपने पति के इस शर्त के अनुसार, इसने एक रात के लिए वैवाहिक जीवन व्यतीत किया, एवं तत्पश्चात् अपनी तपस्या के बल से यह स्वर्गलोक गयी (म. श. ५१)।

वृद्धकन्यातीर्थ--अपने कुरुक्षेत्र में स्थित जिस आश्रम में इसने तपस्या की थी, वहाँ आगे चल कर 'वृद्धकन्यातीर्थ' नामक तीर्थस्थान का निर्माण हुआ। भारत के तीर्थस्थानों का यात्रा करता हुआ बलराम इस तीर्थस्थान में आया था, जहाँ उसे शल्यवध की वार्ता ज्ञात हुई थी।

वृद्धगौतम--एक वैश्य, जो मणिकुंडल नामक वैश्य का मित्र था (मणिकुंडल देखिये)।

वृद्धक्षत्र--एक राजा, जो सिंधुनरेश जयद्रथ का पिता था। इसने जयद्रथ को वर प्रदान किया था, 'जो भी तुम्हारे सिर को पृथ्वी पर गिरायेगा, उसके मस्तक के सैकड़ो टुकड़े हो जायेंगे'।

भारतीय युद्ध में अर्जुन ने अपने बाणों से जयद्रथ का शिरच्छेद किया, एवं उसका सिर वृद्धक्षत्र के ही गोद में गिरा दिया, जिस कारण इसकी मृत्यु हुई (म. द्रो. १२१)।

वृद्धक्षत्र पौरव--एक पूरुवंशीय राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों केपक्ष में शामिल था। यह अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १७१.५६-६४)।

वृद्धक्षेम--एक राजा, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् का पिता था। इसी कारण सुशर्मन् को 'वार्धक्षेमि' पैतृक नाम प्राप्त था (म. आ. १७७.८; वार्धक्षेमि १. देखिये)।

२. एक वृष्णिवंशीय राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १६८.१६)। इसे 'वार्धक्षेमि' नामान्तर प्राप्त था।

भारतीय युद्ध में इसका कृप के साथ युद्ध हुआ था (म. द्रो. २४.४९)। अन्त में बाह्लिक ने इसका वध किया (म. क. ४.७९)।

वृद्धगर्ग--एक आचार्य, जिसने राज्य में उत्पन्न होनेवाले दुश्चिन्ह के बारे में अत्रि ऋषि को ज्ञान प्रदान किया था (मत्स्य. २२९.३८)।

वृद्धगार्ग्य--एक आचार्य, जिसने पितरों की तृप्ति किस प्रकार होती है इस संबंध में अपने पितरों के साथ संवाद किया था। उस समय पितरों ने इसे वर्षा ऋतु में दीपदान करने का, एवं अमावास्या के दिन तर्पण करने का माहात्म्य कथन किया था (म. अनु. १२५.७७-८३)।

२. एक ऋषि, जो मुचुकुंद राजा का समकालीन था (विष्णु. ५.२३.२५८)।

वृद्धगौतम--एक ऋषि, जो पूर्वकाल में जड़बुद्धि था। किन्तु वृद्धा नामक स्त्री के तप के कारण यह बुद्धिमान् बन गया (ब्रह्म. १०७)।

वृद्धद्युम्न आभिप्रतारिण--एक कुरुवंशीय राजा (राजन्य), जिसके पुरोहित का नाम शुचिवृक्ष गौपालायन था (ऐ. ब्रा. ३.४८.९)। अपने इस पुरोहित की सहायता से इसे विपुल धनलक्ष्मी प्राप्त हुई।

एक बार इसने 'तृष्टोम-क्षत्रधृति' नामक यज्ञ किया था। उस समय यज्ञकर्म में इसके द्वारा एक त्रुटि हो गयी, जिस कारण पुरोहित ने इसे शाप दिया, 'जल्द ही कुरुराजवंश का कुरुक्षेत्र से लोप होगा'। आगे चल कर पुरोहित की यह शापवाणी सच साबित हुई (सां. श्रौ. १५.१६.१०-१३)।

अभिप्रतारिन् का वंशज होने से इसे 'आभिप्रतारिण' यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। संभवतः यह अभिप्रतारिन् काक्षसेन राजा के वंश में उत्पन्न हुआ होगा।

वृद्धशर्मन्--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो आयु राजा एवं स्वर्भानु का पुत्र था। इसके अन्य चार भाइयों के नाम नहुष, रजि, रम्भ एवं अनेनस् थे (म. आ. ७०.२३)। इसे क्षत्रधर्मन् नामान्तर भी प्राप्त था।

२. करुष-देशीय एक राजा, जो वसुदेव-भगिनी श्रुतदेवा का पति था। इसके पुत्र का नाम दन्तवक्र था (भा. ९.२४.३७)।

वृद्धसेना--एक राजस्त्री, जो सुमति राजा की पत्नी, एवं देवताजित् राजा की माता थी (भा. ५.१५.१-२)।

वृद्धा--एक राजकन्या, जो आर्ष्टिषेणपुत्र ऋतध्वज राजा एवं सुश्यामा की कन्या थी। इसका विवाह वृद्धगौतम ऋषि से हुआ था (ब्रह्म. ११७)।

वृधु तक्षन्--एक हीनकुलीन अंत्यज, जिसने भरद्वाज ऋषि को गोदान किया था। यह हीन जाति का होने के कारण, इससे दान लेना अधर्म्य था। किन्तु भरद्वाज ऋषि क्षुधार्त एवं आपद्ग्रस्त थे, जिस कारण उन्हें कोई दोष न लगा (मनु. १०.१०७)।

ऋग्वेद में निर्दिष्ट 'बृबु तक्षन्' नामक दास संभवतः यही होगा।

वृंदा--एक दैत्यकुलोत्पन्न स्त्री, जो कालनेमि एवं स्वर्णा की कन्या, एवं जालंधर दैत्य की पत्नी थी (पद्म. उ. ४; शिव. रुद्र. यु. १४)।

जालंधर दैत्य की मृत्यु के पश्चात् इसने अग्निप्रवेश किया था। इसकी पतिभक्ति से विष्णु प्रसन्न हुए, एवं उन्होंने इसके अग्निप्रवेश के स्थान पर गौरी, लक्ष्मी एवं स्वरा के अंश से क्रमशः आमला, तुलसी एवं मालती पेड़ों का निर्माण किया (पद्म. उ.१०५; जालंधर देखिये)।

उसी दिन से ये तीनो पेड़ पवित्र माने जाने लगे, एवं यह स्वयं 'तुलसीवृंदा' नाम से प्रसिद्ध हुई।

वृंदारक--कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ४६.१२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह भीम के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १०२.९५)।

वृश जान अथवा **वैजान**--एक आचार्य, जो त्र्यरुण राजा का पुरोहित था। 'जन' का वंशज होने से इसे 'जान अथवा 'वैजान' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

एक बार यह एवं त्र्यरुण राजा रथ में बैठ कर जा रहे थे, जब एक बालक की इनके रथ के नीचे मृत्यु हो गयी। उस समय, रथ का लगाम इसीके हाथ में होने के कारण इसे मृत्यु का पातक लगा। पश्चात् 'वार्श' साम का पठन कर इसने मृत बालक को पुनः जीवित किया (पं. ब्रा.१३. ३.१२)। सांख्यायन, तांडय एवं भाल्लवि ब्राह्मण, तथा बृहद्देवता में भी इस कथा का संक्षिप्त निर्देश प्राप्त है।

सीग के अनुसार ऋग्वेद में भी इस कथा का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.२)। किंतु वह तर्क अयोग्य प्रतीत होता है।

वृष--शिव का एक अवतार, जो वृषभ रूप में उत्पन्न हुआ था। समुद्र-मंथन के पश्चात्, उस मंथन से उत्पन्न हुए सुंदर स्त्रियों से विष्णु कामासक्त हुआ, एवं उसे उन स्त्रियों से सैंकड़ो पुत्र उत्पन्न हुए। पाताल में उत्पन्न हुए विष्णु के इन पुत्रों ने समस्त पृथ्वी कंपित करना प्रारंभ किया, जिनका परामर्ष लेने के लिए शिव ने वृष का अवतार धारण किया।

विष्णुपुत्रों से शाप--उत्पन्न होते ही इसने विष्णु की पराजय कर, उसका सुदर्शन-चक्र हरण किया, एवं उसे स्वर्लोक में भाग जाने पर भी विवश किया। जाते समय विष्णु ने अपने पुत्रों को पाताल में भाग जाने की सलाह दी, जिस पर इसने उन्हें शाप दिया, 'शांत-वृत्ति के ऋषि एवं मेरे अंश से उत्पन्न दानवों के अतिरिक्त, जो भी मनुष्य पाताल में जयेगा, उसे मृत्यु प्राप्त होगी'। उस समय से पाताल लोक मनुष्यप्राणियों के लिए निषिद्ध बन गया (शिव. शत. २२-२३)।

२. स्कंद का एक सैनिक।

३. एक दैत्य, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था।

४. विकुंठ देवों में से एक।

५. एक दैत्य, जो अनायुषा के पुत्रों में से एक था। इसे श्रद्धाद, यज्ञहन्, ब्रह्महन्, एवं पशुहन् नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (ब्रह्मांड. ३.६.३१)।

६. (सो. अनु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शिबि राजा का पुत्र था। इसे 'वृषादर्भि' नामान्तर भी प्राप्त था (वृषादर्भि देखिये)।

७. (सो. सह.) एक राजा, जो भरत राजा का पुत्र, एवं मधु राजा का पिता था (विष्णु. ४.११.२५-२६)।

८. एक राजा, जो सृंजय एवं राष्ट्रपाली का पुत्र था (भा. ९.२४.४२)।

९. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था (भा. १०.६१.१३)।

१०. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक था (भा. १०.६१.१४)।

११. एक हैहयवंशीय राजकुमार, जो कार्तवीर्य अर्जुन के पुत्रों में से एक था। यह परशुराम के क्षत्रियसंहार से बच गया था (ब्रह्मांड. ३.४१.१३)।

१२. अंगराज कर्ण का नामान्तर (म.व.२९३.१३)।

१३. धर्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

वृषक--एक राजकुमार, जो गांधारराज सुबल का पुत्र था। यह द्रौपदीस्वयंवर में, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (म. आ. १७७.५; म. स. ३१.७)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था, जहाँ इसकी श्रेणि 'रथी' थी (म. उ. १६५.१)। अर्जुनपुत्र इरावत् का इसने पराजय किया था (म. भी. ८६.२४-४३)। अंत में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. २८.११-१२; क. ४.३९)।

भारतीय-युद्ध के पश्चात्, व्यास के द्वारा आवाहन करने पर, यह गंगाजल से प्रकट हुआ था (म. आश्र ४०.१२)।

वृषकंड--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वृषक्राथ--कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो द्रोण-निर्मित गरुडव्यूह के हृदयस्थान में खड़ा था (म. द्रो. १९.३१)।

वृषकेतु--अंगराज कर्ण के पुत्रों में से एक। युधिष्ठिर के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा के लिए यह गया था। यही काम करते समय, यह बभ्रुवाहन के द्वारा मारा गया (जै. अ. ३०)।

वृषगण वासिष्ठ--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९७. ७-९)।

वृषजार—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२)।

वृषण—(सो. सह.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सहस्रार्जुन राजा का पुत्र था। भागवत एवं वायु के अनुसार, इसे क्रमशः ' वृषभ ' एवं ' वर्ष ' नामांतर भी प्राप्त थे।

वृषणश्व—एक मनुष्य, जिसकी पत्नी का नाम मेना था। मेना का रूप धारण कर स्वयं इंद्र इसकी पत्नी बना था (ऋ. १.५१.१३)। ब्राह्मण ग्रंथों में भी इसका निर्देश प्राप्त है (जै. ब्रा. २.७९; श. ब्रा. ३.३. ४.१८; प. ब्रा. १.१.१६; तै. आ. १.१२.१३)।

वृषदर्भ—एक राजा, जिसने अपने राज्यकाल में एक गुप्त नियम बनाया था, ' ब्राह्मणों को सुवर्ण एवं चांदी ही दान दिया जाय '।

एक बार इसके मित्र सेन्दुक के पास एक ब्राह्मण आया, एवं उससे १००० अश्वों का दान माँगने लगा। यह दान देने में सेन्दुक ने असमर्थता प्रकट की, एवं उस ब्राह्मण को इसके पास भेज दिया।

इसने अपने गुप्त नियम के अनुसार, ब्राह्मण के द्वारा अश्वों का दान माँगते ही उसे कोड़ों से फटकारा। ब्राह्मण के द्वारा इस अन्याय का रहस्य पूछने पर, इसने उसे अपना गुप्तदान (उपांशु) का संकल्प निवेदित किया, एवं उसकी माफी माँगी। पश्चात् इसने उसे अपने राज्य की एक दिन की आय दान के रूप में प्रदान की (म. व. परि १. क्र. २१. पंक्ति ४.)। भांडारकर संहिता में यह कथा अप्राप्य है। इसे ' वृषादर्भि ' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. उशीनर देश के शिबि राजा का पुत्र। इसी के नाम से इसके राज्य को 'वृषादर्भ' जनपद नाम प्राप्त हुआ (ब्रह्मांड ३.७४.२३)।

वृषदश्व—(सू. इ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार पृथरोमन् अथवा अनेनस् राजा का पुत्र था।

वृषध्वज—एक जनकवंशीय राजा, जिसके पुत्र का नाम रथध्वज था। यह सीरध्वज जनक राजा के पूर्वकाल में उत्पन्न हुआ था। किन्तु वंशावलि में इसका नाम अप्राप्य है।

२. एक असुर, जिसने वृत्र-इंद्र युद्ध में वृत्र के पक्ष में भाग लिया था (भा. ६.१०)।

३. कर्णपुत्र वृषकेतु का नामान्तर।

४. प्रवीर वंश में उत्पन्न एक कुलांगार राजा, जिसने अपने दुर्वर्तन के कारण अपने स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७२. १६ पाठ.)। पाठभेद-' बृहद्बल।

वृषन् पाथ्य—अग्नि का एक उपासक (ऋ. १.३६. १०)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसका पैतृक नाम ' पाथ्य ' दिया गया है (ऋ. ६.१६.१५)।

वृषपर्वन्—एक दानवराज, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२४)। यह दीर्घप्रज्ञ राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.१६)। उशनस् शुक्राचार्य इसीका ही राजपुरोहित था, जिसने 'संजीवनी-विद्या' के कारण इसकी राज्य की एवं असुरों की ताकद काफ़ी बढायी थी।

इंद्रवृत्र युद्ध में इसने इंद्र से युद्ध किया था। देवासुर-युद्ध में इसने अश्विनों से युद्ध किया था (भा. ६.६. ३१-३२; १०.२०)।

इसकी कन्या शर्मिष्ठा ने शुक्रकन्या देवयानी का अपमान किया, जिस कारण शुक्र इसका राज्य छोड़ जाने के लिए सिद्ध हुआ। इसपर अपने राज्य में रहने के लिए इसने शुक्र से प्रार्थना की, एवं तत्प्रीत्यर्थ अपनी कन्या शर्मिष्ठा को देवयानी की आजन्म दासी बनाने की उसकी शर्त भी मान्य की (भा. ९.१८.४)। शर्मिष्ठा ने भी असुरवंश के कल्याण के लिए, देवयानी की दासी बनने के प्रस्ताव को मान्यता दी (म. आ. ७५)।

परिवार—शर्मिष्ठा के अतिरिक्त, इसकी सुंदरी एवं चंद्रा नामक अन्य दो कन्याएँ भी थी।

२. एक ऋषि, जिसका आश्रम हिमालय प्रदेश में गंधमादन पर्वत के समीप स्थित था। बनवासकाल में तीर्थयात्रा करते समय युधिष्ठिरादि पांडव इसके आश्रम में आये थे। इसने पांडवों को उचित उपदेश कथन किया, एवं आगे बदरी-केदार जाने का मार्ग भी बताया (म. व. १५५.१६-२५)। बदरी-केदार से लौट आते समय भी, पुनः एक बार पांडव इसके आश्रम में आये थे (म. व. १७४.६-८)।

३. एक असुर, जो वृत्र का अनुयायी था (भा. ६. १०.१९)।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वृषभ—(सो. सह.) एक हैहयवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार कार्तवीर्य सहस्रार्जुन राजा का पुत्र था (भा. ९.२३.२७)।

२. (सो. अज.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार कुशाग्र राजा का पुत्र, एवं पुण्यवत् राजा का पिता था (मत्स्य. ५०.२९)।

३. एक राजकुमार, जो कलिंग देश के राजा का भाई था। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. क. ४.१६)।

४. गांधारराज सुबल का पुत्र, जो शकुनि का छोटा भाई था। इसने अपने अन्य पाँच भाइयों के साथ इरावत् पर हमला किया था, जिसमें इसके अतिरिक्त इसके पाचों भाई मारे गये (म. भी. ८६.२४ पाठ.)।

५. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अनमित्र राजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम जयन्ती था, जो काशिराज की कन्या थी (मत्स्य. ४५.२५-२६)।

६. एक राजा, जो सृष्टि एवं छाया का पुत्र था (ब्रह्मांड. २.३६.९८)।

७. एक गोप, जो कृष्ण का मित्र था (भा. १०.१८. २३)।

८. रामसेना का एक वानर (वा. रा. कि. ४१)।

९. एक असुर, जो कृष्ण के द्वारा मारा गया था (ब्रह्मांड. ३.३६.३७)।

१०. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

वृषभानु--एक राजा। एक बार यह यज्ञ के लिए भूमि शुद्ध कर रहा था, जिस समय इसे राधा नामक कन्या प्राप्त हुई। अपनी कन्या मान कर, इसने उसे पालपोस कर बड़ा किया (पद्म. ब्र. ७.) ब्रह्मवैवर्त में इसे राधा का पिता कहा गया है (ब्रह्मवै. २.४९.३२-४२)।

वृषभेक्षण--श्रीकृष्ण का एक नामांतर (म.उ.६८.७)।

वृषवाहन--एकादश रुद्रों में से एक।

वृषशुष्म वातावत जातुकर्ण्य--एक आचार्य, जो निकोथक भायजात्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम इन्द्रोत शौनक था (वं. ब्रा. २; कौ. ब्रा. २.९)। 'वातवत्' का वंशज होने के कारण, इसे 'वातावत' पैतृकनाम प्राप्त हुआ होगा।

'उदित होम' पक्ष का यह पुरस्कर्ता था, जिस पक्ष का इसने अच्छा समर्थन किया था (सां. ब्रा. २.९; ऐ. ब्रा. ५.२९; तै. ब्रा. ५.२९.१)।

वृषसेन--अंगराज कर्ण का पुत्र, जिसकी पत्नी का नाम भद्रावती था।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं इसकी श्रेणि 'रथी' थी (म. उ. १६४.२३)। इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था :— १. शतानीक आदि द्रौपदीपुत्र (म. द्रो. १५.१.१०); २. सुषेण (म. द्रो. ५३.९-११); ३. पाण्ड्य (म. द्रो. २४.१८३*पाठ.); ४. अभिमन्यु (म. द्रो. ४३.५-७); ५. अर्जुन (म. द्रो. १२०.४०); ६. द्रुपद (म. द्रो. १४०. १३; १४३.१९) ७. नकुल (म. क. ६२.३२)।

अंत में अर्जुन के द्वारा इसका वध हुआ (म. क. ९२.६१)। इसकी मृत्यु पौष कृष्ण त्रयोदशी के दिन हुई (भारतसावित्री)। इसकी मृत्यु से अंग राजवंश समाप्त हुआ (भा. ९. २३.१४)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, श्रीव्यास के द्वारा आवाहन किये जाने पर, इसने उसे दर्शन दिये थे (म. आश्र. ४०.१०)।

२. एक राजा, जो यमसभा में उपस्थित था (म. स. ८.१२)।

३. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

४. एक हैहय राजा, जो कार्तवीर्य अर्जुन के पुत्रों में से एक था (विष्णु. ४.११.२१)।

वृषाकपि--भगवान् विष्णु का एक नाम (म. शां. ३४२.८९)।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक (म. अनु. १५०.१२-१३)। यह भूत एवं सरूपा का पुत्र था, एवं इसने देवासुर युद्ध में जम्भ से युद्ध किया था (भा. ६.६.१७)।

३. एक ऋषि, जो अन्य ऋषियों के साथ देवताओं के यज्ञ में उपस्थित हुआ था (म. अनु. ६६.२३)।

वृषाकपि ऐन्द्र--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. ७.१३. २३; १०.८६.३)। इंद्र एवं इंद्राणी के साथ इसके द्वारा किये गये संवाद का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.८६.५)।

लो. तिलक के अनुसार, दक्षिणायन बिंदु के समीप स्थित सूर्य को ही ऋग्वेद में 'वृषाकपि' कहा गया है। दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में छः महीने की अंधेरी रात शुरू होने के पूर्व, अन्तरिक्ष में दिखाई देनेवाले सूर्य को ही वैदिक आर्यों के द्वारा 'वृषाकपि' कहा गया होगा (लो. तिलक, आर्यों का मूलस्थान पृ. २५१)।

वृषाणक वातरशन--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.४)।

वृषादर्भ--(सो. अनु.) अनुवंशीय वृषादर्भि राजा का नामान्तर। भागवत में इसे शिबि राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.२३.३; वृषादर्भि देखिये)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वृषादर्भि शैब्य--(सो. अनु.) शिबि (वृषदर्भ) राजा का पुत्र, जिसे महाभारत में काशि देश का राजा कहा गया है (म. अनु. ९३.२७-२९; १३७. १०)।

भागवत, मत्स्य एवं वायु में इसे क्रमशः 'वृषादर्भ,' 'पृथुदर्भ' एवं 'वृषदर्भ' कहा गया है। विष्णु में इसके नाम की निरुक्ति वृष + दर्भ दी गयी है। महाभारत में इसके 'वृषदर्भ' (म. अनु. ३२.४), एवं वृषादर्वि (म. शां. २२६.२५) नामान्तर प्राप्त है। भांडारकरसंहिता में 'वृषादर्भ' पाठ स्वीकृत किया गया है।

सप्तर्षियों से संघर्ष—इसने सप्तर्षियों से किये संघर्ष की कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार सप्तर्षि पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर रहे थे, जिस समय इसने एक यज्ञ कर अपना पुत्र उन्हें दक्षिणा के रूप में प्रदान किया। आगे चल कर, अल्पायुत्व के कारण इसका पुत्र मृत हुआ, जिसे अकाल के कारण भूखे हुए सप्तर्षियों ने भक्षण करना चाहा। इसने सप्तर्षियों को इस पाशवी कृत्य से रोंकना चाहा, किन्तु सप्तर्षियों ने इसकी एक न सुनी। अपने पुत्र के मृत देह की पुनःप्राप्ति के लिए, इसने सप्तर्षियों को अनेकानेक प्रकार के दान देने का आश्वासन दिया, किन्तु कुछ फायदा न हुआ।

अन्त में अत्यधिक क्रुद्ध हो कर इसने सप्तर्षियों का वध करने के लिए एक कृत्या का निर्माण किया। उस कृत्या का सही नाम यद्यपि 'यातुधानी' था, फिर भी इसने उसे 'मनसा' नाम धारण कर सप्तर्षियों पर आक्रमण करने के लिए कहा। इसकी आज्ञा से उस कृत्या ने सप्तर्षियों पर आक्रमण किया, किन्तु सप्तर्षियों के साथ रहने वाले शुनःसख (इंद्र) ने उसका वध किया (म. अनु. २३)।

दानशूरता—इसकी दानशूरता की विभिन्न कथाएँ महाभारत में प्राप्त है। इसने ब्राह्मणों को अनेकानेक रत्न एवं गृह दान में प्रदान किये थे (म. शां. २१६.२५; अनु. १३७.१०)। अपने पिता शिबि राजा के समान, इसने भी एक कपोत पक्षी का रक्षण करने के लिए अपने शरीर के मांसखंड श्येनपक्षी को खिलाये थे (म. अनु. ३२.३९)।

वृषामित्र--एक ऋषि, जो पाण्डवों के वनवासकाल में उनके साथ रहता था (म. व. २७.२४)।

वृषु--(सो. पुरूरवस्) पुरूरवस्वंशीय पृथु राजा का नामान्तर (पृथु. ८. देखिये)।

वृष्टि--(सो. कुकुर.) कुकुरवंशीय धृष्ट राजा का नामांतर। वायु में इसे कुकुर राजा का पुत्र कहा गया है (धृष्ट ५. देखिये)।

२. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

वृष्टिनेमि—अक्रूर एवं अश्विनी के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३३)।

वृष्टिमत्--(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कविरथ राजा का पुत्र, एवं सुषेण राजा का पिता था।

वृष्टिहव्य—एक आचार्य, जो उपस्तुत वार्ष्टिहव्य नामक आचार्य का पिता था।

वृष्ट्याद्य--(सो. सह.) एक हैहयवंशीय राजा, जो कार्तवीर्य एवं महारथा के पुत्रों में से एक था (वायु. ९४. ४९)।

वृष्णि--(सो. क्रोष्टु.) कुंति राजा के पुत्र धृष्ट राजा का नामान्तर (धृष्ट ४. देखिये)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो सात्वत भजमान राजा का पुत्र था। इसे क्रोष्टु नामान्तर भी प्राप्त था (ह. वं. १.३४; ब्रह्म. १४.१; १५.३१)।

कृष्ण के साथ इसका स्यमंतक मणि के संबंध में संघर्ष हुआ था, जिस समय उस मणि की चोरी कृष्ण के द्वारा किये जाने का शक इसके मन में पैदा हुआ था। किन्तु श्रीकृष्ण ने अपने को निर्दोष साबित किया (ब्रह्मांड. ३. ७१.१)।

यह क्रोष्टु वंश का सुविख्यात राजा था, एवं सुविख्यात वृष्णि वंश इसी से ही प्रारंभ होता है (वायु. ९५,१४; म. आ. २११.१-२; ५; ८)।

परिवार—इसकी गांधारी एवं माद्री नामक दो पत्नियाँ थी, जिनमें से माद्री से इसे युधाजित् आदि पाँच पुत्र उत्पन्न हुए थे (मत्स्य. ४४.४८)।

वृष्णिवंश--वृष्णि राजा से उत्पन्न यादवों को 'वृष्णिवंशीय यादव' कहा जाता है, जो द्वारवती (द्वारका) में रहते थे। इसी वंश में कृष्ण एवं बलराम उत्पन्न हुए थे (भा. १.३.२३; ११.११)। इन लोगों का राजा कृष्ण होते हुए भी, उसका 'परमात्मन् स्वरूप' ये लोग न पहचान सके (भा. १.९.१८)। महाभारत में इन लोगों के राजा का नाम उग्रसेन दिया गया है (म. आ. २११.८)।

इस वंश में उत्पन्न लोग 'व्रात्य' (हीन जाति के) थे, ऐसा निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. द्रो. ११८. १५)। प्रभास क्षेत्र में हुए यादवी-युद्ध में इस वंश के लोगों का संपूर्ण संहार हुआ। महाभारत में इन लोगों का निर्देश 'अंधक' एवं 'भोज' राजाओं के साथ मिलता है। ये तीनों वंश एक ही यादव वंश की उपशाखाएँ थी (म. आ. २११.२; २१२.१४)। महाभारत में इस

वंश में उत्पन्न महारथि, महारथ, रथ एवं मंत्रिपुंगवों की सविस्तृत जानकारी प्राप्त हैः—

(१) महारथ—कृतवर्मन्, अनाधृष्टि, समीक, समितिंजय, कह्व (कंस), शंकु, निदान्त (म. स. १३.५७-५८)।

(२) महारथ—प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, भानु, अक्रूर, सारण, निशठ, गद (म. स. १३.१५९*)।

(३) रथ—आहुक, चारुदेष्ण, चक्रदेव, सात्यकि, कृष्ण, रौहिणेय (बलराम), सांब, शौरि (म. स. १३.५६)।

(४) मंत्रिपुंगव—वितद्रु, झल्लि, बभ्रु, उद्धव, विडूरथ, वसुदेव एवं उग्रसेन (म. स. १३.१५९*)।

३. (सो. वृष्णि.) वृष्णिवंशीय पृश्णि राजा का नामान्तर (पृश्णि ४. देखिये)।

४. (सो. कुकुर.) कुकुरवंशीय धृष्ट राजा का नामान्तर (धृष्ट. ५. देखिये)। इसके कपोतवर्मन् एवं धृति नामक दो पुत्र थे (मत्स्य. ४४.६२)।

५. (सो. सह.) एक राजा, जो मधु राजा के सौ पुत्रों में से एक था। यह एक अत्यंत सुविख्यात राजा था, जिसके कारण इसका वंश सुविख्यात हुआ।

वृष्णिमत्—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शुचिरथ राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार शुचिद्रव राजा का पुत्र था। भागवत एवं वायु में इसे क्रमशः 'धृष्टिमत्' एवं 'रुतिमत्' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम सुषेण था (मत्स्य. ५०.८०; विष्णु. ४.२१.१२)।

वृहंगिरस्—एक राजा, जो मनु एवं वरूत्री के पुत्रों में से एक था।

वेगदर्शिन्—रामसेना का एक वानर। राम के राज्याभिषेक के समय इसने जल लाया था (वा. रा. यु. १२८.५२)।

वेगवत्—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार धुंधुमत् राजा का, एवं भागवत तथा वायु के अनुसार बंधुमत् राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम बंधु था (भा. ९.२.३०)।

२. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था।

३. एक यादव, जो कृष्ण और नाग्नजिती राजा का पुत्र था (भा. १०.६१.१३)।

४. धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया था (म. आ. ५२.१६)।

५. एक सुविख्यात दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२३)। पृथ्वी पर यह केकय राजकुमार के रूप में अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.१०)।

६. एक दैत्य, जो शाल्व का अनुयायी था। कृष्ण-शाल्व युद्ध में शामिल था, जहाँ कृष्णपुत्र सांब के द्वारा यह मारा गया (म. व. १७.२०)।

वेगवाहन—तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)।

वेंकटेश—एक भारतीय वैष्णव देवता, जो दक्षिण भारत में श्रीपर्वत अथवा शेषाचल (=तामील 'तिरुमलै') नामक पर्वतीय स्थान पर स्थित है। स्कंद में इस देवता का निर्देश 'श्रीनिवास' नाम से किया गया है, एवं इसकी पत्नी का नाम पद्मिनी दिया गया है (स्कंद. २.१.४-८)। उत्तर भारत में यही देवता बालाजी नाम से सुविख्यात है जो मुख्यतः वैश्य एवं व्यापारी लोगों की देवता माना जाता है।

दक्षिण भारत में स्थित विठ्ठल एवं वेंकटेश ये विष्णु के ही साक्षात् स्वरूप माने जाते है, एवं विष्णु के अन्य अवतारों से इनका स्वरूप पूर्णतया विभिन्न हैं।

वेंकटेश का शब्दशः अर्थ 'पापनाशक' (वेंक-पाप; कट=नाशक) है। इसी कारण स्वयं वेंकटेश देवता एवं जिस पर्वत पर यह स्थित है, वह वेंकटाद्रि अत्यंत पवित्र माने जाते हैं।

जिस प्रकार वेंकटेश श्रीविष्णु का रूप माना जाता है; उसी प्रकार वेंकटाद्रि शेषनाग का स्वरूप कहलाता है। वेंकटाद्रि का तामिल नाम 'तिरुमलै' (तिरु=श्री; मलै =पर्वत) है, एवं वह 'श्री-पर्वत' एवं 'शेषाचल' इन संस्कृत शब्दों का तामिल रूप प्रतीत होता है। दक्षिण भारत में स्थित वेंकटेश मंदिर सात पर्वतों के एक समूहमें स्थित है, जहाँ पहुँचने के लिए सात मील चढ़ान चढ़नी पड़ती है।

उपासना—स्कंद में 'वेंकटेश महात्म्य' विस्तृत रूप में प्राप्त है। बलराम-तीर्थयात्रा वर्णन में भी वेंकटेश का निर्देश प्राप्त है (भा. ५.१९.१६; १०.७९.१३)। वैजयंती कोश में भी 'वेंकटाद्रि' का निर्देश प्राप्त है (वैज. ४१.१०)।

दक्षिण भारत में प्रचलित वेंकटेश–उपासना का आद्य प्रचारक रामानुजाचार्य माने जाते हैं, जिनके द्वारा प्रणीत रामानुज वैष्णव सांप्रदाय की अधिष्ठात्री देवताओं में वेंकटेश एक माना जाता है।

दक्षिण भारत में स्थित तिरुपति देवस्थान भारत का एक सर्वाधिक संपन्न देवस्थान माना जाता है, जहाँ विश्वविद्यालय, पाठशाला, धर्मशाला, बैंक, बस सर्विस आदि सारी सुविधाएँ देवस्थान के द्वारा संचालित है। सारे भारतवर्ष में रहनेवाले इस देवता के उपासक लक्षावधि रुपियों की भेंट इसे प्रतिवर्ष स्वयंस्फूर्ति से अर्पित करते है।

वेणी एवं **वेणीस्कंद**--कौरव्यकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था।

वेणु--(सो. सह.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शतजित् राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम हय था, जिसके साथ इसका निर्देश 'वेणुहय' नाम से अनेक बार प्राप्त है (विष्णु ४.११.७)।

कई अन्य पुराणों में, इसका नाम वेणुहय दिया गया है, एवं इसके भाइयों के नाम 'हैहय' एवं 'हय' बतायें गये है (भा. ९.२३.२१; वायु. ९४.४)।

वेणुजंघ--युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१५)।

वेणुदारि--एक यादव, जो दक्षिणी भारत में स्थित अश्मक देश का अधिपति था (ह. वं. २.६१.१९)। इसने बभ्रु (अक्रूर) की पत्नी का हरण किया था (म. स. परि. १.२१.१५७२)। कर्ण ने अपने दक्षिणदिग्विजय में इसके पुत्र का पराजय किया था (म. व. परि. १. क्र. २४. पंक्ति. ५७–५८)।

वेणुहय--वेणु राजा का नामांतर (वेणु देखिये)।

वेणुहोत्र--(सो. क्षत्र.) क्षत्रवृद्धवंशीय वीतिहोत्र राजा का नामांतर (वीतिहोत्र ४. देखिये)। वायु में इसे धृष्टकेतु राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ९२.७२)।

वेतसु--एक दानव, जो द्योतन एवं कुत्स नामक आचार्यों का शत्रु था। इंद्र ने अपने इन दोनो मित्रों की सहायता के लिए इसका वध किया (ऋ. ६.२०.८; २६. ४)।

२. एक जातिविशेष, जिसके अधिपति का नाम दशद्यु था। इस जाति के लोगों ने तुग्र लोगों को पराजित किया था (ऋ. १०.४९.४)।

वेताल--पिशाचों का एक समूह, जो रुद्रगणों में शामिल था। ये लोग युद्धभूमि में उपस्थित रह कर मानवी रक्त एवं मांस भक्षण करते थे (भा. २.१०.३९)। देवता मान कर इनकी पूजा की जाती थी, जहाँ सर्वत्र इन्हें शिव के उपासक ही माना जाता था (मत्स्य. २५९.२४)।

२. रुद्रशिव का एक पार्षद, जो उसके द्वारपाल का काम करता था। एक बार शिव एवं पार्वती क्रीडा कर रहे थे, उस समय क्रीडा के उन्मत्त वेश में पार्वती सहजवश द्वार पर आयी। उसे देख कर यह काममोहित हुआ, एवं उनका अनुनय करने लगा। इसका यह धाष्ट्र्य देख कर पार्वती अत्यंत क्रुद्ध हुई, एवं उसने इसे पृथ्वी पर मनुष्य बनने का शाप दिया।

पार्वती के शाप के कारण, इसने 'वेताल' के रूप में पृथ्वी पर जन्म लिया। तदुपरांत अपने पार्षद के प्रति भक्तवत्सलता से प्रेरित हो कर, शिव एवं पार्वती भी महेश एवं शारदा नाम से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए (शिव. शत. १४)।

कालिका पुराण में--इस ग्रंथ में इसके भाई का नाम भैरव बताया गया है, एवं इन दोनों को चंद्रशेखर राजा एवं तारावती के पुत्र कहा गया है। अपने पूर्वजन्म में ये भृंगी एवं महाकाल नामक शिवदूत थे, जिन्हे पार्वती के शाप के कारण पृथ्वीलोक में जन्म प्राप्त हुआ था।

इनके पिता चंद्रशेखर ने इन्हें राज्य न दे कर इनके अन्य तीन भाइयों को वह प्रदान किया। इस कारण ये अरण्य में तपस्या करने गये, एवं शिव की उपासना करने लगे। आगे चल कर वसिष्ठ की कृपा से, इन्हें संध्याचल पर्वत पर शिव का दर्शन हुआ, एवं कामाख्या देवी की उपासना से इन्हें शिवगणों का आधिपत्य भी प्राप्त हुआ।

इनके वंश में उत्पन्न लोगों का 'वेतालवंश' भी कालिका पुराण में दिया गया है।

वेतालजननी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१३)।

वेद--भृगुकुलोत्पन्न एक मंत्रकार। पाठभेद (वायुपुराण)–'विद'।

२. एक ऋषि, जो धौम्य ऋषि का शिष्य, एवं जनमेजय का उपाध्याय था (म. आ. ३.७९–८५)। इसे 'बैद' नामान्तर भी प्राप्त था।

इसके शिष्य का नाम उत्तंक था। एक बार यह परदेश गया था, जिस समय अपने घर की एवं पत्नी की रक्षा करने के लिए इसने उत्तंक को कहा था। यह कार्य उत्तम

प्रकार से निभाने के कारण इसने उत्तंक को अनेकानेक आशीर्वाद प्रदान किये।'

अपनी शिक्षा समाप्त होने के पश्चात्, उत्तंक ने इसकी पत्नी को पौष्य राजा की पत्नी के कुण्डल गुरुदक्षिणा के रूप में प्रदान किये (उत्तंक देखिये)।

३. एक शिवभक्त राजा, जो सिंधुद्वीप राजा का भाई था।

वेददर्शन--देवदर्श नामक आचार्य का नामान्तर (देवदर्श देखिये)। इसने सुमन्तु से अथर्ववेद संहिता सीखी थी, जो आगे चल कर इसने अपने शौल्कायानि आदि शिष्यों को प्रदान की (भा. १२.७.१-२)।

वेदनाथ—एक राजा, जो ब्राह्मण के द्रव्य का अपहरण करने के कारण वानर बन गया था। अपने मित्र सिंधुद्वीप की सलाह के अनुसार, धनुष्कोटी तीर्थ में स्नान कर, यह वानरयोनि से मुक्त हुआ (स्कंद. १.३.१४)। इसे 'वेदभृतिपुत्र' एवं 'भालंकिपुत्र' नामान्तर भी प्राप्त थे।

वेदबाहु—कृष्ण के पुत्रों में से एक (भा. १०.९०.३४)।

२. रैवत मन्वन्तर का एक ऋषि।

वेदमित्र—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्य परंपरा में से मांडुकेय नामक आचार्य का शिष्य था। यह स्वयं शाकलगोत्रीय था, एवं व्याकरणशास्त्र के संबंधित इसके अनेकानेक मतों के उद्धरण ऋक्प्रातिशाख्य में प्राप्त है (ऋ. प्रा. ५२)।

इसके कुल पाँच शिष्य थे। इसके नाम के लिए 'देवमित्र' पाठभेद प्राप्त है (व्यास देखिये)।

वेदवती--एक राजकन्या, जो कुशध्वज जनक की कन्या थी। इसकी माता का नाम मालावती था। इसे सीता का पूर्वजन्मकालीन अवतार माना जाता है। जन्म होते ही इसने मुख से वेदध्वनि निकाला, जिस कारण इसे 'वेदवती' नाम प्राप्त हुआ।

इसके पिता की इच्छा थी कि, इसका विवाह विष्णु से किया जाय। एक बार शंभु नामक राक्षस ने इससे विवाह करना चाहा, किन्तु अपने पूर्वयोजना के अनुसार कुशध्वज ने उसे ना कह दिया। इस कारण क्रुद्ध हो कर, शंभु राक्षस ने कुशध्वज जनक का वध किया।

तपस्या—अपने पिता के मृत्यु की पश्चात्, यह पुष्करतीर्थ पर जा कर तपस्या करने लगी, जिस कारण अगले जन्म में विष्णु की पत्नी बनने का आशीर्वाद इसे प्राप्त हुआ। इसी आशीर्वाद के अनुसार, अपने अगले जन्म में यह श्रीविष्णुस्वरूपी राम दाशरथि राजा की पत्नी बनी।

अग्निप्रवेश--एक बार रावण ने इस पर बलात्कार करना चाहा, किंतु उससे अपनी मुक्तता कर इसने अग्निप्रवेश कर अपनी इज्जत बचायी। मृत्यु के पूर्व इसने रावण को शाप दिया था। राम दाशरथि के द्वारा रावण का वध होने की विधिघटना का यही प्रारंभ हुआ, जिसका स्मरण रावण को अपनी मृत्यु के समय हुआ था (ब्रह्मवै. २.१४.५२; वा. रा. उ. १७)

वेदवृध्द--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से कौथुम पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

वेदव्यास—एक सुविख्यात ऋषिसमुदाय। वैवस्वत मन्वन्तर के अठ्ठाईस द्वापारों में उत्पन्न होने वाले अठ्ठाईस वेद व्यासों की नामावलि पुराणों में प्राप्त है। ये सभी ऋषि वेदव्यास नाम से ही अधिक सुविख्यात है (ब्रह्मांड. २.३३.३३; ३५.११७-१२५; व्यास देखिये)।

२. कृष्ण द्वैपायन व्यास का नामान्तर (व्यास पाराशर्य देखिये)।

वेदशर्मन्--(सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शोणाश्व राजा का पुत्र था।

२. विदुर का एक मित्र, जो उसके साथ कालिंजर पर्वत पर गया था। वहाँ सिद्धों के द्वारा प्राप्त उपदेश के अनुसार, इसने सोमवती अमावास्या के दिन 'अघ-तीर्थ' पर स्नान किया, जिस कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. भू. ९१-९२)।

३. पिशाचयोनि में प्रविष्ट हुआ एक ब्राह्मण, जो मुनिशर्मन् नामक विष्णुभक्त ब्राह्मण के द्वारा मुक्त हुआ (पद्म. पा. ९४)।

४. शिवशर्मन् नामक विष्णुभक्त ब्राह्मण का पुत्र।

वेदशिरस्—एक शिवावतार, जो वाराहकल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर में से पंद्रहवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। सरस्वती नदी के उत्तरीतट पर हिमालय पर्वत के अंतर्भाग में स्थित वेदशीर्ष नामक स्थान में यह अवतीर्ण हुआ। इसका प्रमुख अस्त्र महावीर्य था, एवं इसके शिष्यों में निम्नलिखित चार शिष्य प्रमुख थेः— १. कुणि; २. कुणिबाहु; ३. कुशरीर; ४. कुनेत्रक (शिव. शत. ५; वायु. २३.१६६-१६८)।

२. एक भृगुवंशीय ऋषि, जो मार्कंडेय ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम मूर्धन्या (धूम्रा) था। इसकी पत्नी का नाम पीवरी था, जिससे इसे 'मार्कंडेय'

सामूहिक नाम धारण करनेवाले अनेकानेक पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. २.११.७; वायु. २८.६)।

एक बार इसके तप में बाधा डालने के लिए शुचि नाम एक अप्सरा इसके पास आयी, जिससे इसे एक कन्या उत्पन्न हुई। इस कन्या का हरण यमधर्म ने करना चाहा, जिस कारण इसने उसे नदी बनने का शाप दिया। काशी में स्थित 'धर्म' नद वही है (स्कंद ४.२.५९)।

३. (स्वा.) एक राजा, जो प्राण राजा का पुत्र था (भा. ४.१.४५)।

४. स्वारोचिष मन्वन्तर के विभु नामक इंद्र का पिता।

५. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

६. एक ऋषि, जो कृशाश्व ऋषि एवं धिषणा का पुत्र था। इसे पाताल में स्थित नागों से 'विष्णु-पुराण' का ज्ञान प्राप्त हुआ था, जो इसने आगे चल कर प्रमति नामक अपने शिष्य को प्रदान किया (विष्णु. ६.८.४७)।

वेदशेरक--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषि-गण।

वेदश्री--रैवत मन्वन्तर का एक ऋषि (ब्रह्मांड. २.३६.६२)।

वेदश्रुत--उत्तम मन्वन्तर का एक देव (भा. ८.१.२४)।

वेदस्पर्श--देवदर्श नामक आचार्य का नामान्तर। वायु में इसे कबंध ऋषि का शिष्य कहा गया है, एवं इसने अथर्ववेद के चार भाग कर उसे अपने चार शिष्यों में बाँट देने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (वायु. ६१.५०)।

वेधस्--ब्रह्मा का नामान्तर (भा. ८.५.२४)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार (मत्स्य. १४५-९९)।

वेन--(स्वा. उत्तान.) अंग देश का एक दुष्टकर्मा राजा, जो अंग एवं मृत्यु की मानसकन्या सुनीथा का पुत्र था। भागवत में इसे तेईसवाँ वेदव्यास कहा गया है। महाभारत में कर्दमपुत्र अनंग को इसका पिता कहा गया है (म. शा. ५९.९६-९९)।

अनाचार--यह शुरू से ही दुर्वृत्त था। यह अपने मातामह मृत्यु (अधर्म) के घर में पालपोस कर बड़ा हुआ था। इसके दुष्ट कर्मों के कारण, त्रस्त हो कर इसका पिता अंगदेश छोड़ कर चला गया। राज्यपद प्राप्त होते ही इसने यज्ञयागादि सारे कर्म बंद करवाये। यह स्वयं को ईश्वर का अवतार कहलाता था। इसके दुश्चरित्र के कारण, ऋषियों ने इसका वध किया (म. शां. ५९.१००)।

मृत-देह का मंथन--इसकी मृत्यु के पश्चात्, अंगवंश निर्वंश न हो इस हेतु इसकी माता सुनीथा ने इसके मृत-शरीर का दोहन करवाया। इसके दाहिनी जाँघ की मंथन से निषाद नामक एक कृष्णवर्णीय नाटा पुरुष उत्पन्न हुआ, जिससे आगे चल कर निषाद जाति-समूह के लोग उत्पन्न हुए। आगे चल कर ऋषियोंने इसके दाहिने हाथ का मंथन किया, जिससे पृथु वैन्य नामक चक्रवर्ति राजा उत्पन्न हुआ, जो साक्षात् विष्णु का अवतार था (म. शां. ५९.१०६)।

ऋषियों के द्वारा वेन का वध होने की, एवं इसके दाहिने हाथ के मंथन से पृथु वैन्य का जन्म होने की कथा सभी पुराणों में प्राप्त है (ह. वं. १.५.३-१६; वायु. ६२.१०७-१२५; भा. ४.१४; विष्णुधर्म. १.१०८; १.१३; ७.२९; ब्रह्म. ४; मत्स्य. १०.१-१०)।

महाभारत के अनुसार, इसकी दाहिनी जाँघ की मंथन से निषाद, एवं विंध्यगिरिवासी म्लेच्छों का निर्माण हुआ था (म. शां. ५९.१०१-१०३)। पद्म के अनुसार, यह ऋषियों के द्वारा मृत नही हुआ, बल्कि एक वल्मीक में छिप गया था (पद्म. भू. ३६-३८)।

वायु में--इस ग्रंथ में वेन के शरीर के दोहन की कथा कुछ अलग प्रकार से प्राप्त है। दुष्टप्रकृति वेन ने मरीचि आदि ऋषियों का अपमान किया, जिस कारण ऋषियों ने इसके हाथ एवं पाव पकड़ कर इसे नीचे गिराया। पश्चात् उन्होंने इसके हाथ एवं पाव खूब घुमाये, जिस कारण इसके दाहिने एवं बाये हाथ से क्रमशः पृथु वैन्य एवं निषाद का निर्माण हुआ। इनमें से निषाद का जन्म होते ही ऋषियों ने 'निषीद' कह कर अपना निषेध व्यक्त किया, जिस कारण इस कृष्णवर्णीय पुत्र को निषाद नाम प्राप्त हुआ। इस मंथन के बाद वेन मृत हुआ (वायु. ६१.१०८-१९३)।

इसके दो पुत्रों में से, पृथु इसके पिता अनंग के अंश से उत्पन्न हुआ था, एवं निषाद की उत्पत्ति इसके स्वयं के पापों से हुई थी। निषाद के रूप में इसका पाप इसके शरीर से निकल जाते ही यह पापरहित हुआ। पश्चात् तृणबिंदु ऋषि के आश्रम में इसने विष्णु की उपासना की, जिस कारण इसे स्वर्लोक की प्राप्ति हुई (पद्म. भू. ३९-४०; १२३-१२५)। महाभारत के अनुसार, अपनी मृत्यु के पश्चात् यह यमसभा में सूर्यपुत्र यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.१८)।

२. एक राजा, जो वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक था (म. आ. ७०.१३)।

वेन पार्थ—एक राजा, जिसके औदार्य की प्रशंसा तान्व पृथुपुत्र नामक आचार्य के द्वारा की गयी है (ऋ. १०.९३.१४)। 'पृथा' का वंशज होने से इसे 'पार्थ' मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा (ऋ. १०.९३.१५)।

लो. तिलकजी के अनुसार, वेन एक व्यक्ति का नाम न हो कर, आकाशस्थ ग्रह का नाम था (ऋ. १०.१२३)। किन्तु इस संबंध में निश्चित प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

वेन भार्गव—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.८५; १०.१२३)।

वेन वाजश्रवस--एक ऋषि, जो बाईसवाँ व्यास था (व्यास देखिये)।

वेश--एक दानव, जिसे इंद्र ने आयु राजा की रक्षा के लिए पराजित किया था (ऋ. ७.१८.११)। संभवतः 'दास वेश' एवं यह दोनों एक ही व्यक्ति होंगे (ऋ. २.१३.८)।

वैकर्ण--एक राजद्वय, जिनके इक्कीस जातियों (जनान्) का सुदास ने दाशराज्ञ-युद्ध में उन्मूलन किया था (ऋ. ७.१८.२१)। त्सीमर के अनुसार, वैकर्ण दो राजाओं का नाम न हो कर, कुरु एवं क्रिवि जातियों का सामूहिक नाम था (त्सीमर, अल्टिण्डिशे लेबेन १०३)।

एक जाति के रूप में विकर्ण लोगों का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. भी. ४७.१५), जो काश्मीर प्रदेश में बसे हुए थे। इससे प्रतीत होता है कि, ऋग्वेद में निर्दिष्ट वैकर्ण लोग इसी प्रदेश के रहनेवाले थे।

वैकर्णिक—वैकर्णेय नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकारगण का नामान्तर।

वैकर्णिनि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैकर्णेय—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण। पाठभेद-'वैकर्णिक'।

वैकालिनायन--वैकृति गालव नामक विश्वामित्र कुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

वैकुंठ--चाक्षुष एवं रैवत मन्वन्तरों में उत्पन्न अवतार।

२. रैवत मन्वन्तर का एक देवगण।

३. इंद्र का अवतार (इंद्र देखिये)।

४. एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'दीप-महात्म्य' बताने के लिए पद्म में कथन की गयी है (पद्म. ब्र. ३)।

वैकृति गालव—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'वैकालिनायन'।

वैक्लव--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैखानस--एक ऋषिविशेष, जो 'व्यपोहिनी' नामक यज्ञसंस्कार की दीक्षा ले कर उत्पन्न हुए थे। पुराणों में निम्नलिखित ऋषियों का निर्देश 'वैखानस संप्रदायी' ऋषि के नाते प्राप्त है:— १. नहुषपुत्र पृथु (मत्स्य. २४.५१), २. अगस्त्य, (मत्स्य. ६१.३७); ३. ययातिभ्राता यति (ब्रह्मांड. ३.६८.१४; ब्रह्म. १२.३; ह. वं. १.३०.३; मत्स्य. २४.५१)।

२. एक वैदिक ऋषिसमुदाय, जिसमें सौ ऋषि समाविष्ट थे (ऋ. ९.६६)। ये ब्रह्मा के नाखून से उत्पन्न हुए थे (तै. आं. १.२३)। पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार रहस्य देवमलिम्लुच ने मुनिमरण नामक स्थान में इनका वध किया था (पं. ब्रा. १४.४.७; तै. आ १.२३.३)। इस ऋषिसमूह में पुरुहन्मन् नामक ऋषि समाविष्ट था (तै. आ. १४.९.२९)।

३. एक धर्मशास्त्रकार, जिसका धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ 'वैखानस धर्मप्रश्न' नाम से सुविख्यात है। यह ग्रंथ कृष्णयजुर्वेदान्तर्गत धर्मसूत्र ग्रंथ माना जाता है, एवं अनंतशयनग्रंथावलि में मुद्रित किया गया है (क्र. २८; इ. स. १९१३)।

वैखानस धर्मप्रश्न--इस ग्रंथ में वानप्रस्थाश्रम ग्रहण करने का धार्मिक विधि विस्तारपूर्वक दिया गया है, एवं वानप्रस्थियों के लिए सुयोग्य आचार भी बताये गये है।

इस ग्रंथ में अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह से उत्पन्न संतानों के लिए सुयोग्य व्यवसाय भी बताये गये हैं। इसके साथ ही साथ निम्नलिखित विषयों की चर्चा भी इस ग्रंथ में प्राप्त है:- चार वर्ण एवं चार आश्रम के लोगों के कर्तव्य; संध्या, वैश्वदेव, स्नान, आचमन आदि के धार्मिक विधि, चार वर्णों के लोगों के लिए सुयोग्य व्यवसाय, आदि।

'वैखानस धर्मप्रश्न' के अनेक उद्धरण मनुस्मृति में प्राप्त हैं (मनु. ६.२१)। इसके अतिरिक्त इसके नाम पर 'वैखानस श्रौतसूत्र' नामक ग्रंथ भी उपलब्ध है।

४. चंपक नगरी एक राजा, जिसने मार्गशीर्ष शुक्ल एकादशी के व्रत का पुण्य अपने पितरों को दे कर उनका उद्धार किया (पद्म. उ. ३९)।

वैगायन--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैजभृत--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैजवापायन-बैजवापायन नामक आचार्य का नामान्तर।

वैजान--व्रश नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १३.३.१२)। विजान का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। वेबर के अनुसार, इस पैतृक नाम का सही पाठ 'वै+जानः' था (वेबर, इन्डिशे स्टूडियेन. १०.३२)।

वैदभतीपुत्र--एक आचार्य, जो कार्शकेयीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.२. काण्व)। पाठ-'वैधृतिपुत्र'।

वैडव--वसिष्ठ ऋषि का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ११.८.१४)। 'वीडु' का वंशज होने से इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। किन्तु सायण भाष्य में वसिष्ठ को वीड का पुत्र कहा गया है (तां. ब्रा. ११.८.१४)।

वैणव--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैतंड्य--(सो. आयु.) एक राजा, जो आयु (आप) राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.३.२४, वायु. ६६.२३)।

वैतरण--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम (ऋ. १०. ६१.१७)। भरत एवं वध्य्रश्व के भाँति, वैतरण के अग्नि का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है।

वैतहव्य--एक परिवार का सामूहिक नाम। एक ब्राह्मण की गाय भक्षण करने के कारण, इस परिवार के लोगों के पतन होने का निर्देश अथर्ववेद में प्राप्त है (अ. वे. ५.१८.१०-११; १९.१)। इन्हें सृंजय कहा गया है, किन्तु त्सीमर के अनुसार, वैतहव्य कोई स्वतंत्र लोग न हो कर, वह सृंजय लोगों की केवल उपाधि मात्र ही थी। अन्य अभ्यासक लोग इन्हें स्वतंत्र परिवार मानते हैं, एवं 'वीतहव्य का वंशज' इस अर्थ से वैतहव्य की निरुक्ति बताते हैं।

वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों का पैतृक नाम 'वैतहव्य' दिया गया है:-१. अरुण (ऋ. १०.९१); २. वीतहव्य आंगिरस (ऋ. ६.१५); सृंजय (अ. वे. ५.१९.१)।

वैतान--एक आचार्य, जो कृष्णयजुर्वेदान्तर्गत 'वैतान श्रौतसूत्र' नामक ग्रंथ का रचियता माना जाता है।

वैताल--एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से जातुकर्ण्य नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद-'वैतालिक'।

वैतालिक--एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से शाकपूणि नामक आचार्य का शिष्य था। भागवत में इसे 'वैताल' कहा गया है।

वैताली--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६२)।

वैद--हिरण्यदत नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ३.६.४; ऐ. आ. १०.९)। विद का वंशज होने से इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। पाठभेद-'बैद'।

वैदथिन--ऋजिश्वन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ४.१६.१३; ५.२९.११)। विदथिन् का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैददश्वि--एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:- १. तरंत (ऋ. ५.६१.१०); २. पुरुमीळ्ह (पं. ब्रा. १३. ७.१२; जै. ब्रा. १.५१; ३.१३९)।

वैदभतीपुत्र--एक आचार्य, जो कार्शकेयीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य, एवं क्रौंचिकीपुत्र नामक आचार्यद्वय का गुरु था (बृ. उ. ६.४.३२ माध्यं.)। बृहदारण्यक उपनिषद के काण्व संस्करण में इसे वैदभतीपुत्र कहा गया है (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)। शतपथ ब्राह्मण में इसे भालुकीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (श. ब्रा. १४.९.४.३२)।

वैदर्भ--भीम नामक राजर्षि का 'देशीय' नाम (ऐ. ब्रा. ७.३४.९)। विदर्भ देश का राजा होने के कारण, उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैदर्भि--एक राजा, जिसने अपनी लोपामुद्रा नामक कन्या अगस्त्य को विवाह में दी थी (म. अनु. १३७. ११)।

२. भार्गव नामक आचार्य का पैतृक नाम (प्र. उ. १. १)। विदर्भ का वंशज होने के कारण उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैदर्भी--एक देशीय नाम, जो निम्नलिखित विदर्भ राजकन्याओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:- १. दमयन्ती; २. रुक्मिणी; ३. लोपामुद्रा; ४. सगरपत्नी केशिनी; ५. मलयध्वजपत्नी।

वैदेह--(सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार निमि राजा का पुत्र था। निमि राजा के वंशजों के लिए भी यह नाम प्रयुक्त है (भा. ९.१३.३)।

२. एक देशीय नाम, जो विदेह देश के निम्नलिखित राजाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:- १. जनक (तै. ब्रा. ३.१०.९.२१); २. नमी साप्य (पं. ब्रा. २५. १०.१७)।

वैदेहरात--विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक ऋषिगण। पाठभेद-'देवराज'।

वैदेही—जनमेजयपुत्र शतानीक की पत्नी।

वैद्य--वरुण एवं सुनादेवी के पुत्रों में से एक। इसके पुत्रों के नाम घृणि एवं मुनि थे, जो आपस में लड़ कर मर गये (वायु. ८४.६-८)।

२. सुखदेवों में से एक।

वैद्यग--अंगिरस्कुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

वैद्यनाथ--शिव का एक अवतार, जो रावण की प्रार्थना से चिताभूमि में प्रकट हुआ था (शिव. शत. ४२)। कई विद्वानों के अनुसार, महाराष्ट्र में स्थित 'परली वैजनाथ' का शिवस्थान यही है (ज्योतिर्लिंग देखिये)।

वैधस—हरिश्चंद्र नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१३.१; सां. श्रौ. १५.१७.१)। वेधस् का वंशज होने से उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैधृत--धर्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र (भा. ८. १३.२५)।

वैधृति--विधृति के पुत्रों का सामूहिक नाम, जिन्होंने सारे वेद अपने मन में एकत्रित कर रखे थे (भा. ८.१.२९)।

२. तामस मन्वन्तर का देवगण।

३. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के धर्मसेतु नामक अवतार की माता।

४. धर्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

५. तामस मन्वन्तर के देवों की माता।

वैधेय--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

वैन--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से शृंगीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था।

वैनतेय--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म.उ.९९.१०)।

२. गरुड का नामान्तर (मत्स्य. १५०.२१४)।

वैनहोत्र--(सो. क्षत्र.) क्षत्रवृद्धवंशीय वीतिहोत्र राजा का नामान्तर। विष्णु में इसे धृष्टकेतु राजा का पुत्र कहा गया है।

वैन्य—भृगुकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

२. एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित राजर्षियों के लिए प्रयुक्त किया गया है :—१. अत्रि; २. पृथि; ३. पृथु; ४. पृथी (ऋ. ८.९.१०; पं. ब्रा. १३.५.२०; श. ब्रा. ५.३.५.४)।

वैपश्चित--तार्क्ष्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा, १३.४.३.१३)।

वैपश्चित दार्ढजयन्ति गुप्त लौहित्य--एक आचार्य, जो वैपश्चित दार्ढजयन्ति दृढजयन्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)। विपश्चित्, दृढजयन्त, एवं लोहित का वंशज होने के कारण इसे 'वैपश्चित', 'दार्ढजयन्ति' एवं 'लौहित्य' ये पैतृक नाम प्राप्त हुए होंगे।

वैपश्चित दार्ढजयन्ति दृढजयन्त लौहित्य—एक आचार्य, जो विपश्चित दृढजयन्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

वैभांडक अथवा **वैभांडकि**--पूर्णभद्र नामक आचार्य का पैतृक नाम (पूर्णभद्र देखिये)।

वैभूवस—त्रित नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. १०.४६.३)।

वैभीषणि--विभीषण का पुत्र, जिसने मणिकुंडल नामक वैश्य को शापमुक्त किया था (मणिकुंडल देखिये)।

वैमृग—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.११)।

वैयश्व--विश्वमनस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ८. २३.२५; २४.१३)। व्यश्व का वंशज होने से उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैयाघ्रपदीपुत्र—एक आचार्य, जो काण्वीपुत्र एवं कापिपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.१ काण्व.)। इसके शिष्य का नाम कौशिकिपुत्र था। व्याघ्रपद्य के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने से, इसे यह मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैयाघ्रपद्य--एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है :-- १. इंद्रद्युम्न भाल्लवेय (श. ब्रा. १०.६.१.८; छां. उ. ५. १४.१); २. बुडिल आश्वतराश्वि (छां. उ. ५.१६.१); ३. गोश्रुति (छां. उ. ५.२.३; सां. आ. ९.७); ४. राम क्रातुजातेय (जै. उ. ब्रा. ३.४०.१; ४.१६.१); ५. उपमन्यु वासिष्ठ (ऋ. ९.९७.१३-१५)।

२. एक आचार्य (ला. श्रौ. ४.९.१७)।

३. युधिष्ठिर के द्वारा अज्ञातवास में धारण किया गया नाम (म. वि. ३२.४४)।

वैयासकि—शुक का पैतृक नाम।

वैयास्क--छंदशास्त्र का एक आचार्य (ऋ. प्रा. १७. २५)। रौथ के अनुसार, यहाँ निरुक्तकार यास्क की ओर संकेत किया गया है, एवं 'वैयास्क' का सही रूप वै + यास्क है।

वैरपरायण—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैराज—महाभारत में निर्दिष्ट सात प्रमुख पितरों में एक (पितर देखिये)। बाकी छः पितरों के नाम निम्न थेः— १. अग्निष्वात्त; २. सोमप; ३. गार्हपत्य; ४. एकशृंग; ५. चतुर्वेद एवं ६. कल (म. स. ११.१३३*)।

ब्रह्मांड में इन्हें विरजस् नामक प्रजापति के पुत्र कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७.२१२)। मत्स्य में इन्हें अमूर्त पितरों में से एक कहा गया है। प्रारंभ में ये योगी थे। वहाँ से योगभ्रष्ट होने पर, इन्हें सनातन ब्रह्मलोक में पुनः जन्म प्राप्त हुआ। वहाँ ब्रह्मा के एक दिन तक उसके साथ रहने पर, अगले कल्पारंभ में इन्हें ब्रह्मवादिन् के रूप में पुनः जन्म प्राप्त हुआ। इस जन्म में इन्हें अपने पूर्वजन्म का स्मरण हुआ, एवं ये पुनः एक बार योगाभ्यास में मग्न हुए।

आगे चल कर इसी योगसाधना से इन्हें मुक्ति प्राप्त हुई। इनकी मानसकन्या का नाम मेना था, जो हिमवत् की पत्नी थी। ये पितर अत्यंत परोपकारी रहते है, एवं योगाभ्यास करनेवाले हर एक व्यक्ति को सहायता पहुँचाते है (मत्स्य. १३.३-६)।

वैरूप--एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया हैः-- १. अष्टादंष्ट्र (पं. ब्रा. ८.९.२१); २. नभःप्रभेदन (ऋ. १०.११२); ३. शतप्रभेदन (ऋ. १०.११३); ४. सध्रि (ऋ. १०.११४)।

वैरोचन--असुरराज बलि का पैतृक नाम, जो उसे विरोचन का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था।

वैरोचनी—त्वष्टृपत्नी यशोधरा का पैतृक नाम, जो उसे विरोचन असुर की कन्या होने के कारण प्राप्त हुआ था।

वैवशप—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

वैवस--भृगुकुलोत्पन्न एक प्रवर।

वैवस्वत--एक पैतृक नाम, जो वेदों में निम्नलिखित व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त किया गया हैः— १. यम (ऋ. ९.११३.८); २. मनु (ऋ. १०.४७.१७; अ. वे. ८.१०)।

वैवस्वत मनु—वैवस्वत नामक सातवे मन्वन्तर का अधिपति मनु, जिसे पुराणों में विवस्वत एवं संज्ञा का पुत्र कहा गया है (मनु वैवस्वत देखिये)।

वैशंपायन--एक महर्षि, जो महर्षि व्यास के चार वेदप्रवर्तक शिष्यों में से एक, एवं कृष्ण यजुर्वेदीय 'तैत्तिरीय संहिता' का आद्य जनक था। 'विशंप' का वंशज होने के कारण, इसे 'वैशंपायन' नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में से केवल तैत्तिरीय आरण्यक एवं गृह्यसूत्रों में वैशंपायन का निर्देश मिलता है। ऋग्वेद के कई मंत्रों का नया अर्थ लगाने का युगप्रवर्तक कार्य वैशंपायन ने किया। ऋग्वेद में 'सप्त दिशो नाना सूर्याः' नामक एक मंत्र है (ऋ. ९.११४.३.), जिसका अर्थ 'पृथ्वी के सात दिशाओं में सात सूर्य हैं, एवं श्रौतकर्म में सात दिशाओं में अधिष्ठित हुए सात ऋत्विज (होता) ही सूर्यरूप है,' ऐसा अर्थ वैशंपायन के काल तक किया जाता था। किंतु वैशंपायन ने ऋग्वेद में अन्यत्र प्राप्त 'यद्याव इंद्र सहस्त्रं सूर्या अनु' (ऋ. ८. ७०.५), के आधार से सिद्ध किया कि, ऋग्वेद में निर्दिष्ट सूर्यों की संख्या सात नही, बल्कि एक सहस्त्र है (तै. आ. १७)।

पाणिनीय व्याकरण में—एक वैदिक गुरु के नाते, वैशंपायन का निर्देश पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में प्राप्त है (पा. सू. ४.३.१०४)। पतंजलि के 'व्याकरण महाभाष्य' में इसे कठ एवं कलापिन् नामक आचार्यों का गुरु कहा गया है।

कृष्णयजुर्वेद का प्रवर्तन--वैशंपायन ऋषि 'निगद' (कृष्णयजुर्वेद) का प्रवर्तक, एवं वेदव्यास के चार प्रमुख वेदप्रवर्तक शिष्यों में से एक था। वेद व्यास के पैल, वैशंपायन, जैमिनि एवं सुमंतु नामक चार प्रमुख शिष्य थे, जिन्हें उसने क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद का ज्ञान प्रदान किया था (बृ. उ. २.६.३; ब्रह्मांड. १.१.११)। वैशंपायन को संपूर्ण यजुर्वेद का ज्ञान प्राप्त होने का गौरवपूर्ण उल्लेख महाभारत एवं पुराणों में भी प्राप्त है (म. आ. १.६१-६३*; ५७.७४; शां. ३२७. १६-१८; ३२९; ३३७.१०-१२; वायु. ६०.१२-१५; ब्रह्मांड. २.३४.१२-१५; विष्णु. ३.४.७-९; लिंग. १. ३९. ५७-६०; कूर्म. १.५२.११-१३)।

शिष्यशाखा--वेदव्यास से प्राप्त 'कृष्णयजुर्वेद' की वैशंपायन ने ८६ संहिताएँ बनायी, एवं उसे याज्ञवल्क्य के सहित, ८६ शिष्यों में बाँट दी। विष्णु के अनुसार, इसने २७ संहिताएँ बनायी, जो अपने २७ शिष्यों बाँट दी (विष्णु. ३.५.५-१३)।

याज्ञवल्क्य का तिरस्कार--विष्णु में वैशंपायन एवं इसके शिष्य याज्ञवल्क्य के बीच हुए संघर्ष का निर्देश प्राप्त है (याज्ञवल्क्य देखिये)। अपने अन्य शिष्यों के समान, वैशंपायन ने याज्ञवल्क्य को भी कृष्णयजुर्वेद संहिता सिखायी थी। किन्तु संघर्ष के कारण यह याज्ञवल्क्य से अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं इसने उसे कहा, 'मैंने तुम्हें जो वेद सिखाये है, उन्हें तुम वापस कर दो'। अपने गुरु की आज्ञानुसार, याज्ञवल्क्य ने वैशंपायन से प्राप्त वेदविद्या का वमन किया, जिसे वैशंपायन के अन्य शिष्यों ने तित्तिर पक्षी बन कर पुनः उठा लिया। इसी कारण कृष्णयजुर्वेद को 'तैत्तिरीय' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ३०६)।

कृष्णयजुर्वेद का प्रसार--याज्ञवल्क्य के अतिरिक्त इसके बाकी ८५ शिष्यों ने आगे चल कर कृष्ण यजुर्वेद के प्रसारण का कार्य किया। भौगोलिक विभेदानुसार, इस शिष्यपरंपरा के उत्तर भारतीय, मध्य भारतीय एवं पूर्व भारतीय ऐसे तीन विभाग हुए, जिनका नेतृत्व क्रमशः श्यामायनि, आसुरि एवं आलंबि नामक शिष्य करने लगे (ब्रह्मांड. २.३१.८-३०; वायु. ६१. ५-३०)। आगे चल कर कृष्ण यजुर्वेद को 'चरक' नाम प्राप्त हुआ, जिस कारण वैशंपायन के यह शिष्य 'चरकाध्वर्यु' अथवा 'तैत्तिरीय' नाम से सुविख्यात हुए।

वैशंपायन के द्वारा प्रणीत कृष्णयजुर्वेद की ८५ शाखाओं में से तैत्तिरीय, मैत्रायणी, कठ एवं कपिष्ठल शाखाएँ केवल आज विद्यमान हैं, बाकी विनष्ट हो चुकी हैं।

महाभारत का कथन--वैशंपायन श्रीव्यास के केवल कृष्णयजुर्वेद-परंपरा का ही नहीं, बल्कि महाभारत-परंपरा का ही महत्त्वपूर्ण शिष्य था। इसी कारण महाभारत-परंपरा में भी वैशंपायन एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण आचार्य माना जाता है।

महाभारत से प्रतीत होता है कि, श्रीव्यास ने महाभारत का स्वयं के द्वारा विरचित 'जय' नामक आद्य ग्रंथ वैशंपायन को ही सर्वप्रथम सुनाया था। व्यास के द्वारा विरचित यह ग्रंथ केवल आठ हज़ार आठ सौ श्लोकों का छोटा ग्रंथ था, एवं उस के कथा का प्रतिपाद्य विषय पाण्डवों की विजय होने के कारण, उसे 'जय' नाम प्रदान किया गया था।

व्यास के द्वारा 'जय' ग्रंथ उत्तम-इतिहास, अर्थशास्त्र, एवं मोक्षशास्त्र का ग्रंथ था, एवं पौरुष निर्माण की सभी शिक्षाएँ उसमें अंतर्भूत थी। महाभारत में 'जय' ग्रंथ का निर्देश अनेक बार प्राप्त है, एवं महाभारत के प्रारंभ में उसका निर्देश निम्न शब्दों में किया गया है--

> नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
> देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्।

'भारत' ग्रन्थ का निर्माण--अपने गुरु व्यास के द्वारा कथन किये गये 'जय' ग्रन्थ के आधार पर वैशंपायन ने 'भारत' नामक अपने सुविख्यात ग्रंथ की रचना की, जिसमें कुल चौबीस हज़ार श्लोक थे। इस प्रकार यह ग्रंथ व्यास के आद्य ग्रन्थ की अपेक्षा काफ़ी विस्तृत था, किन्तु फिर भी महाभारत के प्रचलित संस्करण में उपलब्ध विविध आख्यान एवं उपाख्यान उसमें नहीं थे:--

> चतुर्विंशति-साहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्।
> उपाख्यानैर्विना तावत् भारतं प्रोच्यते बुधैः॥
> (म. आ. ६१)।

भारत ग्रन्थ का कथन--स्वयं के द्वारा विरचित भारत ग्रंथ का कथन, इसने सर्वप्रथम जनमेजय राजा के द्वारा सर्पों की राजधानी तक्षशिला नगरी में किये गये सर्पसत्र के समय किया।

यह स्वयं जनमेजय राजा का राजपुरोहित था, इसी कारण जनमेजय के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर इसने 'भारत' ग्रंथ का कथन किया। अपने इस ग्रंथ का वर्णन करते समय इसने कहा, 'यह ग्रंथ हिमवत् पर्वत एवं सागर जैसा विशाल, एवं अनेक रत्नों से युक्त है। इसी कारण--

> धर्मे चार्थे च कामे च, मोक्षे च भरतर्षभ।
> यदिहास्ति तदन्यत्र, यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।
> (म. आ. ५६.३३. स्व. ५.३८)।

(इस संसार में धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष पुरुषार्थों के संबंध में जो भी ज्ञान उपलब्ध है, वह इस ग्रंथ में समाविष्ट किया गया है। इसी कारण यह कहना ठीक होगा कि, जो कुछ भी ज्ञानधन संसार में है, वह यहाँ उपस्थित है, किंतु इस ग्रंथ में जो नहीं है, वह संसार में अन्यत्र प्राप्त होना असंभव है)।

वैशंपायन कृत आस्तीक-पर्व--वैशंपायन के द्वारा विरचित 'भारत' ग्रंथ में 'आस्तीक-पर्व' महत्त्वपूर्ण माना जाता है, जहाँ अपनी ग्रंथरचना की पार्श्वभूमि वैशंपायन के द्वारा निवेदित की गयी है। यहाँ जनमेजय के सर्पसत्र

की सारी चर्चा विस्तृत रूप में दी गयी है, एवं इसी सत्र में भारत ग्रंथ सर्वप्रथम कथन किये जाने का निर्देश वहाँ स्पष्ट रूप से प्राप्त है (म. आ. ५३)।

'भारत' ग्रन्थ का प्रचार--वैशंपायन के 'भारत' ग्रंथ को को सौति ने काफ़ी परिवर्धित किया, एवं एक लक्ष श्लोकों का यह महाभारत ग्रंथ, शौनकादि ऋषियों के द्वारा नैमिषारण्य में आयोजित द्वादशवर्षीय सत्र में सर्वप्रथम कथन किया। अनेक आख्यान एवं उपाख्यान सम्मिलित किये जाने के कारण, सौति के इस महाभारत ग्रन्थ को विस्तार काफ़ी बढ़ गया था। उसी परिवर्धित रूप में महाभारत ग्रंथ आज उपलब्ध है।

व्यास, वैशंपायन एवं सौति के द्वारा विरचित 'जय' 'भारत', एवं 'महाभारत' ग्रंथों का रचनाकाल क्रमशः ३१०० ई. पू. २५०० ई. पू. एवं २००० ई. पू. लगभग माना जाता है।

भविष्य के अनुसार, व्यास के द्वारा प्राप्त 'जय' ग्रंथ इसने सुमन्तु को कथन किया, जो आगे चल कर सुमन्तु ने जनमेजय पुत्र शतानीक राजा को कथन किया (भवि. ब्राह्म. १.३०-३८)।

याज्ञवल्क्य से विरोध—वैशंपायन के उत्तरकालीन आयुष्य में, याज्ञवल्क्य से इसका 'यजुर्वेद संहिता' से संबंधित विवाद बढ़ता ही गया, यहाँ तक कि, स्वयं जननेजय राजा ने भी वैशंपायन के 'कृष्णयजुर्वेद' का त्याग कर याज्ञवल्क्य के द्वारा प्रणीत 'शुक्लयजुर्वेद' को स्वीकार किया। स्वयं के द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में उसने इसे टाल कर, याज्ञवल्क्य को अपने यज्ञ का ब्रह्मा बनाया।

आगे चल कर वैशंपायन एवं याज्ञवल्क्य का यह वादविवाद इतना बढ गया कि, उस कारण जनमेजय को राज्यत्याग करना पड़ा (मत्स्य. ५०.५७-६४; वायु. ९९.२५०-२५५; याज्ञवल्क्य वाजसनेय, एवं जनमेजय ८. देखिये)।

आश्वलायन श्रौतसूत्र एवं हिरण्यकेशिन् लोगों के पितृतर्पण में वैशंपायन का निर्देश प्राप्त है (आ. श्रौ. ३.३; स. गृ. २०.८-२०)। इसके नाम पर 'नीतिप्रकाशिका' नामक अन्य एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जिसका अंग्रेजी अनुवाद डॉ. ओपर्ट के द्वारा किया गया है। इस ग्रंथ में शस्त्रों के साथ बंदूक के बारुद का उल्लेख भी प्राप्त है।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैः– १. वैशंपायन-संहिता; २. वैशंपायन-नीतिसंग्रह; ३. वैशंपायन-स्मृति; ४. वैशंपायन नीतिप्रकाशिका (C. C)।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित एक ऋषि (भा. १०.७४.८)।

४. एक ऋषि, जिसका शौनक ऋषि के साथ तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (वायु. ९९.२५१)।

वैशाख्य—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से कौथुम पाराशर्य नामक ऋषि का शिष्य था।

वैशाल--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद (ब्रह्मांड पुराण)– 'वैशालिन्'।

वैशालि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैशालिनी--अविक्षित् राजा की पत्नी, जो मरुत्त आविक्षित राजा की माता थी। इसके पिता का नाम विशाल था। इसके स्वयंवर के समय अविक्षित् राजा ने इससे विवाह करना चाहा। किन्तु अन्य राजाओं ने उसे पराजित कर, इसका पुनः स्वयंवर करने की आज्ञा विशाल राजा को दी। किन्तु इसी समय, अविक्षित् राजा के पिता करंधम ने उपस्थित राजाओं को परास्त कर इसका हरण किया, एवं अपने पुत्र अविक्षित् से इसका विवाह कराया।

अविक्षित् राजा से इसे मरुत्त आविक्षित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जो अपने समय का सर्वश्रेष्ठ सम्राट् था। इसके पति अविक्षित् के द्वारा सर्पयज्ञ किये जाने पर, इसने अपने पुत्र मरुत्त के द्वारा सर्पों को अभय दिया था (मार्क. ११९-१२६)।

इसके अतिरिक्त अविक्षित् राजा की निम्नलिखित पत्नियाँ थी, जो सभी उसे स्वयंवर में प्राप्त हुई थीः— १. हेमधर्मकन्या वरा; २. सुदेवकन्या गौरी; ३. बलिकन्या सुभद्रा; ४. वीरकन्या लीलावती; ५. वीरभद्रकन्या विभा; ६. भीमकन्या मान्यवती, एवं ७. दंभकन्या कुमुद्वती (मार्क. ११९.१६-१७)।

वैशालेय—तक्षक नामक आचार्य का पैतृक नाम (अ. वे. ८.१०.१९)। विशाल का वंशज होने से, इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैशीपुत्र—एक व्यक्ति (तै. ब्रा. ३.९.७.३; श. ब्रा. १३.२)। एक वैश्यपत्नी का पुत्र होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैश्येश्वर—एक शिव-अवतार, जो महानंदा के उद्धार के लिए अवतीर्ण हुआ था (महानंदा देखिये)।

वैश्रवण—कुबेर का पैतृक नाम, जो उसे विश्रवस् ऋषि का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था। प्राचीन साहित्य में सर्वत्र इसे 'यक्षराज' कहा गया है, केवल ब्रह्मांड में इसका स्वरूप राक्षसों जैसा बताया गया है। यह महाहनु, शंकुकर्ण एवं ह्रस्वबाहु था। इसका शरीर बड़ा था, एवं सिर मोटा था। इसके केस भूरे थे एवं इसके शरीर का वर्ण पिंगा था। इस प्रकार इसका शरीर जन्म से ही अत्यंत विरूप होने के कारण, इसे कुबेर नामान्तर प्राप्त हुआ था (ब्रह्मांड. ३.८.४०-४४; कुबेर देखिये)।

महाभारत में मुचकुंद राजा से हुआ इसका संवाद प्राप्त है, जो 'मुचकुंद-वैश्रवण संवाद' नाम से प्रसिद्ध है (म. उ. १३०. ८-१०; मुचकुंद देखिये)।

वैश्वानर—इंद्रसभा का एक ऋषि।

२. एक अग्नि, जो भानु (मनु) नामक अग्नि का प्रथम पुत्र था। इसकी उपासना के लिए पाँच वैश्वदेव-विधि बताये गये है (भा. २.२.२४)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। इसकी उपदानवी, हयशीरा, पुलोमा एवं कालका नाम चार कन्याएँ थी, जिनमें से अंतिम दो कन्याओं का विवाह कश्यप प्रजापति से हुआ था (भा. ६.६.६)।

वैश्वानरि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैश्वामित्र—एक पैतृक नाम, जो विश्वामित्र के पुत्र एवं वंशजों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। ऋग्वेद में निम्नलिखित सूक्तद्रष्टाओं के लिए 'वैश्वामित्र' पैतृक नाम प्रयुक्त किया गया है:—१. अष्टक (ऋ. १०.१०४); २. कत (ऋ. ३.१७); ३. पूरण (ऋ. १०.१६०); प्रजापति (ऋ. ३.३८.४); ५. मधुच्छंदस् (ऋ. १.१-१०); ६. रेणु (ऋ. ९.७०)।

ऐतरेय ब्राह्मण में, देवरात के लिए भी इस पैतृक नाम का प्रयोग किया गया है (ऐ. ब्रा. ७.१७)।

वैष्टपुरेय—एक आचार्य, जो रौहिणायन एवं शांडिल्य नामक आचार्यों का शिष्य था (बृ. उ. २.५.२०; ४.५.२५ माध्यं.)। विष्टपुर का वंशज होने से, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैसृप—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

वैहीनरी—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वोढु—एक आचार्य, जिसका निर्देश शुक्लयजुर्वेदीय लोगों के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में प्राप्त है (पा. गृ. परिशिष्ट; मत्स्य. १०८;१०२.१८) अन्य पुराणों में भी इसे एक सिद्धिप्राप्त ब्रह्मर्षि कहा गया है (वायु. १०१.३३८; ब्रह्मांड. ४.२.२७३; कूर्म. १.५३.१५)।

वोहलि—एक आचार्य, जिसका निर्देश ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में प्राप्त है (दे.भा. ११.२०)।

वौलि—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वौशडि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

व्यंस—एक दानव, जो इंद्र का शत्रु था (ऋ. २.१४.५)। सायणाचार्य इसे व्यक्तिवाचक नाम नहीं मानते।

व्यश्व—एक ऋषि, जो अश्विनों की कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था (ऋ. १.११२.१५)। ऋग्वेद के आठवें मंडल के अनेक सूक्तों में इसका निर्देश प्राप्त है, जिनकी रचना संभवतः इसके विश्वमनस् वैयश्व नामक शिष्य के द्वारा की गयी थी (ऋ. ८.२३.१६; २३; २४.२२; २६.९)। ऋग्वेद में अन्यत्र एक प्राचीन ऋषि के नाते इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.९.१०; ९.६५.७)।

२. एक जातिविशेष, जिसमें वश अश्व्य नामक आचार्य उत्पन्न हुआ था (ऋ. ८.२४.२८)।

व्यश्व आंगिरस—एक साम एवं सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. ८. २६; पं. ब्रा. १४.१०.९)।

व्यष्टि—एक आचार्य, जो सनारु नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम विप्रचित्ति था (बृ. उ. ४.५.२२; ४.५.२८ माध्यं.)।

व्याघ्र—एक राक्षस, जो यातुधान नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम निरानंद था (ब्रह्मांड. ३.७.७९)।

२. एक यक्ष, जो भाद्रपद माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है।

व्याघ्रकेतु—पाण्डव पक्ष का एक पांचाल योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया (म. क. ४०.४६-४८)।

व्याघ्रदत्त—मगध देश का एक राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था। सात्यकि ने इसका वध किया (म. द्रो. ८२.३२)।

२. पाण्डवों के पक्ष का एक पांचाल योद्धा, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया। इसके अश्व

कृष्ण-रक्त ऐसे संमिश्र रंग के थे (म. द्रो. २२.१६६*, पंक्ति. १-२)।

३. एक पाण्डवपक्षीय राजा, जो अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. क. ४.३७*)।

व्याघ्रपद—वसिष्ठ ऋषि का एक पुत्र। यह व्याघ्रयोनि में उत्पन्न होने के कारण इसे 'व्याघ्रपद' नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. ५३.३०)। इसके उपमन्यु एवं धौम्य नामक दो पुत्र थे, जिसमें से उपमन्यु को 'वैयाघ्रपद' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. १४.४५)।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

व्याघ्रपाद् वासिष्ठ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९७.१६-१८)।

२. एक स्मृतिकार जिसके नाम पर एक स्मृतिग्रंथ उपलब्ध है (C. C.)।

व्याघ्रहन्—एक राक्षस, जो उर्ध्वग्रीवी नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम शरभ था (ब्रह्मांड. ३.७.२०७)।

व्याघ्राक्ष—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५४)।

व्याज—एक देव, जो भृगु ऋषि का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.१.७९)।

२. तुषित देवों में से एक।

व्याघ्री—वसिष्ठ ऋषि की पत्नी। इसके कुल १९ गोत्रकार पुत्र थे, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख थे:—१. व्याघ्रपाद २. मन्थ; ३. बादलोम; ४. जाबालि; ५. मन्यु; ६. उपमन्यु; ७. सेतुकर्ण आदि (म. अनु. ५३.३०-३२ कुं.)।

व्याडि दाक्षायण—एक सुविख्यात व्याकरणकार जो 'संग्रह' नामक वैदिक व्याकरणविषयक ग्रन्थ का कर्ता माना जाता है। इसका यही ग्रन्थ लुप्त होने पर, पतंजलि ने व्याकरण महाभाष्य नामक ग्रंथ की रचना की थी। अमरकोश के अनेकानेक भाष्यग्रन्थों में, व्याडि एवं वररुचि को व्याकरणशास्त्र के अंतर्गत लिंगभेदादि के शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ आचार्य कहा गया है।

व्याकरण महाभाष्य में एवं काशिका में इसका निर्देश क्रमशः 'दाक्षायण' एवं 'दाक्षि' नाम से प्राप्त है (महा. २.३.६६; काशिका. ६.२.६९)। काशिका के अनुसार, दाक्षि एवं दाक्षायण समानार्थि शब्द माने जाते थे (काशिका. ४.१.१७, तत्रभवान् दाक्षायणः दाक्षिर्वा)।

वंश—आचार्य पाणिनि दाक्षीपुत्र नाम से सुविख्यात था। इसी कारण 'दाक्षायण' व्याडि एवं 'दाक्षीपुत्र' पाणिनि अपने मातृवंश की ओर से रिश्तेदार थे, ऐसा माना जाता है।

व्याडि की बहन का नाम व्याड्या था (पा. सू. ४.१.८०), एवं पाणिनि की माता का नाम दाक्षी था। कई अभ्यासकों के अनुसार, व्याड्या एवं दाक्षी दोनों एक ही थे, एवं इस प्रकार व्याडि आचार्य पाणिनि के मामा थे। किंतु वेबर के अनुसार, इन दो व्याकरणकारों में दो पीढ़ीयों का अंतर था, एवं 'ऋक्प्रातिशाख्य' में निर्दिष्ट व्याडि पाणिनि से उत्तरकालीन था।

संभवतः इसके पिता का नाम व्यड था, जिस कारण इसे 'व्याडि' पैतृक नाम हुआ होगा। इसके 'दाक्षायण' नाम से इसके वंश के मूळ पुरुष का नाम दक्ष विदित होता है। किंतु अन्य कई अभ्यासक, 'दाक्षायण' इसका पैतृक नहीं, बल्कि 'दैशिक' नाम मानते है, एवं इसे दाक्षायण देश का रहनेवाला बताते है। मत्स्य में दाक्षि को अंगिराकुलोत्पन्न ब्राह्मण कहा गया है (मत्स्य १९५.२५)।

ऋक्प्रातिशाख्य में—शौनक के 'ऋक्प्रातिशाख्य' में वैदिक व्याकरण के एक श्रेष्ठ आचार्य के नाते व्याडि का निर्देश अनेक बार मिलता है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह शौनक के शिष्यों में से एक था। अपने 'विकृतवल्ली' ग्रंथ के आरंभ में इसने आचार्य शौनक को नमन किया है।

पाणिनीय व्याकरण का व्याख्याता—व्याडि वैदिक व्याकरण का ही नहीं, बल्कि पाणिनीय व्याकरण का भी श्रेष्ठ भाष्यकार था—

> **रसाचार्यः कविर्व्याडिः शब्दब्रह्मैकवाङ्मुनिः।**
> **दाक्षीपुत्रवचोव्याख्यापटुर्मीमांसाग्रणिः।**
> (समुद्रगुप्तकृत 'कृष्णचरित' १६)।

[संग्रहकार व्याडि पाणिनि के अष्टाध्यायी का ('दाक्षीपुत्रवचन') का श्रेष्ठ व्याख्याता, रसाचार्य, एवं मीमांसक था।]

इसके 'मीमांसाग्रणि' उपाधि से प्रतीत होता है कि, इसने मीमांसाशास्त्र पर भी कोई ग्रंथ लिखा होगा। पतंजलि के व्याकरण-महाभाष्य में इसे 'द्रव्यपदार्थवादी' कहा गया है (महा. १.२.६४)। अष्टाध्यायी में भी 'व्याडिशाला' शब्द का निर्देश प्राप्त है, जिसका संकेत संभवतः इसीके ही विस्तृत शिष्यशाखा की ओर किया गया होगा (पा. सू. ६.२.८६)।

संग्रह—व्याडि के द्वारा रचित ग्रन्थों में 'संग्रह' श्रेष्ठ ग्रन्थ माना जाता है, किन्तु वह वर्तमानकाल में अप्राप्य है। इस ग्रंथ के जो उद्धरण उत्तरकालीन ग्रंथों में लिये गये है, उन्हींसे ही उसकी जानकारी आज प्राप्त हो सकती है। पतंजलि के व्याकरण-महाभाष्य के अनुसार, यह व्याकरण का एक श्रेष्ठ दार्शनिक ग्रंथ था, जिसकी रचनापद्धति पाणिनीय अष्टाध्यायी के समान सूत्रात्मक थी (महा. ४.२.६०)। इस ग्रंथ में चौदह सहस्र शब्द-रूपों की जानकारी दी गयी थी (महा. १.१.१)। चांद्र व्याकरण में प्राप्त परंपरा के अनुसार, इस ग्रंथ के कुल पाँच अध्याय थे, एवं उनमें १ लक्ष श्लोक थे (चांद्र-व्याकरणवृत्ति. ४.१६१)।

कालनिर्णय—आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, यास्क, शौनक, पाणिनि, पिंगल, व्याडि, एवं कौत्स ये व्याकरणाचार्य प्रायः समकालीन ही थे। इनमें से शौनक के द्वारा विरचित 'ऋक्प्रातिशाख्य' का रचनाकाल २८०० ई. पू. माना जाता है। व्याडि का काल संभवतः यही होगा (युधिष्ठिर मीमांसक, पृ. १३९)।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं:—१. संग्रह. २. विकृतवल्ली. ३. व्याडिव्याकरण. ४. बलरामचरित ५. व्याडि-परिभाषा. ६. व्याडिशिक्षा (C.C.)

गरुडपुराण के अनुसार, इसने रत्नविद्या के संबंध में भी एक ग्रंथ की रचना की थी (गरुड. १.६९.३७)।

व्याधाज्य—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

व्यास 'धर्मशास्त्रकार'—एक धर्मशास्त्रकार, जिसके द्वारा रचित एक स्मृति आनंदाश्रम, पूना, व्यंकटेश्वर प्रेस, बंबई एवं जीवानंद स्मृतिसंग्रह में प्रकाशित की गयी है। इस 'स्मृति' के चार अध्याय, एवं २५० श्लोक हैं।

व्यासस्मृति—'व्यासस्मृति' में वर्णाश्रमधर्म, नित्यकर्म, स्नानभोजन, दानधर्म आदि व्यवहारविषयक धर्मशास्त्रीय विषयों की चर्चा की गयी है। 'अपरार्क,' 'स्मृतिचंद्रिका' आदि ग्रंथों में इसके व्यवहारविषयक उद्धरण प्राप्त है।

अन्य ग्रंथ—'व्यासस्मृति' के अतिरिक्त इसके निम्नलिखित ग्रंथों का निर्देश भी निम्नलिखित स्मृतिग्रंथों में प्राप्त हैं:—१. गद्यव्यास-स्मृतिचंद्रिका; २. वृद्धव्यास-अपरार्क; ३. बृहद्व्यास-मिताक्षरा; ४. लघुव्यास, महाव्यास, दानव्यास-दानसागर।

पुराण में यह एवं कृष्ण द्वैपायन व्यास एक ही व्यक्ति होने का निर्देश प्राप्त है (भवि. ब्राह्म. १)। किंतु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है।

व्यास पाराशर्य—एक सुविख्यात आचार्य, जो वैदिक संहिताओं का पृथक्करणकर्ता, वैदिक शाखाप्रवर्तकों का आद्य आचार्य, ब्रह्मसूत्रों का प्रणयिता, महाभारत पुराणादि ग्रंथों का रचयिता, एवं वैदिक संस्कृति का पुनरुज्जीवक तत्त्वज्ञ माना जाता है। यह सर्वज्ञ, सत्यवादी, सांख्य, योग, धर्म आदि शास्त्रों का ज्ञाता एवं दिव्यदृष्टि था (म. स्व. ५. ३१-३३)। वैदिक, पौराणिक एवं तत्त्वज्ञान संबंधी विभिन्न क्षेत्रों में व्यास के द्वारा किये गये अपूर्व कर्तृत्व के कारण, यह सर्व दृष्टि से श्रेष्ठ ऋषि प्रतीत होता है।

प्राचीन ऋषिविषयक व्याख्या में, असामान्य प्रतिभा, क्रांतिदर्शी द्रष्टापन, जीवनविषयक विरागी दृष्टिकोण, अगाध विद्वत्ता, एवं अप्रतीम संगठन-कौशल्य इन सारे गुणों का सम्मिलन आवश्यक माना जाता था। इन सारे गुणों की व्यास जैसी मूर्तिमंत साकार प्रतिमा प्राचीन भारतीय इतिहास में क्वचित् ही पायी जाती है। इसी कारण, पौराणिक साहित्य में इसे केवल ऋषि ही नहीं, किन्तु साक्षात् देवतास्वरूप माना गया है। इस साहित्य में इसे विष्णु का (वायु. १.४२-४३; कूर्म. १.३०.६६; गरुड. १.८७.५९); शिव का (कूर्म. २.११.१३६); ब्रह्मा का (वायु. ७७.७४-७५; ब्रह्मांड. ३.१३.७६); एवं ब्रह्मा के पुत्र का (लिंग. २.४९.१७) अवतार कहा गया है।

सनातन हिंदुधर्म का रचयिता—श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त सनातन हिंदु धर्म का व्यास एक प्रधान व्याख्याता कहा जाता है। व्यास महाभारत का केवल रचयिता ही नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक पुनरुज्जीवन का एक ऐसा आचार्य था कि, जिसने वैदिक हिंदुधर्म में निर्दिष्ट समस्त धर्मतत्त्वों को बदलते हुए देश काल-परिस्थिति के अनुसार, एक बिल्कुल नया स्वरूप दिया। भगवद्गीता जैसा अनुपम रत्न भी इसकी कृपा से ही संसार को प्राप्त हो सका, जहाँ इसने श्रीकृष्ण के अमर संदेश को संसार के लिए सुलभ बनाया।

इसी कारण युधिष्ठिर के द्वारा महाभारत में इसे 'भगवान्' उपाधि प्रदान की गयी है—

> भगवानेव नो मान्यो भगवानेव नो गुरुः।
> भगवानस्य राज्यस्य कुलस्य च परायणम्॥
> (म. आश्र. ८.७)।

(भगवान् व्यास हमारे लिये अत्यंत पूज्य, एवं हमारे गुरु है। हमारे राज्य एवं कुल के वे सर्वश्रेष्ठ आचार्य हैं)।

वैदिक साहित्य में—वैदिक-संहिता साहित्य में व्यास का निर्देश अप्राप्य है। 'सामविधान ब्राह्मण' में इसे 'पाराशर्य' पैतृक नाम प्रदान किया गया है, एवं इसे विष्वक्सेन नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (सा. ब्रा. १.४.३७७)। तैत्तिरीय आरण्यक में भी महाभारत के रचयिता के नाते व्यास एवं वैशंपायन ऋषियों का निर्देश प्राप्त है (तै. आ. १.९.२)। वेबर के अनुसार, शुक्ल-यजुर्वेद की आचार्यपरंपरा में पराशर एवं उसके वंशजों का काफ़ी प्रभुत्व शुरू से ही प्रतीत होता है।

बौद्धसाहित्य में बुद्ध के पूर्वजन्मों में से एक जन्म का नाम 'कण्ह दीपायन' (कृष्ण द्वैपायन) दिया गया है (वेबर. पृ. १८४)। इससे प्रतीत होता है कि, बौद्ध साहित्य की रचनाकाल में व्यास का कृष्ण द्वैपायन नाम काफ़ी प्रसिद्ध हो चुका था।

पाणिनीय व्याकरण में—पाणिनि के अष्टाध्यायी में व्यास का निर्देश अप्राप्य है, एवं महाभारत शब्द का निर्देश भी वहाँ एक ग्रंथ के नाते नहीं, बल्कि भरतवंश में उत्पन्न युधिष्ठिर, आदि श्रेष्ठ व्यक्तियों को उद्दिश्य कर प्रयुक्त किया गया है (पा. सू. ६.२.३८)।

पतंजलि के व्याकरण-महाभाष्य में महाभारत कथा का निर्देश अनेकबार प्राप्त है, इतना ही नहीं, शुक वैयासकि नामक एक आचार्य का निर्देश भी वहाँ प्राप्त है, जिसे व्यास का पुत्र होने के कारण 'वैयासकि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (महा. २.२५३)।

इससे प्रतीत होता है कि, महाभारत का निर्माण पाणिनि के उत्तर काल में, एवं पतंजलि के पूर्वकाल में उत्पन्न हुआ होगा।

महाभारत एवं पुराणों में—इन ग्रंथों में इसे महर्षि पराशर का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी माता का नाम सत्यवती (काली) बताया गया है, जो कैवर्तराज (धीवर) की कन्या थी। इसका जन्म यमुनाद्वीप में हुआ था, जिस कारण इसे 'द्वैपायन' नाम प्राप्त हुआ था (म. आ. ५४.२)। इसकी माता का नाम 'काली' होने के कारण, इसे 'कृष्ण' अर्थात कृष्ण द्वैपायन नाम प्राप्त हुआ था। भागवत के अनुसार, यह स्वयं कृष्ण-वर्णीय था, जिस कारण इसे 'कृष्ण' द्वैपायन नाम प्राप्त हुआ था।

जन्मतिथि—वैशाख पूर्णिमा यह दिन व्यास की जन्मतिथि मानी जाती है। उसी दिन इसका जन्मोत्सव भी मनाया जाता है। आषाढ पौर्णिमा को इसीके ही नाम से 'व्यास पौर्णिमा' कहा जाता है।

विभिन्न नामान्तर—इसने समस्त वेदों की पुनर्रचना की थी, जिस कारण इसे व्यास नाम प्राप्त हुआ थाः—

विव्यास वेदान् यस्मात्स तस्माद् व्यास इति स्मृतः।
(म. आ. ५७.७३)।

महाभारत में इसके पराशरात्मज, पाराशर्य, सत्यवती सुत नामान्तर बताये गये है। वायु में इसे 'पुराणप्रवक्ता' कहा गया है, जो नाम इसे आख्यान, उपाख्यान, गाथा कुल, कर्म आदि से संयुक्त पुराणों की रचना करने के कारण प्राप्त हुआ था (वायु. ६०.११-२१; विष्णुधर्म. १.७४)।

तपस्या—अत्यंत कठोर तपस्या कर के इसने अनेकानेक सिद्धियाँ प्राप्त की थी। यह दूरश्रवण, दूर-दर्शन आदि अनेक विद्याओं में प्रवीण था (म. आश्र. ३७.१६)।

अपनी तपस्या के बारे में यह कहता है—

पश्यन्तु तपसो वीर्यमद्य मे चिरसंभृतम्।
तदुच्यतां महाबाहो कं कामं प्रदिशामि ते ॥
प्रवणोऽस्मि वरं दातुं पश्य मे तपसो बलम्।
(म. आश्र. ३६.२०-२१)।

कौरवपाण्डवों का पितामह—यह कौरवपाण्डवों का पितामह था, इसी कारण यह सदैव उनके हित के लिए तत्पर रहता था। इसके द्वारा विरचित महाभारत ग्रंथ में यह केवल निवेदक के नाते नहीं, बल्कि पांडवों के हितचिंतक के नाते कार्य करता हुआ प्रतीत होता है।

जनमेजय के यज्ञमण्डप में—महाभारत के अनुसार, यह जनमेजय के सर्पसत्र में उपस्थित था। इसे आता हुआ देख कर जनमेजय ने इसका यथोचित स्वागत किया, एवं सुवर्ण सिंहासन पर बैठ कर इसका पूजन किया था। पश्चात् जनमेजय ने 'महाभारत' का वृत्तांत पूछा, तब इसने अपने पास बैठे हुए वैशंपायन नामक शिष्य को स्वरचित 'महाभारत' कथा सुनाने की आज्ञा दी (म. आ. ५४)।

उस समय व्यास को नमस्कार कर वैशंपायन ने 'कार्ष्ण-वेद' नाम से सुविख्यात महाभारत की कथा कह सुनाई।

पाण्डवों का हितचिंतक—इसने पाण्डवों को द्रौपदी-स्वयंवर की वार्ता सुनाई थी। इसने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय अर्जुन, भीम, सहदेव एवं नकुल को क्रमशः उत्तर, पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम दिशाओं की ओर जाने के लिए उपदेश दिया था।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, यह ब्रह्मा बना था। उसी यज्ञ में, आनेवाले क्षत्रियसंहार का भविष्य इसने युधिष्ठिर को सुनाया था।

प्रतिस्मृतिविद्या का उपदेश—पांडवों के वनवासकाल में भी, समय समय उनका धीरज बँधाने का कार्य यह करता रहा। वनवास के प्रारंभकाल में युधिष्ठिर जब अत्यंत निराश हुआ था, तब इसने उसे 'प्रतिस्मृतिविद्या' प्रदान की थी। इसी विद्या के कारण, अर्जुन रुद्र एवं इंद्र से अनेकानेक प्रकार के अस्त्र प्राप्त कर सका (म. व. ३७.२७-३०)।

पश्चात् यह कुरुक्षेत्र में गया, एवं वहाँ स्थित सभी तीर्थों का इसने एकत्रीकरण किया। वहाँ स्थित 'व्यासवन' एवं 'व्यासस्थली' में इसने तपस्या की।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध के समय, इसने धृतराष्ट्र को दृष्टि प्रदान कर, उसे युद्ध देखने के लिए समर्थ बनाना चाहा। किंतु धृतराष्ट्र के द्वारा युद्ध का रौद्र स्वरूप देखने के लिए इन्कार किये जाने पर, इसने संजय को दिव्यदृष्टि प्रदान की, एवं युद्धवार्ता धृतराष्ट्र तक पहुँचाने की व्यवस्था की थी (म. भी. २.९)।

भारतीय युद्ध में, सात्यकि ने संजय को पकड़ने का (म. श. २४.५१), एवं मार डालने का (म. श. २८. ३५-३८) प्रयत्न किया। किंतु इन दोनों प्रसंग में व्यास ने संजय की रक्षा की। युद्ध के पश्चात्, व्यासकृपा से संजय को प्राप्त हुई दिव्यदृष्टि नष्ट हो गयी (म. सौ. ९.५८)।

पुत्रवध के दुख से गांधारी पांडवों को शाप देने के लिए उद्यत हुई, किंतु अंतर्ज्ञान से यह जान कर, व्यास ने उसे परावृत्त किया (म. स्त्री. १३.३-५)। धृतराष्ट्र एवं गांधारी को दिव्यचक्षु प्रदान कर, इसने उन्हें गंगा नदी के प्रवाह में उनके मृत पुत्रों का दर्शन कराया था (म. आश्र. ४०)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्—युद्ध के पश्चात् इसने युधिष्ठिर को शंख, लिखित, सुद्युम्न, हयग्रीव, सेनाजित् आदि राजाओं के चरित्र सुना कर राजधर्म एवं राजदंड का उपदेश किया। इसने युधिष्ठिर को सेनाजित् राजा का उदाहरण दे कर निराशावादी न बनने का, एवं जनक की कथा सुना कर प्रारब्ध की प्रबलता का उपदेश निवेदित किया। पश्चात् इसने उसे मनःशांति के लिए प्रायश्चित्त-विधि भी कथन किया।

शुकदेव को उपदेश—इसने अपने पुत्र शुकदेव को निम्नलिखित विषयों पर आधारित तत्त्वज्ञानपर उपदेश कथन किया था:—सृष्टिक्रम एवं युगधर्म; ब्राह्मप्रलय एवं महाप्रलय, मोक्षधर्म एवं क्रियाफल आदि।

उपदेशक व्यास—नारद के मुख से इसे सात्वतधर्म का ज्ञान हुआ था, जो इसने आगे चल कर युधिष्ठिर को कथन किया था। इसके अतिरिक्त इसने भीष्म (म. अनु. २४.५-१२); मैत्रेय (म. अनु. १२०-१२२); शुक आदि को भी उपदेश प्रदान किया था।

अश्वमेध यज्ञ में—इसने युधिष्ठिर को मनःशांति के लिए अश्वमेध यज्ञ करने का आदेश दिया था। इस यज्ञ में अर्जुन, भीम, नकुल एवं सहदेव को क्रमशः अश्वरक्षा, राज्यरक्षा, कुटुंबव्यवस्था का कार्य इसी के द्वारा ही सौंपा गया था।

यज्ञ के पश्चात्, युधिष्ठिर ने अपना सारा राज्य इसे दान में दिया। इसने उसे स्वीकार कर के उसे पुनः एक बार युधिष्ठिर को लौटा दिया, एवं आज्ञा दी कि, वह समस्त धनलक्ष्मी ब्राह्मणों को दान में दे।

परिवार—घृताची अप्सरा (अरणी) से इसे शुक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५७.७४)। स्कंद में शुक को जाबालि ऋषि की कन्या वटिका से उत्पन्न पुत्र कहा गया है (स्कंद. ६.१४७-१४८)।

शुक के अतिरिक्त, इसे विचित्रवीर्य राजाओं की अंबिका एवं अंबालिका नामक पत्नियों से क्रमशः धृतराष्ट्र एवं पाण्डु नामक नियोगज पुत्र उत्पन्न हुए थे। विदुर भी इसीका ही पुत्र था, जो अंबालिका के शूद्रजातीय दासी से इसे उत्पन्न हुआ था।

व्यास-वंश—इसके पुत्र शुक ने इसका वंश आगे चलाया। शुक का विवाह पीवरी से हुआ था, जिससे उसे भूरिश्रवस्, प्रभु, शंभु, कृष्ण एवं गौर नामक पाँच पुत्र, एवं कीर्तिमती नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसका विवाह अणुह राजा से हुआ था। कीर्तिमती के पुत्र का नाम ब्रह्मदत्त था (वायु. ७०.८४-८६)।

चिरंजीवित्व—कुरुवंशीय राजाओं में से शंतनु, विचित्रवीर्य, धृतराष्ट्र, कौरवपांडव, अभिमन्यु, परिक्षित्, जनमेजय, शतानीक आठ पीढ़ीयों के राजाओं से व्यास का जीवनचरित्र संबंधित प्रतीत होता है। ये सारे निर्देश इसके दीर्घायुष्य की ओर संकेत करते हैं। प्राचीन साहित्य में इसे केवल दीर्घायुषी ही नहीं, बल्कि चिरंजीव कहा गया है।

व्यास-स्थल—व्यास के जीवन से संबंधित निम्नलिखित स्थलों का निर्देश महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है :—

(१) **व्यासवन**—यह कुरुक्षेत्र में है (म. व. ८१. ७८; नारद. ३.६५.५; ८२; वामन. ३५.५; ३६.५६)।

(२) **व्यासस्थली**—यह कुरुक्षेत्र में है। यहाँ पुत्रशोक के कारण, व्यास देहत्याग के लिए प्रवृत्त हुआ था (म. व. ८१.८१; नारद. उ. ६५.८५; वामन. ३६.६०)।

(३) **व्यासाश्रम**—यह हिमालय पर्वत में बदरिकाश्रम के पास अलकनंदा-सरस्वती नदियों के संगम पर शम्या-प्रासतीर्थ के समीप बसा हुआ था।

इसी आश्रम में व्यास के द्वारा सुमंतु, वैशंपायन, जैमिनि एवं पैल आदि आचार्यों को वेदों की शिक्षा दी गयी थी। व्यास का वेदप्रसार का कार्य इसी आश्रम में प्रारंभ हुआ था, एवं चारों वर्णों में वेदप्रसार करने के नियम आदि इसी आश्रम में व्यास के द्वारा निश्चित किये गये थे (म. शां. ३१४)।

(४) **व्यासकाशी**—यह वाराणसी में रामनगर के समीप बसी हुई थी।

अट्ठाईस व्यास—यद्यपि महाभारत की रचना करनेवाले व्यास महर्षि एक ही थे, फिर भी पुराणों में अट्ठाईस व्यासों की एक नामावलि दी गयी है, जिसके अनुसार वैवस्वत मन्वन्तर के हर एक द्वापर में उत्पन्न हुआ व्यास अलग व्यक्ति बताया गया है। वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के अट्ठाईस द्वापर आज तक पूरे हो चुके है, इसी कारण पुराणों में व्यासों की संख्या अट्ठाईस बतायी गयी है, जहाँ कृष्ण द्वैपायन व्यास को अठ्ठाइसवाँ व्यास कहा गया है।

पुराणों में दी गयी अट्ठाईस व्यासों की नामावलि कल्पना-रम्य, अनैतिहासिक एवं आद्य व्यास महर्षि की महत्ता बढ़ाने के लिए तैयार की गयी प्रतीत होती है। विभिन्न पुराणों में प्राप्त अट्ठाईस व्यासों के नाम एक दूसरे से मेल नहीं खाते हैं। इन व्यासों का निर्देश एवं जानकारी प्राचीन साहित्य में अन्यत्र कहीं भी प्राप्त नहीं है।

विष्णु पुराण में प्राप्त अट्ठाईस व्यासों की नामावलि नीचे दी गयी है, एवं अन्य पुराणों में प्राप्त पाठभेद कोष्टक में दिये गये हैं:— **१. स्वयंभु** (प्रभु, ऋभु, क्रतु); **२. प्रजापति** (सत्य); **३. उशनस्** (भार्गव); **४, बृहस्पति** (अंगिरस्); **५. सवितृ**; **६. मृत्यु**; **७. इंद्र**; **८. वसिष्ठ**; **९. सारस्वत**; **१०. त्रिधामन्** **११. त्रिवृषन्** (निवृत्त); **१२. भरद्वाज** (शततेजस्); **१३. अन्तरिक्ष** (धर्म-नारायण); **१४ वभ्रिन्** (धर्म, रक्ष, स्वरक्षस्, सुरक्षण); **१५. त्रय्यारुण** (आरुणि); **१६. धनंजय** (देव, कृतंजय, संजय, ऋतंजय); **१७. कृतंजय** (मेधातिथि); **१८. ऋणज्य** (व्रतिन्); **१९. भरद्वाज**; **२०. गौतम**; **२१. उत्तम** (हर्यात्मन्); **२२. वेन** (राजःश्रवस्, वाजश्रवस्, वाजश्रवस, वाचःश्रवस्); **२३. शुष्मायण सोम** (तृणबिंदु, सौम आमुष्यायण); **२४. वाल्मीकि** (ऋक्ष-भार्गव); **२५. शक्ति** (शक्ति वासिष्ठ, भार्गव, यक्ष, कृष्ण); **२६. पराशर** (शाक्तेय); **२७. जातूकर्ण**; **२८. कृष्ण द्वैपायन** (प्रस्तुत) (विष्णु. ३.३.११-२०; दे. भा. १.३; लिंग. १.२४. शिव. शत. ५; शिव. वायु. सं. ८; वायु. २३; स्कंद. १.२.४०; कूर्म. पूर्व. ५१.१-११)।

व्याससहायक शिवावतार—पुराणों में निर्दिष्ट उपर्युक्त अट्ठाईस व्यासों के अतिरिक्त कई पुराणों में व्यास, सहायक शिवावतार भी दिये गये हैं, जो कलियुग के प्रारंभ में उपन्न हो कर द्वापर युग के व्यासों का कार्य आगे चलाते है। व्याससहायक शिवावतार के, एवं उसके चार शिष्यों के नाम विभिन्न पुराणों में दिये गये है (शिव. शत. ४-५; शिव. वायु. ८.९; वायु. २३; लिंग. ७)।

कर्तृत्व—व्यास के कर्तृत्व के तीन प्रमुख पहलू माने जाते हैं:— १. वेदरक्षणार्थ वेदविभाजन; २. पौराणिक साहित्य का निर्माण; ३. महाभारत का निर्माण।

व्यास के इन तीनों कार्यों की संक्षित जानकारी नीचे दी गयी है।

वेदसंरक्षणार्थ वेदविभाग—द्वापर युग के अन्त में वेदों का संरक्षण करने वाले द्विज लोग दुर्बल होने लगे, एवं समस्त वैदिक वाङ्मय नष्ट होने की संभावना उत्पन्न हो गयी। वेदों का नाश होने से समस्त भारतीय संस्कृति का नाश होगा, यह जान कर व्यास ने समस्त वैदिक वाङ्मय की पुनर्रचना की। इस वाङ्मय का ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद इन चार स्वतंत्र संहिताओं में विभाजन कर, इन चार वेदों की विभिन्न शाखाएँ निर्माण की। आगे चल कर, इन वैदिक संहिताओं के संरक्षण एवं प्रचार के लिए इसने विभिन्न शिष्यपरंपराओं का निर्माण किया (वायु. ६०.१-१६)। व्यास के द्वारा किये गये वैदिक संहिताओं की पुनर्रचना का यह क्रान्तिदर्शी कार्य इतना सफल साबित हुआ कि, आज हज़ारों वर्षों के बाद भी वैदिक संहिता ग्रंथ अपने मूल स्वरूप में ही आज उपलब्ध हैं।

वेदों का विभाजन—पुराणों के अनुसार, व्यास के द्वारा चतुष्पाद वैदिक संहिता ग्रंथ का विभाजन कर, इनकी चार स्वतंत्र संहिताएँ बतायी गयीः—

ततः स ऋच उद्धृत्य ऋग्वेदसमकल्पयत्।
(वायु. ६०.१९; ब्रह्मांड. ३.३४.१९)।

(व्यास ने ऋग्वेद की ऋचाएँ अलग कर, उन्हें 'ऋग्वेद संहिता' के रूप में एकत्र कर दिया)।

व्यास के पूर्वकाल में ऋक्, यजु, साम, एवं अथर्व मंत्र यद्यपि अस्तित्व में थे, फिर भी वें सारे एक ही वैदिक संहिता में मिलेजुले रूप में अस्तित्व में थे। इसी एकात्मक वैदिक संहिता को चार स्वतंत्र संहिताओं में विभाजित करने का अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य व्यास ने किया। इस प्रकार विद्यमानकालीन वैदिक संहिताओं का चतुर्विध विभाजन, एवं उनका रचनात्मक आविष्कार ये दोनों वैदिक साहित्य को व्यास की देन है, जो इस साहित्य के इतिहास में एक सर्वश्रेष्ठ कार्य माना जा सकता है।

व्यास के द्वारा रचित वैदिक संहिताओं को तत्कालीन भारतीय ज्ञाताओं ने बिना हिचकिचाहट स्वीकार किया, यह एक ही घटना व्यास के कार्य का निर्दोषत्व एवं तत्कालीन समाज में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान प्रस्थापित कर देती है (पार्गि. ३१८)।

व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा—व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा की विस्तृत जानकारी पुराणों में दी गयी है। इनमें से सर्वाधिक प्रामाणिक एवं विस्तृत जानकारी वायु एवं ब्रह्मांड में प्राप्त है, जिसकी तुलना में विष्णु एवं भागवत में दी गयी जानकारी त्रुटिपूर्ण एवं संक्षेपित प्रतीत होती है।

इस जानकारी के अनुसार, व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा के ऋक्, यजु, साम एवं अथर्व ऐसे चार प्रमुख विभाग थे।

व्यास की उपर्युक्त शिष्यपरंपरा में से 'मौखिक' सांप्रदाय के प्रमुख आचार्यों की नामावलि 'वैदिक शिष्यपरंपरा' के तालिका में दी गयी है। ग्रंथिक' सांप्रदाय के आचार्यों की नामावलि 'वैदिक धर्मग्रन्थ' की तालिका में दी गयी है।

(१) व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा—व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य पैल था। व्यास से प्राप्त ऋक्संहिता की दो संहिताएँ बना कर पैल ने उन्हें अपने इंद्रप्रमति एवं बाष्कल (बाष्कलि) नामक दो शिष्यों को प्रदान किया।

(अ) बाष्कल-शाखा—यही संहिता आगे चल कर बाष्कल ने अपने निम्नलिखित शिष्यों को सिखायी :—१. बोध्य (बोध, बौध्य); २. अग्निमाठर (अग्निमित्र, अग्निमातर); ३. पराशर; ४. याज्ञवल्क्य; ५. कालायनि (वालायनि); ६. गार्ग्य (भव्य); ७. कथाजव (कासार)। इनमें से पहले चार शिष्यों के नाम सभी पुराणों में प्राप्त हैं, अंतिम नाम केवल भागवत एवं विष्णु में ही प्राप्त हैं।

(आ) इंद्रप्रमति-शाखा—इंद्रप्रमति का प्रमुख शिष्य माण्डुकेय (मार्कंडेय) था। आगे चल कर माण्डुकेय ने वह संहिता अपने पुत्र सत्यश्रवस् को सिखायी। सत्यश्रवस् ने उसे अपने शिष्य सत्यहित को, एवं उसने अपने पुत्र सत्यश्री को सिखायी।

विष्णु में इंद्रप्रमति के द्वितीय शिष्य का नाम शाकपूणि (शाकवैण) रथीतर दिया गया है, किन्तु वायु एवं ब्रह्मांड में सत्यश्री शाकपूणि को सत्यश्री का पुत्र बताया गया है।

(इ) सत्यश्री-शाखा—सत्यश्री के निम्नलिखित तीन सुविख्यात शिष्य थे :—१. देवमित्र शाकल्य, जिसे भागवत में सत्यश्री का नहीं, बल्कि माण्डुकेय का शिष्य कहा गया है। २. शाकवैण रथीतर (रथेतर, रथान्तर); ३. बाष्कलि भारद्वाज, जिसे भागवत में जातूकर्ण्य कहा गया है।

(ई) देवमित्र शाकल्य-शाखा—देवमित्र के निम्नलिखित शिष्य प्रमुख थे :—१. मुद्गल; २. गोखल (गोखल्य, गोलख); २. शालीय (खालीय, खलियस्); ४. वत्स (मत्स्य, वात्स्य, वास्य); ५. शैशिरेय (शिशिर); ६. जातूकर्ण, जिसका निर्देश केवल भागवत में ही प्राप्त है।

(उ) शाकवैण रथीतर-शाखा—इसके निम्नलिखित चार शिष्य प्रमुख थे :—१. केतव (क्रौंच, पैज, पैल); २. दालकि (वैतालिक, वैताल, इक्षलक); ३. शतबलाक (बलाक, धर्मशर्मन्); ४. नैगम (निरुक्तकृत्, विरज गज, देवशर्मन्)।

(ऊ) बाष्कलि भारद्वाज-शाखा—इसके निम्नलिखित तीन शिष्य प्रमुख थे :— १. नंदायनीय (अपनाप); २. पन्नगारि; ३. अर्जव (अर्यव) (विष्णु. ३.४.१६-२६; भा. १२.६.५४-५९; वायु. ६०.२४-६६; ब्रह्मांड. २.३४-३५)।

व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा

ऋग्वेद	यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
पैल	वैशंपायन	जैमिनि	सुमन्त
इंद्रप्रमति, बाष्कल	—	सुमन्तु-जैमिनि	कबंध
बोध्य, याज्ञवल्क्य, पराशर, माण्डुकेय	याज्ञवल्क्य-ब्रह्मराति	सुत्वन्-जैमिनि	पथ्य, देवादर्श
सत्यश्रवस्	तित्तिरी	सुकर्मन्-जैमिनि	पिप्पलाद
सत्यहित	—	पौष्पिण्ड्य	जाजलि-शौनक
सत्यश्री	माध्यंदिन, काण्व	लौगाक्षि, कुथुमि, कुशितिन्, लांगलि	सैन्धवायन, बभ्रु
शाकल्य, वाष्कलि, शाकपूर्णि	याज्ञवल्क्य	राणायनीय, तण्डि-पुत्र, पराशर, भागवित्ति	—
पन्नगारि, शैशिरेय, वत्स, शतबलाक	श्यामायनि, आसुरि अलम्बि	—	मुंजकेश
—	—	लोमगायनि, पाराशर्य, प्राचीनयोग	—
—	—	आसुरायण, पतंजलि	—

ऋग्वेद की प्रमुख-शाखाएँ--व्यास के प्रमुख शिष्य-प्रशिष्यों को 'शाखाप्रवर्तक आचार्य' कहा जाता है, एवं उन्हींके द्वारा प्रणीत संहितापरंपरा को 'शाखा' कहा जाता है। इन विभिन्न शाखाओं द्वारा पुरस्कृत वैदिक संहिता यद्यपि एक ही थी, फिर भी विभिन्न 'दृष्टि-विभ्रम' एवं 'स्वरवर्ण' (उच्चारपद्धति) के कारण हरएक शाखा की संहिता विभिन्न बन जाती थी।

पौराणिक साहित्य में ऋग्वेद के विभिन्न शाखाओं का यद्यपि निर्देश है, फिर भी इनमें से बहुत ही थोड़ी शाखाएँ व्यासशिष्य परंपरा में निर्दिष्ट आचार्यों के नामों से मिलती जुलती दिखाई देती हैं।

पतंजलि महाभाष्य एवं महाभारत में ऋग्वेद की इक्कीस शाखाओं का निर्देश प्राप्त है। किंतु उनकी नामावलि वहाँ अप्राप्य है (महा. १; म. शां. ३३०.३२; कर्म. पूर्व. ५२.५९)।

'चरणव्यूह' में ऋग्वेद की निम्नलिखित पाँच शाखाओं का निर्देश प्राप्त हैः--१. शाकल (शैशिरीय); २. बाष्कल; ३. आश्वलायन; ४. शांखायन; ५. मण्डूका-

उपलब्ध वैदिक धर्मग्रंथ

वेद	शाखा	उपलब्ध संहिता	ब्राह्मण	आरण्यक	उपनिषद	श्रौतसूत्र	गृह्य, धर्म एवं शुल्ब सूत्र	व्याकरण
ऋग्वेद	२१	१ शाकल २ बाष्कल ३ शांख्यायन	१ ऐतरेय २ शांख्यायन	१ ऐतरेय २ शांख्यायन	१ ऐतरेय २ कौषितकी ३ बाष्कल	१ आश्वलायन २ शांख्यायन	१ आश्वलायन (गृह्य) २ शांख्यायन (गृह्य) ३ वसिष्ठ (धर्म)	१. ऋक्प्राति-शाख्य
कृष्णयजुर्वेद	८६	१ तैत्तिरीय २ मैत्रायणी ३ कठ ४ कापिष्ठल	१ तैत्तिरीय २ कठ	१ तैत्तिरीय २ मैत्रायणी	१ तैत्तिरीय २ महानारायण ३ मैत्रायणी ४ कठ ५ श्वेताश्वेतर ६ मैत्री	१ आपस्तंब २ बौधायन ३ भारद्वाज ४ मानव ५ वाधूल ६ वाराह ७ वैखानस ८ हिरण्यकेशी (सत्याषाढ)	१ आपस्तंब (गृह्य, शुल्ब, धर्म), २ कठ (गृह्य) वाराह (गृह्य), ३ बौधायन (गृह्य, शुल्ब, धर्म) ४ मानव (गृह्य), ५ वैखानस (धर्म), ६ हिरण्यकेशी (गृह्य, धर्म)	१. तैत्तिरीय प्रातिशाख्य
शुक्लयजुर्वेद	१५	१ काण्व २ माध्यंदिन	शतपथ १.काण्व (१७ काण्ड) २. माध्यंदिन(१४ काण्ड)	१ बृहदारण्यक	१ ईशावास्य (संहिता में से ४० वाँ अध्याय) २ बृहदारण्यक	१ कात्यायन	१ पारस्कर गृह्य (कात्यायन)	१. कात्यायन प्रातिशाख्य २. भाषिकसूत्र
सामवेद	१०००	१ कौथुम २ राणायनीय	१ पंचविंश (प्रौढ, तांड्य) २ षड्विंश, ३ सामविधान, ४ आर्षेय, ५ मंत्र, ६ दैवताध्याय, ७ वंश, ८ संहितोपनिषद्, ९जैमिनीय १० जैमिनीयोपनिषद्	१ जैमिनीय	१ छांदोग्य (तांड्य) २ केन (जैमिनीयोपनिषद् ब्रा. में से ४.१८.२१)	१ खादिर २ द्राह्यायन ३ लाट्यायन	१ खादिर (गृह्य) २ गोभिल (गृह्य) ३ गौतम (गृह्य और धर्म) ४ जैमिनि (गृह्य)	१. पुष्पसूत्र
अथर्ववेद	२	१ पिप्पलाद २ शौनक	१ गोपथ		१ प्रश्न, २ मांडुक्य ३ मुंडक इत्यादि	१ वैतान	१. कौशिक	१. पंचपटलिका २. अथर्व प्राति-शाख्य

यन। इनमें से शाकल, बाष्कल एवं माण्डूकायन इन शाखा प्रवर्तकों का निर्देश व्यास की वैदिक शिष्य-परंपरा में प्राप्त है। किन्तु आश्वलायन एवं शांखायन शाखाओं के प्रवर्तक आचार्य कौन थे, यह कहना मुष्किल है। इन दोनों शाखाओं का निर्देश अग्नि में प्राप्त है (अग्नि. २७१.२)।

उपर्युक्त शाखाओं में से शांखायन के अतिरिक्त बाकी सारी शाखाएँ शाकल्य के शिष्यों के द्वारा शुरू की गयी थीं, जिस कारण वे 'शाकल' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध हैं (वेदार्थदीपिका प्रस्तावना)।

वर्तमानकाल में उपलब्ध सायण भाष्य से सहित ऋक्संहिता आश्वलायन शाखान्तर्गत मानी जाती है। 'चरणव्यूह' ग्रंथ के महिधर-भाष्य से यही सिद्ध होता है। सत्यव्रत सामाश्रमी के ऐतरेयालोचन में भी यही सिद्धान्त प्रस्थापित किया गया है।

(२) **व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा**--व्यास की यजुः-शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य वैशंपायन था। वैशंपायन के कुल ८६ शिष्य थे, जिनमें याज्ञवल्क्य वाजसनेय प्रमुख था। आगे चल कर, याज्ञवल्क्य ने अपनी स्वतंत्र यजुर्वेद शाखा प्रस्थापित की, एवं वैशंपायन की ८५ शिष्य बाकी रहे। ये सारे शिष्य 'तैत्तिरीय' अथवा 'चरकाध्वर्यु' सामूहिक से सुविख्यात हैं।

(अ) **वैशंपायन शाखा**--इस शाखा में उदिच्य' मध्यदेश एवं प्राच्य ऐसी तीन उपशाखाएँ प्रमुख थीं, जिनके प्रमुख आचार्य क्रमशः श्यामायनि, आसुरी एवं आलम्बि थे।

(आ) **याज्ञवल्क्य शाखा**--इस शाखा में अंतर्गत याज्ञवल्क्य के शिष्य 'वाजिन' अथवा 'वाजसनेय' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। याज्ञवल्क्य के पंद्रह शाखाप्रवर्तक शिष्यों का निर्देश वायु एवं ब्रह्मांड में प्राप्त हैं, जिनमें से ब्रह्मांड में प्राप्त नामावली नीचे दी गयी है:--१. कण्व; २. बौधेय; ३. मध्यंदिन; ४. सापत्य; ५. वैधेय; ६. आद्ध; ७. बौद्धक; ८. तापनीय; ९. वास; १०. जाबाल; ११. केवल; १२. आवटिन्; १३. पुण्ड्र; १४. वैण; १५. पराशर (ब्रह्मांड. २.३५.८-३० ;याज्ञवल्क्य वाजसनेय देखिये)।

(३) **व्यास की सामशिष्यपरंपरा**--व्यास की साम-शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य जैमिनि था, जिसके पुत्रपौत्रों ने सामशिष्यपरंपरा आगे चलायी। जैमिनि के सामशिष्य-परंपरा का विद्यावंश निम्नप्रकार था:--जैमिनि-सुमंतु-सुत्वत् (सुन्वत्)—सुकर्मन्।

(अ) **सुकर्मन्-शाखा**--सुकर्मन् ने 'सामवेदसंहिता' के एक हजार संस्करण बनायें, एवं उनमें से पाँचसौ संहिता पौष्यंजि नामक आचार्य को, एवं उर्वरीत पाँचसौ हिरण्यनाभ कौशल्य (कौशिक्य) राजा को प्रदान की। उनमें से पौष्यंजि एवं हिरण्यनाभ के शिष्य क्रमशः 'उदीच्य सामग' एवं 'प्राच्य सामग' नाम से सुविख्यात हुए। विष्णु में इन दोनों सामशिष्यों की संख्या प्रत्येक की पंद्रह बतायी गयी है।

हिरण्यनाभ के शिष्यों में कृत (कृति) प्रमुख था, जो एक प्रमुख शाखाप्रवर्तक आचार्य माना जाता है।

(आ) **कृत-शाखा**--कृत के कुल चौबीस शिष्य थे, जिनकी नामावलि वायु एवं ब्रह्मांड में निम्नप्रकार दी गयी है:- १. राडि (राड); २. राडवीय (महावीर्य); ३. पंचम; ४. वाहन; ५. तलक (तालक); ६. मांडुक (पांडक); ७. कालिक, ८. राजिक, ९. गौतम; १०. अजवस्ति, ११. सोमराजायन (सोमराज); १२. पुष्टि (पृष्ठघ्न); १३. परिकृष्ट; १४. उलूखलक; १५. यवियस; १६. शालि (वैशाल); १७. अंगुलीय; १८. कौशिक; १९. शालिमंजरिपाक (सालिजीमंजरिसत्य); २०. शधीय (कापीय); २१. कानिनि (कानिक), २२. पाराशर्य (पराशर); २३. धर्मात्मन्; २४. वाँ नाम प्राप्त नहीं है।

(इ) **पौष्यंजि-शाखा**-पौष्यंजि के निम्नलिखित शिष्य प्रमुख थे:— १. लौगाक्षि (लौकाक्षि, लौकाक्षिन्); २. कुथुमि; ३. कुशीदि (कुसीद, कुसीदि); ४. लांगलि (मांगलि), जिसे ब्रह्मांड एवं वायु में 'शालिहोत्र' उपाधि प्रदान की गयी है; ५. कुल्य; एवं ६. कुक्ष।

(ई) **लांगलि-शाखा**-लांगलि के निम्नलिखित छः शिष्य थे, जो 'लांगल' अथवा 'लांगलि' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे:—१. हालिनी (भालुकि); २. ज्यामहानि (कामहानि); ३. जैमिनि; ४. लोमगायनि (लोमगायिन्); ५. कण्डु (कण्ड); ६. कोहल (कोलह)।

(उ) **लौगाक्षि-शाखा**-लौगाक्षि के निम्नलिखित छः शिष्य थे:—१. राणायनीय (नाडायनीय); २. सहतंडिपुत्र (सहितंडिपुत्र); ३. वैन (मूलचारिन्); ४. सकोतिपुत्र (सकतिपुत्र); ५. सुसहस् (सहसात्यपुत्र); ६. सुनामन्।

इनमें से राणायनीय के निम्नलिखित दो शिष्य थेः-- १. शौरिद्यु (शोरिद्यु); २. शृंगीपुत्र। इनमें से शृंगीपुत्र के वैन (चैल); प्राचीनयोग एवं सुबाल नामक तीन शिष्य थे।

(ऊ) **कुथुमि अथवा कुशुमिशाखा**--कुथुमि के निम्नलिखित तीन शिष्य थेः--१. औरस (पाराशर्य कौथुम); २. नाभिवित्ति (भागवित्ति); ३. पाराशरगोत्री (रसपासर)।

इनमें से औरस (पाराशर्य कौथुम) के निम्नलिखित छः शिष्य थेः-- १. आसुरायण; २. वैशाख्य; ३. वेदवृद्ध; ४. पारायण; ५. प्राचीनयोगपुत्र; ६. पतंजलि। इन शिष्यों में से पौष्यंजि एवं कृत ये दो शिष्य प्रमुख होने के कारण, उन्हें 'सामसंहिताविकल्पक' कहा गया है (ब्रह्मांड. २.३५.३१-५४; वायु ६१.२७-४८)।

(४) **व्यास की अथर्वशिष्यपरंपरा**--व्यास की अथर्व शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य सुमन्तु था। सुमन्तु के शिष्य का नाम कबंध था, जिसके निम्नलिखित दो शिष्य थेः-- १. देवदर्शन (वेददर्श, वेदस्पर्श); २. पथ्य।

(अ) **देवदर्श-शाखा**-देवदर्श के निम्नलिखित पाँच शिष्य थेः-- १. शौल्कायनि (शौक्रायनि); २. पिप्पलाद (पिप्पलायनि); ३. ब्रह्मबल (ब्रह्मबलि); ४. मोद (मोदोष, मौद्ग); ५. तपन (तपसिस्थित)।

(आ) **पथ्य-शाखा**-पथ्य के निम्नलिखित तीन शिष्य थेः--१. जाजलि; २. कुमुदादि (कुमुद); ३. शौनक (शुनक)।

(इ) **शौनक-शाखा**-शौनक के निम्नलिखित दो शिष्य थेः--१. बभ्रु, जिसे ब्रह्मांड एवं वायु में 'मुंजकेश्य,' एवं 'मुंजकेश' उपाधियाँ प्रदान की गयी हैं।

(ई) **सैंधवायन-शाखा**--सैंधवायन के दोनों शिष्यों ने प्रत्येकी दो दो संहिताओं की रचना की थी।

अथर्ववेदसंहिता के पाँच कल्प--इस संहिता के निम्नलिखित पाँच कल्प माने गये हैंः--१. नक्षत्रकल्प, २. वेदकल्प (वैतान) ३. संहिताकल्प; ४. आंगिरसकल्प, ५. शान्तिकल्प (विष्णु. ३.६.९-१४; भा. १२.७.१-४; वायु. ६१.४९-५४; ब्रह्मांड २.५.५५-६२)।

व्यासोत्तर वैदिक वाङ्मय का विकास--व्यास के द्वारा किये गये वैदिक संहिताओं के विभाजन को आदर्श मान कर, आगे चल कर संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद तथा श्रौत, गृह्य, धर्म, शुल्बसूत्र आदि वैदिक साहित्य का विस्तार हुआ।

व्यास के शिष्यपरंपरा में से अनेकानेक आचार्यों का निर्देश यद्यपि पुराणों में प्राप्त है, फिर भी, इन आचार्यों के द्वारा निर्माण की गयी बहुत सारी ग्रंथसंपत्ति आज अप्राप्य, अतएव अज्ञात है।

इसका कारण संभवतः यही है कि, व्यास की उपर्युक्त सारी शिष्यपरंपरा 'ग्रांथिक' न हो कर 'मौखिक' थी, जिनका प्रमुख कार्य ग्रंथनिष्पत्ति नहीं, बल्कि वैदिक संहितासाहित्य की मौखिक परंपरा अटूट रखना था।

व्यास के कई अन्य शिष्यों के द्वारा रचित वैदिक ग्रंथसंपत्ति में से जो भी कुछ साहित्य उपलब्ध है, उसकी जानकारी पृष्ठ ९२२ पर दी गयी 'वैदिक साहित्य के धर्मग्रंथों की तालिका' में दी गयी है।

वैदिक संहिताओं का विशुद्ध रूप-- व्यास के द्वारा विभाजन की गयी वैदिक संहिताएँ विशुद्ध रूप में कायम रखने के लिये व्याकरणशास्त्र, उच्चारणशास्त्र, वैदिक स्वरों का लेखनशास्त्र आदि अनेकानेक विभिन्न शास्त्रों का निर्माण हुआ, जिनकी संक्षिप्त जानकारी नीचे दी गयी है।

वैदिक व्याकरणविषयक ग्रंथों में शौनककृत 'ऋक्प्रातिशाख्य,' 'तैत्तिरीय प्रातिशाख्य,' कात्यायनकृत 'शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य,' अथर्ववेद का 'पंचपटलिका ग्रंथ', एवं सामवेद का 'पुष्पसूत्र,' आदि ग्रंथ विशेष उल्लेखनीय हैं।

वैदिक मंत्रों के उच्चारणशास्त्र के संबंध में अनेकानेक शिक्षाग्रंथ प्राप्त हैं, जिनमें वेदों के उच्चारण की संपूर्ण जानकारी दी गयी है। इन शिक्षा-ग्रंथों में अनुस्वार एवं विसर्गों के नानाविध प्रकार, एवं उनके कारण उत्पन्न होनेवाले उच्चारणभेदों की जानकारी भी दी गयी है।

वैदिक साहित्य की परंपरा शुरू में 'मौखिक' पद्धति से चल रही थी। आगे चल कर, इन मंत्रों का लेखन जब शुरु हुआ, तब उच्चारानुसारी लेखन का एक नया शास्त्र वैदिक आचार्यों के द्वारा निर्माण हुआ। इस शास्त्र के अनुसार, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित आदि स्वरों के लेखन के लिए, अनेकानेक प्रकार के रेखाचिन्ह वैदिक मंत्रों के अक्षरों के ऊपर एवं नीचे देने का क्रम शुरू किया गया। यजुर्वेद संहिता में तो वैदिक मंत्रों के अक्षरों के मध्य में भी स्वरचिह्नों का उपयोग किया जाता है।

विनष्ट हुए 'ब्राह्मण ग्रन्थ'--ब्राह्मण ग्रंथों में से जिन ग्रन्थों के उद्धरण वैदिक साहित्य में मिलते है, किंतु जिसके मूल ग्रंथ आज अप्राप्य है, ऐसे ग्रन्थों की नामावलि निम्नप्रकार है:--

(१) ऋग्वेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. शैलालि।

(२) कृष्णयजुर्वेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. आह्वरक; २. कंकटिन्; ३. चरक; ४. छागलेय (तैत्तिरीय); ५. पैंग्यायनि; ६. मैत्रायणी; ७. श्वेताश्वतर (चरक, चारायणीय); ८. हारिद्राविक (चरक, चारायणीय)।

(३) शुक्लयजुर्वेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. जाबालि।

(४) सामवेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. जैमिनीय २. तलवकार (राणायनीय); ३. कालवविन्; ४. भाल्लविन्; ५. रौरुकि; ६. शाट्यायन (रामायनीय); ७. माषशराविन् (बटकृष्ण घोष, कलेक्शन ऑफ दि फ्रॅग्मेन्ट्स ऑफ लॉस्ट ब्राह्मणाज)।

पुराण ग्रंथों का प्रणयन—वैदिक ग्रंथों की पुनर्रचना के साथ साथ, व्यास ने तत्कालीन समाज में प्राप्त कथा आख्यायिका एवं गीत (गाथा) एकत्रित कर आद्य 'पुराण-ग्रंथों' की रचना की, एवं इस प्रकार यह प्राचीन पौराणिक साहित्य का भी आद्य जनक बन गया।

प्राचीन भारत में उत्पन्न हुए राजवंश एवं मन्वन्तरों की परंपरागत जानकारी एकत्रित करना यह पुराणों का आद्य हेतु है। किन्तु उनका मूल अधिष्ठान नीतिप्रवण धर्म-ग्रंथों का है, जहाँ धर्म एवं नीति की शिक्षा सामान्य मनुष्य-मात्र की बौद्धिक धारणा ध्यान में रखकर दी गयी है। पंचमहाभूत, प्राणिसृष्टि एवं मनुष्यसृष्टि की ओर भूतदया-बाद का आदर्श पुराणग्रंथों में रखा गया है, जहाँ व्रत, उपासना एवं तपस्या को अधिकाधिक प्राधान्य दिया गया है।

कुटुम्ब, राज्य, राष्ट्र, शासन आदि की ओर एक आदर्श नागरिक के नाते हर एक व्यक्ति के क्या कर्तव्य हैं, इनका उच्चतम आदर्श सामान्य जनों के सम्मुख पुराण ग्रंथ रखते हैं। इस प्रकार जहाँ राज्यशासन के विधि-नियम अयशस्वी होते हैं, वहाँ पुराणग्रंथों का शासन सामान्य जनमानस पर दिखाई देता है।

पुराणों के प्रकार—पौराणिक साहित्य के 'महापुराण,' 'उपपुराण' एवं 'उपोपपुराण' नामक तीन प्रमुख प्रकार माने जाते हैं। जिन पुराणों में वंश, वंशानुचरित, मन्वन्तर, सर्ग एवं प्रतिसर्ग आदि सारे विषयों का समावेश किया जाता है, उन पुराणों को महापुराण कहते हैं—

आख्यानैश्चाप्युपाख्यानैर्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः।
पुराणसंहितां चक्रे पुराणार्थविशारदः॥
(विष्णु. ३.६.१६-१६)।

उपर्युक्त विषयों में से एक ही उपांग पर जो पुराणग्रंथ आधरित रहता है, उसे 'उपपुराण' कहते हैं। उपोप-पुराण स्वतंत्र ग्रंथ न हो कर, महापुराण का ही एक भाग रहता है।

पुराणों में चर्चित विषय—पौराणिक साहित्य में चर्चित विषयों की जानकारी वायु में प्राप्त है, जिसके अनुसार ब्रह्मचारिन्, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यासी, रागी, विरागी, स्त्री, शूद्र एवं संकर जातियों के लिए सुयोग्य धर्माचरण क्या हो सकता है, इसकी जानकारी पुराणों में प्राप्त होती है। इन ग्रंथों में यज्ञ, व्रत, तप, दान, यम, नियम, योग, सांख्य, भागवत, भक्ति, ज्ञान, उपासनाविधि आदि विभिन्न धार्मिक विषयों की जानकारी प्राप्त है।

पुराणों में समस्त देवताओं का अविरोध से समावेश करने का प्रयत्न किया गया है, एवं ब्राह्म, शैव, वैष्णव, सौर, शाक्त, सिद्ध आदि संप्रदायों के द्वारा प्रणीत उपासना वहाँ आत्मौपम्य बुद्धि से दी गयी है। देवताओं का माहात्म्य बढ़ाना, एवं उनके उपासनादि का प्रचार करना, यह पुराणग्रंथों का प्रमुख उद्देश्य है।

पुराणों के विभिन्न प्रकार—मत्स्य में पुराणों के सात्विक, राजस एवं तामस तीन प्रकार बताये गये हैं। मत्स्य में प्रतिपादन किया गया पुराणों का यह विभाजन देवता-प्रमुखत्व के तत्त्व पर आधारित है, एवं विष्णु, ब्रह्मा एवं अग्नि-शिव की उपासना प्रतिपादन करनेवाले पुराणों को वहाँ क्रमशः 'सात्विक,' 'राजस' एवं 'तामस' कहा गया है। सरस्वती एवं पितरों का माहात्म्य कथन करनेवाले पुराणों को वहाँ 'संकीर्ण' कहा गया है (मत्स्य. ५३.६८-६९)।

पद्म एवं भविष्य में भी पुराणों के सात्विक आदि प्रकार दिये गये है, किन्तु वहाँ इन पुराणों का विभाजन विभिन्न प्रकार से किया गया है (पद्म. उ. २६३.८१-८५, आनंदाश्रम संस्करण; भविष्य. प्रति. ३.२८.१०-१५)।

श्लोकसंख्या—विभिन्न पुराणों की श्लोकसंख्या बहुत सारे पुराणों में दी गयी है, जिसमें प्रायः एकवाक्यता है। पुराणों के इसी श्लोकसंख्या से विशिष्ट पुराण पूर्ण है, या अपूर्णावस्था में उपलब्ध है, इसका पता चलता है।

पुराणों के वक्ता—पुराणों का कथन करनेवाले आचार्यों को 'वक्ता' कहा जाता है, जिनकी सविस्तृत नामावलि भविष्य पुराण में प्राप्त है (भवि. प्रति. ३.२८.१०-१५)।

महापुराण—महापुराणों की संख्या अठारह बतायी गयी है, जिनके नामों के संबंध में प्रायः सर्वत्र एक-वाक्यता है।

इन पुराणों के नाम, उनके अधिष्ठात्री देवता, श्लोक-संख्या एवं निवेदनस्थल आदि की जानकारी 'महापुराणों की तालिका' में दी गयी हैं। इस तालिका में जिन पुराणों के नाम के आगे '*'चिन्ह लगाया गया है, उनके महापुराण होने के संबंध में एकवाक्यता नहीं है।

उपपुराणों की नामावलि—उपपुराणों की संख्या भी अठारह बतायी गयी है, किन्तु विभिन्न पौराणिक ग्रंथों में से कौन-कौन से ग्रंथों का 'अठारह उपपुराणों' की नामावलि में समाविष्ट करना चाहिये, इस संबंध में मतैक्य नहीं हैं। विभिन्न पुराणों में प्राप्त उपपुराणों के नाम नीचे दिये

महापुराणों की तालिका

महापुराण	वक्ता	देवता	गुण	श्लोक सख्या	अपूर्ण या पूर्ण	प्रसंग एवं स्थल
१. अग्नि (सर्व-विद्यायुक्त)	अंगिरस् (अग्नि-वसिष्ठ संवाद)	अग्नि	तामस	१५,४००	अपूर्ण	नैमिषारण्य
२. कूर्म	व्यास	शिव	सात्विक	१७,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य सत्र
३. गरुड	हरि	विष्णु	सात्विक	१९,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य
४. नारद	नारद	विष्णु	सात्विक	२५,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, सिद्धाश्रम
५. पद्म	ब्रह्मन् (रोमहर्षण पुत्र प्रोक्त)	ब्रह्मन्	सात्विक	५५,०००	अपूर्ण (प्रक्षेपयुक्त)	नैमिषारण्य,
६. ब्रह्म	ब्रह्मन्-मरीचि संवाद	ब्रह्मन्	राजस	१०,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य, द्वादशवार्षिकसत्र
७. ब्रह्मवैवर्त	सावर्णि-नारद संवाद	सूर्य	राजस	१८,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य
८. नृसिंह*	व्यास	विष्णु				सूत-भारद्वाज संवाद, प्रयाग
९. ब्रह्मांड	तंडिन्	शिव	राजस	१२,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य, सहस्रवार्षिकसत्र
१०. भविष्य	सुमन्तु शतानीक	शिव	राजस	१४,५००	अपूर्ण	शतानीकनृपसभा
११. भागवत	शुक					
(अ) विष्णु *		विष्णु	सात्विक	१८,०००	पूर्ण	सहस्रवार्षिकसत्र
(ब) देवी *		देवी				
१२ मत्स्य	व्यास	शिव	तामस	१४,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, दीर्घसत्र
१३. मार्कंडेय	मार्कंडेय	शिव	राजस	९,०००	अपूर्ण	
१४. लिंग	तंडिन्	शिव	राजस	११,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य
१५. वराह	मार्कंडेय	शिव	सात्विक	२४,०००	अपूर्ण	पृथ्वी-वराह संवाद
१६. वामन	व्यास	शिव	राजस	१०,०००	अपूर्ण	
१७. वायु *	व्यास	शिव		२४,०००	पूर्ण	
१८. विष्णु	पराशर	विष्णु	सात्विक	७०००वि.	पूर्ण	दृषद्वतीतीर दीर्घसत्र
१८-अ विष्णु-धर्मोत्तर				१६००० विष्णुध. २३०००		हिमालय राक्षससत्र
१९. शिव *	व्यास	शिव	तामस	२४,०००	पूर्ण	प्रयाग महासत्र
२०. स्कंद	शिव	शिव	तामस	८१,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, दीर्घसत्र
			कुल श्लोकसंख्या	४,२५,०००		

(अग्नि. २७२; ३८३; कूर्म. पूर्व. १.१३-१५; नारद अनुक्रमणिका; ब्रह्मवै. कृष्ण. २.१३३.११-२१; भा. १२.१३.४-८ संख्यायुक्त; मत्स्य. ५३.११-५६; वराह. ११२; वायु. १०४.२-१०; विष्णु. ३.६.१९-२३; स्कंद. प्रभास. २; रोमहर्षण देखिये)।

गये है:--आखेटक, आंगिरस, आण्ड, आद्य, आदित्य, उशनस्, एकपाद, एकाम्र, कपिल, कालिका, काली, कौमार, कौर्म, क्रियायोगसार, गणेश, गरुड, दुर्वास, देवी, दैव, धर्म, नंदी, नारद, नृसिंह, पराशर, प्रभासक, बार्हस्पत्य, बृहद्धर्म, बृहन्नंदी, बृहन्नारद, बृहन्नारसिंह, बृहद्वैष्णव, ब्रह्मांड, भागवत (देवी अथवा विष्णु), भार्गव, भास्कर, मानव, मारीच, माहेश, वसिष्ठ, मृत्युंजय, लीलावती, वामन, वायु, वारुण, विष्णुधर्म, लघुभागवत, शिवधर्म, शौकेय, सनत्कुमार, सांब, सौर (ब्रह्म) (एकाम्र. १.२०–२३; कूर्म. पूर्व. १.१७–२०; गरुड. १.२२३; १७–२०; दे. भा. १.३.१३–१६; स्कंद. प्रभास. २.११–१५; सूत-संहिता १.१३–१८; पद्म. पा. ११५; उ. ९४–९८; ब्रह्मांड. १.२५.२३–२६; पराशर. १.२८–३१; वारुण. १; मत्स्य. ५३.६०–६१)।

पुराणों का दैवतानुसार पृथक्करण—पुराणों के शैव, वैष्णव, ब्राह्म, अग्नि आदि विभिन्न प्रकार है, जो उनके द्वारा प्रतिपादित उपासना-सांप्रदायों के अनुसार किये गये हैं। उपास्य दैवतों के अनुसार, पुराणों का विभाजन निम्न प्रकार किया जाता है :—

(१) **शिव-उपासना के पुराण**--१. कूर्म; २. ब्रह्मांड; ३. भविष्य; ४. मत्स्य; ५. मार्कंडेय; ६. लिंग; ७. वराह; ८. वामन; ९. शिव; १०. स्कंद।

(२) **विष्णु-उपासना के पुराण**—१. गरुड; २. नारद; ३. भागवत; ४. विष्णु।

(३) **ब्रह्मा-उपासना के पुराण**--१. पद्म; २. ब्रह्म।

(४) **अग्नि-उपासना के पुराण**—१. अग्नि।

(५) **सवितृ-उपासना के पुराण**--१. ब्रह्मवैवर्त (स्कंद. शिवरहस्य. संभव. २.३०–३८; पंडित ज्वाला-प्रसाद, अष्टादशपुराणदर्पण. पृ. ४६)।

गीताग्रंथ--कूर्मपुराण में निम्नलिखित 'गीताग्रंथ' प्राप्त है, जो महाभारत में प्राप्त 'भगवद्गीता' के ही समान श्रेष्ठ श्रेणि के तत्त्वज्ञानग्रंथ माने जाते है :—१. ईश्वरगीता (कूर्म. उत्तर. १–११); २. व्यासगीता (कूर्म. उत्तर. १२–२९) इत्यादि।

व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा—पुराणग्रंथों के निर्माण के पश्चात्, व्यास ने ये सारे ग्रंथ अपने पुराणशिष्यपरं-परान्तर्गत प्रमुख शिष्य रोमहर्षण 'सूत' को सिखाये, जो आगे चल कर व्यास के पुराणशिष्यपरंपरा का प्रमुख आचार्य बन गया।

रोमहर्षण शाखा--रोमहर्षण के शिष्यों में निम्नलिखित आचार्य प्रमुख थे:-- १. सुमति आत्रेय (त्रैयारुणि); २. अकृतव्रण काश्यप (कश्यप); ३. अग्निवर्चस् भारद्वाज; ४. मित्रयु वासिष्ठ; ५. सोमदत्ति सावर्णि (ब्रह्मांड. २.३५. ६३–६६; भा. १२.६); ६. सुशर्मन् शांशपायन (शांत-पायन) (वायु. ६१.५५–५७; विष्णु. ३.६.१५–१८); ७. वैशंपायन; ८. हस्ति; ९. सूत।

महाभारत का निर्माण--पौराणिक साहित्य के साथ-साथ संस्कृत साहित्य का आद्य एवं सर्वश्रेष्ठ 'इतिहास पुराण ग्रंथ' माने गये 'महाभारत' का निर्माण भी व्यास के द्वारा हुआ।

शतपथ ब्राह्मण, तैत्तिरीय आरण्यक, एवं छांदोग्य उपनिषद में 'इतिहास पुराण' नामक साहित्य प्रकार का निर्देश प्राप्त है। किन्तु इन ग्रंथों में निर्दिष्ट 'इतिहास पुराण' स्वतंत्र ग्रंथ न हो कर, आख्यान एवं उपाख्यान के रूप में ब्राह्मणादि ग्रंथों में ग्रथित किये गये थे। ये आख्यान अत्यंत छोटे होने के कारण, उनका विभाजन 'पर्व' 'उपपर्व' आदि उपविभागों में नहीं किया जाता था, जैसा कि उन्हीं ग्रंथों में निर्दिष्ट 'सर्पविद्या,' 'देवजन-विद्या' आदि पौराणिक कथानकों में किया गया है।

इतिहास-पुराण ग्रंथ--व्यास की श्रेष्ठता यह है कि, इसने ब्राह्मणादि ग्रंथों में निर्दिष्ट 'इतिहास-पुराण' साहित्य जैसा तत्कालीन राजकीय इतिहास, 'सर्पविद्या' जैसे पौराणिक कथानकों के लिए ही उपयोग किये गये पर्व, उपपर्वादि से युक्त साहित्यप्रकार में बाँध लिया। इस प्रकार यह एक बिल्कुल नये साहित्यप्रकार का आद्य जनक बन गया, एवं इसके द्वारा विरचित 'महाभारत' बृहदाकार 'इतिहास पुराण' साहित्य का आद्य ग्रंथ साबित हुआ।

भारतीययुद्ध में विजय प्राप्त करनेवाले पाण्डुपुत्रों की विजयगाथा चित्रित करना, यह इसके द्वारा रचित 'जय' नामक ग्रंथ का मुख्य हेतु था। पाण्डुपुत्रों के पराक्रम का इतिहास वर्णन करते समय, इसने तत्कालीन धार्मिक, राज-नैतिक तत्त्वज्ञानों के समस्त स्रोतों को अपने ग्रंथ में ग्रथित किया। इतना ही नहीं, इसी राजनीति को धार्मिक, राज-नैतिक एवं आध्यात्मिक अधिष्ठान दिलाने का सफल प्रयत्न व्यास के इस ग्रंथ में किया गया है।

अपने इस ग्रंथ में, आदर्श राजनैतिक जीवन के उपलक्ष में प्राप्त भारतीय तत्त्वज्ञान व्यास के द्वारा ग्रथित किया गया है। इस प्रकार व्यक्तिविषयक आदर्शों को शास्त्रप्रमाण्य

एवं तत्त्वज्ञान की चौखट में बिठाने के कारण, महाभारत सारे पुराणग्रंथों में एक श्रेष्ठ श्रेणि का तत्त्वज्ञानग्रंथ बन गया है।

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष इन चतुर्विध पुरुषार्थों के आचरण में ही मानवीय जीवन की इतिकर्तव्यता है, एवं कर्म, ज्ञान, उपासना आदि से प्राप्त होनेवाला मोक्ष अन्य तीन पुरुषार्थों के आचरण के बिना व्यर्थ है, यही संदेश व्यास के द्वारा महाभारत में दिया गया है। व्यास के द्वारा विरचित महाभारत के इस राजनैतिक एवं तात्त्विक अधिष्ठान के कारण, यह एक सर्वश्रेष्ठ एवं अमर इतिहास-ग्रंथ बना है। इस ग्रंथ की सर्वंकषता के कारण, मानवी जीवन के एवं समस्याओं के सारे पहलू किसी न किसी रूप में इस ग्रंथ में समाविष्ट हो चुके हैं, जिस कारण '**व्यासोच्छिष्टं जगत्सर्वम्**' यह आर्षवाणी सत्य प्रतीत होती है (वैशंपायन एवं वाल्मीकि देखिये)।

महाभारत की व्याप्ति--इस ग्रंथ की विषयव्याप्ति बताते समय स्वयं व्यास ने कहा है, 'हस्तिनापुर के कुरु वंश का इतिहास कथन कर पाण्डुपुत्रों की कीर्ति संवर्धित करने के लिए इस ग्रंथ की रचना की गयी है। इस वंश में उत्पन्न गांधारी की धर्मशीलता, विदुर की बुद्धिमत्ता, कुंती का धैर्य, श्रीकृष्ण का माहात्म्य, पाण्डवों की सत्यपरायणता एवं धृतराष्ट्रपुत्रों का दुर्व्यवहार चित्रित करना, इस ग्रंथ का प्रमुख उद्देश्य है (म. आ. १. ५९-६०)।

महाभारत की शिष्यपरंपरा--व्यास के द्वारा विरचित महाभारत ग्रंथ का नाम 'जय' था, जिसकी श्लोकसंख्या लगभग २५०००थी। अपना यह ग्रंथ इसने वैशंपायन नामक अपने शिष्य को सिखाया, जिसने आगे चल कर उसी ग्रंथ का नया परिवर्धित रूप 'भारत' नाम से तैयार किया, जिसका नया परिवर्धित संस्करण रोमहर्षण सौति के द्वारा 'महाभारत' नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस प्रकार महाभारत का प्रचलित संस्करण सौति के द्वारा तैयार किया गया है (वैशंपायन एवं रोमहर्षण सूत देखिये)।

महाभारत के पर्व--महाभारत का विद्यमान संस्करण एक लाख श्लोकों का है, जो निम्नलिखित अठारह पर्वों में विभाजित है:--१. आदि; २. सभा; ३. वन- (आरण्यक); ४. विराट; ५. उद्योग; ६. भीष्म; ७. द्रोण; ८. कर्ण; ९. शल्य; १०. सौप्तिक; ११. स्त्री; १२. शांति; १३. अनुशासन; १४. आश्वमेधिक; १५. आश्रमवासिक; १६. मौसल; १७. महाप्रस्थानिक; १८. स्वर्गारोहण।

महाभारत के उपपर्व-- उपर्युक्त पर्वों में से बहुशः सभी पर्वों के अंतर्गत कई छोटे-छोटे आख्यान भी हैं, जिन्हें 'उपपर्व' कहते हैं। महाभारत के पर्वों में प्राप्त उपपर्वों की संख्या नीचे दी गयी है:--१. वनपर्व--२१; २. आदिपर्व--१९; ३. उद्योगपर्व--१०; ४. सभापर्व--८; ५. द्रोणपर्व--८; ६. भीष्मपर्व--४; ७. शल्यपर्व--३; ८. स्त्रीपर्व--२; ८. शांतिपर्व--३, ९. आश्वमेधिकपर्व--३; १०. आश्रमवासिकपर्व ३; ११. सौप्तिकपर्व--२; १२. अनुशासनपर्व--२। कर्ण, मौसल, महाप्रस्थानिक एवं स्वर्गारोहण पर्वों में उपपर्व नहीं हैं।

हरिवंश--महाभारतांतर्गत 'हरिवंश' महाभारत का ही एक भाग माना जाता है। इसी कारण उसे महाभारत का 'खिल' एवं 'परिशिष्ट' पर्व कहा जाता है। महाभारत की एक लक्ष श्लोकसंख्या भी 'हरिवंश' को समाविष्ट करने के पश्चात् ही पूर्ण होती है।

'हरिवंश' के निम्नलिखित तीन पर्व हैं:--१. हरिवंश पर्व (५५ अध्याय) २. विष्णुपर्व (१२८ अध्याय); ३. भविष्यपर्व (१३५ अध्याय)।

हरिवंश में यादववंश की सविस्तृत जानकारी प्राप्त है, जो पूरुवंश एवं भारतीय युद्ध का ही केवल वर्णन करनेवाले 'महाभारत' में अप्राप्य है। हरिवंश में प्राप्त यादवों के इस इतिहास से, महाभारत में दिये गये पूरुवंश के इतिहास की पूर्ति हो जाती है।

भागवतादि पुराणों में यादववंश की जो जानकारी प्राप्त है, उससे कतिपय अधिक जानकारी हरिवंश में प्राप्त है। 'हरिवंश माहात्म्य' के छः अध्याय पद्म में उद्धृत किये गये हैं। किन्तु आनंदाश्रम पूना के द्वारा प्रकाशित पद्म के संस्करण में वे अध्याय अप्राप्य हैं।

'भारतसावित्री' नामक सौ श्लोकों का एक प्रकरण उपलब्ध है, जिसमें भारतीय युद्ध की तिथिवार जानकारी एवं प्रमुख वीरों की मृत्युतिथियाँ दी गयी हैं।

व्यास की संशयनिवृत्ति--व्यास के जीवन से संबंधित एक उद्बोधक आख्यायिका वायु में प्राप्त है। पुराणों की रचना करने के पश्चात् एक बार इसे संदेह उत्पन्न हुआ कि, 'यज्ञकर्म,' 'चिंतन' (ज्ञान) एवं 'उपासना' ये परमेश्वरप्राप्ति के जो तीन मार्ग इसने पुराणों में प्रतिपादन किये है, वे सच हैं या नहीं? इसके इस संशय की निवृत्ति करने के लिए, चार ही वेद मानुषीरूप धारण कर इसके पास आये। इन वेदपुरुषों के शरीर पर यज्ञकर्म, ज्ञान एवं उपासना ये तीनों ही उपासनापद्धति विराजित थीं, जिन्हें देख कर व्यास

को अत्यंत आनंद हुआ, एवं अपने द्वारा प्रणीत परमेश्वर-प्राप्ति के मार्ग सत्य होने का साक्षात्कार इसे प्राप्त हुआ (वायु, १०४.५८-९४)।

व्यास का जीवन-संदेश—चतुर्विधपुरुषार्थों में से केवल धर्माचरण से ही अर्थकामादि पुरुषार्थ साध्य हो सकते हैं, क्यो कि, मानवीय जीवन में एक धर्म ही केवल शाश्वत, चिरंतन एवं नित्य है, बाकी सारे सुखोपभोग एवं पुरुषार्थ अनित्य हैं, ऐसा व्यास का मानवजाति के लिए प्रमुख संदेश था। महाभारत पुराणादि अपने सारे साहित्य में इसने यही संदेश पुनः पुनः कथन किया। इतना ही नहीं, महाभारत के अंतिम भाग में भी इसने यही संदेश दुहराया है, जिसमें एक द्रष्टा के नाते इसकी जीवनव्यथा बहुत ही उत्स्फूर्त रूप से प्रकट हुई है--

उर्ध्वबाहुर्विरौम्येष नच कश्चिच्छृणोति माम्।
धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते

(म. स्व. ५,४९)।

(हाथ ऊंचा कर सारे संसार से मैं कहता आ रहा हूँ कि, अर्थ एवं काम से भी अधिक धर्म महत्त्वपूर्ण है। किंतु कोई भी मनुष्य मेरे इस कथन की ओर ध्यान नहीं देता है।)

व्यास बादरायण—ब्रह्मसूत्रों का कर्ता माने गये बादरायण नामक आचार्य का नामांतर (बादरायण देखिये)। भागवत के अनुसार, यह एवं कृष्ण द्वैपायन व्यास दोनों एक ही व्यक्ति थे (भा. ३.५.१९)। किंतु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है।

व्याहृति—एक कन्यात्रय, जो सवितृ तथा पृश्नी की संतान थी (भा. ६.१८.१)।

व्युत्थिताश्व—इक्ष्वाकुवंशीय व्युषिताश्व राजा का नामांतर।

व्युषिताश्व--(सो. पूरु.) एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम काक्षीवती भद्रा था। इसकी पत्नी अत्यधिक सुंदर थी, जिसके प्रति अत्यधिक कामासक्त होने के कारण, इसकी राजयक्ष्मा से असामयिक मृत्यु हो गयी।

इसकी मृत्यु के पश्चात्, इसके शव से भद्रा को सात पुत्र उत्पन्न हुए (म. आ. ११२. ७-३३)। इसके इन सात पुत्रों में से, तीन पुत्र शाल्व नाम से, एवं बाकी चार भद्र नाम से सुविख्यात हुए।

व्युष्ट--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पुष्पार्ण एवं दोषा के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम पुष्करिणी था, जिससे इसे सर्वतेजस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१३.१४)।

२. एक वसु, जो विभावसु एवं उषा के पुत्रों में से एक था (भा. ६.६.१६)।

व्यूढोरस्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया।

व्यूढोरु--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया।

व्योमन्--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार दशार्ह राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम जीमूत था (दाशार्ह देखिये)।

व्योमासुर--एक असुर, जो मयासुर का पुत्र एवं कंस का अनुगामी था। कृष्णवध करने के लिए यह गोपवेश धारण कर गोकुल में आया, जहाँ कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.३७.२८-३२)।

व्रज--ऊरु एवं षडाग्नेयी के पुत्रों में से एक।

व्रत--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो चाक्षुष मनु के पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम नड्वला था (भा. ४.१३.१६)।

२. अभूतरजस् देवों में से एक।

व्रतिन्--वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर का अठारहवाँ व्यास।

व्रतेयु--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो रौद्राश्व राजा का पुत्र था।

व्रात--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार कृतंजय राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२८७)।

श

शंयु—एक आचार्य, जो एक विशिष्ट प्रकार के यज्ञपद्धति का ज्ञाता माना जाता था। इसकी मृत्यु के पश्चात् वह यज्ञपद्धति नष्ट होने का धोखा निर्माण हुआ। इसी कारण इसके अनुगामियों ने वह ज्ञान पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न किया था (श. ब्रा. १.९.१.२४)।

यजुर्वेद संहिताओं में इसे अग्नि का ही प्रतिरूप माना गया है (तै. सं. २.६.१०.१; ५.२.६.४; तै. ब्रा. ३.३.८.११; तै. आ. १.५.२)।

शंयु बार्हस्पत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो बृहस्पति के पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र था (ऋ. ६.४४–४६; ४८)। शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट शम्यु बार्हस्पत्य एवं यह दोनों एक ही होंगे (श. ब्रा. १.९.१.२५)।

पौराणिक साहित्य में इसे एक अग्नि कहा गया है, एवं इसकी माता एवं पत्नी का नाम क्रमशः तारा, एवं धर्मकन्या सत्या दिया गया है। अपनी इस पत्नी से इसे भरत एवं भारद्वाज नामक दो पुत्र, एवं अन्य तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई (म. व. २०९.२–५)।

चातुर्मास्यसंबंधित यज्ञों में एवं अश्वमेध यज्ञ में इसका पूजन किया जाता है।

शंसपि—शंखमत् नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर (शंखमत् देखिये)।

शक—एक विदेशीय जातिसमूह, जो पूर्वकाल में मध्य एशिया के निवासी थे। आगे चल कर ये लोग उत्तर पश्चिम भारत में आ कर रहने लगे।

ये लोग ई. पू. २ री शताब्दी में इरान के पूर्व भाग में स्थित प्रदेश में रहते थे, जिस कारण उस प्रदेश को 'शकस्तान' अथवा 'सीस्तान' कहते थे। ई. स. पू. १७४ में हूण लोगों के आक्रमण के कारण, शक लोग शकस्तान छोड़ने पर विवश हुए, एवं उत्तर पश्चिम भारत में आ कर निवास करने लगे। आगे चल कर ये सुराष्ट्र (काठियवाड) में रहने लगे।

उत्तरपश्चिम भारत में निवास—राजशेखर की काव्यमीमांसा में उत्तरपश्चिम भारत में निवास करनेवाले लोगों में शक लोगों का निर्देश हूण, कांबोज एवं बाह्लिक लोगों के साथ प्राप्त है। पतंजली के व्याकरण महाभाष्य में इनका निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ३.७५ भाष्य.)।

महाभारत में इनका निर्देश बाह्लिक लोगों के साथ प्राप्त है, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, भीम के द्वारा किये गये पूर्व दिग्विजय में इन्हें जीते जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (म. स. २७.२८९)। नकुल ने भी अपने पश्चिम दिग्विजय में इन्हें जीता था (म. स. २९. १५. पाठ.)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में ये लोग भेंट ले कर उपस्थित हुए थे (म. स. ५१.२६)

मत्स्यपुराण में इन्हें चक्षु नदी के तट पर निवास करनेवाले लोग कहा गया हैं, एवं तुषार, पह्लव, पारद, ऊर्ज, औरस लोगों के साथ इनका निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. १२१.४५–५१)। मार्कंडेय में इन्हे सिंधुदेशनिवासी कहा गया है (मार्क. ५७.३९)।

'अलाहाबाद प्रशस्तिलेख' से प्रतीत होता है कि, समुद्रगुप्त के द्वारा परास्त हुए विजातीय लोगों में शक मुरुंड लोग प्रमुख थे। कई अभ्यासकों के अनुसार, यहाँ मुरुंड शब्द का अर्थ 'राजा' अभिप्रेत है, एवं सुराष्ट्र प्रदेश में रहनेवाले शक लोगों के राजाओं की ओर इस शिलालेख में संकेत किया गया है।

महाभारत में इन्हें नंदिनी गाय के गोबर से होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. १६५.३५)। इस निर्देश से प्रतीत होता है कि, ये लोग महाभारतकाल में निंद्य माने जाते थे। ये लोग पहले क्षत्रिय थे, किन्तु बाद में ये शूद्र बने (म. अनु. ३३.३१)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में, ये लोग कांबोजराज सुदक्षिण के साथ दुर्योधन के पक्ष में शामिल थे (म. उ. १९.२१)। सात्यकि ने इन लोगों का संहार किया था (म. द्रो. ९५.३८)। कर्ण ने भी इन्हें परास्त किया था (म. क. ५.१८)।

भागवत के अनुसार, शक एवं यवन लोग हैहय राजाओं के सहायक थे। इसी कारण परशुराम, सगर एवं भरत राजाओं ने इन्हें परास्त किया था, एवं इनकी अर्धसश्मश्रु कर, एवं विरूप कर इन्हें छोड़ दिया था (भा. ९.८.५)। इन लोगों को वेदाधिकार प्राप्त नहीं था, जिस कारण ये आगे चल कर म्लेच्छ बन गये थे (भा. ४.३.४८)।

२. (मौर्य. भविष्य, एक राजा, जो बृहद्रथ मौर्य राज का पुत्र था (मत्स्य. २७२.२४)।

३. अठारह राजाओं का एक समूह, जो शिशुनाग राजाओं का समकालीन था (मत्स्य. ५०.७६)।

शकट--एक कंसपक्षीय असुर, जो कृष्ण के द्वारा मारा गया (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. ६५२-६५५; भा. १०.७.८; ह. वं. २.६; ५.२०; विष्णु. ५. ६.२; पद्म. ब्र. १३; उ. २४५)।

२. अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

शकपूत नार्मेध--एक राजा, जिसे ऋग्वेद के एक सूक्त के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. १०.१३२)। अनुक्रमणी में इसे नृमेध राजा का पुत्र कहा गया है। इसके द्वारा रचित सूक्त में, इसने वरुण से अपनी रक्षा करने के लिए प्रार्थना की है।

शकुन-पृथुक देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.७३)।

शकुनि--एक असुर, जो वृकासुर का पिता था। इंद्र एवं बलि के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने बलि राजा के पक्ष में भाग लिया था (भा. ८.१०.२०)।

२. इक्ष्वाकु राजा के सौ पुत्रों में से एक। दक्षिणापथ पर राज्य करनेवाले अपने पचास भाइयों का यह अधिपति था (वायु. ८८.९)।

३. (सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुतद्राज राजा का पुत्र, एवं स्वागत राजा का पिता था (वायु. ८९.२०)।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार दशरथ राजा का, वायु के अनुसार एकादशरथ राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार दृढरथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम करंभक था (भा. ९.२४. ४-५)।

शकुनि सौबल--गांधार देश के सुबल राजा का पुत्र, जो दुर्योधन का मामा था (म. आ. ५५.३९)। सुबल राजा का पुत्र होने के कारण इसे 'सौबल' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (म. क. ५५)।

यह शुरू से ही अत्यंत दुष्टप्रकृति था। देवताओं का कोप होने के कारण यह धर्मविरोधी बन गया, एवं अनाचारी कार्य करने लगा (म. आ. ५७.९३-९४)। यह द्वापर दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.७२; आश्व. ३९.१०)।

पाण्डवों का द्वेष--गांधारी के साथ धृतराष्ट्र का विवाह इसी के ही मध्यस्थता से हुआ था (म. आ. १०३.१४-१५)। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.५)। यह शुरू से ही पाण्डवों का द्वेष करता था, एवं इसने द्रुपदनगर में ही पाण्डवों को जड़मूल से समाप्त करने की दुर्योधन को सलाह दी थी (म. आ. परि. १. १०३)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी यह दुर्योधन के साथ उपस्थित हुआ था, एवं पाण्डवों के प्रति दुर्योधन की द्वेषाग्नि सुलगाने का प्रयत्न इसने किया था (म. स. ३१.६; ४२.६०)।

द्यूतक्रीड़ा--पाण्डवों पर विजय प्राप्त करने के लिए, एवं युधिष्ठिर का ऐश्वर्य हड़पने के लिए इसने दुर्योधन को द्यूतक्रीडा का आयोजन करने की सलाह दी। पश्चात् द्यूत के लिए युधिष्ठिर को निमंत्रित करवा कर, इसने उसे छल-कपट से द्यूत में परास्त किया (म. स. ५३-५४)।

इसके साथ द्यूत खेल कर कर युधिष्ठिर अपना सब कुछ खो बैठा। पश्चात् इसका युधिष्ठिर के साथ द्यूत का और एक दाँव हुआ, जिसमें शर्त के अनुसार इसने युधिष्ठिर को वन जाने के लिए विवश किया।

घोषयात्रा--द्वैतवन में पाण्डव जब वनवास भुगत रहे थे, तब दुर्योधन एवं इसने ऐसी योजना बनायी कि, उनके सम्मुख अपने सामर्थ्य का प्रदर्शन किया जाये। तदनुसार यह दुर्योधन के साथ घोषयात्रा के लिए गया। किन्तु वहाँ दुर्योधन चित्रसेन गंधर्व से परास्त हुआ, एवं वह उन्हीं पाण्डवों के द्वारा बचाया गया, जिनके सामने अपने सामर्थ्य का प्रदर्शन करने वह गया था (म. व. २२७-२३०)।

भारतीय युद्ध में--भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित पाण्डव पक्षियों से युद्ध हुआ था, जिनमें बहुत सारे युद्धों में यह परास्त हुआ था :—१. प्रतिविंध्य (म. भी. ४५), २. युधिष्ठिर, नकुल एवं सहदेव (म. भी. १०१. ८-२४); ३. अर्जुन (म. द्रो. १४६.२५-४१); ४, भीमसेन (म. क. ५५)।

भारतीय युद्ध के अंतिम दिन, पाण्डवों के घुड़सवारों ने इस पर आक्रमण किया था। उस समय यह युद्धभूमि से भाग गया (म. श. २२.३९-८७)। अन्त में सहदेव के द्वारा इसका वध हुआ (म. श. २७.६२)। पौष अमावास्या के दिन इसकी मृत्यु हुई।

परिवार--इसके निम्नलिखित ग्यारह भाई थे :—१. वृषक; २. बृहद्बल; ३. अचल; ४. सुभग; ५. विभु; ६. भानुदत्त; ७. गज; ८. गवाक्ष; ९. चर्मवत; १०. आर्जव; ११. शुक। इन भाइयों में से छः भाई इरावत के द्वारा (म. भी. ८६.२४-३७), एवं पाँच भीमसेन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. १३२.२०-२१)।

इसके पुत्र का नाम उलूक था।

शकुनिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.)।

शकुनिमित्र--विपश्चित पाराशर्य नामक ऋषि का नामान्तर (विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य देखिये)।

शकुन्त--विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५०)।

शकुन्तला—महर्षि कण्व की पोषित कन्या, जो दुष्यन्त राजा की धर्मपत्नी एवं भरत राजा की माता थी। यह एवं दुष्यन्त राजा कालिदास के 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के कारण अमर हो चुके हैं।

वैदिक साहित्य में—शतपथ ब्राह्मण में इसे एक अप्सरा कहा गया है, एवं इसके द्वारा 'नाडपित्' के तट पर भरत को जन्म दिये जाने को निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १३.५.४.१३)। इसी कारण इसे 'नाडपिती' अथवा 'नाडपित' दी जाती थी।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे विश्वामित्र एवं मेनका अप्सरा की कन्या कहा गया है। विश्वामित्र के तपःकाल में, उसका तपोभंग करने के लिए इंद्र के द्वारा मेनका भेजी गयी थी। उसी समय हिमालय पर्वत में मालिनी नदी के किनारे इसका जन्म हुआ था। इसका जन्म होते ही मेनका इसे पृथ्वी पर छोड़ कर चली गयी। तत्पश्चात् इसका लालनपालन शकुन्त पक्षियों ने किया, जिस कारण, इसे 'शकुन्तला' नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ६६. ११-१४)।

दुष्यन्त से विवाह-तत्पश्चात् कण्व ऋषि ने इसे अपनी कन्या मान कर, अपने आश्रम में इसे पालपोस कर बड़ा किया। एक बार मृगया खेलता हुआ हस्तिनापुर का राजा दुष्यन्त कण्व ऋषि के दर्शनार्थ आश्रम में आया। उस समय कण्व ऋषि आश्रम में नही थे, जिस कारण इसकी एवं दुष्यन्त की भेट हुई, एवं कण्व ऋषि के द्वारा ज्ञात हुई अपनी जन्मकथा इसने उसे कह सुनायी।

दुष्यन्त के द्वारा प्रेमदान माँगने पर इसने बताया कि, अपने पिता की संमति के बिना यह विवाह करना नहीं चाहती। उस समय दुष्यन्त ने इसे विवाह के आठ भेद बताये, एवं कहा कि, इन विवाहों में से गांधर्व-विवाह पिता के संमति के बिना ही हो सकता है। उस समय यह इस शर्त पर विवाह के लिए तैयार हुई कि, इसका पुत्र हास्तिनापुर का सम्राट् बने।

शकुन्तला की यह शर्त दुष्यन्त के द्वारा मान्य किये जाने पर, कण्व ऋषि के अनुपस्थिति में इसका दुष्यन्त से विवाह हुआ। विवाह के पश्चात्, हस्तिनापुर पहुँचते ही इसे दूत के द्वारा बुलाने का आश्वासन दे कर दुष्यन्त चला गया (म. आ. ६७.२०)।

भरतजन्म—आश्रम आने पर कण्व ऋषि को सारी घटना ज्ञात हुई, एवं उसने प्रसन्न हो कर इसे शुभाशीर्वाद दिये। कालांतर में इसे एक परमतेजस्वी बालक उत्पन्न हुआ, जिसका नाम 'भरत' अथवा 'सर्वदमन' रखा गया।

काफ़ी दिन बीत जाने पर भी, दुष्यंत की ओर से कोई बुलावा नहीं आया। इस कारण भरत के जातकर्मादि संस्कार हो जाने पर, कण्व ने इसे पातिव्रत्यधर्म का उपदेश दिया, एवं पतिगृह के लिए बिदा किया।

दुष्यंत की [illegible] में--दुष्यंत के राजसभा में पहुँचते ही, इसने उसे अपनी सारी शर्तें उसे याद दिलायीं, एवं भरत को यौवराज्याभिषेक करने के लिए कहा। किन्तु दुष्यंत ने इसका यह प्रस्ताव अमान्य किया, एवं अत्यंत रोषपूर्ण शब्दों में इसकी आलोचना की।

दुष्यंत की यह कठोर वाणी सुन कर इसे बड़ी लज्जा प्रतीत हुई, एवं इसने धर्म की श्रेष्ठता, एवं सूर्यादि देवताओं को साक्षी बनाकर, अपने प्रति न्याय करने के लिए बार बार अनुरोध किया। इसी समय इसने पत्नी एवं पुत्र के बारे में पति के कर्तव्य दुहाराये, एवं इन कर्तव्यों का पालन करने के लिये उसको बार बार प्रार्थना की। फिर भी दुष्यंत ने इसकी एक न सुनी। तब इसने उसे शाप दिया, 'अगर तुम भरत को युवराज नहीं बनाओगे, तो भरत तुम्हारे राज्य पर आक्रमण कर के स्वयं राज्याधिकारी बनेगा'।

इतने में आकाशवाणी के द्वारा दुष्यंत को ज्ञात हुआ कि, शकुंतला उसकी धर्मपत्नी है, एवं भरत उसका पुत्र है। इस पर दुष्यंत ने इन दोनों को स्वीकार किया, एवं इसे अपनी पटरानी एवं भरत को अपना युवराज बनाया (वायु. ९९.१३५; म. आ. ६९.४४)। पश्चात् दुष्यंत ने इसे समझाया कि, लोकापवाद के भय से शुरु में उसने इसको अस्वीकार किया था (म. आ. ६२, भा .९.२०)।

अभिज्ञानशाकुंतलम्—कालिदास के द्वारा विरचित संस्कृत नाटक 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' में, दुर्वास ऋषि के द्वारा इसे दिया शाप, शक्रावतारतीर्थ में 'अभिज्ञान' की

अँगूठी इसके द्वारा खो जाना, दुष्यंत राजा विस्मृति का शिकार बनना, मत्स्यगर्भ से प्राप्त अभिज्ञान की अँगूठी से उसे पुनः स्मृति प्राप्त होना, आदि अनेकानेक उपकथा-विभाग दिये गये हैं। किंतु वे सारे कल्पनारम्य प्रतीत होते है, क्यों कि, उन्हें प्राचीन साहित्य में कोई भी आधार प्राप्त नहीं होता। किंतु पद्मपुराण के बंगला संस्करण में 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' से मिलती जुलती कथा प्राप्त है।

शक्त—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो पूरु राजा का प्रपौत्र, एवं मनुस्यु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सौवीरी, एवं भाइयों के नाम संहनन एवं वाग्मी थे (म. आ. ८९.७ पाठ.)।

शक्ति—देवी पार्वती का एक अवतार। पौराणिक साहित्य में शक्तियों की संख्या इक्कावन बतायी गयी है, जिनके विभिन्न स्थानों को वहाँ 'शक्तिपीठ' कहा गया है।

शक्तिदेवता का विकास— रुद्र के द्वारा किये गये दक्षयज्ञ के विध्वंस की कथा ब्राह्मणग्रंथों में एवं महाभारत में प्राप्त है। किन्तु जिस कल्पना के आधार से शक्तिपूजा के पीठों की निर्मिति भारतवर्ष में हुई, उस रुद्र-शिव एवं पार्वती के कथा का निर्देश, इन ग्रंथों में कहीं भी प्राप्त नहीं है, जो सर्वप्रथम उत्तरकालीन 'देवीभागवत' एवं 'कालिकापुराण' में पाया जाता है (दे. भा. ७.३०; कालिका. १८)।

इस कथा के अनुसार, दक्षयज्ञ में अपमानित हो कर सती ने यज्ञकुंड में अपना शरीर झोंक दिया। तत्पश्चात् क्रोध से पागल हुआ रुद्र-शिव सती का प्राणहीन देह कन्धे पर ले कर समस्त त्रैलोक्य में नृत्य करता हुआ उन्मत्त अवस्था में घूमने लगा।

यह देख कर विष्णु ने अपने चक्र से सती के शरीर के टुकड़े टुकड़े कर उन्हें विभिन्न स्थानों पर गिरा दिया। सती के शरीर के खंड तथा आभूषण, इक्कावन स्थानों पर गिरे, जहाँ एक-एक शक्ति, एवं एक एक भैरव विभिन्न रूप धारण कर अवतीर्ण हुए। आगे चल कर, इन्हीं स्थानों पर 'शक्तिपीठों' का निर्माण हुआ।

शक्तिपीठ—उत्तरकालीन पौराणिक साहित्य में, एवं शाक्त उपासना के 'शिवविजय', 'दाक्षायणीतंत्र', 'योगिनीतंत्र' 'तंत्रचूडामणि' आदि तांत्रिक ग्रंथों में 'शक्तिपीठों' की विस्तृत जानकारी प्राप्त है, जहाँ सर्वत्र इन पीठों की संख्या प्रायः सर्वत्र इक्कावन बतायी गयी है। इनमें से 'तंत्रचूडामणि' में प्राप्त ५२ 'शक्तिपीठों' की, वहाँ स्थित 'शक्ति' की, एवं वहाँ गिरे हुए सती के अंग या आभूषणों की नामावलि नीचे इसी क्रम से दी गयी है:—

१. **अट्टहास** (फुल्लरा, अधरोष्ठ); २. **उज्जयिनी** (मांगल्य-चंडिका, कूर्पर); ३. **करतोयातट** (अपर्णा, वामतल्प); ४. **कन्यकाश्रम** (शर्वाणी, पृष्ठ); ५. **करवीर** (महिषमर्दिनी, तीनों नेत्र); ६. **कर्णाट** (जयदुर्गा, दोनों कर्ण); ७. **कश्मीर** (महामाया, कंठ); ८. **कांची** (देवगर्भा, अस्थि); ९. **कालमाधव** (काली, वामनितंब); १०. **कामगिरि** (कामाख्या, योनि); ११. **कालीपीठ** (कालिका, पादांगुलि); १२. **कुरुक्षेत्र** (सावित्री, दक्षिणगुल्फ); १३. **गण्डकी** (गण्डकी, दक्षिण गण्ड); १४. **किरीट** (विमला, किरीट); १५. **गोदावरीतट** (विश्वेशी, वामगण्ड); १६. **चहल** (भवानी, दक्षिणबाहु); १७. **जनस्थान** (भ्रामरी, चिबुक); १८. **जयन्ती** (जयन्ती, वामजंघ); १९. **जालंधर** (त्रिपुरमालिनी, वामस्तन); २०. **ज्वालामुखी** (सिद्धिदा, जिव्हा); २१. **त्रिपुरी** (त्रिपुरसुंदरी, दक्षिणपाद); २२. **त्रिस्रोता** (भ्रामरी, वामपाद); २३. **नलहारी** (कालिका, उदरनलिका); २४. **नन्दिपुर** (नंदिनी, कंठहार); २५. **नैपाल** (महामाया, जानु); २६. **पंचसागर** (वाराही, अधोदंतपंक्ति); २७. **प्रभास** (चन्द्रभागा, उदर); २८. **प्रयाग** (ललिता, हस्तांगुलि); २९. **भैरवपर्वत** (अवन्ती, ऊर्ध्वओष्ठ); ३०. **मगध** (सर्वानंदकरी, दक्षिणजंघ); ३१. **मणिवेदिका** (गायत्री, मणिबंध); ३२. **मानस** (दाक्षायणी, दक्षिणपाणि); ३३. **मिथिला** (उमा, वामस्कंध); ३४. **युगाद्या** (भूतधात्री, दक्षिणपदांगुष्ठ); ३५. **यशोर** (यशोरेश्वरी, वामपाणि); ३६. **रामगिरि** (शिवानी, दक्षिणस्तन); ३७. **रत्नावली** (कुमारी, दक्षिणस्कंध); ३८. **बहुला** (बहुला, वामबाहु); ३९. **लंका** (इंद्राक्षी, नूपुर); ४०. **वक्त्रेश्वर** (महिषमर्दिनी, मन); ४१. **वाराणसी** (विशालाक्षी, कर्णकुंडल); ४२. **वैद्यनाथ** (जयदुर्गा, हृदय); ४३. **विभाष** (कपालिनी, वामगुल्फ); ४४. **विराट** (अंबिका, वामपदांगुष्ठ); ४५. **विरजाक्षेत्र** (विमला, नाभि); ४६. **वृंदावन** (उमा, केशकलाप); ४७. **श्रीपर्वत** (श्रीसुंदरी, दक्षिणतल्प), ४८. **श्रीशैल** (महालक्ष्मी, ग्रीवा); ४९. **शुचि** (नारायणी, ऊर्ध्वदंतपंक्ति); ५०. **शोण** (शोणाक्षी, दक्षिणनितंब); ५१. **सुगंधा** (सुनंदा, नासिका); ५२. **हिंगुला** (कोटरी, ब्रह्मरंध्र)।

२. एक आचार्य, जिसने अपने शिष्य दम को 'सामवेद' सिखाया था (मार्क. १३०)।

३. ढुंढि नामक शिवावतार का पिता (दुरासद देखिये)।

शक्ति वासिष्ठ—एक ऋषि, जो वसिष्ठ एवं अरुंधती के सौ पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र था (भा. ४.१.४१; म. आ. १६६.४)। मत्स्य में इसे 'शक्तिवर्धन' कहा गया है (मत्स्य. १४५.९२-९३)। इसे वर्तमान वैवस्वत मन्वंतर का छब्बीसवाँ वेद-व्यास कहा गया है।

वैदिक साहित्य में—ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में विश्वामित्र ऋषि से हुए इसके संघर्ष की, एवं इस संघर्ष में इसे जला कर भस्म किये जाने की, अनेकानेक कथाएँ प्राप्त हैं।

ऋग्वेद के कई मंत्रों का यह द्रष्टा है (ऋ. ७.३२.२६-२७; ९.९७. १९-२१; १०८.३. १४-१६)। इन मंत्रों में से छब्बीसवें ऋचा का केवल पहला ही चरण इसके द्वारा रचाया गया था।

ऋग्वेद में प्राप्त एक ऋचा से प्रतीत होता है, कि एक बार जब यह विश्वामित्र के उद्यान में गया था, तब वहाँ के सेवकों ने इसे जला कर भस्म किया था (ऋ. वेदार्थदीपिका ७.३२.२६)।

गेल्डनर के अनुसार, ऋग्वेद की अन्य एक ऋचा में शक्ति के मृत्यु-संघर्ष का वर्णन प्राप्त है (ऋ. ३.५३.२२)। किंतु यह व्याख्या अत्यधिक संदिग्ध प्रतीत होती है।

ऋग्वेद के सायणभाष्य में, इसके संबंध में शाट्यायन ब्राह्मण के अंतर्गत एक आख्यायिका उद्धृत की गयी है। एक बार सौदास राजा के घर में एक यज्ञ, हुआ जहाँ इसने विश्वामित्र ऋषि को पराजित किया। तदुपरांत, विश्वामित्र ने जमदग्नि के घर आश्रय लिया, जिसने उसे 'ससर्परी विद्या' सिखायी। इसी विद्या के आधार से विश्वामित्र ने इसे वन में भस्म किया, एवं इस प्रकार अपने पराजय का प्रतिशोध लिया (ऋग्वेद. सायणभाष्य ३.५३.१५-१६; ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी ७.३२)।

जैमिनि ब्राह्मण में, विश्वामित्र ऋषि के अनुयायियों के द्वारा इसे आग में फेंक दिये जाने की कथा अधिक स्पष्ट रूप से प्राप्त है (जै. ब्रा. २.३९०)।

महाभारत एवं पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में यह विश्वामित्र के अनुयायियों के द्वारा नहीं, बल्कि राक्षसरूप प्राप्त हुए कल्माषपाद सौदास राजा के द्वारा भक्षण किये जाने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. १६६.२६)। महाभारत में प्राप्त यह निर्देश अयोग्य प्रतीत होता है, क्यों कि, यह कल्माषपाद सौदास के द्वारा नहीं, बल्कि सुदास राजा के द्वारा मारा गया था।

राक्षस के द्वारा इसे भक्षण किये जाने की कथा लिंग में भी प्राप्त है (लिंग. ६४-६५)। इसकी मृत्यु होने पर, इसके पुत्र पराशर ने इसका वध का प्रतिशोध लेने के लिए राक्षससत्र प्रारंभ किया। आगे चल कर, उसके पितामह वसिष्ठ ने उसे इस पापकर्म से परावृत्त किया (पराशर देखिये)। अपनी मृत्यु की पश्चात्, यह शिवभक्ति के कारण स्वर्गलोक पहुँच गया (पद्म. पा. ११०)।

वायुपुराण का कथन—इसे दक्ष से 'वायुपुराण' का ज्ञान प्राप्त हुआ था, जिसे इसने गर्भावस्था में स्थित अपने पराशर नामक पुत्र को निवेदित किया था (ब्रह्मांड. २. ३२.९९)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम अदृश्यन्ती था, जिससे इसे पराशर नामक सुविख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१.४१)। इसका यह पुत्र इसकी मृत्यु के पश्चात् बारह वर्षों के उपरांत उत्पन्न हुआ था (पराशर देखिये)।

शक्तिवर्धन—वसिष्ठपुत्र शक्ति का नामांतर (मत्स्य. १४५.९३; शक्ति वासिष्ठ देखिये)।

शक्तिसेन—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार निम्न राजा का पुत्र था। विष्णु एवं भागवत में इसे 'सत्राजित्', एवं वायु में इसे 'शक्रजित्' कहा गया है (मत्स्य. ४५.३; वायु. ९६.२०-२९)।

यह परम सूर्यभक्त था, जिसने इसे 'स्यमंतक' नामक दिव्य मणि दिया था। इसी 'स्यमंतक' मणि के कारण, इसका कृष्ण से संघर्ष हुआ। किंतु अंत में इसे यह मणि पुनः प्राप्त हुआ।

इसकी कुल दस पत्नियाँ थी, जिनसे इसे सौ पुत्र उत्पन्न हुए थे। इसके पुत्रों में भंगकार, व्रतपति, एवं अपस्वान्त प्रमुख थे (वायु. ९६.५०-५३)।

२. (सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शोणाश्व राजा का पुत्र था।

शक्तिहस्त—एक राक्षस, जो जयंत के द्वारा मारा गया (पद्म. सृ. ७५)।

शक्र—बारह आदित्यों में से एक (म. आ. ५९-१५)। यह इंद्र था, एवं इसे शतक्रतु नामांतर प्राप्त था (इंद्र १. देखिये)। इसके भाई का नाम उपेंद्र था (भा. ६.६.३९)।

शक्रज्योति—मरुतों के प्रथम गणों में से एक।

शक्रदेव—कलिंग देश का एक राजकुमार, जो भानुमत् राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में, यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। भीमसेन के द्वारा इसका वध हुआ (म. भी. ५०.२२)।

शक्रमित्र—(सू. इ.) एक राजा, जो मांधातृ राजा का कनिष्ठ पुत्र था।

शक्रय—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

शक्रहोम—एक राजा, जो भविष्य के अनुसार यज्ञहोत्र राजा का पुत्र था। यह इंद्र के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिस कारण इसे अयोध्या का राज्यपद प्राप्त हुआ था। आगे चल कर, इंद्र की कृपा से इसे स्वर्गप्राप्ति भी हो गयी।

शंकमान—महिष्र लोगों का एक नागवंशीय राजा, जो प्रवीर राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७४.१८७)।

शंकर—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (विष्णु. १.२१.४)।

२. रुद्र-शिव एक नामांतर। इसे 'शंभु', 'उमापति', 'शूलपाणि', 'वृषभध्वज', 'हर' आदि नामांतर भी प्राप्त थे (विष्णु. ५.३२.८)।

इसने 'वैशालाक्ष' नामक दस हजार अध्यायों से युक्त एक राजनीतिविषयक ग्रंथ की रचना की थी, जो ब्रह्मा के द्वारा विरचित एक बृहद्‌ग्रंथ का संक्षेप कर लिखा गया था (म. शां. ५९.८६-८८; रुद्र-शिव देखिये)।

३. एक चांडाल, जो अपने पत्नी के पुण्यकर्मों के कारण मुक्त हुआ (पद्म. ब्र. २०)।

४. उन्मत्त प्रकृति का एक शिवभक्त ऋषि, जो गौतम ऋषि का शिष्य था। वृषपर्वन् ने इसका वध किया, किंतु आगे चल कर शिव ने इसे पुनः जीवित किया (पद्म. पा. ११४)।

५. एक पापी पुरुष, जिसकी कथा स्कंद में 'रामनाथ-तीर्थ' का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गयी है (स्कंद. ३.१.४८)।

६. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३५)।

शंकु—(सो. कुकुर.) एक यादव राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार उग्रसेन राजा के नौ पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.२४)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'संकु' एवं 'कद्रशंकु' कहा गया है। मत्स्य के अनुसार, यह बलि का अनुगामी था (मत्स्य. २४५.३१)।

२. कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१३)।

३. एक ऋषि, जो वसिष्ठ एवं ऊर्जा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.११.४२)।

४. एक महारथी यादव राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. स. १४.५९; आ. १७७.१८१८*)। अर्जुन एवं सुभद्रा के विवाहसमारोह में, यह दहेज ले कर उपस्थित हुआ था।

शंकुकर्ण—'अतल' नामक पाताललोक में रहनेवाला एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.२०.१६)।

२. दक्ष के अनुचरों का सामूहिक नाम (मत्स्य. ४.५२)।

३. एक राक्षस, जो अशोकवन में सीता के संरक्षणार्थ नियुक्त किया गया था (वा. रा. सुं. १८.२८)।

४. (सो. कुरु.) एक राजा, जो जनमेजय एवं वपुष्टमा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०.९४)। पाठभेद (भा. सं.)—'शंकु'।

५. धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)।

६. एक स्कंदपार्षद, जो उसे पार्वती के द्वारा दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम पुष्पदंत था (म. श. ४४.४७)।

७. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५२)।

८. कुबेरसभा में रहनेवाला एक शिवपार्षद (म. स. परि. १.३.२०)।

९. एक पापी ब्राह्मण, जो गीता के सातवें अध्याय के पठन से मुक्त हुआ था (पद्म. उ. १८१)।

१०. एक ब्राह्मणवेषधारी शिवावतार, जिसने एक पिशाच्च को मुक्ति प्रदान की थी (पद्म. स्व. ३५)।

शंकुरथ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.४)।

शंकुरोमन्—एक सहस्रशीर्ष नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.४१)।

शंकुशिरस्—एक पराक्रमी दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। इंद्र-वृत्र युद्ध में यह वृत्र के पक्ष में, एवं देवासुर युद्ध में यह बलि की सेना में शामिल था (भा. ६.६.३०; १०.१९; विष्णु. १.२१.४)।

शंकुशिरोधर—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१७)।

शंख—एक पराक्रमी असुर, जो समुद्र का पुत्र होने के कारण, समुद्र में ही निवास करता था (म. स. ९.

१३)। अपने बल एवं पराक्रम से, इसने समस्त देव एवं लोकपालों को सुवर्ण-पर्वत की गुफा में भगा दिया था।

वेदों पर आक्रमण--आगे चल कर, देवपक्ष के देव वेदों के बल से पुनः सामर्थ्यशाली न हो जायें, इस हेतु से इसने चारों वेदों को नष्ट करना चाहा। एक बार विष्णु जब गहरी निद्रा में सो रहे थे, तब इसने वेदों पर आक्रमण किया। इसके भय से चारों वेद भाग कर समुद्र में छिप गये।

वेदों के लुप्त हो जाने से, पृथ्वी की सारी जनता संत्रस्त हुई। पश्चात् ब्रह्मा ने विष्णु के पास जा कर उन्हें जगाया, एवं शंख का वध करने की प्रार्थना की।

वध--तदुपरांत विष्णु ने मत्स्य का रूप धारण कर समुद्र में प्रवेश किया, एवं कार्तिक शुक्ल एकादशी के दिन इसका वध किया। इसके वध के पश्चात्, विष्णु ने चारों वेदों को विमुक्त किया। इसी कारण कार्तिक माह, एवं विशेषतः कार्तिक शुक्ल एकादशी विष्णुभक्तों में अत्यंत पवित्र मानी जाती है (पद्म. सृ. १; उ. ९०-९१)।

स्कंद के अनुसार, इसका वध कार्तिक एकादशी के दिन नहीं, बल्कि आषाढ शुक्ल एकादशी के दिन हुआ था (स्कंद. ४.२.३३)।

२. पाताल में रहनेवाला एक सहस्रशीर्ष नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.८; भा. ५.२४.३१)। नारद ने इंद्रसारथि मातलि से इसका परिचय कराया था (म. उ. १०१.१२)। बलराम के निर्वाण के समय, यह उनके स्वागतार्थ उपस्थित हुआ था (म. मौ. ५.१४)।

३. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. एक मत्स्यदेशीय महारथ राजकुमार (म. उ. ५६९ *), जो विराट एवं सुरथा का पुत्र, तथा उत्तर एवं उत्तरा का भाई था। भारतीय युद्ध में, यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. भी. ७८.२१)।

५. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१२३)।

६. एक ऋषि, जो जैगीषव्य एवं एकपर्णा (एकपाटाला) का पुत्र, एवं लिखित ऋषि का भाई था (ब्रह्मांड. २.३०. ४०; वायु ७२.१९)।

महाभारत में--इसकी एवं इसके भाई लिखित की कथा महाभारत में विस्तृत रूप में प्राप्त है, जो व्यास के द्वारा युधिष्ठिर को कथन की गयी थी। भारतीय युद्ध के पश्चात, युधिष्ठिर विरागी बन कर राज्यत्याग करने के लिए प्रवृत्त हुआ। उस समय, व्यास ने उसे राजधर्म का उपदेश करते समय कहा—

दण्ड एवं ही राजेंद्र क्षत्रधर्मो न मुण्डनम्।

(क्षत्रिय का प्रथम कर्तव्य राज्य करना है, संन्यास लेना नहीं है)।

अपने उपर्युक्त कथन के पुष्ट्यर्थ, व्यास ने शंख एवं लिखित नामक ऋषियों में संघर्ष होने पर, सुद्युम्न राजा ने किस प्रकार व्यक्तिनिरपेक्ष न्याय दिया, इस संबंध में एक प्राचीन कथा का निवेदन किया (म. शां. २४; लिखित देखिये)।

धर्मशास्त्रकार-- इसके नाम पर निम्नलिखित तीन स्मृतिग्रंथ उपलब्ध हैः— १. **लघुशंखस्मृति**, जिसमें ७१ श्लोक हैं, एवं जो आनंदाश्रम, पूना के 'स्मृतिसमुच्चय' में प्रकाशित की गयी है; २. **बृहत्शंखस्मृति**, जिसमें अठारह अध्याय हैं, एवं जो वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई के द्वारा प्रकाशित हो चुकी है; ३. **शंख-लिखितस्मृति**, जो इसने अपने भाई लिखित के सहयोग से लिखी थी। इस स्मृति में कुल ३४ श्लोक हैं, एवं उसमें परान्न-भोजन, अतिथिपूजन आदि विषयों की चर्चा की गयी है। आनंदाश्रम, पूना के द्वारा वह प्रकाशित की गयी है।

७. (सो. पूरु.) एक राजा, जो जनमेजय पारिक्षित राजा एवं वपुष्टमा का पुत्र, एवं शतानीक राजा का भाई था (म. आ. ९०.९४)।

८. एक ऋषि, जिसे ब्रह्मदत्त राजा ने अपना सारा धन दान के रूप में प्रदान किया था (म. शां. २२६. २९; अनु. १३७.१७)।

९. एक केकयराजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था, एवं जिसकी श्रेणी 'रथी' थी (म. उ. १६८.१४)।

१०. कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. ९.१३)।

११. एक जगन्नाथभक्त राजा, जो हैहयवंशीय भूत राजा का पुत्र था। जगन्नाथ ने दर्शन दे कर, इसे मुक्ति प्रदान की (स्कंद. २.१.३८)। हैहय राजाओं के वंशावलि में इसका नाम अप्राप्य है।

१२. एक राजा, जिसे सत्पुरुषों के पदधूलि से मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. क्रि. २१)।

१३. एक ब्राह्मण, जिसने स्वयं की चोरी करने आये व्याध को 'वैशाख-माहात्म्य' सुना कर उसका उद्धार किया (स्कंद. २.७.१७-३१)।

शंख कौष्य--एक आचार्य, जो यज्ञकर्म से संबंधित अनेकानेक नये मतों का प्रवर्तक था। यह जात शाकायन्य नामक आचार्य का समकालीन था (का. सं. २२.७)।

शंख बाभ्रव्य--एक आचार्य, जो राम क्रातुजातेय वैय्याघ्रपद्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१; ४.१७.१)।

शंख यामायन—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ.१०.१५)।

शंखचूड--रामसेना का एक वानर। राम के द्वारा प्रशस्ति की जाने के कारण, यह सुग्रीव के कृपापात्र वानरों में से एक बना था (वा. रा. उ. ४०.७)।

२. एक विष्णुभक्त राक्षस, जो विप्रचित्ति राक्षस का पौत्र, एवं दंभ राक्षस का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम तुलसी था, जिससे इसने गांधर्वविवाह किया था। देवी भागवत में इसकी पत्नी का नाम पद्मिनी अथवा विरजा दिया गया है। अपने पूर्वजन्म में, यह सुदामन् नामक विष्णु-पार्षद था (दे. भा. ९.१८)।

अनाचार—इसकी पत्नी तुलसी के पातिव्रत्य के कारण, एवं विष्णु से प्राप्त किये विष्णुकवच के कारण, यह समस्त पृथ्वी में अजेय बन गया था। इसी कवच के बल से इसने देवों को त्रस्त करना प्रारंभ किया, एवं उनके राज्य यह हस्तगत करने लगा।

वध—इसके दुष्कार्यों को देख कर, श्रीविष्णु ने इसका वध करने का निश्चय किया। तत्प्रीत्यर्थ उसने इसकी पत्नी तुलसी का पातिव्रत्यप्रभाव नष्ट किया, एवं तत्पश्चात् एक ब्राह्मण का रूप धारण कर, इससे विष्णुकवच भी दान के रूप में प्राप्त किया।

तदुपरांत शिव ने काली के समवेत इस पर आक्रमण किया, एवं विष्णु के द्वारा दिये गये शूल की सहायता से इसका वध किया। इस युद्ध में शिव की ओर से काली, एवं इसकी ओर से तमाम राक्षसियों ने भाग लिया था।

माहात्म्य--इसकी मृत्यु के पश्चात्, इसके हड्डियों से शंख बने, जिन्हें विष्णुपूजा में अग्रमान प्राप्त हुआ। शंकर को छोड़ कर अन्य देवताओं पर डाला गया जल तीर्थजल के समान पवित्र माना जाता है। इसका शब्द भी शुभ माना जाता है, किंतु इसके ऊपर तुलसीदल चढ़ाना निषिद्ध एवं अशुभ माना गया है (दे. भा. ९.१७.२५; ब्रह्मवै. २.१६-२०; शिव. रुद्र. यु. २७-४०),

३. पाताल में रहनेवाला एक प्रमुख नाग (भा. ५. २४.३१)।

४. एक यक्ष, जो कुबेर का अनुचर था। एक बार इसने गोकुल में रहनेवाली कई गोपियों का हरण किया, जिस कारण कृष्ण ने इसका वध किया, एवं इसके सिर का मणि बलराम को अर्पण किया (भा. १०.३४.२५-३२)।

शंखण एवं **शंखनाभ**—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय खगण राजा का नामांतर। ब्रह्मांड में इसके पुत्र का नाम व्युषिताश्व दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६३.२०५-२०६)।

शंखनख—वरुणसभा का एक नाग (म. स. ९.९*)।

शंखपद—एक राजा, जो स्वारोचिष मनु का पुत्र एवं शिष्य था। मनु ने इसे सात्वत धर्म का ज्ञान प्रदान किया था, जो आगे चल कर इसने सुधर्मन् दिशापाल नामक अपने शिष्य को सिखाया था (म. शां. ३३६.३४-३५)।

२. दक्षिण देश का एक राजा, जो कर्दम प्रजापति, एवं श्रुति के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.८.१९)। अपने उत्तर आयुष्य में, यह तपस्वी एवं ऋषिक बन गया (मत्स्य. १४५.९६)।

शंखपाद्--एक राजर्षि, जो लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य था (वायु. २३.१३५)

शंखपाद अथवा **शंखपाल**—एक सहस्रशीर्ष नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था। यह भाद्रपद माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३८)।

शंखपिंड—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

शंखमत्--एक ऋषिक (वायु. ५९.९४)। पाठभेद-'शंखपाद', एवं 'शंखपा'।

शंखमुख--शंखद्वीप में रहनेवाला नागों का एक राजा, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ६५. ११; वायु. ४८.३३)।

शंखमेखल-एक ब्रह्मर्षि, जो सर्पदंश से मृत हुई प्रमद्वरा को देखने के लिए उपस्थित हुआ था (म. आ. ८.२०)। यह यमसभा का एक सदस्य भी था (म. स. ९.३४)।

शंखरोमन्--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

शंख-लिखित—एक ऋषिद्वय (शंख एवं लिखित देखिये)।

शंखशिरस्--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.१२)। पाठ—'शंखशीर्ष'

शंग--तामस मन्वंतर एक का योगवर्धन।

५. उत्तम मन्वंतर का एक ऋषि (मत्स्य. ९.१४)।

शंग शाख्रायनि आत्रेय--एक आचार्य, जो नगरिन् जानश्रुतेय नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३. ४०.१)। 'शाख्रायन' का वंशज होने के कारण, इसे 'शाख्रायनि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शची पौलोमी--एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री, जो पुलोमन् राजा की कन्या थी। इसके द्वारा रचित सूक्त में सौत का नाश करने के लिए प्रार्थना की गयी है (ऋ. १०. १५९)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे इन्द्र की पत्नी एवं जयन्त की माता कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६. २३) इन्द्र-नहुष संघर्ष में इसने महत्त्वपूर्ण भाग लिया था (नहुष २. देखिये)। इसका सूर्य के साथ संवाद हुआ था (म. अनु. १४.५-६ कुं.)।

शठ--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२८)।

२. (सो. वसु.) एक यादव, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था। कृष्ण के साथ, यह उपप्लव्य नगरी में पांडवों से मिलने गया था।

३. एक राक्षस, जिसके घर पर हनुमत् ने लंकादहन के समय छलांग मारी थी (वा. रा. सुं. ६.२४)।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

शंड--शंडामर्क नामक ऋषिद्वय में से एक (शंडामर्क देखिये)।

२. एक कुष्मांड पिशाच, जो कपि नामक पिशाच के दो पुत्रों में से एक था। इसके भाई का नाम अज था। इसकी जंतुधना, एवं ब्रह्मधामा नामक दो कन्याएँ थीं, जिनका विवाह क्रमशः यक्ष एवं रक्षस् से हुआ था। शंड की इन दोनों कन्याओं का वंशविस्तार पुराणों में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.७.७४-९७)।

शंडामर्क--एक ऋषिद्वय, जो असुरों का पुरोहित था (तै. सं. ६.४.१०.१; मै. सं. ४.६.३; तै. ब्रा. १.१.१. ५; श. ब्रा. ४.२.१.४-६)। वैदिक साहित्य में इन दोनों का अलग-अलग निर्देश भी प्राप्त है (वा. सं. ७.२.१२- १३; १६.१७)। 'शुक्रामंथिग्रह' ग्रहण करने की पद्धति इन दो पुरोहितों के कारण प्रस्थापित हुई थी (तै. सं. ६. ४.१०)।

असुरों के पुरोहित--बृहस्पति जिस प्रकार देवों का पुरोहित था, उसी प्रकार शंड एवं मर्क असुरों के पुरोहित थे। इन्हीं के कारण असुर-पक्ष सदैव अजेय रहता था। अंत में इन्हें सोम की लालच दिखा कर, देवों ने इन्हें अपनी ओर आकृष्ट किया, एवं इस प्रकार असुरों को पराजित किया।

आगे चल कर, देवों के द्वारा यज्ञ प्रारंभ करते ही, सोमप्राप्ति की आशा से ये उपस्थित हुए। किंतु देवों ने इन्हें सोम देने से साफ इन्कार किया, एवं फजिहत कर इन्हें यज्ञस्थान से दूर भगा दिया (तै. सं. ६.४.१०; तै. ब्रा. १.१.१)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इन्हें शुक्र एवं गो के चार पुत्रों में से दो कहा गया है, एवं इनके अन्य दो भाइयों के नाम त्वष्ट्र एवं वरत्रिन् बताये गये हैं।

ये शुक्र के प्रमुख शिष्यों में से दो थे, एवं असुरपक्ष को विजय प्राप्त कराने के हेतु शुक्र ने इन्हें असुरों का प्रमुख गुरु बनाया था। किंतु अंत में देवों ने इन्हें सोम की लालच दिखा कर अपने पक्ष में दाखल कराया, एवं इस प्रकार असुरों को पराजित करने के कार्य में देवपक्ष सफल बन गया (वायु. ९८.६२-६७; मत्स्य. ४७.५४; २२९.३३; ब्रह्मांड. ३.७२-७३)।

प्रल्हाद के गुरु--असुरराज हिरण्यकशिपु ने इन्हें अपने पुत्र प्रह्लाद का गुरु नियुक्त किया था, किंतु यह कार्य भी ये सुयोग्य प्रकार से पूरा न कर सके (भा. ७.५.१)।

शंडिल--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. अठ्ठाइस व्यासों में से एक (व्यास पाराशर देखिये)।

शत--जंभासुर के शतदुंदुभि नामक पुत्र का नामांतर (वायु. ६७.७८)।

शतकिलाक--जैगीषव्य ऋषि का पिता।

शतगामि--जटायु के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ६. ३६; पद्म. सृ. ६)।

शतगुण--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं क्रोधा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.३९)।

शतग्रीव--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.११)।

शतघंटा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.११)।

शतचंद्र--कौरव पक्ष का एक योद्धा, जो गांधार-राज सुबल का पुत्र, एवं शकुनि का भाई था। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.२०)।

शतजित्--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो विरज एवं विषूची के सौ पुत्रों में से एक था (भा. ५.५.१५)।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो सहस्रजित् राजा का पुत्र था। इसके महाहय, वेणुहय एवं हैहय नामक तीन सुविख्यात पुत्र थे (भा. ९.२३.२१)।

३. कृष्ण एवं जांबवती का एक पुत्र, जो प्रभासक्षेत्र में यादवीयुद्ध में मारा गया था (भा. ९.६१.११)।

४. एक यक्ष, जो आश्विन माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है।

५. (स्वा. नाभि.) एक राजा, जो रजस् राजा का पुत्र, एवं विश्वग्ज्योति आदि सौ पुत्रों का पिता था (ब्रह्मांड. २.१४.७०-७२)। इसे 'शतति' नामांतर भी प्राप्त था।

शतज्योति--वैवस्वत मनुपुत्र सुभ्राज् के तीन पुत्रों में से एक। इसे एक लक्ष पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. १.४२)।

शततारका--सोम की सत्ताइस पत्नियों में से एक।

शतति--(स्वा. नाभि.) रजस्पुत्र शत राजा का नामांतर (शत ५. देखिये)।

शततेजस्--बारहवाँ व्यास (व्यास पाराशर देखिये)।

शतदंष्ट्र--एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१३५)।

शतदुंदुभि--जंभासुर के पुत्रों में से एक (जंभ. ९. देखिये)।

शतद्युम्न-- एक राजा, जिस पर मत्स्य देवता ने कृपा की थी (तै. ब्रा. १.५.२.१)।

२. (सू. निमि.) एक दानशूर राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार भानुमत् राजा का पुत्र था (भा. ९. १३.२१-२२)। वायु में इसे 'प्रद्युम्न' कहा गया है।

इसने मौद्गल्य ऋषि को एक सोने का गृह प्रदान किया था, जिस कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (म. शां. २२६.३२; अनु. १२६.३२)।

२. चाक्षुष मनु एवं नड्वला के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.३६.७९)।

शतद्युति--छाया अथवा सवर्णा का नामान्तर।

शतधनु--(सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय शतधन्वन् राजा का नामान्तर।

२. (मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार देववर्मन् मौर्य राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७४. १४८)। विष्णु, भागवत, एवं मत्स्य में इसे 'सोमशर्मन्पुत्र शतधन्वन्' एवं वायु में इसे 'शतधर' कहा गया है।

शतधन्वन्--(सो. क्रोष्टु.) मिथिला देश का एक दुष्टप्रकृति भोजवंशीय यादव राजा, जो हृदीक राजा का पुत्र, एवं कृतवर्मन् राजा का भाई था। भागवत एवं विष्णु में उसे शतधनु कहा गया है।

कलिंग देश के राजा चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. शां. ४.७)। अक्रूर एवं कृतवर्मन् के कथनानुसार, इसने यादवराजा सत्राजित् का वध किया, एवं उसका स्यमंतक मणि ले कर यह भाग गया (भा. १०.५७.५-२०)।

पश्चात् कृष्ण ने इस पर आक्रमण किया, एवं यह विज्ञातहृदया नामक घोड़ी पर सवार होकर भागने लगा। मिथिला नगरी के समीप श्रीकृष्ण ने इसे पकड़ कर इसका शिरच्छेद किया (ह. वं. १. ३९. १९)। किंतु स्यमंतक मणि अक्रूर के पास रखने के कारण, श्रीकृष्ण को वह प्राप्त न हो सका (भा. १०.५८.९; अक्रूर एवं सत्राजित् देखिये)।

२. मौर्यवंशीय शतधनु राजा का नामान्तर।

३. एक विष्णुभक्त राजा, जिसके पत्नी का नाम शैब्या था। एक पाखंडी व्यक्ति से मिलने के कारण, इसे एवं इसकी पत्नी को अनेकानेक कष्ट सहने पड़े (विष्णु. ३. १८.५३-९५)।

४. हंसध्वज राजा का प्रधान, जिसकी माता का नाम सुमति था।

शतपर्वा--शुक्राचार्य की भार्या (म. उ. ११५.१३)।

शतप्रभेदन वैरूप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ.१०. ११३)।

शतबल--रामसेना का एक वानर सेनापति (वा. रा. कि. ४३.१)

शतबलाक--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से शाकवैण रथीतर नामक आचार्य का शिष्य था।

शतबलाक्ष मौद्गल्य--एक वैयाकरण, जिसके द्वारा की गयी 'मृत्यु' शब्द की निरुक्ति का निर्देश यास्क के निरुक्त में प्राप्त है (नि. ११.६)।

शतबाहु--एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का अनुगामी था।

शतभेदन वैरूप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११३)।

शतमायु--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (वायु. ६८.११)।

शतमुख--एक शिवभक्त असुर, जिसने सौ साल तक अपने मांसखंडों की आहुति दे कर शिव की तपस्या की थी, जिस कारण संतुष्ट हो कर शिव ने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये थे (म. अनु. ४५.६८)।

शतमुखी रावण--मायापुरी का एक राक्षसराज, जिसने निकुंभपुत्र पौंड्रक राक्षस के साथ लंकाधिपति विभीषण को पदच्युत करने का षड्यंत्र रचा था, किन्तु अंत में राम ने इसका वध किया (आ. रा. राज्य. ५: पौंड्रक देखिये)।

शतयातु--एक ऋषि, जिसका निर्देश ऋग्वेद में पराशर के पश्चात् एवं वसिष्ठ के पहले किया गया है (ऋ. ७. १८.२१)। गेल्डनर के अनुसार यह वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक था (गेल्डनर, वेदिशे स्टूडियन ७.१८.२१)।

शतयूप--केकय देश का एक तपस्वी राजा, जिसने अपना राज्य अपने पुत्रों को सौंप कर कुरुक्षेत्र के वन में तपस्या प्रारंभ की थी। इसके पितामह का नाम सहस्रचित्य था। अपने आयुष्य के उत्तरकाल में धृतराष्ट्र इसके आश्रम में आया था जिसे इसने वनवास की विधि बतायी थी (म. आश्र. २५.९)।

शतरथ--(सू. इ.) एक राजा, जो मूलक राजा का पौत्र, एवं दशरथ राजा का पुत्र था। वायु में इसे मूलक राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ८८.१८०)।

इसे 'इलविल' एवं 'इडविड' नामांतर भी प्राप्त था, जिस कारण इसके पुत्र 'ऐलविल' अथवा 'ऐडविड' नाम से सुविख्यात हुए।

शतरूप--सुतार नामक शिवावतार का एक शिष्य।

शतरूपा--ब्रह्मा की एक मानसकन्या, जो उसके वामांग से उत्पन्न हुई थी। इसे सरस्वती नामांतर भी प्राप्त था (भा. ३.१२.५२)।

इसने दीर्घकाल तक तपस्या कर स्वायंभुव मनु राजा को पतिरूप में प्राप्त किया था। स्वायंभुव मनु से इसे प्रियव्रत, उत्तानपाद आदि सात पुत्र, एवं देवहूति नामक तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई थी (ब्रह्मांड. २.१.५७)।

मत्स्य में इसे अपने पिता ब्रह्मा से ही स्वायंभुव मनु, मारीच आदि सात पुत्र उत्पन्न होने का निर्देश प्राप्त है। आगे चल कर मारीच को वामदेव, सनत्कुमार आदि पुत्र उत्पन्न हुए थे (मत्स्य. ४.२४-३०)।

शतर्चिन--एक ऋषिसमुदाय, जिसे ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऐ. आ. २.२. १; आश्व. गृ. ३३)। इस ऋषिसमुदाय में कुल सोलह ऋषि समाविष्ट थे (आर्षानुक्रमणी १.५)।

२. एक ऋषि, जो वंग राजकुमार हेमकांत के द्वारा मारा गया था (हेमकांत देखिये)।

शतलोचन--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५६)।

शतशलाक--जैगीषव्य ऋषि का पिता, जिसकी पत्नी का नाम एकपाताला था। पाठभेद (वायु पुराण)-'शतशिलाक' (ब्रह्मांड. ३.१०.२०; वायु. ७२.१८)।

शतशाद--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

शतशीर्षा--वासुकि नाग की पत्नी (म. उ. ११५. ४६०*)।

शतहय--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

शतह्रद----एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१८)।

शतह्रदा--एक राक्षसी, जो जवासुर की पत्नी एवं विराध की माता थी।

शताजित्--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भजमान एवं बाह्यका के पुत्रों में से एक था।

शतानंद--एक ऋषि, जो गौतम शरद्वत् तथा ब्रह्ममानसकन्या एवं दिवोदासभगिनी अहल्या का पुत्र था। यह विदेह देश के जनक राजा का पुरोहित था, एवं राम दाशरथि के विवाह में यह मुख्य पुरोहित था (वा. रा. बा. ५०-५१; भा. ९.२१.३४-३५)। इसके पुत्र का नाम सत्यधृति था। पाठभेद (मत्स्यपुराण)-'शारद्वत'।

२. सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

शतानीक--(सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो नकुल एवं द्रौपदी का पुत्र था (म. आ. ५७.१०२; ९०.८२; भा ९.२२. २९; मत्स्य. ५०.५३)।

भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था:--१. भूतकर्मन् (म. द्रो. २४.२२); २. चित्रसेन (म. द्रो. १४३.९); ३. श्रुतकर्मन् (म. क. १८. १२-१६); ३. अश्वत्थामन् (म. क. ३९.१५); ५. कुणिंदपुत्र (म. क. ६२.५२)। इसके रथ के अश्व शालपुष्प के समान रक्तिम पीले वर्ण के थे (म. द्रो. २२.२३)।

भारतीय युद्ध के अठाराहवें दिन हुए रात्रियुद्ध में, अश्वत्थामन् ने इसका वध किया (म. सौ. ८.५४)।

२. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो परिक्षित्‌पुत्र जनमेजय का पुत्र था। इसकी माता का नाम वपुष्टमा था, जो काशिराज की कन्या थी (म. आ. ९०.९४)।

इसने याज्ञवल्क्य, कृप, एवं शौनक से क्रमशः वेदविद्या, अस्त्रविद्या, एवं आत्मविद्या प्राप्त की थी। समंतु नामक आचार्य ने इसे भारत एवं भविष्यपुराण कथन किया था (भवि. ब्राह्म. १.३०-३६)।

इसकी पत्नी का नाम वैदेही था, जिससे इसे अश्वमेधदत्त (सहस्रानीक) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ९.२२.३८-३९)। शतानीक राजा के जीवनक्रम से महाभारत में प्राप्त कुरुवंश का वृत्तान्त समाप्त होता है, (म. आ. ९०.९४-९६)। किंतु विष्णु में परिक्षित् राजा से ही कुरुवंश का वर्णन समाप्त होता है, एवं उसके आगे 'भविष्य वंश' प्रारंभ होता है (विष्णु. ४.२१.१-२; भा. ९.२२.३९)।

यह अत्यंत विरक्त प्रकृति का राजा था, जिस कारण अपनी उत्तर आयुष्य में आत्मज्ञान प्राप्त कर, यह स्वर्गलोक प्रविष्ट हुआ।

३. (सो. कुरु. भविष्य) एक कुरुवंशीय राजा, जो महाभारत के अनुसार वसुदान राजा का, मत्स्य के अनुसार वसुदामन् राजा का, एवं भागवत के अनुसार सुदास राजा का पुत्र था (मत्स्य ५०.८६)। इसके पुत्र का नाम दुर्दमन (उदयन) था (भा. ९.२२.४३)। इसका सविस्तृत वंशक्रम विष्णु में निम्नप्रकार दिया गया हैः—वसुदामन्-शतानीक-उदयन-वहीनर-खंडपाणि-निरमित्र-क्षेमक। क्षेमक राजा के साथ सोमवंश समाप्त होता है (विष्णु. ४.२१.३)।

४. मत्स्यनरेश विराट के सोमदत्त नामक छोटे भाई का नामान्तर (म. वि. ३०.१३)। भारतीय युद्ध में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. वि. ३.१९; म. द्रो. २०.२२; क. ४.८३)।

५. मत्स्यनरेश विराट का भाई एवं सेनापति। विराट के द्वारा किये गये घोषयात्रा युद्ध में, इसने त्रैगर्तों के साथ युद्ध किया था (म. वि. ३१.१६)।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों का प्रमुख योद्धा था (म. द्रो. १४३.२७)। इसी युद्ध में, शल्य के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. १४३.२७)।

६. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ४. १.७२)।

७. एक राजा, जो बृहद्रथ राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.२१.१४)।

शतानीक सात्राजित—एक भरतवंशीय सम्राट्, जिसने काशिनरेश धृतराष्ट्र को पराजित कर, उसके यज्ञाश्व का हरण किया था (श. ब्रा. १३.५.४.९-१३)।

यह सत्राजित राजा का पुत्र था, एवं वाजरत्नपुत्र सोमशुष्म नामक आचार्य ने इसे 'ऐन्द्र महाभिषेक' किया था (ऐ. ब्रा. ८.२१)। अथर्ववेद के अस्पष्ट अर्थ के एक सूक्त में, दाक्षायणों के द्वारा इसे बाँधा जाने का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. १.३५.१; वा. सं. ३४.५२)।

शतायु—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार, पुरूरवस् एवं उर्वशी के छः पुत्रों में से एक था (मत्स्य. २४.३४)। भागवत में इसे 'सत्यायु' कहा गया है।

शत्रि आग्निवेशि—एक उदार राजा, जो अग्निवेश का पुत्र था। संवरण प्राजापत्य नामक आचार्य के द्वारा इसके दातृत्व की प्रशंसा की गयी है (ऋ. ५.३४.९)।

शत्रुघातिन्—(सू. इ.) शत्रुघ्न का ज्येष्ठ पुत्र, जिसकी माता का नाम श्रुतकीर्ति था (वा. रा. उ. १०८. ११)। इसे निम्नलिखित नामांतर भी प्राप्त थेः—यूपकेतु; शूरसेन (वायु. ८८. १८६); श्रुतसेन (भा. ९.११.१३)। लक्ष्मण के पश्चात्, यह वैदिश राज्य के राजसिंहासन पर अधिष्ठित हुआ था (वा. रा. उ. १०८.११)।

परिवार—इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थीः— १. मदनसुंदरी एवं २. शिवकांति, जो कंबुकंठ राजा की कन्याएँ थी, एवं जो इसे स्वयंवर में प्राप्त हुई थी (आ. रा. विवाह. ८); ३. मालती (आ. रा. विवाह. ७)।

शत्रुघ्न—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो दशरथ राजा का पुत्र, एवं राम दाशरथि का कनिष्ठ सापत्न बंधु था। इसकी माता का नाम सुमित्रा था, एवं लक्ष्मण इसका ज्येष्ठ सगा भाई था। फिर भी अपने सापत्न बंधु भरत से ही यह अधिक सहानुभाव रखता था, जिसकारण 'राम-लक्ष्मण' के समान 'भरत-शत्रुघ्न' का जोड़ा भ्रातृभाव की ज्वलंत प्रतिमा बन कर प्राचीन इतिहास में अमर हो चुका है।

राम का यौवराज्याभिषेक—दशरथ के द्वारा राम का यौवराज्याभिषेक जब निश्चित हुआ, उस समय यह भरत के साथ उसके ननिहाल में था। अयोध्या आने पर इसे राम को वनवास प्राप्त होने के संबंध में वार्ता ज्ञात हुई। पश्चात् इस सारे अनर्थ का कारण मंथरा है, यह ज्ञात होते ही इसने उसे पकड़ कर घसीटा, एवं खूब पीटा। यह उसका वध भी करना चाहता था, किन्तु भरत ने इसे इस अविचार से परावृत्त किया।

अपनी सापत्न माता कैकेयी के मोह में फँस कर राम जैसे पुण्यपुरुष को वनवास देनेवाले अपने पिता दशरथ को भी इसने बुरा-भला कहा, एवं इस दुःखी घटना का अवरोध न करनेवाले अपने ज्येष्ठ भाई लक्ष्मण को भी काफ़ी दोष दिया (वा. रा. अयो. ७८.२-४)।

पादुका संरक्षण—राम की पादुका ले कर नन्दिग्राम लौट आनेवाले भरत के शरीररक्षक के नाते यह भी उपस्थित था। राम के वनवासकाल में शत्रुघ्न कहाँ रहता था, इस संबंध में कोई भी जानकारी 'वाल्मीकि रामायण' में उपलब्ध नहीं है। राम के वनवाससमाप्ति के पश्चात्, यह उसका धनुष एवं बाण ले कर उसका स्वागत करने गया था।

लवणवध—वनवासकाल के पश्चात् राम अयोध्या का राजा बन गया, तब उन्हींके आदेश से इसने लवणासुर पर आक्रमण किया।

लवणासुर यमुनातट के निवासी च्यवन भार्गवादि ऋषियों को त्रस्त करता था। उसके पिता मधु को शिव से एक अजेय शूल प्राप्त हुआ था, एवं शिव ने उसे आशीर्वाद दिया था कि, जब तक वह शूल लवण के हाथ में रहेगा, तब तक वह अवध्य होगा (वा. रा. उ. ६१. २४)। इसी शूल के बल से लवण अब समस्त पृथ्वी पर अत्याचार करने के लिए प्रवृत्त हुआ था।

च्यवन भार्गवादि ऋषियों ने लवण की शिकायत राम से की, जिस पर राम ने शत्रुघ्न को इस प्रदेश का राज्याभिषेक किया, एवं इसे लवण का वध करने की आज्ञा दी। इसने एक विशाल सेना को मधुवन की ओर भेज दिया, एवं स्वयं एक रात्रि वाल्मीकि के आश्रम में व्यतीत कर, यह मधुवन के लिए रवाना हुआ। अयोध्या से निकल ने के पश्चात् चौथे दिन यह मधुपुर पहुँच गया।

मधुपुर पहुँचते ही इसने देखा कि, शिव के द्वारा दिया गया शूल अपने राजभवन में रख कर, लवण कहीं बाहर गया था। इसने वह शूल हस्तगत किया, एवं यह उस राक्षस की राह देखते मधुपुर के द्वार में ही खड़ा हुआ। पश्चात् इन दोनों में घमासान युद्ध हुआ, जिसमें इसने लवण का वध किया।

मथुरा की स्थापना—लवणवध के पश्चात्, इसने मधुवन में स्थित मधुपुरी अथवा मधुरा नगरी में अपनी राजधानी स्थापित कर, उसका नाम 'मथुरा' रक्खा (ब्रह्मांड. ३.६३.१८६; वायु. ८८.१८५-१८६; भा. ९. ११.१४)। पश्चात् इसने 'मधुवन' राज्य का नाम बदल कर उसे 'शूरसेन' नाम प्रदान किया। आगे चल कर इसी नाम से यह प्रदेश सुविख्यात हुआ।

राम से भेंट—इस प्रकार, बारह वर्षों तक मधुपुरी में राज्य करने के पश्चात्, राम के दर्शन की इच्छा इसके मन में उत्पन्न हुई। तदनुसार यह अयोध्या पहुँचा, एवं इसने मधुपुरी छोड़ कर राम के पास ही अयोध्या में रहने की इच्छा प्रदर्शित की। किंतु राम ने इसे इस निश्चय से परावृत्त कर, क्षात्रधर्म के अनुसार मधुपुरी में प्रजापालन का कार्य करने की आज्ञा दी (**प्रजा हि परिपाल्या क्षत्रधर्मेण**; वा. रा. उ. ७२.१४)। पश्चात् सात दिनों तक अयोध्या में रह कर, यह मधुपुरी लौट गया। मधुपुरी वापस जाते समय, इसे वाल्मीकि के आश्रम में कुशलवों के द्वारा रामायण सुनने का अवसर प्राप्त हुआ।

राम का अश्वमेधयज्ञ—राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्वमेधीय अश्व के संरक्षण का भार इसे सौंपा गया था (वा. रा. उ. ९१)। अश्वसंरक्षण के हेतु शत्रुघ्न के द्वारा किये गये पराक्रम का कल्पनारम्य वर्णन पद्म में प्राप्त है, जहाँ इस कार्य के लिए इसने पाताल में दिग्विजय करने का (पद्म. पा. ३८), एवं शिव से युद्ध करने का निर्देश प्राप्त है (पद्म. पा. ४३)।

शत्रुघ्न के अश्वमेधीय दिग्विजय में निम्नलिखित वीर शामिल थे:—प्रतापाग्र्य, नीलरत्न, लक्ष्मीनिधि, रिपुताप, उग्रहय, शस्त्रवित्, महावीर, रथाग्रणी, एवं दंडभृत् (पद्म. पा. ११)।

दिग्विजय—अश्वमेधीय अश्व के साथ इसने निम्नलिखित देशों में दिग्विजय कर अपना प्रभुत्व प्रस्थापित किया था:—पांचाल, कुरु, उत्तरकुरु, दशार्ण, श्रीविशाल, अहिच्छत्र, पयोष्णी, रत्नातटनगर, नीलपर्वत, चक्रांकनगर, तेजःपूर, नर्मदातीर, पाताललोक, विंध्यपर्वत में स्थित देवपूरनगर, भारतवर्ष की सीमा के बाहर स्थित हेमकूटपर्वत, अंग, वंग, कलिंग, कुंडलनगर, गंगातीर में स्थित वाल्मीकि-आश्रम (पद्म. पा. १-६८)।

मृत्यु—अपना आयुःकाल समाप्त हो गया है, यह जान कर राम ने भरत एवं शत्रुघ्न को अयोध्या में बुला लिया, एवं ये तीनों भाई सरयू नदी के तट पर 'गोप्रतारतीर्थ' में वैष्णव तेज़ में विलीन हुए (वा. रा. उ. ११०)। लक्ष्मण की मृत्यु इसके पहले ही हो चुकी थी (राम दाशरथि देखिये)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम श्रुतकीर्ति था, जो कुशध्वज जनकराजा की कन्या थी (वा. रा. बा. ७३.

३३)। अपनी इस पत्नी से इसे शत्रुघातिन् एवं सुबाहु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। भागवत एवं विष्णु में इसके पुत्र शत्रुघातिन् का नाम क्रमशः 'श्रुतसेन' एवं 'शूरसेन' दिया गया है (भा. ९.११.१३-१४; विष्णु. ४.४.१०४)। वायु में भी इसके प्रथम पुत्र का नाम शूरसेन बताया गया है (वायु. ८८.१८६)।

अपनी मृत्यु के पूर्व इसने सुबाहु एवं शत्रुघातिन् को क्रमशः मथुरा एवं शूरसेन देश का राज्य दिया था (वा. रा. उ. १०७.१०८)। वायु के अनुसार दोनों ही पुत्रों को इसने मथुरा का ही राज्य प्रदान किया था।

२. लंका का एक रावणपक्षीय राक्षस (वा. रा. यु. ४३)।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजकुमार, जो श्वफल्क यादव के तेरह पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.१७)।

४. अक्रूर यादव के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.२९)।

५. एक यादव राजकुमार, जो भङ्गकार एवं नरा के पुत्रों में से एक था। अक्रूर ने इसका वध किया (वायु. ९६.८५)।

शत्रुजित्--(सो. विदू.), एक राजा, जो शोणाश्व राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.७९)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार मांधातृ राजा का पुत्र था (मत्स्य १२.३५)। भागवत, विष्णु, एवं वायु में इसे 'अंबरीष' कहा गया है।

३. (सू. इ.) एक राजा, जो ध्रुवसंधि राजा एवं लीलावती का पुत्र था।

४. प्रतर्दन राजा का नामांतर (विष्णु. ४.८.१२)।

५. कुवलयाश्व राजा का नामांतर (भा. ९.१७.६)।

शत्रुंजय--धृतराष्ट्र का एक पुत्र। भारतीय युद्ध में इस पर भीष्म के रक्षण का भार सौंपा गया था (म. भी. ४७.८)। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. ११२.३०)।

२. कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो कर्ण का छोटा भाई था। अर्जुन ने इसका वध किया था (म. द्रो. ३१.५९)।

३. द्रुपद राजा का एक पुत्र, जो अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया था।

४. कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ४७.१५)।

५. सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ के भाइयों में से एक था। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदी-हरण के समय, अर्जुन के द्वारा यह मारा गया (म. व. २४९.१०)।

६. एक त्रैगर्त योद्धा, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.१०)।

७. सौवीर देश के कणिक राजा का नामांतर, जिसे भरद्वाज ऋषि ने राजधर्म एवं कूटनीति का उपदेश किया था (म. शां. १३८.४)।

शत्रुंजया--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.६)।

शत्रुतपन--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२८)।

शत्रुंतप--दुर्योधन की सेना का एक राजा, जो कर्ण का भाई था। अर्जुन ने 'उत्तर-गोग्रहण' के समय, इसका वध किया (म. वि. ४९.१३)।

शत्रुमर्दन--एक राजा, जो ऋतुध्वज एवं मदालसा का तृतीय पुत्र था (मार्क. २३.२६)।

शत्रुसह--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में कर्ण का शरीरसंरक्षक था। भीमसेन के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. ११२.४०)।

शत्रुसूदन--दशरथ राजा के सुज्ञ नामक मंत्री का पुत्र।

शधीय--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास के सामशिष्य परंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

शनि--एक पापग्रह, जो नौ ग्रहों में से एक प्रमुख ग्रह माना जाता है (मत्स्य. ९३.४४)। इसे 'शनैश्चर' नामांतर भी प्राप्त था। लोहे से बने हुए रथ से यह समस्त ग्रहमंडल का परिभ्रमण तीस माह में पूरा करता है (भा. ५.२२.१६)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे महातेजस्वी एवं तीक्ष्ण स्वभाववाला ग्रह कहा गया है। इसे छाया एवं विवस्वत् (मार्तंड) का पुत्र कहा गया है (भा. ६.६.४१; विष्णु. ३.२.११)। इसके भाई का नाम सावर्णि था (विष्णुधर्म. १.१०६)। आगे चल कर अपने पिता सूर्य की आज्ञा से यह ग्रह बन गया।

कालिकापुराण में भी इसे सूर्यपुत्र कहा गया है, एवं सती की मृत्यु के पश्चात् शिव के आँखों से जो आंसू टपके, उसीके कारण इसके कृष्णवर्णीय बनने की कथा वहाँ प्राप्त है (कालि. १८)। आगे चल कर यह मनुष्यों को अत्यंत त्रस्त करने लगा, जिस कारण शिव ने मेषादि राशि इसके अधिकार में दी, एवं पूजा करनेवाले लोगों

को सुख एवं समृद्धि प्रदान करने की आज्ञा इसे दी (स्कंद. ५.१.५०)।

पराक्रम--शिव एवं त्रिपुर के युद्ध में, इसने शिव के रथ पर आरूढ हो कर नरकासुर से युद्ध किया था (भा. ८.१०.३३)। एक बार अश्वत्थ एवं पिप्पल अगस्त्य ऋषि को अत्यधिक त्रस्त करने लगे, जिस कारण इसने उनका वध किया था (ब्रह्म. ११८)।

दशरथ राजा से युद्ध--ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से शनि जब रोहिणी नक्षत्र को पीड़ित करता है (रोहिणी-शकट का भेदन), तब पृथ्वी के मनुष्यों के लिए वह एक अशुभ योग माना जाता है। रोहिणी नक्षत्र का देवता प्रजापति होता है, जिस कारण शनि के द्वारा रोहिणी-शकट का भेद होने पर उसका दुष्परिणाम प्रजापति पर हो कर, सारे पृथ्वी पर लोकक्षय होता है।

दशरथ राजा के राज्यकाल में ऐसा ही कुयोग उत्पन्न हुआ था। उस समय दशरथ राजा ने शनि से युद्ध कर, इसे रोहिणीशकट के भेदन से परावृत्त किया। उस समय दशरथ के द्वारा शनि का गुणगान किये जाने पर, इसने उसे आशीर्वाद दिया, 'जो लोग अपनी प्रिय वस्तुओं का दान कर मेरी उपासना करेंगे, उनकी मैं रक्षा करूँगा'।

शंतनु--कुरुवंशीय 'शांतनु' राजा का नामांतर (शांतनु तथा शांतनव देखिये)।

शबर--एक म्लेंच्छ जातिविशेष, जो दक्षिणापथ प्रदेश के निवासी थे। वायु में इन्हें 'दक्षिणापथवासिनः' कहा गया है, एवं इनका निर्देश आभीर, आटव्य, पुलिंद, वैदर्भ, दण्डक आदि लोगों के साथ प्राप्त है (वायु. ४५. १२६)।

ब्राह्मण ग्रंथों में--ऐतरेय ब्राह्मण में, विश्वामित्र ऋषि के ज्येष्ठ पचास पुत्र उसीके ही शाप से आंध्र, पुण्ड्र, शबर, पुलिंद एवं मूतिब आदि म्लेंच्छ बनने का निर्देश प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ७.१८.२; सां. श्रौ. १५.२६.६)। ये लोग दक्षिण भारत में पेन्नार नदी के प्रदेश में रहते थे। रामायण में प्राप्त शबरी की कथा भी यही संकेत को पुष्टि प्रदान करती है। किन्तु इन लोगों की अन्य कई बस्तियाँ राजपुताना, हिमालय प्रदेश आदि में थी।

महाभारत के अनुसार, ये लोग पहले क्षत्रिय थे, किंतु बाद में हीन आचारों के कारण म्लेंच्छ बन गये। भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे, जहाँ सात्यकि ने इनका संहार किया था (म. द्रो. ९५.३८)।

२. कीकट देश में रहनेवाला एक शिवभक्त अंत्यज, जो चिताभस्म की प्राप्ति के लिए स्वयं को दग्ध करने के लिए प्रवृत्त हुआ था (स्कंद. ३.३.१७)।

३. एक विष्णुभक्त अंत्यज, जो तुलसीपत्र के प्रसाद से यमदूतों के पंजे से मुक्त हुआ (पद्म. पा. २०)।

४. अमिताभ देवों में से एक।

शबर काक्षीवत--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६९)।

शबरी--शबर जाति की एक स्त्री, जो पंपासरोवर के पश्चिमी तट पर रहनेवाले मातंग ऋषि की परिचारिका थी। राम के प्रति अनन्य भक्ति के कारण, इसे 'सिद्धा,' 'श्रमणा' आदि श्रेष्ठ उपाधियाँ प्राप्त हुई, एवं श्रेष्ठ भक्ति की साकार प्रतिमा यह माने जाने लगी।

राम से भेंट--कबंध राक्षस के कथनानुसार, राम-लक्ष्मण सीता का शोध करते मतंगवन आ पहुँचे। वहाँ इसने उनका उचित आदरसत्कार किया, एवं कहा, 'आपके आने से पूर्व ही मातंग ऋषि का स्वर्गवास हुआ। अब उन्हींके आदेश से मैं आपकी प्रतीक्षा कर रही हूँ'।

राम का स्वागत--इतना कह कर, शबरी ने राम के भोजन के लिए वन के विविध कन्दमूल उन्हें अर्पण किये (वा. रा. अर. ७४.१७)। तत्पश्चात् मतंगवन में स्थित मतंग ऋषि का तपस्या एवं यज्ञ का स्थान, 'प्रत्यक्स्थली' नामक यज्ञवेदी, 'सप्तसागर' नामक तीर्थ आदि का दर्शन इसने राम को कराया।

स्वर्गप्राप्ति--पश्चात् राम की अनुज्ञा से इसने अग्नि प्रदीप्त किया, एवं उसमें स्वयं की आहुति दे कर यह स्वर्गलोक वासी प्रष्ट हुई।

अध्यात्म रामायण में--इस ग्रंथ में शबरी के हीन जाति पर विशेष जोर दिया है। रामभक्तिसांप्रदाय का प्रचार करने के दृष्टि से इसकी जीवनगाथा वहाँ दी गयी है, जिससे यह स्पष्ट हो जाये कि, रामभक्ति भेदभाव से ऊपर उठ कर सब को मुक्ति प्रदान करती है (भक्ति-मुक्तिविधायनी भगवतः रामचन्द्रस्य)। इसी कारण शबरी की गुरुभक्ति, सेवाभाव, तपस्या एवं अपार रामभक्ति का इस कथा में सविस्तृत वर्णन किया गया है।

इस कथा के अनुसार, शबरी ने राम का उचित आदरसत्कार कर, उसे प्रश्न किया, 'मैं मूढ़ एवं हीन जाति में उत्पन्न होने के कारण, आपके दर्शन एवं उपासना की योग्यता नही रखती हूँ'। इस पर राम ने इसे उत्तर दिया, 'परमेश्वरप्राप्ति के लिए जाति की उच्चनीचता,

अथवा स्त्रीपुरुष भेदाभेद आदि का कुछ भी महत्त्व नहीं है। महत्त्व है केवल भक्ति का, जिससे कोई भी व्यक्ति परमपद प्राप्त कर सकता है' (अ. रा. अर.१०.१-४४)।

पौराणिक साहित्य में––पद्म आदि उत्तरकालीन पौराणिक साहित्य में 'अध्यात्मरामायण' की ही कथा उद्धृत की गयी है (पद्म. उ. २६९.२६५-२६८), जिस कारण यह कथा भारत के सभी प्रांतिक भाषाओं में रामभक्ति के प्रचार का एक सर्वश्रेष्ठ माध्यम बन गयी।

शबल––एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.७)।

२. एक श्वान, जो सरमा का पुत्र, एवं यम वैवस्वत का अनुचर था (ब्रह्मांड. ३.७.११२)।

३. दक्ष एवं असिक्री के एक हज़ार पुत्रों में से एक। पाठभेद–'शबलाश्व' (भा. ६.५.२४)।

शबलाश्व––(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो कुरु राजा का पौत्र, एवं अविक्षित् राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसके अन्य भाइयों के नाम परिक्षित्, आदिराज, विराज, शाल्मलि, उच्चैःश्रवस्, भङ्गकार एवं जितारि थे (म. आ. ८९.४५)।

शम––एक राजा, जो धर्म प्रजापति के तीन पुत्रों में से एक था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम काम एवं हर्ष, तथा पत्नी का नाम प्राप्ति था (म. आ. ६०.३१)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो धर्मसूत्र नामक राजा का पुत्र, एवं द्युमत्सेन राजा का पिता था (भा. ९.२२.४८)। विष्णु एवं ब्रह्मांड में इसे 'सुश्रम' एवं वायु में इसे 'सुव्रत' कहा गया है।

३. एक वसु, जो अहः नामक वसु के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य भाइयों के नाम ज्योति, शांत एवं मुनि थे (म. आ. ६०.२२)। पाठभेद–भांडारकर संहिता–'श्रम'।

४. आयु राजा का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.३.२४)।

५. सुखदेवों में से एक।

६. नंदिवेगकुलोत्पन्न एक कुलांगार राजा, जिसने अपने दुर्व्यवहार के कारण, अपने वंश एवं राज्य के लोगों का नाश किया (म. उ. ८२.१७)।

शमठ––एक ऋषि, जो गयाशीर पर्वत पर 'ब्रह्मसर' सरोवर के पास निवास करता था। इसने वनवासी पांडवों को अमूर्तरयस्-पुत्र गय राजा की कथा कथन की थी (म. व. ९३.१६)।

शमन––सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

शमि––(सो. उशी.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार उशीनर राजा का पुत्र था (९.२३.३)।

शमिन्––(सो. विदु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शोणाश्व राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार शूर राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रतिक्षत्र था (मत्स्य. ४४.७९-८०; ब्रह्मांड. ३.७१.१३८)।

शमीक––अंगिरस् कुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसकी पत्नी का नाम गौ, एवं पुत्र का नाम शृंगी था। यह आजन्म मौनव्रत का पालन करता था। यह गौओं के रहने के स्थान में रहता था, एवं गौओं का दूध पीते समय बछड़ों के मुख से जो फेन निकलता था, उसीको खा-पी कर तपस्या करता था।

परिक्षित् से भेट––एक बार परिक्षित् राजा मृगया करता हुआ इसके आश्रम में आ पहुँचा। किन्तु इसका मौनव्रत होने के कारण, इसने उससे कोई भी भाषण नहीं किया। यह इसका औद्धत्य समझ कर, परिक्षित् इससे अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसकी अवहेलना करने के हेतु, इसके गले में एक मृतसर्प डाल दिया।

कृश नामक इसके शिष्य ने यह घटना इसके पुत्र शृंगी को बतायी। अपने पिता के अपमान की यह कहानी सुन कर, शृंगी अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने शापवाणी कह दी, 'सात दिन के अंदर नागराज तक्षक के दंश से परिक्षित् राजा की मृत्यु हो जायेगी'।

परिक्षित् की मृत्यु––अपने पुत्र के द्वारा, परिक्षित् राजा को दिये गये शाप का वृत्तांत ज्ञात होते ही, इसने अपने पुत्र की अत्यंत कटु आलोचना की। पश्चात् अपने गौरमुख नामक शिष्य के द्वारा परिक्षित् राजा को शृंगी के इस शाप का समाचार, भेजा, एवं उसे सावधान रहने के लिए कहा। किन्तु अंत में यह चेतावती विफल हो कर, तक्षकदंश से परिक्षित् राजा की मृत्यु हो ही गयी (म. आ. ३६.३८; भा. १.१८)।

गरुडवंशीय पक्षियों की रक्षा––भारतीय युद्ध के समय गरुडवंश में उत्पन्न पिंगाक्ष, विबोध, सुपुत्र, एवं सुमुख नामक पक्षी सुप्रतीक नामक हाथी के घंटा के नीचे छिप कर बच गये। आगे चल कर इसने उन्हें अपने आश्रम में ला कर, एवं उनका धीरज बँधा कर, उन्हें सुरक्षित स्थल पर पहुँचाया (मार्कं. २.४४; ३.८६)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो वायु एवं विष्णु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था। विष्णु, भागवत एवं मत्स्य में, इसे 'सत्यप्रिय' कहा गया है। इसकी माता का

नाम मारिषा, एवं पत्नी का नाम सुदामिनी था, जिससे इसे प्रतिक्षत्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (वायु. ९६.१३७; विष्णु. ४.१४.२३)। ब्रह्मा के द्वारा पुष्कर क्षेत्र में किये गये यज्ञ में यह उपस्थित था (पद्म. सृ. २३)।

शंपाक—हस्तिनापुर में रहनेवाला एक जीवन्मुक्त एवं त्यागी ब्राह्मण; जो भीष्म का गुरुतुल्य स्नेही था। इसे 'शम्याक' नामांतर भी प्राप्त था।

त्याग की महिमा के विषय में इसने भीष्म को उपदेश प्रदान किया था (म. शां. १७०)। यह 'शंपाक गीता' का प्रणयिता माना जाता है।

शंबर कौलितर--एक असुर, जो इंद्र का शत्रु था (ऋ. १.५१.६; ५४.४)। 'कुलितर' का पुत्र होने के कारण, इसे 'कौलितर' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. ४.३०.१४)। सायण के अनुसार, आकाश में स्थित मेघ को ही वैदिक साहित्य में 'शंबर' कहा गया है। इस संबंध में यह 'वृत्र' से साम्य रखता है (वृत्र देखिये)।

ऋग्वेद में--इस ग्रंथ में शुष्ण, पिप्रु, वर्चिन् आदि असुरों के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.१०१; १०३; २.१९.६)। यह एक दास था, एवं यह पर्वत पर रहता था (ऋ. २.१२)।

वृत्र के समान इसके भी आकाश में अनेकानेक दुर्ग (शंबराणि) थे, जिनकी संख्या ऋग्वेद में नब्बे (ऋ. १. १३०); निन्यान्वे (ऋ. २.१९); अथवा एक सौ (ऋ. २.१४) बतायी गयी है।

इंद्र से युद्ध--यह स्वयं को देवता समझने लगा, जिस कारण इंद्र ने इसे काट कर पर्वत से नीचे गिरा दिया, एवं इसके सारे दुर्ग ध्वस्त किये (ऋ. ७.१८; १. ५४; १३०)। इसका प्रमुख शत्रु दिवोदास अतिथिग्व था, जिसके कहने पर इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. १. ५१)। इसका वध करने के लिए, मरुतों ने एवं अश्विनों ने इंद्र की सहायता की थी (ऋ. ३.४७; १. ११२.१४)।

ऋग्वेद में अन्यत्र, बृहस्पति के द्वारा इसके दुर्ग ध्वस्त किये जाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. २.२४)।

पौराणिक साहित्य में--इन ग्रन्थों में इसे कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है (भा. ६.१०.१९)। यह वृत्रासुर का अनुयायी था, जिस कारण इंद्र-वृत्र युद्ध में इंद्र ने इसका वध किया (म. सौ. ११.२२)। अपनी मृत्यु के पूर्व इंद्र को इसने ब्राह्मण-माहात्म्य समझाया था (म. अनु. ३६.४-११)।

धर्म ने अपने समर्थन के लिये, इसके अनेकानेक उद्धरणों का उपयोग किया था (म. उ. ७२.२२)। इससे प्रतीत होता है कि, यह स्वयं एक राजनीतिज्ञ, एवं ग्रन्थकार भी था। योगवासिष्ठ में इसकी कथा 'ब्राह्मत्वभाव' के तत्त्व का प्रतिपादन करने के लिए दी गयी है (यो. वा. ४.२५)।

२. कंस का अनुयायी एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम मायावती था। कृष्ण-पुत्र प्रद्युम्न के द्वारा अपना वध होने की वार्ता एक बार इसे आकाशवाणी से ज्ञात हुई जिस कारण, इसने उसका अर्भकावस्था में वध करना चाहा। किंतु इसकी पत्नी मायावती ने प्रद्युम्न की जान बचायी। आगे चल कर प्रद्युम्न ने 'महामाया विद्या' की सहायता से इसका, पुत्र आमात्य, एवं सेनापतियों के साथ वध किया (म. अनु. १४.२८; विष्णु. २७; भा. १०.३६.३६; प्रद्युम्न एवं मायावती देखिये)।

पुराणों में इसके सौ पुत्रों का निर्देश प्राप्त है, किंतु इसकी पत्नी मायावती संतानरहित होने का भी निर्देश प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, इसकी मायावती के अतिरिक्त कई अन्य पत्नियाँ भी थीं।

३. एक दानव राजा, जो हिरण्याक्ष का पुत्र था (भा. ७. २.४)। बलि वैरोचन के साथ, वामन ने इसे भी पाताललोक में ढकेल दिया (ब्रह्मांड. ३.४.६)।

४. त्रिपुर नगरी का एक असुर, जिसने इंद्रबलि-युद्ध में बलि के पक्ष में भाग लिया था (भा. ८.६.३१)।

५. कीकट देश का एक अंत्यज, जो शालिग्राम तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (पद्म. पा. २०)।

शंबसादन--एक राक्षस, जो केसरी वानर के द्वारा मारा गया।

शंबुक अथवा **शंबूक**--एक शूद्र, जो अपना शूद्रधर्म छोड़ कर तपस्वी बना था। महाभारत एवं रामायण में इसकी कथा प्राप्त है, जहाँ इसे क्रमशः 'शंबुक,' एवं 'शंबूक' कहा गया है (म. शां. १४९.६२; वा. रा. उ. ७६.४)।

त्रैवर्णिकों की सेवा करने का अपना शूद्रधर्म त्याग कर, यह जनस्थान में तपस्या करने लगा। इसके इस पापकर्म के कारण, एक सोलह वर्ष के ब्राह्मण पुत्र की असामयिक मृत्यु हो गयी। अपने इस पुत्र की मृत्यु की तकरार ब्राह्मण

नें राम के सम्मुख पेश की, एवं एक राजा के नाते उसे इस घटना के लिए दोषी ठहराया।

इसी समय राम को ज्ञात हुआ कि, शंबूक के वर्णांतर के पाप के कारण, ब्राह्मणपुत्र के अपमृत्यु की घटना घटित हुई है। यह ज्ञात होते ही, राम विमान में बैठ कर दक्षिणापथ में शैवलक के उत्तर में स्थित जनस्थान में गया, एवं वहाँ तपस्या करनेवाले इस शूद्रजातीय मुनि का उसने वध किया। इसका वध होते ही मृत हुआ ब्राह्मणपुत्र पुनः जीवित हुआ।

इसी प्रकार की एक कथा मांधातृ राजा के संबंध में भी प्राप्त है, किंतु वहाँ मांधातृ राजा ने शूद्र मुनि का वध न कर, अपनी तपस्या के प्रभाव से ब्राह्मणपुत्र को पुनः जीवित करने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (पद्म. उ. ५७)।

शंबूककथा का अन्वयार्थ--चातुर्वर्ण्य में हर एक वर्ण को अपना नियत कर्तव्य निभाना चाहिये, एवं वर्णान्तर नहीं करना चाहिये, क्योंकि, ऐसे वर्णान्तर से समाज की रचना बिगड़ जाने की संभावना है, इस तत्त्व के प्रतिपादन के लिए शंबूक की कथा महाभारत एवं रामायण में दी गयी है।

बौद्ध धर्म जैसे संन्यासधर्म को प्रधानता देनेवाले धर्म के प्रचार के पश्चात्, समाज के हरएक व्यक्ति का झुकाव अपना नियत कर्तव्य छोड़ कर, संन्यासधर्म को स्वीकार करने की ओर होने लगा। उस समय समाज की संन्यासप्रवणता कम करने के हेतु उपर्युक्त कथा की रचना की गयी होगी, जिसमें तपश्चर्या के समान अनुत्पादक व्यवहार की कटु आलोचना की गयी है।

आगे चल कर पौराणिक साहित्य के रचनाकाल में भक्तिमार्ग की प्रबलता समाज में पुनः एक बार बढ़ गयी, जिस समय इस कथा को बदल कर उसका परिवर्तन तपस्याप्रधान कथा में किया जाने लगा, जिसका यथार्थ रूप मांधातृ की कथा में पाया जाता है।

२. सहिष्णु नामक शिवावतार का एक शिष्य।

३. एक आदित्य, जो कश्यप एवं दिति के पुत्रों में से एक था।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७१)।

शंभु--कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक।

२. (सो. नाभाग.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अंबरीष राजा का कनिष्ठ पुत्र था (भा. ९.६.१)।

३. एक अग्नि, जो तप नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २११.५)।

४. एक यादव राजकुमार, जो श्रीकृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक था (म. अनु. १४.३३)।

५. एक धर्मप्रवण प्राचीन राजा, जिसने जीवन में कभी मांस नहीं खाया था (म. अनु. ११५.६६)।

६. ग्यारह रुद्रों में से एक (मत्स्य. १५३.१९)।

७. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र, जो विष्वक्सेन का मित्र था (भा. ८.१३.२२)।

८. शुक एवं पीवरी का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.८.९३)।

९. सत्य देवो में से एक।

१०. सुख देवों में से एक।

११. विरोचन दैत्य के छः पुत्रों में से एक (वायु. ६७.७६-८१)।

१२. एक राक्षस, जो संह्राद राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्रों के नाम राजाज एवं गोम थे (ब्रह्मांड. ३. ५.४०)।

१३. एक ऋषि, जिसने राम को श्राद्धविधि, भस्ममाहात्म्य एवं शिवपूजाविधि आदि बतायी थी (पद्म. पा. १०६)।

१४. एक ब्राह्मण, जो पुराणों से 'शलाकाप्रश्न' कथन करने के कार्य में प्रवीण था (पद्म. पा. १०४)।

शंभुवा--धृतराष्ट्र की एक पत्नी, जो गांधारराज सुबल राजा की कन्या, एवं गांधारी की बहन थी (म. आ. १०४. १११३* पंक्ति. ५)।

शंमद् आंगिरस--एक सामद्रष्टा ऋषि (पं. ब्रा. १५.५.१०-११)। अपने साम के कारण इसे स्वर्ग की प्राप्ति हुई।

शम्याक--शंपाक नामक ब्राह्मण का नामांतर।

शम्यु बार्हस्पत्य--एक आचार्य (श. ब्रा. १.९.१. २५)।

शयु--एक ऋषि, जो अश्विनों का अश्रित था। अश्विनों ने इसके वंध्या गाय को दुग्धा बनाया था (ऋ. १.११२. १६; ११६.२२; ११७.२०)।

शर्याति--शर्यात राजा का नामांतर।

शर आर्चत्क--एक ऋषि, जिसे अश्विनों ने गहरे कुएँ से पानी निकाल कर दिया था (ऋ. १.११६.२२)। संभवतः 'आर्चत्क' उसका पैतृक नाम (= ऋचत्क का पुत्र) न हो कर, केवल इसकी उपाधि मात्र ही थी।

शर शौरदेव्य--एक राजा, जिसने तीन ऋषियों को एक ही बछड़ा दान में दिया था (ऋ. ८.७०.१३-१५)। ऋग्वेद में इसकी यह 'दानस्तुति' व्यंगात्मक प्रतीत

होती है (पिशेल, वेदिशे स्टूडियन. १.५-७)। शूरदेव का पुत्र होने के कारण, इसे 'शौरदेव्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शरगुल्म--रामसेना का एक वानर (वा. रा. कि. ४१.३)।

शरण--वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.६)।

शरद्वत्--(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सेतु राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४८.६)। इसे 'अंगार' नामांतर भी प्राप्त था (अंगार देखिये)।

२. एक ऋषि, जो प्रायोपवेशन करनेवाले परिक्षित् राजा से मिलने आया था।

३. एक ऋषि, जिसे त्रिधामा ऋषि ने 'वायुपुराण' कथन किया था, जो इसने आगे चल कर त्रिविष्ट को कथन किया था (वायु. १०३.६१)।

४. सावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

५. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं मंत्रकार, जो अंगिरस् ऋषि का पुत्र था।

६. गौतमगोत्रीय एक ऋषि, जो उतथ्य ऋषि का शिष्य था (वायु. ६४.२६)।

७. गौतम ऋषि का नामान्तर (गौतम देखिये)।

शरद्वत् गौतम--एक महर्षि, जो गौतम ऋषि एवं अहल्या का पुत्र था। वायु में इसे 'शारद्वत' कहा गया है (वायु. ९९.२०१)।

तपोभंग--यह शुरू से ही अत्यंत बुद्धिमान् था, तथा वेदाध्ययन के साथ-साथ धनुर्वेद में भी प्रवीण था। इसकी तपस्या से डर कर, इंद्र ने तपोभंग करने के लिए जालपदी नामक अप्सरा इसके पास भेज दी। उसे देख कर इसके धनुष एवं बाण पृथ्वी पर गिर पड़े, एवं इसका वीर्य दर्भासन पर गिर पड़ा।

कृप एवं कृपी का जन्म--पश्चात् यह धनुर्बाण, मृगचर्म, आश्रम आदि छोड़ कर वहाँ से चला गया। दर्भासन पर पड़े हुए इसके वीर्य के दो भाग हुए, जिनसे आगे चल कर एक पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुई। उन दोनों का सुविख्यात कुरुवंशीय राजा शांतनु ने कृपापूर्वक पालन किया, जिस कारण उन्हें 'कृप' एवं 'कृपी' नाम प्राप्त हुए। इसकी इन संतानों में से कृप कौरव पांण्डवों का आचार्य बन गया, एवं कृपी का विवाह द्रोणाचार्य के साथ हुआ (म. आ. १२०)। पश्चात् इसने गुप्तरूप से कृपाचार्य को उसके गोत्र आदि का परिचय दिया, एवं उसे चार प्रकार के धनुर्वेद एवं शस्त्र-शास्त्रों की शिक्षा प्रदान की।

शरद्वसु--शूलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

शरभ--एक ऋषि, जिसे इंद्र ने विपुल धन प्रदान किया था (ऋ. ८.१००.६)।

२. चेदिराज धृष्टकेतु का भाई, जो शिशुपाल के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४९.४३)।

युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय, शुक्तिसा नगरी में राज्य करनेवाले शरभ ने सर्वप्रथम अर्जुन से युद्ध करना चाहा। किंतु पश्चात् इसने अर्जुन को करभार अर्पण कर, अश्वमेधीय अश्व की विधिपूर्वक पूजा की (म. आश्व. ८४.३)।

३. गांधारराज सुबल का पुत्र, जो शकुनि के ग्यारह भाइयों में से एक था। भीमसेन के द्वारा किये गये रात्रियुद्ध में उसने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.२१)।

४. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के प्रमुख चौंतीस पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२६)।

५. तक्षककुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९ पाठ.)।

६. ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

७. यमसभा का एक ऋषि (म. स. ८.१४)।

८. यम के पाँच पुत्रों में से एक।

९. एक रामपक्षीय वानर, जो साल्वेय पर्वत का निवासी था (वा. रा. यु. २६.३०)।

१०. एक विंध्यपर्वतवासी वानरजाति, जो हरि एवं पुलह की संतान थी (ब्रह्मांड. ३.७.१७४)।

११. एक वानर, जो जांबवत् वानर का पुत्र था। आगे चल कर इसीसे ही 'शरभ' नामक वानरजाति का निर्माण हुआ (ब्रह्मांड. ३.७.३०४)।

१२. कृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक (वायु. ९६.२३७)।

१३. शिव की क्रोधमूर्ति वीरभद्र का एक अवतार, जो उसने नृसिंह को पराजित करने के लिए धारण किया था। इसने नृसिंह को परास्त कर, उसका चमड़ा एक वसन के नाते अपने शरीर पर ओढ लिया, जिस कारण शिव को 'नृसिंहकृत्तिवसन' उपाधि प्राप्त हुई (शिव. शत. १२)।

१४. एक ऋषि, जिसे 'निगमोद्बोधक तीर्थ' में स्नान करने के कारण, शिवकर्मन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (पद्म. उ. २०१; २०४-२०५)। इसीके कारण विकट नामक राक्षस का उद्धार हुआ था (विकट ४. देखिये)।

शरभंग—गौतम कुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि, जो दंडकारण्य में तप करता था। दंडकारण्य में गोदावरी नदी के तट पर इसका आश्रम था (म. व. ८३.३९; २६१.४०)। वाल्मीकि रामायण में इसका आश्रम मंदाकिनी नदी के तट पर स्थित होने का निर्देश प्राप्त है (वा. रा. अर. ५.३६)। किंतु वहाँ 'मंदाकिनी' का संकेत 'गोदावरी' नदी की ओर ही होना संभव अधिक प्रतीत होता है। महाभारत में अन्यत्र इसका आश्रमस्थान उत्तराखंड में बताया गया है (म. व. ८८.८ पाठ.)।

तपःसामर्थ्य—विराध राक्षस के कथनानुसार, राम दाशरथि अपने वनवासकाल में इससे मिलने के लिए इसके आश्रम में आया था। उस समय इसके तपः-सामर्थ्य से प्रसन्न हो कर, इंद्र स्वयं अपना रथ ले कर इसे ब्रह्मलोक में ले जाने के लिए उपस्थित हुआ था। किंतु राम के दर्शन की अभिलाषा मन में रखनेवाले इस ऋषि ने इंद्र का यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया, एवं यह राम की प्रतीक्षा करते आश्रम में ही बैठा रहा।

राम से भेंट—राम के इसके आश्रम में आते ही, इसने उसका उचित आदर-सत्कार किया, एवं अपने तपः-सामर्थ्य की सहायता से प्राप्त होनेवाले स्वर्गलोक एवं ब्रह्म-लोक को स्वीकार करने की प्रार्थना राम से इसने की। किंतु राम ने इसका यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया, एवं स्वयं के ही तपःसाधन से स्वर्गलोक प्राप्त करने का अपना निर्धार प्रकट किया।

तदुपरांत राम ने इससे तपस्या के लिए सुयोग्य स्थान दर्शाने की प्रार्थना की। मंदाकिनी नदी के तट पर सुतीक्ष्ण ऋषि के आश्रम के पास तपस्या करने की सूचना राम को इसने प्रदान की। पश्चात् इसने अग्नि में अपना शरीर झोंक दिया, एवं इस प्रकार यह स्वर्गलोक चला गया (वा. रा. अर. ५)।

शरयु—वीर नामक अग्नि की पत्नी।

शरारि—एक वानर, जो हनुमत् के साथ सीताशोध के लिए दक्षिण दिशा की ओर गया था (वा. रा. कि. ४१)।

शरासन—धृतराष्ट्रपुत्र 'चित्रशरासन' का नामांतर (म. द्रो. १११.१९)।

शरीर—एक आचार्य, जो वेदमित्र शाकल्य का शिष्य था (विष्णु. ३.४.२२)।

शरू—एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४७ पाठ.)।

शरूथ—(सो. तुर्वसु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार दुष्कृत (दुष्यंत) राजा का पुत्र था (वायु. ९९.५)। पाठभेद-(ब्रह्मांड पुराण)-'सरुप्य'।

शर्कर—शिशुमार ऋषि का नामांतर (शिशुमार १. देखिये)।

शर्मिन्—अगस्त्यकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण, जो गंगा-यमुना नदियों के बीच यामुन पर्वत के तलहाटी में स्थित पर्णशाला नामक ग्राम में रहता था। 'तिलांजलि दान' का माहात्म्य बताने के लिए, इसकी कथा भीष्म ने युधिष्ठिर को कथन की थी (म. अनु. ६८)।

पर्णशाला ग्राम में शर्मिन् नाम के ही दो ब्राह्मण रहते थे। एक बार यम ने अपने एक दूत को इसे पकड़ कर लाने के लिए कहा, किंतु उसने गल्ती से इसीके नाम के अन्य ब्राह्मण को पकड़ कर यम के सम्मुख पेश किया। अपने दूत की भूल यम को ज्ञात होते ही, उसने उस ब्राह्मण को अन्न, जल, तिल के दान का महत्त्व कथन किया, एवं उसे सम्मानपूर्वक बिदा किया।

पश्चात् यमदूत इसे पकड़ कर ले आये। किंतु इसके मृत्युयोग की घटिका बीत जाने के कारण, यम ने इसे भी पूर्वोक्त दान का महत्त्व कथन किया, एवं इसे बिदा कर दिया।

शर्मिष्ठा—वृषपर्वन् नामक दैत्य की कन्या, जो ययाति राजा की अत्यंत प्रिय द्वितीय पत्नी थी (देवयानी एवं ययाति देखिये)।

इसने अपने असुर जाति के कल्याण के लिए देवयानी का दास्यत्व स्वीकार लिया था (म. आ. ७३-७५; भा. ९.१८; मत्स्य २७-२९)। किंतु आगे चलकर, ययाति राजा ने देवयानी के साथ इसे भी अपनी रानी बनाया। ययाति से इसे अनु, द्रुह्यु, एवं पूरु नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए।

वाल्मीकि रामायण एवं वायु में इसका पूरु नामक केवल एक ही पुत्र दिया गया है (वा. रा. उ. ५८.६९; वायु. २.७)।

शर्यात मानव—एक सुविख्यात यज्ञकर्ता राजा, जो अश्विनों का कृपापात्र था (ऋ. १.११२.१७)। एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.९२); किंतु वहाँ इसे 'शार्यात' कहा गया है। शतपथ ब्राह्मण एवं पुराणों में इसे क्रमशः 'शर्यात', एवं 'शर्याति' कहा गया है (श. ब्रा. ४.१.५.२)। मनु का वंशज होने के कारण, इसे 'मानव' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (जै. उ. ब्रा. ४.७.१; ८.३.५)।

अश्वमेधयज्ञ—यह इंद्र का मित्र था, एवं इन्द्र इसके घर सोम पीने के लिए आया करता था (ऋ. १.५१. १२; ३.५१.७)। भृगुपुत्र च्यवन ऋषि ने इसे राज्याभिषेक किया था। आगे चल कर इसने बड़ा साम्राज्य संपादन किया, एवं च्यवन ऋषि को ऋत्विज बना कर एक अश्वमेध यज्ञ का भी, आयोजन किया। इसे देवों के यज्ञ में 'गृहपतित्व' का महत्त्वपूर्ण स्थान भी प्राप्त हो चुका था।

इसकी कन्या का नाम 'शार्याती सुकन्या' था, जिसका विवाह इसने च्यवन ऋषि से कराया था। इस विवाह के कारण च्यवन इस पर अत्यंत प्रसन्न हुआ था। विवाह के समय, च्यवन अत्यंत बूढा था, किंतु पश्चात् अश्विनों ने उसे यौवन प्रदान किया था।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रंथों में इसे वैवस्वत मनु का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी पत्नी का नाम स्थविष्ठा कहा गया है। अपनी इस पत्नी से इसे आनर्त एवं सुकन्या नामक जुड़वीं संतान उत्पन्न हुई थी। पौराणिक साहित्य में इसे 'शार्यात' 'शर्याति' 'शय्याति' आदि अनेक नामांतर दिये गये हैं।

यह अत्यंत शूर, एवं वेदविद्यापारंगत राजा था। आंगिरस ऋषि के द्वारा किये सत्र में, द्वितीय दिन के सारे कर्म एक ऋत्विज के नाते इसने निभायें थे। देवी को प्रसन्न करने के लिए भी इसने तपस्या की थी।

स्त्रियों की परीक्षा—इसका प्रमुख पुरोहित मधुच्छंदस् वैश्वामित्र था। एक बार यह अपने पुरोहित के साथ, मृगया करने जा रहा था। मधुच्छंदस् के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर इसने मृगयागमन स्थगित किया। किन्तु अपनी राजस्त्रियों की परीक्षा लेने के लिए, अपने एवं मधुच्छंदस् के वध की झूठी वार्ता अपने नगर में पहुँचा दी। इसके वध की वार्ता सुन कर इसकी दोनों ही पत्नियाँ तत्काल मृत हुई। आगे चल कर, गोमती नदी के तीर पर तपस्या कर इसने अपनी दोनों पत्नियों को पुनः जीवित किया (ब्रह्म. १३८)।

च्यवन ऋषि से भेंट—एक बार यह अपने सुकन्या नामक कन्या के साथ च्यवन ऋषि के आश्रम में गया। वहाँ इसकी कन्या ने असावधानी से च्यवन ऋषि की दोनों आँखें फोड़ डालीं। आगे चल कर, अनुतापदग्ध हो कर इसने ऋषि से क्षमा माँगी, एवं अपनी कन्या सुकन्या उसे विवाह में दे दी। अश्विनों की कृपा से च्यवन ऋषि की आँखें एवं गततारुण्य उसे पुनः प्राप्त हुआ (भा. ९.३.१८; १२.३.१०; च्यवन देखिये)।

परिवार—इसके उत्तानबर्हि, आनर्त एवं भूरिषेण नामक तीन पुत्र थे (भा. ९.३)। आगे चल कर, इसी के ही वंश में हैहय एवं तालजंघ नामक दो सुविख्यात राजा उत्पन्न हुए थे (म. अनु. ३०.६-७)।

शर्याति—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो प्राचीन्वत् राजा का पुत्र, एवं अहंयाति राजा का पिता था (म. आ. ९०.१४)। इसके नाम के लिए 'अहंपति', 'शय्याति' पाठभेद प्राप्त हैं। इसकी माता का नाम अश्मकी था, एवं त्रिशंकु राजा की कन्या इसकी पत्नी थी।

२. (सो. आयु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार नहुष राजा का पुत्र था (मत्स्य. २४.१५)।

३. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजकुमार, जो अक्रूर एवं अश्विनी का पुत्र था (मत्स्य. ४५.३३)।

४. एक सुविख्यात यज्ञकर्ता राजा, जो वैवस्वत मनु राजा का पुत्र था (शर्यात मानव देखिये)।

शर्व—शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक (भा. ६.१५.२८)।

शर्वदत्त गार्ग्य—एक आचार्य। शर्वदेव के द्वारा प्रदान किये जाने के कारण, इसे 'शर्वदत्त' नाम प्राप्त हुआ था (वं. ब्रा. १)।

शर्वरी—दोष नामक वसु की पत्नी।

शल—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा, जो परिक्षित् एवं सुशोभना के तीन पुत्रों में से एक था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम दल एवं बल थे।

वामदेव का शाप—एक बार यह शिकार करने वन में गया। वहाँ इसके रथ के अश्व थक गये, जिस कारण वहाँ समीप ही स्थित वामदेव ऋषि के आश्रम में यह गया, एवं उसके अश्व इसने थोडे समय के लिए माँग लिये। वामदेव ने इसे यह शर्त बतायी थी कि, अश्वों का काम होते ही वे उसे वापस मिलने चाहिये।

आगे चल कर वचनभंग कर, इसने वामदेव के अश्व वापस करने से इन्कार किया। इतना ही नहीं,

वे अश्व वामदेव के न हो कर, स्वयं के है, ऐसा मिथ्या वचन यह कहने लगा। इस कारण क्रुद्ध हो कर वामदेव ने चार राक्षस निर्माण किये, एवं उन्हींके द्वारा इसका वध करवाया। इसके वध के पश्चात् इसका भाई दल अयोध्या का राजा बन गया (म. व. १९०.६-९)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो कुरुवंशीय सोमदत्त राजा का पुत्र, एवं भूरिश्रवस् राजा का भाई था। इसे 'सांयमनि' पैतृक नाम प्राप्त था। द्रौपदी के स्वयंवर में, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१४)।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये गरुडव्यूह के वामभाग में खड़ा था। इसने निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध किया था:—१. अभिमन्यु (म. द्रो. ३६.७); २. द्रौपदी के पुत्र (म. द्रो. ८१.१५)। अंत में श्रुतकर्मन् के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. ८३.१०)।

३. धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीम के द्वारा मारा गया था (म. क. ६२.५)।

४. वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.५ पाठ.)।

५. एक असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.१९)। परशुराम ने इसका वध किया।

६. कंसपक्षीय एक पहलवान, जो कृष्ण के द्वारा मारा गया (भा. १.१५.१६)।

७. एक असुर, जो वृक एवं दुर्वाक्षी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४३)।

८. सुतहोत्र राजा का पुत्र (वायु. ९२.३)।

शलकर—तक्षककुलोत्पन्न एक सर्प (म. आ. ५२.८)।

शलंक--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (पाणिनि देखिये)।

शलभ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक राक्षससमूह, जो यामिनी एवं तार्क्ष्य कश्यप की संतान मानी जाती हैं।

३. चेदि देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५१)।

४. एक सैंहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक। परशुराम ने इसका वध किया।

शलभा--अत्रि ऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८.७४-८७)।

शल्य—बाल्हीक एवं मद्र देश का सुविख्यात राजा, जो नकुल-सहदेव की माता माद्री का भाई, एवं पाण्डवों का मामा था। इसके पिता का नाम ऋतायन था (म. भी. ५८.१४)।

पाण्डवों का अत्यंत निकट का रिश्तेदार होते हुए भी, भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। संभवतः इसी कारण, महाभारत में इसे हिरण्यकशिपु के द्वितीय पुत्र 'संह्राद' के आसुरी अंश से उत्पन्न एक दुष्ट पुरुष कहा गया है (म. आ. ६१.६)।

महाभारतकाल में मद्र एवं बाल्हीक देश हीन जाति के लोग माने जाते थे, इसका प्रत्यंतर शल्य के चरित्र में अनेक बार प्राप्त है। यद्यपि शल्य अत्यंत पराक्रमी, 'बाल्हीकपुंगव,' एवं पांडवों का रिश्तेदार था, फिर भी मद्रदेशीय होने के कारण इसे जीवन भर उपहासात्मक वचन एवं अपमान सहने पड़ें, जिसकी चरम सीमा भारतीय युद्ध के समय हुए 'कर्ण-शल्य संवाद' में पायी जाती है।

माद्री का विवाह--इसकी बहन माद्री अत्यंत स्वरूपसुंदर थी। इसी कारण हस्तिनापुर के राजा पांडु का विवाह उससे करने का प्रस्ताव भीष्म ने इसके सामने रखा। उस समय मद्र देश में प्रचलित रिवाज के अनुसार कन्यादान के शुल्क की माँग इसने भीष्म से की। भीष्म के इस शर्त को मान्यता देने पर इसने माद्री का विवाह पांडु से कराया।

द्रौपदीस्वयंवर में--अपने रुक्मांगद एवं रुक्मरथ नामक दो पुत्रों के साथ यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था। उस समय यह मत्स्यभेद के लिए धनुष तक न चढ़ा सका था, जिस कारण स्वयंवरमंडप में इसे लज्जित होना पड़ा (म. आ. १७७.१३)। इसी मंडप में, इसका भीमसेन से युद्ध भी हुआ था, जिसमें यह उससे पराजित हुआ (म. आ. १८१.२४)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में--नकुल के द्वारा किये गये पश्चिम दिग्विजय के समय, इसने शाकलनगरी में उसका अत्यंत उत्कृष्ट स्वागत किया, एवं उसे अनेकानेक भेंट वस्तुएँ प्रदान की। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी यह उपस्थित था, जहाँ शिशुपाल ने इसे श्रीकृष्ण से भी अधिक श्रेष्ठ ठहराने की कोशिश की थी किंतु अपने इस प्रयत्न

में वह असफल रहा। इस समारोह में इसने युधिष्ठिर को एक रत्नजडित तलवार, एवं एक सुवर्णकलश प्रदान किया था। युधिष्ठिर एवं शकुनि के दरम्यान हुई द्युतक्रीड़ा में भी यह उपस्थित था।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध के समय, पांडवों ने अपनी ओर से इसे रणनिमंत्रण भेजा था। नकुल सहदेवों का मामा होने के कारण, इसका पांडवों के पक्ष में शामिल होना स्वाभाविक भी था। किंतु पांडव पक्ष में दाखल होने के लिए एक अक्षौहिणी सेना के साथ निकले हुए शल्य को दुर्योधन ने राह में ही बड़ी चतुरता से रोका, एवं इसका इतना भव्य आदरसत्कार किया कि, यह पांडवों का पक्ष छोड़ कर कौरवपक्ष में शामिल हुआ। पश्चात् यह युधिष्ठिर के पास गया, एवं इसने कौरव पक्ष में रह कर ही युद्ध करने का अपना निश्चय उसे विदित किया (म. उ. ८. २५-२७)। उस समय युधिष्ठिर ने इसे कौरवपक्षीय योद्धाओं का, एवं विशेषतः कर्ण का तेजोभंग करने की प्रार्थना की। इसने युधिष्ठिर की यह प्रार्थना मान्य कर उससे 'इंद्रविजय' नामक उपाख्यान भी सुनाया। इसी कारण महाभारत में शल्य को 'उपहित' (शत्रु की वंचना करने के लिए नियुक्त) कहा गया है।

भारतीय युद्ध में इसकी श्रेणी 'अतिरथी' थी, एवं हर एक युद्ध में यह कृष्ण के साथ स्पर्धा करने में प्रयत्नशील रहता था।

युद्धप्रसंग--भारतीय युद्ध में इसने निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध किया था :--१. विराटपुत्र उत्तर (म. भी. ४५.४१) २. विराटभ्राता शतानीक (म. द्रो. १४२.२७); ३. युधिष्ठिर (म. भी. ४३.२६)।

इसी युद्ध में यह निम्नलिखित योद्धाओं के हाथों पराजित हुआ था :—(१) भीमसेन (म. भी. ६०. २३); (२) सहदेव (म. भी. ७९.५०); (३) अभिमन्यु (म. द्रो. ४७.१३)।

कर्ण का सारथ्य—द्रोण वध के पश्चात्, कर्ण कौरवसेना का सेनापति बन गया। उस समय इससे अपना सारथी बनने की प्रार्थना कर्ण ने की। इसमें अपना अपमान समझ कर इसने इस प्रस्ताव को अमान्य कर दिया। किंतु अंत में स्वयं दुर्योधन के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने कर्ण का सारथ्य स्वीकार लिया। किंतु यह शर्त रक्खी कि, सारथ्यकर्म करते समय जो भी कुछ भलाबुरा यह कर्ण से कहेगा, वह उसे सुनना पड़ेगा (म. क. २२.२५)।

कर्ण-शल्यसंवाद—दूसरे दिन कर्ण एवं अर्जुन के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने कर्ण से नाना प्रकार के उपहासपूर्ण वचन कह कर, उसका तेजोभंग किया। चित्रसेन गंधर्व के युद्ध में कर्ण के द्वारा किया गया पलायन, विराटपुत्र उत्तर के द्वारा किया गया उसका पराजय आदि कर्ण के जीवन के अनेकानेक लांछनास्पद प्रसंगों का स्मरण इसने उसे दिलाया। अर्जुन के तुलना में कर्ण एक 'काक' के समान क्षुद्र एवं नीच है ऐसा कह कर, 'हंसकाकीय' नामक एक व्यंजनात्मक उपाख्यान भी उसे सुनाया (म. क. २६.२७-२९)।

इस समय, कर्ण ने भी व्यक्तिशः इसकी एवं बाह्लिक देश में रहनेवाले लोगों की यथेच्छ निंदा की, एवं इन्हें चोर, हीन जाति के, व्यभिचारी आदि अनेकानेक भलेबुरे शब्द कहे। पश्चात् दुर्योधन ने मध्यस्थता कर, इन दोनों में शांतता प्रस्थापित की (म. क. ३०)। आगे चल कर, कर्ण एवं भीम के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने कर्ण की जान भी बचायी थी (म. क. ६२.८.१४)।

सेनापति शल्य--कर्णवध के पश्चात्, यह कौरवसेना का सेनापति बन गया (म. श. १.८)। यह केवल आधा दिन के लिए ही कौरवों का सेनापति रहा। अन्त में माध्याह्न के समय, यह युधिष्ठिर के द्वारा मारा गया (म. श. १.१०; १६.५९-६५)। इसकी मृत्यु पौष कृष्ण अमावस्या के दिन हुई।

शवकर्ण—शिवकर्ण नामक वसिष्ठगोत्रोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

शवस्—एक आचार्य, जो अग्निभू काश्यप नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम देवतर शावसायन था (वं. ब्रा. २)।

शश भारद्वाज--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५२)।

शशक--एक जातिसमूह, जो कर्ण के दिग्विजय में परास्त हुआ था (म. व. परि. २४.७०)।

शशकर्ण काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.९)।

शशबिंदु--(सो. सह.) एक सुविख्यात यादववंशीय चक्रवर्ती राजा, जो महातपस्वी था (वायु. ९५.१९)। यह चित्ररथ राजा का पुत्र था।

नारद के द्वारा सृंजय राजा को सोलह प्रातःस्मरणीय राजाओं के जो आख्यान सुनाये गये थे, उनमें यह भी एक था (म. द्रो. परि १. क्र. ८ पंक्ति. ६२३-६४५; शां. २९.९८-१०३; २०१.११)। संसार के श्रेष्ठतम

एवं पुण्यशील राजा भी मृत्यु से नहीं बच सकते हैं, इस तत्त्व के प्रतिपादन के लिए नारद ने इसका जीवन-चरित्र सृंजय को सुनाया था। रुद्रेश्वर-लिंग की आराधना करने के कारण इसे राजकुल में जन्म प्राप्त हुआ था (स्कंद. ९.१.३९)।

परिवार—इसकी कुल दस हज़ार स्त्रियाँ थीं, जिनमें से हर एक स्त्री से इसे दस हज़ार पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. शां. २९.९८-९९)। इसके पुत्रों में पृथुश्रवस्, पृथुकीर्ति, एवं पृथुयशस् प्रमुख थे। इसकी कन्या का नाम बिंदुमती था, जिसका विवाह मांधातृ राजा से हुआ था (भा. ९.६)।

इसकी संतानों की संख्या के संबंध में अतिशयोक्त वर्णन भागवतादि पुराणों में प्राप्त है, जहाँ इसकी संतानों की कुल संख्या एक अब्ज बतायी गयी है (भा. ९.२३. ३१-३३)। इस प्रकार, इस सृष्टि की सारी प्रजा शशबिंदु की ही संतान कही गयी है।

शशलोमन्—एक राजा, जिसने कुरुक्षेत्र के तपोवन में तप कर के स्वर्ग प्राप्त कर लिया था (म. आश्व. २६.१४)।

शशाद—(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जिसे 'विकुक्षि' नामांतर भी प्राप्त था (म. व. १९३.१)। यह इक्ष्वाकु राजा के सौ पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र था, एवं उसीके पश्चात् राजगद्दी पर बैठा था (भा. ९.६.६-११)।

इक्ष्वाकु का शाप—एक बार इसके पिता ने इसे वन में जा कर कुछ मांस लाने के लिए कहा, जो उसे 'अष्टका श्राद्ध' करने के लिए आवश्यक था। अपने पिता की आज्ञा के अनुसार यह वन में गया, एवं इसने दस हज़ार प्राणियों का वध किया। पश्चात् अत्यधिक क्षुधा के कारण, यज्ञार्थ इकठ्ठा किये गये मांस में से खरगोश का थोड़ासा मांस इसने भक्षण किया। यह ज्ञात होते ही इसके पिता ने इसे राज्य से बाहर निकाल दिया, एवं इसे 'शशाद' व्यंजनात्मक नाम रख दिया।

अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् यह अयोध्या के राजसिंहासन पर आरुढ हुआ, एवं शशाद नाम से ही राज्य करने लगा।

परिवार—इसके कुल पाँच सौ पुत्र थे, जिन में पुरंजय प्रमुख था (भा. ९.६.६-१२)। मत्स्य के अनुसार, इसे कुल १६३ पुत्र थे, जिन में से पंद्रह पुत्र मेरु पर्वत के उत्तर भाग में, एवं उर्वरित १४८ मेरु के दक्षिण में स्थित प्रदेश में राज्य करने लगे। मेरु के दक्षिण में राज्य करनेवाले इसके पुत्रों में 'ककुत्स्थ' प्रमुख था (मत्स्य. ११.२६.२८)।

शशि—(सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय शुचि राजा का नामांतर (शुचि १. देखिये)। मत्स्य में इसे अंधक राजा का पुत्र कहा गया है।

शशिकला—काशिराज सुबाहु राजा की कन्या, जो सूर्यवंशीय सुदर्शन राजा की पत्नी थी।

शशीयसी—तरंत राजा की पत्नी (ऋ. अनुक्रमणी ५.६१.६)।

शश्वती आंगिरसी—एक वैदिक मंत्रद्रष्ट्री, जो आसंग नामक ऋषि की पत्नी थी (ऋ. ८.१.३४)।

शांवत्य— एक आचार्य, जिसके यज्ञविषयक अनेकानेक मतों का निर्देश आश्वलायन गृह्यसूत्र में प्राप्त है। 'शूलगव याग' में मारे गये पशु का चमड़ा पादत्राण तैयार करने के लिए उपयोजित किया जा सकता है, ऐसा इसका अभिमत था (आश्व. गृ. ९.२४)।

शांशपायन—एक पुराणप्रवक्ता आचार्य, जो व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा का एक शिष्य था। व्यास से इसे वायुपुराण की संहिता प्राप्त हुई, जो इसने आगे चल कर अपने पुत्र एवं शिष्य रोमहर्षण सूत को प्रदान की थी (वायु. १०३.६६-६७)।

शांशपायन सुशर्मन्—एक आचार्य, जो रोमहर्षण सूत नामक आचार्य के पुराणशिष्यपरंपरा का एक प्रमुख शिष्य था (ब्रह्मांड. २.३५.६३-७०; वायु. ६१.५५-६२ अग्नि. २७२.११-१२)।

संभवतः 'शांशपायन' इसका पैतृक नाम था, जो इसे शंशप का वंश होने के कारण प्राप्त हुआ होगा।

शाकराक्ष—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकटायन—एक वैयाकरण, जो पाणिनि एवं यास्क आदि आचार्यों का पूर्वाचार्य, एवं 'उणादिसूत्र-पाठ' नामक सुविख्यात व्याकरण ग्रंथ का कर्ता माना जाता है। पाणिनि के अष्टाध्यायी में इसे सारे व्याकरण-कारों में श्रेष्ठ कहा गया है (**अनुशाकटायनं वैयाकरणाः**; पा. सू. १.४.८६-८७)। इससे प्रतीत होता है कि, पाणिनि के काल में भी यह आदरणीय वैय्याकरण माना जाता था। केशवकृत 'नानार्थार्णव' में शाकटायन को 'आदिशाब्दिक (शब्दशास्त्र का जनक) कहा गया है।

नाम—पतंजलि के व्याकरण में इसके पिता का नाम शकट दिया गया है (महा. ३.३.१)। किंतु पाणिनि के

अनुसार शकट इसके पिता का नाम न हो कर, इसके पितामह का नाम था (पा. सू. ४.१.९६)। पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में एवं शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य में इसे काण्ववंशीय कहा गया है।

गुरुपरंपरा--व्याकरण साहित्य में इसे काण्व ऋषि का शिष्य कहा गया है (शु. प्रातिशाख्य. ४.१२९)। किन्तु शैशिरि शिक्षा के प्रारंभ में इसे शैशिरि परंपरा का आचार्य कहा गया है, एवं इसे स्वयं शैशिरि ऋषि का शिष्य कहा गया है (शैशिरस्य तु शिष्यस्य शाकटायन एव च)

उणादि सूत्र—इस सुविख्यात व्याकरणशास्त्रीय ग्रंथ का शाकटायन प्रणयिता माना जाता है। संस्कृत भाषा में पाये जानेवाले सर्व शब्द 'धातुसाधित' (धातुओं से उत्पन्न) हैं, ऐसा इसका अभिमत था। इसी दृष्टि से लौकिक एवं वैदिक शब्दों का एवं पदों का अन्वाख्यान लगाने का सफल प्रयत्न इसने अपने 'उणादिसूत्र' में किया है। वैदिक साहित्यान्तर्गत 'प्रातिशाख्य' ग्रंथों में इसके व्याकरणविषयक मतों का निर्देश अनेक बार प्राप्त हैं (ऋ. प्रा. १७.७४७; अ. प्रा. २.२४; शु. प्रा. ३.८; ९; १२; ४.५; १२७; १८९)।

पाणिनि के सूत्रपाठ में 'उणादिसूत्रों' का निर्देश कई बार आता है, जिससे प्रतीत होता है कि, इसका यह ग्रंथ पाणिनि से भी पूर्वकालीन था। पाणिनि के पूर्वकालीन चाक्रायण चाक्रवर्मण नामक आचार्य का निर्देश भी उणादिसूत्रों में प्राप्त है।

'प्रकृति प्रत्यय' कथन करने की पद्धति सर्वप्रथम इसने ही शुरु की, जिसका अनुकरण आगे चल कर पाणिनि ने किया। फिर भी शब्दों की सिद्धि के संबंध में, पाणिनि अनेक बार अपने स्वयं का स्वतंत्र मत प्रतिपादन करता हुआ प्रतीत होता है।

गार्ग्य को छोड़ कर समस्त 'नैरुक्त' आचार्य शाकटायन को अपना आद्य आचार्य मानते हैं, एवं संस्कृत भाषा में प्राप्त समस्त नाम 'आख्यातज' समझते हैं। इसका उपसर्गविषयक एक मत 'बृहद्देवता' में पुनरुध्दृत किया गया है (बृहद्दे. २.९)।

उणादि सूत्र के उपलब्ध संस्करण में 'मिहिर' 'दीनार' 'स्तूप', आदि अनेकानेक बुद्धोत्तरकालीन असंस्कृत शब्दों का निर्देश प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ का उपलब्ध संस्करण प्रक्षेपयुक्त है। इस ग्रंथ की उज्ज्वलदत्त के द्वारा लिखित टीका ऑफ्रेक्ट के द्वारा प्रकाशित की गयी है, उसमें भी यही अभिमत व्यक्त किया गया है।

इसी ग्रंथ की श्वेतवनवासिन् एवं नारायण के द्वारा लिखित टीकाएँ मद्रास विश्वविद्यालय के द्वारा प्रकाशित की गयी हैं।

उणादि सूत्रों का रचयिता शाकटायन न हो कर स्वयं पाणिनि ही था, ऐसा सिद्धान्त स्व. प्रा. का. बा. पाठक के द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

दैवतशास्त्र--बृहद्देवता में शाकटायन के अनेकानेक दैवतशास्त्रविषयक उद्धरण प्राप्त हैं (बृहद्दे. २.१.६५; ३.१५६; ४.१३८; ६.४३; ७.६९; ८.११.९०)। इससे प्रतीत होता है कि, शाकटायन के द्वारा 'दैवतशास्त्र' विषयक कोई ग्रंथ की रचना की गयी होगी। किंतु इसके इस ग्रंथ का नाम भी आज उपलब्ध नहीं है।

इसके अतिरिक्त शौनक के 'चतुराध्यायी' में (२. २४); 'ऋक्तंत्र' में (१.१), एवं हेमाद्रि कृत 'चतुर्वर्गचिंतामणि' में शाकटायन के अभिमतों का निर्देश प्राप्त है।

अन्य ग्रंथ--उपर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त, इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ भी प्राप्त हैं:— १. शाकटायन स्मृति; २. शाकटायन-व्याकरण (C. C.)।

२. एक व्याकरणाचार्य, जिसका निर्देश अनंतभट्ट कृत 'शुक्लयजुर्वेद-प्रातिशाख्य भाष्य' में प्राप्त है। इस भाष्य में इसे काण्व ऋषि का शिष्य कहा गया है। 'उणादिसूत्रों' का रचयिता शाकटायन एवं यह संभवतः एक ही होंगे (शाकटायन १. देखिये)।

३. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकदास भाडितायन--एक आचार्य, जो विचक्षण तांड्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम संवर्गजित् लामकायन था (वं. ब्रा. २)।

शाकधि—वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

शाकपूणि—एक व्याकरणाचार्य, जिसके व्याकरण-विषयक अनेकानेक मतों का निर्देश यास्क के 'निरुक्त' में प्राप्त है (नि. ३.११; ६.१४; ८.५; १२.१९; १३. १०-११)।

ऋग्वेदार्थ का ज्ञान--ऋग्वेद के मंत्रों के अर्थों का ज्ञान शाकपूणि को किस प्रकार प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक कथा यास्क के निरुक्त में प्राप्त है। एक बार शाकपूणि को वैदिक देवता के संबंध में ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई।

इसका यह मनोगत जान कर वैदिक देवता इसके सम्मुख उपस्थित हुए, एवं उन्होंने इसे ऋग्वेद की ऋचा (ऋ. १. १६४.२९), एवं उसका अर्थ कथन किया। इसीसे आगे चल कर शाकपूणि ऋग्वेद का मंत्रार्थद्रष्टा आचार्य बन गया (नि. २.८)।

शाकपूणि रथंतर--एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से इंद्रप्रमति नामक आचार्य का शिष्य था। वायु में इसे 'रथीतर' अथवा 'रथांतर', तथा ब्रह्मांड में इसे 'रथीतर' कहा गया है।

शाकपूर्ण रथीतर (रथांतर)--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से सत्यश्री नामक आचार्य का शिष्य (व्यास पाराशर्य देखिये)।

शाकंभरी--देवी का एक अवतार (देवी देखिये)।

शाकल--देवमित्र (वेदमित्र) शाकल्य नामक आचार्य के शिष्यों का सामूहिक नाम। इसी सामूहिक नाम के कारण इस शिष्यपरंपरा के आचार्य एवं उनके द्वारा संस्कारित ऋग्वेद संहिता 'शाकल शाखान्तर्गत' मानी जाती है। पाणिनि के अष्टाध्यायी में भी 'शाकल' शब्द का अर्थ भी 'शाकल्य का शिष्य' किया गया है।

ब्राह्मण ग्रंथों में--ऐतरेय ब्राह्मण में 'शाकल' शब्द का अर्थ एक प्रकार का साँप ऐसा दिया गया है, जो शाकल्य के शिष्यों की ही व्यंजना प्रतीत होती है। वहाँ अग्निष्टोम यज्ञ, रथचक्र के सदृश आदि एवं अंतविरहित होता है, इस कथन के लिए चक्राकार बैठे हुए 'शाकल' की उपमा दी गयी है (ऐ. ब्रा. ३ ५)।

व्याकरण ग्रंथों में--पाणिनि, कात्यायन, एवं पतंजलि के ग्रंथों में 'शाकल' का निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ४.१.१८; ३.१२८; ६.१.१२७), जहाँ सर्वत्र 'शाकल' का निर्देश एक सामूहिक नाम के नाते से प्राप्त है। ऋग्वेद प्रातिशाख्य में 'शाकल' का निर्देश अनेक बार प्राप्त है (ऋ. प्रा. ६५; ७६; ३९०; ४०३; ६३१; ६३३)।

मॅक्स मूलर आदि पाश्चात्य वैदिक अभ्यासक, शाकल को एक आचार्य मानते है, जिसने शाकलशाखान्तर्गत प्रचलित ऋकसंहिता का निर्माण किया था। किंतु यह अभिमत भारतीय वैदिक परंपरा के दृष्टि से भ्रममूलक प्रतीत होता है; क्यों कि, जैसे पहले ही कहा जा चुका है, कि शाकल नामक कोई भी आचार्य प्राचीन वैदिक परंपरा में नहीं था।

शाकल शाखा--वर्तमानकाल में प्राप्त ऋग्वेद की संहिता शाकल शाखा की मानी जाती है। वायु के अनुसार, देवमित्र (वेदमित्र, विदग्ध) शाकल्य के निम्नलिखित पाँच शाखाप्रवर्तक शिष्य थे:--१. मुद्गल; २. गालव; ३. शालीय, ४. वात्स्य, ५. शैशिरेय (शैशर, अथवा शैशिरी)। शाकल्य के यही पाँच शिष्य ऋग्वेद के शाखाप्रवर्तक आचार्य नाम से सुविख्यात हुए। इन आचार्यों के द्वारा प्रणीत ऋग्वेद की विभिन्न शाखाओं की जानकारी निम्नप्रकार है:--

(१) **मुद्गल शाखा**--इस शाखा की ऋग्वेद संहिता ब्राह्मण आदि ग्रंथ अप्राप्य हैं। किंतु उस शाखा का निर्देश 'प्रपंचहृदय' आदि ग्रंथों में प्राप्त हैं। इस शाखा के प्रवर्तक भर्म्याश्व मुद्गल नामक आचार्य का निर्देश ऋग्वेद एवं बृहद्देवता में प्राप्त है (ऋ. १०.१०२; बृहद्दे. ६.४६)।

इसका वंशक्रम निम्नप्रकार माना जाता है:--भृम्यश्व--मुद्गल--वध्य्यश्व--दिवोदास।

(२) **गालव शाखा**--इस शाखा के प्रवर्तक गालव अथवा बाभ्रव्य पांचाल का निर्देश 'अष्टाध्यायी' 'ऋक्प्रातिशाख्य', 'निरुक्त', बृहद्देवता' आदि ग्रंथों में प्राप्त है। इस शाखा की संहिता, ब्राह्मण आदि ग्रंथ अप्राप्य हैं।

(३) **शालीय शाखा**--'काशिका वृत्ति' में शालीय का निर्देश एक शाखाप्रवर्तक आचार्य के नाते प्राप्त है। किंतु इस शाखा की संहिता आदि अप्राप्य है।

(४) **वात्स्य शाखा**--पतंजलि के 'व्याकरणमहाभाष्य' में वात्सी नामक आचार्य का निर्देश प्राप्त है (महा. ४.२.१०४)। किंतु इस शाखा की संहिता आदि अप्राप्य हैं (भा. २ पृ. २९७)।

(५) **शैशिरेय शाखा**--इस शाखा के संहिता का निर्देश ऋग्वेद अनुवाकानुक्रमणी में प्राप्त है। शौनक के 'अनुवाकानुक्रमणि' के अनुसार इस शाखा के संहिता में ८५ अनुवाक, १०१७ सूक्त, २००६ वर्ग एवं १०४१७ मंत्र थे।

इस शाखा का एक 'प्रातिशाख्य' भी उपलब्ध है, जो शौनक के द्वारा विरचित है। इस प्रातिशाख्य में वेदमित्र शाकल्य का निर्देश 'शाकल्यपिता' एवं 'शाकल्यस्थविर' नाम से किया गया है (ऋ. प्रा. १.२२३; १८५)।

शौनक स्वयं शैशिरेय शाखा का ही आचार्य था, जिस कारण उसके द्वारा विरचित प्रातिशाख्य ग्रंथ 'शाकल प्रातिशाख्य' अथवा 'शैशिरेय प्रातिशाख्य' नाम से सुविख्यात था।

शौनक के द्वारा विरचित एक 'अथर्वप्रातिशाख्य' भी प्राप्त है, जो 'चतुराध्यायिका' नाम से सुविख्यात है।

शाकल्यसंहिता—शाकल शाखा की आद्यसंहिता 'शाकल्य संहिता' थी, जिसका निर्देश 'व्याकरण-महाभाष्य' में प्राप्त है (महा. १.४.८४)। कात्यायन की 'ऋक्सर्वानुक्रमणी' एवं शाकल्य का पदपाठ इसी संहिता को आधार मान कर लिखा गया है। इस पदपाठ के अनुसार, शाकल्य के मूल संहिता में १५३८२६ पद थे।

शाकलायनि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकलि—ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

शाकल्य—ऋग्वेद का सुविख्यात शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो व्यास के वैदिक शिष्यों में प्रमुख था। इसे शतपथ ब्राह्मण में 'विदग्ध' शाकल्य, ऐतरेय आरण्यक में 'स्थविर' शाकल्य एवं पौराणिक साहित्य में वेदमित्र (देवमित्र) शाकल्य कहा गया है (श. ब्रा. ११.६.३.३; बृ. उ. ३.९.१.४; ७; ऐ. आ. ३.२.१.६; सां. आ. ७.१६; ८.१.११; वायु. ६०; ब्रह्मांड. २.३४)।

शाखाप्रवर्तक आचार्य—व्यास से इसे जो 'ऋग्वेद संहिता' प्राप्त हुई, वह 'शाकल संहिता' नाम से प्रसिद्ध है, जो आगे चल कर इसने अपने पाँच शाखा-प्रवर्तक शिष्यों में बाँट दी। इसी के नाम से वे शाखाएँ 'शाकल' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध हैं (शाकल देखिये)।

ऋग्वेद की वर्तमानकाल में उपलब्ध संहिता 'शाकल्य के शाखा की' अर्थात् 'शाकल संहिता' मानी जाती है। इसी कारण षड्गुरु ने अपने सर्वानुक्रमणी में 'शाकलक' की व्याख्या करते समय '**शाकल्योच्चारणम् शाकलकम्**' कहा है (ऋ. सर्वानुक्रमणी १.१)।

इससे प्रतीत होता है कि, इसने 'ऋग्वेद संहिता' का 'पदपाठ' तैयार किया, अनेकानेक प्रवचनों द्वारा उसका प्रचार किया एवं सैंकड़ों शिष्यों के द्वारा उसे स्थायी स्वरूप प्राप्त कराया।

पतंजलि के 'महाभाष्य' से, एवं 'महाभारत' से प्रतीत होता है कि, ऋग्वेद की इक्कीस शाखाएँ थी। किंतु उनमें से केवळ पाँच शाखाओं के नाम आज प्राप्त हैं (चरणव्यूह; शाकल देखिये)। ऋग्वेदी ब्रह्मयज्ञांग तर्पण में केवल तीन शाखाप्रवर्तकों का निर्देश पाया जाता है। देवी भागवत जैसे पौराणिक ग्रंथ में भी शाकल्य की तीन ही शाखाएँ बतायी गयी हैं (दे. भा. ७)।

पदपाठ का रचयिता—ऋग्वेद के वर्तमान 'पदपाठ' की रचना शाकल्य के द्वारा की गयी है। इस पदपाठ में ऋग्वेद में प्राप्त समानार्थी पदों का संग्रह परिगणना-पद्धति से किया गया है। किंतु कौन से नियम का अनुसरण कर इस 'पदपाठ' की रचना की गयी है, इसका पता पदपाठ में प्राप्त नहीं होता।

व्याकरणाचार्य—शौनक के 'ऋक्प्रातिशाख्य' में भी इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसे एक 'व्याकरणकार' कहा गया है। 'ऋग्वेद संहिता' में संधि किस प्रकार साधित किये जाते हैं, इस संबंध में इसके अनेकानेक उद्धरण 'शौनकीय ऋक्प्रातिशाख्य' में प्राप्त हैं (ऋ. प्रा. १९९; २०८; २३२; शु. प्रा. ३.१०)।

पाणिनि के अष्टाध्यायी में—इस ग्रंथ में संधिनियमों के संदर्भ में इसका निर्देश अनेक बार प्राप्त है (पा. सू. ६.१.१२७; ८.३.१९; ४.५०)। इसी ग्रंथ में 'पदकार' नाम से इसका निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ३.२.२३)। इसके द्वारा लिखित पदपाठ में जिस 'पद' का निर्देश 'इति' से किया गया है, जो पाणिनि के अनुसार 'अनार्ष' है (पा. सू. १.१.१६)।

पाणिनि ने 'उपस्थित' शब्द की व्याख्या करते समय पुनः एक बार इसका निर्देश किया है, एवं कहा है, "शाकल्य के अनुसार, 'इतिकरण' से सहित 'पद' को 'उपस्थित' कहते थे" (पा. सू. ६.१.१२९)।

याज्ञवल्क्य से संघर्ष—याज्ञवल्क्य वाजसनेय से इसने किये प्राणांतिक वादविवाद का निर्देश 'बृहदारण्यक उपनिषद' में प्राप्त है (याज्ञवल्क्य वाजसनेय, एवं देवमित्र शाकल्य देखिये)।

पौराणिक साहित्य में—महाभारत में इसे एक ब्रह्मर्षि कहा गया है, एवं इसके नौ सौ वर्षों तक शिवोपासना करने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर शिव ने इसे वर प्रदान किया, 'तुम बड़े ग्रंथकार बनोंगे, एवं तुम्हारा पुत्र ख्यातनाम सूत्रकार बनेगा' (म. अनु. १४; शिव. रुद्र. ४३-४७)। महाभारत में प्राप्त इस कथा में, इसके पुत्र का नाम अप्राप्य है।

ग्रंथ—ऋक्संहितासाहित्य के अतिरिक्त इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं:— १. शाकल्यसंहिता २. शाकल्यमत (C. C.)।

२. एक विष्णुभक्त ऋषि, जो शुभ्रगिरि पर निवास करता था। एक बार परशु नामक राक्षस इसे खाने के लिए दौड़ा। उस समय विष्णु की कृपा से यह लोहमूर्ति

में रूपांतरित हुआ, एवं इस प्रकार इसकी जान बच गयी। आगे चल कर इसने परशु राक्षस का उद्धार किया (ब्रह्म. १६३)।

शाकल्यपितृ--एक वैय्याकरण; जिसका संधिनियम के संबंध में अभिमत 'ऋक्प्रातिशाख्य' में प्राप्त है (ऋ. प्रा. २२३)।

शाकवक्त्र--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७१)।

शाकवैण रथीतर--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से सत्यश्री नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद-'शाकपूणि'

शाकायन--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एकायन नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

शाकायनि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकायन्य--एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जिसने बृहद्रथ ऐक्ष्वाक राजा को आत्मज्ञान कराया था (मै. उ. १.२)।

२. जात नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे 'शाक' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (क. सं. २२.७)।

शाकहार्य--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकिनी--गौड देश में रहनेवाले दुर्व नामक ब्राह्मण की पत्नी। इसके पुत्र का नाम बुध था (बुध ७. देखिये)।

शाकुनि--मधुवन में रहनेवाला एक ऋषि, जिसके कुल नौ पुत्र थे। इनके पुत्रों में से ध्रुव, शील, बुध, तार एवं ज्योतिष्मत् ये पुत्र गृहस्थाश्रमी एवं अग्निहोत्री थे। इसके चार पुत्र निर्मोह, जितकाम, ध्यानकेश एवं गुणाधीक विरक्त एवं संन्यस्त वृत्ति के थे (पद्म. स्व. ३१)।

शाक्त्य--गौरवीति पराशर ऋषि का पैतृक नाम, जो उसे 'शक्ति' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (ऐ. ब्रा. ३.१९.४; श. ब्रा. १२.८.३.७; पं. ब्रा. ११.५. १४; १२.१३.१०; आप. श्रौ. २३.११.१४)।

शाक्य--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, मत्स्य, विष्णु, भविष्य एवं वायु के अनुसार संजय राजा का पुत्र था। भविष्य में इसे 'शाक्यवर्धन' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम शुद्धोद था।

शाक्रतव--शौक्रतव नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

शाक्रायण--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकर--ऋषभ नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.१६६)।

शाख--अनल नामक वसु का पुत्र, जो कार्तिकेय का छोटा भाई था। यह एवं इसके छोटे भाई विशाख एवं नैगम स्वयं कार्तिकेय के ही रूप माने जाते है (म. श. ४३.३७)।

शाखेय--पाणिनीय व्याकरण का एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

शांखायन--ऋग्वेद का एक अद्वितीय शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो स्वयं के शाखान्तर्गत 'संहिता' 'ब्राह्मण' 'आरण्यक', 'उपनिषद' श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र आदि ग्रंथों का रचयिता माना जाता है। कुषीतक ऋषि का पुत्र होने के कारण, इसके द्वारा विरचित समस्त वैदिक साहित्य 'कौषीतकि' अथवा 'शांखायन' नाम से सुविख्यात है। टीकाकार आनर्तीय के अनुसार, इसे 'सुयज्ञ' नामांतर भी प्राप्त था (सां. गृ. ४.१०; ६.१०)। 'शांखायन आरण्यक' में भी इसका निर्देश प्राप्त है (शां. आ. १५.१)।

शांखायन संहिता--व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरान्तर्गत पाँच प्रमुख शाखाएँ मानी जाती थीं, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार है:--१. शाकल २. बाष्कल ३. आश्वलायन ५. शांखायन ५. माण्डुकेय। इन पाँच शाखाओं में से शांखायन शाखा का प्रणयिता यह माना जाजा है, जिसकी शांखायन, कौषीतकि आदि विभिन्न उपशाखाएँ थीं।

इस शाखा में प्रचलित 'ऋग्वेद संहिता' प्रायः सर्वत्र शाकल शाखांतर्गत ऋक्संहिता से मिलती जुलती थीं। वर्तमानकाल में प्राप्त ऋग्वेदसंहिता शाकल शाखा की मानी जाती है।

शांखायन ब्राह्मण--ऋग्वेदसंहिता के दो ब्राह्मण ग्रंथ माने जाते हैः--१. ऐतरेय; २. शांखायन अथवा कौषीतकि। 'कौषीतकि ब्राह्मण' में कुल ३० अध्याय है, एवं यज्ञ की श्रेष्ठता प्रतिपादन करना, एवं उसकी शास्त्रीय व्याख्या करना इस ग्रंथ का प्रमुख उद्देश्य है। यद्यपि ऐतरेय एवं कौषीतकि ब्राह्मण एक ही ऋग्वेद के हैं, फिर भी, विषय प्रतिपादन के दृष्टि से ये दोनों ग्रन्थ काफी विभिन्न हैं। विषय-प्रतिपादन के स्पष्टता के दृष्टि से 'कौषीतकि ब्राह्मण' ऐतरेय ब्राह्मण से कतिपय श्रेष्ठ प्रतीत होता है। इस ब्राह्मण में इसका निर्देश 'कौषीतकि' एवं 'कौषीतक' इन दोनों नाम से प्राप्त हैं।

शांखायन आरण्यक--यद्यपि आरण्यक ग्रंथों की संख्या अनेक बतायी गयी है, फिर भी इनमें से केवल आठ ही आरण्यक ग्रन्थ आज उपलब्ध हैं, जिनकी

नामावलि निम्न प्रकार है :--१. ऐतरेय; २. शांखायन; ३. तैत्तिरीय. ४. माध्यंदिन; ५. बृहदारण्यक; ६. जैमिनीयोपनिषदारण्यक ७. छांदोग्यारण्यक। इनमें से 'कौषीतकि आरण्यक' में 'कौषीतक ब्राह्मण' का ही कई भाग पुनरध्दृत किया गया है, जिनके पंद्रह अध्याय हैं।

सायण के अनुसार अरण्यों में पढ़ायें जाने के कारण इन ग्रन्थों को 'आरण्यक' नाम प्राप्त हुआ। वनवासी वानप्रस्थियों को यज्ञयागादि कर्मों की दीक्षा देना इन ग्रन्थों का प्रमुख उद्देश्य है। जिस प्रकार गृहस्थाश्रम के यज्ञादि कर्मों का वर्णन 'ब्राह्मण' ग्रन्थों में प्राप्त है, इसी प्रकार वानप्रस्थाश्रम के यज्ञादि विधियों का वर्णन आरण्यक ग्रंथों में प्रतिपादित किया है। उनमें कर्मकांड के साथ, धर्म की आध्यात्मिक व्याख्या भी दी गयी है, एवं इस प्रकार, ज्ञानमार्ग एवं कर्ममार्ग का समन्वय किया गया है।

'ऐतरेय' एवं 'कौषीतकि' दोनों ग्रंथों के आद्य भाष्यकार सायण एवं शंकराचार्य माने जाते हैं। शांकरभाष्य के सुप्रसिद्ध टीकाकारों में आनंदगिरि, आनंदतीर्थ (आनंदज्ञान), नारायणेंद्र सरस्वती एवं कृष्णदास प्रमुख माने जाते है।

शांखायन (कौषीतकि) उपनिषद्--यह ग्रंथ उपनिषद् ग्रंथों में काफ़ी प्राचीन माना जाता है। इस ग्रंथ में 'कौषीतकि आरण्यक' का ही तीसरा एवं छठा अध्याय एकत्रित किया गया है।

शांखायन श्रौतसूत्र--वैदिक संहिताओं में वर्णित यज्ञयागादि विधियों का सार संकलित करनेवाले ग्रंथों को 'श्रौतसूत्र' कहा जाता है, जिनमें वेदों में प्रतिपादित चौदह यज्ञों की जानकारी प्राप्त है।

प्राचीन श्रौतसूत्रों में से बारह प्रमुख श्रौतसूत्र आज प्राप्त हैं, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार है :--१. शांखायन श्रौतसूत्र; २. आश्वलायन श्रौतसूत्र; ३. मानव श्रौतसूत्र; ४. बौधायन श्रौतसूत्र; ५. आपस्तंब श्रौतसूत्र; ६. हिरण्यकेशी श्रौतसूत्र; ७. कात्यायन श्रौतसूत्र, ८. लाट्यायन श्रौतसूत्र; ९. द्राह्यायण श्रौतसूत्र; १० जैमिनीय श्रौतसूत्र; ११ वैतान श्रौतसूत्र; १२ वाराह श्रौतसूत्र।

शांखायन श्रौतसूत्र के कुल अठारह अध्याय है, एवं उसके अनेक उद्धरण शांखायन ब्राह्मण से मिलते जुलते हैं। इस ग्रंथ के सत्रहवाँ एवं अठारहवाँ अध्याय 'कौषीतकि आरण्यक' के पहले एवं दूसरे अध्याय से उध्दृत किये गये है। उस श्रौतसूत्र में शौनक, जातूकर्ण्य, पैग्य, आरुणि आदि आचार्यों का निर्देश प्राप्त है। एक सर्पसत्र का निर्देश भी वहाँ किया गया है, जो संभवतः जनमेजय के द्वारा किये गये सर्पसत्र का होगा (सां श्रौ. १३.२३.८)।

शांखायन गृह्यसूत्र--शांखायन का एक गृह्यसूत्र भी प्राप्त है, जिसमें पितृयज्ञ, आग्रहायणी यज्ञ आदि सात गृह्ययज्ञों की, एवं देवयज्ञ, भूतयज्ञ, आदि पाँच महायज्ञों की जानकारी दी गयी है।

उपलब्ध गृह्यसूत्रों में 'शांखायन गृह्यसूत्र' प्रमुख माना जाता है। उपलब्ध गृह्यसूत्रों की नामावलि निम्न प्रकार है :--१. शांखायन गृह्यसूत्र; २. आश्वलायन गृह्यसूत्र; ३. मानव गृह्यसूत्र; ४. बौधायन गृह्यसूत्र; ५. आपस्तंब गृह्यसूत्र; ६. हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र; ७. भारद्वाज गृह्यसूत्र; ८. पारस्कर गृह्यसूत्र, ९. द्राह्यायण गृह्यसूत्र; १०. गोभिल गृह्यसूत्र; ११. खादिर गृह्यसूत्र; १२. कौशिक गृह्यसूत्र।

आचार्य-परंपरा--ऐतरेय ब्राह्मण का रचयिता महिदास ऐतरेय, शांखायन का पूर्ववर्ती आचार्य माना जाता है। कई अभ्यासकों के अनुसार, ऐतरेय ब्राह्मण ग्रन्थ का कर्तृत्व भी महीदास ऐतरेय (ऐ. ब्रा. १-६ पंचिका), एवं शांखायन तथा आश्वलायन (ऐ. ब्रा. ७-८ पंचिक) में विभाजित किया जाता है। इस दृष्टि से ऋग्वेदीय शाखाप्रवर्तक आचार्यों की परंपरा निम्नप्रकार बतायी जाती है :--महीदास ऐतरेय-शांखायन-आश्वलायन।

शांखायन के ग्रंथों में सुमन्तु, जैमिनि, वैशंपायन, पैल आदि पूर्वाचार्यों का निर्देश प्राप्त है।

शाट्यायनि--एक आचार्य, जो 'शाट्यायन ब्राह्मण' एवं 'शाट्यायन गृह्यसूत्र' आदि ग्रंथों का रचियता माना जाता है। इनमें से 'शाट्यायन ब्राह्मण' आज उपलब्ध नहीं है।

आचार्य परंपरा--एक गुरु के नाते इसका निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में अनेक बार प्राप्त है (श. ब्रा. ८.१.८.९; १०.४.५.२; जै. उ. ब्रा. १.६.२; ३०.१; २.२.८; ४.३)। 'जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण' में इसका सही नाम शंग दिया है, एवं शाट्यायन इसका पैतृक नाम बताया गया है, जो इसे 'शाट्य' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था। इस ग्रंथ में इसे ज्वालायन का शिष्य कहा गया है (जै. उ. ब्रा. ४.१६.१)। 'सामविधान ब्राह्मण' में इसे बादरायण का शिष्य कहा गया है।

शाट्यायन ब्राह्मण--शाट्यायन ब्राह्मण में प्राप्त अनेक कथा सायणभाष्य में पुनरुध्दृत की गयी है। इस ग्रंथ के अनेक उद्धरण जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में भी प्राप्त हैं

(जै. उ. ब्रा. ९.१०; ३.१३.६; २८.५)। 'आश्वलायन श्रौतसूत्र' में इसके अभिमतों का निर्देश 'शाट्यायनक' नाम से प्राप्त है (आश्व. श्रौ. १.४.१३)। आर्टेल के अनुसार, यह ब्राह्मण ग्रन्थ 'जैमिनीय ब्राह्मण' से काफ़ी मिलता जुलता था।

जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण (गाय्युपनिषद)--इस ग्रंथ का प्रमुख प्रणयिता भी शाट्यायनि माना जाता है। इस ग्रन्थ में प्राप्त गुरुपरंपरा के अनुसार, यह ग्रन्थ सर्वप्रथम इंद्र ने ज्वालायन नामक आचार्य को प्रदान किया, जिसने वह अपने शिष्य शाट्यायन को सिखाया। आगे चल कर यही ग्रंथ शाट्यायन ने अपने शिष्य राम क्रातुजातेय वैयाघ्रपद्य को प्रदान किया। इन सारे आचार्यों में से, शाट्यायनि ने इस ग्रन्थ को विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त करायी (जै. उ. ब्रा. ४.१६-१७)।

शिष्यपरंपरा--इसके अनुगामी 'शाट्यायनिक,' 'शाट्यायनक' अथवा 'शाट्यायनिन' नाम से प्रसिद्ध थे, जिनका निर्देश सूत्रग्रंथों में, एवं 'शाट्यायन ब्राह्मण' में प्राप्त है (ला. श्रौ. ४.५.१८; १.२.२४; आ. श्रौ. ५.२३.३; आश्व. श्रौ. १.४.१३)।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शांडिल--शांडिल्य ऋषि के वंशजों के लिए प्रयुक्त सामुहिक नाम (तै. आ. १.२२.१०)।

शांड--एक उदार दाता, जिसने भरद्वाज ऋषि को विपुल दान प्रदान किया था (ऋ. ६.६३.९)।

शांडिलायन--एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया हैं: १. सुतेमनस् (वं. ब्रा. १); २. गंर्दभीमुख (वं. ब्रा. २)।

शांडिलि--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शांडिली--दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नियों में से एक थी (मं. आ. ६६.१७-२०)।

२. कौशिक ऋषि की पत्नी दीर्घिका का नामांतर (दीर्घिका एवं कौशिक १४. देखिये)।

३. शांडिल्य ऋषि की तपस्विनी कन्या, जो स्वयंप्रभा नाम से भी सुविख्यात थी। यह ऋषभ पर्वत पर तपस्या करती थी।

गरुड का गर्वहरण--एक बार गालव ऋषि एवं पक्षिराज गरुड इसके आश्रम में अतिथि के नाते आये। इसने उनका उत्तम आदरसत्कार किया, एवं रात्रि के लिए उन्हें अपने आश्रम में ठहराया।

रात्रि में सोते सोते गरुड के मन में विचार आया, 'इस तपस्विनी को अगर मैं अपने पंखों पर बिठा कर विष्णुलोक ले जाऊं, तो बहुत ही अच्छा होगा'। गरुड के इस औद्धत्यपूर्ण विचारों के कारण, एक ही रात्रि में उसके पंख गिर गये, एवं वह पंखविहीन बन गया।

पश्चात् गरुड एवं गालव दोनों इसकी शरण में आये, जिस कारण इसने उन्हें अनेकानेक वर प्रदान किये (म. उ. १११.१-१७; स्कंद. ६.८१-८२)।

केकयदेशीय सुमना नामक राजकन्या से इसने पातिव्रत्य के संबंध में उपदेश प्रदान किया था (म. अनु. १२३.८-२३)।

शांडिल्य--एक श्रेष्ठ आचार्य, जो अग्निकार्य से संबंधित समस्त यज्ञप्रक्रियाँ में अधिकारी व्यक्ति माना जाता था। बृहदारण्यक उपनिषद में इसे वात्स्य नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (बृ. उ. ६.५.४ काण्व.) 'शंडिल' का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

यज्ञप्रक्रियों का आचार्य--शतपथ ब्राह्मण के पाँचवे एवं उसके बाद के कांडों में, अग्नि से संबंधित जिन संस्कारों का निर्देश प्राप्त है, वहाँ सर्वत्र इसका निर्देश इन प्रक्रियों का श्रेष्ठ आचार्य के नाते किया गया है (श. ब्रा. ५.२.१५; १०.१.४.१०; ४.१.११; ६.३.५; ५.९; ९.४.४.१७)। शतपथ ब्राह्मण के इन सारे अध्यायों में यज्ञाग्नि को 'शांण्डिल' कहा गया है, (श. ब्रा. १०.६.५.९)।

शतपथ ब्राह्मण के अग्निकांड--शतपथ ब्राह्मण के छः से नौ कांड 'अग्निचयन' से संबधित हैं, जिनमें कुल ६० अध्याय हैं। ये चार कांड 'अग्नि' अथवा 'षष्टिपथ' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे, एवं उनका अध्ययन अलग किया जाता था। इन कांडो का अध्ययन करनेवाले आचार्यों को 'षष्टिपथक' कहा जाता था। इन सारे कांडों का प्रमुख आचार्य शांडिल्य माना गया है।

शतपथ ब्राह्मण का दसवाँ कांड 'अग्निरहस्य कांड' कहलाता है, जिसमें अग्निचयन के रहस्यतत्त्वों का निरुपण किया गया है। यहाँ भी शांडिल्य को इस विद्या का प्रमुख आचार्य माना गया है। यज्ञ की वेदि की रचना करना, आदि विषयों में इसके मत पुनः पुनः उध्दृत किये गये हैं।

'बृहदारण्यक उपनिषद' में--इस ग्रंथ में इसे निम्नलिखित आचार्यों का शिष्य कहा गया है:-- १. कैशोर्य

काण्व (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८ माध्यं.); २. वैष्टपुरेय (बृ. उ. २.५.१०; ४.५.२६ माध्यं.) ३. कौशिक (बृ. उ. २.६.१; ४.६.१ काण्व.); ४. गौतम (बृ. उ. २. ५.२०; ४.५.२६ माध्यं); ५. बैजवाप (बृ. उ. २.५. २०; ४.५.२६ माध्यं.); ६. आनभिम्लात (बृ. उ. २. ६.२ काण्व.)।

इसी ग्रंथ में निम्नलिखित आचार्यों को इसकी शिष्य कहा गया हैः— कौंडिन्य, आग्निवेश्य, वात्स्य, वामकक्षायण, वैष्टपूरेय, भारद्वाज (बृ. उ. २.६.१.३; ६.५. ४; श. ब्रा. १४.७.३.२६)।

किंतु यहाँ संभवतः एक ही 'शांडिल्य' का संकेत न हो कर, 'शांडिल्य' पैतृक नाम धारण करनेवाले अनेकानेक आचार्यों का निर्देश प्रतीत होता है। इनमें से 'शतपथ ब्राह्मण' में निर्दिष्ट 'शांडिल्य' कौनसे आचार्य का शिष्य था, यह कहना कठिन है।

तत्त्वज्ञान—'छांदोग्य उपनिषद' में शांडिल्य का तत्त्वज्ञान दिया गया है (छां. उ. ३.१५)। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार, ब्रह्म को 'तज्जलान्' कहा गया है; एवं सारी सृष्टि इसी तत्त्व से प्रारंभ होती है, जीवित रहती है, एवं अंत में इसी तत्त्व में विलीन होती है, ऐसा कहा गया है। शांडिल्य के इस तत्त्वज्ञान का तात्पर्य यही था कि, सृष्टि के समस्त भूतमात्रों के उत्पत्ति, स्थिति एवं लय का अधिष्ठाता केवल एक ईश्वर ही है।

आत्मा का स्वरूप—शांडिल्य के तत्त्वज्ञान में 'आत्मा' का वर्णन अर्थपूर्ण एवं निश्चयात्मक शब्दों में किया गया है, एवं उसके 'महत्तम' एवं 'लघुतम' ऐसे दो स्वरूप वहाँ वर्णन किये गये हैं। इनमें से 'महत्तम' आत्मा अनंत एवं सारे विश्व का व्यापन करनेवाला कहा गया है, एवं 'लघुतम' आत्मा अणुस्वरूपी वर्णन किया गया है। आत्मा का नकारात्मक वर्णन करनेवाले याज्ञवल्क्य के तत्त्वज्ञान से शांडिल्य के इस तत्त्वज्ञान की तुलना अक्सर की जाती है (याज्ञवल्क्य वाजसनेय देखिये)। इन दोनों तत्त्वज्ञानों की कथनपद्धति विभिन्न होते हुए भी, उन दोनों में प्रणीत आत्मा के संबंधित तत्त्वज्ञान एक ही प्रतीत होता है।

शांडिल्य के अनुसार, मानवीय जीवन का अंतिम ध्येय मृत्यु के पश्चात् आत्मन् में विलीन होना बताया गया है।

शंकराचार्य विरचित 'ब्रह्मसूत्रभाष्य' में शांडिल्य के उपर्युक्त तत्त्वज्ञान का निर्देश 'शांडिल्यविद्या' नाम से किया गया है।

गोत्रकार आचार्य—आश्वलायन गृह्यसूत्र में प्राप्त गोत्रकारों के नामावलि में शांडिल्य का निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसके गोत्र के प्रवर शांडिल्य, असित, एवं देवल दिये गये हैं। इसके द्वारा लिखित 'गृह्यसूत्र' का निर्देश 'आपस्तंब धर्मसूत्र' में प्राप्त है (आप. ध. ९.११. २१)। भक्ति के संबंध इसके उद्धरण भी उत्तरकालीन सूत्रग्रंथों में प्राप्त हैं।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त है:— १. शांडिल्यस्मृति; २. शांडिल्यधर्मसूत्र; ३. शांडिल्यतत्त्वदीपिका (C. C.)।

२. एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. उदर (छां. उ. १. ९.३); २. सुयज्ञ (जै. उ. ब्रा. ४.१७.१)।

३. एक ऋषि, जो मरीचिपुत्र कश्यप ऋषि के वंश में उत्पन्न हुआ था। आगे चल कर, इसीके कुल में अग्नि ने जन्म लिया था, जिस कारण उसे 'शांडिल्यगोत्रीय' कहा जाता है (वैश्वदेवप्रयोग देखिये)।

सुमन्यु राजा ने इसे 'भक्ष्य-भोज्यादि' पदार्थों की पर्वतप्राय राशि दान में प्रदान की थी (म. अनु. १३७. २२)। इसने अन्यत्र बैलगाडी के दान को सुवर्ण-द्रव्य आदि द्रव्यों के दान से श्रेष्ठ बताया है (म. अनु. ६४. १९; ६५.१९)।

४. एक ऋषि, जिसने वैदिक मार्ग से विष्णु की पूजा न कर, अवैदिक मार्गों से उसकी उपासना करना चाहा। एक ग्रंथ की रचना कर इसने अपने इस अवैदिक तत्त्वप्रणाली का समर्थन भी किया।

इस पापकर्म के कारण, इसे 'नर्कवास' की शिक्षा भुगतनी पड़ी, एवं आगे चल कर भृगुवंश में जमदग्नि के रूप में इसे जन्म प्राप्त हुआ (वृद्धहारितस्मृति. १८०-१९३)।

५. ब्रह्मदेव का सारथि (स्कंद. ७.१.१२६)।

६. एक शिवभक्त राजा। युवावस्था में प्रविष्ट होते ही, कामासक्त बन कर यह अनेकानेक स्त्रियों पर अत्याचार करने लगा। शिव की कृपा के कारण, साक्षात् यमधर्म भी इसे कुछ सज़ा नहीं कर सकता था।

अंत में शिव को इसके अत्याचार ज्ञात होते ही, उसने इसे एक हज़ार वर्षों तक कछुआ (कूर्म) बनने का शाप दिया (स्कंद. १.२.१२)।

७. अग्नि का ज्येष्ठ पुत्र, जो कश्यप का ज्येष्ठ भाई था (म. अनु. ५३.२६ कुं.)।

शांडिल्यायन—गर्दभीमुख नामक आचार्य का पैतृक नाम।

शांडिल्यायन 'चेलक'—एक आचार्य, जिसका निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. ९.५.१.६४)। इसका सही नाम चेलक था, एवं शांडिल्यायन इसका पैतृक नाम था, जो इसे शांडिल्य का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (श. ब्रा. १०.४.५.३)। इसके पुत्र का नाम चैलकि जीवल था (श. ब्रा. १०.४.५.३)। कई अभ्यासकों के अनुसार, प्रवाहण जैवल इसका ही पौत्र था। किंतु प्रवाहण स्वयं एक ब्राह्मण न हो कर राजा था। इसी कारण इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है।

दैय्यांपति नामक आचार्य ने अग्निचयन के संबध में इससे चर्चा की थी (श. ब्रा. ९.५.१.१४)।

शातकर्णि—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार कृष्ण राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'शांतकर्ण', वायु में इसे 'सातकर्णि' एवं ब्रह्मांड में 'श्रीमल्लकर्णि' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम पूर्णोत्संग था (विष्णु. ४.२४.४५)।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य एवं विष्णु के अनुसार पूर्णोत्संग राजा का पुत्र था। इसने ५६ वर्षों तक राज्य किया था (मत्स्य. २७३.४)।

३. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार पुरीषभीरु राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'सातकर्णि' कहा गया है।

४. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार अहिमान् राजा का पुत्र, एवं शिवश्री राजा का पिता था।

शातपर्णेय—धीर नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.३.३.१)।

शातवनेय—एक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का आश्रयदाता था (ऋ. १.५९.७)।

शातातप—एक स्मृतिकार (याज्ञ. १.५)। इसकी छः अध्यायोंवाली एक गद्यपद्यात्मक स्मृति है, जो वेंकटेश्वर प्रेस, एवं आनंदाश्रम, पूना के द्वारा प्रकाशित 'स्मृतिसंग्रह' में प्राप्त है।

शातातप स्मृति—श्री. मित्रा के द्वारा ८७ अध्याय एवं २३७६ श्लोकोंवाली इसकी एक स्मृति प्रकाशित की गयी है। इसके अतिरिक्त 'लघु-शातातप स्मृति' एवं 'वृद्ध-शातातप स्मृति' आनंदाश्रम, पूना के द्वारा प्रकाशित की गयी है।

'मिताक्षरा' (३.२९०), एवं विश्वरूप (३.२३६) ने इसके स्मृति के उद्धरण उध्दृत किये है। 'बृहत्शातातप स्मृति' का निर्देश 'मिताक्षरा' में प्राप्त है (याज्ञ. ३. २९०)। 'वृद्धशातातप स्मृति' का, एवं उसके भाष्य का निर्देश क्रमशः 'व्यवहारमातृका' (३०५) में, एवं हेमाद्रि (३.१.८०१) में प्राप्त है।

शुक्ल यजुर्वेदशाखीय ब्राह्मणों में प्रचलित मातृगोत्र-पालन करने के परंपरा का निर्देश, इसकी स्मृति में पाया जाता है।

शाद्वलायन—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शांत—अहन् अथवा आप नामक वसु के चार पुत्रों में से एक। इसके अन्य तीन भाइयों के नाम शम, ज्योति एवं मुनि थे (म. आ. ६०.२२; मत्स्य. ५. २२)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो प्रियव्रतपुत्र इध्मजिह्व राजा का पुत्र था। प्लक्षद्वीपान्तर्गत एक 'वर्ष' पर इसका राज्य था (भा. ५.२०.३)।

३. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो आयु राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.३.२४)।

४. तामस मनु के पुत्रों में से एक।

५. एक राजा, जो दुर्दम राजा की पत्नी सुभद्रा का पिता था (मार्के. ७२.४५; दुर्दम १. देखिये)।

शांतकर्ण—शातकर्णि राजा का नामांतर।

शांतनव—एक व्याकरणकार, जो वेदों के स्वर के संबंध में विचार करनेवाले 'फिट् सूत्रों' का रचयिता-माना जाता है। इसके द्वारा रचित सूत्रों के अंत में 'शांतनवाचार्य प्रणीत' ऐसा स्पष्ट निर्देश प्राप्त है। इसका सही नाम शंतनु था, किंतु 'तद्धित' प्रत्यय का उपयोग कर इसका 'शांतनव' नाम प्रचलित हुआ होगा। इसके नाम से यह दक्षिण भारतीय प्रतीत होता है।

फिट्सूत्र—'फिट्' का शब्दशः अर्थ 'प्रातिपदिक' होता है। प्रातिपदिकों के लिए नैसर्गिक क्रम से उपयोजित 'उदात्त', 'अनुदात्त', एवं 'स्वरित' स्वरों की जानकारी प्रदान करने के लिए इन सूत्रों की रचना की गयी है। इन सूत्रों की कुल संख्या ८७ हैं, जो निम्नलिखित चार पादों (अध्यायों) में विभाजित की गयी हैः—१. अन्तोदात्त; २. आद्युदात्त; ३. द्वितीयोदात्त; ४. पर्यायोदात्त।

रचनाकाल—पतंजलि के व्याकरणमहाभाष्य में इन सूत्रों के उद्धरण प्राप्त हैं (महा. ३.१.३; ६.१.९१; १२३)। इसके अतिरिक्त काशिका, कैय्यट, भट्टोजी दीक्षित, नागेशभट्ट आदि के मान्यवर व्याकरणविषयक ग्रंथों में भी इन सूत्रों का निर्देश प्राप्त है।

व्याकरणशास्त्रीय दृष्टि से पाणिनि एवं शांतनव 'अव्युत्पत्ति पक्षवादी' माने जाते हैं, जो शाकटायन के सर्व शब्द 'धातुज' हैं (सर्वं धातुजं), इस सिद्धांत को मान्यता नहीं देते हैं (शाकटायन देखिये)। इसी कारण हर एक शब्दप्रकृति के स्वर नमूद करना वे आवश्यक समझते हैं। हर एक शब्द के 'प्रकृतिस्वर' गृहीत समझ कर शांतनव ने अपने 'फिट्सूत्रों' की रचना की है, एवं शांतनव के द्वारा यह कार्य पूर्व में ही किये जाने के कारण, पाणिनि ने अपने ग्रंथ में वह पुनः नहीं किया है।

इसी कारण शांतनव आचार्य पाणिनि के पूर्वकालीन माना जाता है। इसकी परंपरा भी पाणिनि से स्वतंत्र थी, जिसका अनुवाद पाणिनि के 'अंगभूत परिशिष्ट' में पाया जाता है।

परिभाषा—इसके 'फिट्सूत्रों' में अनेकानेक पारिभाषिक शब्द पाये जाते हैं, जो पाणिनीय व्याकरण में अप्राप्य हैं। इनमें से प्रमुख शब्दों की नामावलि एवं उनका शब्दार्थ नीचे दिया गया है:—अनुच्च (अनुदात्त); अष् (अच्); नप् (नपुंसक); फिष् (प्रातिपदिक); यमन्वन् (वृद्ध); शिट् (सर्वनाम); स्फिग् (लुप्); हय् (हल्)।

'फिट्सूत्रों' का महत्त्व—उदात्त, अनुदात्तादि स्वर केवल वैदिक संहिताओं के उच्चारणशास्त्र के लिए आवश्यक हैं, सामान्य संस्कृत भाषा के उच्चारण के लिए इन स्वरों की कोई आवश्यकता नहीं है, ऐसा माना जाता है। किंतु इन स्वरों की संस्कृत भाषा के उच्चारण के लिए भी नितांत आवश्यकता है, यह सिद्धांत शांतनव के 'फिट्सूत्रों' के द्वारा सर्वप्रथम प्रस्थापित किया गया, एवं आगे चल कर 'पाणिनीय व्याकरण' ने भी इसे मान्यता दी।

'फिट्सूत्रों' में प्राप्त ८७ सूत्रों में से केवल पाँच ही सूत्रों में वैदिक शब्दों के (छन्दसि) स्वरों की चर्चा की गयी है, बाकी सभी सूत्रों में प्रचलित संस्कृत भाषा एवं वेद इन दोनों में प्राप्त संस्कृत शब्दों के स्वरों की एवं उच्चारण की चर्चा प्राप्त है।

इसी कारण 'फिट्सूत्र' केवल वैदिक व्याकरण का ही नहीं, बल्कि 'पाणिनीय व्याकरण' का भी एक महत्त्वपूर्ण विभाग माना जाता है। पाणिनीय व्याकरण के 'शब्दप्रक्रिया' 'धातुज शब्दों का अध्ययन,' 'लिंगज्ञान' 'गणों का अध्ययन,' 'शब्दों का उच्चारशास्त्र' आदि प्रमुख विभाग हैं, जिनके अध्ययन के लिए क्रमशः 'अष्टाध्यायी,' 'उणादिसूत्र' 'लिंगानुशासन' 'गणपाठ' 'शिक्षा' आदि ग्रंथों की रचना की गयी है। स्वरों के उच्चारणशास्त्र की चर्चा करनेवाला शांतनवकृत 'फिट्सूत्र' पाणिनीय व्याकरणशास्त्र के इसी परंपरा का एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ प्रतीत होता है।

शांतनु—(सो. कुरु.) एक सुविख्यात कुरुवंशीय सम्राट्, जो प्रतीप राजा के तीन पुत्रों में से द्वितीय पुत्र था। इसकी माता का नाम सुनंदा था, एवं अन्य दो भाइयों के नाम देवापि एवं बाह्लीक थे। इसका मूल नाम 'महाभिषज्' था। किन्तु शान्त स्वभाववाले प्रतीप राजा का पुत्र होने के कारण इसे 'शांतनु' नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ९२.१७-१८)। भागवत के अनुसार, इसके केवल हस्तस्पर्श से ही अशांत व्यक्ति को शान्ति, एवं वृद्ध व्यक्ति को यौवन प्राप्त होता था, इस कारण इसे शांतनु नाम प्राप्त हुआ था (भा. ९.२२.१२; म. आ. ९०.४८)।

महाभारत की भांडारकर संहिता में इसके नाम का 'शंतनु' पाठ स्वीकृत किया गया है; किंतु अन्य सभी ग्रंथों में इसे शांतनु ही कहा गया है।

इसका ज्येष्ठ भाई देवापि बाल्यावस्था में ही राज्य छोड़ कर वन में चला गया। इस कारण, कनिष्ठ हो कर भी इसे राज्य प्राप्त हुआ (देवापि देखिये)। यह अत्यंत धर्मशील था, एवं इसने यमुना नदी के तट पर सात बड़े यज्ञ एवं अनुष्ठान किये (म. व. १५९. २२-२५)।

गंगा से विवाह—एक बार यह मृगया के हेतु वन में गया, जहाँ इसकी गंगा (नदी) से भेंट हुयी। गंगा के अनुपम रूप से आकृष्ट होकर, इसने उससे अपनी पत्नी बनने की प्रार्थना की। गंगा ने वसुओं के द्वारा उससे की गयी प्रार्थना की कहानी सुना कर, इसे विवाह से परावृत्त करने का प्रयत्न किया, किन्तु इसके पुनः पुनः प्रार्थना करने पर उसने इससे कई शर्तें निवेदित की, एवं उसी शर्तों का पालन करने पर इससे विवाह करने की मान्यता दी (गंगा देखिये)।

अपनी इस शर्त के अनुसार, गंगा ने इससे उत्पन्न सात पुत्र नदी में डुबो दिये। इससे उत्पन्न आठवाँ पुत्र भीष्म वह नदी में डुबोने चली। उस समय अपनी शर्त भंग कर, इसने उसे इस कार्य से परावृत्त करना चाहा। इसके द्वारा शर्त का भंग होते ही, गंगा नदी अपने पुत्र को लेकर चली गयी।

पश्चात् छत्तीस वर्षों के बाद, इसके द्वारा पुनः पुनः प्रार्थना किये जाने पर गंगा नदी ने इसके पुत्र भीष्म को इसे वापस दे दिया।

सत्यवती से विवाह—एक बार सत्यवती नामक धीवर-कन्या से इसकी भेंट हुई, एवं उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की। उस समय, इसके पुत्र भीष्म को यौवराज्यपद से हटा कर, अपने होनेवाले पुत्र को राज्य प्राप्त होने की शर्त पर सत्यवती ने इससे विवाह करने की संमति दी। अपने प्रिय पुत्र को यह यौवराज्यपद से दूर करना नहीं चाहता था, किंतु भीष्म ने अपूर्व स्वार्थत्याग कर, स्वयं ही राज्याधिकार छोड़ दिया।

परिवार—पश्चात् इसका सत्यवती से विवाह हुआ, जिससे इसे विचित्रवीर्य एवं चित्रांगद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें से चित्रांगद की रणभूमि में अकाल मृत्यु हुई, जिस कारण उसके पश्चात् विचित्रवीर्य राजगद्दी पर बैठ गया। इससे विवाह होने के पूर्व, सत्यवती को व्यास नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था, किंतु यह घटना इसे ज्ञात न थी (दे. भा. २.३)।

अपने इन पुत्रों के व्यतिरिक्त इसने शरद्वत् गौतम ऋषि के कृप एवं कृपी नामक संतानों का अपत्यवत् संगोपन किया था (शरद्वत् देखिये)।

मृत्यु के पश्चात्, भीष्म के द्वारा दिये गये पिंडादन को स्वीकार करने के लिए यह पृथ्वी पर स्वयं अवतीर्ण हुआ था। उस समय इसने उसे इच्छामरणी होने का वर प्रदान दिया था (म. अनु. ८४.१५)।

शांतपायन—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की पुराण शिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद-(वायुपुराण)-'शांशपायन'।

शांतमय—एक प्राचीन राजा (म. आ. १.१७६) पाठभेद-'शांतभय'।

शांतरय(सो. आयु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार त्रिककुद् (धर्मसारथि) राजा का पुत्र था (भा. ९.१७.१२)।

शांता—ऋश्यशृंग ऋषि की पत्नी, जो वाल्मीकि रामायण एवं वायु के अनुसार रोमपाद राजा की गोद में ली हुई कन्या थी। रोमपाद राजा को 'चित्ररथ' 'अंगराज' 'लोमपाद' आदि नामांतर भी प्राप्त थे।

मत्स्य एवं महाभारत में भी, इसे दशरथ राजा की कन्या कहा गया है (मत्स्य. ४८.९५)। रोमपाद राजा दशरथ राजा का परम स्नेही था, एवं निपुत्रिक था, जिस कारण दशरथ ने अपनी इस कन्या को रोमपाद राजा को गोद में दे दी (भा. ९.२३.७-१०)। हरिवंश में लोमपाद को दशरथ का ही नामांतर बताया गया है, किंतु वह सही प्रतीत नहीं होता है (ह. वं. १.३१.४६)। आगे चल कर रोमपाद राजा ने इसका विवाह ऋश्यशृंग ऋषि से कराया (ऋश्यशृंग एवं रोमपाद १. देखिये)।

२. भारद्वाज ऋषि की माता (वायु. १११.६०)।

शान्ति—दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुख (क्षेम) था (भा. ४.१.४९; वायु. १०.२५)।

२. कर्दम प्रजापति की कन्या, जो अथर्वन् ऋषि की पत्नी थी। इसकी माता का नाम देवहूति था। इसने पृथ्वी लोक में यज्ञसंस्था का माहात्म्य संवर्धित किया था। इसके पुत्र का नाम दध्यच् आथर्वण था (भा. ३.२४.२४)।

३. (सो. नील.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार नील राजा का पुत्र, एवं सुशांति राजा का पिता था (भा. ९.२१.३०-३१)।

४. एक तुषित देव, जो यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र था (भा. ४.१.७-८)।

५. एक ऋषि, जो वारुणि आंगिरस ऋषि के आठ पुत्रों में से चतुर्थ पुत्र था। अग्निवंश में उत्पन्न होने के कारण, इसे 'आग्नेय' उपाधि प्राप्त थी (म. अनु. ८५.३०)। उपरिचर वसु राजा के यज्ञ में यह सदस्य बना था (म. शां. ३२३.८ पाठ.)।

६. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर का इंद्र (विष्णु. ३.२.२६)। यह सुधामन् एवं विरुद्ध देवों का इंद्र था (ब्रह्मांड. ४.१.६९)।

७. तामस मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.४९)।

८. स्वारोचिष मन्वंतर का एक देव।

९. कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१४)।

१०. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो शीघ्र राजा का पुत्र था।

११. एक ऋषि, जो भूति नामक ऋषि का शिष्य था। एक बार अपने कनिष्ठ भाई सुवर्चस् के द्वारा बुलाये जाने पर भूति ऋषि ने अपने आश्रम की व्यवस्था इस पर सौंप दी, एवं वह सुवर्चस् के यज्ञ के लिये चला गया।

अग्नि से वरप्राप्ति—इसके गुरु की अनुपस्थिति में आश्रम में स्थित अग्नि लुप्त हुयी, जिस कारण अत्यंत घबरा कर इसने अग्नि की स्तुति की। पश्चात् इसने अग्नि से अपने आश्रम में पुनः अधिष्ठित होने की, एवं अपने निपुत्रिक गुरु को पुत्र प्रदान करने की प्रार्थना की। पश्चात् अग्नि के आशीर्वाद से भूति ऋषि को 'भौत्य मनु' नामक सुविख्यात पुत्र हुआ।

पश्चात् इसकी गुरुनिष्ठा से संतुष्ट हो कर, भूति ऋषि ने इसे सांग वेदो का ज्ञान कराया (मार्के. ९७.५-२७)।

शांतिदेवा अथवा **शांतिदेवी**—देवक राजा की कन्या, जो वसुदेव की पत्नियों में से एक थी (वायु. ९६.१३०)।

शापहस्त—दक्ष सावर्णि मनु के खड्गहस्त नामक पुत्र का नामांतर।

शापेय—एक आचार्य, जो पाणिनीय व्याकरण में शाखाप्रवर्तक आचार्यों में एक था (पाणिनि देखिये)

शापेयिन्—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का 'वाजसनेय' शिष्य था।

शाम—यम का अनुचर एक कुत्ता, जो सरमा के दो पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.३१२)। स्कंद के अनुसार, यम के शाम एवं शबल नामक दो कुत्ते इसीके ही पुत्र थे (स्कंद २.४.९)।

शांब—आप नामक वसु के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ५.२२)।

शांब शार्कराक्ष्य—एक आचार्य, जो मद्रगार शौगायनि नामक आचार्य का शिष्य, एवं 'आनंद चांधनायन' नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)। इसका पैतृक नाम 'शार्कराक्ष्य', शर्कराख्य (का. सं. २२.८८), एवं 'शार्कराक्षि' (आश्व. श्रौ. १२.१०.१०) आदि विभिन्न रूपों में भी प्राप्त है, जो इसे 'शार्कराक्ष' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुए होंगे।

शांबव्य—एक आचार्य, जो 'शांबव्य गृह्यसूत्र' का रचयिता माना जाता है (ओल्डेनबर्ग, इंडिशे स्टूडियेन १५.४.१५४)।

शांबु—एक ऋषिसमुदाय, जो आंगिरस कुल में उत्पन्न हुआ था (अ. वे. १९.३९.५)।

शांबेय—प्रोति कौशांबेय कासुरुबिन्दि नामक आचार्य का पैतृक नाम।

शारदंडायनि—एक केकय राजा। इसकी पत्नी का नाम श्रुतसेना था, जो कुंती की बहन थी। इसे पुत्र न था, जिस कारण श्रुतसेना ने इसकी संमति से एक ब्राह्मण के द्वारा 'पुंसवन' नामक यज्ञसंस्कार कर दुर्जय आदि तीन पुत्र प्राप्त किये (म. आ. १११.३३-३५)।

शारदा—अंग देश के रौद्रकेतु नामक ब्राह्मण की पत्नी (रौद्रकेतु देखिये)।

२. एक ब्राह्मण स्त्री, जिसकी कथा स्कंद में 'महेश्वर व्रत माहात्म्य' कथन करने के लिए दी गयी है (स्कंद. ३.३.१८-१९)।

शारद्वत—गौतम-आंगिरसान्तर्गत एक गोत्रनाम (अंगिरस् देखिये)।

शारद्वतिक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शारद्वती—द्रोणाचार्य की पत्नी कृपी का नामांतर, जो उसे शरद्वत् गौतम ऋषि की कन्या होने के कारण प्राप्त हुआ था (शरद्वत् देखिये)।

२. एक अप्सरा, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित थी (म. आ. ११४.५३)।

शारायण—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिकार।

शारिमेजय—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार श्वफल्क राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'सारमेय' कहा गया है।

शार्कराक्षि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शार्कराक्ष्य—एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:- १. शांब (वं. ब्रा. १); २. जन (श. ब्रा. १०.६.१. १; छां. उ. ५.११.१; १५.१)।

शार्कराक्ष्य कुस्तुक—एक आचार्य, जो शार्कराक्षि नामक महर्षि का पुत्र था। इसने उदर में ब्रह्मदृष्टि की प्रतिष्ठापना कर, उपासना की थी (ऐ. आ. २.१.४) संसार का आद्य कारण आकाश ही है ऐसा इसका मत था (छां. उ. ५.१५.१)।

शार्ङ्ग—एक पैतृक नाम, जो ऋग्वेद में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. जरितृ (ऋ. १०.१४२.१); १. द्रोण (ऋ. १०.१४२.३-४); ३. सारिसृक्व (ऋ. १०.१४२.५-६); ४. स्तंबमित्र

(ऋ. १०.१४२.७.८)। महाभारत में मंदपाल ऋषि की, एवं शार्ङ्ग पक्षी का रूप धारण करनेवाले उसके चार पुत्रों की कथा प्राप्त है, जो संभवतः इसी सूक्त पर आधारित होगी (मंदपाल देखिये)।

शार्ङ्गरव—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. पाणिनीय व्याकरण का एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

शायस्थि—एक पैतृक नाम, जो वंश ब्राह्मण में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है :— १. बृहस्पतिगुप्त; २. भवत्रात (वं. ब्रा. १.)।

शार्दूल—रावण पक्ष का एक राक्षस, जो उसके गुप्तचरदल का प्रमुख था(वा. रा. यु. २९.२२)।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो द्राह्यायण नामक सामवेदपरंपरा के आचार्य का शिष्य था। सुविख्यात खादिर 'गृह्य' एवं 'श्रौत' सूत्र शार्दूलशाखा के ही माने जाते है (द्राह्यायण देखिये)।

शार्दूली--कश्यप एवं क्रोधा की एक कन्या, जिसने आगे चल कर सिंह, बाघ, एवं चीतों को जन्म दिया (म. आ. ६०.६३)।

शार्यात—शर्यात राजा का नामांतर (शर्यात मानव देखिये)।

२. एक ग्रंथकार एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसका पैतृक नाम मानव था (ऋ. १०.९२; मानव देखिये)।

शाल--एक राजा, जो वृक एवं दुर्वाक्षी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४३)।

शालकटंकट--अलंबुस राक्षस का नामांतर (म. द्रो. ८४.५७४; अलंबुस देखिये)।

शालंकायन—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं मंत्रकार।

२. सुशारद नामक आचार्य का पैतृक नाम (आश्व. श्रौ. १२.१०.१०; आप. श्रौ. २४.९.१)।

शालंकायनि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शालंकायनिपुत्र—एक आचार्य, जो वार्षगणीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.४-३१ माध्यं.)। 'शलंक' के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने के कारण, इसे 'शालंकायनि नाम प्राप्त हुआ होगा।

शालहलेय—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं ऋषिगण।

शालायनि—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि।

शालावती--विश्वामित्र ऋषि की पत्नियों में से एक।

शालावत्य--एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. शिलक (छां. उ. १.८.१); २. गलूनस आर्क्षाकायण (जै. उ. ब्रा. १.३८.४)।

शालि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शालिक—एक ऋषि, जो हस्तिनापुर जाते समय श्रीकृष्ण से मिलने आये थे (म. उ. ३८८*)।

शालिन्--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

शालिपिंड--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.१४)।

शालिमंजरीपाक—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से हिरण्यनाभ आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

शालिय--एक आचार्य, जो शाकल्य का शिष्य था (भा. १२.६.५७)।

शालिशिरस्—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४३)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित था (म.आ.११४.२५)।

शालिशूक--(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार संगत राजा का पुत्र, एवं सोमशर्मन् राजा का पिता था (भा. १२.१.१४)।

शालिहोत्र--एक आचार्य, जो प्राचीन भारतीय वैद्यकीय परंपरा में आद्य पशुवैद्यक-शास्त्रज्ञ माना जाता है। पंचतंत्र में, अश्वशास्त्रज्ञ शालिहोत्र का, एवं कामसूत्रकार वात्स्यायन का निर्देश दो प्रमुख आयुर्वेदाचार्य के नाते किया गया है।

शालिहोत्र-तंत्र--महाभारत के अनुसार, यह अश्वविद्या का आचार्य था, एवं घोडों की जाति एवं अश्वशास्त्र-संबंधित अन्य तात्त्विक बातों के संबंध में यह अत्यंत प्रवीण था (म. व. ६९.२७)। इसने सुश्रुत नामक आचार्य को अश्वों का आयुर्वेद सिखाया था (अग्नि. २९२. ४४)। 'अश्वायुर्वेद' के संबंध में इसने 'शालिहोत्र-तंत्र' अथवा 'शाल्यहोत्र' नामक एक ग्रंथ की भी रचना की थी, जिस ग्रंथ की दो हस्तलिखित पांडु-लिपियाँ लंदन के इंडिया ऑफिस लायब्ररी में विद्यमान हैं। इसी ग्रंथ का एक अनुवाद अरेबिक भाषा में १३६१ ई. स. में किया गया था।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे एक श्रेष्ठ ऋषि कहा गया है, जिसके आश्रम में, व्यास एवं पांडव इसकी भेंट लेने के लिए उपस्थित हुए थे (म. आ. १४३, परि. १.८७–८८)।

इसके आश्रम के समीप एक सरोवर एवं पवित्र वृक्ष था, जिनका निर्माण इसने अपनी तपस्या के द्वारा किया था (म. आ. १४४.१५७९ *)। इस सरोवर का केवल जल पी लेने से भूखप्यास दूर हो जाती थी।

तीर्थ—इसके नाम से 'शालिशूर्प' (शालिशीर्ष अथवा शालिसूर्य) नाम से एक तीर्थस्थान प्रसिद्ध हुआ था, जहाँ स्नान करने से सहस्र-गोदान का फल प्राप्त होता था (म. व. ८१.९०)।

२. शूलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

३. पौष्यंजिपुत्र लांगलिन् नामक सामवेत्ता आचार्य का नामांतर (लांगलिन् देखिये)।

शालीय—एक आचार्य, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार, व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से क्रमशः 'शाकल्य' एवं 'वेदमित्र' का शिष्य था (विष्णु. ३.४. २२)। शाकल्य एवं वेदमित्र ये दोनों एक ही वेदमित्र (देवमित्र) शाकल्य के नाम थे (शाकल्य देखिये)।

वायु एवं ब्रह्मांड में इसे क्रमशः 'खालीय' एवं 'खलीयस्' कहा गया है।

शाल्व--(सो. क्रोष्टु.) एक दानव अथवा दैत्य, जो सौभ देश का अधिपति था (ह. वं. २.५२; अग्नि. २७६.२२, म. व. २१.५)। किंतु भागवत के अनुसार 'सौभ' इसके विमान का नाम था, जिस कारण इसे 'सौभपति' नाम प्राप्त हुआ था (भा. १०.७६)।

महाभारत में इसे मार्तिकावत का राजा कहा गया है, जो नगर अबू पहाडी के समीप स्थित था (म. व. १५. १६; २१. १४)। इसे यौगंधरि नामांतर भी प्राप्त था।

यह चेदिराज शिशुपाल राजा का भाई था (म. व. १५.१३)। किन्तु भागवत में इसे शिशुपाल राजा का मित्र कहा गया है (भा. १०.७६)। यह प्रारंभ से ही मगधराज जरासंध का पक्षपाती, एवं कृष्ण का विरोधक था। इसी कारण, महाभारत एवं पुराणों में इसे दानव एवं दैत्य कहा गया होगा (साल्व देखिये)।

जरासंध-दौत्य--प्रथम से ही जरासंध कृष्ण से अत्यधिक डरता था। किस प्रकार कृष्ण का वध किया जा सकता है, इसके षड्‌यंत्र वह रातदिन रचाया करता था। एक बार इसने गार्ग्य ऋषि को रुद्रप्रसाद से प्राप्त हुए कालयवन के द्वारा कृष्ण का वध कराने की सलाह जरासंध को दी।

पश्चात् जरासंध की ओर से यह स्वयं कालयवन के पास गया, एवं इसने उससे कृष्ण का वध करने की प्रार्थना की। इस प्रार्थना के अनुसार, कालयवन ने कृष्ण को काफ़ी त्रस्त कर, उसे अपनी मथुरा राजधानी के त्याग करने पर विवश किया। किन्तु अंत में कृष्ण ने मुचुकुंद राजा के द्वारा कालयवन का वध कराया (ह. वं. २.५२–५४; कालयवन देखिये)।

सौभ विमान की प्राप्ति--रुक्मिणीस्वयंवर के समय, यादवों के द्वारा जरासंध एवं शाल्व पुनः एक बार परास्त हुए। तत्पश्चात् एक वर्ष के कालावधि में समस्त पृथ्वी को 'निर्यादव' करने की घोर प्रतिज्ञा इसने की, एवं तत्प्रीत्यर्थ रुद्र की तपस्या प्रारंभ की।

इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर, रुद्र ने इसे मयासुर के द्वारा निर्मित 'सौभ' विमान प्रदान किया, जो देवासुरों के लिए अजेय एवं अदृश्य होने की दैवी शक्ति से युक्त था।

प्रद्युम्न से युद्ध--पश्चात् कृष्ण जब पांडवों के राजसूय यज्ञ के लिए हस्तिनापुर गया था, यही सुअवसर समझ कर इसने द्वारका नगरी पर आक्रमण किया। उस समय इसने सत्ताइस दिनों तक कृष्णपुत्र प्रद्युम्न से युद्ध किया, एवं इस युद्ध में विजयी हो कर यह अपने नगर को लौट आया।

कृष्ण से युद्ध—कृष्ण को यह घटना ज्ञात होते ही, उसने इसके वध का निश्चय कर इस पर आक्रमण किया। इसने सौभ विमान की सहायता से कृष्ण के साथ अनेक प्रकार के मायावी युद्ध के प्रयोग किये, यहाँ तक की कृष्णपिता वसुदेव के मृत्यु का मायावी दृश्य भी कृष्ण के सम्मुख प्रस्तुत किया (भा. १०.७७)। किंतु अंत में कृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से इसके 'सौभ' विमान का विच्छेद किया, एवं इसका वध किया (म. व. १५–२३; भा. १०.७६–७७)।

भीष्म से युद्ध—वाराणसी के काशिराज की तीन कन्याओं में से अंबा ने इसका वरण किया था। किंतु अंबा के स्वयंवर के समय, भीष्म ने अंबा का एवं अंबिका एवं अंबालिका नामक उसके दो बहनों का भी हरण किया। उस समय इसने भीष्म का पीछा कर उससे युद्ध करना चाहा। किंतु इस युद्ध में भीष्म ने इसे परास्त किया।

पश्चात् भीष्म की अनुज्ञा प्राप्त कर अंबा इसके पास आयी, एवं इससे विवाह करने के लिए उसने इसका बार बार अनुनय-विनय किया। किंतु भीष्म ने इसका हरण करने के कारण, उससे विवाह करने से इसने साफ इन्कार कर दिया।

भारतीय युद्ध में--इस युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। इसका हाथी, पर्वत के समान विशाल काय, ऐरावत के समान शक्तिशाली, एवं महाभद्र नामक सुविख्यात गजकुल में उत्पन्न हुआ था (म.श.१९.२-३)।

इसी हाथी पर आरुढ हो कर, इसने पांडवसेना पर आक्रमण किया, एवं उसमें हाहाःकार मचा दिया। पश्चात् इसने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया, एवं उसके रथ को कुचल डाला। पश्चात् धृष्टद्युम्न के द्वारा इसके हाथी का, एवं सात्यकि के द्वारा इसका वध हुआ (म. श. १९.२५)।

२. एक म्लेंच्छ राजा, जो वृषपर्वन् के छोटे भाई अजक के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.१७ पाठ.; म. व. १९.१)।

३. पांडवपक्ष का एक योद्धा, जो कौरवपक्षीय भीमरथ राजा के द्वारा मारा गया था। यह भीमरथ धृतराष्ट्र-पुत्र भीमरथ से भिन्न था (म. द्रो. २४.२६)।

४. तीन राजाओं का एक समूह, जो व्युषिताश्व राजा की पत्नी भद्रा ने अपने पति की मृत्यु के पश्चात्, उसके मृतदेह से उत्पन्न किये थे (म. आ. ११२.३३)।

५. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १२९.७)। ये लोग जरासंध के भय से दक्षिण दिशा में भाग गये थे (म. स. १३. २४-२६)। इन योद्धाओं ने द्रोण पर आक्रमण किया था।

६. एक असुर, जो सिंहिका का पुत्र होने के कारण 'सिंहिकापुत्र' अथवा 'सैंहिकेय' नाम से सुविख्यात था। शिव की आज्ञा से परशुराम ने इसका वध किया (विष्णुधर्म. १.३७.३८-३९)।

७. एक दैत्य, जिसने अपने अनाचार के कारण वैदिक धर्म का उच्छेद किया था। इसी कारण श्रीविष्णु ने संभलग्राम में विष्णुयशस् नामक ब्राह्मण के घर अवतार ले कर इसका वध किया (स्कंद. १.२.४०)। इस कथा का संकेत संभवतः विष्णु के कल्कि अवतार की ओर प्रतीत होता है (विष्णुयशस् कल्कि देखिये)।

८. शाल्वदेश के द्युतिमत् राजा का नामांतर (द्युतिमत् देखिये)।

शाल्वल--दधिवाहन नामक शिवावतार का एक शिष्य।

शावस्त--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्व (द्वितीय) राजा का पुत्र था। मत्स्य, विष्णु एवं वायु में इसे 'श्रावस्त' कहा गया है।

शाश्वत--(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार श्रुत राजा का पुत्र था।

शाष्पेय--पाणिनीय व्याकरण के शाखाप्रवर्तक आचार्यों में से एक (पाणिनि देखिये)।

शास भारद्वाज--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५२)।

शास्तृ--कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक।

शिक्ष--एक देवगंधर्व, जो ऋषभ पर्वत पर रहता था।

शिख--एक आचार्य, जिसने अपने अनुशिख नाम के मित्र के साथ सर्पयज्ञ में क्रमशः 'नेष्टृ' एवं 'पोतृ' का काम निभाया था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

शिखंडिन्--(सो. अज.) पांचाल देश के द्रुपद राजा का एक पुत्र, जो पहले 'शिखंडिनी' नामक कन्या के रूप में उत्पन्न हुआ था। पश्चात् स्थूणाकर्ण नामक यक्ष की कृपा से यह पुरुष बन गया (म. उ. १९२-१९३)। महाभारत में अन्यत्र यह शिव की कृपा से पुरुष बनने का निर्देश प्राप्त है। इसे 'याज्ञसेनि' नामान्तर भी प्राप्त था।

बाल्यकाल एवं विवाह-- इसके मातापिता इसका स्त्रीत्व छिपाना चाहते थे, जिस कारण उन्होंने एक पुत्र जैसा ही इसका पालनपोषण किया। इतना ही नही, जवान होने पर दशार्ण राजा हिरण्यवर्मन् की कन्या से उन्होंने इसका विवाह संपन्न कराया।

इसके पत्नी को इसके स्त्रीत्व का पता चलते ही, उसने अपने पिता के पास यह समाचार पँहुचा दिया। अपना जमाई स्त्री है, यह ज्ञात होते ही हिरण्यवर्मन् अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं इस प्रकार धोखा देनेवाले द्रुपद राजा को जड़मूल से उखाड़ फेंकने के लिए उद्यत हुआ।

इसी दुरवस्था में यह घर से भाग कर वन में चला गया, जहाँ स्थूणाकर्ण यक्ष की कृपा से, पुनः लौटा-ने की शर्त पर इसे पुरुषत्त्व की प्राप्ति हुई। इसी पुरुषत्व के आधार से इसने अपने श्वसुर हिरण्यवर्मन् राजा की चिंता दूर की। पश्चात् स्थूणाकर्ण यक्ष को कुबेर का शाप प्राप्त होने के कारण, शिखंडिन् का पुरुषत्व आमरण इसके पास ही रहा (म. उ. १९०-१९३): किंतु फिर भी स्त्रीजन्म का इसका कलंक सारे आयुष्य भर इसका पीछा करता रहा।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष का 'महारथ', एवं एक अक्षौहिणी सेना का सेनामुख था। यह युद्धनिपुण एवं उच्च श्रेणी का व्यूहरचनातज्ञ था, जो विद्या इसने द्रोणाचार्य से प्राप्त की थी। पांचाल देश के बारह हज़ार वीरों में से, छः हज़ार वीर इसीके ही सैन्य में समाविष्ट थे (म. द्रो. २२.१६०.*; पंक्ति. ७-८)। इसके रथ के अश्व भूरे वर्ण के थे, जो इसे तुंबुरु ने प्रदान किये थे। इसका ध्वज 'अमंगल' वर्ण का था (म. भी. १०८.१९-२०)।

भीष्मवध--भारतीय युद्ध के पहले दस दिनों में, भीष्म ने अपने पराक्रम के कारण पांडवसेना में हाहाः-कार मचा दिया। उस समय भीष्म ने स्वयं ही शिखंडिन् को आगे कर युद्ध करने की सलाह पांडवों को दी (भीष्म देखिये)। यह जन्म से स्त्री था, जिस कारण धर्मयुद्ध के नियमानुसार इससे युद्ध करना भीष्म निषिद्ध मानता था।

भारतीय युद्ध के दसवें दिन, यह भीष्म के सम्मुख खड़ा होते ही, भीष्म ने अपने शस्त्र नीचे रख दिये, जिसे सुअवसर समझ कर अर्जुन ने भीष्म का वध किया (म. भी. ११४.५३-६०)।

वध--भारतीय युद्ध के अठारहवें दिन हुए रात्रियुद्ध में अश्वत्थामन् ने इसका वध किया (म. सौ. ८.६०)। इसकी मृत्यु का दिन पौष्य अमावस्या माना जाता है (भारतसावित्री)।

भीष्मवध का पूर्ववृत्त--महाभारत के कुंभकोणम् संस्करण में, शिखंडिन् भीष्मवध के लिए कारण किस प्रकार बन गया, इसकी चमत्कारपूर्ण कथा दी गयी है। काशिराज की कन्या अंबा ने भीष्मवध की प्रतिज्ञा की थी, जिस हेतु उसने कार्तिकेय के द्वारा एक दिव्य माला प्राप्त की थी। वह माला प्रदान करते समय, कार्तिकेय ने उसे वर दिया था कि, जो मनुष्य वह माला परिधान करेगा, वह भीष्मवध के कार्य में सफलता प्राप्त करेगा।

पश्चात् अंबा ने वह माला द्रुपद के राजभवन में फेंक दी, जो आगे चल कर शिखंडिन् ने परिधान की। इसी दैवी माला के कारण, शिखंडिन् भीष्मवध के कार्य में सफल हुआ (म. द्रो. २२.१६०; पंक्ति ७-८)।

२. एक शिवावतार, जो सातवे वाराह कल्पांतर्गत वैवस्वत मन्वंतर के अठारहवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। हिमालय पर्वत में स्थित 'शिखंडिन्' नामक शिखर पर यह शिवावतार अवतीर्ण हुआ। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थेः--१. वाचःश्रवस्; २. रुचीक; ३. शावाश्व; ४. यतीश्वर (शिव. शत. ५)।

शिखंडिन् याज्ञसेन--एक आचार्य, जो केशिन् दाल्भ्य राजा का पुरोहित था (कौ. ब्रा. ७.४)। केशिन् दाल्भ्य के द्वारा किये गये यज्ञ में, इसने कई आचार्यों के साथ वादविवाद किया था।

यज्ञसेन का वंशज होने के कारण, इसे 'याज्ञसेन' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शिखंडिनी--विजिताश्व राजा की पत्नी, जिससे इसे तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ४.२४.३)।

२. अंतर्धान राजा की पत्नी, जो हविर्धान राजा की माता थी।

३. द्रुपद राजा की कन्या, जो आगे चल कर शिखंडिन् नामक पुत्र में रूपांतरित हुई (शिखंडिन् देखिये)।

शिखंडिनी अप्सरा काश्यपी--एक वैदिक सूक्त-द्रष्ट्रीद्वय (ऋ. ९.१०४)।

शिखाग्रीविन्--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिखावत्--युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)।

शिखावर्ण--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिखावर्त--कुबेरसभा में उपस्थित एक यक्ष (म. स. १०.१६)।

शिखि--तामस मन्वंतर का इंद्र।

शिखिध्वज--एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम चुडाला था।

२. मयूरध्वज राजा का नामांतर।

शिखिन्--कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. उ. १०३. १२)।

शिग्रु--एक जातिविशेष, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा के शत्रुपक्ष में शामिल थी। अज एवं यक्षु लोगों के साथ, ये लोग भी सुदास राजा से परास्त हुए थे (ऋ. ७.१८.१९)। लुडविग के अनुसार ये लोग भेद राजा के नेतृत्व में थे (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद ३.१७३)।

संभवतः ये लोग उत्तरकाल में प्रसिद्ध हुए 'सहिजन-वृक्ष' से सबंधित थे। इसी कारण ये लोग अनार्य प्रतीत होते हैं।

शिजय--एक राजा, जो पहले क्षत्रिय था, किंतु आगे चल कर तपोबल से ब्राह्मण एवं ऋषि बन गया गया (वायु. ९१.११४)।

शिंजार—एक ऋषि, जो अश्विनों के कृपापात्र लोगों में समाविष्ट था। ऋग्वेद में इसका निर्देश काण्व, प्रियमेध, उपस्तुत एवं अत्रि ऋषियों के साथ प्राप्त है (ऋ. ८.५. २५; १०.४०.७)। गेल्डनर के अनुसार, यह अत्रि ऋषि का नामांतर, अथवा उपाधि थी (गेल्डनर, ऋग्वेद ग्लॉसरी १७९)।

शित—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

शितिपृष्ठ—एक आचार्य, जिसने सर्पसत्र में 'मैत्रावरुण' नामक ऋत्विज का काम निभाया था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

शितिबाहु ऐषकृत नैमिशि—एक यज्ञकर्ता, जिसके यज्ञ के 'अपूप' (हविर्भाग) को एक बंदर लेकर भाग गया था (जै. ब्रा. १.३६३)।

शिनि—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार गर्ग राजा का पुत्र, एवं गार्ग्य राजा का पिता था। मत्स्य में इसे 'शिबि' कहा गया है।

यह पहले क्षत्रिय था, किन्तु आगे चल कर 'गार्ग्य' नाम से ब्राह्मण, एवं अंगिरस् कुल का मंत्रकार बन गया। इसी कारण 'गार्ग्य' एवं 'शैन्य' लोग आगे चल कर 'क्षत्रोपेतद्विज' नाम से सुविख्यात हुए (भा. ९.२१. १९; विष्णु. ४.१९.२३)।

२. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भजमान राजा का पुत्र, एवं स्वयंभोज राजा का पिता था (भा. ९. २४.२६)।

३. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार शूर राजा का पुत्र, एवं देवमीढ़ राजा का वंशज था (मत्स्य. ४६.३)।

देवकी स्वयंवर के समय, इसने विरुद्धपक्षीय सारे राजाओं को परास्त कर, देवकी को वसुदेव के लिए जीत लिया था। उस समय सोमदत्त नामक राजा को पटक कर उसे लत्तप्रहार किया था, किंतु आगे चल कर उस पर दया कर उसे छोड़ दिया था (म. द्रो. ११९.९-१४)।

४. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत, मत्स्य एवं वायु के अनुसार अनमित्र राजा का पुत्र, एवं सत्यक राजा का पिता था (भा. ९.२४.१३; मत्स्य. ४५.२२)। विष्णु में इसे सुमित्र राजा का पुत्र कहा गया है (विष्णु. ४.१४.१-२)।

५. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो चक्षु एवं नड्वला के पुत्रों में से एक था।

शिनिक--एक ऋषि, जिसे मैत्रेय ऋषि से विष्णु पुराण प्राप्त हुआ था (विष्णु. ६.८.५१)। पाठभेद-'समिक'।

शिनेयु--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार उशनस् राजा का पुत्र था।

शिप्रक--(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार आंध्रवंश का सर्वप्रथम राजा था। इसे 'बलि,' 'सिंधुक,' 'शिशुक' आदि नामांतर प्राप्त थे।

शिबि--एक लोकसमूह, जो आधुनिक पंजाब प्रदेश में इरावती, एवं चंद्रभागा (असिक्नी) नदियों के बीच प्रदेश में स्थित था।

वैदिक साहित्य में--ऋग्वेद में इन लोगों का निर्देश 'शिव' नाम से प्राप्त है, जहाँ अलिन, पक्थ, भलानस्, एवं विषाणिन् लोगों के साथ, इनके सुदास राजा के द्वारा पराजित होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.१८.७)। बौधायन के श्रौतसूत्र में, इन लोगों के शिबि औशीनर राजा का निर्देश प्राप्त है (बौ. श्रौ. ३.५३.२२)। इन लोगों के अमित्रतपन नामक राजा का निर्देश भी ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.२३.१०)।

पाणिनीय व्याकरण में—पाणिनि के अष्टाध्यायी में, इन लोगों के शिबिपुर, (शिवपूर) नामक नगर का निर्देश प्राप्त है, जो उत्तर प्रदेश में स्थित था (महा. २.२८२; २९३-२९४)। आधुनिक पंजाब के झंग प्रदेश में स्थित शोरकोट प्रदेश में शिबि लोग रहते थे, ऐसा माना जाता है। सिकंदर के आक्रमण के समय भी ये लोग पंजाब प्रदेश में रहते थे, एवं 'सिबै' अथवा 'सीबोइ' नाम से सुविख्यात थे (अरियन, इंडिका ५.१२; शिव २. देखिये)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इन लोगों का निर्देश शक, किरात, यवन, एवं वसाति आदि विदेशीय जातियों के साथ प्राप्त है। उशीनर लोगों से ये लोग शुरू से ही संबंधित थे, एवं शिबि औशीनर राजा के वृषदर्भ, सुवीर, केकय, एवं मद्रक इन चारों पुत्रों के कारण, समस्त पंजाब देश में इन्होंने अपना राज्य स्थापित किया था (शिबि औशीनर देखिये)।

शांतनु राजा की माता सुनंदा, एवं युधिष्ठिर का श्वशुर गोवासन इसी प्रदेश के रहनेवाले थे (म. आ. ९०.४६; ९०.९३)। भारतीय युद्ध में, ये लोग सौवीर देश के राजा जयद्रथ के साथ कौरवपक्ष में शामिल थे (म. उ. १९६. ७-८))

२. एक दैत्य, जो हिरण्यकशिपु का पुत्र था (म. आ. ५९.११)। किंतु पौराणिक साहित्य में इसे प्रह्लाद का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ६.९; विष्णु. १.२१.१)। यह द्रुम राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.८)।

३. तामस मन्वंतर का इन्द्र (वायु. ६२.४०)।

४. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो चाक्षुष मनु एवं नड्वला के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१३.१६)।

५. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो वृष्णि एवं माद्री के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ४५.२)।

६. पुरूरवस्वंशीय शिनि राजा का नामांतर (शिनि १. देखिये)

७. एक आचार्य, जो शुनस्कर्ण बाष्कीह नामक आचार्य का पिता था (शुनष्कर्ण बाष्कीह देखिये)।

८. भूतपूर्व पाँच इंद्रों में से एक, जो शिव की आज्ञा से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. १९१६*)।

शिबि औशीनर (औशीनरि)—एक सुविख्यात दानशूर राजा, जो शिबि लोगों का सब से अधिक ख्यातनाम राजा था (शिबि १. देखिये)। उशीनर राजा का पुत्र होने के कारण, इसे 'औशीनर' अथवा 'औशीनरि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। इसकी राजधानी शिवपुर में थी (ब्रह्मांड. ३.७४.२०-२३)।

वैदिक साहित्य में—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.१७९.१) यह इंद्र के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिसने इसके लिए 'वार्शिष्ठिय' के मैदान में यज्ञ किया था, एवं इसे विदेशियों के आक्रमण से बचाया था (बौ. श्रौ. २१. १८)।

महाभारत एवं पुराण में—इस ग्रंथ में इसे उशीनर राजा एवं माधवी का पुत्र कहा गया है, एवं इसके औदार्य की अनेकानेक कथाएँ वहाँ प्राप्त हैं (म. उ. ११७.२०)। पौराणिक साहित्य में इसकी माता का नाम दृषद्वती दिया गया है (वायु. ९९.२१-२३; ब्रह्मांड. ३.७४.२०-२३; मत्स्य ४८.१८)।

औदार्य—इसके औदार्य की निम्नलिखित कथा सब से अधिक सुविख्यात है। एक बार इसकी सत्त्वपरीक्षा लेने के लिए अग्नि ने कपोत का, एवं इन्द्र ने बाज (श्येन) पक्षी का रूप धारण किया, एवं श्येन पक्षी कपोत का पीछा करता हुआ इसके संमुख उपस्थित हुआ। उस समय कपोत पक्षी इसकी शरण में आया, एवं उसने इसे श्येन को समझाने के लिए कहा।

इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर श्येन ने इससे कहा, 'अगर तुम इस कपोत के वजन के बराबर अपना मांस काट कर मुझे दोगे, तो मैं अपने भक्ष्य, इस कपोत को छोड़ दूंगा'। इसने श्येन पक्षी की यह शर्त मान्य कर दी, एवं अपने शरीर का मांस काट कर तराजु में रखना प्रारंभ किया। पश्चात् शरीर के मांसखंड पूरे न पड़ने पर, यह स्वयं ही तराजु के पलड़े में जा कर बैठ गया।

इसका यह आत्मनिरपेक्ष दातृत्व देख कर, इंद्र एवं अग्नि इससे अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उन्होंने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये (म. व. १३०.१९-२०; १३१. परि. १ क्र. २१ पंक्ति ५)।

महाभारत में अन्यत्र उपर्युक्त कथा इसकी न हो कर, इसके पुत्र वृषदर्भ की बतलायी गयी है (म. अनु. ६७)।

औदार्य की अन्य एक कथा—महाभारत में अन्यत्र इसके औदार्य की एक अन्य कथा दी गयी है, जो उपर्युक्त कथा का ही अन्य रूप प्रतीत होता है। एक बार इसके पास एक ब्राह्मण अतिथि आया, जिसने इसके बृहद्गर्भ नामक पुत्र का मांस भोजनार्थ माँगा। यह उसे पका कर सिद्ध कर ही रहा था, कि इतने में उस ब्राह्मण ने इसके अन्तःपुर, शस्त्रागार, एवं हाथी, एवं अश्वशाला आदि को जलाना प्रारंभ किया। यह ज्ञात होते ही, अपने पुत्र का पका हुआ मांस अपने सर पर रख कर यह ब्राह्मण के पीछे दौडा। उस समय उस ब्राह्मण ने वह मांस इसे ही भक्षण करने की आज्ञा दी। तदनुसार यह उसे भक्षण करनेवाला ही था, कि इतने में ब्राह्मण ने संतुष्ट हो कर इसका पुत्र पुनः जीवित किया, एवं इसे अनेकानेक वर प्रदान कर वह चला गया (म. शां. २२६. १९; अनु १३७.४)।

पुण्यशील राजा—महाभारत में इसे ययाति राजा का पौत्र, एवं ययाति कन्या माधवी का पुत्र कहा गया है। अपनी माता की आज्ञा से इसने अपने वसुमनस्, अष्टक, एवं प्रतर्दन नामक तीन भाइयों के साथ एक यज्ञ किया, जिसका सारा पुण्य इन्होंने स्वर्ग से अधःपतित हुए अपने पितामह ययाति को प्रदान किया। इस प्रकार इन्होंने ययाति को पुनः एकबार स्वर्गप्राप्ति करायी (माधवी देखिये)।

ययाति के स्वर्गप्राप्ति के लिए इसने अन्तरिक्ष में स्थित अपना सारा राज्य उसे प्रदान किया, ऐसा एक रूपकात्मक

निर्देश महाभारत में प्राप्त है, जिसका संकेत भी इसी पुण्यदान के आख्यान की ओर प्रतीत होता है (म. आ. ८८. ८) महाभारत में अन्यत्र नारद का, एवं इसका एक संवाद प्राप्त है, जहाँ उसने इसे अपने से भी अधिक पुण्यवान् वर्णन किया है (म. व. परि. १.२१.५.)।

यह अत्यंत संपत्तिमान्, उदार, पराक्रमी, राजनीतिप्रवण एवं यज्ञकर्ता राजा था (म. द्रो. परि. १.८.४०९–४३६)। यह कुछ काल तक इंद्र बना था, एवं ब्रह्मा के यज्ञ का 'प्रतिष्ठाता' भी यही था।

दान का महत्त्व—इसने सुहोत्र राजा को दान का महत्त्व कथन किया था। उस समय उसने इसे कहा, 'दान यह एक ही संपत्ति ऐसी है कि, जो देने से अधिक बढती है' (म. व. परि. १.२१.२)। इसका यह उपदेश सुन कर, सुहोत्र ने इसे सम्मानपूर्वक विदा किया।

मृत्यु—मृत्यु के पश्चात् यह यमसभा का सदस्य हुआ (म. स. ८.९)। मृत्यु के पश्चात्, उत्तर-गोग्रहणयुद्ध के समय पांडवों के पराक्रम को देखने के लिए अन्य देवों के साथ यह उपस्थित हुआ था (म. वि. ५१.९१७* पंक्ति. ३०)। इसके माहात्म्य की अनेकानेक कथाएँ पद्म में प्राप्त हैं (पद्म. उ. ८२; १९९)।

परिवार—इसके निम्नलिखित चार पुत्र थेः— १. वृषादर्भ, २. सुवीर; ३. मद्र; ४. केकय (भा. ९.२३.३)। इसके इन पुत्रों ने पंजाब प्रदेश में क्रमशः वृषादर्भ, सौवीर, केकय, एवं मद्र राज्यों की स्थापना की, एवं इस प्रकार वे समस्त पंजाब प्रदेश के स्वामी बन गये।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त, इसके गोपति, एवं बृहद्गर्भ नामक पुत्रों का निर्देश भी महाभारत में प्राप्त है (म. शां. ४९.७०)।

२. उशीनर देश का एक राजा, जो द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. ६०.२१)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था। अन्त में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३०.१७)।

शिमिदा—एक दानव (अ. वे. ४.२५.४; श. ब्रा. ७.४.१.७)। यह शब्द 'शिमिद्' से व्युत्पन्न है, जिसका शब्दशः अर्थ 'व्याधि' है (ऋ. ७.५०.४)।

शिम्यु—एक राजा, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा के द्वारा नहुष, भरत, वार्षगिर, ऋज्राश्व, अंबरीष, सहदेव, भजमान आदि राजाओं के साथ परास्त हुआ था (ऋ. ७.१८.५)।

२. एक जातिविशेष, जिसका निर्देश दस्यु लोगों के साथ प्राप्त है (ऋ. १.१००.१८)। त्सीमर के अनुसार, ये लोग अनार्य थे (अल्टिन्डिशे लेबेन, ११८–११९)।

शिरिंबिठ भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१५५.१)। 'ऋग्वेद अनुक्रमणी' में इसे भरद्वाज का पुत्र कहा गया है। किंतु यास्क इसे व्यक्ति न मान कर 'मेघ' मानते हैं (नि. ६.३०)।

शिरीष—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिरीषक—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग, जो नारद ने इंद्रसारथि मातलि को वर के रूप में प्रदान किया था (म. उ. २०१.१४)।

शिरीषिन्—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५९)।

शिलक शालावत्य—एक आचार्य, जो चैकितायन दाल्भ्य, एवं प्रवाहण जैवलि नामक आचार्यों का समकालीन था (छां. उ. १.८.१)। 'शलावति' का वंशज होने के कारण, इसे शालावत्य पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

शिलंदनि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिलवृत्ति—एक ऋषि, जिसने गंगा नदी के माहात्म्य के संबंध में एक सिद्ध से संवाद किया था (म. अनु. २६.१९–१०३)। इसे 'शिलोञ्छवृत्ति' नामांतर भी प्राप्त था (म. अनु. २६.१९)।

शिलस्थलि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिला—धर्म ऋषि की कन्या, जो मरीचि ऋषि की पत्नी थी। अपने पति के शाप के कारण, यह गयाक्षेत्र में शिला बन कर रहने पर विवश हुई (वायु. १०७)।

शिलाद—शिवपार्षद नंदिन् का पिता (लिंग. १-४२; नंदिन् १. देखिये)।

शिलायूप—विश्वामित्र ऋषि एक पुत्र (म.अनु.४.५४)।

शिलास्थलि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिलीन—जित्वन् शैलिनि ऋषि का पिता (बृ. उ. ४.१.५ माध्यं.)।

शिल्व काश्यप—एक आचार्य, जो काश्यप निध्रुवि नामक आचार्य का शिष्य, एवं हरित काश्यप नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ६.४.३३ माध्यं.)।

शिव—एक देवता, जो सृष्टिसंहार का आद्य देवता माना जाता है (रुद्र-शिव देखिये)।

२. एक जातिविशेष, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा के द्वारा अलिन्, पक्थ, भलानस्, विषाणिन् आदि जातियों के साथ हुआ था (ऋ. ७.१८.७)।

सिकंदर के समय सिंधु एवं असिक्नी नदियों के तट पर बसे हुए 'सिबै' अथवा 'सिबोइ' लोग संभवतः यही होंगे (अरियन, इंडिका ५.१२)। पाणिनीय व्याकरण में निर्दिष्ट 'शिवपुर' ग्राम संभवतः इन्हीं लोगों का ही था (पा. सू. ४.२.१०९; शिबि. १. देखिये)।

३. उत्तम मन्वंतर का एक देवगण, जिस में निम्नलिखित बारह देवता समाविष्ट थे :--१. प्रतर्दन; २. यति; ३. यम; ४. यशस्कर; ५. वनि; ६. वसुदान; ७. विष; ८. सुदान; ९. सुचित्र; १०. सुमंजस्; ११. स्वार १२. हंस (ब्रह्मांड. २.३६.३२-३३)।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

५. उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मत्स्य. ९.१४)।

६. तामस मन्वंतर का एक योगवर्धन।

७. एक ब्राह्मण, जो वितस्त का पुत्र, एवं श्रवस् का पिता था (म. अनु. ८. ६२)।

८. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो इध्मजिह्व राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसका द्वीप इसीके ही नाम से प्रसिद्ध हुआ।

९. एक ब्राह्मणसमूह, जो दक्षिण दिशा में निवास करता था। गरुड ने गालव ऋषि को पृथ्वी का दर्शन कराया, जिस समय इन वेदपारग लोगों का देश भी उसने उसे दिखाया था (म. उ. १०७.१८)।

शिवकर्ण--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद- 'शवकर्ण'।

शिवशर्मन्--एक विष्णुभक्त ब्राह्मण, जिसके यज्ञशर्मन् एवं सोमशर्मन् नामक पुत्रों के पितृभक्ति के कारण, इसके संपूर्ण कुटुंब का उद्धार हुआ (यज्ञशर्मन् एवं सोमशर्मन् देखिये)।

२. एक ब्राह्मण, जिसे तीर्थयात्रा के पुण्य के कारण नंदिवर्धन राजा के कुल में जन्म प्राप्त हुआ (स्कंद. ४.१. ८-२४)।

शिवशातकर्णी अथवा **शिवश्री**--(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार पुलोमत् राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.१३)। भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'मेदःशिरस्' एवं 'शिवश्री' कहा गया है।

शिवस्कंध--(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार, क्रमशः 'मेदशिरस्, 'शातकर्णि' एवं 'शिवश्री' राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.१४)।

शिवस्वाति अथवा **शिवस्वामिन्**--(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार चकोर राजा का, विष्णु के अनुसार चकोर शातकर्णि राजा का, एवं वायु के अनुसार सातकर्णि राजा का पुत्र था।

शिवा--अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जो आपव वसिष्ठ ऋषि की कन्या थी। पाठभेद:--'वसुदा' 'शुभा' एवं 'सुमा' (म. व. २०८.१)।

२. अनिल नामक वसु की पत्नी, जिससे इसे मनोजव एवं अविज्ञातगति नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ६०२४)।

३. एक 'शैवेय' राक्षसी, जो कश्यप एवं खशा की कन्याओं में से एक थी (ब्रह्मांड. ३.७.१३८)।

शिशिर--एक वसु, जो धर एवं मनोहरा के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य तीन भाइयों के नाम वर्चस्, प्राण एवं रमण थे (म. आ. ६०.२)।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

३. एक आचार्य, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से क्रमशः वेदमित्र एवं देवमित्र शाकल्य का शिष्य था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'शैशिरेय' कहा गया है।

शिशु--(सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.१५.२१)।

२. सप्तमातृकाओं के पुत्रों का सामूहिक नाम, जो 'वीराष्टक' नाम से भी सुविख्यात थे।

शिशु आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा एवं सामद्रष्टा (ऋ. ९.११२; पं. ब्रा. १३.३.२४)।

शिशुक--(आंध्र. भविष्य.) आंध्रवंशीय शिप्रक राजा का नामांतर। मत्स्य में इसे आंध्र वंश का सर्वप्रथम राजा कहा गया है (मत्स्य. २७३.२)। इसने काण्व राजा सुशर्मन् को परास्त किया था।

२. (किलकिला. भविष्य.) दौहित्रपुरिका नगरी का एक राजा, जो ब्रह्मांड एवं विष्णु के अनुसार, नन्दियशस् राजा का पुत्र था।

शिशुनन्दिन्--(किलकिला. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं भविष्य के अनुसार भूतनंद राजा का पुत्र था। इसने बीस वर्षों तक राज्य किया।

शिशुनाग--(शिशु. भविष्य.) शिशुनाग वंश का सर्वप्रथम राजा, जिसने मगध देश के प्रद्योतवंशीय नन्दिवर्धन

राजा को परास्त कर, शिशुनाग राजवंश की स्थापना की। यह काशिदेश का रहनेवाला था, किंतु आगे चल कर, यह मगध देशनिवासी बन गया। इसके पुत्र का नाम काकवर्ण था।

इसके राजवंश में निम्नलिखित दस राजा उत्पन्न हुए, जिन्होंने ३६० वर्षों तक मगध देश पर राज्य किया :—

१. काकवर्ण; २. क्षेमधर्म; ३. क्षेमजित्; ४. विंध्यसेन; ५. भूमिमित्र; ६. अजातशत्रु; ७. वंशक; ८. उदासि; ९. नन्दिवर्धन; १०. महानन्दिन् (मत्स्य. २७२.६–१७; वायु. ९९.३१४–३१५)।

शिशुपाल—चेदि देश का सुविख्यात राजा, जो चेदि राजा दमघोष एवं वसुदेवभगिनी श्रुतश्रवा का पुत्र था। इस प्रकार यह कृष्ण का फुफेरा भाई, एवं पांडवों का मौसेरा भाई था (म. स. ४०.२१; भा. ७.१.१७; ९.२४.४०)। इसे 'चैद्य' एवं 'सुनीथ' नामांतर भी प्राप्त थे (म. स. ३३.३५२* पंक्ति. ४; परि. १.२१.२; ३६.१३)।

यह शुरू से ही अत्यंत दुष्टप्रकृति, एवं कृष्ण का प्रखर विद्वेषक था, जिसका संकेत पुराणों में इसे हिरण्यकशिपु एवं रावण का अंशावतार मान कर किया गया है (मत्स्य. ४६.६; विष्णु. ४. १४.११; ब्रह्म. १४.२०; वायु. ९६. १५८; ब्रह्मांड. ३.३१.१५९)।

जन्म—इसके स्वरूप के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है, जिसके द्वारा कृष्ण से इसका जन्मजात शत्रुत्व प्रस्थापित करने का प्रयत्न किया गया है। जन्म से यह अत्यंत विरूप था, एवं इसके तीन नेत्र, एवं चार भुजाएँ थीं। इसकी आवाज भी गर्दभ के समान थी। इसके जन्म के समय आकाशवाणी हुई थी, 'जिस पुरुष के गोद में यह बालक देते ही, इसकी दो भुजाएँ एवं एक नेत्र लुप्त हो कर इसका विरूपत्व नष्ट हो जायेगा, उसीके हाथों शस्त्र के द्वारा इसकी मृत्यु होगी।

इस विचित्र बालक को देखने के लिए, अन्य राजाओं एवं रिश्तेदारों की भाँति कृष्ण एवं बलराम भी उपस्थित हुए थे। उस समय, कृष्ण के इस बालक को गोद में लेते ही, इसका विरूपत्व नष्ट हुआ, एवं आकाशवाणी के कथनानुसार कृष्ण इसका शत्रु साबित हुआ (म. स. ४०. १–१७)। कृष्ण की फूफी श्रुतश्रवा ने अपने बालक को बचाने के लिए उससे बार-बार प्रार्थना की। उस समय कृष्ण ने उसे अभिवचन दिया, 'शिशुपाल के सौ अपराधों को मैं क्षमा करूंगा, एवं उसके सौ अपराध पूर्ण होने पर ही मैं उसका वध करूंगा'।

कृष्ण का विद्वेष—यह शुरू से ही मगधराज जरासंध का पक्षपाती था, एवं कृष्ण से द्वेष करता था (ह. वं. २३४.१३)। इसके कृष्ण की तुलना में अधिक सामर्थ्यशाली राजा होते हुए भी, सभी लोग कृष्ण को ही अधिक मान देते थे, यह इसे बिलकुल अच्छा नहीं लगता था।

शिशुपाल के अनाचार—इसी विद्वेष के कारण यह अनेकानेक पापकर्म एवं अनाचार करता रहा। कृष्ण जब प्राग्ज्योतिष पुर गया था, उस समय उसकी अनुपस्थिति में इसने द्वारका नगरी जलायी थी। रैवतक पर्वत पर हुए यादवों के उत्सव के समय, इसने हमला कर अनेकानेक यादवों को मारपीट कर उन्हें कैद किया था। कृष्णपिता वसुदेव के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने उसका अश्वमेधीय अश्व चुरा कर, यज्ञ में विघ्न उपस्थित किया था। बभ्रु राजा की पत्नी का इसने हरण किया था, एवं अपने मामा विशालक की कन्या भद्रा पर बलात्कार किया था। रुक्मिणीस्वयंवर के समय इसने कृष्ण पर आरोप लगाया था की, कृष्ण ने रुक्मिणी को बहका कर उससे जबर्दस्ती शादी की है।

कृष्ण की निंदा—कृष्ण के प्रति इसके विद्वेष का रौद्र उद्रेक युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में हुआ, जहाँ इसने कृष्ण को अग्रपूजा का मान देने के प्रस्ताव को अत्यंत कठोर शब्दों में विरोध किया। इसने कहा, 'कृष्ण एक कायर एवं अप्रशंसनीय व्यक्ति है, एवं उसकी शूरता एवं पराक्रम की जो गाथाएँ आज समाज में प्रचलित हैं, वे सारी सरासर झूट एवंअतिशयोक्ति हैं। बचपन में कृष्ण ने पूतना का वध किया, जो एक चिड़िया मात्र थी। वल्मीक जैसा छोटा गोवर्धन पर्वत उसने उठाया, इसमें बहादुरी क्या? बछड़े, साँप, गधे को मारनेवाले को क्या तुम शूरवीर कहोगे? रुई जैसे झाड़ उखाड़ डाले; अथवा एक आधा नाग नष्ट ही किया, तो क्या यह वीरता कही जायेगी?। रही बात कंसवध की, उसमें भी कोई शौर्य नहीं था? गौओं को चरानेवाले एक क्षुद्र व्यक्ति की तुम लोग प्रशंसा क्यों करते हो, यह मेरे समझ में नहीं आता' (म.स.३८)।

इसी सभा में कृष्ण की स्तुति करनेवाले भीष्म से इसने कहा, 'तुम सरासर नपुंसक हो, जो अन्य सम्राटों को छोड़ कर आज भरी सभा में कृष्ण की स्तुति कर रहे हो'।

शिशुपालवध—शिशुपाल के इन आक्षेपों को सुन कर, भीम क्रुद्ध हो कर इसे मारने के लिए दौड़ा, किन्तु भीष्म ने उसे रोक दिया (म. स. ३९.९–१४)।

कृष्ण भी इन मिथ्या आरोपों के कारण, इसका वध करना चाहता था, किन्तु अपनी फूफी को दिये वचन का स्मरण कर, वह शांत रहा। किन्तु राजसूय यज्ञमंडप से बाहर आते ही शिशुपाल पुनः एक बार कृष्ण के संबंध में भलाबुरा कहने लगा। इसने कहा, 'रुक्मिणी मेरी पत्नी है, एवं उसने मेरा ही वरण किया है। किन्तु श्रीकृष्ण ने उसका हरण किया है'।

शिशुपाल का यह वचन सुन कर, एवं इसके सौ अपराध पूर्ण हुए हैं, यह जान कर श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से इसका वध किया (म. स. ४२.२१; भा. १०.७४)। मृत्यु के पश्चात् इसके शरीर का तेज कृष्ण की देह में विलीन हो गया।

परिवार--इसके धृष्टकेतु, सुकेतु, एवं शरभ नामक तीन पुत्र, एवं करेणुमती (रेणुमती) नामक एक कन्या थी।

महाभारत में इसका करकर्ष नामक अन्य एक पुत्र भी दिया गया है। इसकी बहन का नाम काली था, जो भीम की पत्नी थी (म. आश्व. ३२.११)।

शिशुमार--एक ऋषि, जो पानी में ग्राह का रूप धारण कर रहता था (पं. ब्रा. १४.५.१५)। 'शिशुमार' का शब्दशः अर्थ 'ग्राह' ही है। इसे 'सिशुमार' नामांतर भी प्राप्त था।

इसका सही नाम शर्कर था। एक बार सृष्टि के समस्त ऋषियों ने इंद्र की स्तुति की, किंतु यह मौन ही रहा। इंद्र के द्वारा स्तुति करने की आज्ञा होने पर, इसने औद्धत्य से कहा, 'तुम्हारी स्तुति करने के लिए मेरे पास समय नहीं है। फिर भी एक बार पानी उछालने के कार्य में जितना समय व्यतीत होगा, उतने ही समय तुम्हारी स्तुति करूँगा'।

किंतु इंद्र की स्तुति प्रारंभ करने पर इसे पता चला कि, इंद्र की जितनी स्तुति की जाये, उतनी ही कम है। फिर इसने तपश्चर्या कर सामविद्या प्राप्त की, एवं इंद्र के स्तुतिवाचक साम की रचना की, जो आगे चल कर इसीके नाम के कारण 'शार्कर-साम' नाम से सुविख्यात हुआ (पं. ब्रा. १४.५.१५)।

२. स्वायंभुव मन्वंतर का एक प्रजापति, जिसकी भ्रमी नामक कन्या का विवाह ध्रुव से हुआ था (भा. ४.१०.११)।

३. भगवान् विष्णु का एक अवतार, जो दोष वसु एवं शर्वरी का पुत्र था (भा. ६.६.१४)।

शिशुरोमन्--तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)।

शिष्ट--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो ध्रुव एवं धन्या का का पुत्र था। अग्नि की कन्या सुच्छाया इसकी पत्नी थी, जिससे इसे कृप, रिपुंजय, वृत्त, एवं वृक नामक चार पुत्र उत्पन्न हुये (मत्स्य. ४.३८)। इसे 'सृष्टि' नामांतर भी प्राप्त था।

शीघ्र--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, अग्निवर्ण राजा का पुत्र, एवं मरु राजा का पिता था (भा. ९.२.५)। भविष्य पुराण में इसे 'शीघ्रगन्तृ' कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम अपवर्मन् दिया गया है।

शीघ्रग--एक पक्षिराज, जो संपाति के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.३५)।

शीघ्रगन्तृ--इक्ष्वाकुवंशीय शीघ्र राजा का नामांतर।

शीततोया--वरुण की पत्नियों में से एक।

शीतवृत्त--वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

शुक--एक महर्षि, जो व्यास पाराशर्य ऋषि का पुत्र था (शुक वैयासकि देखिये)।

२. एक वानर, जो शरभ वानर का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम व्याघ्री था, जिससे इसे ऋक्ष नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड ३.७.२०८)। पुराणों में इसका विस्तृत वंशक्रम प्राप्त है (वानर देखिये)।

३. रावण का एक अमात्य, जो अपने सारण नामक मित्र के साथ उसके गुप्तचर का काम भी निभाता था।

राम-रावण-युद्ध के समय, राम का सैन्यबल, शस्त्रबल आदि की जानकारी प्राप्त करने के लिए, रावण ने इसे एवं सारण को गुप्तचर के नाते राम के सेनाशिबिर में भेजा था। पश्चात् ये दोनों वानर का रूप धारण कर, राम के शिबिर में आ पहुँचे।

बिभीषण ने इनका सही रूप पहचाना, एवं उन्हें गिरफ्तार कर, इन्हें राम के सम्मुख पेश किया। राम ने इनकी निःशस्त्र अवस्था की ओर ध्यान दे कर इन पर दया की, एवं इन्हें देहदण्ड के बिना ही मुक्त किया।

पश्चात् इसने रावण के पास जा कर राम की सैन्य-सामर्थ्य एवं उदारता की काफ़ी प्रशंसा की, एवं उससे संधि करने की प्रार्थना रावण से की। किंतु रावण ने इसकी एक न सुनी, एवं अन्य गुप्तचर राम की सेना के ओर भेज दिये (वा. रा. यु. २५-२९; म. व. २६७. ५२-५३)।

पूर्वजन्मवृत्त--अपने पूर्वजन्म में यह ब्राह्मण था। किन्तु अगस्त्य ऋषि को नरमांसयुक्त भोजन खिलाने की गलती इससे हुई, जिस कारण इसे राक्षसयोनि प्राप्त हुई। आगे चल कर, राम के पुण्यदर्शन के कारण यह मुक्त हुआ।

४. (सू. नरिष्यंत.) एक राजा, जो नरिष्यंत राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. ८.१२५)।

५. गांधारराज सुबल का पुत्र, जो शकुनि का भाई था। भारतीय युद्ध में अर्जुनपुत्र इरावत् ने इसका वध किया (म. भी. ८.२४-३१)।

६. एक ऋषि, जो दीर्घतमस् व्यास ऋषि का पुत्र था। कृष्ण के पुण्यस्पर्श के कारण, अपने अगले जन्म में यह उपनन्द नामक गोप की कन्या बन गया (पद्म. पा. ७२)। पुराणों में प्राप्त अठ्ठाईस व्यासों की नामावलि में इसका नाम अप्राप्य है।

७. एक राजा, जो शर्यातिवंशीय पृषत् राजा का पुत्र था। इसने समस्त पृथ्वी को जीत कर, सौ अश्वमेध यज्ञ किये।

अपने उत्तर आयुष्य में इसने वानप्रस्थाश्रम को स्वीकार किया, एवं शतशृंग पर्वत पर पर्णकुटी में रहने लगा। अस्त्रविद्याशास्त्र में यह पांडवों का गुरु था, एवं इसीने ही भीम को गदायुद्ध, युधिष्ठिर को तोमर युद्ध, नकुल-सहदेवों को खड्गयुद्ध, एवं अर्जुन को धनुर्वेद की शिक्षा प्रदान की थी (म. आ. परि. ६७. २८-३७)।

८. एक ऋषि, जो दक्षिण पांचाल के अणुह एवं ब्रह्मदत्त राजा का समकालीन था। यह व्यास पाराशर्य ऋषि के पुत्र शुक वैयासकि से काफ़ी पूर्वकालीन था।

पौराणिक साहित्य में शुक ऋषि की अनेकानेक पत्नियाँ एवं विस्तृत वंशक्रम प्राप्त है। पार्गिटर के अनुसार, यह सारा परिवार व्यास ऋषि के पुत्र शुक वैयासकि का न हो कर अणुह एवं ब्रह्मदत्त राजा के समकालीन शुक ऋषि का था। शुक वैयासकि जन्म से ही अत्यंत विरागी एवं ब्रह्मचारी था।

परिवार--इसकी निम्नलिखित दो पत्नियाँ थी :-- १. पीवरी, जो विभ्राज अथवा बर्हिषद पितरों की मानसकन्या थी। हरिवंश में इसे सुकाल पितरों की कन्या कहा गया है (ह. वं. १.१८.५८); २. गो (एकशृंगा)। हरिवंश में एकशृंगा गो की नहीं, बल्कि पीवरी का नामांतर बताया गया है।

इसके निम्नलिखित पुत्र थे :-- १. भूरिश्रवस् (भूरिश्रुत, भूरि); २. शंभु; ३. प्रभु; ४. कृष्ण; ५. गौर (गौरप्रभ); ६. देवश्रुत (ब्रह्मांड. ३.८.९३; वायु. ७०.८४-दे. भा. १.१४; नारद. १.५८)।

इसकी कन्या का नाम कृत्वी (कीर्तिमती, योगमाता, योगिनी) था, जो अणुह राजा की पत्नी थी (ह. वं. १. २३.६; वायु. ७३.२८-३०)। अणुह राजा से उसे ब्रह्मदत्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. १५)।

शुक वैयासकि--एक महर्षि, जो व्यास पाराशर्य नामक सुविख्यात ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। व्यास ने इसे संपूर्ण वेद तथा महाभारत की शिक्षा प्रदान की थी (म. आ. ५७.७४-७५)। अपने ज्ञान एवं नैष्ठिक ब्रह्मचर्य के कारण, यह प्राचीन काल से प्रातःस्मरणीय विभूति माना जाता है। इसी कारण, पुराणों में इसे 'महातप,' 'महायोगी,' एवं 'योगशास्त्र का प्रणयिता' कहा गया है (वायु ७३.२८)।

जन्म--घृताची अप्सरा (अरणी) को देख कर व्यास महर्षि का वीर्य स्खलित हुआ, जिससे आगे चल कर शुक का जन्म हुआ (म. आ. ५७.७४)। महाभारत में अन्यत्र, व्यास के वीर्य के द्वारा अरणीकाष्ठ से इसका जन्म होने का निर्देश प्राप्त है (म. शां. ३११.९-१०)।

विद्याध्ययन--इसका लौकिक गुरु बृहस्पति था (म. शां. ३११.२३)। अपने पिता के आदेशानुसार, इसने अपने गुरु से मोक्षतत्त्व का उपदेश प्राप्त किया था (म. शां. ३१२)। शिव के द्वारा इसका उपनयनसंस्कार संपन्न हुआ था (म. शां. ३११.१९)। व्यास ने इसे भागवत सिखाया था।

इसके उपनयन के समय इंद्र ने इसे कमंडलु एवं कषायवस्त्र प्रदान किये। बृहस्पति ने इसे वेदादि का ज्ञान दिया था, एवं उपनिषद, वेदसंग्रह, इतिहास, राजनीति एवं मोक्षादि धर्म आदि का ज्ञान स्वयं व्यास ने इसे दिया था। आगे चल कर ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए, यह बहुलाश्व जनक राजा के पास गया। वहाँ जनक राजा ने इसे स्त्री-जाल में फँसाने की कोशिश की, किन्तु उसका यह प्रयत्न असफल ही रहा। इसने नारद से भी आत्मकल्याण का उपाय पूछा था (म. शां. ३१८)।

विरक्ति--यह शुरू से ही अत्यंत विरक्त था, एवं उपनयन के पूर्व ही इसने जीवन के समस्त भोगवस्तुओं का त्याग किया था। अपने पिता की आज्ञा से यह नग्नावस्था में कुरुजांगल एवं मिथिला नगरी गया था। मिथिला नगरी

में जनक राजा ने इसका यथोचित स्वागत किया, एवं इससे ज्ञान-विज्ञानविषयक अनेकानेक प्रश्न पूछे (म. शां. ३१३.३-२१)। मिथिला नगरी से लौट कर यह पुनः एक बार अपने पिता व्यास के पास आया (म. शां. ३१४.२९)।

भागवत का कथन—शुक के जीवन से संबंधित घटनाओं में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण घटना, व्यास पाराशर्य से इसे हुई भागवतपुराण की प्राप्ति मानी जाती है। भागवत ग्रंथ की प्राप्ति होने के पूर्व ही शुक परमज्ञानी था, किंतु फिर भी यह पुराण इसने अत्यंत भक्तिभावना से सुना, एवं उसे सुनते ही इसका हृदय भक्तिभावना से भर आया (भा. १.७.८)। पश्चात् यह पुराण इसने परिक्षित् राजा को सुनाया था। पुराण सुनाते समय, यह तेजस्वी, तरुण एवं आजानबाहु प्रतीत होता था (भा. १. १९.२६-२८)।

भागवत पुराण की रचना अन्य पुराणों से भिन्न है। अन्य पुराणो में जहाँ परमेश्वरप्राप्ति के लिए उपासना, चिंतन एवं तपस्या पर जोर दिया गया है, वहाँ भागवत में भक्ति को प्राधान्य दिया गया है। यही भक्तिप्राधान्यता भागवत का प्रमुख वैशिष्ट्य है। इसी कारण, भागवत को 'अखिलश्रुतिसार' एवं 'सर्ववेदान्तसार' कहा गया है (भा. ३.२.३; १२.१३.१२)। इस ग्रंथ के संबंध में प्रत्यक्ष भागवत में कहा गया है—

> राजन्ते तावदन्यानि पुराणानि सतां गणे।
> यावन्न दृश्यते साक्षाच्छ्रीमद्भागवतं परम् ॥
> (भा. १२.१३.१४)।

भागवत के अनुसार, इस ग्रंथ के कथन से स्वयं व्यास को भी अत्यधिक समाधान प्राप्त हुआ। परमेश्वरप्राप्ति का 'साधनचतुष्टय' इस ग्रंथ से पूर्ण होने के कारण, अपने जीवन का सारा कार्य परिपूर्ण होने की धारणा उसके मन में उत्पन्न हुई।

व्यास-शुकसंवाद—महाभारत में 'शुकानुप्रश्न' नामक एक उपाख्यान प्राप्त है, जहाँ शुक के द्वारा अपने पिता व्यास से पूछे गये अनेकानेक प्रश्नों का, एवं व्यास के द्वारा दिये गये शंकासमाधानों का वृत्तांत प्राप्त है। उस उपाख्यान में चर्चित प्रमुख विषय निम्नप्रकार है:—१. ज्ञान के साधन एवं उनकी महिमा; २. योग से परम पद की प्राप्ति; ४. कर्म एवं ज्ञान में अंतर; ५. ब्रह्मप्राप्ति के उपाय; ६. ज्ञानोपदेश में ज्ञान का निर्णय; ७. प्रकृति-पुरुष विवेक; ८. ब्रह्मवेत्ता के लक्षण; ९. मन एवं बुद्धि के गुणों का वर्णन (म. शां. २२४-२४७)।

शुक-निर्वाण—इसके महानिर्वाण का विस्तृत वर्णन महाभारत में प्राप्त है, जो सत्पुरुष को प्राप्त होनेवाले 'योगगति' का अपूर्व शब्दकाव्य माना जाता है। अपने पिता वेदव्यास को अभिवादन कर यह कैलास पर्वत पर ध्यानस्थ बैठ गया। पश्चात् यह वायुरूप बना, एवं उपस्थित लोगों के आँखो के सामने आकाशमार्ग से सूर्य (आदित्य)-लोक में प्रविष्ट हुआ। इसके पिता व्यास 'हे शुक' कह कर शोक करने लगे, एवं बाकी सभी लोग अनिमिष नेत्रों से यह अपूर्व दृश्य देखते ही रहे (म. शां ३१९-३२०)।

व्यास से तुलना—शुक सदैव नग्नस्थिति में रहता था। इसके सोलह वर्षों तक नग्नावस्था में रहने का निर्देश प्राप्त है (भा. १.१९.२६)। इसी नग्न अवस्था में यह परिक्षित् राजा से मिलने गया था। इसे नग्न अवस्था में सरोवर पर स्नान के लिए जाते समय वहाँ के उपस्थित लोग लज्जित नहीं होते थे, बल्कि व्यास को वैसी अवस्था में देखने पर उन्हें लज्जा का अनुभव होता था। इसका कारण यही था कि, शुक स्त्री पुरुषों के भेदों के अतीत अवस्था में पहुँच गया था, जिस अतीत अवस्था में व्यास नहीं पहुँचा था (म. शां. ३२०. २८-३०; भा. १.४.४)।

शुकनाभ—रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

शुकी—कश्यप एवं ताम्रा की कन्या। इसका विवाह गरुत्मत् से हुआ था। सृष्टि के सारे शुक (तोते) इसकी संतान माने जाते हैं। इसके पुत्रों में सुख, सुनेत्र, विशिख, सुरूप, सुरस, एवं बल प्रमुख माने जाते थे (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

शुक्ति आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. १२. ५.१६)।

शुक्र उशनस्—भार्गवकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो दैत्यों का एक सुविख्यात आचार्य था। यह भृगु ऋषि एवं हिरण्यकशिपु की कन्या दिव्या का पुत्र था। पौराणिक साहित्य में इसे कवि का पुत्र भी कहा गया है, जिस कारण इसे 'काव्य' पैतृक नाम प्राप्त था। यह एवं च्यवन भृगुकुल में उत्पन्न ऋषियों में सर्वाधिक प्राचीन ऋषि माने जाते हैं।

दैत्यों का आचार्य—महाभारत एवं पुराणों में इसे दैत्यों का गुरु, आचार्य, उपाध्याय, पुरोहित एवं याजक कहा गया है।

यह शुरू से ही असुरों का पक्षपाती था। वामन अवतार के समय, बलि वामन को त्रिपादभूमि देने के लिए सिद्ध हुआ। उस समय, इस क्रिया में रुकावट पैदा करने के हेतु यह झारी के मुख में जा बैठा। उस समय बलि ने दर्भाग्र से झारी का मुख साफ़ करना चाहा, जिस कारण इसकी एक आँख फूट गई। इसी कारण इसे 'एकाक्ष' कहते थे (नारद. १.११)।

संजीवनी विद्या--यह एवं अंगिरसपुत्र जीव, अंगिरस् ऋषि के शिष्य थे। किन्तु विद्यादान के समय अंगिरस् ऋषि काफ़ी पक्षपात करने लगा, जिस कारण इसने उसका शिष्यत्व छोड़ दिया, एवं यह शिवाराधना करने लगा। पश्चात् शिव से इसे मृत-संजीवनी विद्या प्राप्त हुई, जिसके आधार पर देवासुर संग्राम में इसने असुरों को अनेक वार विजय प्राप्त करायी। पश्चात् इसकी यह संजीवनी विद्या बृहस्पतिपुत्र कच ने इससे प्राप्त की (कच एवं देवयानी देखिये)। कच से वह विद्या उसके पिता देवगुरु बृहस्पति ने, एवं बृहस्पति से समस्त देव-पक्षों ने प्राप्त की। इस प्रकार असुरों का अजेयत्व विनष्ट हुआ।

लिंग पुराण में इसे अघोर ऋषि का पुत्र कहा गया है, एवं इसके द्वारा हिरण्याक्ष को 'निग्रहविधि' बताये जाने का निर्देश भी वहाँ प्राप्त है (लिंग. २.५०)।

बार्हस्पत्य-शास्त्र--इसने १००० अध्यायोंवाले 'बार्हस्पत्य-शास्त्र' का निर्माण किया था, जो आगे चल कर अन्य आचार्यों के द्वारा संक्षिप्त किया गया (म. शां. ९१-९२)।

परिवार--इसकी पितृकन्या गो, एवं इंद्रकन्या जयंती नामक दो पत्नियाँ थी।

(१) **जयंती की संतान**--जयंती से इसे देवयानी नामक कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसका विवाह ययाति राजा से हुआ था (ययाति देखिये)।

(२) **गो की संतान**--गो से इसे निम्नलिखित चार पुत्र उत्पन्न हुए थेः-१. त्वष्टृ; २. वरुत्रिन्; ३. शण्ड; ४. मर्क। ये चार ही पुत्र एवं उनके संतान असुरों के पक्षपाती होने के कारण विनष्ट हुए, एवं इस प्रकार भार्गव वंशांतर्गत शुक्र-शाखा विनष्ट हुई।

शुक्र जाबाल--एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३.७.७)। यह 'जबाला' का वंशज होने के कारण, इसे 'जाबाल' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

शुक्र पांचाल--पांचाल देश का क्षत्रिय, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया था (म. क. ४०.४६-४८)। इसके अश्व, धनुष, कवच एवं ध्वज सफेद थे (म. द्रो. २२.४९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'शंकु'।

शुक्र--(स्वा. उत्तान) एक राजा, जो हविर्धान एवं हविर्धानी का पुत्र था (भा. ४.२४.८)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

४. पांचालदेशीय शुक्र नामक योद्धा का नामांतर (शुक्र पांचाल देखिये)।

शुंग--एक राजवंश, जिसका आद्य संस्थापक पुष्यमित्र था। मौर्यवंश का अंतीम राजा बृहदश्व का पुष्यमित्र सेनापति था, जिसने बृहदश्व का वध कर अपने स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। इस वंश में उत्पन्न निम्नलिखित दस राजाओं ने ११२ वर्षों तक राज्य कियाः- पुष्यमित्र, वसुज्येष्ठ, वसुमित्र, अंतक, पुलिंदक, वज्रमित्र, समाभाग, देवभूमि (मत्स्य. २७२.२६-३२)।

शुचन्ति--अश्विनों का एक आश्रित (ऋ. १. ११२.७)।

शुचि--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार अंधक राजा का पुत्र था। पाठभेद (मत्स्यपुराण)--'शशि'।

२. (स्वा. उत्तान.) एक ऋषि, जो भरद्वाज एवं अंगिरस् कुल में उत्पन्न हुआ था। वसिष्ठ ऋषि के शाप के कारण, इसे मनुष्य योनि में जन्म प्राप्त हुआ, एवं यह विजिताश्व राजा का पुत्र बन गया (भा. ४.२४.४)।

३. (सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार शतद्युम्न जनक राजा का पुत्र था। पाठभेद (वायुपुराण)--'मुनि' (भा. ९.१३.२२)।

४. विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५४)।

५. उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

५. भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

७. भौत्य मन्वन्तर का इंद्र (भा. ८.१३.१४)।

८. विकुंठ देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.५७)।

९. सुधामन् देवों में से एक।

१०. (सो. पूरूरवस्.) एक राजा, जो अनेनस् राजा का पौत्र, एवं शुद्ध राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम त्रिककुद् था।

११. (सो. मगध. भविष्य) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार विप्र राजा का, वायु के अनुसार महाबाहु राजा का, ब्रह्मांड के अनुसार रिपुंजय राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार विभु राजा का पुत्र था। इसके एक पुत्र का नाम क्षेम (क्षेम्य) था (भा. ९.२२.४७-४८; विष्णु. ४.२३.५-७)

१२. एक वणिकूल का मुख्य, जो वन में दमयन्ती से सहजवश मिला था।

१३. एक भार्गव देव, जो भृगु ऋषि के पुत्रों में से एक था।

१४. भौत्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

१५. कश्यप एवं ताम्रा की एक कन्या।

१६. एक अग्नि (म. व.२११.२४)।

१७. एक अप्सरा, जो वेदशिरस् ऋषि की पत्नी थी (वेदशिरस् २. देखिये)।

शुचिका--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में यह उपस्थित थी (म. आ. ११४.५१)।

शुचिद्रथ--पूरुवंशीय कविरथ राजा का नामांतर।

शुचिविद्य--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरूरवस् राजा का पुत्र था (मत्स्य. २४.३४)।

शुचिवृक्ष गोपालायन--एक आचार्य, जो वृद्धद्युम्न आभिप्रतारिण नामक राजा का पुरोहित था (ऐ. ब्रा. ३. ४८.९; मै. सं. ३.१०.४)।

शुचिश्रवस्--एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५.५३)।

२. स्वायंभुव मन्वंतर के अजित देवों में से एक।

शुचिष्मत्--कर्दम प्रजापति का पुत्र, जो उसे समुद्र से प्राप्त हुआ था। शिव ने इसे समुद्र का आधिपत्य एवं पश्चिम दिशा का अधिराज्य प्रदान किया था (स्कंद. २. ४.१-[illegible])।

शुचिस्मिता--कुबेरसभा की एक अप्सरा (म. स. १०.१०)।

शुद्ध--(सो. आयु.) एक राजा, जो अनेनस् राजा का पुत्र, एवं शुचि राजा का पिता था (भा. ९.१७.११)।

२. भौत्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

शुद्धोद--(सू. इ.. भविष्य.) एक राजा, जो वायु, विष्णु, एवं भागवत के अनुसार शाक्य राजा का पुत्र था। भविष्य एवं मत्स्य में इसे शुद्धोदन कहा गया है। इसके पुत्र का नाम लांगल (राहुल, अथवा पुष्कल) था (भा. ९.१२.१४; वायु. ९९. २८८)।

शुद्धोदन--गौतम बुद्ध का पिता (अग्नि. १६)' इसे ' शुद्धोद ' नामांतर भी प्राप्त था।

शुनःपुच्छ--शुनःशेप ऋषि का भाई (ऐ. ब्रा. ७.१५.७; सां. श्रौ. ५.२०.१)।

शुनःशेप आजीगर्ति--एक सुविख्यात ऋषि, जो विश्वामित्र ऋषि का भतीजा एवं आगे चल कर उसका प्रमुख शिष्य था। विश्वामित्र का शिष्य होने के पश्चात्, यह देवरात नाम से प्रसिद्ध हुआ। शुनःशेप शब्द का शब्दशः अर्थ ' कुत्ते की पूँछ ' होता है।

भृगुकुल में उत्पन्न ऋचीक अजीगर्त नामक ऋषि का यह मँझला पुत्र था, एवं इसके अन्य दो भाइयों के नाम शुनःपुच्छ, एवं शुनोलांगूल थे। इसे ' आजीगर्ति, ' एवं ' सौयवसि ' पैतृक नाम प्राप्त थे। ऋग्वेद के कई सूक्तों का प्रणयन इसके द्वारा हुआ है (ऋ. १.२४. ३०; ९.३)

हरिश्चन्द्राख्यान--इसके जीवन से संबंधित विस्तृत कथा ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ७.१३-१८; सां. श्रौ. १५.२०-२१; १६.११.२)। हरिश्चन्द्र राजा को पुत्र न होने के कारण, उसने वरुण के पास मनौती मानी थी कि, अगर उसे पुत्र होगा, तो वह उसे वरुण को बलिस्वरूप में प्रदान करेगा। आगे चल कर, हरिश्चन्द्र को रोहित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, किन्तु वह मनौती पूरी करने में देर लगाने लगा। अपने पिता के द्वारा कबूल की गयी यह मनौती की कथा ज्ञात होते ही, रोहित वन में भाग गया।

पश्चात हरिश्चन्द्र को उदररोग ने ग्रस्त किया। तब रोहित ने वरुण को बलि देने के लिए अपने स्थान पर अजीगर्तपुत्र शुनःशेप को नियुक्त किया, एवं इसके पिता को विपुल द्रव्य दे कर, बलिप्राणी के नाते इसे खरीद लिया।

पश्चात् इसे बलिस्तंभ में बाँध भी दिया गया। इतने में विश्वामित्र ऋषि ने इसे देवताओं की प्रार्थना करने के लिए कहा। शुनःशेप के द्वारा की गयी ये प्रार्थनाएँ ऋग्वेद के इसीके द्वारा रचित सूक्त में प्राप्त हैं।

पश्चात् विश्वामित्र ने इसे बलिस्तंभ से मुक्त किया, एवं ' देवरात ' नाम से इसे अपना पुत्र एवं प्रमुख शिष्य मान कर, इसे ' जह्नु ' एवं ' गाधिकुल का उत्तराधिकारी

बनाया। विश्वामित्र का पुत्र बनने के कारण, इसका भृगुगोत्र बदल कर, यह विश्वामित्रगोत्रीय बन गया।

ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त इस कथा का संबंध, ऋग्वेद में प्राप्त इसके सूक्तों से दिखाने का सफल प्रयत्न वेदार्थ-दीपिका में किया गया है। ऋग्वेद के अन्य एक सूक्त में भी इसके पाशमुक्त बन जाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.२.७ सायणभाष्य)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट इसकी उपर्युक्त कथा अनेक बार सविस्तृत रूप में दी गयी है (म. अनु. ३; शां. २९४; दे. भा. ७. १४-१७; भा. ९.७;१६; वा. रा. बा. ६१-६२; ह. वं. १.२७; विष्णु. ४.७; ब्रह्म. १०)।

शुनःशेप कथा का अन्वयार्थ--कई अभ्यासकों के अनुसार, वैदिक साहित्य में वर्णित शुनःशेप की कथा रूपकात्मक है, जहाँ दीर्घरात्रि के पश्चात् अस्तमान होनेवाले सूर्य की ओर संकेत किया हुआ प्रतीत होता है। इसके द्वारा विरचित ऋग्वेद के सूक्त में, इसे उषस् के द्वारा वरुण के पाशों से मुक्त किये जाने का निर्देश प्राप्त है, जो इस तर्क को पुष्टि देता है (ऋ. १.२४)।

शुनःसख--इंद्र का एक तापसवेशधारी रूपांतर। वृषादर्भि राजा ने एक कृत्या का निर्माण कर, सप्तर्षियों का वध करना चाहा। उस समय शुनःसख रूपधारी इंद्र ने उस कृत्या का वध किया, एवं इस प्रकार सप्तर्षियों का संरक्षण किया (म. अनु. १४२.४५)।

शुनक--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार ऋतु राजा का, एवं विष्णु तथा वायु के अनुसार सुनय राजा का पुत्र था (भा. ९.१३.२६)। इसके पुत्र का [illegible] वीतहव्य था।

२. (?. काश्य.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार गृत्समद राजा का पुत्र, एवं शौनक राजा का पिता था (भा. ९.१७.३)।

महाभारत में इसे एक महर्षि कहा गया है, एवं इसके पिता एवं माता का नाम क्रमशः रुरु, एवं प्रमद्वरा कहा गया है (म. आ. ८)। पुराणो में रुरु राजा का नाम गलती से छोड़ दिया गया है, जिस कारण इसे गृत्समद राजा का पुत्र कहा कया है।

आगे चल कर यह महर्षि बन गया, एवं इसके वंश के लोग अपने को क्षत्रियब्राह्मण कहने लगे। सुविख्यात शौनक ऋषि इसका ही पुत्र था (म. अनु. ३०.६५)। शुनक स्वयं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में एक ऋषि के नाते उपस्थित था (म. स. ४.१५)।

३. एक राजा, जो चंद्रहन्तृ असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.३५)। इसे अपने पूर्वज हरिणाश्व राजा से एक खड्ग की प्राप्ति हुई थी, जो इसने आगे चल कर उशीनर राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७७)। चंद्रतीर्थ नामक तीर्थस्थान में इसे मुक्ति प्राप्त हुई थी।

४. (प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो प्रद्योत राजवंश का संस्थापक माना जाता है। यह प्रारंभ में रिपुंजय राजा का अमात्य था, जिसका इसने वध कर अपने प्रद्योत नामक पुत्र को राजगद्दी पर बिठाया (रिपुंजय ४. देखिये)।

५. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा में से पथ्य नामक आचार्य का शिष्य था।

शुनस्कर्ण बाष्किह--एक राजा, जो शिबि अथवा बष्किह राजा का पुत्र था। इसके नाम से 'शुनस्कर्णस्तोम' नामक एक याग प्रसिद्ध है (पं. ब्रा. १७.१२.६)। इसने सर्वस्वार नामक एक यज्ञ किया था, जिस कारण निरोगी अवस्था में इसे मृत्यु प्राप्त हुई (बौ. श्रौ. २१.१७)।

शुनहोत्र भारद्वाज--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६. ३३-३४)।

शुनोलांगूल--एक ऋषि, जो अजीगर्त ऋषि का कनिष्ठपुत्र, एवं शुनःशेष ऋषि का छोटा भाई था (ऐ. ब्रा. ७.१५; सां. श्रौ. १५.२०.१)।

शुभ--धर्म एवं श्रद्धा के पुत्रों में से एक।

२. रैवत मन्वन्तर का एक देवगण।

३. जालंधर दैत्य का सेनापति (पद्म. उ.४)।

शुभा--बृहस्पति की दो पत्नियों में से एक।

२. अंगिरस् ऋषि की शिवा नामक पत्नी का नामांतर (म. व. २०८.१)।

शुभांगद--द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित एक क्षत्रिय (म. आ. १७७.२०)।

शुभांगी--कुरु राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम विदूरथ था।

शुभानन--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

२. पितरों में से एक।

शुभ्र--वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में एक।

२. रैवत मन्वन्तर के अवतार का पिता।

शुंभ—एक असुर, जो तारकासुर का सेनापति था। इसका वाहन मेंढ़क था। यह दुर्गा के द्वारा मारा गया (मत्स्य. १५१.५)।

२. रामसेना का एक वानर।

३. जालंधर दैत्य का प्रिय दैत्य। स्वर्ग जीतने के पश्चात् जालंधर ने इसे अमरावती का राज्य प्रदान किया था (पद्म. ३.८)।

शुंभ-निशुंभ—पाताललोक में रहनेवाले राक्षसद्वय। इनके आश्रितों में चंड-मुंड, रक्तबीज एवं धूम्रलोचन आदि प्रमुख थे। ब्रह्मा ने इन्हें वरप्रदान किया था कि, सृष्टि के किसी भी पुरुष के लिए ये अवध्य रहेंगे। इस वर-प्रसाद के कारण ये अत्यंत उन्मत्त बने, एवं अपने गुरु भृगु की सलाह के अनुसार पाताललोक में राज्य करने लगे। इनके राज्य में शुंभ राजा का, एवं निशुंभ अमात्य का काम करने लगे। अन्त में कालिका देवी ने इनका इनके परिवार के सभी राक्षसों के साथ वध किया (दे. भा. ५.२१-३१; स्कंद. १.३.२-१७; मार्क. ८६)।

शुल्व—उदंक ऋषि का पिता।

शुष्क—गोकर्ण क्षेत्र में रहनेवाला एक मुनि। भगीरथ के द्वारा गंगा भूतल में लायी जाने पर, समुद्र का पानी बढ़ने लगा, एवं पृथ्वी पर स्थित सारे समुद्रवर्ती तीर्थक्षेत्र डूबने लगे। उस समय अन्य सभी ऋषियों के साथ यह महेंद्र पर्वत पर रहनेवाले परशुराम से मिलने गया। इसने परशुराम से प्रार्थना कि, वह हाथ में शस्त्र धारण कर समुद्र को हटाये, एवं इस प्रकार तीर्थक्षेत्रों का रक्षण करे। इसकी प्रार्थना के अनुसार परशुराम ने गोकर्ण क्षेत्र का पुनरुद्धार किया (ब्रह्मांड. ३.५७-५८)।

शुष्कभृंगार—एक आचार्य (कौ. उ. २.६; सां. श्रौ. १७.७.१३)।

शुष्करेवती—एक देवी, जिसने अंधकासुर का वध किया था (अंधक देखिये)।

शुष्ण—एक असुर, जिसका इंद्र ने कुत्स के संरक्षण के लिए वध किया था (ऋ. २. १९.६)।

शुष्मायण सोम—अट्ठाईस व्यासों में से एक।

शुष्मिण—शिबियों के राजा अमित्रतपन का पैतृक नाम।

शूद्र—एक जातिसमूह, जो सिंकदर के आक्रमण के समय उत्तर भारत में निवास करती थी। युनानी साहित्य में इनका निर्देश 'सोद्राय' नाम से किया गया है, एवं मूषक लोगों के साथ आधुनिक सिंध प्रदेश में इनका निवासस्थान बताया गया है। पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में इन लोगों का निर्देश आभीर लोगों के साथ प्राप्त है (महा. १.२५२)।

पौराणिक साहित्य में—महाभारत में इनका निर्देश आभीर लोगों के साथ प्राप्त है, एवं इनका निवासस्थान पश्चिम राजपुताना प्रदेश में 'विनशन-तीर्थ' के समीप बताया गया है (म. श. ३७.१)। मार्कंडेय पुराण में इन्हें अपरान्त प्रदेश का निवासी बताया गया है, एवं इनका निर्देश बाल्हीक, वातधान, आभीर, पल्लव लोगों के साथ प्राप्त है।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, नकुल ने अपने पश्चिम दिग्विजय के समय इन्हें जीता था (म. स. ३२. १०)। भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे एवं कर्ण के सेनादल में समाविष्ट थे (म. द्रो. ६.६-१६)।

शूद्रा—अत्रि ऋषि की दस पत्नियों में से एक, जो भद्राश्व एवं घृताची की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.८.७५)

शून्यपाल—एक ऋषि, जो हस्तिनापुर जानेवाले श्रीकृष्ण से मिला था।

शून्यबन्धु—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार तृणबिन्दु राजा का पुत्र था।

शूर—(सो. यदु. सह.) एक राजा, जो विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार हैहय राजा कार्तवीर्यार्जुन के पाँच पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.४१.१३; मत्स्य. ४३. ४६)। परशुराम ने इसका वध किया।

२. (सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार द्रुह्यु राजा का पुत्र था।

३. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वसुदेव का पिता एवं कृष्ण का पितामह था। भागवत के अनुसार यह देवमीढ राजा का, एवं विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार देवमीढुष राजा का पुत्र था। कई ग्रंथों में इसे चित्ररथ राजा का पुत्र कहा गया है। संभवतः 'चित्ररथ' देवमीढ राजा का ही नामान्तर था (म. अनु. १४७.२९-३२)। इसे राजाधिदेव नामान्तर भी प्राप्त था।

परिवार—आर्यक नाग की कन्या भोजा या मारिषा इसकी पत्नी थी, जिससे इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:—१. वसुदेव; २. देवभाग; ३. देवश्रवस्; ४. आनक; ५. सृंजय; ६. श्यामक; ७. कंक; ८. शमीक; ९. वत्सक; १०. वृक।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित कन्याएँ भी थीः-१. पृथा, जो इसने अपने मित्र कुंतिभोज राजा की गोद में दी थी, एवं इसी कारण जो कुंती नाम से प्रसिद्ध हुई (म. आ. १०४.१-३; म. द्रो. ११९.६-७) २. श्रुतदेवा (श्रुतवेदा); ३. श्रुतश्रवा; ४. राजाधिदेवा (ह. वं. १.३४.१७-२३; म. आ. परि. १.४३.३; १०४.१; भा. ९.२४.२८-३१)।

अन्य पत्नियाँ—वायु में इसकी आश्मकी, भाषी एवं माषी नामक अन्य तीन पत्नियों का निर्देश प्राप्त है। इनमें से भाषी, भोजा का ही नामांतर प्रतीत होता है। अपनी इन पत्नियों से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थेः-१. **आश्मकीपुत्रः**-देवमानुष; २. **भाषीपुत्रः**-वसुदेव, देवभाग, देवश्रवस्, अनादृष्टि, कड, नंदन भृंजिन, श्याम, शमीक, गंडुष; ३. **माषीपुत्रः**—देवमीढुष (वायु. ९६. १४३-१४८)।

४. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो इलिन् एवं रथंतरी के पाँच पुत्रों में से एक था। इसके अन्य चार भाइयों के नाम दुष्यन्त, भीम, प्रवसु एवं वसु थे (म. आ. ८९.१४-१५)।

५. सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ राजा का साथी था। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदी-हरण के समय अर्जुन ने इसका वध किया (म. व. २५५.२७)।

६. एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७२)।

७. (सो. यदु. वसु.) वसुदेव एवं मदिरा के पुत्रों में से एक।

८. (सो. यदु. वसु.) कृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक।

९. मगधदेश का एक राजा, जो दशरथ की पत्नी सुमित्रा का पिता था। दशरथ के द्वारा किये गये पुत्र-कामेष्टि यज्ञ का निमंत्रण इसे भेजा गया गया था (वा. रा. बा. १३-२६)।

शूरतर—एक राजा, जिसने पटच्चर राक्षस का वध किया था। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं इसके रथ के अश्व हरे रंग के थे (म. द्रो. २२. ५३)।

शूरभू अथवा **शूरभूमि**-कंस की कन्याओं में से एक।

२. उग्रसेन राजा की कन्या, जो वसुदेवभ्राता श्यामक की पत्नी थी।

शूरवीर माण्डूक्य—एक आचार्य (ऐ. आ. ३.१. ३-४; सां आ. ७.२.८.९-१०)। पाठभेद-'शौरवीर'।

शूरसेन—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार शत्रुघ्न राजा का पुत्र था। यह मथुरा में राज्य करता था, एवं इसीके ही कारण मधुवन में इसके राज्य को 'शूरसेन देश' नाम प्राप्त हुआ था।

२. कर्णपुत्र वृषसेन का नामान्तर।

३. हैहय राजा शूर का नामान्तर।

४. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था। भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये क्रौंचव्यूह के ग्रीवाभाग में यह दुर्योधन के साथ खड़ा था (म. भी. ७१.१७)।

५. प्रतिष्ठानपुर का एक सोमवंशीय राजा। इसे कोई पुत्र न था, जिसकी प्राप्ति के लिए इसने अनेकानेक उपाय किये। अंत में इसे पुत्र के रूप में एक सर्प प्राप्त हुआ। अपने पुत्र का सर्परूप गुप्त रखने के लिए, इसने उसके उपनयन विवाहदि संस्कार किये। अंत में गौतमी-देवी की कृपा से इसके पुत्र को मनुष्यरूप प्राप्त हुआ (ब्रह्म. १११)।

६. मध्यदेश के सहस्र ग्राम का राजा, जिसकी कथा 'चतुर्थी माहात्म्य' कथन करने के लिए गणेश पुराण में दी गयी है (गणेश. १.५६)।

७. पाण्डवों के पक्ष का एक पांचालदेशीय योद्धा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ३२.३७)।

शूरसेनी—पूरुवंशीय प्रवीर मनस्यु राजा की पत्नी। इसे श्येनी नामान्तर भी प्राप्त था। पाठभेद-'सौवीरी' (म. आ. ८९.६)।

शूर्पणखा अथवा **शूर्पनखी**—एक राक्षसी, जो विश्रवस् एवं कैकसी की कन्या, तथा रावण, विभीषण एवं कुंभकर्ण की बहन थी। खर एवं दूषण राक्षस इसके मौसेरे भाई थे। महाभारत में इसकी माता का नाम राका बताया गया है, एवं खर एवं दूषण-इसके सगे भाई बताये गये हैं (म. व. २५९.१४)।

कालकेय राक्षसों का अधिपति विद्युज्जिह्व राक्षस से इसका विवाह हुआ था। आगे चल कर इसका पति रावण के हाथों अश्मनगरी में गलती से मारा गया। इस कारण यह लंका नगरी में रहने लगी। कालोपरांत यह अपने मौसेरे भाई खर के साथ दण्डकारण्य में रहने लगी (वा. रा. उ. २३-२४)।

दण्डकारण्य में—वनवास के समय राम के दण्डकारण्य में आने पर यह उस पर मोहित हुई। किन्तु एकपत्नीव्रती राम ने इसकी प्रणयाराधना की मज़ाक उड़ायी, एवं इसकी

फजिहत करने के हेतु इसे लक्ष्मण से विवाह करने के लिए कहा।

लक्ष्मण ने इसकी और भी मजाक उड़ायी, जिस कारण क्रुद्ध हो कर यह सीता को मारने के लिए दौड़ी। उसी क्षण लक्ष्मण ने इसके नाक एवं कान काट कर इसे विरूप बनाया।

राम एवं लक्ष्मण की शिकायत ले कर यह अपने भाई खर के पास दौड़ी। अपने बहन के अपमान का बदला लेने के लिए, खर ने राम पर आक्रमण किया, जिसमें खर स्वयं मारा गया (वा. रा. अर. १७-१९; खर १. देखिये)।

रावण की राजसभा में—पश्चात्, यह पुनः एक बार लंका में गयी, एवं इसने रामलक्ष्मण के द्वारा दण्डकारण्य में किये गये सारे अत्याचारों की कहानी रावण से बतायी (वा. रा. अर. ३३-३४; म. व. २६१.४५-५१)। उसी समय इसने सीता के सौंदर्य की प्रशंसा रावण को सुनायी, एवं राम से बदला लेने के लिए सीताहरण की मंत्रणा उसे दी।

रावण के द्वारा सीताहरण किये जाने पर, इसने उसे रावण की श्रेष्ठता बता कर उसका वरण करने के लिए बार-बार आग्रह किया था (वा. रा. सुं. २४; ४३)।

शूलिन्--एक शिवावतार, जो वैवस्वत मन्वन्तर के चौबीसवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। यह अवतार कलियुग में नैमिषारण्य में अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थेः--१. शालिहोत्र; २. अग्निवेश; ३. युवनाश्व; ४. शरद्वसु।

शूष वार्ष्णेय--एक आचार्य, जिसे आदित्य ने 'सवित्राग्नि' का उपदेश दिया था (तै. ब्रा. ३.१०; ९. १५)।

शूष वाह्नेय भारद्वाज--एक आचार्य, जो अराल दार्तेय शौनक नामक आचार्य का शिष्य था (वं. ब्रा. २)।

शृगाल--स्त्रीराज्य का अधिपति, जो कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में उपस्थित था (म. शां. ४.७; पाठ-सृगाल)।

शृगाल वासुदेव--करवीरपुर का एक राजा, जो कृष्ण से अत्यधिक द्वेष करता था। इसकी पत्नी का नाम पद्मावती, एवं पुत्र का नाम शक्रदेव था। परशुराम की आज्ञा से कृष्ण ने इसका वध किया, एवं करवीरपुर की राजगद्दी पर इसके पुत्र शक्रदेव को बिठाया (ह. वं. २. ४४)।

शृंग--एक शिवपार्षद, जो वेताल एवं कामधेनु का पुत्र था। इसकी शिवभक्ति से प्रसन्न हो कर शिव ने इसे अपना पार्षद बनाया।

यह सृष्टि के समस्त गो-संतति का पिता माना जाता है, जो इसे वरुण के घर में रहनेवाली सुरभि-कन्याओं से उत्पन्न हुई थी।

२. ऋश्यशृंग ऋषि का नामान्तर।

शृंगवत्--गालव ऋषि का पुत्र, जिसने एक रात्रि के लिए वृद्धकन्या नामक तपस्विनी को अपनी पत्नी बनाया था (म. श. ५१.१४; वृद्धकन्या देखिये)। वृद्धकन्या के चले जाने पर उसकी स्मृति से यह अत्यंत दुःखी हुआ, एवं देहत्याग कर स्वर्गलोक चला गया।

शृंगवृष—कुंडपायिन् ऋषि के कुल में उत्पन्न एक ऋषिक। इसके उदर से इंद्र ने जन्म लिया था (ऋ. ८. १७.१३)। लुडविग के अनुसार, यह पृदाकुसानु नामक ऋषि का पिता था (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद ३. १६१)।

शृंगवेग--कौरवकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५७. १३)।

शृंगिन्--एक ऋषि, जो आंगिरसकुलोत्पन्न शमीक ऋषि का पुत्र था। इसे गविजात नामान्तर भी प्राप्त था (दे. भा. २.८; मत्स्य. १४५.९५-९९)। यह महान् तपस्वी, एवं अत्यंत क्रोधी था।

एक बार यह अपने गुरु की सेवा करके घर वापस आ रहा था, जब कृश नामक इसके मित्र ने परिक्षित् राजा के द्वारा की गयी इसके पिता की विटंबना की दुर्वार्ता इससे कह सुनायी। इससे क्रोधित होकर इसने परिक्षित् राजा को तक्षकदंश से मृत होने का शाप दिया।

बाद में इसके पिता ने इसे काफ़ी समझाया, किन्तु इसने अपना शाप वापस नहीं लिया (म. आ. ३६.२१-२५; ४६.२ परिक्षित् १. देखिये)।

शृंगीपुत्र—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में कुथुमि नामक आचार्य का शिष्य था।

शेणिन्—अंगिरस् कुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

शेरभ एवं **शेरभक**--अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक सर्पद्वय अथवा राक्षसद्वय (अ. वे. २.२४.१)।

शेष--एक आचार्य, जो यजुर्वेदीय वेदांगज्योतिष का कर्ता माना जाता है। इसके द्वारा विरचित 'यजुर्वेदीय-वेदांगज्योतिष' में कुल ४३ श्लोक हैं, जिनमें से ३०

श्लोक लगध के द्वारा विरचित 'ऋग्वेदीय वेदांगज्योतिष' से लिये गये हैं, एवं १३ इसके अपने थे। इसके ग्रंथ पर सोमक की टीका उपलब्ध है (लगध देखिये)।

२. एक प्रमुख नाग, जो नागराज अनंत का अवतार माना जाता है। यह भगवान् नारायण का अंशावतार माना जाता है, एवं उसके लिए शय्यारूप हो कर उसे धारण करता है।

भागवत में इसे कश्यप एवं कद्रू का पुत्र कहा गया है, एवं इसका निवासस्थान पाताल-लोक बताया गया है। इसके सहस्र शीर्ष थे, एवं यह गलें में शुभ्रवर्णीय रत्नमाला परिधान करता था (भा. १०.३.४९)। यह हाथ में हल एवं कोयती धारण करता था। गंगा ने इसकी उपासना की थी, जिसे इसने ज्योतिषशास्त्र एवं खगोल शास्त्र का ज्ञान प्रदान किया था (विष्णु. २.५.१३-२७)।

अन्य नागों की तरह इसे भी कामरूपधरत्व की विद्या अवगत थी। इसी कारण इसके अनेकविध अवतार (कला) उत्पन्न हुए थे। इसकी एक कला क्षीरसागर में थी, जिस पर विष्णु शयन करते है। बालकृष्ण को वसुदेव जब गोकुल ले जा रहे थे, उस समय अपनी फणा फैला कर इसने उसकी रक्षा की थी।

अपने सर पर यह समस्त पृथ्वी को धारण करता है, जो सिद्धि इसे ब्रह्मा के आशीर्वाद के कारण प्राप्त हुई थी (म. आ. ३२.५-१९)।

शेषसेवाकि—रौपसेवकि नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

शैखावत्य--एक ऋषि, जो शास्त्र एवं आरण्यक आदि ग्रंथों का महान् आचार्य था। भीष्म एवं शाल्व के द्वारा अपमानित हुई अंबा इसके आश्रम में आ कर रही थी, एवं वहीं उसने भीष्मवध के लिए कठोर तपस्या की थी (म. उ. १७३.११-१८)।

२. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष में शामिल था। इसे शैब्य चित्ररथ नामान्तर भी प्राप्त था। इसके रथ के अश्व नीलोत्पल वर्ण के थे, एवं वे सुवर्णालंकार तथा अनेक प्रकार की मालाओं से विभूषित किये गये थे।

शैत्यायन--एक वैयाकरण, जिसके द्वारा विरचित संधिनियमों का निर्देश तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में प्राप्त है (तै. प्रा. ५.४०)।

शैनेय--सुविख्यात यादवराजा सात्यकि युयुधान का पैतृक नाम। शिनि राजा का पुत्र होने के कारण, उसे यह पैतृकनाम प्राप्त हुआ था (म. मौ. ४.३२ सात्यकि देखिये)।

शैब्य--अमित्रतपन शुष्मिण नामक राजा की उपाधि (ऐ. ब्रा. ८.२३.१०)। शिबि जाति में उत्पन्न, इस अर्थ से संभवतः यह उपाधि उसे प्राप्त हुई होगी।

२. सत्यकाम नामक आचार्य का पैतृक नाम (प्र. उ. १.१; ५.१)।

३. एक राजा, जो सृंजय राजा का पिता था (म. द्रो. परि. १.८.२७४ पाठ)।

४. शिबि देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर का श्वशुर था। इसका सही नाम गोवासन था। महाभारत में इसे उशीनर राजा का पौत्र कहा गया है। यह एवं काशिराज युधिष्ठिर के सब से बड़े हितचिंतक थे। उपप्लव्य नगरी में संपन्न हुए अभिमन्यु के विवाह के समय, यह अपनी एक अक्षौहिणी सेना के साथ उपस्थित हुआ था।

भारतीय-युद्ध में यह पाण्डव-पक्ष के प्रमुख धनुर्धरों में से एक था। इसके रथ के अश्व नीलकमल के समान रंगवाले एवं सुवर्णमय आभूषणों से युक्त थे। धृष्टद्युम्न के द्वारा निर्माण किये गये क्रौंचव्यूह की रक्षा का भार इस पर सौंपा गया था, जो इसने तीस हजार रथियों को साथ ले कर उत्कृष्ट प्रकार से सम्हाला था (म. भी. ४६.३९;५४)।

५. एक यादव राजा, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.५३)। यह अर्जुन का शिष्य था, जिससे इसने धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की थी।

६. एक क्षत्रिय राजा, जिसे कृष्ण ने पराजित किया था (म. व. १३.२७)।

७. एक कौरवपक्षीय राजा, जो भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये 'सर्वतोभद्र' नामक व्यूह के प्रवेशद्वार पर खड़ा हुआ था (म. भी. ९५.२७)।

८. शिबि देश के वृषादर्भि राजा का पैतृक नाम, जो उसे शिबि राजा का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था (म. अनु. ९३.२०-२९; वृषादर्भि देखिये)।

९. शिबि नरेश सुरथ राजा का नामान्तर (म. व. २५०. ४; सुरथ शैब्य देखिये)।

१०. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार शिबि राजा का पुत्र था।

११. सुवीर देश का एक राजा, जो भारतीय-युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था (भा. १०.७८)। जरासंध के द्वारा गोमंत पर आक्रमण किये जाने पर, उस नगरी के पश्चिम द्वार की रक्षा का कार्य इस पर सौंपा गया था (भा. १०.५२.११)। इसकी कन्या का नाम रत्ना था, जिसका विवाह अक्रूर से हुआ था (मत्स्य. ४५.२८)।

शैब्या--शाल्वदेश के द्युमत्सेन राजा की पत्नी, जो सावित्रीपति सत्यवत् (सत्यवान्) राजा की माता थी (म. व. २८२.२)।

२. पूरुवंशीय प्रतीपराजा की पत्नी सुनंदा का नामान्तर (म. आ. ९०.४६)।

३. इक्ष्वाकुवंशीय सगर राजा की पत्नी सुमति का नामान्तर, जो असमंजस् राजा की माता थी।

४. कृष्णपत्नी मित्रविंदा का नामान्तर (म. मौ. ८.७१)।

५. हरिश्चंद्रपत्नी तारामती का नामान्तर।

६. ज्यामघ राजा की पत्नी चैत्रा का नामान्तर, जो विदर्भ राजा की माता थी।

७. शतधन्वन् नामक विष्णुभक्त राजा की पत्नी (शतधन्वन् ३. देखिये)।

शैरालय--शैलालय नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

शैरीषि--सुवेदस् नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृकनाम।

शैलन--एक आचार्यसमूह (जै. उ. ब्रा. १.२.३; २.४.६)। इस समुदाय में निम्नलिखित आचार्य प्रमुख थेः--१. पार्ष्ण (जै. उ. ब्रा. २.४.८); २. सुचित्त (जै. उ. ब्रा. १.१४.४)।

शैलालय--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठ-- 'शैरालय;' 'शैवलेय'।

२. एक राजा, जो भगदत्त राजा का पितामह था। कुरुक्षेत्र के तपोवन में तपस्या कर के, यह इंद्रलोक चला गया (म. आश्व. २६.१०)।

शैलालि--एक सांस्कारिक आचार्य, जो 'शैलालि ब्राह्मण' नामक ब्राह्मण ग्रंथ का रचयिता माना जाता है। यद्यपि यह ब्राह्मण ग्रंथ आज अप्राप्य है, फिर भी उस ग्रंथ के उद्धरण सूत्रग्रंथों में पाये जाते हैं (आ. श्रौ. ६.४.७; अनुपद. ४.५)। शिलालिन् का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

शतपथ ब्राह्मण में इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ आहुति देने का क्रम किस प्रकार होना चाहिये इस संबंध में इसके मत उद्धृत किये गये है (श. ब्रा. १३.५.३.३)। पाणिनि के अष्टाध्यायी में इसे 'नटसूत्रकार' कहा गया है एवं इसके सांप्रदाय का निर्देश 'नटवर्ग' नाम से किया गया है (पा. सू. ४.३.११०)।

शैलिन् अथवा **शैलिनि**--जित्वन् नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे शिलिन् का वंशज होने से प्राप्त हुआ था (बृ. उ. ४.१.५ माध्यं; ४.१.२ काण्व.)। कई अभ्यासकों के अनुसार 'शैलन' इसीका ही पाठभेद है (शैलन देखिये)।

शैलूष--एक व्यक्तिनाम, जिसका निर्देश यजुर्वेद में दिये गये बलिप्राणियों की तालिका में प्राप्त है (वा. सं. ३०.६; तै. ब्रा. ३.४.२.१)। शैलूष का शब्दशः अर्थ 'अभिनेता' अथवा 'नर्तक' है। सायण के अनुसार, इस शब्द का अर्थ 'अपनी पत्नी की वेश्यावृत्ति पर उपजीविका चलानेवाला' किया गया है।

२. बिभीषणपत्नी सरमा का पिता, जो ऋषभ पर्वत पर निवास करता था।

शैलूषि--कुल्मलबर्हिष नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.१२६)।

शैवलय--शैलालेय नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

शैशिर--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शैशिरिन्--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

शैशिरायण गार्ग्य--एक ऋषि, जिसे गोपाली नामक स्त्री से कालयवन नामक असुर पुत्र उत्पन्न हुआ था (कालयवन देखिये)। यह त्रिगर्तराजा का पुरोहित था, जिसने इसके पुरुषत्व की परीक्षा लेने के लिए अपनी पत्नी वृकदेवी के साथ संभोग करने की आज्ञा दी थी (ह. वं. १.३५.१२)।

शैशिरेय--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से देवमित्र शाकल्य का शिष्य था। यह शाकल्यशाखा का प्रमुख आचार्य था, एवं इसीके द्वारा प्रणीत शैशिरीय-संहिता शाकल शाखा की प्रमाणभूत संहिता मानी जाती है (शाकल एवं शाकल्य देखिये)। शाकल्य का शिष्य होने के कारण इसके द्वारा प्रणीत संहिता 'शाकल संहिता' नाम से प्रसिद्ध है।

शौनक के द्वारा विरचित 'अनुवाकानुक्रमणी' भी इसीके संहिता को आधार मान कर लिखी जा चुकी है (अनुवाकानुक्रमणी ७; ३०)। व्याडिकृत 'विकृतिवल्ली' में भी अष्टविकृतियों के कथन के लिए शैशिरीय-संहिता को आधार माना गया है।

शैशिरोद्वहि--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शोकपाणि--ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

शोण--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक व्यक्ति, जिसकी कथा पद्म में 'सोमवारव्रत' का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गई है।

शोण सात्रासह—एक पांचाल राजा, जो कोक राजा का पिता था। इसके के द्वारा किये अश्वमेध यज्ञ में तुर्वश लोग भी उपस्थित थे (श. ब्रा. १३.५.४.१६-१८)।

शोणाश्व—(सो. विदु.) एक राजा, जो राजाधिदेव राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.७८)।

शोणित—(सो. क्रोष्टु.) एक यादवराजा, जो वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.७१.१३८)।

शोणिताक्ष—रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६.२६)।

शोणितोद—कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०. १७)।

शोभन—मुचुकुंद राजा का दामात, जिसकी कथा 'रमा-एकादशी' का माहात्म्य कथन करने के लिए बतायी गयी है (पद्म. उ. ६०)।

शोभना—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५)।

शौक्रतव, शौक्रतु, शौक्रवत-अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार।

शौंग—एक ऋषि, जो अंगिरस्कुलोत्पन्न शुंग ऋषि का पुत्र था। आगे चल कर विश्वामित्रकुलोत्पन्न शैशिर ऋषि ने इसे अपना पुत्र मान लिया। इसी कारण यह द्विगोत्रीय (द्व्यामुष्यायण) बन गया।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शौंगायनि—मद्रगार नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे शौंग का वंशज होने से प्राप्त हुआ होगा (वं. ब्रा. १.)।

शौंगीपुत्र—एक आचार्य, जो सांकृतिपुत्र नामक आचार्य का शिष्य, एवं आर्तभागीपुत्र नामक आचार्य का गुरु था (श. ब्रा. १४.९.४.३०)।

शौच—आह्नेय नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. आ. २.१२)।

शौचद्रथ—सुनीथ नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ५.७९.२)। शुचद्रथ का पुत्र होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शौचय सार्वसेनि—एक आचार्य, जिसने पंचरात्र यज्ञ कर के अनेकानेक पशु प्राप्त किये थे (तै. सं. ७.१. १०२)।

शौचिवृक्ष—एक आचार्य (ला. श्रौ. ६.९.१४)।

शौचेय प्राचीनयोग्य—एक आचार्य, जो शुचि एवं प्राचीनयोग का वंशज था (श. ब्रा. ११.५.३.१; ८)।

शौण—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शौनक—एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो विष्णु, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की अथर्वन् शिष्य-परंपरा में से पथ्य नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास एवं पाणिनि देखिये)। इसे भृगुकुल का मंत्रकार भी कहा गया है।

२. एक पैतृकनाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. अतिधन्वन् (छां. उ. १. ९.३); २. इंद्रोत देवापि (श. ब्रा. १३. ५; ३.५.१); ३. स्वैदायन (श. ब्रा. ११.४.१.२); ४. द्दति ऐंद्रोत (वं. ब्रा. २);।

३. एक आचार्य, जो रौहिणायन नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. २.५.२०; ४.५.२६ माध्यं.)।

शौनक कापेय—एक राजा, जो अभिप्रतारिन् काक्षसेनि राजा का समकालीन था। इसके पुरोहित का नाम शौनक ही था (छां. उ. १.९.३; जै. उ. ब्रा. ३. १.२१)।

शौनक गृत्समद—(सो. काश्य.) एक सविख्यात आचार्य, जो 'ऋग्वेद-अनुक्रमणी,' 'आरण्यक,' 'ऋक्प्रातिशाख्य' आदि ग्रंथों का कर्ता माना जाता है। महाभारत में इसे 'योगशास्त्रज्ञ' एवं 'सांख्यशास्त्र-निपुण' कहा गया है।

आश्वलायन नामक सुविख्यात आचार्य का गुरु भी यही था, एवं कात्यायन, पतंजलि, व्यास, आदि आचार्य इसके ही परंपरा में उत्पन्न हुए थे। इसका अपना नाम गृत्समद था, एवं शौनक इसका पैतृक नाम था, जो इसे शुनक राजा का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था।

जन्मवृत्त—षड्गुरुशिष्य के द्वारा विरचित 'कात्यायन सर्वानुक्रमणी' के भाष्य में इसका जन्मवृत्त सविस्तृत रूप में दिया गया है। शुनहोत्र भारद्वाज ऋषि के पुत्र शौनहोत्र गृत्समद के द्वारा एक यज्ञ किया गया, उस समय स्वयं इन्द्र उपस्थित था। इस यज्ञ के समय असुरों के आक्रमण से शौनहोत्र ने इन्द्र का रक्षण किया। इस कारण इन्द्र ने प्रसन्न हो कर, शौनहोत्र को आशीर्वाद दिया 'अगले जन्म में, तुम भृगुकुल में 'शौनक भार्गव' नाम से पुनः जन्म लोंगे'।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रंथों में, इसे गृत्समदपुत्र शुनक का पुत्र कहा गया है, एवं इसे 'क्षत्रोपेत द्विज,' 'मंत्रकृत्,' 'मध्यमाध्वर्यु,' एवं 'कुलपति' कहा गया है (वायु ९३.२४)।

वायु में इसका भृगुवंशीय वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है :—रूरु (प्रमद्वरा)-शुनक-शौनक-उग्रश्रवस्। इसी ग्रंथ में अन्यत्र इसे नहुषवंशीय कहा गया है; एवं इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है:—धर्मवृद्ध-सुतहोत्र-गृत्समद-शुनक-शौनक (वायु. ९२.२६)।

'ऋष्यानुक्रमणी' के अनुसार, यह शुनहोत्र ऋषि का पुत्र था, एवं शुनक के इसे अपना पुत्र मानने के कारण, इसे 'शौनक' पैतृक नाम प्राप्त हुआ। यह पहले अंगिरस्-गोत्रीय था, किन्तु बाद में भृगु-गोत्रीय बन गया।

महाभारत के अनुसार, दशसहस्र विद्यार्थियों के भोजन एवं निवास की व्यवस्था कर, उन्हें विद्यादान करनेवाले गुरुकुलप्रमुख को 'कुलपति' उपाधि दी जाती थी (म. आ. १.१; ह. वं. १.१.४ नीलकंठ)।

भागवत में इसे चातुर्वर्ण्य का प्रवर्तक, एवं 'बह्वृच-प्रवर' कहा गया है (भा. १.४.१; ९.१७३; विष्णु. ४. ८.१)। वायु में इससे ही चारों वर्णों की उत्पत्ति होने का निर्देश प्राप्त है (वायु. ९२.३-४; ब्रह्म. ११.३४; ह. वं. १.२९.६-७)।

कर्तृत्व—इसने ऋग्वेद के द्वितीय मंडल की पुनर्रचना की, एवं इस मंडल में से 'स जनास इंद्रः' नामक बारहवें सूक्त का प्रणयन किया।

इसने ऋक्संहिता के बाष्कल एवं शाकल शाखाओं का एकत्रीकरण कर, उन दोनों के सहयोग से शाकल अथवा शैशिरेय शाखांतर्गत ऋक्संहिता का निर्माण किया। शौनक के द्वारा निर्मित नये ऋक्संहिता की सूक्तों की संख्या १०१७ बतायी गयी है।

ऋग्वेद की अनुक्रमणी—ऋग्वेद की उपलब्ध अनुक्रमणियों में से शौनक की अनुक्रमणी प्राचीनतम मानी जाती है, जो कात्यायन के द्वारा विरचित ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी से काफ़ी पूर्वकालीन प्रतीत होती है। शौनक के अनुक्रमणी में ऋग्वेद का विभाजन, मंडल, अनुवाक एवं सूक्तों में किया गया है, जो अष्टक, अध्याय, वर्ग आदि में विभाजन करनेवाले कात्यायन से निश्चित ही प्राचीन प्रतीत होता है।

गृहपति शौनक—पौराणिक साहित्य में शौनक ऋषि के द्वारा आयोजित किये गये यज्ञों (सत्रों) का निर्देश प्राप्त है, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख थेः—१. नैमिषारण्य द्वादशवर्षीय सत्र (म. आ. १.१.१; ब्रह्म. १.११); २. नैमिषारण्य दीर्घसत्र (मत्स्य १.४; अग्नि. १.२); ३. नैमिषारण्य सहस्रवार्षिक सत्र (भा. १.१.४; पद्म. आदि. १.६)।

इसके द्वारा आयोजित द्वादशवर्षीय सत्र में रोमहर्षण सूत ने महाभारत का कथन किया था (म. आ. १.१)। इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, नैमिषारण्य के सहस्रवर्षीय सत्र में रोमहर्षणि सूत ने प्रायोपवेशन करनेवाले परिक्षित् राजा को शुक के भागवत पुराण का कथन किया (भा. १.४.१)। यह पुराण परिक्षित्-शुकसंवादात्मक है, एवं उसमें कृष्ण का जीवनचरित्र अत्यंत प्रासादिक शैली से वर्णन किया गया है।

प्रमुख ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध है :—१. ऋक्प्रातिशाख्य; २. ऋग्वेद छंदानुक्रमणी; ३. ऋग्वेद ऋष्यानुक्रमणी; ४. ऋग्वेद अनुवाकानुक्रमणी; ५. ऋग्वेद सूक्तानुक्रमणी; ६. ऋग्वेद कथानुक्रमणी; ७. ऋग्वेद पादविधान; ८. बृहद्देवता; ९. शौनक-स्मृति १०. चरणव्यूह; ११. ऋग्विधान।

शौनक के उपर्युक्त ग्रंथों में इसके द्वारा बतायी गयी ऋग्वेद की विभिन्न अनुक्रमणियाँ प्रमुख हैं। षड्गुरुशिष्य ने कात्यायन सर्वानुक्रमणी के भाष्य में, शौनक के द्वारा विरचित अनुक्रमणियों की संख्या कुल दस बतायी है, किंतु उनमें से केवल चार ही अनुक्रमणियाँ आज उपलब्ध हैं।

अन्य ग्रंथ—उपर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त, इसके नाम पर शौनक-गृह्यसूत्र, शौनक-गृह्यपरिशिष्ट आदि अन्य छोटे छोटे ग्रंथ हैं (C. C.)। मत्स्य के अनुसार इसने एक वास्तुशास्त्रसंबंधी ग्रंथ की भी रचना की थी (मत्स्य. २५२.३)।

सायणभाष्य से प्रतीत होता है कि, 'ऐतरेय आरण्यक' का पाँचवाँ आरण्यक इसके ही द्वारा निर्माण किया गया था (ऐ. आ. १.४.१)।

व्याकरणशास्त्रकार—शौनक के द्वारा विरचित 'ऋक्प्रातिशाख्य' उपलब्ध प्रातिशाख्य ग्रंथों में प्राचीनतम माना जाता है। शौनक के इस ग्रंथ में शाकल शाखान्तर्गत विभिन्न पूर्वाचार्यों के अभिमत उद्धृत किये गये हैं। वैदिक ऋचाओं का उच्चारण, एवं विभिन्न शाखाओं में प्रचलित उच्चारणपद्धति की जानकारी भी शौनक के इस ग्रंथ में दी गयी है।

शौनक के प्रातिशाख्य में व्याकरणकार व्याडि का निर्देश पुनः पुनः आता है, जिससे प्रतीत होता है कि, व्याडि इसीका ही शिष्य था (ऋ. प्रा. २०९; २१४)

व्याडि ने अपने 'विकृतवल्ली' नामक ग्रंथ के प्रारंभ में शौनक को गुरु कह कर इसका वंदन किया है (व्याडि देखिये)। 'शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य' में संधिनियमों के संबंध में मतभेद व्यक्त करते समय, इसके मतों का उद्धरण प्राप्त है (शु. प्रा. ४. १२०)। शब्दों के अंत में कौन से वर्ण आते है, इस संबंध में इसके उद्धरण 'अथर्ववेद प्रातिशाख्य' में प्राप्त हैं (अ. प्रा. १.८)।

शिक्षाकार शौनक--'शौनकीय शिक्षा' में दिये गये एक सूत्र का उद्धरण पाणिनि के अष्टाध्यायी में प्राप्त है (पा. सू. ४.३.१०६)। इसी शौनकीय शिक्षा में ऋग्वेद के शाखाप्रवर्तक शौनक को 'कल्पकार' कहा गया है, जिससे प्रतीत होता है कि, 'शाखा' का नामांतर 'कल्प' था। गंगाधर भट्टाचार्य विरचित 'विकृति कौमुदी' नामक ग्रंथ में इन दोनों की समानता स्पष्ट रूप से वर्णित है (शाकलाः शौनकाः सर्वे कल्पं शाखां प्रचक्षते)।

तत्त्वज्ञानी शौनक--जनमेजय पारिक्षित राजा के पुत्र शतानीक को इसने तत्त्वज्ञान की शिक्षा प्रदान की थी (विष्णु. ४.२१.२)। महाभारत में इसका निर्देश असित, देवल, मार्कंडेय, गालव, भरद्वाज, वसिष्ठ, उद्दालक, व्यास आदि ऋषियों के साथ अत्यंत गौरवपूर्ण शब्दों में किया गया है (म. व. ८३. १०२-१०४)। द्वैतवन में जिन ऋषियों ने धर्म का स्वागत किया था, उनमें यह प्रमुख था (म. व. २८. २३)।

शिष्यपरंपरा--शौनक का प्रमुख शिष्य आश्वलायन था। अपने गुरु को प्रसन्न करने के लिए आश्वलायन ने गृह्य एवं श्रौतसूत्रों की रचना की। आश्वलायन का यह ग्रंथ देख कर शौनक इतना अधिक प्रसन्न हुआ कि, इसने अपने श्रौतशास्त्रविषयक ग्रंथ विनष्ट किया (विपाटितम्)। ऋग्वेद से संबंधित शौनक के दस ग्रंथों का अध्ययन करने के बाद, आश्वलायन ने अपने गृह्य एवं श्रौतसूत्रों की, एवं ऐतरेय आरण्यक के चतुर्थ आरण्यक की रचना की।

शौनक के दस एवं आश्वलायन के तीन ग्रंथ आश्वलायन के शिष्य कात्यायन को प्राप्त हुए। कात्यायन ने स्वयं यजुर्वेदकल्पसूत्र, सामवेद उपग्रंथ आदि की रचना की, जिन्हे उसने अपने शिष्य पतंजलि (योगशास्त्रकार) को प्रदान किये।

इस प्रकार शौनक की शिष्यपरंपरा निम्नप्रकार प्रतीत होती है:- शौनक- आश्वलायन- कात्यायन- पतंजलि- व्यास।

शौनक स्वैदायन--एक यज्ञशास्त्रनिपुण आचार्य (श. ब्रा. ११.४.१.२-३; गो. ब्रा. १.३.६)।

शौनकायन जीवन्ति--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शौनाकिन्--एक आचार्य, जिसके यज्ञकुण्ड के परिमाण के संबंधित मतों का उल्लेख कौषीतकि ब्राह्मण में प्राप्त है (कौ. ब्रा. ८५.८)।

शौनकीपुत्र--एक आचार्य, जो काश्यपी बालाक्या माठरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पैंगीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३१-३२)।

शौनहोत्र--गृत्समद आंगिरस ऋषि का पैतृक नाम (गृत्समद १. देखिये)।

शौरिद्यु—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में कुथुमि नामक आचार्य का शिष्य था।

शौरि—कृष्णपिता वसुदेव का नामांतर (म. द्रो. ११९.७)।

शौल्कायनि अथवा **शौक्वायनि**—एक आचार्य, जो व्यास की अथर्वन्‌शिष्यपरंपरा में देवदर्श नामक आचार्य का शिष्य था।

शौल्बायन अथवा **शौल्व्यायन**--उदंक नामक आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.१.३)।

श्याकार--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यापर्ण—एक पुरोहितसमुदाय, जो विश्वंतर राजा का पुरोहित था। एक बार विश्वंतर ने सोमयज्ञ किया, जहाँ उसने इन्हें टाल कर अन्य पुरोहितों को बुलाना चाहा। उस समय इनमें से राम मार्गवेय नामक एक पुरोहित ने सोम के संबंध में एक नयी उपपत्ति कथन कर, अपना पुरोहितपद पुनः प्राप्त किया (ऐ. ब्रा. ७.२७, राम मार्गवेय देखिये)।

श्यापर्ण सायकायन--एक यज्ञवेत्ता आचार्य, जिसके द्वारा यज्ञवेदी पर पाँच पशुओं का वध करने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १०.४.१.१०; ६.२.१.३९)।

श्याम--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार शूर राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४६.३)।

भागवत में इसे 'श्यामक' कहा गया है। इसकी पत्नी का नाम शूरभू अथवा शूरभूमि था, जिससे इसे हिरण्याक्ष एवं हरिकेश नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.२४. २९)।

२.एक श्वान, जो सरमा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.११२)। यज्ञ में इसे बलि अर्पण किया जाता है।

श्यामपराशर—पराशर कुलोत्पन्न एक ऋषि समुदाय। इस समुदाय में निम्नलिखित ऋषि समाविष्ट थेः—पाटिक, बादरिस्तंब, क्रोधनायन, क्षेमि।

श्यामबाला—सौराष्ट्र में रहनेवाले भद्रश्रवस् नामक वैश्य की कन्या। लक्ष्मीव्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा पद्म में दी गयी है (पद्म. ब्र. ११)।

श्यामवय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यामसुजयन्त लौहित्य—एक आचार्य, जो कृष्ण-धृति सात्यकि नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम कृष्णदत्त लौहित्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२. १)।

२. एक आचार्य, जो जयंत पारशर्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पल्लिगुप्त लौहित्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

श्यामा—मेरु की कन्या, जो हिरण्मय ऋषि की पत्नी थी (भा. ५.२.२३)।

श्यामायन—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५५)।

२. अंगिरस्‌कुल का एक गोत्रकार।

श्यामायनि—एक आचार्य, जो व्यास की कृष्णयजुः-शिष्यपरंपरा में से वैशंपायन ऋषि का 'उदिच्य' शिष्य था (वैशंपायन १. एवं व्यास देखिये)।

२. अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यामावत्—अत्रिकुलोत्पन्न एक मंत्रकार, जो दत्त आत्रेय के वंश में उत्पन्न हुआ था (वायु. ५९.१०४)। इसे निम्नलिखित नामान्तर भी प्राप्त थेः— शावास्य अथवा शावाश्व (मत्स्य. १४५.१०७-१०८); शावाश्व (ब्रह्मांड. २.३२.११३-११४)।

श्यामोदर—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्याव—एक राजा, जो वध्रिमती का पुत्र था (ऋ. १०.६५.१२)। किन्तु सायण इसे स्वतंत्र व्यक्ति न मान कर, हिरण्यहस्त राजा की उपाधि मानते है।

यह अश्विनों की कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिन्होंने इसे रुशती नामक स्त्री प्रदान की थी (ऋ. १. ११७.८)।

२. सुवास्तु नदी के तट पर रहनेवाला एक उदार दाता (ऋ. ८.१९.३७)। ऋग्वेद में अन्यत्र श्यावक नामक एक राजा का निर्देश आता है, जो संभवतः यही होगा (ऋ. ५.६१.९)।

श्यालायनि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यावक—एक यज्ञकर्ता आचार्य, जो इंद्र का मित्र था (ऋ. ८.३.१२; ४.२)। ऋग्वेद में अन्यत्र सुवास्तु नदी के तट पर रहनेवाले श्याव नामक एक राजा का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः यही होगा (श्याव २. देखिये)।

श्यावयान—देवतरस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

श्यावाश्व आत्रेय—अत्रिकुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसे ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. ५.५२-६१; ८१-८२; ८.३५-३८; ९.३२)। इसे श्यामावत् नामांतर भी प्राप्त था (मत्स्य. १४५. १०७-१०८; श्यामावत देखिये)। इसके पिता का नाम अर्चनानस् आत्रेय था (पं. ब्रा. ८.५.९)। ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.५२. ६१; ८.३५-३८; ८१-८२; ९.३२)। रथवीति दार्भ्य ऋषि की कन्या इसकी पत्नी थी (रथवीति दार्भ्य देखिये)।

श्यावाश्वि—तरन्त एवं पुरुमीहळ राजाओं के अंधीगु नामक पुरोहित का पैतृक नाम (तरन्त देखिये)।

श्यावास्य—श्यामावत् नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

श्येन—इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि।

२. पक्षियों की एक जाति, जो ताम्रा की कन्या श्येनी की संतान मानी जाती है (म. आ. ६०.५४-५५)।

श्येन आग्नेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १८८)।

श्येनगामिन्—खर राक्षस के बारह अमात्यों में से एक (वा. रा. अर. २३.३१)।

श्येनचित्र—एक राजा, जिसने जीवन में कभी माँस भक्षण नहीं किया था। शारद एवं कौमुद माह में जिन राजाओं ने मांस भक्षण वर्ज्य किया था, ऐसे पुण्यश्लोक राजाओं की एक नामावलि महाभारत में प्राप्त है, जहाँ इसका निर्देश किया गया है (म. अनु. ११५.७२)।

श्येनजित्—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो दल राजा का पुत्र था। इसके चाचा शल ने वामदेव ऋषि के अश्व थोडे समय के लिए मांग लिए, एवं पश्चात् उन्हें वापस देने से इन्कार कर दिया। इतना ही नहीं, बल्कि वामदेव का वध करने के लिए एक विषयुक्त बाण का उपयोग करना चाहा।

तदुपरांत वामदेव ने इसी बाण से दश वर्ष के श्येनजित राजकुमार का वध किया। पश्चात् इसके पिता दल का शरीर भी वामदेव ने अचेतन बनाया। इस दुरवस्था में इसकी माता ने वामदेव ऋषि से क्षमा माँगी, एवं अपने पति एवं पुत्र की जान बचायी (म. व. १९०.७३; दल देखिये)।

२. सेनजित् राजा का नामान्तर।

३. एक महारथी राजा, जो भीमसेन का मामा था। भारतीय युद्ध में यह पाण्डव पक्ष में शामिल था (म. उ. १.१३९.२७)।

श्येनभद्र--प्रसूत देवों में से एक।

श्येनी--कश्यप एवं ताम्रा की कन्या। सृष्टि के समस्त बाज पक्षी इसीकी ही संतान माने जाते हैं। ब्रह्मांड के अनुसार यह पक्षिराज गरुड की पत्नी थी (ब्रह्मांड. ३.३ ४४९)। किन्तु महाभारत में इसे गरुड के भाई अरुण की पत्नी बताया गया है, जिससे इसे जटायु एवं संपाति नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ६६.६७; वा. रा. अर. १४.३३)।

२. पूरुवंशीय प्रवीर राजा की पत्नी (म. आ. ८९.६)।

श्रद्धा (स्वा.)—स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्म ऋषि की दस पत्नियों में से एक थी। इसकी माता का नाम प्रसूति था (म. आ. ७.१३)। इसके पुत्रों के नाम शुभ एवं काम थे (भा. ४.१.४९-५०)।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के कर्दम प्रजापति एवं देवहूति की कन्या, जो अंगिरस् ऋषि की पत्नी थी। इसके उतथ्य एवं बृहस्पति नामक दो पुत्र, एवं सिनीवाली, कुहू, राका एवं अनुमति नामक चार कन्याएँ थी (भा. ३. २४. २२)।

३. सूर्य की एक कन्या, जिसे 'सावित्री,' 'प्रसावित्री,' 'वैवस्वती' आदि नामान्तर प्राप्त थे (म. शां. २५६.२१)।

४. वैवस्वत मनु की एक पत्नी।

श्रद्धा कामायनी—एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री (ऋ. १०. १५१)।

श्रद्धादेवी—वसुदेव की पत्नियों में से एक, जिसके पुत्र का नाम गवेषण था (मत्स्य. ४६.१९)।

श्रद्धालु--हंसध्वज राजा का प्रधान।

श्रम--वसुदेव एवं शांतिदेवा के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.५०)।

श्रमदागोपि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्रमिष्ठ—अक्रूर एवं अश्विनी के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३३)।

श्रवण--श्रवस् नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

२. गौतम नामक शिवावतार का एक शिष्य।

३. अक्रूर एवं अरुणा के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३३)।

४. मुर दैत्य के सात पुत्रों में से एक (भा. १०.५९. १२)। कृष्ण ने इसका वध किया।

५. सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

६. श्रावण नामक तपस्वी का पिता (श्रावण देखिये)।

श्रवणदत्त कौहल--एक आचार्य, जो सुशारद शालंकायन नामक आचार्य का शिष्य, एवं कुस्तुक शार्कराक्ष्य नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

श्रवस्--एक ऋषि, जो गृत्समदवंशीय संत ऋषि का पुत्र, एवं तम ऋषि का पिता था (म. अनु. ३०.६२)।

२. दक्षसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

३. अमिताभ देवों में से एक।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद--'श्रवण'।

५. भृगु ऋषि के पुत्रों में से एक (वायु. ६५.८७)।

श्रविष्कट—गौतम नामक शिवावतार का एक शिष्य (वायु. २३.१६४)।

श्राद्धदेव—सूर्यपुत्र वैवस्वत मनु राजा का नामान्तर। इसकी पत्नी का नाम श्रद्धा था, एवं पुरोहित का नाम वसिष्ठ था, जिसने इसकी इला नामक कन्या का रूपान्तर सुद्युम्न नामक पुत्र में करने के कार्य में सहायता की थी (दे. भा. महात्म्य ३; वसिष्ठ ९. देखिये)।

श्राद्धाद—वृष नामक दैत्य का पुत्र (वृष ५. देखिये)।

श्रायस—एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:- १. कण्व (तै. सं. ५.४.७.५; का. सं. २१.८); २. वीतहव्य (तै. सं. ५.६.५.३; पं. ब्रा. ९.१.९)।

श्राव--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो महाभारत के अनुसार युवनाश्व श्रावस्त राजा का पुत्र था (म. व. १९३.४)।

श्रावण--एक तपस्वी, जो वैश्य पिता एवं शूद्र माता का पुत्र था (वा. रा. अयो. ६३)। ब्रह्म में इसे ब्राह्मण कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम श्रवण दिया गया है (ब्रह्म. १२३.३७)। इससे प्रतीत होता है कि, श्रवण इसका पैतृक नाम था।

अपने अंधे माता पिता को अपने कंधे पर बिठा कर यह काशीयात्रा को जा रहा था। एक बार रात के समय, यह कुएँ में पानी लेने गया था, जिस समय इसके पानी भरने की आवाज से इसे कोई वन्य जानवर समझ कर, मृगयातुर दशरथ ने इस पर शरसंधान किया। दशरथ के बाण से इसकी मृत्यु हो गयी।

अपनी असावधानी से हुए ब्रह्महत्या के कारण दशरथ विह्वल हो उठा, किन्तु श्रावण ने उसका समाधान किया। पश्चात् इसके माता-पिता ने दशरथ राजा को 'पुत्र पुत्र' करते हुए मृत्यु पाने का शाप दिया, एवं वे स्वयं इसकी अकाल मृत्यु से दुःखी हो कर मृत हुए।

श्रावस्त अथवा **शावस्त**--(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु, वायु एवं मत्स्य के अनुसार इंदु राजा का पौत्र, एवं युवनाश्व (द्वितीय) राजा का पुत्र था। महाभारत में इसे युवनाश्व (द्वितीय) राजा का पौत्र, एवं श्राव राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इस प्रकार श्रावस्त इसका पैतृक नाम बताया गया है।

इसने श्रावस्ति (श्रावस्त) नगरी की स्थापना की, एवं अपने उत्तर कोशल देश की राजधानी वहाँ बसायी (ह. वं. १११.२२ ब्रह्मांड. ३.६३.२८; वायु. ८८. २००)।

इसके पुत्र का नाम बृहदश्व (ब्रह्मदश्व) था (म. व. १९३.४)। इसके अन्य पुत्र का नाम वंशक अथवा वत्सक था।

इसका राज्यकाल राम दाशरथि के पूर्वकाल में पचास पीढियाँ माना जाता है। राम दाशरथि के कनिष्ठपुत्र लव ने उत्तर कोसल देश की राजधानी अयोध्या नगरी से हटा कर, वह पुनः एक बार श्रावस्ति नगरी में बसायी। इस कारण अयोध्या नगरी उजड़ गयी, जो आगे चल कर लव के ज्येष्ठ बन्धु कुश ने पुनः एक बार बसायी (रघु. १६.९७)।

श्राविष्ठायन--पराशर कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्री--(स्वा.) ऐश्वर्य की अधिष्ठात्री देवता लक्ष्मी का नामान्तर, जिसे पुराणों में भृगु एवं ख्याति की कन्या कहा गया है (लक्ष्मी देखिये)।

२. धर्म ऋषि की पत्नियों में से एक।

श्रीकर--एक शिवगण, जो गोप का पुत्र था। इसने काशी में मध्यमेश्वर की आराधना कर 'शिवगणपतित्त्व' प्राप्त किया (शिव. उ. ४४,८५)।

श्रीदामन्--कृष्णसखा सुदामन् अथवा कुचैल का नामान्तर (भा. १०.१५-२०; कुचैल देखिये)।

श्रीदेव--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो कूर्म के अनुसार लोमपाद शाखा के बृहन्मेधस् राजा का पुत्र था।

श्रीदेवा--देवक राजा की कन्या, जो वसुदेव की पत्नियों में से एक थी। इसके कुल छः पुत्र थे, जिनमें नंदक प्रमुख था (भा. ९.२४.२३; विष्णु. ४.१८)।

श्रीधर--एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'बालव्रत' का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. ब्र. ५)।

श्रीनिवास--तिरुपति में स्थित वेंकटेश का नामांतर (वेंकटेश देखिये)। स्कंद में इसकी पत्नी का नाम पद्मिनी बताया गया है।

श्रीभानु--कृष्ण एवं सत्यभामा का एक पुत्र (भा. १०.६१.११)।

श्रीमत्--एक राजकुमार, जो दत्तात्रेय राजा का पौत्र, एवं निमि राजा का पुत्र था। इसकी असामयिक मृत्यु होने पर एक वर्ष के पश्चात् अमावस्या के दिन, इसके पिता निमि ने इसका पहला वर्षश्राद्ध किया।

श्राद्धविधि--इस प्रकार निमि इस संसार में प्रचलित श्राद्धविधि का आद्यजनक बन गया। आगे चल कर अत्रि ऋषि ने निमि के द्वारा प्रणीत श्राद्धविधि को स्वयंभु के द्वारा प्रणीत बता कर उसका पुरस्कार किया, एवं मृत रिश्तेदारों के लिए श्राद्धविधि करने की प्रथा भारतवर्ष में सर्वत्र प्रचलित हुई (म. अनु. ९१.१-२१)।

महाभारत में इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है:--स्वयंभु-अत्रि-दत्तात्रेय-निमि-श्रीमत्।

श्रीमती--सृंजय राजा की कन्या दमयन्ती का नामान्तर (दमयन्ती २. देखिये)। पौराणिक साहित्य में इसके संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा दी गयी है। एक बार इसके प्रति नारद एवं उसके मित्र पर्वत को धोखा दे कर विष्णु ने इसका हरण किया, जिस कारण वे दोनों विष्णु की उपासना छोड़ कर शिवोपासक बन गये (लिंग. २.५.; अ. रा. ४; शिव रुद्र २.४)।

श्रीमलकर्णि--आंध्रवंशीय शातकर्णि राजा का नामान्तर (शातकर्णि १. देखिये)।

श्रीमाता--देवी का एक अवतार, जिसने मातंगी का रूप धारण कर, कर्नाटक नामक राक्षस का वध किया। यह राक्षस ब्राह्मण का वेश धारण कर ऋषियों के स्त्रियों का हरण करता था (स्कंद. ३.२.१७-१८)।

श्रीमानिन्—भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

श्रीवह—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.१३)।

श्रुत—(सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार उपगु राजा का, भागवत के अनुसार सुभाषण राजा का, एवं वायु के अनुसार, सुवर्चस् राजा का पुत्र था।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार भगीरथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम नाभाग था।

३. (सो. अज.) एक राजकुमार, जो पांचालराज द्रुपद के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध के रात्रि युद्ध में अश्वत्थामन् ने इसका वध किया।

४. कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१.१४)।

५. वसुदेव एवं शांतिदेवा के पुत्रों में से एक (भा.९. २४.५०)।

श्रुतकक्ष्य आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसके द्वारा विरचित सूक्त में विपुल पशुधन देने के लिए इंद्र की प्रार्थना की गयी है (ऋ. ८. ९२.२५)। एक साम के प्रणयन का श्रेय भी इसे दिया गया है (पं. ब्रा. ९. २.७)।

श्रुतकर्मन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। इसने शतानीक के साथ युद्ध किया था (म. क. १८.१२-१३)।

२. अर्जुनपुत्र श्रुतकीर्ति का नामांतर।

३. (सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो सहदेव एवं द्रौपदी के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध में यह अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. आ. ९०.८४; ५७.१०३)।

श्रुतिकीर्ति—(सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो अर्जुन एवं द्रौपदी के पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०. ८२; ५७.१०२; द्रो. २२.२५; भा. ९.२२.२९)। यह विश्वेदेव के अंश से उत्पन्न हुआ था।

इसे श्रुतकर्मन् नामांतर भी प्राप्त था (म. आ. २१३. ७६)। इसके रथ के अश्व चास पक्षी के पंखों के वर्ण के थे (म. द्रो. २२.२५)।

भारतीय युद्ध में शल्य के साथ इसका युद्ध हुआ, जिसमें यह पराजित हुआ था। अश्वत्थामन् के द्वारा किये गये रात्रियुद्ध में यह मारा गया (म. सौ. ८.५८)।

२. (स्त्री) कुशध्वज जनक राजा की कन्या, जो राम दाशरथि के कनिष्ठ भाई शत्रुघ्न की पत्नी थी (वा. रा. बा. ७३.३३)।

३. (स्त्री) केकय देश के धृष्टकेतु शारदण्डायनि की पत्नी, जो शूर राजा की कन्या, एवं वसुदेव की बहन थी। इसकी कन्या का नाम भद्रा था, जो कृष्ण की पत्नी थी। इसके कुल चार पुत्र थे, जिनमें अनुव्रत प्रमुख था (भा. ९.२४.३०)।

श्रुतंजय—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सत्यायु राजा का पुत्र था (भा. ९.१५.२)।

२. एक राजा, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् का भाई था। यह भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था, अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. २७.१० पाठ.)।

३. (मगध. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य, वायु, एवं ब्रह्मांड के अनुसार सेनाजित् राजा का, एवं विष्णु के अनुसार सेनजित राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'सतंजय' कहा गया है। वायु, मत्स्य, एवं ब्रह्माड के अनुसार इसने चालीस वर्षों तक राज्य किया था।

श्रुतदेव—एक विरागी कृष्णभक्त ब्राह्मण, जो बहुलाश्व जनक के काल में मिथिला नगरी में रहता था। एक बार कृष्ण जब मिथिला नगरी में आया था, उस समय बहुलाश्व राजा ने, एवं इस ब्राह्मण ने एक साथ ही उसे अपने घर बुला लिया। उस समय इन दोनों की भक्तिभावना एक समान ही उत्कट देख कर, कृष्ण ने दो रूप धारण किये, एवं एक समय ही वह इन दोनों के घर जा पहुँचे। पश्चात् उसने इन दोनों को उपदेश प्रदान किया (भा. १०.८६)।

२. कृष्ण के महारथी पुत्रों में से एक (भा. १०. ९०.३३)।

३. एक यादव, जो कृष्ण का अनुयायी था (भा. १. १४.३२)।

४. विष्णु का एक पार्षद, जिसने बलि वैरोचन के असुर अनुगामियों पर हमला किया था (भा. ८. २१.१७)।

श्रुतदेवा अथवा **श्रुतदेवी**—करूषदेशीय वृद्धशर्मन् (वृद्धधर्मन्) राजा की पत्नी, जो शूर राजा की कन्या एवं वसुदेव की बहन थी (म. भा. ४.२४.३०)। इसे पृथुकीर्ति नामांतर भी प्राप्त था। सुविख्यात असुर दंतवक्र इसका ही पुत्र था (ब्रह्म. १४)।

श्रुतध्वज-- मत्स्यराज विराट का भाई, जो भारतीय युद्ध में पांडवों का रक्षक था (म. द्रो. १३३.३९)।

श्रुतबंधु गौपायन (लौपायन)--एक वैदिकसूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२४; १०.५७-६०)।

श्रुतय--श्रोतन नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

श्रुतरथ--एक तरुण राजा, जो कक्षीवत् नामक आचार्य का, एवं उसके पज्र परिवार का आश्रयदाता था (ऋ. १.१२२.७)। प्रभुवसु अंगिरस ऋषि ने भी इसके दातृत्व की प्रशंसा की है (ऋ. ५.३६.६)।

श्रुतरय--अश्विनों की कृपापात्र एक व्यक्ति, जिसका उन्होंने संरक्षण किया था (ऋ. १.११२.९)।

श्रुतर्वन्--धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. श. २५.२७)।

श्रुतर्वन् आर्क्ष--एक उदार राजा, जिसके दातृत्व की प्रशंसा ऋग्वेद में गोपवन नामक ऋषि के द्वारा की गयी है (७.७४.४-१३)। इसने मृगय पर विजय प्राप्त की थी (ऋ. १०.४९.५)। ऋक्ष का वंशज होने के कारण, इसे 'आर्क्ष' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

महाभारत में--इसके दातृत्व का वर्णन महाभारत में भी प्राप्त है। एक बार अगस्त्य ऋषि इसके पास धन माँगने के लिए आये। इसके दातृत्व के कारण इसके खजाने में कुछ भी द्रव्य बाकी नहीं था। इसने धन देने के संबंध में अपनी असमर्थता अगस्त्य ऋषि से निवेदित की, एवं अपने आयव्यय के सारे हिसाब भी उसे दिखाये।

पश्चात् यह अगस्त्य को साथ ले कर ब्रध्नश्व आदि राजाओं के पास गया, एवं उनसे इसने अगस्त्य ऋषि को विपुल धन दिलवाया (म. व. ९६.१-५)।

श्रुतवत्--(सो. मगध.) मगध देश का एक राजा, जो भविष्य एवं विष्णु के अनुसार सोमापि राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसे श्रुतश्रवस् कहा गया है। (भा. ९.२२.९)। इसके पुत्र का नाम अयुतायु था।

श्रुतवर्मन्--दुर्योधन के पक्ष का एक राजा (म. क. ४.१०१)। यह संभवतः धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'श्रुतकर्मन्'।

श्रुतविद् आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ६२)। ऋग्वेद में अन्यत्र भी इसका निर्देश प्राप्त हैं (ऋ. ५.४४.१२)।

श्रुतश्रवस्--(मगध. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार सोमाधि राजा का, भागवत के अनुसार मार्जारि राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार सोमापि राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अयुतायु था।

२. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.८)।

३. एक ऋषि, जिसने तप से सिद्धी प्राप्त की थी (म. शां. २८१.१६-१७)। इसके पुत्र का नाम सोमश्रवस् था, जो इसे एक सर्पिणी से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ३.१२)।

जनमेजय के सर्पसत्र में--जनमेजय के द्वारा किये गये दीर्घसत्र में उसके पुरोहित देवशुनी ने उसे शाप दिया, एवं उसके पौरोहित्य का त्याग किया। पश्चात् जनमेजय इससे मिलने आया, एवं उसने इसके पुत्र सोमश्रवस् को अपना पुरोहित बनने की प्रार्थना की। इसने उसे मान्यता दी, एवं इस प्रकार सोमश्रवस् जनमेजय के सर्पसत्र का पुरोहित बन गया (सोमश्रवस् देखिये)।

यह स्वयं भी जनमेजय के सर्पसत्र का सदस्य था (म. आ. ४८.९)।

४. एक असुर, जो गरुड के द्वारा मारा गया था।

५. सूर्यपुत्र शनैश्चर का नामांतर (वायु. ८४.५१)।

६. सावर्णि मनु का नामांतर (वायु. ८४.५१)।

श्रुतश्रवा--चेदिराज दमघोष की पत्नी, जो शूर राजा की कन्या, वसुदेव की भगिनी, एवं कृष्ण की पितृष्वसा (फूफी) थी। इसके पुत्र का नाम शिशुपाल था (शिशुपाल देखिये)।

श्रुतश्री--एक असुर, जो गरुड के द्वारा मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

श्रुतसेन--सहदेवपुत्र श्रुतकर्मन् का नामांतर। कृत्तिका नक्षत्र के अवसर पर इसका जन्म हुआ था, जिस कारण इसे श्रुतसेन नाम प्राप्त हुआ था (श्रुतकर्मन् देखिये)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो परिक्षित् राजा का पुत्र था (म. आ. ३.१)। वैदिक साहित्य में इसे जनमेजय राजा का भाई कहा गया है (श. ब्रा. १३.५.४.३; सां. श्रौ. १६.९.४)।

३. शत्रुघातिन् राजा का नामांतर।

४. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. १९.१५)।

५. एक असुर, जो गरुड के मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

श्रुतसेना--कुन्ती की बहन, जो केकय राजा धृष्टकेतु शारदाण्डायनि की पत्नी थी (म. आ. १११.११८३*)। विष्णु, वायु, एवं भागवत में इसे श्रुतकीर्ति कहा गया है (श्रुतकीर्ति ३. देखिये)।

परिवार--महाभारत के अनुसार, नियोगविधि से इसे दुर्जयादि तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे। पौराणिक साहित्य में इसके पुत्रों की नामावलि निम्नप्रकार दी गयी है:--१. **मत्स्य में**--अनुव्रत, २. **वायु में**--संतर्दन, चेकितान, बृहत्क्षत्र, विंद, एवं अनुविंद।

श्रुतानीक--विराट का भाई, जो भारतीय युद्ध में पांडवों का सहायक था (म. द्रो. १३३.३९)।

श्रुतांत--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. श. २५.८)।

श्रुतायु--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार भानुश्चंद्र राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में यह मारा गया (मत्स्य. १२.५५)।

२. (सो. पुरूरवस्) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार पुरूरवस् एवं उर्वशी के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम वसुमत् था।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया था (म. क. ३५.३७.११)।

४. अंबष्ठ देश का एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५९)। द्रौपदी के स्वयंवर में, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१९; स. ४.२४)।

भारतीय युद्ध में यह कौरव पक्ष में शामिल था एवं इसका निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध हुआ था:--१. अर्जुन-पुत्र इरावत् (म. भी. ४३.६८); २. युधिष्ठिर (म. भी ४३.६६)। भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये क्रौंचव्यूह के जघनभाग में खड़ा था (म. भी. ७१.२२)। अन्त में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ६८.६४)।

५. कलिंग देश का एक क्षत्रिय राजा, जिसके भाई का नाम अयुतायु था (म. क. ५०-५२)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था, एवं भीम के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. भी. ५०.६)। अपने भाई अयुतायु के साथ, यह कौरवसेना के दक्षिण भाग का संरक्षण करता था (म. भी. ४७.१८)। अन्त में ये दोनों भाई अर्जुन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. ६८.७-२५)।

इसके दीर्घायु एवं नियतायु नामक दो पुत्र थे। अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए, उन्होंने अर्जुन पर आक्रमण किया था, किन्तु अर्जुन ने उन दोनों का भी वध किया (म. द्रो. ६८. २७-२९)।

६. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार अरिष्टनेमि राजा का पुत्र, एवं सुपार्श्वक राजा का पिता था (भा. ९.१३.२३; विष्णु. ४.५.३१)।

श्रुतायुध--कलिंग देश का एक राजा, जो वरुण एवं शीततोया (पर्णाशा) का पुत्र था (म. स. ४.२३; भी. १६.३४)। इसके पिता वरुण ने इसे एक गदा अभिमंत्रित कर दी थी, एवं कहा था, 'इस गदा के कारण तुम युद्ध-भूमि में सदैव अजेय रहोंगे। किन्तु युद्ध न करनेवाले किसी भी व्यक्ति पर इस गदा का प्रहार तुम नहीं करना, अन्यथा तुम मारे जाओगे।

भारतीय युद्ध में यह कौरव पक्ष में शामिल था, एवं एक अक्षौहिणी सेना ले कर यह युद्धभूमि में उपस्थित हुआ था (म. भी. १६.३४-३५)। युद्ध के प्रारंभ में ही, इसका भीम के साथ युद्ध हुआ, जिसमें इसके सत्य एवं सत्यदेव नामक दो चक्ररक्षक मारे गये (म. भी. ५०. ६९)। अन्त में वरुण के द्वारा प्रदान की गयी गदा इसने युद्ध न करनेवाले श्रीकृष्ण पर फेंकी, जिस कारण अपनी ही गदा से इसकी मृत्यु हो गयी (म. द्रो. ६७.४३-५८)।

श्रुतावती--एक तपस्विनी जो भरद्वाज ऋषि एवं घृताची अप्सरा की कन्या थी। इसने घोर तपस्या कर के, इन्द्र को पतिरूप में प्राप्त किया था (म. श. ४७.२)।

श्रुति--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक प्राचीन राजा (म. आ. १.२३८)।

श्रुति आत्रेयी--स्वायंभुव मन्वंतर के अत्रि ऋषि की कन्या। पुलहपुत्र कर्दम प्रजापति से इसका विवाह हुआ था (पुलह १. देखिये)।

श्रुतिविद्व--(सो. कुरु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार धर्म राजा का पुत्र था।

श्रुतुगुण--स्वायंभुव मन्वंतर के जिताजित् देवों में से एक।

श्रुष वाह्नेय काश्यप--एक आचार्य, जो देवतरस् श्यावसायन नामक आचार्य का शिष्य, एवं इंद्रोत दैवाप शौनक नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.४०. २)। 'वह्नि' एवं 'कश्यप' का वंशज होने के कारण, इसे

'वाह्रेय' एवं 'काश्यप' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। इसके 'श्रुष' नाम का सही पाठ संभवतः 'शूष' ही होगा।

श्रुष्टि आंगिरस--एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. १३.११.२१-२३)।

श्रुष्टिगु काण्व--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५१)। इसके सूक्त में निम्नलिखित आचार्यों के साथ इसका निर्देश प्राप्त है :--१. सांवरणि मनु; २. नीपातिथि; ३. मेध्यातिथि (ऋ. ८.५१.१)। पार्षद्वाण राजा के द्वारा प्रस्कण्व नामक आचार्य को विपुल धन दिये जाने का निर्देश इसके सूक्त में प्राप्त है (ऋ. ८.५१.२)।

श्रेणिमत्--गोशृंग पर्वत पर निवास करनेवाला एक राजा। भीमसेन ने अपने पूर्व दिग्विजय में, तथा सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्विजय में इसे परास्त किया था (म. स. २७.१; २८.५)।

भारतीययुद्ध में यह पांडव पक्ष में शामिल था (म. द्रो. २२.३०)। इसके रथ के अश्व पीले रेशमी वस्त्र के वर्ण के थे, एवं उनका जीन स्वर्ण का था। उनके गलों में स्वर्ण मालाएँ थी (म. द्रो. २२.३०)। पांडव सैन्य में इसकी श्रेणी 'अतिरथि' थी। अंत में यह कौरवपक्षीय वीरों के द्वारा मारा गया (म. द्रो. २२.३०)।

२. कुमार देश का एक राजा, जिसे भीम ने अपने पूर्व दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २७.१)।

श्रेष्ठ--सुधामन् देवों में से एक (ब्रह्मांड. २. ३६.२८)।

श्रेष्ठभाज् वासिष्ठ--कल्माषपाद सौदास राजा के पुरोहित वसिष्ठ ऋषि का नामांतर (म. आ. १६७.१५; १६८. २२; वसिष्ठ श्रेष्ठभाज् देखिये)।

श्रोतन--कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण। पाठभेद--'श्रुतय'।

श्रोतृ--श्रावण माह का यक्ष (भा. १२.११.३७)।

२. आद्य देवों में से एक।

श्रोत्र--तुषित देवों में से एक (वायु. ६६.१८)।

श्रौतर्षि--देवभाग नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१.६; श. ब्रा. २.४.४; तै. ब्रा. ३.१०.९. ११)।

श्रौतश्रवस--शिशुपाल राजा का मातृक नाम, जो उसे उसके 'श्रुतश्रवा' नामक माता के कारण प्राप्त हुआ था (श्रुतश्रवा देखिये)।

श्रौमत्य--एक आचार्य (श. ब्रा. १०.४.५.१)। 'श्रुमत्' का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

श्वफल्क--(सो. यदु. वृष्णि.) एक पुण्यश्लोक यादव राजा, जो वृष्णि राजा का पुत्र, एवं चित्रक राजा का ज्येष्ठ भाई था। मत्स्य एवं पद्म में इसे 'जयंत' कहा गया है।

एक बार काशी देश में बारह वर्षों तक वर्षा न होने से अकाल पड़ गया। उस समय यह सहज ही काशी देश जा पहुँचा। इसके वहाँ जाते ही, वृष्टि हो कर अकाल नष्ट हुआ। इस कारण इसे पुण्यशील मान कर काशिराज ने इसका सत्कार किया, एवं अपनी गांदिनी नामक कन्या इसे विवाह में दे दी।

परिवार-गांदिनी से इसे निम्नलिखित तेरह पुत्र उत्पन्न हुए :--१. अक्रूर; २. आसंग; ३. सारमेय; ४. मृदुर; ५. मृदुविद्; ६. गिरि; ७. धर्मवृद्ध; ८. सुवर्मन्; ९. क्षेत्रोपेक्ष; १०. अरिमर्दन; ११. शत्रुघ्न; १२. गंधमाद; १३. प्रतिबाहु।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त, इसकी सुचीरा नामक एक कन्या भी (भा. ९.२४.१६-१७)।

श्वसन--धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१७)। पाठभेद--'सुषेण'।

श्वसृप--एक सैंहिकेय असुर, जो हिरण्यकशिपु का भतीजा था (मत्स्य. ६.२७)।

श्वाजनि--एक वैश्य (जै. उ. ब्रा. ३.५.२)।

श्वात--एक राक्षस, जो कश्यप एवं ब्रह्मधना के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.९८)।

श्वाहि--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वृजिनवत् राजा का पुत्र, एवं रुशेकु राजा का पिता था (भा. ९.२३.३१)। मत्स्य एवं वायु में इसे क्रमशः 'स्वाह' एवं 'स्वाहि' कहा गया है।

श्विक्न--एक जातिविशेष, जिनके राजा का नाम ऋषभ याज्ञतुर था (श. ब्रा. १२.८.३.७; १३.५.४.१५)। गौरवीति नामक आचार्य इनका पुरोहित था।

श्वेत--पाताल में रहनेवाला एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (भा. ५.२४.२१)।

२. एक शिवावतार, जो सातवें वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर के प्रथम युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। यह अवतार प्रभु व्यास के समकालीन माना जाता है।

हिमालय के छागल नामक शिखर में यह अवतीर्ण हुआ था। इसके शिखा धारण करनेवाले निम्नलिखित चार शिष्य थे :—१. श्वेत; २. श्वेतशिख; ३. श्वेताश्व; ४. श्वेतलोहित (शिव. शत. ४)।

३. एक शिवावतार, जो सातवें वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर के तेइसवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। यह कालंजर पर्वत पर अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे :—१. उशिक; २. बृहदश्व; ३. देवल; ४. कवि (शिव. शत. ५.)।

४. श्वेत नामक शिवावतार का शिष्य था (श्वेत. २. देखिये)।

५. एक दिग्गज, जो क्रोधवशाकन्या श्वेता का पुत्र था।

६. एक असुर, जो विप्रचित्ति असुर का पुत्र था। इसने तारकासुर-युद्ध में भाग लिया था (मत्स्य. १७७. ७)।

७. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था (वायु. ६९.१६९)।

८. एक राजा, जो वपुष्मत् राजा के पुत्रों में से एक था। इसके ही नाम से इसके देश को 'श्वेतदेश' नाम प्राप्त हुआ था (वायु. ३३.२८)।

९. मत्स्यनरेश विराट राजा के पुत्रों में से एक। कोसलराजकन्या सुरथा इसकी माता थी। यह अत्यंत प्राक्रमी था, एवं इसने भारतीय युद्ध में शल्य एवं भीष्म से युद्ध किया था। अन्त में यह भीष्म के द्वारा मारा गया (म. भी. परि. १. क्र. ११८)।

१०. एक धर्मनिष्ठ राजर्षि, जिसने अपने मृत हुए पुत्र को पुनः जीवित किया था (म. शां १४९.६३)।

११. एक राजा, जिसकी गणना भारतवर्ष के प्रमुख वीरों में की जाती थी।

१२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६३)।

१३. राम के पक्ष का एक वानर (वा. रा. यु. ३०)।

१४. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो कूर्म के अनुसार आर्हति राजा का पुत्र था।

१५. एक पापी राजा, जो अगस्त्य ऋषि के दर्शन से मुक्त हुआ था। यह सुदेव राजा का ज्येष्ठ पुत्र था।

इसने अपनी उत्तर आयु में कठोर तपस्या की, किन्तु अन्नदान का पुण्य कहीं भी संपादन नहीं किया। इस कारण यद्यपि इसे स्वर्गप्राप्ति हुई, फिर भी यह सदैव क्षुधा एवं तृषा से तड़पता रहा। यहाँ तक कि, अपनी ही माँस खाने लगा।

अन्त में ब्रह्मा ने इसे मुक्ति का मार्ग बताते हुए पुनः एक बार पृथ्वीलोक पर जाने के लिए कहा, एवं अगस्त्य ऋषि के दर्शन से मुक्ति प्राप्त करने की आज्ञा दी।

तदनुसार यह पृथ्वीलोक में आया, एवं इसने अगस्त्य ऋषि के दर्शन से मुक्ति प्राप्त की (वा. रा. उ. ७८; पद्म. सृ. ३४)।

१६. एक राजा, जो अर्जुन एवं कौरवों के बीच हुआ 'उत्तर गोग्रहण' युद्ध देखने के लिए स्वर्ग से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. भी. ९१.७*, पंक्ति. २८)।

१७. एक शिवभक्त, जिसने शिवभक्ति कर मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी (स्कंद. १.१.३२; ब्रह्म. ५९. ७४; लिंग. ३१)।

श्वेतकि--एक राजा, जो सदैव यज्ञकार्य में रत रहता था। इसने यज्ञकार्य में सिद्धि प्राप्त करने के लिए शिव की कठोर तपस्या की थी। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर, शिव ने दुर्वासस् ऋषि को इसका पुरोहित बनने की आज्ञा दी। आगे चल कर दुर्वासस् की सहायता से इसने शत-संवत्सरात्मक सत्र का आयोजन किया, एवं इस प्रकार बारह वर्षों तक निरंतर यज्ञकार्य कर अगणित पुण्य संपादन किया।

श्वेतकेतु औद्दालकि आरुणेय—एक सुविख्यात तत्त्वज्ञानी आचार्य, जिसका अत्यंत गौरवपूर्ण उल्लेख शतपथ ब्राह्मण, छांदोग्य उपनिषद, बृहदारण्यक उपनिषद आदि ग्रंथों में पाया जाता है। यह अरुण एवं उद्दालक नामक आचार्यों का वंशज था, जिस कारण इसे 'आरुणेय' एवं 'औद्दालकि' पैतृक नाम प्राप्त हुए थे (श. ब्रा. ११. २.७.१२; छां. उ. ५,३.१; बृ. उ. ३.७.१; ६.१.१)।

कौषीतकि उपनिषद में इसे आरुणि का पुत्र, एवं गोतम ऋषि का वंशज कहा गया है (कौ. उ. १.१)। छांदोग्य उपनिषद में इसे अरुण ऋषि का पौत्र, एवं उद्दालक आरुणि का पुत्र कहा गया है (छां उ. ५.११.२)। कौसुरुबिंदु औद्दालकि नामक आचार्य इसका ही भाई था। यह गौतमगोत्रीय था।

निवासस्थान—अपने पिता आरुणि की भाँति यह कुरु पंचाल देश का निवासी था। अन्य ब्राह्मणों के साथ यात्रा करते हुए यह विदेह देश के जनक राजा के दरबार में गया था। किन्तु उस देश में इसने कभी भी निवास नहीं किया था (श. ब्रा. ११.६.२.१)।

कालनिर्णय--यह पंचाल राजा प्रवाहण जैवल राजा का समकालीन था, एवं उसका शिष्य भी था (बृ. उ. ६. १.१. माध्यं; छां. उ. ५.३.१)। यह विदेह देश के जनक

राजा का भी समकालीन था एवं इस राजा के दरबार में इसने वाजसनेय से वादविवाद किया था (बृ. उ. ३.७. १)। इस वादविवाद में यह याज्ञवल्क्य से पराजित हुआ था।

बाल्यकाल––इसके बाल्यकाल के संबंध में संक्षिप्त जानकारी छांदोग्य उपनिषद में प्राप्त है। बचपन में यह अत्यंत उद्दण्ड था, जिस कारण बारह वर्ष की आयु तक इसका उपनयन नहीं हुआ था। बाद में इसका उपनयन हुआ, एवं चौबीस वर्ष की आयु तक इसने अध्ययन किया।

इसके पिता ने इसे उपदेश दिया था, 'अपने कुल में कोई विद्याहीन पैदा नहीं हुआ है। इसी कारण तुम्हारा यही कर्तव्य है कि, तुम ब्रह्मचर्य का सेवन कर विद्यासंपन्न बनो'। अपने पिता की आज्ञा के अनुसार, अपनी आयु के बारहवें वर्ष से चौबीस वर्ष तक इसने गुरुगृह में रह कर विद्याग्रहण किया।

विद्यार्जन—कौषीतकि उपनिषद् के अनुसार, इसने चित्र गार्ग्यायणि के पास जा कर ज्ञान संपादन किया (कौ. उ. १.१)। अपने समकालीन प्रवाहण जैवल नामक राजा से भी इसके विद्या प्राप्त करने का निर्देश भी बृहदारण्यक उपनिषद में प्राप्त है। एक बार जब यह पांचालों की विद्वत्सभा में गया था, तब उस समय पांचाल राजा प्रवाहण जैवल से इसका तत्त्वज्ञानविषयक वादविवाद हुआ। इस वादविवाद में प्रवाहण के द्वारा कई प्रश्न पूछे जाने पर, यह उनका योग्य जवाब न दे सका। इतना ही नही, इसका पिता उद्दालक आरुणि भी प्रवाहण के इन प्रश्नों का जवाब नहीं दे सका। इस कारण यह एवं इसके पिता परास्त हो कर प्रवाहण की शरण में गये, एवं उसे अपना गुरु बना कर इन्होंने उससे ज्ञान प्राप्त किया (बृ. उ. ६.२)।

घमंडीपन—इस प्रकार विद्याग्रहण कर विद्वान होने के कारण, यह अपने को बड़ा विद्वान समझने लगा, एवं दिन-ब-दिन इसका अहंकार बढ़ता ही गया। उस समय इसके पिता ने किताबी ज्ञान से अनुभवगम्य ज्ञान किस प्रकार अधिक श्रेष्ठ है, इसका ज्ञान इसे दिया, एवं इसे आत्मज्ञान का उपदेश किया, जो 'तत्त्वमसि' नाम से सुविख्यात है।

'तत्त्वमसि' उपदेश—इसके पिता उद्दालक अरुण ऋषि के द्वारा इसे दिया हुआ 'तत्त्वमसि' का उपदेश छांदोग्य उपनिनिषद में प्राप्त है (छां. उ. ६. ८-१६))

इसने अपने पिता से प्रश्न किया, 'मिट्टी के एक परमाणु का ज्ञान होने से उसके सभी भेदों, नामों एवं रूपों का ज्ञान हमें प्राप्त होता है। उसी प्रकार आप ऐसी सूक्ष्मातिसूक्ष्म वस्तु का ज्ञान मुझे बतायें कि, जिस कारण सृष्टि के समस्त चराचर वस्तुओं का ज्ञान मुझे प्राप्त हो सके।' इस पर इसके पिता ने इसे जवाब दिया, 'तुम (याने तुम्हारी आत्मा), एवं इस सृष्टि की सारी चराचर वस्तुएँ दोनों एक है, एवं ये सारी वस्तुओं का रूप तू ही है (तत्त्वमसि)। अगर तू अपने आपको (याने अपनी आत्मा को) जान सकेगा, तो तुझे इस सृष्टि का ज्ञान पूर्ण-रूप से हो जायेगा'।

इसे उपर्युक्त तत्त्व समझाते हुए इसके पिता ने नदी समुद्र, पानी, नमक आदि नौ प्रकार के दृष्टान्त इसे दिये, एवं हर समय 'तत्त्वमसि' शब्द का पुन-रुच्चारण किया। यही 'तत्त्वमसि' शब्दप्रयोग, आगे चल कर, अद्वैत वेदान्त के महावाक्यों में से एक बन गया।

यज्ञसंस्था का आचार्य––कौषीतकि ब्राह्मण में इसे कौषीतकि लोगों के यज्ञसंस्था का प्रमुख आचार्य कहा गया है। यज्ञसंस्था में विविध पुरोहितों के कर्तव्य क्या होना चाहिए, यज्ञपरंपरा में कौनसी त्रुटियाँ है, इस संबध में अनेकानेक मौलिक विचार इसने प्रकट किये हैं। ब्रह्म-चारी एवं तापसी लोगों के लिए विभिन्न आचरण भी इसने प्रतिपादित किये है, एवं उस संबंध में अपने मौलिक विचार प्रकट किये हैं। इसके पूर्व कालीन धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथों में, ब्रह्मचारियों के द्वारा मधु भक्षण करने का निषेध माना गया है। किन्तु इसने मधुभक्षण करने के संबंध में यह आक्षेप को व्यर्थ बतलाया (श. ब्रा. ११. ५.४.१८)। अन्य ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त यज्ञविषयक कथाओं में भी इसके अभिमतों का निर्देश प्राप्त है (शां. ब्रा. २६. ४; गो. ब्रा. १.३३)।

आचार्यों के द्वारा किये गये यज्ञकार्यों में ज्ञान की उपासना प्रमुख, एवं अर्थोपार्जन गौण मानना चाहिए इस संबंध में इसका एवं इसके पिता उद्दालक आरुणि का एक संवाद शांखायन श्रौतसूत्र में प्राप्त है (शां. श्रौ. १६.२७.६)। एक बार जल जातुकर्ण्य नामक आचार्य काशी, कोसल एवं विदेह इन तीनों देश के राजाओं का पुरोहित बन गया। उस समय यह अत्यधिक रुष्ट हो कर पिता से कटु वचन करने लगा। इस पर पिता ने इसे, कहा:—

कृत्स्नके ब्रह्मबन्धौ व्यजिज्ञासिषि।

(पुरोहित के लिए यही चाहिए कि वह ज्ञान से प्रेम करें, एवं भौतिक सुखों की ज्यादा लालच न करें)।

धर्मसूत्रों में--आपस्तंब धर्मसूत्र में इसे 'अवर' (श्रेष्ठ आचार्य) कहा गया है (आप. ध. १.२.५.४-६.)। अन्य उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में इसके अनेकानेक निर्देश मिलते हैं। फिर भी इसका सर्वप्रथम निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त होने के कारण, यह पाणिनि पूर्वकालीन आचार्य माना जाता है।

कामशास्त्र का प्रणयिता—वात्स्यायन कामसूत्र में प्राप्त निदर्शों के द्वारा प्रतीत होता है कि, नंदिन् के द्वारा विरचित आद्य कामशास्त्र ग्रंथ का इसने संक्षेप कर, उसे ५०० अध्यायों में ग्रथित किया। आगे चल कर श्वेतकेतु के इसी ग्रंथ का बाभ्रव्य पांचाल ने पुनःसंक्षेप किया; एवं उसे सात अधिकरणों में ग्रंथित किया। बाभ्रव्य के इसी ग्रंथ को पुनः एक बार संक्षेप कर, एवं उसमें दत्तकाचार्य कृत 'वैशिक,' चारणाचार्य कृत 'साधारण अधिकरण', सुवर्णनाभ कृत 'सांप्रयोगिक,' घोटकमुख कृत 'कन्या-संप्रयुक्त,' गोनर्दिय कृत 'भार्याधिकारिक,' गोणिकापुत्र कृत 'पारदारिक' एवं कुचुमारकृत 'औपनिषदिक' आदि विभिन्न ग्रंथों की सामग्री मिला कर वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र की रचना की। फिर भी उसके मुख्य आधार-भूत ग्रंथ श्वेतकेतु एवं बाभ्रव्य पांचाल के द्वारा लिखित कामशास्त्रविषयक ग्रंथ ही थे।

ब्राह्मण जाति के लिए मद्यपान एवं परस्त्रीगमन वर्ज्य ठहराने की महत्त्वपूर्ण सामाजिक सुधार श्वेतकेतु के द्वारा ही प्रस्थापित हुई (का. सू. १.१.९)। ब्राह्मणों के लिए परस्त्रीगमन वर्ज्य ठहराने में इसका प्रमुख उद्देश्य था कि, ब्राह्मण लोग अपने स्वभार्या का संरक्षण अधिक सुयोग्य प्रकार से कर सकें (का. सू. ५.६.४८)।

इस प्रकार श्वेतकेतु भारतवर्ष का पहला समाजसुधारक प्रतीत होता है, जिसने समाजकल्याण की दृष्टि रख कर, अनेकानेक नये यम-नियम प्रस्थापित किये। इसीने ही सर्व प्रथम लैंगिक व्यवहारों में नीतिबंधनों का निर्माण किया, एवं सुप्रजा, लैंगिक नीतिमत्ता, परदारागमननिषेध आदि के संबंध में नये नये नियम किये, एवं इस प्रकार विवाहसंस्था की नींव मजबूत की।

महाभारत में--वैवाहिक नीतिनियमों का निर्माण करने की प्रेरणा इसे किस कारण प्रतीत हुई, इस संबध में अनेकानेक चमत्कृतिपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है। यह उद्दालक ऋषि का औरस पुत्र न हो कर, उसके पत्नी से उसके एक शिष्य के द्वारा उत्पन्न हुआ था (म. शां. ३५.२२)। आगे चल कर इसकी माता का एक ब्राह्मण ने हरण किया। उसी कारण, इसने स्त्रियों के लिए पातिव्रत्य का, एवं पुरुषों के लिए एकपत्नीव्रत के नियमों का निर्माण किया।

महाभारत में इसे उद्दालक ऋषि का पुत्र कहा गया है, एवं इसके मामा का नाम अष्टावक्र बताया गया है (म. आ. ११३.२२)। जन्म से ही इस पर सरस्वती का वरद-हस्त था (म. व. १३२.१)।

जनमेजय के सर्पसत्र का यह सदस्य था, एवं बंदिन् नामक आचार्य को इसने वाद-विवाद में परास्त किया था (म. आ. ४८.७; व. १३३)। किंतु जनमेजय के सर्पसत्र में भाग लेनेवाला श्वेतकेतु कोई उत्तरकालीन आचार्य होगा।

परिवार--देवल ऋषि कन्या सुवर्चला इसकी पत्नी थी। इससे उसने 'पुरुषार्थ-सिद्धि' पर वादविवाद किया था (म. शां. परि. १.१९.९९-११८)।

महाभारत में इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है:--उपवेश--अरुण उद्दालक-श्वेतकेतु। उसी ग्रंथ में इसे शाकल्य, आसुरि, मधुक, प्राचीनयोग्य एवं सत्यकाम ऋषियों का समकालीन कहा गया है।

२. लांगलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

श्वेतचक्षु--प्रसूत देवों में से एक।

श्वेतपराशर--पराशरकुलोत्पन्न एक उपशाखा।

श्वेतपर्ण यौवनाश्व—एक राजा, जो हस्तिनापुर के पूर्व में स्थित भद्रावती नगरी का राजा था। इसके पास एक सुंदर अश्व था, जो युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के लिए, भीम जीत कर लाया था (जै. अ. १७)।

श्वेमभद्र--एक गुह्यक यक्ष, जो कुबेर का सेवक था (म. स. १०.१४)।

श्वेतलोहित-श्वेत नामक शिवावतार का एक शिष्य।

श्वेतवक्त्र--स्कंद का एक सैनिक (म. श ४४.६८)।

श्वेतवराह--विष्णु के वराह अवतार का नामांतर। इसे 'आदिवराह' नामांतर भी प्राप्त था।

श्वेतवाहन--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था (वायु. ९६. १३६)। मत्स्य में इसे शूर राजा के राजाधिदेव नामक भाई का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ४४.७८)।

श्वेतशिख--श्वेत नामक शिवावतार का शिष्य।

श्वेता--कश्यप एवं क्रोधा की कन्या, जिसे श्वेत नामक दिग्गज पुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६०.३४)। यह वानरजाति की भी माता मानी जाती है, जिनकी वंशावलि विस्तृत रूप में दी गयी है (ब्रह्मांड. ३.७.१८०-१८१ वानर देखिये)।

श्वेताश्व--श्वेत नामक शिवावतार का एक शिष्य।

श्वेताश्वतर--एक आचार्य, जो श्वेताश्वेतर नामक सुविख्यात उपनिषद का रचयिता माना जाता है (श्वेताश्वतर ६.२१)। इसने स्वायंभुव ऋषि से ब्रह्मविद्या प्राप्त की थी। इसके नाम की एक कृष्णयजुर्वेदी शाखा भी उपलब्ध है। इसके नाम पर श्वेताश्वतर नामक एक ब्राह्मण ग्रंथ भी निर्दिष्ट है, जो वर्तमानकाल में केवल नाममात्र ही उपलब्ध है।

श्वेताश्वतर उपनिषद्--समस्त उपनिषद् वाङ्मय में श्वेताश्वतर उपनिषद एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है (रुद्र-शिव देखिये)। ईश्वर समस्त सृष्टि का शास्ता एवं नियंता है, यही इस उपनिषद का प्रमुख प्रतिपाद्य विषय है। दर्शनशास्त्रों में से सांख्य एवं वेदान्त दर्शन जब एक ही शास्त्र माने जाते थे, उस समय इस ग्रंथ की रचना की गयी थी।

इस उपनिषद के पहले अध्याय में त्रैमूर्त्यात्मक अद्वैत शैवमत की श्रेष्ठता प्रतिपादन की गयी है। दूसरे अध्याय में योग एवं योगपरिणाम का प्रतिपादन किया गया है। तीसरे एवं चौथे अध्याय में सांख्य एवं शैव मत का कथन प्राप्त है। पाँचवें अध्याय के दूसरे मंत्र में कपिल शब्द की आध्यात्मिक निरुक्ति दी गयी है। छठे अध्याय में सगुण ईश्वर का वर्णन प्राप्त है, जो सांप्रदाय-निरपेक्ष होने के कारण अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

श्वैक्न--प्रतीदर्श नामक ऋषि की उपाधि, जिसका शब्दशः अर्थ 'श्विक्नों का राजा' माना जाता है। यह दाक्षायण यज्ञ की प्रक्रिया में निपुण था, जिस यज्ञ की शिक्षा इसने सुप्लन् साञ्जय नामक आचार्य को दी थी। (श. ब्रा. २.४.४.३)। वेबर के अनुसार, श्विक्न एवं सृंजय लोगों का यह एकत्र निर्देश इन दोनों जातियों के घनिष्ठ संबंध की ओर संकेत करता है (इन्डिशे स्टूडियन १.२०९-२१०)।

श्वैत्य--शैब्यपुत्र सृंजय राजा का पैतृक नाम। पाठभेद-'शैब्य' (म. द्रो. परि. १.८.२७४)।

श्वैत्रेय--एक व्यक्ति, जिसे इंद्र ने जीवित किया था (ऋ. ६.२६.४)। सायण के अनुसार, 'श्वैत्रेय' शब्द की निरुक्ति 'श्वित्रा के वंशज' की गयी है। लुडविग के अनुसार, दशद्यु एवं श्वैत्रेय एक ही था, एवं यह कुत्स का पुत्र था। गेल्डनर के अनुसार यह श्वित्रा नामक गाय का पुत्र था, जिसका युद्ध के लिए उपयोग किया जाता था। ऋग्वेद में अन्यत्र 'श्वैत्रेय' शब्द का एक बैल के नाते उल्लेख किया गया है।

ष

षट्पुर--निकुंभ राक्षस का नामांतर, जिसका वध कृष्ण के द्वारा हुआ था।

हरिवंश में प्राप्त 'षट्पुर' का आख्यान शिवचरित्र में त्रिपुरदाह से मिलता जुलता प्रतीत होता है। जिस प्रकार त्रिपुर किसी व्यक्ति का नाम न हो कर, असुरों के निवासस्थान का नाम था, उसी प्रकार षट्पुर भी निकुंभ राक्षस के निवासस्थान का नाम था।

निकुंभ राक्षस अनेकानेक रूप धारण कर विभिन्न स्थानों में घूमता था। उनमें से दो स्थानों का एवं वहाँ स्थित निकुंभ के देहों का कृष्ण ने विनाश किया। कृष्ण के इसी पराक्रम को 'षट्पुर-विनाश' कहा गया है (ह. वं. २.८५-९०)।

षटांकुर--शठ एवं कठ नामक राक्षसों का सामूहिक नाम।

षंड--एक पुरोहित, जो सर्पसत्र में उपस्थित था (पं. ब्रा. २५.२.५३)। शंडामर्क नामक आचार्यों में से शंड का ही यह संभवतः नामांतर होगा।

षंडिक--केशिन् नामक आचार्य के खंडिक नामक प्रतिस्पर्धी का नामांतर (मै. सं. १.४.१२)।

षष्ठी--स्कंदपत्नी देवसेना का नामांतर। इसीके ही कारण स्कंद को 'षष्ठीप्रिय' कहते है (म. व. परि. १. २२.११)। यह ब्रह्मा की सभा में उपस्थित रह कर उसकी उपासना करती थी (म. स. ११.१३२*, पंक्ति ३)। इसके ही कृपा के कारण, प्रियव्रत राजा का 'सुव्रत' नामक पुत्र पुनः जीवित हुआ था।

षोडश-राजकीय—सोलह प्राचीन भारतीय राजाओं का एक समूह, जिनके जीवनचरित्र महाभारत के 'षोडश राजकीय' नामक उपाख्यान में प्राप्त है, जो नारद के द्वारा सृंजय राजा को सुनायें गये थे (म. द्रो. परि. १.८. ३२५-८७२; नारद देखिये)। येही जीवनचरित्र आगे चल कर कृष्ण ने युधिष्ठिर को सुनाये थे (म. शां. २९)

स

संयम—दिष्टवंशीय सृंजय राजा का नामांतर। वायु में इसे धूम्राक्ष राजा का पुत्र कहा गया है (सृंजय ६. देखिये)।

२. एक राक्षस, जो शतशृंग राक्षस का पुत्र था। अंबरीष के सेनापति सुदेव के द्वारा यह मारा गया (म. शां. परि. १.११.५-२०)।

संयमन--दुर्योधन के पक्ष के शल राजा का नामांतर। इसके पुत्र को 'सांयमनि' कहते थे।

२. काशिदेश का एक राजा, जो शुरु से ही अत्यंत विरक्त एवं धर्मप्रवण था। 'पंचशिख' नामक आचार्य से सांख्ययोग का ज्ञान प्राप्त करने के लिए, यह राज्य छोड़ कर वन में चला गया। वहाँ इसकी इच्छा के अनुसार पंचशिख ने इसें सांख्ययोग का ज्ञान प्रदान किया (म. शां. परि. १.२९)।

संयमन प्रातर्दन--एक आचार्य (कौ. उ. २.५)।

संयाति—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो नहुष राजा का पुत्र था (भा.९.१८.१)। मुनिधर्म को स्वीकार कर यह वन में चला गया।

संयुप--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार शूर राजा का पुत्र था।

संयोधकंटक--एक यक्ष, जो कुबेर का अनुचर था (वा. रा. उ. १४.२१)।

संवनन आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १९१)।

संवरण—(सो. अज.) अयोध्या का सुविख्यात राजा, जो अजमीढ राजा का पौत्र, एवं ऋक्ष राजा का पुत्र था। महाभारत में इसे 'वंशकर', 'पुण्यश्लोक' एवं 'सायंप्रातःस्मरणीय' राजा कहा गया है (म. अनु. १६५. ५४)।

राज्य से पदच्युति--एक बार इसके राज्य में महान् अकाल पड़ा, जिस कारण सारे लोग अत्यंत दुर्बल हो गये। इसी दुर्बलता का फायदा उठा कर, पांचाल देश के नृप ने दस अक्षौहिणी सेना के साथ इस पर आक्रमण किया, एवं इसे राज्यभ्रष्ट कर, अयोध्या से भाग जाने पर विवश किया।

भागते भागते यह सिंधुनद के किनारे एक दुर्ग तक पहुँच गया, जहाँ यह छिप कर रहने लगा। वहाँ वसिष्ठ सुवर्चस् से इसकी भेंट हुई, जिसने इसका राज्य पुनः प्राप्त कराया। पश्चात् वसिष्ठ की ही सहायता से इसने सारी पृथ्वी जीत कर, यह चक्रवर्ति राजा बन गया (म. आ. ८९.२७-४३)।

तपती से विवाह--वसिष्ठ की ही कृपा से, सूर्यकन्या तपती से इसका विवाह हुआ। तपती के सहवास-सुख में मग्न रहने के कारण, इसके राज्य में पुनः एक बार भयंकर अकाल पड़ा, जो लगातार बारह वर्षों तक चलता रहा। इस अकाल के कारण, इसके पुनः एक बार राज्यभ्रष्ट होने का धोखा निर्माण हुआ था, किंतु उस समय भी वसिष्ठ ने ही राष्ट्र की रक्षा की (म. आ. १६०-१६५)।

परिवार—अपनी पत्नी तपती से इसे कुरु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो आगे चल कर चक्रवर्ति सम्राट् बना।

२. एक ऋषि, जो ध्वन्य लक्ष्मण्य नामक राजा का पुरोहित था (ऋ. ५.३३.१०)।

संवरण प्राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ३३-३४)।

संवर्गजित् लामकायन—एक आचार्य, जो शाकदास भाडितायन नामक आचार्य का शिष्य, एवं गातु गौतम नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. २)।

संवर्त—एक सुविख्यात स्मृतिकार, जिसका निर्देश याज्ञवल्क्य के द्वारा निर्दिष्ट स्मृतिकारों की नामावलि में प्राप्त है।

संवर्त स्मृति—इसके द्वारा विरचित स्मृति का निर्देश आनंदाश्रम के 'स्मृतिसमुच्चय' में, जीवानंद के 'स्मृति-संग्रह' में, एवं वेंकटेश्वर प्रेस के 'स्मृतिसंग्रह' में प्राप्त है, जहाँ इसकी स्मृति में २३०,२२७, एवं २३२ श्लोक दिये गये हैं। इसकी उपलब्ध स्मृति में आचार एवं प्रायश्चित्त के संबंध में वचन प्राप्त हैं। इसके व्यवहार संबंधी मतों के अनेकानेक उद्धरण विश्वरूपादि टीकाग्रंथों में प्राप्त है। इसकी छपी हुई स्मृति के कई श्लोक अपरार्क में पुनरुद्धृत किये गये हैं।

इसके द्वारा 'बृहत्संवर्त' एवं 'स्वल्पसंवर्त' नामक अन्य दो स्मृतिग्रंथों का निर्देश क्रमशः 'मिताक्षरा' में, एवं हरिनाथ के 'स्मृतिसार' में प्राप्त है (याज्ञ. ३. २६५; २८८)।

संवर्त आंगिरस—एक ऋषि, जो ब्रह्मपुत्र अंगिरस् ऋषि के तीन पुत्रों में से एक था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम बृहस्पति एवं उतथ्य थे (म. आ. ६०.४-५)। महाभारत में अन्यत्र इसके भाइयों के नाम बृहस्पति, उतथ्य, पयस्य, शान्ति, घोर, विरूप एवं सुधन्वन् दिये गये है (म. अनु. ८५.३०-३१)। इसे 'वीतहव्य' नामांतर भी प्राप्त था (यो. वा. ५.८२-९०)।

वैदिक साहित्य में—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा एवं प्राचीन यज्ञकर्ता के नाते ऋग्वेद में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ.१०. १७२; ८.५४.२)। ऐतरेय ब्राह्मण इसे मरुत्त आविक्षित राजा का पुरोहित कहा गया है (ऐ. ब्रा. ८.२१; मरुत्त आविक्षित ३. देखिये)।

बृहस्पति से ईर्ष्या—अपने भाई बृहस्पति से यह शुरु से ही अत्यंत ईर्ष्या रखता था, जिस कारण 'मरुत्त-बृहस्पति संघर्ष' में इसने सदा ही मरुत्त की ही सहायता की। यहाँ तक कि, बृहस्पति के द्वारा अधुरा छोड़ा गया मरुत्त राजा का यज्ञ भी इसने यमुना नदी के किनारे 'प्लक्षावतरणतीर्थ' में यशस्वी प्रकार से पूरा किया (म. शां. २९.१७)। मरुत्त के साथ इसका स्नेहसंबंध होने के अन्य निर्देश भी प्राप्त हैं (म. आश्व. ६-७)।

देवताओं पर प्रभाव—यह महान् तपस्वी था, एवं जिस स्थान पर इसने तपस्या की थी, वह आगे चल कर 'संवर्तवापी' नाम से सुविख्यात हुआ (म. व. ८३. २८)। इसकी अत्यधिक तपस्या के कारण समस्त देवता भी इसके आधीन रहते थे।

मरुत्त के यज्ञ के लिए सुवर्ण की आवश्यकता होने पर, इसने हिमालय के सुवर्णमय मुंजवत् पर्वत से विपुल सुवर्ण शिवप्रसाद से प्राप्त किया (म. आश्व. ८; मार्क. १२६. ११-१३)। इसने मरुत्त के यज्ञ के समय, साक्षात् अग्नि देव को जलाने की धमकी दे दी थी (म. आश्व. ९.१९)। इंद्र का वज्र इसने स्तंभित किया था, एवं इस प्रकार उसे मरुत्त के यज्ञ में आने पर विवश किया था (म. आश्व.१०)।

कुणप आख्यान—मरुत्त आविक्षित राजा से इसकी सर्व प्रथम भेंट कैसे हुई, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथन महाभारत में प्राप्त है। अपने यज्ञकार्य की पूर्ति के लिए मरुत्त आविक्षित इससे मिलना चाहता था, लेकिन इसके उन्मत्त अवस्था में इधर उधर भटकते रहने के कारण, इसकी भेंट अत्यंत दुष्प्राप्य थी।

अंत में इसे ढूँढते मरुत्त काशीनगरी में आ पहुँचा। वहाँ यह नग्नावस्था में इधर उधर घूमता था, एवं एक कुणप (शव) को काशीविश्वेश्वर मान कर उसकी पूजा करता था। रास्ते में 'कुणप' को देख कर, जो उसे वंदन करता हुआ उसके पीछे जायेगा, वही संवर्त ऋषि होगा, ऐसी धारणा इसके संबंध में काशिवासियों में प्रचलित थी।

इसी धारणा के अनुसार, मरुत्त राजा ने एक कुणप ला कर उसे काशी के नगरद्वार में रख दिया, जिसका वंदन करने के लिए संवर्त वहाँ पहुँच गया (म. आश्व. ५)।

शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुए ऋषियों में यह एक था (म. शां. ४७.६६*; अनु. २६.५)।

संवर्तक—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में एक था।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के पुत्रों में से एक।

संशती—पवमान अग्नि की पत्नी, जिससे इसे सभ्य एवं आवसथ्य नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (मत्स्य. ५१.१२)।

संश्रवस् संवर्चनस्—एक आचार्य, जिसने तुमिंज नामक आचार्य के साथ यज्ञप्रक्रिया के संबंध में वाद-विवाद किया था। सत्र में होता के द्वारा किये जानेवाले इडोपाह्वान के संबंध में यह चर्चा हुई थी (तै. सं. १.७. २.१)।

संश्रुत्य--विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक। एक गोत्रकार के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (म. अनु. ४.५५)।

संस्कृति--(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार जयसेन राजा का, तथा विष्णु एवं वायु के अनुसार जयत्सेन राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में इसे संकृति कहा गया है।

संहत (सो. सह.)--एक राजा, जो सांची (सांहजनि) नगरी का संस्थापक माना जाता है। भागवत, विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'सोहंजि,' 'साहंजि' एवं 'संजेय' कहा गया है। हरिवंश में इसे 'साहंजि' कहा गया है (ह. वं. १.३३.४; साहंजि देखिये)। मत्स्य में इसे कुंति राजा का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ४३.९)।

संहतागद--ऐरावतकुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

संहताश्व-- इक्ष्वाकुवंशीय बर्हणाश्व राजा का नामान्तर।

संहिता—धृतराष्ट्र की द्वितीय पत्नी, जो गांधारराज सुबल की कन्या एवं गांधारी की कनिष्ठ भगिनी थी।

संहनन--(सो. पूरु.) एक महारथी राजा, जो पूरु राजा का प्रपौत्र, एवं मनस्यु राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.७)। इसकी माता का नाम सौवीरी था।

संहाति--अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

संह्लाद--एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का द्वितीय पुत्र एवं प्रह्लाद का छोटा भाई था। इसके अन्य भाइयों के नाम प्रह्लाद, अनुह्लाद, शिबि एवं बाष्कल थे (म. आ. ८९.१७-१८)। इसकी माता का नाम कयाधु एवं पत्नी का नाम कृति था। मृत्यु के पश्चात् यह वरुण-सभा में रह कर वरुण की उपासना करने लगा (म. स. ९.१२)। पाठभेद —प्रह्लाद।

पुत्र—महाभारत एवं पुराणों में इसके पुत्रों के नाम विभिन्न प्रकार से दिये गये है :—१. **महाभारत में**—इस ग्रंथ में मद्रदेश का सुविख्यात राजा शल्य इसी के अंश से उत्पन्न कहा गया है (म. आ. ६१.६); २. **ब्रह्मांड में**—जंभ, बाष्कल, कालनेमि, शंभु। इस पुराण में इसकी वंशावलि भी दी गयी है (ब्रह्मांड. ३.५.३८-३९)। ३. **विष्णु में**—आयुष्मत्, शिबि एवं बाष्कल (विष्णु. १. २१.१;); ४. **भागवत में**--पंचजन (भा. ६.१८.१३); ५. **मत्स्य में**--इस ग्रंथ में इसके पुत्रों का सामूहिक नाम 'निवातकवच' दिया गया है, एवं उन्हें देव, गंधर्व एवं उरग आदि के लिए अवध्य बताया गया है (मत्स्य. ६.९.२८-२९)।

२. जालंधरसेना का एक सैनिक।

सकतिपुत्र--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लौगाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे 'सकोतिपुत्र' कहा गया है।

सकौगाक्षि एवं **सकौवाक्षि**—भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार-द्वय।

सक्तुप्रस्थ—उंच्छवृत्ति नामक ब्राह्मण का नामान्तर (उंच्छवृत्ति देखिये)।

२. एक आचार्य, जो पूषमित्र गोभिल नामक आचार्य का शिष्य था (वं. ब्रा. ३)।

सगर—(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो बाहु अथवा बाहुक राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम कालिंदी अथवा केशिनी था। भागवत एवं पद्म में इसे क्रमशः 'फल्गुतंत्र,' एवं 'गर' राजा का पुत्र कहा गया है, जो संभवतः बाहुराजा के ही नामान्तर थे।

यह पराक्रमी सत्यधर्मी, सत्यवक्ता, दानशूर एवं विचारज्ञ था। इसके कई सिक्के मोहेंजोदड़ो के उत्खनन में प्राप्त हुए हैं।

जन्म—इसका जन्म अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् हुआ था। बाहुराजा की मृत्यु के समय उसकी पत्नी केशिनी, और्व ऋषि के आश्रम में गर्भवती थी। उस समय बाहु राजा की अन्य पत्नियों ने केशिनी को सवतीमत्सर से प्रेरित हो कर विष दिया। इस विष के कारण, यह सात वर्षों तक अपनी माता के गर्भ में रहा, एवं जन्म के पश्चात् यह दुर्बल ही रहा। अपनी माता की गर्भ में जो विष इसके शरीर में उतर गया, इसके कारण इसे सगर विषयुक्त नाम प्राप्त हुआ। और्व ऋषि की कृपा के ही कारण, अपनी सापत्न माता के विषप्रयोग से यह बच सका।

शिक्षा—इसके क्षत्रियोचित सारे संस्कार और्व ऋषि ने किये, एवं इसे भार्गव नामक अग्न्यस्त्र उसीने ही प्रदान किया (विष्णु. ४.४)। च्यवन ऋषि ने भी इसे अनेकानेक अस्त्रशस्त्रों की जानकारी दी थी।

पराक्रम--उपरोक्त अस्त्रों की सहायता से इसने हैहय तालजंघ राजा का नाश कर अपना राज्य पुनः प्राप्त किया। पश्चात् इसने यवन, शक, हैहय, बर्बर आदि लोगों को परास्त किया। किन्तु अपने गुरु वसिष्ठ की सलाह से उनका वध न कर, एवं उन्हें केवल विरूप बना कर छोड़ दिया। ये लोग आगे चल कर म्लेंच्छ एवं व्रात्य लोग बन गये (भा. ९.८)।

अश्वमेध यज्ञ--एक बार इसने अश्वमेध यज्ञ किया, जिस समय इसका अश्वमेधीय अश्व इंद्र ने चुरा लिया। आगे चल कर यह अश्व कपिलऋषि के आश्रम के पास इंद्र ने छोड़ दिया। इसके साठ हजार पुत्रों ने अश्वमेधीय अश्व के लिए पृथ्वी, स्वर्गलोक, एवं पाताल ढूँढ डाले। ढूँढते-ढूँढते अपना अश्व कपिलऋषि के आश्रम के पास मिलते ही, उन्होंने इस अश्व के चोरी का इल्जाम कपिल ऋषि पर लगाया। इस झूठे इल्जाम के कारण, कपिल ऋषि ने क्रुद्ध हो कर उन साठ हज़ार सगरपुत्रों को जला कर भस्म कर दिया। इस प्रकार इसके पुत्रों में से हृषिकेतु, सुकेतु, धर्मरथ, पंचजन एवं अंशुमत् नामक केवल पाँच ही पुत्र बच सके। उन्होंने इसका अश्वमेधीय अश्व अयोध्या में लाया, एवं तदुपरांत इसने अपना अश्वमेध यज्ञ पूर्ण किया।

परिवार--इसकी निम्नलिखित दो पत्नियाँ थीः--१. केशिनी (शैब्या, भानुमती), जो विदर्भकन्या थी, एवं जो इसकी ज्येष्ठ पत्नी थी (वायु. ८८.१५५); २. प्रभा (सुमति), जो यादवराजा अरिष्टनेमि की कन्या थी (मत्स्य. १२.४२०)।

पुत्र--(१) **केशिनीपुत्र**-- उपर्युक्त पत्नियों में से केशिनी से इसे असमंजस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो इसका वंशकर्ता एवं इसके पश्चात् अयोध्या नगरी का राजा बन गया (वायु. ८८.१५७); (२) **प्रभापुत्र**--प्रभा को साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए, जो कपिल ऋषि के शाप के कारण दग्ध हो गये।

इसके साठ हजार पुत्रों के जन्म से संबन्धित एक चमत्कृतिपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है। और्व ऋषि के आश्रम में पुत्रप्राप्ति के लिए तपस्या करने पर, इसकी पत्नी प्रभा को एक तुंबी उत्पन्न हुई। यह उसे फेंक देना चाहता था, किन्तु आकाशवाणी के द्वारा मना किये जाने पर इसने उस तुंबी के एक एक बीज निकाल कर साठ हजार घृतपूर्ण कलशों में रख दिये, एवं उनकी रक्षा के लिए धायें नियुक्त की। तदुपरान्त उन कुंभों से इसके साठ हज़ार पुत्र उत्पन्न हुए (म. व. १०४.१७; १०५.२)।

ब्रह्मांड के अनुसार, इसकी पत्नी प्रभा को पुत्र के रूप में एक मांसखंड उत्पन्न हुआ था, जिससे आगे चल कर, और्व ऋषि की कृपा प्रसाद से साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए थे (ब्रह्मांड. ३.४८)।

आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, सगर राजा के साठ हज़ार पुत्रों के उपर्युक्त कथाभाग में इसके पुत्रों का नहीं, बल्कि अयोध्या राज्य की इसकी प्रजाजनों की ओर संकेत किया गया है, जो इसके राज्य में उत्पन्न हुए अकाल के कारण मृत हुए। आगे चल कर इसके पुत्र असमंजस् के प्रपौत्र भगीरथ ने इसके राज्य में गंगा नदी को ला कर, इसका राज्य आबाद बना दिया। इस प्रकार भगीरथ के कारण, इसकी प्रजा को नवजीवन प्राप्त हुआ (भगीरथ देखिये)।

सागरोपद्वीप--इसके पुत्र जब इसका अश्वमेधीय अश्व ढूँढ रहे थे, उस समय उन्होंने जंबुद्वीप के समीप के प्रदेश से आठ उपद्वीप उत्खनन कर के बाहर निकाले। ये ही द्वीप आगे चल कर 'सागरोपद्वीप' नाम से प्रसिद्ध हुए (भा. ५.१९.२९-३०)।

सगालव--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

संकट--धर्म एवं ककुभ् के पुत्रों में एक (भा. ६.६.६)।

संकर गौतम--एक आचार्य, जो अर्यमराध गौतम, एवं पूषमित्र गोभिल नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पुष्पयशस् औदव्रजि था (वं. ब्रा. ३.)।

संकल्प--धर्म एवं संकल्पा के पुत्रों में से एक। यह उदात्त जीवनहेतु का मानवीकरण प्रतीत होता है। इसके पुत्र का नाम काम था (भा. ६.६.१०.)।

संकल्पा--दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की दस पत्नियों में से एक थी। इसके पुत्र का नाम संकल्प था (भा. ६.६.४)।

संकील--एक मंत्रकार, जो वैश्य जाति में उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. २.३२.१२१; मत्स्य. १४५.१३६)।

संकु--कुकुर वंशीय शंकु राजा का नामान्तर (शंकु. १. देखिये)।

संकुसुक यामायन--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८)।

संकृति--एक क्षत्रोपेत ब्राह्मण, जो अपने तपस्या के कारण अंगिरस् कुल का गोत्रकार, एवं मंत्रकार बन गया (ब्रह्मांड. २.३२.१०७; गुरु २. देखिये)।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार नर राजा का पुत्र था। वायु में इसका 'सांकृति' नामान्तर दिया गया है। इसकी पत्नी का नाम सत्कृति था, जिससे इसे रंतिदेव एवं गुरु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. व. २७८.१७; द्रो. ६७.१*; भा. ९.२१.१-२)।

३. क्षत्रवंशीय संस्कृति राजा का नामान्तर।

संकोच--एक राक्षस, जो प्राचीनकाल में पृथ्वी का शासक था।

संक्रंदन--भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

२. विदर्भ देश का एक राजा, जो वपुष्मत् राजा का पिता था। इसके पुत्र वपुष्मत् ने दशार्णाधिप चारुवर्मन् राजा की कन्या सुमना का हरण करना चाहा। किन्तु नरिष्यंत राजा के पुत्र दम ने उसे परास्त किया (नरिष्यंत एवं सुमना देखिये)।

संक्रम--स्कंद का एक पार्षद, जो विष्णु के द्वारा उसे दिये गये तीन पार्षदों में से एक था। अन्य दो पार्षदों के नाम चक्र एवं विक्रम थे (म. श. ४४.१३)।

संग प्रायोगि--असंग प्रायोगि नामक आचार्य का नामान्तर (मै. सं. ३.१.९)

संगत--(मौर्य. भविष्य.) एक मौर्यवंशीय राजा, जो सुयशयस् राजा का पुत्र, एवं शालिशूक राजा का पिता था (भा. १२.१.१४)। विष्णु में इसे दशरथ राजा का पुत्र कहा गया है।

संगर--एक ब्राह्मण, जो गंगास्नान के पुण्य के कारण यज्ञोभद्र नामक राजा बन गया (पद्म. क्रि.३)।

संगव--दुर्योधन का गोशालाधिपति, जिसने घोषयात्रा युद्ध के समय दुर्योधन की सहाय्यता की थी (म. व. २२८.२)। पाठ--'समंग'।

संग्रह--समुद्र के द्वारा दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम विग्रह था (म. श. ४४.३३)।

संग्रामजित्--कृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक। प्रभासक्षेत्र में हुए यादवीयुद्ध में सुभद्र ने इसका वध किया (भा. ३.७१.२५१)।

२. कृष्ण एवं शैब्यकन्या सुदेवी का पुत्र (ब्रह्मांड. ३. ७१.२५१)।

३. युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ४. १९)।

३. कर्ण का एक भाई, जो विराट के उत्तर-गोग्रहण युद्ध के समय अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. वि. ५९. १८)।

सचैलेय--सवैलेय नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सच्य--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार हविर्धान राजा का पुत्र था।

सजातंबी--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सजीवि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सज्जनाद्रोहक--धर्माकर नामक धार्मिक व्यक्ति का नामान्तर।

संचारक--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६९)।

संजय--लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वायु के अनुसार प्रतिपद राजा का, एवं भागवत के अनुसार प्रति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम जय था। विष्णु में प्रतिक्षत्र राजा के पुत्र का नाम 'संजय' नहीं, बल्कि सृंजय दिया गया है (विष्णु. ४.९.२६)।

३. (सो. अनु.) अनुवंशीय सृंजय राजा का नामान्तर।

४. (सो. नील) नीलवंशीय पांचाल सृंजय राजा का पुत्र (सृंजय ७. देखिये)।

५. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सुपार्श्व राजा का पुत्र था। भागवत में इसे चित्ररथ कहा गया है।

६. सौवीर देश का एक राजकुमार, जो विदुला नामक रानी का पुत्र था। इसके पिता की मृत्यु के पश्चात्, इस अल्पवयी राजा पर सिंधुराजा ने आक्रमण कर, इसे रणभूमि से भागने पर विवश किया। उस समय इसकी माता विदुला ने बहुमूल्य उपदेश प्रदान कर, इसे पुनः एक बार युयुत्सु बनाया। विदुला के द्वारा इसे किया गया राजनीति पर उपदेश महाभारत में 'विदुला-पुत्र संवाद' नामक उपाख्यान में प्राप्त है (म. उ. १३१-१३४; विदुला देखिये)।

७. एक राजकुमार, जो सिंधु नरेश वृद्धक्षत्र का पुत्र, एवं जयद्रथ के ग्यारह भाइयों में से एक था (म. व. २४९. १०)। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदी-हरण के युद्ध में यह अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. व. २५५.२७)।

८. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

९. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु, विष्णु एवं भागवत के अनुसार रणंजय राजा का, एवं मत्स्य के

अनुसार रणेजय राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम शुद्धोद था (वायु. ९९.२८८; मत्स्य. २७१.११)।

१०. एक व्यास, जो वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वंतर के सोलहवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था (वायु. २३.१७१)।

संजय गावल्गणि—धृतराष्ट्र राजा का सारथि, एवं सलाहगार मंत्री, जो सूत जाति में उत्पन्न हुआ था, एवं गवल्गण नामक सूत का पुत्र था (म. आ. ५७.८२)। गवल्गण का पुत्र होने के कारण, इसे 'गावल्गणि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। यह उन 'वार्तिक' व्यवसायी लोगों में से था, जो महाभारतकाल में वृत्तनिवेदन एवं वृत्तप्रसारण का काम करते थे (वार्तिक देखिये)।

यह वेद व्यास का कृपापात्र व्यक्ति था, एवं अर्जुन एवं कृष्ण का बड़ा भक्त था। दुर्योधन के अत्याचारों का यह आजन्म जोर से प्रतिवाद करता रहा। यह स्वामिभक्त, बुद्धिमान्, राजनीतिज्ञ एवं धर्मज्ञ था। यह धार्मिक विचार-वाला स्वामिभक्त मंत्री था, जिसने सत्य का अनुसरण कर सदैव सत्य एवं सच्ची बातें धृतराष्ट्र से कथन की।

धृतराष्ट्र का प्रतिनिधित्व—धृतराष्ट्र के प्रतिनिधि के नाते, यह युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था, जहाँ युधिष्ठिर ने इसे राजाओं की सेवा तथा सत्कार में नियुक्त किया था (म. स. ३२.५)। धृतराष्ट्र के आदेश से, काम्यकवन में गये विदुर को बुलाने के लिए यह गया था (म. व. ७)।

भारतीय युद्ध के पूर्व, धृतराष्ट्र के राजदूत के नाते यह उपप्लव्य नगरी में पांडवों से मिलने गया था। उपप्लव्य नगरी में संजय के द्वारा किये गये दौत्यकर्म का सविस्तृत वृत्तांत महाभारत के 'संजययानपर्व' में प्राप्त है (म. उ. २२-३२)।

अपने इस दौत्य के समय केवल राजदूत के नाते ही नहीं, बल्कि पांडवों के सच्चे मित्र के नाते, इसने उन्हें शान्ति का उपदेश दिया। इसने उन्हें कहा, 'संधि ही शांति का सर्वोत्तम उपाय है। धृतराष्ट्र राजा भी शांति चाहते हैं, युद्ध नहीं'। युधिष्ठिर ने संजय के उपदेश को स्वीकार तो किया, किन्तु यह शर्त रक्खी कि, यदि धृतराष्ट्र शान्ति चाहते हैं, तो इंद्रप्रस्थ का राज्य पांडवों को लौटा दिया जाय।

धृतराष्ट्र को उपदेश—हस्तिनापुर लौटते ही इसने सर्वप्रथम धृतराष्ट्र की एकांत में भेट ली, एवं उसे युद्ध टालने के लिए पुनः एक बार उपदेश दिया। इसने धृतराष्ट्र से कहा, 'आनेवाले युद्ध में केवल कुरुकुल का ही नहीं, बल्कि अपनी समस्त प्रजा का भी नाश होगा, यह निश्चित है। विनाशकाल समीप आने पर बुद्धि मलिन हो जाती है, एवं अन्याय भी न्याय के समान दिखने लगता है। अपने पुत्रों की अन्धी ममता के कारण आज तुम युद्ध के समीप आ गये हो। युद्ध टालने का मौका अब हाथ से निकलता जा रहा है, तुम हर प्रयत्न कर पांडवों से संधि करो'।

दूसरे दिन, धृतराष्ट्र के खुली राजसभा में इसने युधिष्ठिर का शान्तिसंदेश कथन किया, एवं पांडव पक्ष के सैन्य आदि का आखों देखा हाल भी कथन किया। इस कथन में इसने अर्जुन एवं कृष्ण के स्नेहसंबंध पर विशेष जोर दिया, एवं कहा कि, कृष्ण की मैत्री पांडवों की सबसे बड़ी सामर्थ्य है (म. उ. ६६)।

श्रीकृष्ण का महिमा—पश्चात् यह पुनः एक बार धृतराष्ट्र के अंतःपुर गया, एवं वेदव्यास, गांधारी एवं विदुर की उपस्थिति में, इसने धृतराष्ट्र को श्रीकृष्ण का माहात्म्य विस्तृत रूप में कथन किया। इसने कहा, 'श्रीकृष्ण साक्षात् ईश्वर का अवतार है, एवं मेरे ज्ञानदृष्टि के कारण मैंने उसके इस रूप को पहचान लिया है। मैंने सारे आयुष्य में कभी भी कपट का आश्रय नहीं लिया, एवं किसी मिथ्या धर्म का आचरण भी नहीं किया। इस प्रकार ध्यानयोग के द्वारा मेरा अंतःकरण शुद्ध हो गया है, एवं उसी साधना के कारण, श्रीकृष्ण के सही स्वरूप का ज्ञान मुझे हो पाया है'।

इसने आगे कहा, 'प्रमाद, हिंसा एवं भोग, इन तीनों के त्याग से परम पद की प्राप्ति, एवं श्रीकृष्ण का दर्शन शक्य है। इसी कारण तुम्हारा यही कर्तव्य है कि, इसी ज्ञानमार्ग का आचरण कर तुम मुक्ति प्राप्त कर लो (म. उ. ६७.६९)।

दिव्यदृष्टि की प्राप्ति—भारतीय युद्ध के समय, युद्ध देखने के लिए व्यास ने धृतराष्ट्र को दिव्यदृष्टि देना चाहा, किन्तु धृतराष्ट्र ने उसे इन्कार किया; क्यों कि आपस में ही होनेवाले इस भयंकर संहार को नहीं देखना चाहता था। तदुपरांत व्यास ने संजय को दिव्यदृष्टि का वरदान दिया, जिस कारण, युद्ध में घटित होनेवाली सारी घटनाओं का हाल, यह धृतराष्ट्र से कथन करने में समर्थ हुआ।

इस दिव्यदृष्टि के बल से, सामने की अथवा परोक्ष की, दिन रात में होनेवाली, तथा दोनों पक्षों

के मन में सोची हुई बातें इसे ज्ञात होने लगीं। इसी वरदान के साथ साथ, युद्ध में अवध्य एवं अजेय रहने का, एवं अत्यधिक परिश्रम करने पर भी थकान प्रतीत न होने का आशीर्वाद भी व्यास के द्वारा इसे प्राप्त हुआ था (म. भी. १६.८–९)।

युद्ध-कथन—इसने धृतराष्ट्र से भारतीय युद्ध का जो वर्णन सुनाया, वह युद्धक्षेत्रीय वृत्तनिवेदन का एक आदर्श रुप माना जा सकता हैं। कौन वीर किससे लड़ रहा है, कौन से वाहन पर वह सवार है, एवं कौन से अस्त्रों का प्रयोग वह कर रहा है, इन सारी घटनाओं की समग्र जानकारी संजय के वृत्तनिवेदन में पायी जाती है।

संजय के वृत्तानिवेदनकौशल्य की चरम सीमा इसके 'भगवद्गीता निवेदन' में दिखाई देती है, जहाँ श्रीकृष्ण का सारा तत्त्वज्ञान ही नहीं, बल्कि उसके हावभाव, मुखमुद्रा भी प्रत्यक्ष की भाँति पाठकों के सामने खड़ी हो जाती है।

युद्ध में उपस्थिति—भारतीय युद्ध में, केवल वृत्त-निवेदक के नाते ही नहीं, बल्कि एक योद्धा के नाते भी इसने भाग लिया था। इसने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया था, जिसमें यह उससे परास्त हुआ था। सात्यकि ने भी इसे एक बार मूर्च्छित किया था, एवं जीते जी इसे बन्दी बनाया था। आगे चल कर व्यास की कृपा से यह सात्यकि के कैदखाने से विमुक्त हुआ था (म. श. २४. ५०–५१)। युद्धभूमि से धृतराष्ट्र को उद्देश्य कर अपने सारे संदेश दुर्योधन इसीके ही द्वारा भेजा करता था (म. श. २८.४८–४९)।

इससे प्रतीत होता है कि, यह युद्धभूमि में स्वयं उपस्थित था। संभव है, यह युद्धभूमि की सारी घटनाएँ दिन में देख कर, रात्रि के समय धृतराष्ट्र को बताता रहा हो।

युद्धोपरान्त—युद्ध समाप्त हो जाने बाद, इसकी दिव्य-दृष्टि विनष्ट हुई (म. सौ. ९.५८)। युधिष्ठिर के राज्या-रोहण के पश्चात्, उसने इस पर राज्य के आयव्यय निरीक्षण का कार्य सौंप दिया था (म. शां. ४१.१०)।

वनगमन—अंत में विदुर की सलाह से यह धृतराष्ट्र एवं गांधारी के साथ वन में चला गया (भा. १.१३. २८–५७)। यह वन में धृतराष्ट्र की हर प्रकार की सेवा करता था, एवं उसके साथ विभिन्न विषयों पर वादसंवाद भी करता था।

एक बार बन में लग गये दावानल में धृतराष्ट्र फँस गया। उस समय उसे बचाने की कोशिश इसने की, किंतु इसके सारे प्रयत्न असफल होने पर, इसने धृतराष्ट्र से अपना कर्तव्य पूछा। उस समय धृतराष्ट्र ने इससे कहा, 'मेरे जैसे वानप्रस्थियों के लिए यह मृत्यु अनिष्ट-कारी नहीं है, बल्कि उत्तम ही है। तुम जैसे गृहस्थ धर्मियों के लिए इस प्रकार आत्मघात करना उचित नहीं है, अतः मेरी यही इच्छा है, कि तुम यहा से भाग जाओं'।

धृतराष्ट्र के कथनानुसार यह दावानल से निकल पड़ा। पश्चात् धृतराष्ट्र, गांधारी एवं कुन्ती के साथ भस्म हुआ। पश्चात् इसने गंगातट पर रहनेवाले तपस्वियों को धृतराष्ट्र के दग्ध होने का समाचार सुनाया, एवं यह हिमालय की ओर चला गया (म. आश्व. ४५.३३)।

संजाति—पूरुवंशीय संयाति राजा का नामांतर (संयाति ३. देखिये)।

संज्ञा—त्वष्टृ की कन्या, जो विवस्वत् की पत्नी थी। पौराणिक साहित्य के अनुसार, इसे मनु, यम एवं यमी नामक संतान उत्पन्न हुई। तत्पश्चात् सूर्य का तेज अधिक काल तक न सह सकने के कारण, इसने छाया नामक अपनी नौकरानी को सूर्य के पास पत्नी के नाते भेज दिया, एवं यह स्वयं तपस्या करने चली गयी (मा. ८.१३.८–९)।

छाया को यम से शनैश्वर, मनु सावर्णि एवं तपती नामक तीन संतान उत्पन्न हुए। तीन संतान उत्पन्न होने के पश्चात्, यम को छाया का सही रूप ज्ञात हुआ, एवं वह संज्ञा को ढूँढने के लिए बाहर निकला। तदुपरान्त उत्तर कुरु देश के तपोवन में एक अश्वि के रूप में तपस्या करनेवाली संज्ञा से उसकी भेंट हुई। उसने अश्व का रूप धारण कर संज्ञा से संभोग किया, जिससे इसे अश्विनी कुमार एवं रेवन्त नामक और दो पुत्र उत्पन्न हुए (म. आ. ७.३४; अनु. १५०.१७–१८)।

विवस्वत् के तेज का आधिक्य सहन न सकने की तकरार इसने अपने पिता विश्वकर्मन् से की। इस कारण विश्वकर्मन् ने विवस्वत् का बहुत सारा तेज शोषण किया, एवं उसीसे विष्णु का सुदर्शन चक्र, शिव का त्रिशूल, कुबेर का पुष्पक विमान, एवं कार्तिकेय की शक्ति का निर्माण किया (ब्रह्मांड. २.२४.९०; सवर्णा एवं छाया देखिये)।

संज्ञेय—(सो. सह.) सोमवंशीय संहत राजा का नामान्तर।

सती—अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जिसने अथर्वन्

अंगिरस् को पुत्र के रूप में स्वीकार किया (भा. ६.६. १९)।

२. दक्ष एवं प्रसूति की कन्या, जो देवी का एक प्रमुख अवतार मानी जाती है (देवी तथा शक्ति देखिये)। विष्णु के अंश से यह उत्पन्न हुई (पद्म. सृ. १९)। नारी सृष्टि का निर्माण करना देवी के इस अवतार का प्रमुख उद्देश्य था (शिव. शत. ३; दे. भा. ७)।

इसके पति शिव का अपमान किये जाने के कारण, इसके दक्षयज्ञ के अग्निकुण्ड में आत्माहुति देने की कथा सभी पुराणों में प्राप्त है (भा. ४; वायु. १०.२७; मत्स्य १३.१४-१६; पद्म. सृ. ५; कालि. १८)। किन्तु शिव के द्वारा इसका त्याग किये जाने के कारण, इसके देहत्याग करने की चमत्कृतिपूर्ण कथा भी कई पुराणों में प्राप्त है (शिव. रुद्र. स. २५)।

३. विश्वामित्रऋषि की पत्नियों में से एक।

सत्कर्मन्—(सो. अनु.) एक राजा, जो धृतव्रत राजा का पुत्र, एवं अधिरथ राजा का पिता था (भा. ९. २३.१२)।

विष्णु एवं वायु में इसे सत्यवर्मन् कहा गया है। यह स्वयं 'सूतवृत्ति' से रहता था। किन्तु एक ब्राह्मणकन्या से इसने विवाह किया था।

सत्कृत--पृथक् देवों में से एक।

सत्कृति--संकृति राजा की पत्नी, जो रंतिदेव राजा की माता थी। मत्स्य में इसे संकृति राजा के पुत्र महायशस् की कन्या कहा गया है (मत्स्य. ४९.३७)।

सत्य--कलिंग देश का एक योद्धा, जो कलिंगराजा श्रुतायु का चक्ररक्षक था। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ५०. ६९)।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो हविर्धान एवं हविर्धानी के पुत्रों में से एक था।

३. उत्तम मन्वन्तर का एक देवविशेष (भा. ८.१०. २४)।

४. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (भा. ८.१३.२२)।

५. दस विश्वेदेवों में से एक (वायु. ६६.५१)।

६. एक राजा, जो वीतहव्यवंशीय वितत्य राजा के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम संत था (म. अनु. ३०.६२)।

७. एक देव, जो अंगिरस् एवं सुरूपा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १९६.२)।

८. तामस मन्वन्तर का एक देवविशेष।

९. दक्षसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

१०. उत्तम मन्वन्तर का एक अवतार, जो सत्या का पुत्र माना जाता है।

११. अट्ठाईस व्यासों में से एक, जो दूसरे द्वापर में उत्पन्न हुआ था।

१२. उंच्छवृत्ति नामक ब्राह्मण का अवतार (उंच्छ-वृत्ति देखिये)। यह विदर्भदेश में रहता था, एवं इसने एक अहिंसापूर्ण यज्ञ आयोजित किया था (म. शां. २६४)।

१३. सुधामन् देवों में से एक।

१४. अमिताभ देवों में से एक।

१५. आभूतरजस् देवों में से एक।

१६. एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

१७. तामस मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्न-लिखित देव शामिल थे:—१. अश्व; २. आनंद; ३. क्षेम; ४. दिक्पति; ५. दिवि; ६. बृहद्वपु; ७. वर्चोधामन्; ८. वाक्पति; ९. विश्व; १०. शंभु; ११. सदश्व; १२. स्वमृडिक (ब्रह्मांड. २.३४-३५)।

१८. युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.८)।

१९. निष्कृति नामक अग्नि का नामान्तर (निष्कृति देखिये)।

सत्यक—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो शिनि राजा का पुत्र, एवं युयुधान (सात्यकि) राजा का पिता था (म. आ. ५७.८८; भा. ९.२४.१३-१४)। श्रीकृष्ण के द्वारा रैवतक पर्वत पर आयोजित किये गये उत्सव में यह उपस्थित था (म. आ. २११.११)। अभिमन्यु की मृत्यु पश्चात्, उसका श्राद्धकर्म इसीके द्वारा किया गया था (म. आश्व. ६१.६)। मत्स्य में इसे 'सत्यवत्' कहा गया है (मत्स्य. ४५.२२)।

इसका विवाह काशिराज की कन्या से हुआ था, जिससे इसे ककुद, भजमान, शमी एवं कंबलबर्हिष नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (वायु. ९६.११५)।

२. रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

३. कृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१७)।

४. तामस मन्वंतर का एक देवगण।

सत्यकर्मन्—(सो. अनु.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार धृतव्रत राजा का पुत्र, एवं अतिरथ राजा का पिता था (वायु. ९९.११७)।

सत्यकर्मन् त्रैगर्त--त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो एक 'संशप्तक' योद्धा था (म. द्रो. १६.१७-२०)। अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.३७)।

सत्यकाम जाबाल--एक सुविख्यात तत्त्वज्ञ, जो जबाला नामक स्त्री का पुत्र था। मन को ही परब्रह्म मानने वाला यह आचार्य याज्ञवल्क्य वाजसनेय ऋषि का समकालीन था (बृ. उ. ४.१.६ काण्व.)।

जन्म--जबाला नामक दासी से किसी अज्ञात पुरुष से यह उत्पन्न हुआ था। इसके जन्म से संबंधित एक सविस्तृत कथा छांदोग्य उपनिषद में प्राप्त है, जहाँ उच्च कुल में जन्म होने की अपेक्षा श्रद्धा एवं तप अधिक श्रेष्ठ है, यह तत्त्व प्रतिपादित किया गया है।

यह अपनी माता से उस पुरुष के द्वारा उत्पन्न हुआ, जिसका नाम उसे ज्ञात न था। लज्जा के कारण, उसने कभी भी उसका नाम न पूछा था। इसके जन्म के पश्चात् थोडे ही दिनों में इसका पिता मृत हो गया, जिस कारण इसे अपने पिता का नाम सदैव अज्ञात ही रहा।

आगे चल कर यह गौतम हारिद्रुमत नामक आचार्य के पास शिक्षा पाने के लिए गया। वहाँ गौतम ऋषि के द्वारा इसका गोत्र आदि पूछे जाने पर इसने उसे अपनी सारी हकीकत कह सुनायी, एवं कहा, 'मेरा जन्म ऐसे पिता से हुआ है, जिसका नाम मुझसे अज्ञात है। मेरी माता का जबाला नाम ही केवल मुझे ज्ञात है'।

इसके सत्यभाषण के कारण गौतम ऋषि अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उसने इसका उपनयन कर इसे ब्रह्मचर्य-व्रत की दीक्षा दी।

शिक्षा--तदुपरान्त यह गौतम ऋषि के आश्रम में ही रह कर अध्ययन करने लगा। इसी कार्य में यह अनेक वर्षों तक अरण्य में रहा। छांदोग्य-उपनिषद में प्राप्त रूपकात्मक निर्देश से प्रतीत होता है कि, यह चारसौ गायें ले कर अरण्य में गया, एवं उनकी संख्या एक सहस्र होने के काल तक यह अरण्य में रहा।

ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति--इसे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति किस प्रकार हुई, इसकी सविस्तृत जानकारी छांदोग्य-उपनिषद में प्राप्त है। वायु देवता के अंश से उत्पन्न हुए एक वृषभ ने इसे ब्रह्मज्ञान का चौथा हिस्सा सिखाया। आगे चल कर गौतम ऋषि के आश्रम में स्थित अग्नि ने इसे ब्रह्मज्ञान का अन्य चौथा हिस्सा सिखाया। ब्रह्मज्ञान के बाकी दो हिस्से इसे हंस का रूप धारण करनेवाले आदित्य ने, एवं मद्गु नामक जलचर प्राणि का रूप धारण करनेवाले प्राण ने प्रदान किये।

इस प्रकार संपूर्ण ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर यह गौतम ऋषि के आश्रम में लौट आया। तत्पश्चात् इसका मुखावलोकन कर, गौतम ऋषि ने इससे कहा, 'संपूर्ण ब्रह्मज्ञान तुझे हो चुका है। जो ज्ञान तुझे हुआ है, उससे बढ़ कर अधिक ज्ञान इस संसार में कहीं भी प्राप्त होना असंभव है' (छां. उ. ४.४-९)।

तत्त्वज्ञान--आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए सुयोग्य गुरु के उपदेश की अत्यधिक आवश्यकता है, ऐसा इसका मत था। परमार्थ की साधना के लिए नैतिक सद्‌गुणों की अत्यधिक आवश्यकता रहती है। किन्तु इस सदाचरण के कारण परमार्थ ज्ञान की केवल पूर्वतैयारी मात्र होती है, इस ज्ञान का उपदेश केवल सुयोग्य गुरु ही कर सकता है, ऐसा इसका अभिमत था (छां. उ. ४.१.९)। इसका यह अभिमत समस्त औपनिषदिक वाङ्मय में पुनः पुनः पाया जाता है।

अंतिम सत्य की व्याख्या औपनिषदिक साहित्य में अनेक प्रकार से की गयी है। इस अंतिम तत्त्व का साक्षात्कार मानवी इंद्रियों के द्वारा नहीं, बल्कि मानवी मन से होता है, ऐसे कथन करनेवाले आचार्यों में सत्यकाम जाबाल प्रमुख माना जाता है। इसके इसी अभिमत का विकास आगे चल कर याज्ञवल्क्य वाजसनेय ने किया, जिसने संसार के अंतिम तत्त्व का साक्षात्कार केवल आत्मा के द्वारा हो सकता है, यह तत्त्व प्रस्थापित किया (याज्ञवल्क्य वाजसनेय देखिये)।

सृष्टि का आद्य अधिष्ठान--सृष्टि का मूल कारण सूर्य, चंद्र, विद्युत् आदि पंचमहाभूत न हो कर, आँखों से प्रतीत होनेवाले आद्य पुरुष के दर्शन से ही सृष्टि के मूल कारण का ज्ञान हो सकता है, ऐसा इसका अभिमत था। औपनिषदिक तत्त्वज्ञान की उत्क्रान्ति के इतिहास में पंचमहाभूतों को सृष्टि का आधार मानने की शुरु में प्रवृत्ति थी। इस प्रवृत्ति को हटा कर पंचेंद्रियों को सृष्टि का आद्य अधिष्ठान माननेवाले कई आचार्यों की परंपरा आगे चल कर उत्पन्न हुई, जिसमें सत्यकाम जाबाल प्रमुख था। इसी कल्पना का विकास आगे चल कर याज्ञवल्क्य वाजसनेय ने किया, जिसने सृष्टि के आद्य अधिष्ठान के रूप में मानवी आत्मा को दृढ रूप से प्रतिष्ठापित किया।

सत्यकाम-उपकोसल संवाद--सत्यकाम के इसी तत्त्वज्ञान का रूपकात्मक चित्रण करनेवाली एक कथा छांदोग्य

उपनिषद में प्राप्त है। इसके उपकोसल नामक शिष्य ने बारह वर्षों तक इसके आश्रम में रह कर अध्ययन किया। आगे चल कर सृष्टि के अंतिम सत्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उपकोसल अरण्य में गया। वहाँ उसके द्वारा उपासित 'गार्हपत्य', 'अन्वाहार्य' एवं 'आहवनीय' नामक तीन अग्नि मनुष्य रूप धारण कर उसके सम्मुख उपस्थित हुए, एवं उन्होंने सृष्टि का अंतिम तत्त्व क्रमशः सूर्य, चंद्र, एवं विद्युत् में रहने का ज्ञान इसे प्रदान किया।

आगे चल कर उपकोसल ने अग्नि देवताओं के द्वारा प्राप्त हुए आत्मज्ञान की कहानी इसे कथन की। उस समय उसे प्राप्त हुए ज्ञान की विफलता बताते हुए इसने उसे कहा, 'अग्नि देवताओं ने जो ज्ञान तुझे बताया है, वह अपूर्ण है। सृष्टि के अंतिम तत्त्व का दर्शन सूर्य, चंद्र एवं विद्युत् में नहीं, बल्कि मनुष्य के आँखों में दिखाई देनेवाले इस संसार की प्रतिबिंब में ही पाया जाता है। तत्त्वज्ञ जिसे अमृत, अभय, एवं तेजःपुंज आत्मा बताते हैं, वह इस प्रतिबिंब में ही स्थित है'।

सत्यकाम के इस तत्त्वज्ञान में आधिभौतिक सृष्टि कनिष्ठ मान कर मानवी देहात्मा उससे अधिक श्रेष्ठ बताया गया है। इस प्रकार बाह्य सृष्टि को छोड़ कर मानवी शरीर की ओर तत्त्वज्ञों की विचारधारा इसने केंद्रित की, यही इसके तत्त्वज्ञान की श्रेष्ठता कही जा सकती है।

अन्य निर्देश--शतपथ ब्राह्मण, बृहदारण्यक उपनिषद आदि ग्रंथों में इसके अभिमतों के उद्धरण अनेक बार पाये जाते हैं। इनमें से शतपथ ब्राह्मण में यज्ञहोम के संबंध में इसका अभिमत पैंग्य ऋषि के साथ उद्धृत किया गया है (श. ब्रा. १३.५.३.१)। राज्याभिषेक के समय पठन किये जानेवाले मंत्र का इसके द्वारा सूचित किया गया एक विभिन्न पाठ ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.७)।

मैत्रि उपनिषद में भी इसके नाम का निर्देश प्राप्त है (मै. उ. ६.५)। किन्तु अन्य उपनिषद ग्रंथों में निर्दिष्ट सत्यकाम से यह आचार्य अलग प्रतीत होता है।

२. एक आचार्य, जो जानकि आयस्थूण नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.३.१२ काण्व.)।

सत्यकाम शैब्य--एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो आत्मज्ञान प्राप्त करने के हेतु पिप्पलाद के पास गये हुए पाँच आचार्यों में से एक था। प्रणव का ध्यान करने से आत्मज्ञान प्राप्त होता है, या नहीं, इस संबंध में इसने पिप्पलाद से प्रश्न पूछे थे (प्र. उ. १.१; ५.१)।

सत्यकामा--भङ्गकार राजा की कन्या, जो श्रीकृष्ण की पत्नी थी।

सत्यकेतु--(सो. क्षत्र.) एक महापराक्रमी राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार धर्मकेतु राजा का पुत्र, एवं धृष्टकेतु राजा का पिता था (भा. ९.१७.८-९)।

२. एक यक्ष, जिसने उग्रसेन राजा की पत्नी पद्मावती का हरण किया था (गोभिल २. देखिये)।

सत्यघोष--एक शूद्र, जिसके पुत्रों के नाम गर एवं सगर थे (पद्म. क्रि. ३)।

सत्यजित्--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

२. उत्तम मन्वन्तर का इंद्र (भा. ८.१.२४)।

३. एक यक्ष, जो कार्तिक माह के विष्णु के साथ भ्रमण करता है।

४. एक यादव राजा, जो आनक एवं कंका का पुत्र था (भा. ९.२४.४१)।

५. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो सुनीथ राजा का पुत्र, एवं विश्वजित् राजा का पिता था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे सुनेत्र राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.२२.४९)।

६. पांचाल देश के द्रुपद राजा का भाई, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. आ. परि. १.७८-७९; द्रो. २०.१६)।

७. मरुतों के द्वितीय गण में से एक (वायु. ६७.१२४)।

सत्यज्योति--मरुतों के प्रथम गण में से एक (वायु. ६७.१२३)।

सत्यतपस्--उतथ्य नामक ऋषि का नामान्तर। इसे 'सत्यव्रत' नामान्तर भी प्राप्त था। यह सदैव सत्यभाषण ही करता था, जिस कारण इसे 'सत्यतपस्' एवं 'सत्यव्रत' नाम प्राप्त हुए थे। सत्य हमेशा सापेक्ष रहता है, इस तत्त्व का प्रतिपादन करने के लिए इसकी कथा देवी भागवत में दी गयी है (दे. भा. ३.११)।

यह शुरु में अत्यंत आचारहीन एवं विद्याहीन पुरुष था। किन्तु एक बार सहज ही इसके मुख से 'ऐं' नामक 'सारस्वत बीजमंत्र' का उच्चारण होने के कारण, यह ऋषि बन गया, एवं सत्यकथन की विभिन्न मर्यादा इसे ज्ञात हुई।

एक बार एक व्याध एक वराह का पीछा करता हुआ इसके पास आया, एवं इससे वराह का पता पूछने लगा। इस समय अपने सत्यकथन से वराह की मृत्यु हो

जायेगी, यह जान कर इस सत्यप्रतिज्ञ मुनि ने मौन धारण किया।

२. एक ऋषि, जिसने अपने तप को भंग करने के लिए आयी हुई अप्सरा को बेर का वृक्ष बनने का शाप दिया था। आगे चल कर उन अप्सराओं का भरत ऋषि ने उद्धार किया (पद्म. उ. १७८; भरत १०. देखिये)।

३. एक कृष्णभक्त ऋषि, जो अपने अगले जन्म में भद्रा नामक गोपी बन गया।

सत्यतर—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से सत्यहित नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था (वायु. ६०.२९)।

सत्यदृष्टि—पृथुक देवों में से एक।

सत्यदेव—कलिंग देश का एक योद्धा, जो कलिंगराज श्रुतायु का चक्ररक्षक था। भारतीय युद्ध में भीमसेन ने इसका वध किया (म. भी. ५०.६९)।

सत्यदेवी—देवक राजा की कन्या, जो वसुदेव की सात पत्नियों में से एक थी (मत्स्य. ४४.७३)।

सत्यधर्म—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सत्यधर्मन्—एक राजा, जिसकी कथा गंगास्नान एवं नामस्मरण का माहात्म्य बताने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. ९)।

सत्यधर्मन् त्रैगर्त—त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो एक 'संशप्तक' योद्धा था (म. द्रो. १६.१७-२०)। अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.३६)।

सत्यधर्मन् सोमक—सोमकवंशीय राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ३९.२५)।

सत्यधृत—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार पुष्पवत् राजा का पुत्र, एवं सुधन्वन् राजा का पिता था। भागवत एवं वायु में इसे 'सत्यहित', एवं मत्स्य में 'सत्यधृति' कहा गया है।

सत्यधृति—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कृतिमत् राजा का, तथा मत्स्य एवं वायु के अनुसार धृतिमत् राजा का पुत्र था (भा. ९.२१.२७; मत्स्य. ४९.७०)।

२. एक ऋषि, जो शतानंद ऋषि का पुत्र, एवं शरद्वत् गौतम ऋषि का पिता था (भा. ९.२१.३५)। भागवत में प्राप्त इस निर्देश से यह शरद्वत गौतम ऋषि का नामान्तर प्रतीत होता है।

३. पांचालराज द्रुपद का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. क. ४.८१)।

४. (सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.१५.२१)।

५. (सो. ऋक्ष.) ऋक्षवंशीय सत्यधृत राजा का नामांतर (सत्यधृत देखिये)।

६. (सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार महावीर्य राजा का पुत्र था। वायु एवं भागवत में इसे सुधृति कहा गया है।

७. बलराम के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ३.७१.१६६)।

सत्यधृति क्षैमि—पाण्डवपक्ष का एक योद्धा, जो क्षेम राजा का पुत्र था (म. द्रो. २२.४८)।

सत्यधृति वारुणि—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८५)।

सत्यधृति सौचित्य—पाण्डव पक्ष का एक महारथी योद्धा, जो सुचित्त राजा का पुत्र था (म. उ. परि. १.१४.१२)। पाण्डवपक्ष में इसकी श्रेणि 'रथोदार' थी, एवं स्वयं भीष्म ने भी इसके युद्धकौशल्य की स्तुति की थी। यह अस्त्रविद्या, धनुर्वेद एवं ब्राह्मवेद में पारंगत था (म. द्रो. २२.४८)।

द्रौपदी स्वयंवर में यह उपस्थित था। इसके रथ के अश्व लाल रंग के थे, एवं सुवर्णमय विचित्र कवचों से वे सुशोभित थे। भारतीय युद्ध के आरंभ में इसने घटोत्कच की सहायता की थी (म. भी. ८९.१२)। अंत में द्रोण ने इसका वध किया (म. क. ४.८३)।

सत्यध्वज-(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो ऊर्जवह राजा का पुत्र था। भागवत एवं वायु में इसे क्रमशः 'सनद्वाज' एवं 'सुतद्वाज' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम शकुनि था।

सत्यनेत्र—वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

सत्यपाल—युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)।

सत्यभामा—श्रीकृष्ण की रानी, जो यादवराजा सत्राजित् (भङ्गकार) की कन्या थी। सत्राजित् राजा ने स्यमंतक मणि के चोरी का झूटा दोष कृष्ण पर लगाया। इस संबंध में कृष्ण संपूर्णतया निर्दोष है, इसका सबूत प्राप्त होने पर सत्राजित् ने कृष्ण से क्षमा माँगी, एवं अपनी ज्येष्ठ कन्या सत्यभामा उसे विवाह में अर्पित की। इसके

विवाह के समय, सत्राजित् ने स्यमंतक मणि भी वरदक्षिणा के रूप में देना चाहा, किंतु कृष्ण ने उसे लौटा दिया।

इसे सत्या नामान्तर भी प्राप्त था। यह अत्यंत स्वरूपसुंदर थी, एवं अक्रूर आदि अनेक यादव राजा इससे विवाह करना चाहते थे। किन्तु उन्हें टाल कर सत्राजित् ने इसका विवाह कृष्ण से कर दिया।

प्रासाद--श्रीकृष्ण के द्वारा द्वारका नगरी में इसके लिए एक भव्य प्रासाद बनवाया गया था, जिसका नाम शीतवत् था (म. स. परि. १.२१.१२४१)।

सत्राजित् का वध--आगे चल कर कृष्ण जब बलराम के साथ पाण्डवों से मिलने हस्तिनापुर गया था, वहीं सुअवसर समझ कर यादवराजा शतधन्वन् ने इसके पिता सत्राजित् का वध किया। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् इसने उसका शरीर तैल आदि द्रव्यों में सुरक्षित रखा, एवं यह श्रीकृष्ण को बुलाने के लिए हस्तिनापुर गयी। पश्चात् इसीके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर श्रीकृष्ण ने शतधन्वन् का वध किया (सत्राजित् देखिये)।

पारिजात वृक्ष की प्राप्ति--नरकासुर के युद्ध के समय, एवं कृष्ण के इंद्रलोक गमन के समय, यह उसके साथ उपस्थित थी। स्वर्ग की इसी यात्रा में इसने पारिजात वृक्ष को देखा। आगे चल कर नारद के द्वारा लाये गये पारिजात पुष्प, कृष्ण ने इसे न दे कर, अपनी रुक्मिणी आदि अन्य रानियों को दे दिया। इस कारण क्रुद्ध हो कर इसने कृष्ण से प्रार्थना की कि, वह इंद्र से युद्ध कर उससे परिजात-वृक्ष प्राप्त करे। तदनुसार कृष्ण ने पारिजात वृक्ष की प्राप्ति कर ली (भा. १०.५९; ह. वं २.६४-७३; विष्णु. ५.३०)।

द्रौपदी से उपदेश--पाण्डवों के वनवास काल में यह श्रीकृष्ण के साथ उनसे मिलने गयी थी। उस समय इसने द्रौपदी से पूछा था कि, अपने पति को वश करने के लिए स्त्री को क्या करना चाहिए। उस समय द्रौपदी ने इसे सलाह दी, 'अहंकार छोड़ कर निर्दोष वृत्ति से पति की सेवा करना ही पति की प्रीति प्राप्त करने का उत्कृष्ट साधन है। मैं ने स्वयं ही यही मार्ग अनुसरण किया है'।

भोलापन--इसका भोलापन एवं कृष्ण की प्रीति प्राप्त करने के लिए इसके विभिन्न प्रयत्न आदि की अनेक रोचक कथाएँ पौराणिक साहित्य में प्राप्त हैं। एक बार इसने नारद से प्रार्थना की कि, पति के रूप में श्रीकृष्ण उसे अगले जन्म में प्राप्त होने के लिए कोई न कोई व्रत वह इसे बताये। उस समय इसका मज़ाक उड़ाने के हेतु नारद ने इसे कहा कि, पारिजात वृक्ष का एवं स्वयं श्रीकृष्ण का दान उसे कर देने से उसकी यह इच्छा पूरी हो सकती है। नारद की यह सलाह सच मान कर इसने इन दोनों का दान नारद को कर दिया। पश्चात् अपनी भूल ज्ञात होने पर इसने नारद से क्षमा माँगी, एवं उसे विपुल दक्षिणा प्रदान कर कृष्ण एवं पारिजात उससे पुनः प्राप्त किये।

कृष्णनिर्वाण के पश्चात्--कृष्ण का निर्वाण होने के पश्चात्, यह स्वर्गलोक की प्राप्ति करने के हेतु तपस्या करने के लिए वन में चली गयी (म. मौ. ८.७२)।

परिवार--इसकी संतान की नामावलि विभिन्न पुराणों में प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है :--१. **विष्णु में**--भानु एवं भैमरिक (विष्णु. ५.३२.१); २. **भागवत में**--भानु, सुभानु, स्वर्भानु, प्रभानु; बृहद्भानु, भानुमत्, चंद्रभानु, अतिभानु श्रीभानु एवं प्रतिभानु (भा. १०.६१.१०); ३. **ब्रह्मांड एवं वायु में**--सानु, भानु, अक्ष, रोहित, मंत्रय, जरांधक, ताम्रवक्ष, भौमरि, जरंधम नामक पुत्र; एवं भानु, भौमरिका, ताम्रपर्णी, जरंधमा नामक कन्याएँ (ब्रह्मांड. ३.७१.२४७; वायु. ९६.२४०)।

सत्ययज्ञ पौलुषि प्राचीनयोग्य--एक आचार्य, जो पुलुष एवं प्राचीनयोग नामक आचार्यों का वंशज था (श. ब्रा. १०.६.१.१; छां. उ. ५.११.१)। कई अन्य ग्रंथों में, इसे 'पुलुष प्राचीनयोग्य' भी कहा गया है (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

सत्ययज्ञ पौलुषित--एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.३९.१)।

सत्यरता--एक केकय राजकन्या, जिसका विवाह अयोध्या के सत्यव्रत त्रिशंकु से हुआ था (वायु. ८८.११७)।

सत्यरथ--(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार समरथ राजा का, एवं विष्णु के अनुसार मीनरथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम उपगुरु था (भा. ९.१३.२४)।

२. (सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार चित्ररथ राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४८.९४)।

३. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सत्यव्रत राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.३७)।

४. विदर्भ देश का एक राजा, जिसे सत्यसंध नामांतर भी प्राप्त था (स्कंद. ३.३.६)। शिवपूजा का माहात्म्य

कथन करने क लिए इसकी कथा 'शिवपुराण' में दी गयी है (शिव. शत. ३१; पांड्य २. देखिये)।

सत्यरथ त्रैगर्त—एक राजकुमार, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् का भाई था। अपने पाँच 'रथी' (रथोदार) बन्धुओं का यह नेता था (म. उ. १६३.११)।

भारतीय युद्ध में एक संशप्तक योद्धा के नाते यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं इसने अर्जुन को मारने की प्रतिज्ञा की थी (म. द्रो. १६.१७-२०)। किन्तु अंत में अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.४६)।

सत्यवचस् राथीतर--एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो सत्यकथन का विशेष पुरस्कर्ता था (तै. उ. १.९.१)। रथीतर का वंशज होने से, इसे 'राथीतर' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

सत्यवत्—एक राजा, जो शाल्वनरेश द्युमत्सेन का पुत्र, एवं मद्रराज अश्वपति की कन्या सावित्री का पति था। इसे बचपन से अश्वों के चित्र चित्रित करने का शोक था, जिस कारण इसे 'चित्राश्व' नामांतर भी प्राप्त था।

इस अल्पायु राजकुमार के प्राण यमधर्म के पंजे से छुड़ाने का कार्य इसकी पत्नी सावित्री ने अपने पातिव्रत्य-सामर्थ्य से किया, जिस कारण ये दोनों अमर हो गये (सावित्री देखिये)।

३. (सो. वृष्णि.) यादववंशीय सत्यक राजा का नामांतर। मत्स्य में इसे शिनि राजा का पुत्र कहा गया है (सत्यक ४. देखिये)।

४. तेजपूर नगरी का एक राजा, जो ऋतंभर राजा का पुत्र था। इसका पिता ऋतंभर परम रामभक्त, गो-सेवक एवं दानी राजा था। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, उसका अश्वमेधीय अश्व शत्रुघ्न के द्वारा इसकी नगरी में लाया गया। उस समय इसने शत्रुघ्न का सहर्ष स्वागत किया, एवं अश्वरक्षक बन कर उसके साथ यह आगे बढ़ा (पद्म. पा. ३०-३२)।

सत्यवती—शांतनु राजा की पत्नी, जो चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य राजाओं की माता थी। इसे 'काली', 'मत्स्यगंधा,' 'गंधवती,' 'योजनगंधा,' 'गंधकाली' आदि नामान्तर भी प्राप्त थे।

जन्म--यह उपरिचर वसु राजा की कन्या थी। इसकी माता का नाम अद्रिका था, जो ब्रह्मा के शाप के कारण मछली का स्वरूप प्राप्त हुई अप्सरा थी। आगे चल कर, कई मल्लाहों ने अद्रिका मछली को पकड़ लिया, एवं उस मछली का पेट चीर दिया, जिससे मत्स्य नामक एक पुरुष, एवं यह बाहर निकल पड़े। मछली से उत्पन्न होने के कारण, इसकी शरीर से महली की गंध आती थी। इसी कारण यह 'मत्स्यगंधा' नाम से प्रसिद्ध हुई। क्षत्रियकुलोत्पन्न वसु राजा की कन्या होने के कारण, यह स्वयं क्षत्रियकन्या थी (स्कंद. ५.३.९७)।

वेदव्यास का जन्म—आगे चल कर यमुना नदी के मल्लाहों ने इसे पाल पोस कर बड़ा किया, एवं यह अपने पिता की सेवा के लिए यमुना नदी में नाव चलाने का काम करने लगी (म. आ. ५७.५०-६९)। एक दिन पराशर ऋषि ने इसे देखा, एवं इसके साथ समागम की इच्छा प्रकट की। पराशर ऋषि से इसे वेदव्यास पाराशर्य नामक सुविख्यात पुत्र की उत्पत्ति हुई (म. आ. ५७. ८४-८५; पराशर देखिये)।

शांतनु से विवाह—इस प्रकार इसके कौमार्यावस्था में ही व्यास का जन्म होने के पश्चात्, शांतनु राजा से इसका विवाह हुआ, जिससे इसे चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए।

चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य ये इसके दोनों ही पुत्र निपुत्रिक अवस्था में मृत हुए। अतः कुरुवंश का निर्वंश न हो इस हेतु से, इसने अपनी स्नुषा अंबिका एवं अंबालिका को अपने पुत्र व्यास से पुत्र उत्पन्न करने की आज्ञा दी। ये पुत्र आगे चल कर धृतराष्ट्र एवं पाण्डु नाम से प्रसिद्ध हुए।

२. जमदग्नि ऋषि की माता, जो गाधि राजा की कन्या, ऋचीक ऋषि की पत्नी, एवं विश्वामित्र ऋषि की बहन थी। एक हजार श्यामकर्ण अश्व ले कर गाधि राजा ने इसका विवाह ऋचीक ऋषि से किया था (ऋचीक देखिये)। जमदग्नि के अतिरिक्त इसके शुनःपुच्छ, शुनःशेप एवं शुनोलांगूल नामक अन्य तीन पुत्र थे (वायु. ९१.९२; ब्रह्मांड. ३.६६.६४)। अपने पातिव्रत्य धर्म के कारण, यह मृत्यु के पश्चात् स्वर्गलोक चली गयी, एवं अपने अगले जन्म में कौशिकी नदी के रूप में पुनः पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई।

३. अगस्त्य पत्नी लोपामुद्रा का नामांतर।

४. अयोध्या के हरिश्चंद्र त्रैशंकव नामक राजा की माता, जो त्रिशंकु राजा की पत्नी थी।

५. सुबाहु राजा की पत्नी। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय जो 'दंपती' अश्व को नहलाने के लिए सरस्वती नदी के तट पर गये थे, उनमें यह एवं इसका पति सुबाहु एक थे (पद्म. पा. ६७)।

सत्यवर्मन् त्रैगर्त--त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो 'संशप्तक' योद्धाओं में से एक था (म. द्रो.

१६.१७–२०)। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.४६)।

सत्यवाच्—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था।

२. एक राजा, जो चाक्षुष मनु एवं नड्वला के पुत्रों में से एक था। इसे सत्यवत् नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ४.१३.१६)।

३. रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

४. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सत्यव्रत--अयोध्या के त्रिशंकु राजा का नामान्तर (त्रिशंकु देखिये)। भागवत में इसे त्रिबंधन राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.७.५)।

२. द्रविड देश का एक राजा, जो भगवान् विष्णु के मत्स्यावतार की कृपा से श्राद्धदेव (वैवस्वत मनु) बन गया (भा. ८.२४.१०; मत्स्य. १.२; २९०)। पुराणों में प्राप्त इसकी जीवनकथा वैवस्वत मनु के जीवन चरित्र में वर्णित मत्स्यावतार से संबंधित कथा से काफ़ी मिलती जुलती है। फर्क सिर्फ इतना ही है कि, इन दाक्षिणात्य पुराणों में वैवस्वत मनु का मूल नाम मनु नहीं, बल्कि सत्यव्रत बताया गया है।

तपस्या—अपने राज्य का भार अपने पुत्रों पर सौंप कर, यह मलय पर्वत से उद्भव पानेवाली कृतमाला नदी के तट पर तपस्या करने के लिए गया। आधुनिक मदुरा नगरी, जिस वैगा नदी के तट पर बसी हुई है, वही नदी प्राचीन काल में कृतमाला नाम से सुविख्यात थी (मार्कं. ५७; विष्णु. २.३)। पश्चात् विष्णु ने इसे पृथ्वी पर स्थित समस्त स्थिरचर प्रदेशों का राजा बनने का आशीर्वाद दिया (मत्स्य. १)।

मत्स्यावतार—मत्स्य के अनुसार, एक बार नैमित्तिक ब्राह्मप्रलय के समय हयग्रीव नामक राक्षस ने ब्रह्मा से वेद चुरा लिये। उन्हें पुनः प्राप्त करने के लिए विष्णु ने पुनः एक बार मत्स्यावतार धारण किया। विष्णु का यह मत्स्यावतार सत्यव्रत राजा के करांजलि में एक छोटी सी मछली के रूप में अवतीर्ण हुआ। अवतीर्ण होते ही, थोड़े ही दिन में आनेवाले ब्राह्मप्रलय की सूचना उसने इस राजा को दी (मत्स्य. २.३)।

उस समय मत्स्यस्वरूपी श्रीविष्णु ने इससे कहा, 'प्रलय के समय, एक नौका तुझे लेने आयेगी, जिसमें अपने परिवार के सभी लोगों को तुम बिठाना। उस समय समस्त पृथ्वी पर अंधःकार होगा, फिर भी यह नौका प्रकाश से जगमगाती रहेगी। उसी समय एक प्रचंड मछली के रूप में मैं आऊंगा। उस समय वासुकि सर्प की रस्सी बना कर तुम अपनी नौका मेरे सिंग से बाँधना। ब्रह्मा की रात्रि अर्थात् 'ब्राह्मप्रलय' समाप्त होने तक मैं तुम्हें, एवं तुम्हारी नौका को सुरक्षित स्थान पर बाँध कर रखूँगा। प्रलय समाप्त होने पर मैं तुम्हें आत्मज्ञान का उपदेश दूंगा'।

आत्मज्ञान की प्राप्ति—ब्राह्मप्रलय समाप्त होने पर मत्स्य ने इसे ज्ञान, योग एवं क्रिया का उपदेश दिया, एवं आत्मज्ञानस्वरूपी मत्स्यपुराण का इसे कथन किया। अन्त में मत्स्य की ही कृपा से यह श्राद्धदेव नामक वैवस्वत मनु बन गया।

सत्यव्रत-कथा का अन्वयार्थ—मत्स्य पुराण के टीकाकार श्रीधर के अनुसार, सत्यव्रत के आयुःकाल में हुआ जल-प्रलय पृथ्वी का आद्य प्रलय न हो कर, भगवान विष्णु की माया से उत्पन्न हुआ एक 'प्रलयाभास' था, जो सत्यव्रत के मन में वैराग्यभावना उत्पन्न करने के लिए, एवं अपने स्वयं के सामर्थ्य के साक्षात्कार की प्रचीति इसे देने के लिए निर्माण किया गया था। इसी प्रकार का अन्य एक प्रलयाभास विष्णु के द्वारा मार्कंडेय ऋषि को दिखाया गया था।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र 'सत्यसंध' का नामांतर।

४. सत्यतपस् नामक ऋषि का नामान्तर (सत्यतपस् १. देखिये)।

५. एक ऋषिसमुदाय, जो धर्मऋषि की संतान मानी जाती है।

सत्यव्रत त्रैगर्त--त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो संशप्तक योद्धाओं में से एक था (म. द्रो. १६.१७–२०)। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया।

सत्यव्रता—धृतराष्ट्र की एक पत्नी, जो गांधारराज सुबल की कन्या, एवं गांधारी की कनिष्ठ भगिनी थी।

सत्यश्रवस्--(सू. नरि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वीतिहोत्र राजा का पुत्र, एवं उरुश्रवस् राजा का पिता था (भा. ९.२.२०)।

२. कौरव पक्ष का योद्धा, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४४.३)।

३. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से मार्कंडेय ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे मांडुकेय ऋषि का पुत्र एवं शिष्य कहा गया है (वायु. ६०. २८)।

सत्यश्रवस् आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.७९-८०)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे वाय्य सत्यश्रवस् कहा गया है (ऋ. ५.७९.२)।

सत्यश्रवस् वाय्य--एक ऋषि, जिसका निर्देश उषस् के कृपापात्र व्यक्ति के नाते ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ५.७९.२)। ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट सत्यश्रवस् आत्रेय, एवं सुनीथ शौचद्रथ संभवतः यही होगा। लुडविग के अनुसार, यह सुनीथ शौचद्रथ का पुत्र था (लुडविग ऋग्वेद अनुवाद ३.१५६)। वय्य का वंशज होने से इसे 'वाय्य' पैतृकनाम प्राप्त हुआ होगा।

सत्यश्रीय--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से सत्यहित (सत्यतर) नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था। इसके शिष्यों के नाम शाकल्य, रथीतर, एवं बाष्कलि थे।

सत्यसंध--एक प्रजाहितदक्ष राजा, जिसने अपने प्राणों का त्याग कर एक ब्राह्मण की रक्षा की थी (म. शां. २२६.१६)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। इसे सत्यव्रत एवं संध नामान्तर भी प्राप्त थे। कौरव पक्ष के ग्यारह महारथियों में से यह एक था। अभिमन्यु, सात्यकि, सुषेण आदि राजाओं से इसका युद्ध हुआ था। अन्त में भीमसेन के द्वारा यह मारा गया (म. क. ६२. २-५ पाठ.)।

३. सत्यरथ नामक विदर्भ देश के राजा का नामान्तर (सत्यरथ ५. देखिये)।

४. मित्र के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। अन्य पार्षद का नाम सुव्रत था।

सत्यसहस्--एक राजा, जो रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के स्वधामन् नामक अवतार का पिता था। इसकी पत्नी का नाम सुनृता था (भा. ८.१.२५)।

सत्यसेन--उत्तम मन्वन्तर का एक अवतार, जो धर्म एवं सुनृता का पुत्र था (भा. ८.१.२५)।

२. अंगराज कर्ण का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में नकुल के द्वारा मारा गया (म. श. ९.२१; ३९)।

३. धृतराष्ट्र के सत्यसंध नामक पुत्र का नामांतर।

सत्यसेन त्रैगर्त--त्रिगर्त राजा सुशर्मन् का एक भाई, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.३-१७)।

सत्यसेना--धृतराष्ट्र की एक पत्नी, जो गांधारराज सुबल की कन्या एवं गांधारी की कनिष्ठ बहन थी।

सत्यहविस्--एक अध्वर्यु एवं आचार्य (मै. सं. १. ९.१.१५)।

सत्यहित--(सो. ऋक्ष.) ऋक्षवंशीय सत्यधृत राजा का नामान्तर।

२. एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से सत्यश्रवस् नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो पुष्पवत् राजा का पुत्र एवं सुधन्वन् राजा का पिता था।

सत्या--मन्थु राजा की पत्नी, जो भौवन राजा की की माता थी (भा. ५.१५.१५)।

२. धर्म की कन्या, जो शंयु नामक अग्नि की पत्नी थी। इसे भरद्वाज नामक एक पुत्र एवं तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई थी (म. व. २०९.४)।

३. मगध देश के बृहद्रथ राजा की पत्नी, जो जरासंध राजा की माता थी।

४. कोसल देश के नग्नजित् राजा की कन्या, जो श्रीकृष्ण की पटरानी थी। इसके स्वयंवर के समय इसके पिता ने शर्त रखी थी कि, सात मस्त बैलों के साथ जो लड़ेगा उसके साथ इसका विवाह किया जायेगा। यह शर्त जीत कर कृष्ण ने इसका वरण किया (भा. १०.५८.३२-४७)। अपने विवाह का वृत्तांत इसने द्रौपदी से कथन किया था (भा. १०.८३.१३)। अपने पूर्वजन्म में किये विष्णुभक्ति के कारण, कृष्णपत्नी बनने का भाग्य इसे प्राप्त हुआ।

परिवार--कृष्ण से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:--वीर, चंद्र, अश्वसेन, चित्रगु, वेगवत्, वृष, आम, शंकु, वसु एवं कुन्ति (भा. १०.६१.१३)।

५. उत्तम मन्वन्तर के सत्य नामक अवतार की माता (विष्णु. ३.१.३८)।

६. बृहन्मनस् राजा की पत्नी, जो शैब्य नामक राजा की कन्या, एवं विजय नामक राजा की माता थी (मत्स्य. ४८.१०५)।

सत्याधिकवाच् चैत्ररथि--एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.३९.१)।

सत्यायु--(सो. पुरूरवस्.) शतायु नामक पुरूरवस् पुत्र का नामान्तर (भा. ९.१५.१)।

सत्याषाढ--एक आचार्य, जो कृष्णयजुर्वेद के तैत्तिरीय शाखान्तर्गत हिरण्यकेशिन् नामक शाखा का प्रवर्तक आचार्य माना जाता है। यद्यपि इसका सही नाम सत्या-

षाढ था, फिर भी यह हिरण्यकेशिन् नाम से ही सुविख्यात था (हिरण्यकेशिन् देखिये)।

सत्येयु--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो रुद्राश्व एवं मिश्रकेशी अप्सरा का पुत्र था (म. आ. ८९. १०)।

सत्येषु त्रैगर्त—त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो भारतीय युद्ध में अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. श. २६.२९)।

सत्राजित् अथवा **सत्राजित**—(सो. वृष्णि.) एक सुविख्यात यादव राजा, जो निम्न राजा का पुत्र था (भा. ९.२४)। ब्रह्मांड एवं विष्णु में इसे विघ्न राजा का पुत्र कहा गया है (विष्णु. ५.१३.१०; ब्रह्मांड. ३.७१.२१)। इसे शक्तिसेन नामांतर भी प्राप्त था (मत्स्य. ४५.३; पद्म. सृ. १३)। इसके जुड़वे भाई का नाम प्रसेन था (भा. ९.२४.१३)। सत्यभामा के पिता, एवं स्यमंतक मणि के स्वामी के नाते यादव वंश के इतिहास में इसका नाम अत्यधिक प्रसिद्ध था।

पूर्वजन्म—पूर्वजन्म में यह मायापुरी में रहनेवाला देवशर्मन् नामक ब्राह्मण था, एवं इसकी कन्या का नाम गुणवती था, जो इस जन्म में इसकी सत्यभामा नामक कन्या बनी थी।

स्यमंतक मणि की प्राप्ति--सूर्य के प्रसाद से इसे स्यमंतक नामक एक अत्यंत तेजस्वी मणि प्राप्त हुई थी (भा. १०.५६.३)। इस मणि में रोगनाशक एवं समृद्धिवर्धक अनेकानेक दैवी गुण थे। यही नहीं, यह मणि प्रतिदिन आठ भार स्वर्ण देती थी। यह मणि सूर्य के समान तेजस्वी थी, एवं इसे धारण करनेवाला व्यक्ति साक्षात् सूर्य ही प्रतीत होता था।

एक बार कृष्ण ने इसके पास स्यमंतक मणि देखा, जिसे देख कर उसने चाहा कि, मथुरा के राजा उग्रसेन के पास यह मणि रहे तो अच्छा होगा। इस हेतु कृष्ण स्वयं इसके प्रासाद में आया, एवं किसी भी शर्त पर यह मणि उग्रसेन राजा को देने के लिए इससे प्रार्थना की। किन्तु इसने कृष्ण इस माँग को साफ इन्कार कर दिया।

तदुपरांत एक दिन इसका भाई प्रसेन स्यमंतक मणि गले में पहन कर शिकार करने गया। वहाँ एक सिंह ने उसका वध किया, एवं वह दैवी मणि ले कर अपनी गुहा की ओर जाने लगा। इतने में जांबवत् नामक राक्षस ने मणि की प्राप्ति की इच्छा से उस सिंह का वध किया, एवं वह मणि छीन लिया।

श्रीकृष्ण पर चोरी का दोषारोप--बहुत समय तक प्रसेन के वापस न आने पर, इसके मन में संशय उत्पन्न हुआ कि, श्रीकृष्ण के द्वारा ही प्रसेन का वध हुआ है, एवं यह क्रूरकर्म करने में उसका हेतु स्यमंतक मणि की प्राप्ति के सिवा और कुछ नहीं है। इस कारण प्रसेन का खूनी एवं स्यमंतक मणि के अपहर्ता के नाते, यह श्रीकृष्ण पर प्रकट रूप में दोषारोप करने लगा। इस कारण यादव राजसमूह में श्रीकृष्ण की काफ़ी बेइज्जती होने लगी।

स्यमंतक मणि की खोज़--इस कारण श्रीकृष्ण ने उपर्युक्त दोषारोप से छुटकारा पाने के लिए, स्यमंतक मणि की खोज़ शुरु की। खोज़ते खोज़ते कृष्ण जांबवत् की गुफा में पहुँच गया, जहाँ जांबवन् से अट्ठाईस दिनों तक युद्ध कर उसे परास्त किया, एवं उससे स्यमंतक मणि पुनः प्राप्त किया। पश्चात् कृष्ण ने वह मणि इसे वापस दिया, एवं उसकी चोरी के संबंध में सारी घटनाएँ इससे कह सुनायीं।

कृष्ण सत्यभामा विवाह--स्यमंतक मणि के संबंध में सत्य हकीकत ज्ञात होते ही, इसने कृष्ण से क्षमा माँगी, एवं अपनी कन्या सत्यभामा का उससे विवाह कर दिया। विवाह के समय, इसने कृष्ण को वरदक्षिणा के रूप में स्यमंतक मणि देना चाहा, किंतु श्रीकृष्ण ने उसे लेने से इन्कार किया, एवं उसे इसके पास ही रख दिया।

वध—आगे चल कर, कृष्ण जब हस्तिनापुर में पांडवों से मिलने गया था, यही सुअवसर समझ कर, अक्रूर एवं कृतवर्मन् आदि यादव राजाओं ने इसका वध करने का षड्यंत्र रचा। ये दोनों यादव राजा सत्यभामा से विवाह करना चाहते थे, एवं उन्हें टाल कर कृष्ण को जमाई बनानेवाले सत्राजित् से अत्यधिक रुष्ट थे।

इसी कारण उन्होंने शतधन्वन् नामक अपने कनिष्ठ भाई को इसका वध कर, स्यमंतक मणि की चोरी करने की आज्ञा दी। तदनुसार शतधन्वन् ने इसका निद्रित अवस्था में ही वध किया, एवं स्यमंतक मणि चुरा लिया (भा. १०.५७.५)। अपने मृत्यु के पश्चात्, सूर्योपासना के पुण्य के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (भवि. ब्राह्म. ११६-११७)। अपने पिता के निर्घृण वध की वार्ता सत्यभामा ने श्रीकृष्ण से कथन की, एवं किसी भी प्रकार शतधन्वन् का वध करने की इसे प्रार्थना की।

शतधन्वन् का वध—पश्चात् शतधन्वन् का पीछा करता श्रीकृष्ण आनर्त देश पहुँच गया। यह ज्ञात होते ही शतधन्वन् ने स्यमंतक मणि अक्रूर के पास दिया,

एवं वह स्वयं विदेह देश भाग गया। वहाँ मिथिला-नगरी के समीप स्थित जंगल में श्रीकृष्ण ने उसका वध किया, किंतु फिर भी स्यमंतक मणि की प्राप्ति न होने के कारण, निराश हो कर वह द्वारका-नगरी पहुँच गया। पश्चात् मणि अक्रूर के पास ही है, एवं उससे वह प्राप्त करना मुश्किल है, यह जान कर कृष्ण ने उससे संधि की, एवं सारे निकटवर्ती लोगों को इकठ्ठा कर वह मणि अक्रूर को दे दिया।

निरुक्त में--स्यमंतक मणि से संबधित उपर्युक्त कथा का निर्देश यास्क के निरुक्त में प्राप्त है, जहाँ अक्रूर मणि धारण करता है (**अक्रूरो ददते मणिम्**), इस वाक्य-प्रयोग का निर्देश एक कहावत के नाते दिया गया है (नि. २.२.११)। इस निर्देश से स्यमंतक मणि के संबंधित उपर्युक्त कथा की प्राचीनता एवं ऐतिहासिकता स्पष्टरूप से प्रतीत होती है। कई अभ्यासकों के अनुसार, मुगल राज्य में सुविख्यात कोहिनूर ही प्राचीन स्यमंतक मणि है।

परिवार--इसकी कुल दस पत्नियाँ थी, जो कैकयराज की कन्याएँ थी। इनमें से वीरवती (द्वारवती) इसकी पटरानी थी (ब्रह्मांड. ३.७१.५६; मत्स्य. ४५.१७-१९)।

इसके कुल एक सौ एक पुत्र थे, जिनमें से प्रमुख पुत्रों की नामावलि विभिन्न पुराणों में विभिन्न दी गयी है :— **१. ब्रह्मांड में**—भङ्गकार, वातपति, एवं तपस्वी नामक तीन पुत्र, एवं सत्यभामा, व्रतिनी एवं दृढव्रता नामक तीन कन्याएँ (ब्रह्मांड. ३.७१.५४-५७); **२. वायु में**-भङ्गकार, व्रतपति, एवं तपस्वांत (वायु. ३४.५३); **३. ब्रह्म में**—वसुमेध, भङ्गकार एवं वातपति (ब्रह्म. १६.४६)।

सत्राजिती--कृष्णपत्नी सत्यभामा का नामांतर (विष्णु. ५.२८.५)।

सत्रायण—बृहद्भानु नामक इंद्रसावर्णि मन्वंतर के अवतार का पिता। इसकी पत्नी का नाम विताना था।

सत्व--रैवत मनु का एक पुत्र (मत्स्य. ९.२१)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो पुरुद्वह राजा का पुत्र, एवं सात्वत राजा का पिता था (वायु. ९५.४७)।

सत्वत्—एक जातिविशेष, जो भारतवर्ष के दक्षिण विभाग में बसी हुई थी। भरत ने इन राजाओं को परास्त किया, एवं इनका अश्वमेधीय अश्व भी छीन लिया था (श. ब्रा. १३.५.४.२१)। ऐतरेय ब्राह्मण में इन लोगों का निर्देश 'सत्वत्' और 'सत्वन्' (ऐ. ब्रा. ८.१४; २.२५) नाम से किया गया है।

कौषीतकि उपनिषद में भी इन लोगों का निर्देश मत्स्य लोगों के साथ प्राप्त है (कौ. उ. ४.१)। किन्तु वहाँ इनके नाम का मूल पाठ 'वसत्' है।

सत्वत—यादववंशीय सात्वत राजा का नामांतर (सात्वत देखिये)।

सत्वदंत--एक यादव राजकुमार, जो वसुदेव एवं भद्रा के पुत्रों में से एक था (वायु. ९६.१७१)।

सद—एक देव, जो अंगिरा एवं सुरूपा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १९६.२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शत पुत्रों में से एक।

सदश्व--सत्यदेवों में से एक।

२. (सो. पूरु.) एक राजा, जो विष्णु, वायु, एवं मत्स्य के अनुसार समर राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५४)।

३. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.१२)।

सदसस्पति--कश्यप एवं सुरभि का एक पुत्र।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक (वायु. ६६.६९)।

सदस्यवत् अथवा **सदस्यमत्**--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, एवं मंत्रकार।

सदस्यु--आंगिरस कुलांतर्गत कुत्स गोत्री लोगों का एक प्रवर।

सदस्योर्मि—यमसभा में उपस्थित एक राजा। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-सदश्वोर्मि।

सदाचंद्र--एक राजा, जो वायु के अनुसार, मथुरा-नगरी में राज्य करता था। ब्रह्मांड में इसे विदिशा-नगरी का नागवंशीय राजा कहा गया है।

सदापृण आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.४५)। ऋग्वेद के कई मंत्रों में भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.४४.५२)।

सद्योजात--शिव के अवतारों में से एक।

सध्रि काण्व--एक ऋषि (ऋ. ५.४४.१०)।

सध्रि वैरूप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११४)।

सध्वंस काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८)।

सनक--ब्रह्मा के चार मानसपुत्रों में से एक, जो साक्षात् विष्णु का अवतार माना जाता है। इसके साथ उत्पन्न हुए ब्रह्मा के अन्य तीन मानसपुत्रों के नाम सनत्कुमार, सनंद, एवं सनातन थे (भा. २.७.५; सनत्कुमार देखिये)।

ब्रह्मा के ये चारों ही पुत्र, कुमार के रूप में उत्पन्न हुए थे, एवं बालक के समान दिखते थे, जिस कारण इन्हें कुमार कहा जाता था।

पौराणिक साहित्य में—विष्णु के एक अवतार के नाते इनका निर्देश विभिन्न पुराणों में प्राप्त है। यह एवं इसके भाई जन्म से अत्यधिक विरक्त थे, एवं ब्रह्मा के मानसपुत्र होते हुए भी इन्होंने कभी भी प्रजोत्पादन नहीं किया (पद्म. सृ. ३.)। एक बार यह अपने बंधुओं के साथ वैकुंठ गया, जहाँ जय एवं विजय नामक द्वारपालों ने इसे अंदर जाने से मना किया। इस कारण इसने इस दोनों द्वारपालों को शाप दिया (भा. ७.१.३५)। गंगा नदी के सीता नामक नदी के तट पर इसका नारद के साथ तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (नारद. १.१-२)।

पारस्कर गृह्यसूत्रों के तर्पण में इसका एवं सनत्कुमार को छोड़ कर इसके अन्य दो भाइयों का निर्देश प्राप्त हैं, एवं ये कंक नामक शिवावतार के शिष्य बताये गये हैं। निंबार्क के द्वारा प्रणीत कृष्ण एवं राधा के उपासना सांप्रदाय, 'सनक सांप्रदाय' नाम से सुविख्यात है, जहाँ सनक के रूप में ही कृष्ण की पूजा की जाती है (राधा देखिये)। इसके नाम पर 'सनकसंहिता' नामक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जिसमें इसे भृगुकुलोत्पन्न कहा गया है (C. C.)। इससे प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ की रचना करनेवाला आचार्य स्वयं यह न हो कर, इसकी उपासना करनेवाला अन्य कोई ऋषि था।

२. एक असुर गण, जो वृत्र का अनुयायी था (ऋ. १.३३.४)।

सनक काप्य—एक आचार्य, जो काप्य नामक आचार्य द्वयों में से एक था। इसके साथी दूसरे आचार्य का नाम नवक था। इन दोनों ने विभिन्दुकियों के यज्ञ में भाग लिया था (जै. ब्रा. ३.२३३)। लुडविग के अनुसार, ऋग्वेद में भी एक यज्ञकर्ता आचार्यद्वय के रूप में इनका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.३३.४)। किन्तु इस संबंध में निश्चित-रूप से कहना कठिन है।

सनग—एक आचार्य, जो परमेष्ठिन् नामक आचार्य का शिष्य, एवं सनातन नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३ काण्व; श. ब्रा. ४१.७.३.२८)।

सनति—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सन्ततिमत् राजा का पुत्र था (वायु. ९९.१८९)।

सनत्कुमार—एक सुविख्यात तत्त्ववेत्ता आचार्य, जो साक्षात् विष्णु का अवतार माना जाता है। इसे 'सनत्कुमार', 'कुमार' आदि नामांतर भी प्राप्त है। सनत्कुमार का शब्दशः अर्थ 'जीवन्मुक्त' होता है (म. शां. ३२६.३५)। यह एवं इसके भाई कुमारावस्था में ही उत्पन्न हुए थे, जिस कारण, ये 'कुमार' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे।

ब्रह्ममानसपुत्र—विष्णु के अवतार माने गये ब्रह्ममानस-पुत्रों की नामावलि महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है :—

(१) **महाभारत में**—इस ग्रंथ में इनकी संख्या सात बतायी गयी है, एवं इनके नाम निम्न दिये गये है :— १. सन; २. सनत्सुजात; ३. सनक; ४. सनंदन; ४. सनत्कुमार; ६. कपिल; ७. सनातन (म. शां. ३२७.६४-६६)। महाभारत में अन्यत्र 'ऋभु' को भी इनके साथ निर्दिष्ट किया गया है (म. उ. ४१.२-५)।

(२) **हरिवंश में**—इस ग्रंथ में इनकी संख्या सात बतायी गयी है :—१. सनक; २. सनंदन; ३. सनातन; ४. सनत्कुमार; ५. स्कंद; ६. नारद; एवं ७. रुद्र (ह. वं. १.१.३४-३७)।

(३) **भागवत में**—इस ग्रंथ में इनकी संख्या चार बतायी गयी है:—१. सनक; २. सनंदन; ३. सनत्कुमार; एवं ४. सनातन (भा. २.७.५; ३.१२.४; ४.८.१)।

गुणवर्णन—ये ब्रह्मज्ञानी, निवृत्तिमार्गी, योगवेत्ता, सांख्याज्ञानविशारद, धर्मशास्त्रज्ञ, एवं मोक्षधर्म-प्रवर्तक थे (म. शां. ३२७.६६)। ये विरक्त, ज्ञानी, एवं क्रियारहित (निष्क्रिय) थे (भा. २.७.५)। ये निरपेक्ष, वीतराग, एवं निरिच्छ थे (वायु. ६.७१)। ये सर्वगामी, चिरंजीव, एवं इच्छानुगामी थे (ह. वं. १.१.३४-३७)। अत्यधिक विरक्त होने के कारण, इन्होंने प्रजा निर्माण से इन्कार किया था (विष्णु. १.७.६)।

निवासस्थान—इनका निवास हिमगिरि पर था, जहाँ विभांडक ऋषि इनसे मिलने गये थे। अपने इसी निवासस्थान से इन्होंने विभांडक को ज्ञानोपदेश किया था (म. शां. परि. १.२०)।

उपदेशप्रदान—इसने निम्नलिखित साधकों को ज्ञान, वैराग्य, एवं आत्मज्ञान का उपदेश किया था :—१. **नारद**—आत्मज्ञान (छां. उ. ७.१.१-२६); एवं भागवत का महत्त्व (पद्म. उ. १९३-१९८); २. **सांख्यायन**—भागवत (भा. ३.८.७); ३. **वृत्रासुर**—विष्णुमाहात्म्य (म. शां. २७१); ४. **रुद्र**—तत्त्वसृष्टि (म. अनु. १६५.

१६), ५. विभिन्न ऋषिसमुदाय--भगवत्स्वरूप (म. शां. परि. १.२०); विश्वावसु गंधर्व--आत्मज्ञान (म. शां. ३०६.५९-६१); ७. धृतराष्ट्र--धर्मज्ञान (म. उ. ४२-४५); ८. ऐल--श्राद्ध (विष्णु. ३.१४.११)।

सात्वत धर्म का उपदेश--सात्वत धर्म की आचार्य-परंपरा में सनत्कुमार एक सर्वश्रेष्ठ आचार्य माना जाता है। इस धर्म का ज्ञान सर्वप्रथम ब्रह्मा ने इसे प्रदान किया, जो आगे चल कर इसने वीरण प्रजापति को दे दिया (म. शां. ३३६.३७)।

आगे चल कर सनत्कुमार का यही उपदेश नारद ने शुक को प्रदान किया, जिसका सार निम्नप्रकार बताया गया है :--

नास्ति विद्यासमं चक्षु र्नास्ति सत्यसमं तपः।
नास्ति रागसमं दुःखं नास्ति त्यागसमं सुखम् ॥
(म. शां. ३१६.६)।

(विद्या के समान श्रेष्ठ नेत्र इस संसार में नहीं है। साथ ही साथ, सत्य के समान श्रेष्ठ तप, राग के समान बड़ा दुःख, एवं त्याग के समान श्रेष्ठ सुख भी इस संसार में अन्य कोई नहीं है)।

नारद के द्वारा प्राप्त इस उपदेश के कारण, शुक ने परंधाम जाने का निश्चय किया, एवं वह आदित्यलोक में प्रविष्ट हुआ (शुक वैयासकि देखिये)।

धृतराष्ट्र से उपदेश--महाभारत के 'प्रजागर' नामक उपपर्व में धृतराष्ट्र को सनत्कुमार के द्वारा दिया तत्त्वोपदेश प्राप्त है, जो 'सनत्सुजातीय' नाम से सुविख्यात है। यह उपदेश कृष्ण दौत्य के पूर्वरात्रि में सनत्सुजात के द्वारा दिया गया था (विदुर देखिये)।

उस उपदेश में मानवीय आयुष्य की मृत्यु को इसने भ्रममूलक बता कर, मनुष्य की सही मृत्यु उसके द्वारा किये गये प्रमादों में है, ऐसा कथन किया है। इन प्रमादों से बचने के लिए, मौनादि साधनों का उपयोग करने का, एवं क्रोधादि दोषों को दूर रखने का उपदेश इसने धृतराष्ट्र को दिया। क्रोधादि दोषों का त्याग करने से, एवं मौनादि गुणों का संग्रह करने से, मनुष्य न केवल प्रमादों से दूर रहता है, किन्तु उसे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति भी होती है, ऐसा अपना अभिमत इसने स्पष्टरूप से कथन किया है (म. उ. ४२-४५)।

महाभारत में प्राप्त यह 'सनत्सुजातीय' उपदेश भगवद्गीता के समान ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। आद्य शंकराचार्य आदि आचार्यों ने इस पर स्वतंत्र भाष्य की भी रचना की है।

पृथ्वी पर अवतार--कृष्णपुत्र प्रद्युम्न इसका ही अवतार माना जाता है (म. आ. ६१.९१)। प्रद्युम्न की मृत्यु होने पर, वह इस के ही स्वरूप में विलीन हुआ (म. स्व. ५.११)।

तत्त्वज्ञान--नारद को उपदेशप्रदान करनेवाला सनत्कुमार एक श्रेष्ठ उपनिषद्कालीन तत्त्वज्ञ माना जाता है। इसका समग्र तत्त्वज्ञान इस के द्वारा नारद को दिये गये उपदेश में प्राप्त है, जो छांदोग्योपनिषद् में ग्रथित किया गया है। अपने उस उपदेश में इसने 'आध्यात्मिक सुखवाद' का प्रतिपादन किया है। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार, आध्यात्मिक सुख प्राप्ति के लिए मनुष्य कर्म करता है, जिससे आगे चल कर श्रद्धा निर्माण होती है। इसी श्रद्धा से ज्ञान की प्राप्ति होती है, जो आगे चल कर आत्मज्ञान कराती है। अपने इस तत्त्वज्ञान में, आत्मानुभूति की नैतिक सोपानपंक्ति सनत्कुमार के द्वारा सुख, कर्म, श्रद्धा, ज्ञान, एवं साक्षात्कार, इस प्रकार बतायी गयी है (छां. उ. ७.१७-२२)।

'भूमन्' तत्त्वज्ञान--सनत्कुमार के द्वारा की गयी 'भूमन्' शब्द की मीमांसा इसके तत्त्वज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण भाग मानी जाती है। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार सृष्टि के हरएक वस्तुमात्र में एक ही परमात्मा का साक्षात्कार होने की अवस्था को 'भूमन्' कहा गया है। इस साक्षात्कार से मनुष्य को अत्युच्च आनंद की प्राप्ति होती है, जिसकी तुलना में स्त्री, भूमि, ऐश्वर्य आदि ऐहिक वस्तुओं से प्राप्त होनेवाला आनंद यःकश्चित् प्रतीत होता है (छां. उ. ७.२३-२४)।

सनत्कुमार के अनुसार, साधक को जब आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है (**सोऽहं आत्मा**), उस समय उसे 'भूमन्' तत्व का संपूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है (छां. उ. ७.२५)। इस प्रकार, आत्मा ही इस सृष्टी के उत्पत्ति का कारण है, एवं इसी आत्मा से मानवीय आशा एवं स्मृति निर्माण होती है। इसी आत्मा से सृष्टि के हरएक वस्तु का विकास होता है, एवं विनाश के पश्चात् सृष्टि की हरएक वस्तु इसी आत्मा में ही विलीन होती है, ऐसा सनत्कुमार का अभिमत था।

ग्रंथ--इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ एवं आख्यान प्राप्त हैं:-- १. सनत्कुमार उपपुराण (कूर्म. पूर्व. १.१७); २. सनत्सुजातीय आख्यान (म. उ. ४२-४५;

शांकरभाष्य के सहित); ३. सनत्कुमार संहिता (शिव. स्कंद. सूतसंहिता. १.२२.२४), ४. सनत्कुमार वास्तुशास्त्र; ५. सनत्कुमार तंत्र; ६. सनत्कुमार कल्प (C. C.)।

२. आर्य नामक वसु का पुत्र (ब्रह्मांड ३.३.२४)।

३. स्कंद का नामांतर।

सनत्सुजात—सनत्कुमार नामक आचार्य का नामांतर (सनत्कुमार १. देखिये)।

सनद्वाज--(सो. निमि.) एक राजा, जो शुचि राजा का पुत्र, एवं ऊर्ध्वकेतु राजा का पिता था। इसे सत्यध्वज नामांतर भी प्राप्त था।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

सनंदन--सनक नामक आचार्य का नामांतर (सनक १. देखिये)।

सनश्रुत--एक आचार्य। इसे सोम की विशेष परंपरा अग्नि के द्वारा प्राप्त हुई थी, जो इसने आगे चल कर अपने अरिंदम नामक शिष्य को प्रदान की थी (ऐ. ब्रा. ७. ३४)।

कई अभ्यासक इसे एक राजा मानते हैं, एवं 'अरिंदम' इसका पैतृक नाम बताते हैं (वैदिक इंडेक्स २.४६६)।

सनातन—ब्रह्मन् के बालब्रह्मचारिन् मानसपुत्रों में से एक, जो 'कुमार' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे (सनत्कुमार देखिये)। तैत्तिरीय संहिता में इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ यज्ञ के इष्टकों के उपाधान के समय, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर दिशाओं में सानग, सनातन, अहभून एवं प्रत्न नामक ब्रह्ममानसपुत्रों का निवास बताया गया है (तै. सं. ४.३.३.१)। युधिष्ठिर की मयसभा में भी यह अपने अन्य बन्धुओं के साथ उपस्थित था।

बृहदारण्यक उपनिषद में इसे सनग नामक आचार्य का शिष्य, एवं सनारु नामक आचार्य का गुरु कहा गया हैं (बृ. उ. २.६.३ काण्व.)।

२. तामस मनु के पुत्रों में से एक।

सनाच्छव--एक आचार्य (क. सं. २०.१)। कपिष्ठल संहिता में इसे 'शहनाच्छिव' कहा गया है (कपि. सं. ३१.३)।

सनारु--एक आचार्य, जो सनातन नामक आचार्य का शिष्य, एवं व्यष्टि नामक आचार्य का गुरु था (श. ब्रा. १४.७.३.२८; बृ. उ. २.६.३; ४.६.३ काण्व.)।

२. एक ऋषि, जिसके पुत्र का नाम उपजंब था। शिवपूजा का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा स्कंद में दी गयी है (स्कंद. ४.२.९४)।

सनेयक--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार भद्राश्व राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५)।

संत—एक राजा, जो वीतहव्यवंशीय सत्य राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम श्रवस् था (म. अनु. ३०. ६२)। कुंभकोणम् संस्करण में इसे 'शिव' कहा गया है (म. अनु. ८.६२. कुं.)।

संतति--(सो. क्षत्र.) क्षत्रवंशीय सन्नति राजा का नामांतर (सन्नति २. देखिये)।

२. दक्ष की एक कन्या, जो क्रतु की पत्नी थी। वालखिल्य इसीके ही संतान माने जाते हैं।

संततेयु--(सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार रौद्राश्व राजा का पुत्र था (भा. ९.२०. ४)।

संतर्जन--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५३)।

संतर्दन--एक राजकुमार, जो केकयराज धृष्टकेतु का पुत्र था। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था (भा. ९.२४.३८)।

संतानिका--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.९)।

संतोष--एक तुषित देव, जो यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र था (भा. ४.१.७)।

२. धर्म एवं तुष्टि का एक पुत्र, जिसे हर्ष नामान्तर भी प्राप्त था (वायु. १०.३४)।

संधग--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था।

संधि--(सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रसुश्रुत राजा का पुत्र, एवं अमर्षण राजा का पिता था। (भा. ९.१२.७)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'सुगवि' एवं 'सुसंधि' कहा गया है।

संध्य--ब्रह्मा के द्वारा उत्पन्न ग्यारह रुद्रों में से एक (पद्म. सृ. ४०)।

संध्या--ब्रह्मा की एक मानसकन्या। इसके प्रति ब्रह्मा के मन में कामवासना उत्पन्न हुई, जिस कारण इसने देहत्याग किया। अपने अगले जन्म में यह वसिष्ठपत्नी अरुंधती बनी (शिव. रुद्र. स. ५; कालि. २२-२३)।

२. पुलस्त्य ऋषि की पत्नी (म. उ. ११५.११)।

३. एक राक्षसी, जो विद्युत्केशिन् राक्षस की पत्नी सालकटंकटा की माता थी।

सन्नति—ब्रह्मदत्त (प्रथम) राजा की तपस्विनी पत्नी, जिसने अपने पति के साथ मानससरोवर में तपस्या की थी (पद्म. सृ. १०)।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार अलर्क राजा का पुत्र था। भागवत में इसे संतति कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम सुनीथ दिया गया है (भा. ९.१७.८)।

सन्नतिमत्—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार सुमति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कृति था (भा. ९.२१.२८)।

सन्नतेयु--(सो. पूरु.) एक राजा, जो पूरु राजा का पौत्र, एवं रौद्राश्व राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम मिश्रकेशी अप्सरा था (म. आ. ८९.१०)। इसने इंद्रको परास्त किया था। इसके निम्नलिखित भाई थेः- १. रुचेयु; २. पक्षेयु; ३. कृकणेयु; ४. स्थंडिलेयु; ५. वनेयु; ६. जलेयु; ७. तेजेयु; ८. सत्येयु; ९. धर्मेयु (म. आ. ८९.१०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'संनतेयु'।

सन्नादन--रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. २७.१८)।

सन्निवेश—त्वष्टृ प्रजापति एवं रचना के पुत्रों में से एक (भा. ६.६.४४)।

सन्निहित--एक अग्नि, जो मनु का तृतीय पुत्र था (म. व. २११.१९)।

सपत्य--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

सपरायण--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

सपौल--एक राजा, जो उन्तीसवें युगचक्र में उत्पन्न होनेवाले देवापि राजा का पुत्र माना गया है (सुवर्चस् ९. देखिये)।

सप्तकर्ण प्लाक्षि—एक तत्वज्ञ आचार्य, जो प्लक्ष नामक आचार्य का पुत्र था (तै. आ. १.७.३)।

सप्तकेतु—ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

सप्तकृत्—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१. ३६)।

सप्तगु आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ४७)। इसके द्वारा विरचित सूक्त के अंतिम ऋचा में इसने स्वयं को अंगिरस्कुलोत्पन्न (आंगिरस) बताया है।

सप्तजित्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१९)।

सप्तति--(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार दशरथ राजा का पुत्र था।

सप्तपाल--युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'सत्यपाल'।

सप्तराव--वरुण के पुत्रों में से एक।

सप्तवार—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ.)।

सप्तर्षि--सात ऋषियों का एक समुदाय, जिनका निर्देश ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी, महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट मन्वन्तरों की तालिका में हर एक मन्वन्तर के लिए विभिन्न सप्तर्षि बताये गये हैं। इस प्रकार चौदह मन्वन्तरों के लिए ९८ सप्तर्षियों की नामावलि पुराणों में दी गयी है (मनु आदिपुरुष देखिये)। विभिन्न मन्वन्तरों के सप्तर्षियों के संबंध में विभिन्न पुराणों में भी एकवाक्यता नहीं है। इस प्रकार पौराणिक साहित्य में अनेकानेक सप्तर्षियों के नाम प्राप्त होते हैं।

सप्तर्षि-कल्पना का विकास—पौराणिक साहित्य में मन्वंतर कल्पना के विकास के साथ साथ सप्तर्षि कल्पना का विकास हुआ, जो विभिन्न मन्वन्तरों के मनु, देव, इंद्र, अवतार आदि के साथ मन्वन्तरों के प्रमुख अधियंता-गण माने गये हैं। इन सप्तर्षियों की संख्या प्रारंभ में केवल सात ही थी, बल्कि आगे चल कर उनमें अनेकानेक नये नाम समाविष्ट किये गये। इससे प्रतीत होता है कि, उत्तर-कालीन सप्तर्षि आद्य सप्तर्षियों के वंशज थे। विभिन्न मन्वन्तरों में प्रजोत्पादन का कार्य इन ऋषियों पर निर्भर रहता था (ब्रह्मांड. ३६; ह. वं. १.७; मार्क. ५०; विष्णु. ३.१; ब्रह्म. ५; मनु आदिपुरुष देखिये)।

पौराणिक साहित्य में इन्हें द्वापरयुग के ऋषि कहा गया है, एवं इनका निवासस्थान शनैश्वर ग्रह से एक लाख योजन दूरी पर बताया गया है (वायु. ५३.९७; विष्णु. २.७.९)। इनकी कालगणना मनुष्यप्राणियों से विभिन्न थी, एवं इनके एक वर्ष में मानवीय ३०३० वर्ष समाविष्ट होते थे।

ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में--इस ग्रंथ में, ऋग्वेद के निम्नलिखित सूक्तद्रष्टा ऋषियों को सप्तर्षि कहा गया है :--
१. भारद्वाज बार्हस्पत्य; २. कश्यप मारीच; ३. गोतम राहूगण; ४. अत्रि भौम; ५. विश्वामित्र गाथिन; ६. जमदग्नि भार्गव; ७. वसिष्ठ मैत्रावरुणि (ऋ. सर्वानुक्रमणी. ९. १०७.१-२६; १०.१३७.१-७)।

ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में दो स्थानों पर सप्तर्षियों की नामावलि प्राप्त है, एवं उनमें संपूर्णतया एकवाक्यता है।

महाभारत में--इस ग्रंथ में सप्तर्षियों की दो नामवलियाँ प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है :-

(१) **नामावलि क्रमांक**--१. कश्यप; २. अत्रि; ३. भरद्वाज; ४. विश्वामित्र; ५. गौतम; ६. जमदग्नि; ७. वसिष्ठ (म. श. ४७.२८७*; अनु. १४.४)।

(२) **नामावलि क्रमांक २**--१. मरीचि; २. अत्रि; ३. अंगिरस्; ४. पुलस्त्य; ५. पुलह; ६. क्रतु; ७. वसिष्ठ (म. शां. ३२२.२७)।

दिशाओं के स्वामी--महाभारत में अन्यत्र सप्तर्षियों को दिशाओं के स्वामी कहा गया है, एवं पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर दिशाओं के सप्तर्षियों की नामावलि वहाँ निम्न प्रकार दी गयी है :--

(१) **पूर्वदिशा के सप्तर्षि** :--१. यवक्रीत; २. अर्वावसु; ३. परावसु; ४. कक्षीवत्; ५. नल; ६. कण्व; ७. बर्हिषद्।

(२) **दक्षिण दिशा के सप्तर्षि**--१. उन्मुच; २. विमुच्, ३. वीर्यवत्; ४. प्रमुच्; ५. भगवत्; ६. अगस्त्य; ७. दृढवत्।

(३) **पश्चिम दिशा के सप्तर्षि**--१. रुषद्गु; २. कवष; ३. धौम्य; ४. परिव्याध; ५. एकत-द्वित-त्रित; ६. दुर्वासस्; ७. सारस्वत।

(४) **उत्तर दिशा के सप्तर्षि**--१. आत्रेय; २. वसिष्ठ; ३. कश्यप; ४. गौतम; ५. भरद्वाज; ६. विश्वामित्र; ७. जमदग्नि (म. शां. २०१.२६)।

सप्तवध्रि आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो अश्विनों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था (ऋ. ५.७८; ८.७३)। इसके भाइयों ने इसे एक संदूक में बंद कर रक्खा था, जहाँ से अश्विनों ने इसकी मुक्तता की थी। अथर्ववेद में भी इसका निर्देश प्राप्त है (अ. वे. ४.२९.४; बृहद्दे. ५.८२-८५)।

सप्तसिंधु--एक लोकसमूह, जो प्रामुख्यतः आधुनिक पंजाब के पाँच नदियों के प्रदेश में निवास करता था (ऋ. ८.२४.२७)।

सप्तसूर्य--एक ग्रहसमुदाय, जिसमें निम्नलिखित सात ग्रह शामिल थे :--१. आरोग; २. भ्राज; ३. पटर; ४. पतंग, ५. स्वर्णर; ६. ज्योतिष्मन्त; ७. विभास (अ. वे. १३.३.१०; का. सं. ३७.९; तै. आ. १.७; सवितृ देखिये)।

सप्ताश्व--रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक (मत्स्य. ९.२०)।

सप्ति वाजंभर--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ७९-८०)।

सप्रथ भारद्वाज--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०. १८.२)।

सबल--भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

२. दक्षसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

३. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक

सबालेय--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सभाक्ष--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो भङ्गकार राजा का पुत्र था।

सभानर--(सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य, एवं वायु के अनुसार अनु राजा का पुत्र, एवं कालानल राजा का पिता था (भा. ९.२३.१)।

सभापति--कौरवपक्षीय एक योद्धा, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया था (म. क. ६५.२८)।

२. भूतकर्मन् नामक कौरवपक्षीय योद्धा का नामांतर (भूतकर्मन् देखिये)।

सभ्य--एक अग्नि, जो पवमान अग्नि एवं संशति का पुत्र था।

सम--धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. क. ३५.७-१४)।

२. अमिताभ देवों में से एक।

३. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का पुत्र।

समंग--एक ऋषि, जो अपने आयुष्य के पूर्वकाल में कहोलपुत्र अष्टावक्र था (अष्टावक्र देखिये)। ज्ञानप्राप्ति से मानवी दुःख किस प्रकार कम हो सकता है, इस संबध में इसका एवं नारद का तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (म. शां. २७५)।

२. दुर्योधन के संगव नामक गोशालाधिपति का नामांतर (संगव देखिये)।

समचेतन-एक मरुत्, जो मरुतों के गण में समाविष्ट था।

समंज--पारावत देवों में से एक।

समतापन--भौमतापन नामक गौरपराशरकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

समबुद्धि--शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

समय--अजित देवों में से एक।

२. रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

३. जैह्मप नामक गौरपराशरकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

समर--(सो. कुरु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार काव्य राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५४)। विष्णु एवं वायु में इसे नीप राजा का पुत्र, एवं संपार राजा का पिता कहा गया है। इसकी राजधानी कांपिल्य नगरी में थी (वायु. ९९.१७६)।

समरथ--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार क्षेमधि राजा पुत्र, एवं सत्यरथ राजा का पिता था (भा. ९.१३.२४)। पाठभेद-'कामरथ'।

२. मत्स्यराज विराट के भाइयों में से एक (म. द्रो. १३३.४०) पाठभेद--(भांडारकर संहिता)--'कामरथ'।

समवृत्ति--एक मरुत्, जो मरुतों के छँठवों गणों में समाविष्ट था (ब्रह्मांड. ३.५.९७)।

समसौरभ--एक वेदविद्यापारंगत ब्राह्मण, जो जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य था (म. आ. ४८.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'समसौरभ'।

समाधि--एक वैश्य, जो सुमेधस् ऋषि के आश्रम में मनःशांति के लिए कुछ काल तक रहा था (सुरथ १३. देखिये)।

समान--तुषित देवों में से एक (वायु. ६६.१८)।

समिथ--एक मरुत्, जो मरुत्गणों के पाँचवें गण में समाविष्ट था।

समितार--वशवर्तिन् देवों में से एक (वायु. १००. १६)।

समितिंजय--एक यादव योद्धा, जो द्वारका में रहनेवाले सात महारथियों में से एक था (म. स. १३.५७)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था।

समीक--एक यादव महारथी, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१८; स. ७.१४)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था।

२. शक्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१४)।

समीची--यमसभा की एक अप्सरा, जो वर्गा नामक अप्सरा की सखी थी। ब्राह्मण के शाप के कारण, इसे ग्राहयोनि में जन्म प्राप्त हुआ था। अर्जुन ने 'नारीतीर्थ पर ग्राहयोनि से इसका उद्धार किया (म. आ. २०८. १९; स. १०.११)।

समुद्रसेन--पांडवपक्ष का एक राजा, जिसके पुत्र का नाम चंद्रसेन था (म. द्रो. २२. ५०)। भीम ने अपने पूर्वदिग्विजय के समय, इसे एवं इसके पुत्र चन्द्रसेन को जीता था (म. स. २७.२२)।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था, जहाँ इसका पुत्र चंद्रसेन अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १३१.१२८)।

२. कालेयवंश का एक क्षत्रिय राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। यह कालेय नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ५२)। इसने पांडवपक्षीय चित्रसेन राजा का वध किया था (म. क. ४.२७.*, पंक्ति १-२)।

समृद्ध--धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१६)।

समेडी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१३)।

संपाति--एक दीर्घजीवी पक्षी, जो अरुण एवं गृध्रि के पुत्रों में से एक था (वा. रा. कि. ५६; ब्रह्मांड. ३.७. ४४६)। अन्य पौराणिक साहित्य में इसकी माता का नाम श्येनी दिया गया है (वायु. ७०.३१७; म. आ. ६०.६७)। इसके भाई का नाम जटायु था।

वाल्मीकि रामायण में, इसका एवं इसके भाई जटायु का एक गीध पक्षी के नाते निर्देश पुनः पुनः प्राप्त है। फिर भी वाल्मीकि रामायण में ही प्राप्त एक निर्देश से प्रतीत होता है, यह अपने को एक पक्षी नहीं, बल्कि मनुष्यप्राणी ही मानता था (वा. रा. कि. ५६.४)। अतः संभव यही है कि, वाल्मीकि रामायण में निर्दिष्ट वानरों के समान, संपाति एवं जटायु ये भी गीधयोनिज पक्षी न हो कर, गीधों की पूजा करनेवाले आदिवासी लोगों का प्रतिनिधित्व करते थे (वानर देखिये)।

इंद्र से युद्ध--यह एवं इसका भाई जटायु विंध्यपर्वत के तलहटी में रहनेवाले निशाकर (चंद्र अथवा चंद्रमस्) ऋषि की सेवा करते थे। एक बार वृत्रासुर का छलकपट से वध कर लौट आनेवाले इंद्र से इसकी तथा जटायु की भेंट हुई। इन्द्र ने इसको काफ़ी दुरुत्तर दिये जिस कारण इन दोनों में युद्ध प्रारंभ हुआ। इन्द्र ने अपने वज्र से इसे घायल किया, एवं वह जटायु का पीछा करने लगा। अन्त में जटायु थक कर नीचे गिरने

लगा। अपने भाई को नीचे गिरते हुए देख कर, इसने उसकी रक्षा के लिए अपने पंख फैला कर उस पर छाया की।

इस कार्य में सूर्यताप के कारण इसके पंख दग्ध हो गये, एवं यह एवं जटायु घायल हो कर पृथ्वी पर गिर पड़े। इन में से जटायु जनस्थान में, एवं यह विंध्य पर्वत के दक्षिण में निशाकर ऋषि के आश्रम के समीप गिर पड़े। अपने पंख दग्ध होने के कारण, यह अत्यंत निराश हुआ, एवं आत्मघात के विचार सोचने लगा। किंतु निशाकर मुनि ने इसे इन विचारों से परावृत्त किया, एवं भविष्य काल में रामसेवा का पुण्य संपादन कर, जीवन्मुक्ति प्राप्त कराने की सलाह इसे दी।

सीताहरण—यह एवं इसका पुत्र सुपार्श्व कितने विशालकाय एवं बलशाली थे, इसका दिग्दर्शन करनेवाली एक कथा 'वाल्मीकि रामायण' में प्राप्त है। सीता का हरण कर रावण जब लंका लौट रहा था, उस समय उसे पकड़ कर उसका भक्ष्य बनाने का प्रस्ताव इसके पुत्र सुपार्श्व ने इसके सामने रखा। इसके द्वारा संमति दिये जाने पर, सुपार्श्व ने रावण पर हमला कर उसे पकड़ लिया। किन्तु रावण के द्वारा अत्यधिक अनुनय-विनय किये जाने पर उसे छोड़ दिया।

जटायुवध—एक बार यह अपनी गुफा में बैठा था, उस समय सीता की खोज के लिए दक्षिण दिशा की ओर जाने वाले अंगदादि वानर इसकी गुफा में आये। उन्हीं के द्वारा रावण के द्वारा किये गये अपने भाई जटायु के वध की वार्ता इसे ज्ञात हुई। इस पर इसने सीता का हरण रावण के द्वारा ही किये जाने की वार्ता उन्हें कह सुनायी, एवं पश्चात् अंगद के कंधे पर बैठ कर यह दक्षिण समुद्र के किनारे गया। वहाँ इसने अपने भाई जटायु को तर्पण प्रदान किया। पश्चात् निशाकर ऋषि के वर के कारण इसे अपने पंख पुनः प्राप्त हुए (वा. रा. कि. ५६-६३; म. व. २६६.४८-५६; अ. रा. कि. ८)।

परिवार—इसके सुपार्श्व, बभ्रु, एवं शीघ्रग नामक तीन पुत्र थे (पद्म. सृ. ६; मत्स्य. ६.३५)। इसके एक पुत्र एवं एक कन्या होने का निर्देश वायु में प्राप्त है, किन्तु वहाँ उनके नाम अप्राप्य हैं (वायु. ६९.३२७; ७०.८-३६)। इसके अनेक पुत्र होने का निर्देश ब्रह्मांड में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.७.४४६)।

२. किष्किंधा नगरी का एक वानर (वा. रा. कि. ३३.१०)।

३. बिभीषण का एक अमात्य (वा. रा. सुं. ३७)।

४. रावणपक्ष का एक असुर। लंकादहन के समय हनुमत् ने इसका घर जलाया था (वा. रा. सुं. ६)।

५. एक कौरवपक्षीय योद्धा, जो द्रोण के द्वारा निर्मित गरुडव्यूह के हृदयस्थान में खड़ा था (म. द्रो १९.१३; पाठ-'संपाति')।

संपार--(सो. कुरु.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार समर राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५४)।

संप्रिया—विदूरथ राजा की पत्नी, जो मगधराज की कन्या थी (म. आ. ९०.४२)।

संबंधि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

संभव--(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सर्व राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.३१.)। वायु में इसे नमस् कहा गया है।

संभूत--दक्षसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार त्रसदस्यु राजा का पुत्र, एवं अनरण्य राजा का पिता था (वायु ८८.७४-७५)। मत्स्य में इसे संभूति कहा गया है।

संभूति--चाक्षुष मन्वंतर के अजित् नामक अवतार की माता, जिसके पति का नाम वैराज था।

२. दक्ष की कन्या, जो मरीचि ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम पूर्णमास था (वायु. १०.२७)।

३. जयद्रथ राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम विजय था (भा. ९.२३.१२)।

४. रैवत मन्वंतर के मानस नामक अवतार की माता (विष्णु ३.१.४०)।

५ (सू. इ.) एक राजा, जो वसुदा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १२.३६)। पद्म में इसे दुःसह एवं नर्मदा का पुत्र कहा गया है। इसके पुत्र का नाम त्रिधन्वन् था (पद्म. सृ. ८)।

संमर्दन--वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.५४)।

संमित--एक मरुत्, जो मरुतों के छठवें गण में समाविष्ट था (ब्रह्मांड. ३.५.९७)।

संमिति--उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

संमोद--एक असुर, जो हिरण्याक्ष के युद्ध में वायु के द्वारा मारा गया (पद्म. सृ. ७५)।

सम्राज्--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो चित्ररथ एवं ऊर्णा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम उत्कला

था, जिससे इसे मरीचि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ५.१५.१४)।

२. चक्रवर्ति राजा की एक सामान्य उपाधि, जो समस्त भारतवर्ष को जीतनेवाले राजा को प्राप्त होती थी (वायु. ४५.८६)। पौराणिक साहित्य में हरिश्चंद्र एवं कार्तवीर्य राजाओं के लिए यह उपाधि प्रयुक्त की गयी है (वायु. ८८.११८; ब्रह्मांड. ३.१६.२३; चक्रवर्तिन् देखिये)

वैदिक साहित्य में--ऋग्वेद काल में राजा (राजन्) की अपेक्षा शक्ति में श्रेष्ठ शासक को 'सम्राज्' कहा जाता था (ऋ. ३.५५.६०; वा. सं. ५.३२)। शतपथ ब्राह्मण में वाजपेय यज्ञ करनेवाले राजा को 'सम्राज्' कहा गया है (श. ब्रा. ५.१.१.१३)। बृहदारण्यकोपनिषद् में राजा के उपाधि के नाते 'सम्राज्' का निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. ४.१.१)।

सयद्व्य--रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

सरघा--बिंदुमत् राजा की पत्नी, जो मधु राजा की माता थी (भा. ५.१५.१५)।

सरधा--(स्वा. प्रिय.) प्रियव्रतवंशीय बिंदुमत् राजा का नामांतर (बिंदुमत् देखिये)।

सरण्यू--सूर्य की पत्नी (ऋ. १०.१७.२)।

सरभभेरुंड--एक पापी पुरुष, जिसकी कथा गीता-पठन का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में प्राप्त है (पद्म. सृ. ३८)।

सरमा--विभीषण की पत्नी, जो ऋषभ पर्वत पर निवास करनेवाले शैलूष नामक गंधर्व की कन्या थी (वा. रा. उ. १२.२४-२७)।

जन्म--मानससरोवर के तट पर इसका जन्म हुआ। इसके जन्म के समय सरोवर में बाढ आने के कारण, उसका पानी लगातार बढ़ रहा था। उस समय इसकी माता ने घबरा कर बढते हुए पानी से प्रार्थना की, 'सर मा' (आगे मत बढना)।

इसकी माता की उपर्युक्त प्रार्थना के कारण, सरोवर का पानी बढ़ना बंद हुआ। इस कारण, अपनी नवजात कन्या का नाम उसने 'सरमा' ही रख दिया।

सीता को सान्त्वना--रावण के द्वारा सीता का हरण किये जाने पर, उसके देखभाल का कार्य अशोकवन में इस पर ही सौंपा गया था। यह शुरू से ही सीता से सहानुभूति रखती थी। इस कारण यह सीता को रावण के सारे षड्यंत्र समझाकर उसे सांत्वना देती थी। इसी सांत्वना से सीता का भय कम होता था, एवं इसका धीरज बँधा जाता था (विभीषण देखिये)।

पद्म के अनुसार, विभीषण के राज्यकाल में राम एवं सीता पुनः एकबार लंका गये थे, जिस समय उन्होंने लंका में स्थित वामनमंदिर का उद्घाटन किया था। अपनी लंका भेंट में सीता ने बड़े ही सौहार्द से इसकी पूछताछ की थी (पद्म. सृ. ३८)।

२. कश्यप ऋषि की पत्नी, जो दक्ष प्रजापति एवं असिक्नी की कन्या थी। संसार के समस्त हिंस्त्र पशु इसीके ही संतान माने जाते हैं (भा. ६.६.२६)।

सरमा देवशुनी--देवलोक की एक कुतिया, जो इंद्र की दूती मानी जाती थी। यम के श्याम एवं शबल नामक दो कुत्ते इसीके ही पुत्र थे, जिस कारण वे 'सारमेय' (सरमा के पुत्र) नाम से सुविख्यात थे। संसार के समस्त 'सारमेय' (कुत्ते) भी इसीके ही संतान माने जाते हैं।

वैदिक साहित्य में--ऋग्वेद में इंद्र के दूत के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.१०८)। यद्यपि ऋग्वेद में कहीं भी इसे स्पष्ट रूप से कुतिया नहीं कहा गया है, फिर भी उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में, एवं यास्क के 'निरुक्त' में इसे 'देवों की कुतिया' (देवशुनी) ही माना गया है।

इंद्रदौत्य--पणि नामक कृपण लोगों का धन ढूँढ़ निकालने के लिए इंद्र ने अपने दूत एवं गुप्तचर सरमा को पणियों के निवासस्थान में भेजा था (ऋ. १०.१०८. १-२)। पणियों ने वैदिक ऋत्विजों की गायों को पकड़ कर, उन्हें रसा नामक नदी के तट पर स्थित कंदरों में छिपा रखा था। सरमा ने उन गायों का पता लगाया, एवं इंद्र के दूत के नाते उनकी माँग की। किन्तु उन्हें देने से इन्कार कर, पणियों ने सरमा को कैद कर दिया। अन्त में इन्द्र ने सरमा की एवं पणियों के द्वारा बन्दी की गयी गायों की मुक्तता की।

इंद्र के दूत के नाते इसका पणियों से किया संवाद ऋग्वेद में 'सरमा-पणि संवाद' नाम से प्राप्त है (ऋ. १०८. २; ४; ६; ८; १०; ११)। बृहद्देवता में भी इस संवाद का निर्देश प्राप्त है (बृहद्दे. ८.२४.३६)। उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में भी सरमा-पणि कथा अधिक विस्तृत स्वरूप में दी गयी है।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे कश्यप एवं क्रोधा की कन्या कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७.३१२)। यह इंद्र की दूती थी, एवं सारे दानव इससे डरते थे (भा. ५.२४.३०)।

एक बार इसका पुत्र जनमेजय के सर्पसत्र में गया, जहाँ जनमेजय के बांधवों ने उसे खूब पीटा, एवं यज्ञभूमि से भगा दिया। अपने पीटे गये पुत्र के दुःख से अत्यधिक दुःखी हो कर, इसने जनमेजय को शाप दिया, 'तुम एवं तुम्हारे सर्पसत्र पर अनेकानेक आपत्तियाँ आ गिरेंगी (म. आ. ३.१-८)। आगे चल कर इसकी यह शापवाणी सही सिद्ध हुई, एवं जनमेजय का सर्पसत्र आस्तीक ऋषि के द्वारा बंद किया गया।

सरमाण—एक सैंहिकेय असुर, जो हिरण्यकशिपु का भतीजा था (मत्स्य. ६.२७)।

सरयू--वीर नामक अग्नि की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सिद्धि था (म. व. २०९.११)।

सरस--सारस्वत नगरी के वीरवर्मन् राजा के पुत्रों में से एक (वीरवर्मन् देखिये)।

सरस्वत्--एक राजकुमार, जो पुरूरवस् एवं सरस्वती के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम बृहद्रथ था (ब्रह्म. १०१.९)।

सरस्वती—ब्रह्मा की कन्या शतरूपा का नामान्तर। यह स्वायंभूव मनु की पत्नी थी (म. उ. ११५.१४; शतरूपा देखिये)। पद्म में इसे ब्रह्मा की पत्नी कहा गया है, एवं इसके 'ज्ञानशक्ति', 'सावित्री' 'गायत्री' एवं 'वाच्' नामान्तर दिये गये है (पद्म. पा. १०७)।

महाभारत में भी इसे 'शतरूपा' का नामान्तर बताया गया है, एवं इसे दण्ड, नीति आदि शास्त्रों की कर्त्री कहा कया है (म. शां. १२२.२५)।

२. सार्वभौम नामक विष्णु के अवतार की माता (भा. ८.१३.१७)।

३. पूरुवंशीय अंतीनार राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम त्रस्नु था (म. आ ९०.२६)।

४. पुरुरवस् राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सारस्वत था (ब्रह्म. १०१.९)।

५. दधीचि ऋषि की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सारस्वत था (वायु. ६५.९१; सारस्वत देखिये)।

६. आदित्य की पत्नी, जो दनु एवं दिति की माता थी (मत्स्य. १७१.७०)।

७. रन्ति राजा की पत्नी (वायु. ९९.१२५)।

सरिद्भुवि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सरिद्युम वृकक--एक मरुत्, जो मरुतों के पाँचवे गण में समविष्ट था।

सरूपा—भूत ऋषि की पत्नी, जो रुद्रगणों की माता मानी जाती है (भा. ६.६.१७)।

सरूप्य--तुर्वसुवंशीय शरूथ राजा का नामान्तर।

सरोगय---एक असुरविशेष, जिन्होंने भीमसेन पाण्डव को परास्त किया था (स्कंद. १.२.६६)।

सरोजवदना---एक स्त्री, जिसकी कथा भगद्गीता के दसवें अध्याय का महात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है।

सर्प--ग्यारह रुद्रों में से एक, जो ब्रह्मा का पौत्र, एवं स्थाणु का पुत्र था (म. आ.)।

२. एक नागजातिविशेष, जिनके राजा का नाम तक्षक था (मत्स्य. ८.७; नाग देखिये)। जमीन पर घसीट कर चलने के कारण (सरीसृप) इन्हें सर्प नाम प्राप्त हुआ (मत्स्य. ३८.१०)।

प्राचीन पौराणिक साहित्य में तीन सुविख्यात सर्पसत्रों के निर्देश प्राप्त हैं :— **१. जनमेजय सर्पसत्र**, जो जनमेजय ने अपने पिता परिक्षित् का वध करनेवाले तक्षक नाग का बदला लेने के लिए आयोजित किया था (जनमेजय पारिक्षित देखिये); **२. मरुत्त का सर्पसत्र**, जो उसने अपनी मातामही के कहने पर आयोजित किया था। पश्चात् मरुत्त की माता भामिनी ने मध्यस्थता कर मरुत्त का यह सर्पसत्र स्थगित करवा दिया था। मरुत्त का यह सर्पसत्र संवर्त ऋषि के द्वारा आयोजित किये गये यज्ञ के पश्चात् आयोजित किया गया था (मार्क. १२६-१२७; मरुत्त आविक्षित एवं भामिनी देखिये); **३. तीसरा सर्पसत्र**, जो सर्पों के समृद्धि के लिए किया गया था (जनमेजय देखिये)।

इनसे उत्पन्न राक्षससमूह भी 'सर्प' नाम से ही सुविख्यात था (ब्रह्मांड. २.३२.१)।

३. कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक।

४. एक राक्षस, जो ब्रह्मधान के पुत्रों में से एक था (वायु. ६९.१३३)।

५. अर्बुद काद्रवेय नामक ऋषि का नामान्तर।

सर्पराज्ञी—एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री, जिसे ऋग्वेद के एक सूक्त (ऋ. १०.१८९) के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (तै. सं. १.५.४.१; ७.३.१.३; तै. ब्रा. १.४.६.६; २.२.६.१; ऐ. ब्रा. ५.२३.१.२)। इसके नाम के लिए 'सार्पराज्ञी' पाठभेद प्राप्त है।

सर्पान्त--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.१२)।

सर्पास्य—एक राक्षस, जो खर राक्षस का अनुयायी था (वा. रा. अर. २३.३२)।

सर्पिमालिन्—युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.८)।

सर्पिर्वात्सि—एक आचार्य, जिसने कई स्तोत्रों का पठन कर सौबल नामक राजा को विपुल पशुसंपत्ति प्राप्त करायी थी (ऐ. ब्रा. ६.२४)।

सर्याति—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरूरवस् राजा का पुत्र था।

सर्व—(सो. अज.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार धनुष राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.३०)।

सर्वकर्मन्—(सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सौदास कल्माषपाद राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.४६)। अन्य पुराणों में इसे ऋतुपर्ण राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इसे नल राजा का मित्र बताया गया है।

परशुराम के द्वारा किये गये क्षत्रियसंहार के समय पराशर ऋषि के द्वारा इसका रक्षण हुआ था। अपने इस वनवासकाल में अपना क्षत्रियधर्म छोड़ कर इसने शूद्र के समान आचरण किया, जिस कारण इसे 'सर्वकर्मन्' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ४९.६९)। इसे 'सर्वकामन्' नामान्तर भी प्राप्त था।

परशुराम का क्षत्रियसंहार समाप्त होने पर, पृथ्वी की पुनर्व्यवस्था करनेवाले कश्यप ऋषि को इसके जीवित होने की वार्ता स्वयं पृथ्वी ने बतायी थी (म. शां. ४९.६९.७८)।

सर्वकाम—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय सर्वकर्मन् राजा का नामान्तर।

सर्वकामदुधा—एक धेनु, जो कामधेनु की कन्या थी (म. उ. १००.१०)।

सर्वग—एक राजकुमार, जो भीमसेन एवं बलंधरा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०.८४)।

२. धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वजनि—एक ब्राह्मण, जिसकी कथा विष्णुमहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. १९)।

सर्वजित—कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक।

सर्वज्ञ—शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

सर्वतेजस्—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो व्युष्ट एवं पुष्करिणी के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम आकुति था, जिससे इसे चाक्षुष मनु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१३.१४)।

सर्वत्रग—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वदमन—दुष्यन्तपुत्र भरत राजा का नामान्तर (म. आ. ६८.५)।

सर्वधर्मन्—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वमेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

सर्ववेग—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वसौह्य—एकादश रुद्रों में से एक।

सर्वसारंग—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१६)।

सर्वसेन—(सो. पूरु.) काशी का एक राजा, जो ब्रह्मदत्त राजा का पुत्र था। इसने अपने भवन में स्थित पूजनी नामक चिड़िया के बच्चों का वध किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर पूजनी ने इसकी आँखें फोड़ डाली (ह. वं. १.२०.८९; पूजनी देखिये)।

इसकी कन्या का नाम सुनंदा था, जिसका विवाह सम्राट् भरत के साथ हुआ था। सुनंदा से उत्पन्न इसके दौहित्र का नाम भूमन्यु था (म. आ. ९०.३४)।

सर्वहरि ऐन्द्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९६)।

सलोमधि—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चंद्रविज्ञ राजा का पुत्र था (भा. १२.१.२७)। इसे 'पुलोमार्चि' एवं 'पुलोमत्' नामांतर भी प्राप्त थे।

सलौगाक्षि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सवन—(स्वा. प्रिय.) एक ऋषि, जो स्वायंभुव मनु का पौत्र, एवं प्रियव्रत राजा के तीन विरक्त पुत्रों में से एक था। प्रियव्रत राजा के अन्य दो विरक्त पुत्रों के नाम महावीर एवं कवि थे (प्रियव्रत देखिये)।

ब्रह्मांड में इसे स्वायंभुव मनु का पुत्र, एवं पुष्करद्वीप का राजा कहा गया है, एवं इसके पुत्रों के नाम महावीर एवं धातकी दिये गये है (ब्रह्मांड. २.१३.१०४)।

२. वारुणि भृगु ऋषि के सात पुत्रों में से एक। इसे एवं इसके भाइयों को 'वारुण' पैतृक नाम प्राप्त था (म. अनु. ८५.१२९)।

३. दक्षसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. वसिष्ठ एवं ऊर्जा के सात पुत्रों में से एक (वायु. २८.३६)।

५. सूर्य का नामांतर (ब्रह्मांड. २.२४.७६)।

सवर्णा—सागर एवं वेला की कन्या, जो प्राचीनबर्हिस् प्रजापति की कन्या थी। इसके कुल दस पुत्र थे, जो 'प्रचेतस्' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे।

हरिवंश के अनुसार, इसे शतद्रुति नामान्तर भी प्राप्त था (ह. वं. १.२)। कई अभ्यासक, इसे छाया का ही प्रतिरूप मानते हैं (संज्ञा देखिये)।

सवितृ--एक सुविख्यात देवता, जो अदिति का पुत्र माना जाता है। इसी कारण इसे 'आदित्य' अथवा 'आदितेय' नामान्तर भी प्राप्त थे (ऋ. १.५०.१३; ८.१०१.११; १०.८८.११)। ऋग्वेद में आदित्य, सूर्य, विवस्वत्, पूषन्, आर्यमन्, वरुण, मित्र, भग आदि देवताओं को यद्यपि विभिन्न देवता माना गया है, फिर भी वे सारे एक ही सूर्य अथवा सवितृ देवता के विभिन्न रूप प्रतीत होते हैं (ऋ. ५.८१.४; १०.१३३.१; विवस्वत् देखिये)। सायण के अनुसार, उदित होनेवाले सूर्य को ऋग्वेद में 'सवितृ' कहा गया है, एवं उदय से अस्तकाल तक आकाश में भ्रमण करनेवाले सूर्य को वहाँ 'सूर्य' कहा गया है (ऋ. ८.५११. सायणभाष्य)।

उत्पत्ति--सवितृ की उत्पत्ति किस प्रकार हुई इस संबंध में अनेक निर्देश प्राप्त हैं। ऋग्वेद में निम्नलिखित देवताओं के द्वारा सवितृ की उत्पत्ति होने का निर्देश प्राप्त हैं:--१. इंद्र (ऋ. २.१२.७); २. मित्रावरुण (ऋ. ४. १३.२); ३. सोम (ऋ. ६.४४.२३); ४. इंद्र-सोम (ऋ. ६.७२.२); ५. इंद्र एवं विष्णु ((ऋ. ७.९९.४); ६. इंद्र-वरुण (ऋ. ७.८२.३); ७. अग्नि एवं धातृ (ऋ. १०.१९०.३); ८. अंगिरस् (ऋ. १०.६२.३)।

गुणवर्णन--सूर्य के गुणवैशिष्ट्य के संबंध में अनेकानेक काव्यमय वर्णन ऋग्वेद में प्राप्त हैं। मनुष्यजाति की सारी शारीरिक व्याधियाँ दूर कर (अनमीवा), यह उनका आयुष्य बढ़ाता है (ऋ. ८.४८.७; १०.३७.७)। इस सृष्टि के सारे प्राणि इस पर निर्भर रहते हैं (ऋ. १.१६४.१०)। यह सारे विश्व को उत्पन्न करता है, जिस कारण इसे 'विश्वकर्मन्' कहा जाता है (ऋ. १०.१७०.४)। यह देवों का पुरोहित है (ऋ. ८.१०१.१२)। यह मित्र, वरुण आदि अन्य देवताओं का मित्र है। इसी कारण इन देवताओं की की गयी प्रार्थना इसके द्वारा ही उन्हें पहुँचती है (ऋ. ६०.१)।

ऋग्वेद में सूर्यबिंब का उल्लेख कर अन्य भी बहुत सारा वर्णन प्राप्त है। किन्तु इसे मानव मान कर जितना भी वर्णन ऋग्वेद में दिया है, इतना ही ऊपर दिया गया है।

ऋग्वेद में प्राप्त सवितृ के वर्णन में सारी मानवीय सृष्टि इसी पर निर्भर रहती है, यह मध्यवर्ति कल्पना प्रमुख है (ऋ. १.११५.१)। इसी कारण संध्यावंदन जैसे धार्मिक नित्यकर्म में इसे प्रतिदिन अर्घ्य दे कर, इस संसार को त्रस्त करनेवाले असुरों से संरक्षण करने के लिए इसकी प्रार्थना की जाती है (तै. आ. २; ऐ. ब्रा. ४.४)।

स्वरूपवर्णन--यह स्वर्णनेत्र, स्वर्णहस्त एवं स्वर्ण जिह्वावाला बताया गया है (ऋ. १.३५; ६.७१)। इसकी भुजाएँ भी स्वर्णमय है, एवं इसके केश पीले है (ऋ. ६.७१. १०.१३९)। यह पिशंग वेषधारी है, एवं इसके पास स्वर्णस्तंभवाला स्वर्णरथ है (ऋ. ४.५३.१.३५)। इसका यह रथ दो प्रकाशमान अश्वों के द्वारा खींचा जाता है।

यह महान् वैभव (अमति) से युक्त है, एवं इस वैभव को यह वायु, आकाश, पृथ्वी आदि को प्रकाशमय कर तीनों लोगों में प्रसृत कर देता है (ऋ. ७.३८.१)। अपने सुवर्ण ध्वजाओं को ऊँचा उठा कर यह सभी प्राणियों को जाग्रत कर देता है, एवं उन्हें आशीर्वाद देता है (ऋ. २.३८)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे कश्यप, प्रजापति एवं अदिति का कनिष्ठ पुत्र कहा गया है (विष्णुधर्म. १.१०६)। जन्म से ही इसके अवयवरहित होने के कारण, इसे 'मार्तंड' नामान्तर प्राप्त था। अन्य देवताओं से पहले निर्माण होने के कारण इसे 'आदित्य' भी कहते थे (भवि. ब्राह्म. ७५)। इसी पुराण में अन्यत्र इसे ब्रह्मा के वंशान्तर्गत मरीचि ऋषि का पुत्र कहा गया है (भवि. ब्राह्म. १५५)। इसके ज्येष्ठ भाई का नाम अरुण था।

अनुचर--इसके अनुचरों की विस्तृत नामावलि पुराणों में प्राप्त है, जिनमें निम्नलिखित अनुचर प्रमुख बताये गये हैं :--१. दण्डधारी--राजा एवं श्रोप; २; लेखनिक--पिंगल; ३. द्वारपाल--कल्माष एवं सृष्टि के विभिन्न पक्षिगण (भवि. ब्राह्म. ७९)।

पत्नियाँ--इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थीः--१. त्वष्टृकन्या संज्ञा; २. रैवतकन्या राज्ञी ३. प्रभा (मत्स्य. ११)। इनके अतिरिक्त इसे द्यौ, राज्ञी, पृथ्वी, एवं निक्षुभा नामक अन्य पत्नियाँ भी थीं (स्कंद. ७.१.१८)। किन्तु बहुत सारे पुराणों में इसकी संज्ञा नामक एक ही पत्नी का निर्देश प्राप्त है (वायु. २२.३९; वि. ३.२; ब्रह्म. ६; ह. वं. १.९; म. आ. ६०.३४)।

परिवार--अपनी पत्नी संज्ञा से इसे मनु, यम एवं यमी नामक तीन संतान उत्पन्न हुए। आगे चल कर इसका तेज उसे असह्य हुआ, जिस कारण उसने अपने शरीर से

छाया (सवर्णा) नामक अन्य एक स्त्री उत्पन्न की, एवं उसे इसकी सेवा में भेज कर वह तपस्या करने चली गयी। इसे छाया से श्रुतश्रवस् (सावर्णि मनु), श्रुतकर्मन् (शनि), एवं तपती नामक तीन संतान उत्पन्न हुए (संज्ञा देखिये)।

आगे चल कर छाया का त्याग कर यह पुनः एक बार अपनी संज्ञा नामक पत्नी के पास गया, जिससे इसे अश्विनीकुमार (नासत्य एवं दस्र), एवं रेवन्त नामक दों पुत्र उत्पन्न हुए (विष्णु. ३.२; भवि. ब्राह्म. ७९; मार्क. ७५)। अन्य पुराणों में इसके पुत्रों की नामावलि निम्न-प्रकार दी गयी है:--१. संज्ञापुत्र--वैवस्वत मनु (श्राद्धदेव), यम एवं यमुना; २. छायापुत्र--सावर्णि मनु, शनि, तपती एवं विष्टि २. अश्विनीपुत्र--अश्विनी-कुमार, रेवन्त; ४. प्रभापुत्र--प्रभात; ५. राज्ञीपुत्र--रेवंत; ५. पृश्निपुत्र--सावित्री, व्याहृति, त्रयी, अग्निहोत्र, पशु, सोम, चातुर्मास्य, पंचमहायज्ञ (भा. ६.१८.१)। इसकी संतानों में से यम एवं यमुना, तथा अश्विनीकुमार जुड़वी संतान थीं (मत्स्य. ११; पद्म. सृ. ८; विष्णु. ३.५; ब्रह्म. ६; भवि. ब्राह्म. ७९, म. आ. ६७; भा. ८.१३)।

कई अन्य पुराणों में इसके इलापति एवं पिंगलापति नामक अन्य दो पुत्र दिये गये हैं, एवं उन्हें 'संज्ञापुत्र' कहा गया है (भवि. प्रति. ४.१८; पद्म. सृ. ८)।

रूपकात्मक वर्णन--भविष्य पुराण के अनुसार इसकी पत्नियों एवं परिवार का अन्य पुराणों में प्राप्त वर्णन रूपकात्मक है। इस रूपक में संज्ञा एवं छाया नामक इसकी दो पत्नियाँ क्रमशः अंतरिक्ष (द्यौः) एवं पृथ्वी हैं। इन दोनों पत्नियों के पुत्र क्रमशः 'जल' एवं 'सस्य' हैं। ग्रीष्म ऋतु में यह जल का शोषण करता है, एवं वही जल वर्षाऋतु में पृथ्वी पर गिरा कर उससे सस्य (अनाज) की निर्मिती करता है। इसी कारण इसे समस्त सृष्टि का पिता माना गया है (भवि. ब्राह्म. ७९)। इसी पुराण में अन्यत्र इसे चंद्र एवं नक्षत्रों का पिता, एवं स्वामी कहा गया है।

३. अट्ठाईस व्यासों में से एक।

सवेदस्--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सवैलेय--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद--'सचैलेय'।

सव्य आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १. ५१-५७)।

सव्यसिव्य--एक सैंहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.६.१८-२२)।

२. दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सस आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२१)।

सस्मित--उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. तामस मन्वन्तर का एक योगवर्धन।

सह--स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

२. प्राण नामक वसु के पुत्रों में से एक।

३. उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

४. आभूतरजस् देवों में से एक।

५. (सो. पूरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में मारा गया (म. क. ३५.१४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)- 'सम'।

६. कृष्ण एवं लक्ष्मणा के पुत्रों में से एक।

७. एक अग्नि, जो समुद्र में छिप गया था। इसके शरीर के अवयवों से धातुओं की उत्पत्ति हुई। आगे चल कर देवताओं के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, यह अग्नि पुनः एक बार पृथ्वी पर प्रकट हुआ।

सहज--चेदि एवं मत्स्य देश का एक कुलांगार नरेश, जिसने अपने दुर्व्यवहार के कारण, अपने स्वजनों का एवं परिवार के लोगों का नाश किया (म. उ. ७२.११-१७)।

सहजन्य--एक यक्ष, जो आषाढ माह में सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३६)।

सहजिन्या--एक अप्सरा, जो हिरण्यकशिपु के प्रिय अप्सराओं में से एक थी (पद्म. सृ. ४५.)।

सहदेव--(सो. कुरु.) हस्तिनापुर के पाण्डु राजा के पाँच पुत्रों में से एक (सहदेव पाण्डव देखिये)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो दिवाक (दिवाकर) राजा का पुत्र, एवं बृहदश्व राजा का पिता था (भा. ९. १२.११)।

३. (सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार संजय राजा का पुत्र, एवं कृशाश्व राजा का पिता था (वायु. ८६.२०)। भागवत में इसे संजय राजा का पुत्र कहा गया है (सहदेव सार्ञ्जय देखिये)।

४. एक राजा, जो भागवत विष्णु एवं वायु के अनुसार सुदास राजा का पुत्र, एवं सोमक राजा का पिता था (भा. ९.२२.१)।

५. (सो. मगध.) मगध देश का एक राजा, जो जरासंध राजा का पुत्र था। इसकी अस्ति एवं प्राप्ति नामक दो बहनें थीं, जो मथुरा के कंस राजा को विवाह में दी गयी थीं।

जरासंध के वध के पश्चात् कृष्ण ने इसे मगध देश के राजगद्दी पर बिठाया, एवं इससे मित्रता स्थापित की।

भारतीय युद्ध में यह एक अक्षौहिणी सेना के साथ पाण्डव पक्ष में शामिल हुआ था। युधिष्ठिरसेना के सात प्रमुख सेनापतियों में यह एक प्रमुख था। इसके पराक्रम का गौरवपूर्ण वर्णन संजय के द्वारा किया गया है। अंत में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (भा. ९.२२.९;१०.७२. ४८; म. द्रो. १०१.४.३)।

परिवार—इसके सोमापि, मार्जारि एवं मेघसंधि नामक तीन पुत्र थे। इसकी मृत्यु के पश्चात् सोमापि (सोमाधि) मगध देश का राजा बन गया।

६. (सो. वसु.) वसुदेव एवं ताम्रा के पुत्रों में से एक।

७. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुप्रतीत राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२८४)। इसे 'मरुदेव' नामान्तर भी प्राप्त था।

८. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वायु के अनुसार हर्यश्व राजा का, विष्णु के अनुसार हर्षवर्धन राजा का, भागवत के अनुसार हव्यवन राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार हव्यश्व राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम हीन (अहीन, अर्दीन) था (वायु. ९३.९; भा. ९.१७.१७; (ब्रह्मांड. ३.६८.९)।

९. भास्करसंहितांतर्गत 'व्याधिसिंधुविमर्दनतंत्र' नामक ग्रंथ का कर्ता।

१०. कुण्डल नगरी के सुरथ राजा का पुत्र।

सहदेव पाण्डव—हस्तिनापुर के पाण्डु राजा का क्षेत्रज पुत्र, जो अश्विनों के द्वारा पाण्डुपत्नी माद्री के उत्पन्न हुए दो जुड़वे पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०.७२)। यह पाण्डुपुत्रों में से पाँचवाँ पुत्र था, एवं नकुल का छोटा भाई था। स्वरूप, पराक्रम एवं स्वभाव इन सारे गुण-वैशिष्टयों में यह अपने ज्येष्ठ भाई नकुल से साम्य रखता था, जिस कारण नकुल-सहदेव की जोड़ी प्राचीन भारतीय इतिहास में एक अभेद्य जोड़ी बन कर रह गयी (नकुल देखिये)। इसके जन्म के समय इसकी महत्ता वर्णन करनेवाली आकाशवाणी हुई थी (म. आ. ११५.१७; भा. ९.२२.२८; ३०.३१)।

बाल्यकाल—इसका जन्म एवं उपनयनादि संस्कार अन्य पाण्डवों के साथ शतशृंग पर्वत पर हुए थे। द्रोण ने इसे शस्त्रास्त्रविद्या, एवं शर्यातिपुत्र शुक्र ने इसे धनुर्वेद की शिक्षा प्रदान की थी। खड्गयुद्ध में यह विशेष निपुण था। द्रौपदीस्वयंवर के समय इसने दुःशासन के साथ युद्ध कर उसे परास्त किया था (म. आ. १८६६*; पंक्ति २.)।

दक्षिण दिग्विजय—युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, यह दक्षिण दिशा की ओर दिग्विजय के लिए गया था (भा. १०.७२.१३)। सर्वप्रथम इसने शूरसेन देश जीत कर मत्स्य राजा पर आक्रमण किया। उसे जीतने के बाद इसने करुप देश के दन्तवक्र राजा को पराजित किया। पश्चात् इसने निम्नलिखित देशों पर विजय प्राप्त किया:— पश्चिम मत्स्य, निषादभूमि, श्रेष्ठगिरि, गोशृंग एवं नरराष्ट्र। इसी दिग्विजय में इसने सुमित्र एवं श्रेणिवत् राजा पर विजय प्राप्त किया। पश्चात् यह कुन्तिभोज राजा के राज्य में कुछ काल तक ठहरा, जो पाण्डवों का मित्र था।

पश्चात् इसने चर्मण्वती नदी के तट पर कृष्ण के शत्रु जंबूकासुर के पुत्र से युद्ध किया। अन्त में घोर संग्राम कर इसने उसका वध किया। पश्चात् यह दक्षिण दिशा की ओर मुड़ा। वहाँ सेक एवं अपरसेक राजाओं को परास्त कर, एवं उनसे करभार प्राप्त कर यह नर्मदा नदी के तट पर आ गया। वहाँ अवंती देश के विंद एवं अनुविंद राजाओं को पराजित कर, यह भोजकट नगरी में आ पहुँचा। वहाँ के भीष्मक राजा के साथ इसने दो दिनों तक संग्राम किया, एवं उसे जीत लिया।

आगे चल कर कोसल एवं वेण्यातीर देश के राजाओं को पराजित कर, यह कान्तारक देश में प्रविष्ट हुआ। वहाँ कान्तारक, प्राक्कोसल, नाटकेय, हेरंबक, मारुध, रम्यग्राम, नाचीन, अनर्बुक देश के राजाओं को इसने पराजित किया। पश्चात् इसी प्रदेश में स्थित वनाधिपतियों को जीत कर, इसने वाताधिप राजा पर आक्रमण किया, एवं उसे जीत लिया।

आगे चल कर पुलिंद राजा को परास्त कर यह दक्षिण दिशा की ओर जाने लगा। रास्ते में पाण्ड्य राजा के साथ इसका एक दिन तक घोर संग्राम हुआ, एवं इसने उसे परास्त किया। पश्चात् यह किष्किंधा देश जा पहुँचा, जहाँ मैंद एवं द्विविद नामक वानर राजाओं के साथ सात दिनों तक युद्ध कर, इसने उन्हें परास्त किया।

पश्चात् इसने माहिष्मती नगरी के नील राजा के साथ सात दिनों तक युद्ध किया। इस युद्ध के समय, अग्नि ने नील राजा की सहायता कर, इसकी सेना को जलाना प्रारंभ किया। इस प्रकार सहदेव की पराजय होने का धोखा उत्पन्न हुआ। इस समय सहदेव ने शुचिर्भूत हो कर अग्नि

की स्तुति की, एवं उसे संतुष्ट किया। पश्चात् अग्नि की ही सूचना से नील राजा ने इससे संधि की।

आगे चल कर सहदेव ने त्रैपुर एवं पौरवेश्वर राजाओं को परास्त किया। पश्चात् सुराष्ट्र देश के राजा कौशिकाचार्य आकृति राजा को इसने परास्त किया, एवं यह कुछ काल तक उस देश में ही रहा।

पश्चात् इसने पश्चिम समुद्र के तटवर्ति निम्नलिखित देशों पर आक्रमण कियाः— शूर्पारक, तालाकट, दण्डक, समुद्रद्वीपवासी, म्लेच्छ, निषाद, पुरुषाद, कर्णप्रावरण, नरराक्षसयोनि, कालमुख, कोलगिरि, सुरभिपट्टण, ताम्रद्वीप, रामकपर्वत, तिमिंगल।

सहदेव के द्वारा किये गये पराक्रम के कारण, निम्नलिखित दक्षिण भारतीय देशों ने बिना युद्ध किये ही, केवल दूतप्रेषण से ही पाण्डवों का सार्वभौमत्व मान्य कियाः— एकपाद, पुरुष, वनवासी, केरल, संजयंती, पाषंड, करहाटक, पाण्ड्य, द्रविड, उड्र, अंध्र, तालवन, कलिंग, उष्ट्रकर्णिक, आटवीपुरी, यवनपुर।

इस प्रकार दक्षिण भारत के बहुत सारे देशों पर अपना आधिपत्य प्रस्थापित करने के बाद, इसने लंकाधिपति बिभीषण की ओर अपना घटोत्कच नामक दूत भेजा, एवं उससे भी करभार प्राप्त किया। पश्चात् दक्षिणदिग्विजय में प्राप्त किया गया सारा करभार ले कर, यह इंद्रप्रस्थ नगरी में लौट आया, एवं सारी संपत्ति इसने युधिष्ठिर को अर्पित की (म. स. २८)। राजसूय यज्ञ समाप्त होने पर, अन्य पाण्डवों के समान इसने भी कृष्ण की अग्रपूजा भी की (म. स. ३३.३०; भा. १०.७५.४)।

द्यूतक्रीडा एवं वनवास—युधिष्ठिर के द्वारा पाण्डवों का सारा राज्य द्यूतक्रीडा में हार दिये जाने पर, इस आपत्प्रसंगके जिम्मेदार शकुनि को मान कर इसने उसके वध करने की प्रतिज्ञा की (म. स. ६८.४१)।

पाण्डवों के अज्ञातवास में, तंतिपाल नाम धारण कर यह विराट नगरी में रहता था। यह उत्कृष्ट अश्वचिकित्सक था (म. वि. ३.७)। इस कारण विराट की अश्वशाला में अश्वसेवा का काम इसने स्वीकार किया। अज्ञातवास में इसका सांकेतिक नाम 'जयद्वल' था (म. वि. ५.३०)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में इसके रथ के अश्व तित्तिर पक्षी के रंग के थे, एवं इसके ध्वज पर हंस का चिह्न रहता था। इसके धनुष्य का नाम 'अश्विन,' एवं शंख का नाम 'मणिपुष्पक' था (म. द्रो. परि. १.५. ११-१२; भी. २३.१६)। रथयुद्ध में यह अत्यंत निष्णात था (म. उ. १६६.१८)। द्रोण के सेनापत्य—काल में इसने उस पर आक्रमण करना चाहा; किन्तु उस समय कर्ण ने इसे परास्त किया (म. द्रो. १४२.१३)। अंत में अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार इसने शकुनि का वध किया (म. श. २७.५८)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्—युधिष्ठिर के हस्तिनापुर का राज्याभिषेक किये जाने पर, उसने इस पर धृतराष्ट्र की देखभाल का कार्य सौंप दिया (म. शां. ४१.१४)।

पाण्डवों के महाप्रस्थान के समय, द्रौपदी के पश्चात् सर्वप्रथम इसका ही पतन हुआ। इसे अपनी बुद्धि का अत्यधिक गर्व था, जिस कारण इसका शीघ्र ही पतन हुआ (म. महा. २.८; भा. १.१५.४५)। मृत्यु के समय इसकी आयु १०५ वर्षों की थी (युधिष्ठिर देखिये)।

परिवार—इसकी चार कुल पत्नियाँ थी:—१. द्रौपदी (म. आ. ९०.८१); २. विजया, जो इसके मामा मत्स्यनरेश शल्य की कन्या थी (म. आ. ९०.८७); ३. भानुमती, जो भानु राजा की कन्या थी (ह. वं. २.९०.७६); ४. मगधराज जरासंध की कन्या (म. आश्र. ३२.१२)।

इसके कुल दो पुत्र थे:—१. श्रुतकर्मन्, जो द्रौपदी से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.८२); २. सुहोत्र, जो इसे विजया से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.८७)।

ग्रन्थ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त है।—१. व्याधिसंधविमर्दन; २. अग्निस्तोत्र; ३. शकुनपरीक्षा।

सहदेव वार्षागिर—एक राजा, जिसे ऋग्वेद के एक सूक्त के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. १.१००)। इसने ऋज्राश्व, भयमान, सुराधस् एवं अंबरीष नामक अपने भाइयों के साथ इंद्र की स्तुति की थी, जिस कारण यह शिम्यु एवं दस्यु नामक अपने शत्रु पर विजय प्राप्त कर सका (ऋ. १.१००.१७-१८)।

सहदेव सार्ञ्जय—एक राजा, जो सोम की एक विशिष्ट परंपरा में से सोमक साहदेव्य नामक आचार्य का शिष्य था (ऐ. ब्रा. ७.३-४)। एक धर्मप्रवण राजा के नाते वामदेव के द्वारा इसकी स्तुति की गयी थी। इसका सही नाम 'सुप्लन् सार्ञ्जय' था, किन्तु 'दाक्षायण' नामक यज्ञ करने पर इसने 'सहदेव सार्ञ्जय' नाम धारण किया (श. ब्रा. २.४.४.४)। ऋग्वेद एवं ऐतरेय ब्राह्मण में सोमक साहदेव्य नामक आचार्य के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ४.

१५.७; ऐ. ब्रा. ७.३४.९)। ब्राह्मण ग्रंथों में अन्यत्र भी इसका निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १२.८.२.३)।

कई अभ्यासकों के अनुसार सहदेव सार्जय एवं सहदेव वार्षागिर दोनों एक ही व्यक्ति थे।

सहदेवा--देवक राजा की एक कन्या, जो वसुदेव की पत्नियों में से एक थी। इसके कुल आठ पुत्र थे, जिनमें भयासख प्रमुख था (भा. ९.२४.२३)।

सहसात्यपुत्र--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

सहसाह--परशुराम का सारथि (म. वि.११.२४२*; ब्रह्मांड. ३.४६.१४)।

सहस्रचित्य--केकय देश का एक राजा, शतायूप राजा का पितामह था। इसने अपने प्राणों को त्याग कर एक ब्राह्मण की जान बचायी (म. अनु. १३७.२०; शां. २२६.३०)। पाठभेद-'सहस्रजित्'।

सहस्रजित्--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत, मत्स्य, वायु एवं पद्म के अनुसार वायु राजा का ज्येष्ठ पुत्र, एवं शतजित् राजा का पिता था। इसे 'सहस्राद' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक।

३. केकय राजा सहस्रचित्य का नामान्तर (म. शां. २२६.३१)।

सहस्रज्योति--विवस्वत् के पुत्रों में से एक। इसके कुल दस लाख पुत्र थे (म. आ. १.४४)।

सहस्रधार--वशवर्तिन् देवों में से एक।

सहस्रपाद्--एक ऋषि, जो शाप के कारण डुण्डुभ नामक सर्प हो गया था। इसी सर्पयोनि में रुरु नामक ऋषि इसका वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ था, किन्तु इसने उसे इस पापकर्म से प्रवृत्त किया था (रुरु देखिये)। पाण्डवों के वनवास काल में यह द्वैतवन में उनके साथ उपस्थित था (म. व. २७.२२)।

सहस्रमुख--पुष्करद्वीप के रावण नामक राक्षस की उपाधि (रावण सहस्रमुख देखिये)।

सहस्रवाच्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। पाठभेद-'सदसुवाक्'।

सहस्राजित्--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भजमान एवं उपबाह्यका के पुत्रों में से एक था (विष्णु. ४.१३.२)।

सहस्राद--पुरूरवस्वंशीय सहस्रजित् राजा का नामान्तर (सहस्रजित् १. देखिये)।

सहस्रानीक--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो शतानीक राजा का पुत्र, एवं अश्वमेधज (अश्वमेधदत्त) नामक राजा का पिता था (भा. ९.२२.३९; म. आ. ९०.९५)। इसके द्वारा अश्वमेध यज्ञ किये जाने पर इसे पुत्रप्राप्ति हुई, जिस कारण इसके पुत्र का नाम 'अश्वमेधदत्त' रखा गया।

भागवत एवं महाभारत के अतिरिक्त अन्य पुराणों में इसका निर्देश अप्राप्य है, जहाँ शतानीक राजा के पुत्र का नाम असीमकृष्ण दिया गया है।

सहस्राश्व--(सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार अहिनग राजा का पुत्र, एवं चंद्रावलोक राजा का पिता था (मत्स्य. १२.५४)।

सहस्वत्--(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय महस्वत् राजा का नामांतर।

सहानंदिन्--(शिशु. भविष्य.) मगध देश के महानन्दिन् राजा का नामांतर। ब्रह्मांड में इसे नंदिवर्धन राजा का पुत्र, एवं महापद्म राजा का पिता कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७४. १३४)।

सहाभोज--(सो. क्रोष्टु.) क्रोष्टुवंशीय महाभोज राजा का नामांतर। वायु में इसे सात्वत राजा का पुत्र कहा गया है।

साहितंडिपुत्र--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

सहिष्णु--एक शिवावतार, जो वैवस्वत मन्वंतर के छब्बीसवें युगचक्र में भद्रवटपुर नामक नगरी में अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:- १. उलूक; २. विद्युत; ३. शंबूक; ४. आश्वलायन (शिव. शत. ५)।

२. चाक्षुष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक, जो पुलह ऋषि एवं गती का पुत्र था।

३. स्वायंभुव मन्वंतर का एक ऋषि, जो पुलह ऋषि एवं गती का पुत्र था (मार्क. ५२.२३-२४)।

४. एक गंधर्व, जो अपने अगले जन्म में बक नामक कंसपक्षीय असुर बन गया था (बक. १. देखिये)।

सांयमनि--(सो. कुरु.) सोमदत्तपुत्र शल राजा का नामांतर (म. भी. ६१.११)।

२. दुर्योधन के पक्ष के शल्य (शल) नामक राजा का एक पुत्र। धृष्टद्युम्न ने इसका वध किया।

सांवरणि-- मनु सांवरणि राजा का पैतृक नाम, जो उसे संवरण का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था (ऋ. ९.१०१.१०-१२ मनु सावर्णि देखिये)।

साकमश्व देवरात--एक आचार्य, जो विश्वामित्र ऋषि का शिष्य था (सां. आ. १५.१)।

सागर--शलि नामक ऋषि का पैतृक नाम।

सागरक--सागरदेश का एक राजा, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेंट ले कर उपस्थित हुआ था।

सागरध्वज--पांड्य देश का एक राजा, जो अस्त्र-विद्या में परशुराम, भीष्म, द्रोण, एवं कृप आदि आचार्यों का शिष्य था।

इसके पिता एवं भाई का कृष्ण ने युद्ध में वध किया। इस कारण यह कृष्ण से बदला लेने के लिए, द्वारका नगरी पर आक्रमण करने के लिए प्रवृत्त हुआ। किन्तु उस अविचार से इसके मित्रों ने इसे परावृत्त किया।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था। इसके रथ के अश्व चन्द्रकिरणों के समान शुभ्रवर्णीय, एवं वैदूर्यरत्नों की जाली से सुशोभित थे। इसकी सेना में एक लाख चालीस हजार रथ थे, जिन्हें श्वेतवर्णीय अश्व जोते गये थे।

साग्नि--एक पितर।

सांकाश्य--यमसभा में उपस्थित एक राजर्षि (म.स. ८.१०)।

सांकृति--एक क्षत्रोपेत ब्राह्मणसमूह, जो सांकृति राजा का वंशज था। आगे चल कर, ये आंगिरसगोत्रीय ब्राह्मण बन गये (वायु. ९९.१६४)।

२. अत्रिवंश में उत्पन्न एक ऋषि, जिसने अपने शिष्यों को निर्गुण ब्रह्म का उपदेश प्रदान किया था (म. शां. २२६.२२)।

३. विश्वामित्र ऋषि की पत्नियों में से एक।

सांकृत्य--एक वैयाकरण (तै. प्रा. ८.२१)।

२. एक आचार्य, जो पाराशर्य नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. २.५.२०, ४.५.२६ माध्यं.)।

सांख्य--अत्रि नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (अत्रि देखिये)।

सांकृतीपुत्र--एक आचार्य, जो अलम्बीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य, एवं शौंगीपुत्र नामक आचार्य का गुरु था (श. ब्रा. १४.९.४.३१)।

सांख्यायन--एक आचार्य, जो भागवतशिष्यपरंपरा में से सनत्कुमार का शिष्य था। इसके शिष्यों में पराशर एवं बृहस्पति प्रमुख थे (भा. ३.८.७)।

२. शांखायन नामक सुविख्यात वैदिक आचार्य का नामान्तर।

३. एक ऋषि, जो गायत्री नामक सुविख्यात वैदिक सूक्तद्रष्टी का पूर्वज था।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सांग--(स्वा. उत्तान.) हविर्धानपुत्र गय राजा का नामांतर।

सांगर--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

सांजीवीपुत्र--एक आचार्य, जो प्राणीपुत्र आसुर-वासिन् एवं मांडुकायनि नामक आचार्यों का शिष्य, एवं प्राचीनयोगीपुत्र नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ६.५.४ काण्व; ६.४.३ माध्यं.)। शतपथ ब्राह्मण में अन्यत्र इसे माण्डव्य ऋषि का शिष्य कहा गया है (श. ब्रा. १०.६.५.९)। इससे प्रतीत होता है कि, यह दो आचार्यों की परंपराओं का प्रतिनिधित्व करता था:-- १. **शांडिल्य की अग्निपूजकपरंपरा**, जिसका प्रमुख आचार्य माण्डुकायनि था; २. **याज्ञवल्क्य वाजसनेय की तत्त्वज्ञान विषयक परंपरा**, जिसका प्रमुख आचार्य प्राणी-पुत्र आसुरवासिन् था।

सातकर्णि--(आंध्र. भविष्य.) आंध्रवंशीय शातकर्णि राजा का नामान्तर। वायु में इसे कृष्ण राजा का पुत्र कहा गया है।

२. एक आंध्रवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार पुत्रिकषेण राजा का पुत्र था।

साति औष्ट्राक्षि--एक आचार्य, जो सुश्रवस् वार्षगण नामक आचार्य का शिष्य, एवं मद्रगार शौंगायनि नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)। उष्ट्राक्ष नामक आचार्य का वंशज होने के कारण, इसे 'औष्ट्राक्षि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

सात्यकामि--केशिन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. सं. २.६.२.३)।

सात्यकि (युयुधान)--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो कृष्णार्जुनों का अत्यंत प्रिय मित्र था। यह शिनि नामक यादव राजा का पौत्र, एवं सत्यक राजा का पुत्र था (म. आ. २११.११; भा. ९.२४.१४)। महाभारत में अन्यत्र इसे शिनि राजा का पुत्र कहा गया है (म. द्रो. ९७.२७; ५३; ११९.१७)।

इसे निम्नलिखित नामान्तर भी प्राप्त थेः-१. सात्वत (म. द्रो. ७३.१३; ८८.१५); २. दाशार्ह (म. द्रो. ११७.४); ३. शैनेय; ४. माधव, जो नाम इसे मधु यादव का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (म. द्रो. ७३.११; ८८.२६)।

यह वृष्णिकुलभूषण, सत्यप्रतिज्ञ, शत्रुमर्दन वीर था एवं इसका स्वभाव अत्यंत क्रोधी एवं निर्भय था। यह कृष्ण को अपना ज्येष्ठ मित्र, तथा अर्जुन को अपना अस्त्रविद्या का गुरु मानता था, जिस कारण आजन्म यह अपने इन दोनों ज्येष्ठ मित्रों की सहायता करता रहा। इसकी गणना महाभारतकालीन श्रेष्ठ वीरों में की जाती थी। इसका प्रमाण निम्नलिखित विदुरवचन में पाया जाता है, जो उसने धृतराष्ट्र से कहा था :--

येषां पक्षधरों रामो येषां मंत्री जनार्दनः।
किं नु तैरजितं संख्ये येषां पक्षे च सात्यकिः॥

(म. आ. १९७.२०)।

(जिस पक्ष में बलराम एवं सात्यकि जैसे वीरप्रवर हैं, एवं जिनके मंत्री स्वयं श्रीकृष्ण है, उन पाण्डवों के लिए युद्ध में अजेय क्या हो सकता है?)

स्वरूपवर्णन-- इसका सविस्तृत स्वरूपवर्णन महाभारत में अर्जुन के द्वारा निम्नप्रकार किया गया हैः-- 'महान् स्कंध एवं विशाल वक्षःस्थलवाला, अजानुबाहु, महाबली, महावीर्यवान्, एवं महारथी सात्यकि मेरा शिष्य एवं मेरा सखा है' (म. द्रो. ८५.६०)।

विद्याव्यासंग--इसने श्रीकृष्ण से अस्त्रविद्या प्राप्त की थी (भा. ३.१.३१)। अर्जुन से भी इसने युद्धविद्या एवं धनुर्विद्या सीखी थी (भा. ३.१.; म. द्रो. १५६.१४)। वृष्णिवंशीय यादवों के सात अतिरथी वीरों में इसकी गणना की जाती थी। इसके रथ के अश्व शुभ्र एवं रुपहले थे (म. द्रो. २३.२; ७३.११; ११५.१)।

कृष्ण का सहायक--कृष्ण के द्वारा किये गये हर एक युद्ध में यह उसका प्रमुख सहायक रहा करता था। बाणासुर के युद्ध में यह कृष्ण के साथ उपस्थित था, एवं इसने बाणासुर के मंत्री कुभाण्ड से युद्ध किया था (भा. १.३.१६)। जरासंध के आक्रमण के समय, मथुरानगरी के पश्चिम द्वार के संरक्षण का भार इसके ऊपर था। उस समय इसने जरासंध की सेना को परास्त कर उसका पाँच योजनों तक पीछा किया था (भा. १०.५०.२०)। शाल्वयुद्ध के समय इसने द्वारका नगरी का रक्षण किया था (भा. १०.५२)। पौण्ड्रक वासुदेव के युद्ध में, इसने कृष्ण की काफ़ी सहायता की थी (भा. १०.७८)। कृष्ण के अश्वमेधीय अश्व के साथ यह उपस्थित था।

पाण्डवों का मित्र--कृष्ण के समान यह भी पाण्डवों का हितैषी एवं मित्र था। द्रौपदी के स्वयंवर के समय यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१७)। अर्जुन एवं सुभद्रा के विवाह के समय, यह दहेज ले कर इंद्रप्रस्थ गया था। इंद्रप्रस्थ में किये गये युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के समय यह उपस्थित था।

पांडवों के वनवासकाल में--पांडवों के वनगमन के पश्चात्, इसने कृष्ण एवं बलराम को सलाह दी थी 'यादवों के द्वारा धृतराष्ट्रपुत्रों का वध कर, अभिमन्यु को हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बैठा देने से सारी समस्या छूट जायेगी'। इस समय कृष्ण ने इसे पांडवों की प्रतिज्ञा याद दिलायी, जिसके अनुसार किसी अन्य के द्वारा जीता हुआ राज्य उन्हें अस्वीकरणीय था।

युद्ध का समर्थन--कृष्णदौत्य के पूर्व संपन्न हुई यादवसभा में, पांडवों की माँग की न्यायसंगतता एवं उचितता इसने स्पष्ट शब्दों में कथन की थी (म. उ. ३)। पांडवों के शांतिदूत के नाते कौरवों के यहाँ जानेवाले कृष्ण से इसने पुनः पुनः यही कही कहा था कि, केवल युद्ध के द्वारा ही पांडवों के न्याय्य माँगों की रक्षा की जा सकती है। इस समय शान्ति का पुरस्कार करनेवाले कायर लोगों की कटु आलोचना करते हुए इसने कहा :-

नाधर्मो विद्यते कश्चिच्छत्रून् हत्वाऽततायिनः।
अधर्म्यमयशस्यं च शात्रवाणां प्रयाचनम्॥

(म. उ. ४.२०)।

(आततायी शत्रु का वध करना अधर्म नहीं है, बल्कि ऐसे शत्रु से कुछ याचना करना अपमान एवं अधर्म जरूर है)।

पश्चात् यह अपने सवारे हुए रथ में बैठ कर, कृष्ण के साथ हस्तिनापुर गया था (म. उ. ७९-८१)।

कौरवों की राजसभा में--कौरवसभा में कर्ण, शकुनि, एवं दुर्योधन ने श्रीकृष्ण को पकड़ने की मंत्रणा की। उस समय इसने कृतवर्मन् से अपनी सेना व्यूहाकार में संनद्ध करने की आज्ञा दी। पश्चात् अत्यंत निर्भयतापूर्वक कौरवसभा में प्रवेश कर इसने दुर्योधन एवं उसके मित्रों की अत्यंत कटु आलोचना की। कृष्ण जैसे पाण्डवों के राजदूत को कैदी बनाने का दुर्योधन का षड्यंत्र इस प्रकार विफल हुआ।

भारतीय युद्ध में--इस युद्ध के पहले दस दिनों में इसने निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध कर अत्यधिक पराक्रम दिखाया था:--१. शकुनि (म. भी. ५४.८-९); २. भूरिश्रवस् एवं अलंबुस (म. भी. ५९-६०); ३. कृतवर्मन्, भीष्म, दुर्योधन, भगदत्त एवं अश्वत्थामन्।

द्रोण के सैनापत्यकाल में--भारतीय युद्ध के बारहवें दिन इसने द्रोण के साथ घनघोर युद्ध किया था, एवं उसके एक सौ एक धनुष्यों को खण्डित कर ध्वस्त कर दिया। इसके युद्धकौशल्य से प्रसन्न हो कर, द्रोण ने इसे स्वयंस्फूर्ति से परशुराम, कार्तवीर्य, अर्जुन एवं भीष्म के समान श्रेष्ठ धनुर्धर के नाते संबोधित किया--

> **एतदस्त्रबलं रामे कार्तवीर्ये धनंजये।**
> **भीष्मे च पुरुषव्याघ्रे यदिदं सात्वतां वरे॥**
> (म. द्रो. ७३.३७)।

पश्चात् युधिष्ठिर के आदेश से, यह द्रोण से युद्ध छोड़ कर अर्जुन की सहायता के लिए चला गया (म. द्रो. ८५.३९-६८)। जयद्रथवध के दिन युधिष्ठिर की रक्षा का भार इस पर सौंपा गया था। किन्तु अर्जुन को संकट में देख कर इसने भीम को युधिष्ठिर की रक्षा करने के लिए कहा, एवं यह अर्जुन की सहायता के लिए दौड़ा। उस दिन इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ:---१. कृतवर्मन् (म. द्रो. ८६.८८); २. दुःशासन; ३. भूरिश्रवस् (म. द्रो. ११७; १६९.२४) ४. दुर्योधन (म. द्रो. १६४.२८); ५. कर्ण (म. द्रो. ३१.६७)।

उपर्युक्त युद्धों में से बहुत सारे युद्धों में यह अजेय रहा। केवल भूरिश्रवस् ने इसे पराजित किया, एवं इसके बालों को पकड़ कर वह इसका वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। उस समय अर्जुन ने पीछे से आ कर उसके दोनों हाथ तोड़ दिये। बाद में भूरिश्रवस् आमरण अनशन करने लगा, तब इसने उसका वध किया। इस प्रकार अपने दस पुत्रों का वध करनेवाले भूरिश्रवस् से इसने बदला ले लिया।

कर्ण के सैनापत्यकाल में--इस काल में इसने निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध कर काफ़ी पराक्रम दिखाया:-- १. केकय राजकुमार विंद एवं अनुविंद (म. क. ९ २०); २. कर्ण (म. क. २१.२४); ३. वृषसेन (म. क. ३२. ४१); ४. शकुनि (म. क. ४१.३१-४५); ५. कर्णपुत्र प्रसेन (म. क. ६०.४)।

भारतीय युद्ध के अठारहवें दिन--युद्ध के अंतिम दिन इसने क्षेमधूर्ति एवं म्लेच्छराज शाल्व का वध किया (म. श. २०.८-२५)। संजय को जीवित पकड़ कर यह उसे मारने के लिए उद्यत हुआ, किंतु श्रीव्यास की आज्ञा से इसने उसे छोड़ दिया (म. श. २८.३८)।

पराक्रम--भारतीय युद्ध में कृष्ण एवं अर्जुन के बाद सब से अधिक पराक्रम सात्यकि ने ही दिखाया। इसी कारण संजय ने धृतराष्ट्र से कहा था, 'कृष्ण एवं अर्जुन के अतिरिक्त, सात्यकि के समान अन्य कोई भी धनुर्धर पाण्डवसेना में नहीं है' (म. द्रो. १२२.७३)।

जयद्रथवध के पश्चात् कृष्ण ने भी इसकी अत्यधिक प्रशंसा की थी, जहाँ उसने कहा था, 'सात्यकि के समान कोई भी योद्धा पाण्डव एवं कौरवसेना में नहीं है (**यस्य नास्ति समो योधः कौरवेषु कथंचन**) (म. द्रो. ११६.११. २५)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्--युद्ध के उपरान्त यह कृष्ण के साथ द्वारका गया, एवं रैवतक पर्वत पर होनेवाले महोत्सव में सम्मिलित हुआ (म. आश्व. ५८.४)। युधिष्ठिर के द्वारा किये गये अश्वमेधीय यज्ञ में भी यह उपस्थित था।

मृत्यु--भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष के जो थोडे वीर बचे थे, उन में यह एक था। इस युद्ध के पश्चात् यह कई साल तक जीवित रहा।

प्रभास क्षेत्र में हुए यादवी युद्ध के समय, अन्य यादवों के समान इसने भी 'मैरेयक' नामक मद्य का सेवन किया, एवं आपस में लड़ना झगड़ना इसने शुरू किया। उस समय इसका पुरातन शत्रु कृतवर्मन् इससे वाद-विवाद करने लगा। उस समय कृतवर्मन् ने कृष्ण के द्वारा किये गये स्यमंतक मणि के अपहरण की चर्चा प्रारंभ की। कृतवर्मन की ये बाते सुन कर सत्यभामा रोने लगी। उसे रोती देख कर यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं इसने कृतवर्मन् का शिरच्छेद किया (म. मौ. ४.२७)।

कृतवर्मन् के बध के उपरांत इसने अन्य यादवों का वध करना प्रारंभ किया। कृष्ण ने इसे बहुत रोका, किन्तु इसने उसकी एक न सुनी। इसे सभी यादवों को मारते देख कर उन्होंने इस पर सामूहिक हमला किया, एवं अन्य कोई शस्त्र प्राप्त न होने पर जूठे बर्तनों से ही इसे मारना शुरु किया। इसे इस प्रकार फँसा हुआ देख कर कृष्णपौत्र प्रद्युम्न इसे बचाने के लिए बीच में कूद पड़ा, एवं ये दोनों यादवों के द्वारा मारे गये (म. मौ. ४.३४)।

परिवार--महाभारत में इसके पुत्र का नाम यौयुधानि दिया गया है। इसकी मृत्यु के पश्चात् अर्जुन ने उसे

सरस्वती नदी के तट पर स्थित प्रदेश का राजा बनाया (म. मौ. ८.६९; सरस्वती देखिये)।

अन्य पुराणों में इसके पुत्र का नाम निम्नप्रकार बताया गया है:--जय (भा. ९.२४.१४); असंग (मत्स्य. ४६.२३); भूति (वायु. ९६.१००)।

सात्यमुग्र—सामवेद का एक शाखा प्रवर्तक आचार्य, जिसका निर्देश सामवेद के उपकर्मांग तर्पण में प्राप्त है। पाठभेद-'शाट्यमुग्र', 'साह्यमुग्र'।

सात्यमुग्री--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सात्ययज्ञ---एक आचार्य, जिसका निर्देश याज्ञवल्क्य एवं वार्ष्ण नामक आचार्यों के बीच हुए संवाद में प्राप्त है (श. ब्रा. ३.१.१.४)।

सात्ययज्ञि—सोमशुष्म नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. ११.६.२.१-३)।

२. एक आचार्यसमूह, जिसका निर्देश शैलन एवं कारीरादि नामक आचार्य परंपराओं के साथ प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. २.४.९)।

सात्यरथि—(सू. निमि) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सत्यरथ राजा का पुत्र था।

सात्यहव्य वासिष्ठ--एक आचार्य, जो अत्यराति जानन्तपि एवं देवभाग श्रौतर्षि नामक आचार्यों का समकालीन था (ऐ. ब्रा. ८.२३.९; तै. सं. ६.६.२.२)। उपर्युक्त आचार्यों में से देवभाग से इसका मंत्रपठन के संबंध में संवाद हुआ था। सत्यहव्य का वंशज होने से इसे 'सात्यहव्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

सात्राजित—शतानीक नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२१.५; श. ब्रा. १३.५.४.१९)।

सात्वत--विष्णु का एक पार्षद।

२. (सो. क्रोष्टु.) यादवकुलोत्पन्न एक राजा, जो भागवत के अनुसार आयु राजा का, वायु के अनुसार सत्व राजा का, मत्स्य के अनुसार जन्तु राजा का, एवं विष्णु के अनुसार अंश राजा का पुत्र था। यह स्वयं एक 'वंशकर' राजा था, जो सात्वत राजवंश का मूल पुरुष माना जाता है। सुविख्यात यादव योद्धा 'सात्यकि' इसके ही वंश में उत्पन्न हुआ था। पुराणों में इसके नाम के लिए 'सात्वत' (भा. ९.२४.६) एवं 'सत्वत' (विष्णु. ४.१३.१; ह. वं. १.३७.१) ये दोनों पाठ प्राप्त है।

इसके निम्नलिखित सात पुत्र थे:-- १. भजमान; २. भाजि; ३. दिव्य; ४. वृष्णि; ५. देवावृध; ६. अंधक; ७. महाभोज। इन पुत्रों में से भजमान इसके पश्चात् राजगद्दी पर बैठा।

सात्वत धर्म--इस धर्मपरंपरा का यह प्रमुख संवर्धक माना जाता है। महाभारत में सात्वत-धर्म एवं उसकी परंपरा सविस्तृत रूप में प्राप्त है, जहाँ ब्रह्मा से ले कर इक्ष्वाकु तक के इस पंथ के प्रमुख संवर्धकों की जानकारी दी गयी है। हरिगीता नामक ग्रंथ में सात्वत धर्मतत्त्वों की जानकारी दी गयी है (म. शां. ३३६.३१-४९)।

३. भगवान् कृष्ण का एक नामांतर (म. शां. ३४२.७७)। इसके ही नाम से कृष्ण का एक उपासना संप्रदाय सात्वत-धर्म नाम से सुविख्यात हुआ था (सात्वत २. देखिये)।

साद्यसुग्रीवि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साधक---एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष से हुए देवासुर संग्राम में वायु के द्वारा मारा गया (पद्म. सृ. ७५)।

साधन भौवन--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५७)।

साधित--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं ऋषिगण।

साधु—एक वैश्य, जिसकी कथा 'सत्यनारायण-व्रत' एवं उसके प्रसाद का माहात्म्य कथन करने के लिए भविष्य एवं स्कंद पुराण में दी गयी है (भवि. प्रति. २. २९; स्कंद. रे. ३)। वर्तमान स्कंदपुराण के रेवाखंड में इसकी कथा अप्राप्य है।

साधु द्विज—शिव का एक अवतार, जो हिमालय एवं मैनाक पर्वतों की तपस्या में बाधा डालने के लिए उत्पन्न हुआ था।

इस अवतार के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा शिवपुराण में प्राप्त है। एक बार हिमालय एवं मैनाक पर्वतों ने अत्यंत कठोर शिवोपासना प्रारंभ की। उस तपस्या को देख कर देव एवं ऋषियों के मन में डर उत्पन्न हुआ कि, अगर हिमालय को मोक्षप्राप्ति होगी, तो इस संसार की अत्यंत हानि होगी। इस कारण, उनकी तपस्या में बाधा डालने की प्रार्थना उन्होंने शिव से की।

इस प्रार्थना के अनुसार, साधु नामक ब्राह्मण का वेष धारण कर शिव हिमालय के पास गया, एवं वहाँ शिव की यथेष्ट निंदा कर, इसने हिमालय को शिवभक्ति से निवृत्त किया (शिव. शत. ३५)।

साध्य—एक देवतासमूह, जो धर्म एवं साध्या के पुत्र माने जाते हैं। छांदोग्योपनिषद् में जिन पाँच प्रमुख

देवता-समूहों का निर्देश प्राप्त है, वहाँ इनका निर्देश वसु, रुद्र, आदित्य, एवं मरुतों के साथ किया गया है (छां. उ. ३.६-१०)। वहाँ इनकी अधिष्ठात्री देवता ब्रह्मा बताया गया है। ऋग्वेद में भी इन देवताओं का अस्पष्ट निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.९०.१६)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के मुख से बतायी गयी है। विभिन्न मन्वंतरों में इनके विभिन्न अवतार दिये गये हैं। जो निम्नप्रकार हैंः- १. स्वायंभुव मन्वंतर-जित देव; २. तामस मन्वंतर-हरि देव; ३. रैवत मन्वंतर- वैकुंठ देव; ४. स्वारोचिष मन्वंतर- तुषित देव; ५. उत्तम मन्वंतर- सत्य देव; ६. चाक्षुष मन्वंतर-छांदज देव; ७. वैवस्वत मन्वंतर-साध्य देव। वैवस्वत मन्वंतर में उत्पन्न हुए आदित्य भी इन्हींके ही अवतार माने गये हैं (ब्रह्मांड. ३.३.८-१२)।

वसु नामक सुविख्यात देवगण इनके भाई हैं, एवं ये स्वयं भुवर्लोक में रह कर गौ देवता की उपासना करते हैं (मत्स्य. १५.१५)। इनका प्रमुख अधिष्ठात्री देवता नारायण है।

नामावलि--चाक्षुष एवं वैवस्वत मन्वंतरों में उत्पन्न हुए साध्य-देवों की नामावलि पौराणिक साहित्य में निम्नप्रकार दी गयी हैः- १. मनस् २. अनुमन्तृ, ३. प्राण; ४. नर; ५. नारायण; ६. वृत्ति (वीति); ७. तपस (अपान); ८. हय; ९. हंस; १०. विभु; ११. प्रभु; १२. धर्म (नय) (मत्स्य. २०३.११; सांब. १८)।

महाभारत में--इस ग्रंथ में इन्हें यज्ञ एवं शुभ कार्यों से संबंधित देवतागण माना गया है, एवं निम्नलिखित प्रसंगों पर इनके उपस्थिति का निर्देश वहाँ प्राप्त है :- १. नैमिषारण्य द्वादशवर्षीय सत्र; २. मरुत्त आविक्षित राजा का यज्ञ; ३. अर्जुन एवं स्कंद के जन्मोत्सव; ४. अमृत के लिए गरुड एवं देवताओं का युद्ध; ५. अर्जुन के द्वारा किया गया खांडववनदाह-युद्ध; ६. स्कंद-तारकासुरयुद्ध ७. कर्णार्जुन युद्ध।

२. चाक्षुष मनु के पुत्रों में से एक (भा. ६.६.१५)।

३. एक रुद्रगण, जिसमें ८४ करोड़ रुद्रोपासक समाविष्ट थे। रुद्र के ये सारे उपासक तीन नेत्रोंवाले (त्रिनेत्र) थे (मत्स्य. ५.३१)।

४. शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

साध्या--दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्मऋषि की दस पत्नियों में से एक थी। साध्यगणों के देव इसीके ही पुत्र माने जाते हैं (भा. ६.६.४-७)।

सानुप्रस्थ--रामसेना का एक वानर।

सांदीपनि (सांदीपन)--अवंती में रहनेवाला एक कश्यपकुलोत्पन्न ब्राह्मण, जो कृष्ण एवं बलराम का गुरु था। यह अवंती नगरी में रहता था, एवं इसके आश्रम का नाम 'अंकपाद' था (भा. ३.३.२; १०.४५.३१; पद्म. उ. २४६)।

कृष्ण एवं बलराम का उपनयन होने के पश्चात् वे दोनों इसके आश्रम में विद्यार्जन के लिए रहने लगे। इसने उन्हें वेद, उपनिषद, धनुर्वेद, राजनीति, चित्रकला, गणित, गांधर्ववेद, गजशिक्षा, अश्वशिक्षा आदि ६४ कलाएँ सिखायी।

यह धनुर्वेद का श्रेष्ठ आचार्य था। इसने श्रीकृष्ण एवं बलराम को दस अंगों से युक्त धनुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कराया। कृष्ण एवं बलराम का विद्यार्जन समाप्त होने पर इसने उन्हें गुरुदक्षिणा के रूप में समुद्र में डूबे हुए अपने मृत पुत्र को पुनः जीवित कर देने की माँग की। तदनुसार कृष्ण ने इसका मृतपुत्र पुनः जीवित कराया (म. स. परि. १.२१.८५७-८७९; विष्णु. ५.१)।

साप्य--नमी नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ६.२०.६)।

सामलोमकि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सामश्रवस्--याज्ञवल्क्य वाजसनेय का एक शिष्य (बृ. उ. ३.१.२)।

याज्ञवल्क्य ने इसे अपनी 'स्मृति' की शिक्षा प्रदान की थी। मॅक्स म्यूलर इसे स्वयं याज्ञवल्क्य की उपाधि मानते है, किन्तु इसके याज्ञवल्क्य का शिष्य ही होने की संभावना अधिक है।

सामश्रवस--कुशीतक नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १७.४.३)।

सामुकि--यामुनि नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सांब--एक सुविख्यात यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक था (म. आ. १७७. १६; स. ४.२९; भा. १०.६१.११)। विष्णु में इसे कृष्ण एवं रुक्मिणी का पुत्र कहा गया है, किन्तु यह असंभव प्रतीत होता है। यह अत्यंत स्वरूपसुंदर, एवं स्वैराचरणी था।

जन्म--उपमन्यु ऋषि के आदेशानुसार कृष्ण ने पुत्रप्राप्ति के लिए शिव की उपासना की थी, जिससे आगे चल कर इसका जन्म हुआ। इस कारण इसे 'सांब' नाम

प्राप्त हुआ। भागवत में इसे शिवपुत्र गुह का अवतार कहा गया है (भा. १.१०.२९)।

पराक्रम––यह अत्यंत पराक्रमी था, एवं कृष्ण के द्वारा किये गये बहुत सारे युद्धों में इसने भाग लिया था। यादव सेना के साथ इसने बाणासुर की नगरी पर आक्रमण किया था, एवं बाणासुर के पुत्र के साथ युद्ध किया था (भा. १०. ६१.२६)। शाल्व के आक्रमण के समय इसने द्वारका नगरी का रक्षण किया था (भा. १०.६८.१-१२)। इस समय शाल्व के सेनापति क्षेमधूर्ति के साथ इसका घमासान युद्ध हुआ था। कृष्ण के अश्वमेधीय अश्व के साथ भी यह उपस्थित था।

द्रौपदीस्वयंवर के लिए उपस्थित राजाओं में यह भी शामिल था (म. आ. १७७.१६)। रैवतक पर्वक पर अर्जुन के द्वारा किये गये सुभद्राहरण के समय यह उपस्थित था (म. आ. २११.९)।

लक्ष्मणा का हरण––दुर्योधनकन्या लक्ष्मणा के स्वयंवर के समय इसने उसका हरण किया। उस समय कौरवों ने इसे कैद किया। यह वार्ता सुनते ही बलराम समस्त यादवसेना के साथ इसकी सहायतार्थ दौड़ा। पश्चात् बलराम के युद्धसामर्थ्य से घबरा कर दुर्योधन ने इसकी लक्ष्मणा से विवाह को संमति दे दी (भा. १०.६८)।

प्रभावती का हरण––सुपुर नगरी के वज्रनाभ नामक राजा के प्रभावती नामके कन्या का इसने हरण किया। तद्‌हेतु यह अपने भाई प्रद्युम्न के साथ–नाटक मंडली का खेल ले कर सुपुर नगरी में गया। वहाँ इन्होंने 'रम्भाभिसार' 'कौबेर' आदि नाट्यकृतियों का प्रयोग किया, जिनमें प्रद्युम्न ने नायक का, एवं इसने विदूषक का काम किया था (ह. वं. २.९३)। पश्चात् इसने प्रभावती का हरण किया।

दुर्वासस् का शाप––यह शुरू से ही अत्यन्त शरारती था, एवं इसकी कोई न कोई हरकत हमेशा चलती ही रहती थी। एक बार इसके सारणादि मित्रों ने इसे स्त्री वेश में विभूषित किया, एवं इसे दुर्वासस् ऋषि के पास ले जा कर झूठी नम्रता से कहा 'यह बभ्रु यादव की पत्नी गर्भवती है। आप ही बतायें कि, इसके गर्भ से क्या उत्पन्न होगा?'। यदुपुत्रों की इन जलील हरकतों से क्रुद्ध हो कर दुर्वासस् ने कहा, 'श्रीकृष्ण का यह पुत्र सांब लोहे का एक भयंकर मूसल उत्पन्न करेगा, जो समस्त वृष्णि एवं अंधक वंश का संपूर्ण विनाश कर देगा।

मौसल युद्ध––दूसरे दिन, सुबह होते ही इसके पेट से लोहे का मूसल उत्पन्न हुआ। यादव लोगों ने इस मूसल का नाश करने का काफ़ी प्रयत्न किया, किन्तु उससे कुछ फ़ायदा न हो कर, इसी मूसल से इसका एवं समस्त यादवों का नाश हुआ। प्रभास क्षेत्र में मैरेयक नामक मद्य पीने के कारण इसकी स्मृति नष्ट हुई, एवं उसी क्षेत्र में हुए मौसल युद्ध में अपने भाई प्रद्युम्न से लड़ते लड़ते इसकी मृत्यु हुई (भा. ११.३०.१६)।

सूर्योपासना––अत्यंत स्वरूपसंपन्न होने के कारण यह अत्यंत स्वैराचारी था, यहाँ तक कि, कृष्ण की कई पत्नियाँ एवं इसकी सापत्न माताएँ इस पर अनुरक्त थीं। अपने पुत्र एवं पत्नियों के दुराचरण की यह बात कृष्ण को नारद के द्वारा ज्ञात हुई। इस कारण क्रुद्ध हो कर, उसने इसे कुष्ठरोगी होने का, एवं अपनी पत्नियों को चोर लुटेरों के द्वारा भगाये जाने का शाप प्रदान किया। तदनुसार, यह कुष्ठरोगी बन गया, एवं द्वारका नगरी डूब जाने के पश्चात् कृष्णस्त्रियों का आभीरों के द्वारा अपहरण किया गया।

तत्पश्चात् कुष्ठरोग से मुक्ति प्राप्त करने के लिए, नारद के सलाह के अनुसार इसने सूर्योपासना प्रारंभ की, एवं इस प्रकार यह कुष्ठरोग से मुक्त हुआ। इसके सूर्यतपस्या का स्थान चंद्रभागा नदी के तट पर स्थित सांबपुर (मूलस्थान) था, जिस नगरी की स्थापना इसने ही की थी। सूर्य की उपासना करने के लिए इसने मग नामक ब्राह्मण शाकद्वीप से बुलवाया (सांब. ३; भवि. ब्राह्म. ६६.७२-७३; ७५; १२७; स्कंद. ४.१.४८; ६.२१३; मग देखिये)। इसकी मृत्यु के पश्चात् मग ब्राह्मण मूलस्थान में ही निवास करने लगे। मूलस्थान का यह प्राचीन सूर्य मंदिर, एवं वहाँ स्थित मग ब्राह्मण भारत में आज भी ख्यातनाम हैं।

२. एक अंत्यज, जिसकी कथा गणेश–उपासना का माहात्म्य बताने के लिए गणेश पुराण में दी गयी है (गणेश. १.५९)।

३. चक्रपाणि राजा का प्रधान, जिसकी कथा गणेश उपासना का माहात्म्य बताने के लिए गणेश पुराण में दी गयी है (गणेश. २.७३.१३)।

४. एक सदाचारी ब्राह्मण, जिसने धृतराष्ट्र के वनगमन के समय प्रजा की ओर से उसे सांत्वना प्रदान की थी (म. आश्र. १५.११)।

सांमद मत्स्य–एक वैदिक सूक्तद्रष्टागण (ऋ. ८.६७)।

सायक जानश्रुतेय–एक आचार्य, जो जनश्रुत काण्डविय नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

सायकायन--श्यापर्ण नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.३.६.१०; ५.२.१)।

२. एक आचार्य, जो कौशिकायनि नामक आचार्य का शिष्य, एवं काशायण नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ४.६.३ काण्व.)।

सायकायनि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सायम्-एक राजा, जो पुष्पार्ण एवं प्रभा का पुत्र था।

२. एक आदित्य, जो धातृ आदित्य एवं कुहू का पुत्र था (भा. ६.१८.३)।

सारंग-एक गोप, जिसकी कन्या का नाम रंगवेणी था।

सारण--(सो. वसु.) एक सुविख्यात योद्धा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था। इसके निम्नलिखित पुत्र थेः-- १. मार्ष्टि; २. मार्ष्टिमत्; ३. शिशु; ४. सत्यधृति (विष्णु. ४.१५.१४)।

२. रावण का एक अमात्य एवं गुप्तचर (वा. रा. यु. ५; म. व. २६७.५२; शुक देखिये)।

३. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

सारमेय--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो श्वफल्क एवं गांदिनी के पुत्रों में से एक था (भा. ९. २४. १६)।

२. सरमा नामक कुतिया के वंशजों का सामूहिक नाम (ब्रह्मांड. ३.७.३१३; सरमा देखिये)।

सारवाह--अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सारस--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (ब्रह्मांड. ३.७.४५६)।

२. (सो. यदु.) यदु राजा का एक पुत्र, जिसने दक्षिण भारत में वेणा नदी के तट पर स्थित क्रौंचपूर नामक नगरी की स्थापना की। आगे चल कर यही क्रौंचपूर 'वनवासी' नाम से प्रसिद्ध हुआ (ह. वं. २.३८.२७)।

सारस्वत--एक ऋषि, जो दधीचि ऋषि का पुत्र था। दधीचि ऋषि की तपस्या को भंग करने के लिए इंद्र ने अलंबुषा नामक अप्सरा को भेज दिया। उसे देख कर दधीचि ऋषि का वीर्य सरस्वती नदी के किनारे स्खलित हुआ। आगे चल कर उसी वीर्य से सरस्वती नदी को एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे सरस्वती नदी का पुत्र होने के कारण 'सारस्वत' नाम प्राप्त हुआ।

दधीचि ऋषि के आत्मसमर्पण के पश्चात् लगातार बारह वर्षों तक भारतवर्ष में अकाल पड़ा। इस समय सरस्वती नदी के तट पर रहनेवाले बहुत सारे ऋषि अन्न के शोधार्थ इधर उधर घूमने लगे। केवल एक सारस्वत मात्र सरस्वती नदी के किनारे वेदाभ्यास करता हुआ रह गया। इस प्रकार देश के बाकी सारे ऋषियों ने वेदाभ्यास छोड़ कर मुसाफिर जीवन अपनाया था, उस समय इसने वेदाभ्यास की परंपरा जीवित रखी। अकाल के बारह वर्षों में यह नदी में प्राप्त मछलियों पर निर्वाह करता था।

अकाल समाप्त होने पर सारे ऋषियों के मन में वेदाध्ययन करने की इच्छा उत्पन्न हुई। उस समय केवल सारस्वत के ही वेदविद्या पारंगत होने के कारण, समस्त ऋषिसमुदाय शिष्य के नाते इसके आश्रम में उपस्थित हुआ। इस प्रकार साठ हज़ार ऋषियों को इसने वेदविद्या सिखायी (म. श. ५०)।

सारस्वत तीर्थ--आगे चल कर इसके आश्रम का स्थान 'सारस्वत तीर्थ' नाम से प्रसिद्ध हुआ। उस स्थान को तुंगकारण्य नामान्तर भी प्राप्त था (म. व.८३.४३-५०)।

सारस्वतपाठ--तैत्तिरीय संहिता की दो अध्ययन पद्धति प्राचीनकाल में प्रचलित थी, जो 'काण्डानुक्रमपाठ' एवं 'सारस्वतपाठ' नाम से सुविख्यात थी। उनमें से 'काण्डानुक्रमपद्धति' का आज लोप हो चुका है एवं सारस्वत ऋषि के द्वारा प्राप्त 'सारस्वतपाठ' ही आज सर्वत्र प्रचलित है।

सारस्वतपाठ की स्फूर्ति इसे किस प्रकार हुई इस संबंध में एक आख्यायिका 'संस्काररत्नमाला' में प्राप्त है। एक बार दुर्वास ऋषि के द्वारा दिये गये शाप के कारण सरस्वती नदी लुप्त हुई, एवं तत्पश्चात् मानवीय रूप धारण कर, आत्रेयवंशीय एक ब्राह्मण के घर अवतीर्ण हुई। पश्चात् उसी ब्राह्मण से सरस्वती नदी को सारस्वत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

पश्चात् सरस्वती नदी ने इसे संपूर्ण वेदविद्या सिखायी, एवं इसे कुरुक्षेत्र में तप करने के लिए कहा। इसी तपस्या में तैत्तिरीय संहिता का एक स्वतंत्र क्रमपाठ इसे प्राप्त हुआ, जो आगे चल कर इसने अपने सारे शिष्यों को सिखाया। पश्चात् इसके इस पाठ को शास्त्रमान्यता एवं लोकमान्यता भी प्राप्त हुई (संस्काररत्नमाला पृ. ३०२)।

२. जैगीषव्य नामक शिवावतार का एक शिष्य (वायु. २३.१३९)।

३. भार्गवकुलोत्पन्न एक मंत्रकार एवं गोत्रकार।

४. स्वायंभुव मन्वन्तर का एक व्यास। यह ब्रह्मा का पौत्र एवं सरस्वती नदी का पुत्र था। इसे 'अपांतरतम',

'वेदाचार्य एवं 'प्राचीनगर्भ' नामान्तर भी प्राप्त थे। इसने स्वायंभुव मन्वन्तर में वेदविभाजन का कार्य अत्यंत यशस्वी प्रकार से किया (म. शां. ३३७.३७-३९; ६६; व्यास पाराशर्य देखिये)।

अन्य पुराणों में इसे वैवस्वत मन्वन्तर का व्यास कहा गया है। इसे वसिष्ठ ऋषि ने वायुपुराण सिखाया था, जो इसने आगे चल कर अपने त्रिधामन् नामक शिष्य को प्रदान किया था (वायु. १०३.६०)।

५. एक आचार्य, जो कौशिक ऋषि के सात शिष्यों में से एक था (अ. रा. ७)।

६. पश्चिम दिशा में निवास करनेवाला एक ऋषि, जो अत्रि ऋषि का पुत्र का था (म. शां. २०१.३०)।

७. तुंगकारण्य में निवास करनेवाला एक ऋषि, जिसने अपने अनेकानेक शिष्यों को वेदविद्या सिखायी (पद्म. स्व. ३९)।

८. एक लोकसमूह, जो पश्चिम भारत में निवास करता था (भा. १.१०.३४)।

सारिक--युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.११)।

सारिमेजय--वृष्णिकुल में उत्पन्न एक यादव (म. आ. १७७.१८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-- 'सारमेजय'।

सारिसृक्क शार्ङ्ग--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४२.५-६)। महाभारत में इसे 'सारिसुक्क' कहा गया है, एवं इसे मंदपाल ऋषि एवं जरितृ शार्ङ्गी का पुत्र बताया गया है।

खांडववनदाह के समय इसने अग्नि की स्तुति की, जिस कारण प्रसन्न हो कर अग्नि ने इसे दाह से मुक्त किया (म. आ. २२३.३)।

सार्ञ्जय--एक सृंजय राजा, जिसका निर्देश ऋग्वेद की एक दानस्तुति में प्राप्त है (ऋ. ६.४७.२५)। यह भरद्वाजों का आश्रयदाता था (श. ब्रा. २.४.४.४; १२. ८.२.३)।

२. एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:-- १.प्रस्तोक (सां. श्रौ. १६.११.११); २. सहदेव (ऐ. ब्रा. ७.३.४); ३ सुप्लन् (श. ब्रा. २.४.४.४)। किंतु सायणाचार्य सहदेव एवं सार्ञ्जय को विभिन्न व्यक्ति मानते है।

सार्धनेमि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सार्धसुग्रीवि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सार्पराज्ञी--सर्पराज्ञी नामक वैदिक सूक्तद्रष्टी का नामांतर (पं. ब्रा. ४.९.४; कौ. ब्रा. २७.४)।

सार्पि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सार्वभौम--(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सुधर्मन् राजा का, एवं वायु के अनुसार सुवर्मन् राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७१; वायु. ९९. १८६)।

२. (सो. कुरु,) एक राजा, जो विदूरथ राजा का पुत्र, एवं जयसेन (जयत्सेन) राजा का पिता था (भा. ९. २२.१०)।

३. (सो. पूरु.) एक राजा, जो अहंयाति राजा एवं भानुमती का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम सुंदरा था, जिससे इसे जयत्सेन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६३.१५)।

४. सावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार, जो देवगुह्य एवं सरस्वती का पुत्र था (भा. ८.१३.१७)।

सार्वसेनि--शौचेय नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. सं. ७.१.१०.३)।

सालकटंकट--अलंबुस नामक राक्षस का नामांतर।

सालकटंकटा--विद्युत्केश राक्षस की पत्नी, जिसकी माता का नाम संध्या था (वा. रा. उ. ४.२३)।

सालकटंकटी--हिडिंबा राक्षसी का नामांतर (म. आ. १४३.१५५६*; पंक्ति ६)।

सालंकायन--विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

सालिमंजरिसत्य-एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

साल्व--एक प्राचीन लोकसमूह, जिसका निर्देश प्राचीन साहित्य में प्रायः सर्वत्र मत्स्य लोगों के साथ प्राप्त है। आधुनिक दक्षिण पंजाब एवं दक्षिण राजस्थान में अल्वार प्रदेश में ये लोग बसे हुए थे।

इन लोगों का प्राचीनतम निर्देश गोपथ ब्राह्मण में प्राप्त है, जहाँ इन्हें मत्स्य लोगों के साथ संबंधित किया गया है (गो. ब्रा. १.२.९)। पाणिनि के व्याकरण में भी इन लोगों का निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ४.१.१७३; २.१३५)।

महाभारत के अनुसार, ये लोग कुरुक्षेत्र के समीप बसे हुए थे, एवं इनकी राजधानी शाल्वपुर (सौभगणनगर) नगर में थी। भारतीय युद्ध में ये लोग मत्स्य, केकय, अंबष्ठ, त्रिगर्त आदि लोगों के साथ कौरवपक्ष में शामिल थे, एवं इनकी गणना भीष्म के सैन्य में की जाती थी।

इन लोगों के समूह में निम्नलिखित लोग शामिल थेः- १. उदुंबर; २. तिलखल; ३. मद्रक; ४. युगंधर; ५. भूलिंग; ६. शरदण्ड (काशिका)

सालडि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सावर्ण—युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१३)।

सावयस—अषाढ (आषाढ) नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १.१.१.७)।

सावर्णि—सावर्णि नामक आठवें मन्वन्तर के अधिपति मनु का पैतृक नाम (ऋ. १०.६२.११)। सवर्णा नामक स्त्री के वंशज होने के कारण उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (मनु सावर्णि देखिये)। रौथ के अनुसार 'सवर्णा' सूर्यपत्नी सरण्यू का ही नामान्तर होगा। इस पैतृक नाम का 'सावर्ण्य' एवं 'सांवरणि' पाठ भी ऋग्वेद में प्राप्त हैं (ऋ. १०.६२.९)। महाभारत में इस पैतृक नाम का 'सौवर्ण' नामान्तर प्राप्त है (म. अनु. १८.४३)।

पौराणिक साहित्य में भी 'सावर्णि' मनु राजा का मातृक नाम बताया गया है, एवं यह मातृक नाम सवर्णा का पुत्र होने के कारण इसे प्राप्त हुआ था ऐसा भी निर्देश वहाँ प्राप्त है (विष्णु. ३.२.१३; ब्रह्म. ६.१९)। किन्तु अन्य पुराणों में इसकी माता का नाम सवर्णा नहीं, बल्कि 'छाया' अथवा 'मृण्मयी' दिया गया है (भा. ६.६.४१; मार्क. ७५.३१; म. अनु. ५३.२५ कुं.)।

इसके बड़े भाई का नाम श्राद्धदेव था, जो सातवें मन्वन्तर का अधिपति मनु था। अपने ज्येष्ठ बन्धु के वर्ण के समान होने के कारण इसे सावर्णि उपाधि प्राप्त हुई, ऐसी भी चमत्कृतिपूर्ण कथा कई पुराणों में प्राप्त है, किन्तु वह कल्पनारम्य प्रतीत होती है। वायु में इसका सही नाम 'श्रुतश्रवस्' दिया गया है (वायु. ८४.५१)। मनु सावर्णि राजा पूर्वजन्म में चैत्रवंशीय सुरथ नामक राजा था (दे. भा. १०.१०; मार्क. ७८.३; सुरथ १३. देखिये)।

२. सत्ययुग में उत्पन्न एक ऋषि, जिसने छः हजार वर्षों तक शिव की उपासना की थी। इस तपस्या के कारण शिव ने प्रसन्न हो कर इसे विख्यात ग्रंथकार होने का, एवं अजरामर होने का आशीर्वाद प्रदान किया था (म. अनु. ४५. ८७ कुं.)। पश्चात् यह इंद्रसभा का सदस्य भी बन गया था (म. स. ७.९)।

३. एक ग्रंथकर्ता ऋषि, जो कृतयुग में उत्पन्न हुआ था।

४. एक आचार्य, जिसका निर्देश उपकर्मांगतर्पण में प्राप्त है।

सावर्णि सौमदत्ति—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६१. ५६)।

सावर्णिक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सावर्ण्य—मनु सावर्णि राजा के 'सावर्णि' पैतृक नाम का नामान्तर (सावर्णि १. देखिये)।

सावित्र—ग्यारह रुद्रों में से एक (मत्स्य. ५.३०)।

२.—कर्ण का नामान्तर (सावित्री ५. देखिये)।

सावित्र वसु—अष्टवसुओं में से एक, जिसने रावण के पितामह सुमालिन् का वध किया था (वा. रा. उ. २७.४३-५०)।

सावित्री—मद्र देशाधिपति अश्वपति राजा की कन्या, जो शाल्व देश के सत्यवत् राजा की पत्नी थी। अपने पातिव्रत्य प्रभाव के कारण इसने अपने अल्पायु पति के प्राण साक्षात् यमधर्म से पुनः प्राप्त किये, जिस कारण यह प्राचीन भारतीय साहित्य में पातिव्रत्यधर्म की अमर प्रतिमा बन चुकी है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में भी सावित्री नाम का निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, सावित्री की कथा ब्राह्मण ग्रंथों के रचनाकाल में किसी रूप में अस्तित्व में थी (सीता सावित्री देखिये)।

जन्म—इसकी माता का नाम मालती (मालवी) था। वसिष्ठ ऋषि की आज्ञा से इसके पिता ने गायत्री मंत्र का दस लाख बार जाप किया, जिस कारण इसका जन्म हुआ।

विवाह—यह अत्यंत स्वरूपसुंदर थी, एवं इसका पिता अत्यंत धनसंपन्न था। इस कारण इसके साथ विवाह करने में सभी राजपुत्र डरते थे। अतः पति-संशोधनार्थ यह स्वयं निकल पड़ी, एवं इसने शाल्वदेश के द्युमत्सेन राजा के पुत्र सत्यवत् से विवाह करना निश्चित किया। सत्यवत् अत्यंत गुणसंपन्न था, किन्तु अत्यंत अल्पायु होने के कारण एक वर्ष के पश्चात् ही उसकी मृत्यु होनेवाली थी। नारद ऋषि ने सत्यवत् का यह भीषण भविष्य इसे कथन किया, एवं उससे विवाह करने के इसके निश्चय से विचलित करने का काफ़ी प्रयत्न किया। किन्तु यह अपने निश्चय पर अटल रही।

त्रिरात्रव्रत—सत्यवत् की मृत्यु का दिन जब चार दिन शेष रहा तब इसने तीन अहोरात्र खड़े रह कर तपस्या करने का 'त्रिरात्रव्रत' किया। इस व्रत के चौथे दिन यह अपने व्रत की समाप्ति करना चाहती थी, इतने में सत्यवत् के मृत्यु की घटिका आ पहुँची।

यम से आशीर्वाद प्राप्ति—पश्चात् यम ने अपने पाशों के द्वारा सत्यवत् के शरीर में से अंगुष्ठमात्र आकार का प्राणपुरुष खींच लिया, एवं वह यमलोक लौट जाने लगा। उस समय इसने यम का अत्यधिक अनुनय विनय किया, एवं अनेकानेक अध्यात्मविषयक प्रश्न पूछ कर उसे निरुत्तर किया। इस कारण यम ने सत्यवत् के प्राण इसे वापस दे दिये (म. व. २८१.२५-५३)।

इसके श्वशुर द्युमत्सेन का राज्य पुनः प्राप्त होने का, एवं उसकी खोयी हुई दृष्टि उसे पुनः प्राप्त होने का वर भी यम ने इसे प्रदान किया।

पश्चात् यम के आशीर्वाद के अनुसार इसे सत्यवत् से सौ पुत्र उत्पन्न हुए, एवं द्युमत्सेन का राज्य भी उसे पुनः प्राप्त हुआ। द्युमत्सेन के पश्चात् सत्यवत् शाल्वदेश का राजा बन गया, जहाँ उसने चार सौ वर्षों तक राज्य किया (म. व. २७७-२८३; मत्स्य. २०७-२१३; दे. भा. ९. २६-३८; ब्रह्मवै. २.२३-२४)।

२. ब्रह्मा की पत्नी शतरूपा का नामान्तर (ब्रह्मन् देखिये)।

३. एक देवी, जो सूर्य एवं पृश्नि की कन्या मानी जाती है (भा. ६.१८.१)। यह गायत्री मंत्र की अधिष्ठात्री देवी मानी गयी है। इसके उपासकों में अश्वपति राजा प्रमुख था, जिसे इसने अग्निहोत्र से प्रकट हो कर प्रत्यक्ष दर्शन दिया था (म. व. २७७.१०; मत्स्य. २०८-६)। त्रिपुरदाह के समय, शिव ने इसे अपने रथ के घोड़ों की बागडोर, एवं संवत्सरमय धनुष्य की प्रत्यंचा बनाया था (म. द्रो. १४.५७)। विदर्भ देश में रहनेवाले सत्य नामक ब्राह्मण के गायत्री जप से संतुष्ट हो कर, इसने उसे दर्शन दिया था (म. शां. २६४.१०)।

४. शिवपत्नी उमा की एक सहचरी (म. व. २२१.२०)।

५. एक धर्मपरायण राजपत्नी, जिसने दिव्य कुंडलों का दान कर उत्तम लोक की प्राप्ति की थी (म. शां. २२६. २४)। संभवतः इस कथा में सत्यवत् की पत्नी सावित्री की ओर संकेत किया होगा।

महाभारत के अनुशासनपर्व में यही कथा पुनरुद्धृत की गयी है (म. अनु. २०९)। किन्तु वहाँ 'सावित्री' के स्थान पर 'सावित्र' (सूर्य का पुत्र) ऐसा निर्देश है। इससे प्रतीत होता है कि, अपने दोनों कुंडल दान में प्रदान करनेवाले अंगराज कर्ण की ओर इस कथा में संकेत किया है।

सासिसाहरितायन--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साश्व--यमसभा में उपस्थित एक प्राचीन राजा (म. स. ९३*)।

साहंजि--(सो. सह.) सहदेववंशीय संवर्त राजा का नामांतर। विष्णु में इसे कुंती राजा का पुत्र कहा गया है। भागवत एवं हरिवंश में इसे क्रमशः 'सोहंजि' एवं 'साहंज' कहा गया है (ह. वं. १.३३.४)। इसने 'साहंजनि' नगरी (सांची) की स्थापना की थी (ब्रह्म. १३.१५६)।

साहदेव्य—सोमक नामक आचार्य की पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.३४.९)।

साहरि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साहुर—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साहय—एक मरुत्, जो मरुत्गणों में से चौथे मरुत् गण में शामिल था।

सिंह—कृष्ण एवं लक्ष्मणा के पुत्रों में से एक।

२. राम दाशरथि के सुज्ञ नामक मंत्रि का पुत्र (कुशलव देखिये)।

सिंहकेतु—चेदिदेश का एक राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया (म. द्रो. ४०.५१)।

सिंहचंद्र--पांचाल देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर का मित्र था। भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३७)।

सिंहल--एक म्लेच्छजातीय लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल थे। ये लोग द्रोण के द्वारा निर्मित गरुडव्यूह के ग्रीवाभाग में स्थित थे (म. द्रो. १९. ७)।

सिंहसेन--पांचाल देश का एक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में पांडवपक्ष में शामिल था। द्रोण ने इसका वध किया (म. द्रो. १५.३५)।

२. पांचाल देश का एक योद्धा, जो गोपति पांचाल का पुत्र था। यह भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया (म. क. ४०.४८)। इसके रथ के अश्व श्वेतरक्त वर्ण के थे (म. द्रो. २२.४३)।

सिंहिका--प्राचेतस दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो कश्यप की पत्नी थी। 'सैंहिकेय' नामक चार सुविख्यात असुर इसके ही पुत्र माने जाते हैं।

२. एक राक्षसी। हनुमत् के समुद्रोल्लंघन के समय इसने उसका मार्ग रोक कर उसे त्रस्त करना चाहा। उस समय हनुमत् ने इसका वध किया, एवं इसकी लाश समुद्र में फेंक दी।

३. एक राक्षसी, जो कश्यप एवं दिति की कन्या, एवं हिरण्यकशिपु की बहन थी। इसका विवाह विप्रचित्ति दानव से हुआ था, जिससे इसे एक सौ एक पुत्र उत्पन्न हुए। इसके पुत्रों में राहु नामक असुर प्रमुख था (भा. ५.२४.१; वायु. ६७.७; विप्रचित्ति २. देखिये)।

सिकता निवावरी--एक वैदिक मंत्रद्रष्ट्री (ऋ. ९. ८६.११-२०; ३१-४०)।

सित--विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

२. तामस मन्वंतर का एक योगवर्धन।

सिद्ध--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था।

२. एक देवगण, जो हिमालय पर्वत में कण्वाश्रम के समीप निवास करता था (म. आ. ५७९*)।

३. एक मुनि, जिसने काश्यप ऋषि से निम्नलिखित विषयों पर तात्त्विक चर्चा की थीः-- १. अनुगीता; २. जननमरण; ३. जीवात्मा का गर्भप्रवेश; ४. मोक्षसाधन (म. आश्व. १६-२२)। शिलोञ्छवृत्ति ब्राह्मण नामक से भी इसने गंगामाहात्म्य के संबंध में चर्चा की थी (म. अनु. ६५.१९)।

सिद्धपात्र--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६१ पाठ.)।

सिद्धसमाधि--कोल्हापूर का एक ब्राह्मण, जिसकी कथा पद्म में गीता के बारहवें अध्याय का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गयी है (पद्म. उ. १८६)।

सिद्धार्थ--दशरथ राजा का एक आमात्य (वा. रा. अयो. ३६)।

२. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

३. एक राजा, जो शुद्धोदन राजा का पुत्र था (मत्स्य. १७२.१२)। इसे पुष्कल नामांतर भी प्राप्त था।

४. एक राजा, जो 'क्रोधवश' संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५९)।

सिद्धि--दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्मऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुख था (वायु. १०. २५)।

२. भग नामक आदित्य की पत्नी (भा. ६.१८.२)।

३. एक अग्नि, जो वीर नामक अग्नि का पुत्र था। इसकी माता का नाम सरयू था। इसने अपनी प्रभा से सूर्य को आच्छादित कर दिया था (म. व. २०९.११)।

४. एक देवी, जो कुंती के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई थी (म. आ. ६१.९८)।

सिनीवाक--युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)। --'शिनीवाक'।

सिनीवाली--एक देवी, जिसका निर्देश ऋग्वेद के दो सूक्तों में प्राप्त है (ऋ. २.३२; १०.१८४)। यह देवों की बहन मानी गयी है। यह विस्तृतनितंबा, सुंदरभुजाओं एवं सुंदर उँगलियोंवाली, बहुप्रसवा एवं विशाल परिवार की स्वामिनी है। संतानप्रदान करने के लिए इसका स्तवन किया गया है। सरस्वती, राका, गुंगु आदि देवियों के साथ इसका आवाहन किया गया है। अथर्ववेद में इसे विष्णु की पत्नी कहा गया है (अ. वे. ८.४६)।

बाद के वैदिक ग्रंथों में, राका एवं सिनीवाली का चंद्रमा की कलाओं के साथ संबंध दिया गया है, जहाँ सिनीवाली को नवचंद्रमा (प्रतिपदा) के दिन की, एवं राका को पूर्णिमा के दिन की अधिष्ठात्री देवी माना गया है। किन्तु इस कल्पना का ऋग्वेद में कहीं भी निर्देश प्राप्त नहीं है।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे अंगिरस् ऋषि एवं श्रद्धा की तृतीय कन्या कहा गया है। इसका विवाह धातृ नामक आदित्य से हुआ था, जिससे इसे दर्श (सायंकाल) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

यह अत्यंत कृश थी, जिस कारण यह कभी दृश्यमान, एवं कभी अदृश्य रहती थी। इसी कारण इसे 'दृश्यादृश्य' नामान्तर प्राप्त हुआ था (भा. ६.१८.३)।

२. कर्दमपत्नी देवहूति का नामान्तर।

३. बृहस्पति एव शुभा की कन्या, जिसका विवाह कर्दम प्रजापति से हुआ था। अपने पति का त्याग कर, यह सोम से प्रेम करती थी (वायु. ९०.२५)।

सिंदूर--एक असुर। श्रीगणेश ने इसका वध कर, इसके रक्त का लेप स्वयं के शरीर पर लगा दिया था (गणेश. २.१३७)।

सिंधु--इक्ष्वाकुवंशीय सिंधुद्वीप राजा का नामान्तर (ब्रह्म. १६९.१९)।

२. एक असुर, जो श्रीगणेश के द्वारा मारा गया (गणेश. २.७३-१२६)।

३. एक लोकसमूह, जिसका निर्देश प्राचीन साहित्य में सौवीर लोगों के साथ प्राप्त है। ये दोनों लोकसमूह सिंधुनद के तट पर निवास करते थे।

बौधायन धर्मसूत्र में इन्हें म्लेच्छ जाति का, एवं अपवित्र माना गया है। भारतीय युद्ध के समय, अपने राजा जयद्रथ के साथ ये लोग कौरवपक्ष में शामिल थे (म. भी. १८.१३-१४)।

सिंधुक--(आंध्र. भविष्य.) आंध्रवंशीय शिप्रक राजा का नामान्तर। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे आंध्रवंश का सर्वप्रथम राजा कहा गया है।

सिंधुक्षित्--एक राजा, जो दुर्भाग्य के कारण राज्य-भ्रष्ट हुआ था। आगे चल कर एक साम के पठन से इसे अपना विगत राज्य पुनः प्राप्त हुआ (पं. ब्रा. १२.१२.६)।

सिंधुक्षित प्रैयमद--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७५)।

सिंधुद्वीप--(सो. अमा.) एक राजा, जो जह्नु राजा का पुत्र, एवं बलाकाश्व राजा का पिता था। जन्म से यह क्षत्रिय था, किन्तु आगे चल कर 'पृथूदक तीर्थ' में स्नान करने के कारण यह ब्राह्मण बन गया (म. श. ३९.१०; अनु. ७.४)।

२. एक ऋषि, जो वेद नामक ऋषि का भाई था (ब्रह्म. १६९.४)।

३. एक ऋषि, जिसने वेदनाथ नामक ब्राह्मण का उद्धार किया था (स्कंद. १.३.१४)।

सिंधुद्वीप आंबरीष--(सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु, वायु, एवं मत्स्य के अनुसार अंबरीष राजा का पुत्र, एवं अयुतायु राजा का पिता था। भागवत एवं हरिवंश में इसे नाभ राजा का पुत्र कहा गया है।

सिंधुद्वीप आंबरीष नामक एक वैदिक सूक्तद्रष्टा का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋग्वेद. १०.९), जो संभवतः यही होगा।

सिंधुवीर्य--मद्रदेश का एक राजा, जिसकी कन्या का नाम केकयी था। अपनी इस कन्या का विवाह इसने मरुत्त आविक्षित राजा से किया था।

सिंधुसेन--एक राक्षस, जिसने संसार के समस्त यज्ञमंत्रों का हरण कर उन्हें रसातल में छिपा दिया। इस कारण संसार के सारे यज्ञ बन्द पड़ गये। आगे चल कर विष्णु ने वराह का रूप धारण कर इसका नाश किया, एवं यज्ञमंत्रों को रसातल से वापस लाया।

सीता वैदेही--विदेह देश के सीरध्वज जनक राजा की कन्या, जो इक्ष्वाकुवंशीय राम दाशरथि राजा की पत्नी थी।

सतीत्व की साकार प्रतिमा--जिस काल में बहुपत्नी-कत्व रूढि क्षत्रिय समाज में प्रतिष्ठित थी, उस समय एक-पत्नीकत्व का नया आदर्श राम दाशरथि राजा के रूप में वाल्मीकि ने अपने 'वाल्मीकि रामायण' के द्वारा प्रस्थापित किया (राम दाशरथि देखिये)। उसके साथ ही साथ एक-पत्नीकत्व के व्रत का आचरण करनेवाले क्षत्रिय के पत्नी को किस प्रकार वर्तन करना चाहिए, इसका आदर्श वाल्मीकि ने सीता के रूप में चित्रित किया। इसी कारण राम दाशरथि के साथ सीता भारतीय स्त्री जाति के सतीत्व, एकनिष्ठा एवं पवित्रता की ज्वलंत एवं साकार प्रतिमा बन कर अमर हो गयी है।

स्वरूप वर्णन--वाल्मीकि रामायण में सीता के स्वरूप का अत्यंत काव्यमय वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे पूर्ण-चंद्रवदना, अपनी प्रभा से सभी दिशाओं को प्रकाशित करनेवाली (वा. रा. सुं. १५.२७-२९); कोमलांगिनी, शुद्धस्वर्णवर्णा (वा. रा अर. ४३.१-२); लक्ष्मी एवं रति की प्रतिरूपा, नखशिख सौंदर्यमयी (वा. रा. अर. ४६.१६; २२) कहा गया है। इसके अप्रतीम सौंदर्य के संबंध में स्वयं रावण कहता है--

> **नैव देवी न गंधर्वा न यक्षी नच किन्नरी।**
> **नैवंरूपा मया नारी दृष्टपूर्वा महीतले॥**
>
> (वा. रा. अर. ४६.२३)।

(सीता के समान सौंदर्यवती स्त्री मैं ने इस धरती पर देव, गंधर्व, यक्ष, किन्नर आदि में कहीं भी नहीं देखी है।)

भूमिजा सीता--यद्यपि यह सीरध्वज जनक की कन्या मानी जाती है, फिर भी यह उसकी अपनी कन्या न थी। वाल्मीकि रामायण में इसका जन्म भूमि से बताया गया है, एवं इसके जन्म के संबंधी निम्नलिखित कथा वहाँ दी गयी है। एक दिन जनक राजा यज्ञभूमि तैयार करने के लिए हल चला रहा था, उस समय एक छोटीसी कन्या मिट्टी से निकली। उसने इसे पुत्री के रूप में ग्रहण किया, एवं उसका नाम सीता रखा (वा. रा. बा. ६६.१३-

१५)। सीता का यह अवतार उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में हुआ।

रे. बुल्के के अनुसार भूमिजा सीता की अलौकिक जन्म कथा सीता नामक कृषि की अधिष्ठात्री देवी के प्रभाव से उत्पन्न हुई थी। सीता का शब्दशः अर्थ 'हल से खींची हुई रेखा' होता है। अतएव भूमि में हल चलाते समय इसके निकलने के कारण इसे सीता नाम प्राप्त हुआ होगा। संभव है, किसी निश्चित कुलपरंपरा के अभाव में ऐतिहासिक राजकुमारी सीता की जन्मकथा पर कृषि के अधिष्ठात्री देवी के व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ा हो।

जन्मसंबंधी अन्य आख्यायिकाएँ--इसके जन्म के संबंध में अन्य आख्यायिकाएँ विभिन्न रामायण ग्रंथों में एवं पुराणों में प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है :--

(१) **अग्निजा सीता**—'आनंद रामायण' (१५ वी शताब्दी) के अनुसार इसके पिता का नाम पद्माक्ष दिया गया है। पद्माक्ष राजा ने लक्ष्मी को पुत्रीरूप में पाने के लिए विष्णु की उपासना की। विष्णु ने उसे महालिंग दिया, जिससे एक सुंदर कन्या निकली, जिसका नाम पद्मा रखा गया।

पद्मा के स्वयंवर के समय, दैत्यों ने स्वयंवर मंडप ध्वस्त किया, एवं पद्माक्ष राजा का संपूर्ण विनाश हो कर वह स्वयं भी मारा गया। यह देख कर पद्मा ने अग्नि में प्रवेश किया। इसकी खोज के लिए दैत्यों ने बड़ी खोज बीन की, किन्तु इसका कहीं पता न चला।

एक बार यह अग्निकुंड से बाहर आ कर बैठी थी, तब विमान से जानेवाले रावण ने इसे देखा, एवं वह कामातुर हो कर इसकी ओर दौड़ा। उसे आता हुआ देख कर यह फिर अग्नि में प्रविष्ट हुई। इसे ढूँढने के लिए रावण ने समस्त यज्ञकुंड खोद डाला, जिससे इसे जीवित सीता तो न मिली, किन्तु इसीका ही एक जड़ रूप पाँच रत्नों के रूप में प्राप्त हुआ।

इन रत्नों को एक पेटिका में बन्द रख कर रावण लंका में गया, एवं उसे अपनी पत्नी मंदोदरी के हाथ सौंप दिया। वहाँ पेटिका खोलते ही पद्मा अपने मूल कन्यारूप में प्रकट हुई। इस पर पद्माक्ष के सारे कुल का एवं राज्य का विनाश करनेवाली इस कन्या को लंका से बाहर छोड़ देनेकी प्रार्थना रावण ने मंदोदरी से की। मंदोदरी की इस प्रार्थना के अनुसार रावण ने इस कन्या को पुनः एक बार पेटिका में बंद किया, एवं वह पेटिका मिथिला में गड़वा दी। पेटिका में बन्द करने के पूर्व इसने रावण को शाप दिया, 'मैं तुम्हारा एवं तुम्हारे सारे परिवार का नाश करने के लिए लंका में फिर आऊँगी'।

पश्चात् मिथिला के एक ब्राह्मण को जमीन पर हल चलाते समय वही पेटिका प्राप्त हुई, जो उसने राजधन मान कर जनक राजा को सुपूर्द किया। उस पेटिका से निकली हुई कन्या को जनक ने बेटी के रूप में पाला, एवं उसका नाम सीता रख दिया।

मातुलिंग से निकलने के कारण इसे 'मातुलिंगी'; रत्न में होने के कारण 'रत्नावलि;' धरणी से निकलने के कारण 'धरणीजा;' जनक के द्वारा पाले जाने के कारण 'जानकी;' जमीन से निकलने के कारण 'सीता;' अग्नि से निकलने के कारण 'अग्निजा;' एवं पूर्वजन्म के नाम के कारण 'पद्मा' आदि नामान्तर प्राप्त हुए (आ. रा. ७.३; भावार्थ रा. १.१५)।

(२) **रक्तजा सीता**—रक्तजा के रूप में सीता का जन्म होने की कथा 'अद्भुत रामायण' में पायी जाती है। रावण जनस्थान के मुनियों पर अत्याचार करता था, एवं अपने बाण की नोंक से ऋषियों के शरीर से रक्त निकाल कर एक मटके में जमा करता था। इसी वन में गृत्समद नामक एक ऋषि रहता था, जो लक्ष्मी के समान कन्या की इच्छा से तपस्या करता था। दर्भ के अग्रभाग से दूध को ले कर, मंत्रोच्चारण के साथ वह उसे प्रतिदिन इकठ्ठा करता था।

एक दिन रावण ने गृत्समद ऋषि का मटका चुरा लिया, एवं उसमें इकठ्ठा किया दूध ऋषियों के रक्त से भरे हुए मटके में डाल दिया, एवं उसे मंदोदरी के पास रखने के लिए दे दिया।

आगे चल कर रावण के कुकृत्यों से तंग आ कर मंदोदरी ने आत्महत्या के हेतु से मटके में स्थित दूधयुक्त रक्त प्राशन किया, जिससे वह गर्भवती रही। अपना यह गर्भ उसने कुरुक्षेत्र की भूमि में गाड़ दिया। उसी गर्भ से आगे चल कर सीता का जन्म हुआ, जिसे विदर्भ देश के जनक राजा ने पालपोस कर बड़ा किया (अ. रा. ८)।

(३) **रावणात्मजा सीता**—सीताजन्म के संबंधित सर्वाधिक प्राचीन कथा में, सीता को रावण की कन्या माना गया है। इस कथा के अनुसार रावण ने मय राक्षस की कन्या मन्दोदरी से विवाह करना चाहा। उस समय मय ने रावण से कहा कि, मन्दोदरी के जन्मजातक से मंदोदरी की पहली संतान कुलघातक उत्पन्न होनेवाली है; अतएव उस संतान का वध करना उचित होगा। मय की इस

सलाह को न मान कर, रावण ने अपनी प्रथमजात कन्या को पेटिका में बन्द कर जनकपुरी में गड़वा दिया। इसी कन्या ने आगे चल कर रावण के समस्त कुल का नाश कर दिया (दे. भा. ४२)।

(४) **जनकात्मजा सीता**--महाभारत में सर्वत्र सीता को जनक राजा की अपनी कन्या माना गया है (म. व. २५८.९)।

सीता के जन्मसंबंधित उपर्युक्त सारी कथाएँ कल्पनारम्य प्रतीत होती है, जिनकी रचना राम के द्वारा किया गया रावणवध गृहीत मान कर की गयी हैं।

सीतास्वयंवर--एक बार परशुराम अपना प्रचंड शिव धनुष ले कर जनक राजा से मिलने आया। परशुराम का यह धनुष इतना बड़ा था, कि उसे ले जाने के लिए दो सौ पचास बैल जोड़ियों की शक्ति आवश्यक थी। परशुराम का यह अजस्त्रं धनुष इसने सहजही उठा लिया, एवं उसे घोड़ा बना कर यह खेलने लगी। यह देख कर इसके दैवी अंश के संबंध में परशुराम को आभास मिल गयी, एवं उसने जनक राजा को अपना धनुष दे कर आज्ञा दी, 'जो वीर इस धनुष के तोड़ने का सामर्थ्य रखता हो, उसीके साथ ही सीता का विवाह कर देना (वा. रा. बा. ६६.२६; आ. रा. सार. ३)।

परशुरम की आज्ञा के अनुसार, जनक राजा ने इसका स्वयंवर उद्घोषित किया। इस स्वयंवर में उपस्थित सारे राजा धनुष तोड़ने में असमर्थ रहे। अन्त में अयोध्या के राम दाशरथि राजा ने शिवधनुष को भङ्ग कर सीता का वरण किया (वा. रा. बा. २३.)।

वनवासगमन— राम के वनवासगमन के समय वन की भयानकता बता कर राम ने इसे अत्यधिक भयभीत किया, किन्तु 'जहाँ राम वहाँ सीता' ऐसे कह कर यह अपने निश्चय पर अटल रही (वा. रा. अयो. २६-३०)। उस समय इसने यह भी कहा कि, ज्योतिर्विदों के द्वारा बारह वर्ष के वनवास का जातक पहले ही कहा जा चुका है (वा. रा. अयो. २९.८; अ. रा. २. ४.७६)। अपनी सारी आयु राजप्रसादों में व्यतीत करनेवाली सीता को वनवास का सारा ही जीवन अननुभूत था, यहाँ तक कि, वल्कल पहनना भी इसे न आता था। किन्तु राम के साथ ही यह वानवासिक जीवन से जल्द ही परिचित हो गयी।

सीताहरण—जनस्थान में रावण ने इसका धोखे से हरण किया, एवं अत्यधिक विलाप करते हुए सीता को वह लंका ले जाने लगा। रास्ते में ऋष्यमूक पर्वत पर इसने अपने उत्तरीय वस्त्र, एवं अलंकार फेंक दिये, जिससे राम को पता चल जाए कि यह हरण की गयी है।

पश्चात् रावण ने इसे लंका नगरी में स्थित अशोकवन में राक्षसियों की रखवाली में रख दिया, एवं वह प्रतिदिन कामातुर हो कर अपने वश में लाने के लिए इसकी प्रार्थना करने लगा। उस समय उसने इसे डराया, धमकाया एवं काफ़ी प्रलोभन भी दिखाये। किन्तु यह अपने सतीत्व पर अचल रही। रावण के आते ही लोकलज्जा में लिपटी हुई सीता अपने जंघाओं से अपने पेट को, एवं अपने दोनो बाहुओं से वक्षःस्थलों को ढँक देती थी (वा. रा. सुं. १९.३)। परस्त्री पर पापदृष्टि रखने वाले रावण की इसने काफ़ी निर्भत्सना की। किन्तु रावण पर इसका कुछ भी असर न हुआ, एवं अपने राक्षसियों के द्वारा वह इसे वश में करने का प्रयत्न करता ही रहा।

हनुमत् से भेंट--एक दिन सीता के शोध के लिए राम के द्वारा भेजा गया हनुमत् अशोकवन में आ पहुँचा, एवं उसने राम के द्वारा दी गयी अभिज्ञान की अँगुठी इसे दिखा कर अपना परिचय दिया। उसी समय अपने पीठ पर इसे बिठा कर, रावण के कारावास से इसे मुक्त करने की तैयारी भी हनुमत् ने दिखायी। उस समय एक क्षत्रियकुलोत्पन्न वीरस्त्री के नाते हनुमत् के इस प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए इसने कहा—

> **बलैः समग्रैर्यदि मां हत्वा रावणमाहवे ।**
> **विजयी स्वपुरीं रामो नयेत्तत् स्याद्यशस्करम् ॥**
> **यथाहं तस्य वीरस्य वनादुपधिना हृता ।**
> **रक्षसा तद्भयादेव तथा नार्हति राघवः ।**
>
> (वा. रा. सुं. ६८.१२-१३)।

(मेरे पति राम ही रावण को परास्त कर मुझे ले जाएँगे। रावण के समान लुकछिप कर मुझे ले जाना राम को, तथा उसकी कीर्ति को शोभा न देगा)।

अग्निपरीक्षा—युद्ध के पश्चात् राम ने बिभीषण को इसे अपने पास लाने की आज्ञा दी। तदनुसार सुस्नात हुई यह मूल्यवान् वस्त्र एवं आभूषण पहन कर, एवं शिबिका में बैठ कर यह राम से मिलने गयी। वहाँ ध्यानस्थ बैठ हुए राम को इसके आगमन की वार्ता बिभीषण ने सुनायी।

बिभीषण के पीछे-पीछे चल कर, यह लाज में लिपटी हुई अपने पति के सम्मुख गयी। किन्तु राम के चेहरे पर

इसे सहानुभूति के स्थान पर कठोरता ही दिखायी दी। पश्चात् पराये घर में एक साल तक निवास करने के कारण राम ने इसको अस्वीकार करना चाहा (राम दाशरथि देखिये)।

राम का यह निश्चय सुन कर इसने अपने सतीत्व की सौगंध खायी। पश्चात् अग्निपरीक्षा के लिए इसने लक्ष्मण को चिता तैयार करने की आज्ञा दी, एवं उसमें अपना शरीर झोंक दिया। तदुपरान्त इसे हाथ में धारण कर अग्नि देवता स्वयं प्रकट हुई, एवं इसके सतीत्व की साक्ष दे कर कर इसको स्वीकार करने की आज्ञा उसने राम को दी (वा. रा. यु. ११६.११)।

राज्ञीपद—पश्चात् राम के साथ यह अयोध्या नगरी में गयी, जहाँ इसे राम के साथ राज्याभिषेक किया गया। कुछ समयोपरांत यह गर्भवती हुई, एवं इसने वनविहार की इच्छा राम से प्रकट की। उसी दिन रात को लोकापवाद के कारण राम ने इसका त्याग करने का निश्चय किया।

दूसरे दिन सुबह राम ने लक्ष्मण को बुलाया, एवं इसे गंगा के उस पार छोड़ आने का आदेश दिया। तपोवन दिखलाने के बहाने लक्ष्मण इसे रथ पर ले गया, एवं उसने इसे वाल्मीकि के आश्रम के समीप छोड़ दिया। उस समय यह आत्महत्त्या कर के प्राणत्याग करना चाहती थी, किन्तु गर्भवती होने के कारण यह वह पापकर्म न कर सकी।

पुत्रजन्म—राम के द्वारा परित्याग किये जाने पर, वाल्मीकि के आश्रम का सहारा ले कर यह वहीं रहने लगी। पश्चात् इसी आश्रम में इसने दो यमल पुत्रों को जन्म दिया, जिनके नाम वाल्मीकि के द्वारा कुश एवं लव रखे (वा. रा. उ. ६६)।

देहत्याग—कालोपरान्त राम के द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में, इसके पुत्र कुशलव की राम से भेंट हुई। उस समय कुशलवों से इसका सारा वृत्तांत जान कर राम ने इसे पुनः एक बार अयोध्या बुला लिया। वाल्मीकि ऋषि इसे स्वयं रामसभा में ले गये, एवं भरी सभा में उन्होंने इसके सतीत्व की साक्ष दी। उस समय जनता को विश्वास दिलाने के उद्देश्य से राम ने इससे अनुरोध किया कि, यह अपने सतीत्व का प्रमाण दे। इस समय इसने सौगंध खाते हुए कहा—

मनसा कर्मणा वाचा यथा रामं समर्चये।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति॥

(वा. रा. उ. ९७.१५)।

(मन से, कर्म से अथवा वाचा से अगर मैंने राम के सिवा किसी अन्य पुरुष का चिंतन न किया हो, तो पृथ्वीमाता दुभंग हो कर मुझें स्वीकार करें)।

सीता के द्वारा उपर्युक्त आर्त प्रार्थना किये जाने पर, पृथ्वी देवी एक दिव्य सिंहासन पर बैठी हुई प्रकट हुई, एवं इसे अपने शरण ले कर पुनः एक बार गुप्त हुई। यह दिव्य दृश्य देख कर राम स्तिमित हो उठा, एवं अत्यधिक विलाप करने लगा। पश्चात् उसने इसे लौटा देने का पृथ्वी को अनुरोध किया, एवं इसे न लौटा देने पर समस्त पृथ्वी को दग्ध करने की धमकी दी। अन्त में ब्रह्मा ने स्वयं प्रकट हो कर राम को सांत्वना दी।

चरित्रचित्रण—एक आदर्श भारतीय पतिव्रता मान कर वाल्मीकि रामायण में सीता का चरित्र चित्रण किया गया है। राम इसके लिए देवता है, एकमात्र गति है, इस लोक एवं परलोक का स्वामी है (इह प्रेत्य च नारिणां पतिरेको गतिः सदा) (वा. रा. अयो. २७.६)। पातिव्रत्य धर्म के संबंध में यह सावित्री को आदर्श मानती है (वा. रा. अयो. २९.१९)। सावित्री के ही समान यह कुलरीति (वा. रा. अयो. २६.१०), राजनीति (वा. रा. अयो. २६.४), लौकिक नीति (वा. रा. कि. ९.२) इन सारे तत्त्वों का ज्ञान रखती है, जिसकी सराहना स्वयं राम के द्वारा की गयी है।

मानस में—तुलसी के 'मानस' में चित्रित की गयी सीता, शिव, पार्वती, गणेश आदि की उपासिका है (मानस. २.२.२६.७–८)। यह राम की केवल पत्नी ही नहीं, बल्कि अनन्य भक्त भी हैं। इसका ध्यान सदैव रामचरण में ही रहता हैः—

सियमन राम चरण मन लागा।

(मानस. २.२.२६.८)।

सीतासावित्री—प्रजापति की एक कन्या, जो सोम की पत्नी थी (तै. ब्रा. ३.३.१०; प्रजापति देखिये)।

सीमन्तिनी—चित्रवर्मन् राजा की कन्या, जो चित्रांगद राजा की पत्नी थी। 'सोमप्रदोषव्रत' का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा स्कंद में दी गयी है। चौदह वर्ष की आयु में इसे वैधव्य प्राप्ति का कुयोग था। उस कुयोग के नाशनार्थ याज्ञवल्क्यपत्नी मैत्रेयी ने इसे 'सोमप्रदोषव्रत' करने के लिए कहा, जिस कारण इसका पति समुद्र में डूबने से बच गया (स्कंद. ३.३.८–९)।

सीरध्वज (जनक)—(सू. निमि.) विदेह देश का सुविख्यात राजा, जो सीता का पिता था। इसके पिता का नाम ह्रस्वरोमन् था (७१.१२)। 'सीर' का शब्दशः

अर्थ ' ' हल ' होता है। यही हल इसके कीर्ति का कारण बन जाने के कारण, इसे ' सीरध्वज ' नाम प्राप्त हुआ (भा. ९.१३.१८)।

सीता की प्राप्ति—एक बार यह अग्निचयन के लिए भूमि पर हल चला रहा था, उस समय इसे सीता की प्राप्ति हुई (सीता देखिये)। सीता बड़ी होने पर सांकाश्या नगरी के सुधन्वन् राजा ने सीता की माँग की। इसके द्वारा इस माँग का इन्कार किये जाने पर सुधन्वन् ने इस पर हमला किया। उस युद्ध में इसने सुधन्वन् का वध किया, एवं अपने पुत्र कुशध्वज को सांकाश्या नगरी का अधिपति नियुक्त किया (वा. रा. बा. ७१.१६-१९)।

मिथिला पर हमला—सीता अत्यंत स्वरूपसुंदर होने के कारण, भारतवर्ष के अनेकानेक राजा उससे विवाह करना चाहते थे। सीताविवाह के लिए इसने शिवधनु-भंग का प्रण निश्चित किया। वह प्रण किसी भी राजा ने पूर्ण नहीं किया। अन्त में सीताविवाह के संबंध में निराश हुए राजाओं ने एकत्रित हो कर मिथिला नगरी को घेर लिया। यह घेरा लगातार एक वर्ष तक चालू रहा, जिससे यह अत्यधिक त्रस्त हुआ। अन्त में दैवी सहायता के कारण, इस संकट से यह मुक्त हुआ (वा.रा. बा. ६६)।

वाजपेय यज्ञ—आगे चल कर, इसने वाजपेय यज्ञ किया, जिसके उपलक्ष्य में विश्वामित्र ऋषि अयोध्या के राजकुमार राम एवं लक्ष्मण को मिथिला नगरी में ले आये। शिवधनुर्भंग का इसका प्रण राम ने पूरा किया, एवं सीता का वरण किया।

पश्चात् इसकी दो कन्याएँ सीता एवं ऊर्मिला, एवं इसके भाई कुशध्वज की दो कन्याएँ मांडवी एवं श्रुतकीर्ति के विवाह क्रमश अयोध्या के राजकुमार राम, लक्ष्मण, भरत एवं शत्रुघ्न से सुमुहूर्त पर संपन्न हुए (वा. रा. बा. ७०-७४)। पद्म में ऊर्मिला इसकी नहीं बल्कि इसके बंधु कुशध्वज की कन्या दी गयी है।

सुकक्ष आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ९२-९३)।

सुकन्या—शर्याति राजा की कन्या, जो च्यवन ऋषि की भार्या थी (श. ब्रा. ४.१.५.६; जै. ब्रा. ३.१२१)। इसके पुत्र का नाम प्रमति, एवं पौत्र का नाम रुरु था (म. आ. ८.१; पद्म. पा. १५; च्यवन १. देखिये)। इसकी कन्या का नाम सुमेधस् था, जिसका विवाह निध्रुव काण्व ऋषि से हुआ था।

२. मातरिश्वन् ऋषि की पत्नी, जो मंकणक ऋषि की माता थी (म. श. ३७.५० पाठ.)।

सुकमल—एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी का एक पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.१२९)।

सुकर्मन्—एक पापी पुरुष, जिसकी कथा गीता के दूसरे अध्याय के पठन का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. १७२)।

२. (सो. वृष्णि) यादव राजा श्वफल्क के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४; १६)।

३. रुद्रसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

४. रौच्य मन्वंतर का एक देवगण।

५. एक आचार्य, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से जैमिनि नामक आचार्य का, वायु के अनुसार सुत्वन् का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार सुन्वत् नामक आचार्य का शिष्य था। इसने सामवेद की कुल एक सहस्र शाखाएँ तैयार की, एवं वे उदीच्य दिशा से आये हुए पाँच सौ, एवं पूर्व दिशा के से आये हुए पाँच सौ शिष्यों में बाँट दी।

यह अनध्याय के दिन में भी अपने शिष्यों को संहिताओं के पाठ सिखाता था, जिस कारण क्रुद्ध हो कर इंद्र ने इसके सारे शिष्यों का वध किया। पश्चात् इसने प्रायोपवेशन कर इंद्र को प्रसन्न किया। फिर इंद्र ने इसके सारे शिष्य पुनः जीवित किये, इतना ही नही, उसने इसे हिरण्यनाभ एवं पौष्यंजि नामक दो नये शिष्य भी प्रदान किये (ब्रह्मांड. २.३५.३२)।

६. युधिष्ठिर की राजसभा में उपस्थित एक क्षत्रिय (म. स. ४२३)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-' सुशर्मन् '।

७. कुरुक्षेत्र का एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'मातृपितृ-माहात्म्य' कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है। इसने अपने मातापिताओं की सेवा कर, ' सर्ववश्यता ' नामक सिद्धि प्राप्त की थी। इसी सिद्धि के बल से इसने दशारण्य में उग्र तपस्या करनेवाले पिप्पलाद काश्यप नामक ऋषि का गर्वहरण किया (पद्म. भू. ६१-६३; ८४)।

८. एक स्कंद-पार्षद, जो विधातृ के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम सुव्रत था।

सुकला—वाराणसी के कृकल नामक वैश्य की पत्नी, जिसकी कथा पतिपत्नियों के द्वारा एक साथ तीर्थयात्रा

करने का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. सृ. ४१-६१)।

सुकाल—सुमूर्तिमत् नामक पितरों का नामांतर।

सुकीर्ति—उत्तम मन्वंतर का इन्द्र।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर के समर्षियों में से एक।

सुकीर्ति काक्षीवत—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१३१)। ऋग्वेद के ब्राह्मण ग्रंथों में इसे इस सूक्त के प्रणयन का श्रेय इसे दिया गया है (ऐ. ब्रा. ५.१५.४; ६.२९.१; सां. ब्रा. ३०.५)।

सुकुट्ट—एक लोकसमूह (म. स. १३.२५)।

सुकुंडल—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

सुकुमार—(सो. काश्य.) एक राजा, जो धृष्टकेतु राजा का पुत्र, एवं वीतहोत्र राजा का पिता था (भा. ९.१७.९)। विष्णु एवं वायु में इसे सुविभु राजा का पुत्र कहा गया है।

२. पुलिंद देश का एक राजकुमार, जो सुमित्र राजा का पुत्र था। सहदेव ने अपने दक्षिणदिग्विजय में, एवं भीम ने अपने पूर्वदिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २६.१०)। भारतीय युद्ध में यह पांडव पक्ष में शामिल था।

३. एक राजा, जो मत्स्य देश के समीप स्थित प्रदेश का अधिपति था। द्रौपदी स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.९)। सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २८.४)।

४. तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.८)।

५. एक राजकुमार, जो शाकद्वीपाधिपति भव्य राजा का पुत्र था। इसीके ही नाम से इसका जलधारागिरि के समीप स्थित देश को 'सुकुमारवर्ष' नाम प्राप्त हुआ था (मार्क. ५०.२२; म. भी. १२.२३)। वायु एवं ब्रह्मांड में इसके पिता का नाम 'हव्य' दिया गया है।

सुकुमारी—परिक्षितपुत्र भीमसेन राजा की पत्नी (म. आ. ९०.४५)।

२. सृंजय राजा की कन्या, जो नारद की पत्नी थी (म. शां. ३०.१२; नारद २. देखिये)।

सुकुसुमा—स्कन्द की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५)।

सुकृत—स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि का पुत्र था (पद्म. सृ. ७)।

२. (सो. पूरु.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार पृथु राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५५)। वायु में इसे सुकृति कहा गया है।

सुकृति—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. स्वारोचिष मनु का एक पुत्र।

३. पूरुवंशीय सुकृत राजा का नामांतर।

सुकृत्त—(सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार निरामित्र राजा का पुत्र था। ब्रह्मांड, विष्णु, भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'सुक्षत्र', 'सुनक्षत्र' एवं 'सुरक्ष' कहा गया है।

सुकृष—एक ऋषि, जो विपुलस्वत् ऋषि का पुत्र था। इसकी जीवनकथा शिबि औशीनर राजा से काफ़ी मिलती जुलती है। इसके कुल चार पुत्र थे।

एक बार इसकी सत्त्वपरीक्षा लेने के लिए इंद्र पक्षीरूप से इसके पास आया, एवं नरमांस का भोजन माँगने लगा। इसने उसकी इच्छा पूर्ण करने का आश्वासन दिया, एवं अपने पुत्रों को माँस निकाल देने की आज्ञा दी। इसकी यह प्रार्थना इसके पुत्रों ने अस्वीकार कर दी। इस पर क्रुद्ध हो कर इसने उन्हें 'तिर्यग्' (पक्षी) योनि में जन्म प्राप्त होने का शाप दिया। तदनुसार इसके पुत्र गरुडवंश में द्रोणपुत्र, पिंगाक्ष, विबोध, सुपुत्र एवं सुमुख नामक पक्षी बन गये (मार्क. ३.)। इसके पुत्रों के द्वारा निदान माँगे जाने पर, इसने उन्हें पक्षीयोनि में रह कर भी ज्ञानी बनने का उःशाप दिया।

इंद्र को दिये गये अभिवचन की पूर्ति के लिए यह अपना स्वयं का माँस निकालने लगा। इस पर इंद्र अपने सही रूप में प्रकट हुआ, एवं उसने इसे महाज्ञानी बनने का, एवं तपस्या में कहीं भी विघ्न न उत्पन्न होने का आशीर्वाद प्रदान किया।

सुकेतन—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सुनीथ राजा का पुत्र, एवं धर्मकेतु राजा का पिता था (भा. ९.१७.८)। विष्णु एवं वायु में इसे सुकेतु कहा गया है।

सुकेतु—(सू. निमि.) एक धर्मप्रवृत्त राजा, जो वायु एवं भागवत के अनुसार नंदिवर्धन राजा का पुत्र, एवं देवरात राजा का पिता था (भा. ९.१३.१४)।

२. क्षत्रवंशीय सुकेतन राजा का नामान्तर।

३. एक दानव, जो ताटका राक्षसी का पिता था (वायु. ६८.६)।

४. राम दाशरथि राजा के सुत्र नामक प्रधान का पुत्र (कुशलव देखिये)।

५. पाण्डवपक्ष का एक पराक्रमी राजा, जो चित्रकेतु राजा का पुत्र था (म. आ. १७७.९)। यह द्रौपदीस्वयंवर में भी उपस्थित था। भारतीय युद्ध में कृपाचार्य ने इसका वध किया (म. क. ३८.२१-२९)। पाठभेद-'अभिगु'।

६. एक राजा, जो अपने सुनामन् एवं सुवर्चस् नामक पुत्रों के साथ द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)।

७. शिशुपाल का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था। द्रोणाचार्य ने इसका वध किया (म. क. ३.८२)।

८. एक राक्षस, जो ताटका राक्षसी का पुत्र, एवं सुबाहु राक्षस का भाई था। राम के अश्वमेधयज्ञ के समय, अपने भाई सुबाहु के साथ इसने शत्रुघ्न से युद्ध किया था। यह गदायुद्ध में अत्यंत प्रवीण था। शत्रुघ्न-युद्ध में इसने सीता के भाई लक्ष्मीनिधि से घमासान युद्ध किया था (पद्म. पा. २५-२६)।

९. सगर राजा का एक पुत्र, जो कपिल ऋषि के शाप से बचे हुए सगरपुत्रों में से एक था।

१०. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का एक पुत्र था।

सुकेतुमत्--भद्रावती नगरी का एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम चंपका था। 'पुत्रदा एकादशी' के व्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. ४१)।

सुकेश--एक राक्षस, जो विद्युत्केश राक्षस का पिता था। इसकी माता का नाम सालकटंकटा था। इसने शिव-पार्वती की कठोर तपस्या की, जिस कारण इसे रुद्रगणों में स्थान प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ४.२७-३२)। ग्रामणी नामक गंधर्व की कन्या इसकी पत्नी थी, जिससे इसे मालिन्, सुमालिन् एवं माल्यवत् नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे।

सुकेशिन् भारद्वाज--एक आचार्य, जो आत्मज्ञान प्राप्ति के लिए पिप्पलाद नाम आचार्य के पास गये हुए पाँच आचार्यों में से एक था (प्र. उ. १.१)। 'षोडष-कल पुरुष' के संबंध में इसने पिप्पलाद से पृच्छा की थी।

सुकेशी--अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागत समारोह में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

२. गांधारराज की एक कन्या, जो कृष्ण की पत्नी थी। द्वारका में स्थित इसके प्रासाद का नाम पद्मकूट था (म. स. परि. १.२१.१२५१-१२५२)।

३. मगधराज केतुवीर्य की एक कन्या, जो मरुत्त (तृतीय) राजा की, पत्नी थी (मार्क. १२८)।

४. हेति राक्षस की एक कन्या, जो दुर्जय राक्षस की पत्नी थी (हेति देखिये)।

५. तुंबुरु की एक कन्या (वायु. ६९.४९)।

सुक्रतु--एक राजा, जिसका निर्देश संजय के द्वारा प्राचीन राजाओं की गणना में किया गया है (म. आ. १.१७५)।

सुक्षत्र--कोसल देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवपक्ष में शामिल था। इसके रथ के अश्व अत्यंत सुंदर थे, जिनके उदरभाग का रंग चक्रवाक् पक्षी के सदृश श्वेतवर्णीय था (मा. द्रो. २२.४७)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) मगधवंशीय सुक्षत्त राजा का नामान्तर।

सुक्षेत्र--ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सुख--सावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्न-लिखित बीस देव शामिल थेः--ऋत, तप, दानिन्, दाता, दाम, देय, ध्रुव, निधि, नियम, यम, वित्त, विधान, वैद्य, शम, सोम, स्थान, हव्य, हुत, होम (ब्रह्मांड. ४.१२०)।

२. धर्म एवं शान्ति के पुत्रों में से एक।

३. एक पक्षी, जो गरुड एवं शुकी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड ३.७.४५०)।

सुखद--पितरों में से एक।

सुखदा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५)।

सुखसंगित--एक गंधर्व, जिसकी कन्या का नाम प्रमोदिनी था (पद्म. उ. १२८)।

सुखामन एवं **सुखासीन**--ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का देवगणद्वय।

सुखीनल--(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार नृचक्षु राजा का पुत्र, एवं परिप्लव राजा का पिता था (भा. ९.२२.४१)। विष्णु एवं मत्स्य में इसे 'सुखीवल' कहा गया है।

सुगाति--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो गय एवं गयंति के पुत्रों में से एक था (भा.५.१५.१४)।

२. हंसध्वज राजा का प्रधान।

सुगंध—एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष एवं देवों के संग्राम में अग्नि के द्वारा दग्ध किये गये सात राक्षसों में से एक था (पद्म. सृ. ७५)।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

सुगंधा—एक अप्सरा, जिसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था (म. आ. ११४.५२)।

२. कृतवीर्य राजा की पत्नी।

सुगणा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२६)।

सुगंधी—वसुदेव की तेरह पत्नियों में से एक जिसके पुत्र का नाम पुण्ड्र था (वायु. ९६.१६१)।

सुगावि—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय संधि राजा का नामान्तर।

सुगोप्ता—एक प्राचीन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३७)।

सुगृधि—कश्यप एवं ताम्रा की कन्याओं में से एक।

सुग्रीव—किष्किंधा नगरी का एक सुविख्यात वानर राजा, जो महेंद्र एवं ऋक्षकन्या विरजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.२१४-२४८; भा. ९.१०.१२)। यह वालिन् का छोटा भाई था। वाल्मीकिरामायण के प्रक्षिप्त काण्ड में इसे ऋक्षरजस् नामक वानर का पुत्र कहा गया है, जिसकी ग्रीवा (गर्दन) से उत्पन्न होने के कारण इसे 'सुग्रीव' नाम प्राप्त हुआ था (वा. रा. उ. प्रक्षिप्त. ६)। इस ग्रंथ में अन्यत्र इसे सूर्य का पुत्र अंशावतार कहा गया है। इसके अमात्य का नाम द्विविद था (भा. १०. ६७.२)।

इसके एवं इसकी वानरसेना की सहायता के कारण ही, राम दाशरथि लंकाधिपति रावण जैसे बलाढ्य राक्षस पर विजय पा सका। इस कारण समस्त रामकथाओं में यह अमर हो चुका है।

वालिन् से शत्रुत्व—यह वालिन् का छोटा भाई था, जिस कारण वालिन् के सभी पराक्रमों में एवं साहसों में यह उसकी सहायता करता था। आगे चल कर मायाविन् राक्षस के युद्ध में वालिन् एक वर्ष तक किष्किंधा नगरी में वापस न आया। इस कारण उसे मृत समझ कर, यह किष्किंधा नगरी का राजा बन गया, एवं वालिन्पत्नी तारा को इसने पत्नी के रूप में स्वीकार किया।

एक वर्ष के पश्चात् वालिन् किष्किंधा नगरी लौट आया, एवं इसे भ्रातृद्रोही शत्रु मान कर उसने इसे किष्किंधा राज्य से बाहर निकाल दिया। पश्चात् यह विजनवासी बन कर इधर उधर घूमने लगा। इस समय इसने समस्त भूमंडल का भ्रमण किया, एवं अंत में यह ऋष्यमूक पर्वत पर आ कर रहने लगा, जो स्थान वालि के लिए अगम्य था (वा. रा. कि. ४६; वालिन् देखिये)।

राम से मैत्री—आगे चल कर ऋष्यमूक पर्वत पर, सीता की खोज के लिए आये हुए रामलक्ष्मण से इसकी भेंट हुई। वहाँ अग्नि को साक्ष रख कर इन्होंने आपस में मित्रता प्रस्थापित की, जिसके अनुसार इसने सीताशोध के कार्य में राम की सहायता करने का, एवं राम ने वालिन् का वध कर इसे किष्किंधा का राजा बनाने का आश्वासन दिया।

वालिन् वध—पश्चात् अपने आश्वासन के अनुसार, राम ने वालिन् का वध किया एवं इसे किष्किंधा के राजगद्दी पर बिठाया। पश्चात् इसे अपनी पत्नी रुमा एवं वालिन् की पत्नी तारा ये दोनों पत्नियों के रूप में पुनः प्राप्त हुई (वा. रा. कि. २६; वालिन् एवं राम दाशरथि देखिये)। इसी समय वालिन् के पुत्र अंगद को किष्किंधा का यौवराज्याभिषेक किया गया।

लक्ष्मण का क्रोध—इसके राज्याभिषेक के पश्चात् राम एवं लक्ष्मण चार महीनों तक प्रस्त्रवण पर्वत पर रहे। इस समय, यह विषयसुखों में इतना निमग्न रहा कि, एक बार भी रामलक्ष्मण को मिलने न गया (वा. रा. कि. ३१.२३; ३९; ३३.४३; ४८; ५४; ५५)। इस कारण लक्ष्मण ने स्वयं किष्किंधा नगरी में जा कर इसकी अत्यंत कटु आलोचना की, एवं वह उसका वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। इस समय तारा ने लक्ष्मण को प्रार्थना कि, वह इसे क्षमा करे। स्वयं सुग्रीव भी हाथ जोड़ कर खड़ा हुआ, एवं इसने अपने अकृतज्ञता के लिए लक्ष्मण से बार बार क्षमा माँगी।

पश्चात्ताप—पश्चात् यह स्वयं सीता की खोज करने जाने के लिए प्रवृत्त हुआ, किंतु हनुमत् ने इसे परावृत्त किया, एवं चारों दिशाओं में सीता को ढूँढने के लिए वानरदूत भेज दिये, जिनमें दक्षिण दिशा के वानरों का नेतृत्व उसने स्वयं स्वीकृत किया।

इसी समय हनुमत् ने इसे उपदेश दिया कि, यह अपने वचनों का ख्याल कर राम के उपकारों का बदला योग्य प्रकार से चुकाये। हनुमत् का यह उपदेश सुन कर, इसे अपने कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ, एवं सीता की मुक्तता करने के लिए अपनी सारी सेना सुसज्ज रखने की आज्ञा इसने अपने सेनापति नील को दी।

युद्ध की तैयारी--हनुमत् के द्वारा सीता का शोध लगाये जाने पर इसने समस्त वानरसेना एकत्रित कर रावण पर आक्रमण करने की तैयारी की। लंका पर आक्रमण करने के लिए समुद्र में सेतु बँधवाने की कल्पना भी इसीने ही राम को दी, एवं उसको धीरज बँधाया। पश्चात् अपनी संपूर्ण सेना के साथ यह समुद्रतट पर आ पहुँचा (वा. रा. यु. २)।

समुद्रतट पर पहुँचते ही रावण ने इसे संदेश भेजा की यह राम की सहायता न करे, किन्तु यह अपने निश्चय पर अटल रहा, एवं इसने रावण को प्रतिसंदेश भेजा।

> न मेऽसि मित्रं न तथानुकम्प्यो,
> न चोपकर्तासि न मे प्रियोऽसि ।
> अरिश्च रामस्य महानुबन्धः,
> स मेऽसि वालीव वधार्ह वध्यः ॥
> (वा. रा. यु. २०.२३)

(तुम मेरे मित्र, उपकारकर्ता, प्रिय एवं मेरे प्रति दया भावना रखनेवाले नहीं हो। मेरे मित्र राम के तुम शत्रु होने के कारण, वालिन् की भाँति तुम भी वध करने योग्य ही हो)।

बाद में यह स्वयं छलांग मार कर रावण के राजप्रासाद में पहुँच गया, जहाँ इसने उसका मुकुट गिरा दिया। इस प्रकार राम रावण युद्ध प्रारंभ हुआ (वा. रा. यु. ४०)।

राम-रावण युद्ध में--इस युद्ध में इसने एवं इसकी वानरसेना ने अत्यधिक पराक्रम दिखाया। इसने निम्नलिखित राक्षसों के साथ युद्ध कर उनका वध कियाः--
१. कुंभकर्णपुत्र कुंभ (वा. रा. यु. ७५-७६); २. रावण-सेनापति विरुपाक्ष; ३. रावणसेनापति महोदर (वा. रा. यु. ९७)। कुंभकर्ण एवं रावण से भी इसने युद्ध किया था, जिन दोनों युद्धों में यह उनके हाथों परास्त हुआ (वा. रा. यु. ५९; ६७)।

रामरावणयुद्ध में लक्ष्मण जब मूर्च्छित हुआ, तब इसने वानरसेना का धीरज बँधा कर मूर्च्छित लक्ष्मण को युद्धभूमि से उठाया, एवं शिबिर पहुँचा दिया (वा. रा. यु. ५०)।

कुंभकर्णवध के पश्चात् इसने हनुमत् को आज्ञा दी कि, लंका को आग लगा दी जाये। हनुमत् के द्वारा वैसा ही किये जाने पर लंका के सभी राक्षस इधर उधर भागने लगे। उस समय इसने लंका के सभी दरवाजे रोंक कर राक्षसों का संहार किया।

राम का राज्याभिषेक--राम-रावण युद्ध समाप्त होने पर, राम दाशरथि का राज्यारोहणसमारंभ अयोध्या में संपन्न हुआ, जहाँ यह अपने समस्त परिवार के साथ उपस्थित हुआ था। उस समारोह में राम ने इसका अत्यधिक सत्कार किया, एवं युद्ध में यशस्विता प्राप्त होने का बहुत सारा श्रेय इसे प्रदान किया (वा. रा. १२३-१२८)। बाद में राम ने जब देहत्याग किया, तब किष्किंधा के राजगद्दी पर अंगद को बिठा कर इसने भी मृत्यु स्वीकार ली।

चरित्रचित्रण--वाल्मीकि रामायण में सुग्रीव का महत्त्व राजनैतिक है, जहाँ इसे 'शरण्य' (शरण जाने के लिए योग्य) कहा गया है। इसकी मैत्री के कारण राम दाशरथि सीता को पुनः प्राप्त कर सका, जिस संबंध में इसकी प्रशंसा राम के द्वारा भी की गयी है (वा. रा. कि. ७.१७-१८)।

सुग्रीव कुशल सैन्यसंचालक था, एवं इसका भौगोलिक ज्ञान भी परमकोटि का था (वा. रा. कि. ४.१७-२९; ४१.७-४५; ४२.६-४९)।

सुग्रीवचरित्र के दोष--वाल्मीकि रामायण में इसके चरित्र के निम्नलिखित दोषों का निर्देश अंगद के द्वारा किया गया है.-१. मायाविन् राक्षस के युद्ध के समय वालिन् को गुफा में बन्द करना; २. वालिवध के पश्चात् वालिपत्नी तारा का अपहरण करना; ३. राम दाशरथि को दिये गये वचन का भंग करना (वा. रा. कि. ५५.२-५)।

परिवार--इसकी तारा एवं रुमा नामक दो पत्नियाँ थी। इसके विजनवास में इसके दोनों पत्नियों को इसके भाई वालिन् ने भ्रष्ट किया (वा. रा. कि. १८-२२)। वालिन्‌वध के पश्चात् इसे पुनः राज्यप्राप्ति होने पर, इसकी ये दोनों पत्नियाँ पुनः एक बार इसके पास रहने लगी। इसकी मोहना नामक अन्य एक पत्नी का निर्देश भी प्राप्त है (पद्म. पा. ६०)।

इसका कोई पुत्र न था, जिस कारण इसकी मृत्यु के पश्चात् अंगद किष्किंधा नगरी का राजा बन गया।

मानस में--तुलसी द्वारा विरचित मानस में सुग्रीव का चरित्रचित्रण एक राजनीतिज्ञ के नाते नहीं, बल्कि राम के एक शरणापन्न सेवक एवं सखा के नाते किया गया है। इसी कारण राम से इसकी मित्रता राजनैतिक गठ

बंधन नहीं, बल्कि आध्यात्मिक एकात्मता है, जो इसके निष्कपट हृदय का द्योतक है। इसी कारण 'मानस' का सुग्रीव राम के परिवार के अन्य लोगों की भाँति केवल निमित्तमात्र ही है, इसकी असली प्रेरक शक्ति तो स्वयं राम ही है।

सुग्रीवी—कश्यप एवं ताम्रा की एक कन्या, जो इस संसार के समस्त अश्व, उष्ट्र एवं गर्दभों की आद्य जननी मानी जाती है (मत्स्य. ६.३०)।

सुघोर—एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष एवं देवों के बींच हुए युद्ध में कार्तिकेय के द्वारा मारा गया (पद्म सृ.७५)।

सुचंद्र—एक देवगंधर्व जो, कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ६९.४६)।

२. एक सैंहिकेय असुर, जो कश्यप एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.३०)।

३. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार हेमचंद्र राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.६१.१३)। इसे काली देवी की कृपा से एक कवच प्राप्त हुआ था, जिस कारण यह युद्ध में अजेय हुआ था।

कार्तवीर्य एवं परशुराम के बीच हुए युद्ध में यह कार्तवीर्य के पक्ष में शामिल था (ब्रह्मांड. ३.३९.१८–५३)। उस समय इसके रथ में स्वयं कालीदेवी अवतीर्ण हुई, जिसने परशुराम के द्वारा फेंके गये हर एक शस्त्र-अस्त्र को भक्ष्य करना प्रारंभ किया। इस कारण भयभीत हो कर परशुराम ने इसे अपना 'कालीकवच' उतार कर देने की प्रार्थना की। इस पर इस उदारचरित राजा ने अपना कवच उतार कर परशुराम को दे दिया। कवच प्राप्त होते ही परशुराम ने इसका वध किया।

४. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१२९)।

५. अंधकवंशीय राजा, जो सूर्यग्रहण के समय 'स्यमंतपंचक' क्षेत्र में तीर्थयात्रा के लिए गया था।

सुचल—(सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुमति राजा का पुत्र था। भागवत एवं विष्णु में इसे 'सुकल' एवं मत्स्य में इसे 'अचल' कहा गया है।

सुचारु—धृतराष्ट्रपुत्र 'चारु' का नामान्तर। इसे 'चारुचित्र' नामान्तर भी प्राप्त था। अपने अन्य सात भाइयों के साथ इसने अभिमन्यु पर आक्रमण किया था।

२. कृष्ण एवं रुक्मिणी का एक पुत्र।

३. (सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार प्रतिबाहु राजा का पुत्र था (वायु. ९६.२५१)। यह वज्र का पौत्र था, एवं इस प्रकार कृष्ण के छठवें पीढ़ी में उत्पन्न हुआ था।

सुचित्त—एक राजा, जो सत्यधृति नामक राजा का पिता था (सत्यधृति सौचित्य देखिये)।

सुचित्त सैलन-एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.४.४)।

सुचित्ति—सुवित्ति नामक अंगिराकुलोत्पन्न मंत्रकार का नामान्तर।

सुचित्र—(सो. कुरु.) चित्र नामक धृतराष्ट्रपुत्र का नामान्तर। इसे 'सुचारु' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. पांचाल देश का एक महारथी राजा, जिसके पुत्र का नाम चित्रवर्मन् था। भारतीय युद्ध में द्रोण ने इन दोनों का वध किया (म. द्रो. २०.१५५*, पंक्ति. ८-२२)।

३. शिवदेवों में से एक।

सुचिरा—एक राजकन्या, जो श्वफल्क एवं गांदिनी की कन्या थी (भा. ९.२४.१७)।

सुचेतस्—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वीतहव्य-वंशीय गृत्समद राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वर्चस् था (म. अनु. ३०.६१)।

२. द्रुह्युवंशीय प्रचेतस् राजा का नामान्तर (प्रचेतस् ७. देखिये)।

सुच्छाया—अग्नि की एक कन्या, जो ध्रुवपुत्र शिष्ट राजा की पत्नी थी। इसके कृप, रिपुंजय, वृक आदि पुत्र थे।

सुजन—एक देव, हो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था।

सुजन्तु—(सो. अमा.) अमावसुवंशीय पूरु राजा का नामान्तर (पूरु. ३. देखिये)। इसे सुहोत्र नामान्तर भी प्राप्त था।

सुजन्य—एक देव, जो बारह भार्गव देवों में से एक था।

सुजय—भव्य देवों में से एक।

२. एक राजा, जिसने अश्वमेध यज्ञ के समय पांडवों की मदद की थी (जै. अ. १३)।

सुजात—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५.१५)।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार भरत राजा का पुत्र था।

३. एक वानर राजा, जो पुलह एवं श्वेता के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१८०–१८१)।

सुजातवक्र--एक आचार्य, जिसका निर्देश ऋग्वेदीय ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.३) ।

सुजाता--महर्षि उद्दालक की कन्या, जो कहोल ऋषि की पत्नी, एवं अष्टावक्र की माता थी (म. व. १३२.७)।

२. सुराष्ट्र राजा की कन्या,जो दुर्गम राजा की पत्नी थी।

सुजातेय--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

सुजानु--एक ऋषि, जो शांतिदौत्य के लिए जानेवाले श्रीकृष्ण से मार्ग में मिले थे (म. उ. ३८८* पाठ)।

सुज्ञ--दशरथ राजा का मंत्री, जिसके निम्नलिखित दस पुत्र थे:--१. जितश्रम; २. धार्मिक; सुकेतु; ४.शत्रुसूदन; ५. चंद्र; ६. मद; ७. शल; ८. काल; ९. मल्ल; १०. सिंह (जै. अ. ३४.४३) ।

सुज्येष्ठ--(शुंग. भविष्य.) एक राजा, जो अग्निमित्र राजा का पुत्र, एवं वसुमित्र राजा का पिता था (भा. १२.१६.१७) ।

सुतंजय--त्रिगर्त देश के 'श्रुतंजय' राजा का नामांतर (श्रुतंजय ३. देखिये) ।

सुतद्वाज--(सू. निमि.) विदेह देश के सत्यध्वज राजा का नामांतर।

सुतनु--आहुक (उग्रसेन) राजा की कन्या, जो अक्रूर की पत्नी थी (म. स. १३.१२)। मत्स्यादि में इसे वसुदेव की पत्नी कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम पौण्ड्रक दिया गया है (मत्स्य. ४४.७६; ४६.२१; विष्णु. ४.१४.५) ।

२. उग्रसेन राजा का पुत्र (वायु. ९६.१३२) ।

३. (सो. कुरु.) युधिष्ठिर राजा की कन्या, जिसका विवाह वज्र राजा के पुत्र अश्वसुत से हुआ था (वायु. ९६.२५०) ।

४. कलापग्राम में रहनेवाले एक ब्राह्मण का पुत्र (स्कंद. १.२.६) ।

सुतपस्--सावर्णि मन्वंतर का एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित बीस देव शामिल थे:--आर्चिष्मत्, कीर्ति, क्रतु, कृतिनेमि, तपस्, तेजस्, द्योतन, धर्म, धृति, प्रभाकर, प्रभास, बुध, भानु, मासकृत्, यशस्, रश्मि, विराज्, एवं शुक्र (ब्रह्मांड. ४.१.१२) ।

२. एक ऋषि, जो निवृत्तिचक्षु ऋषि का पुत्र था। एक बार इसने उत्पलावती से संभोग की प्रार्थना की। उसके द्वारा इसकी प्रार्थना अस्वीकार किये जाने पर, इसने उसे मृगी बनने का शाप दिया। उत्पलावती के द्वारा उःशाप की माँग किये जाने पर, उसके गर्भ से 'लोल' नामक तामस मनु निर्माण होने का उःशाप इसने उसे प्रदान किया (मार्क. ७१) ।

३. भरद्वाजकुलोत्पन्न एक ऋषि। इसकी कुल दो पत्नियाँ थीं। उनमें से एक पितृकन्या थी, जिससे इसे कल्याणमित्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

इसकी दूसरी पत्नी पर सूर्य ने बलात्कार किया,जिससे इसे अश्विनीसुत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। अपनी इस व्यभिचारिणी पत्नी का, एवं उसके पुत्र का इसने त्याग किया। किंतु आगे चल कर स्वयं कृष्ण के द्वारा आज्ञा दिये जाने पर, इसने अपने इन स्त्रीपुत्रों को पुनः स्वीकार किया (ब्रह्म. वै. १.११) ।

४. सावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

५. एक मरुत्, जो मरुतों के पहले गण में समाविष्ट था।

६. एक प्रजापति, जिसने इस पृथ्वी पर वसुदेव के रूप में जन्म लिया था (भा. १०.३.३२) ।

७. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

८. तामस मनु के पुत्रों में से एक।

९. दक्षसावर्णि मन्वंतर का एक ऋषि।

१०. रुद्रसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

११. रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

१२. रौच्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

१३. (सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, एवं वायु के अनुसार हेम राजा का पुत्र, एवं बलि राजा का पिता था (भा. ९.२३.४) । मत्स्य में इसे सेन राजा का पुत्र कहा गया है।

१४. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अंतरिक्ष राजा का पुत्र, एवं अमित्रजित् राजा का पिता था (भा. ९.१२.१२) । वायु, विष्णु, मत्स्य, एवं भविष्य में इसे क्रमशः 'सुपर्ण,' 'सुवर्ण,' 'सुषेण,' एवं 'सुवर्णांग' कहा गया है।

१५. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार परिष्णव (परिप्लव) राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.८३) । पाठभेद-सुनय।

सुतमित्र--एक मरुत्, जो मरुतों के द्वितीय गण में से एक था।

सुतंभर--एक व्यक्तिनाम (ऋ. ९.६.५) ।

सुतंभर आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.११-१४) । इसके सूक्त में 'नहुषपुत्र' राजा का निर्देश तप्प्र

है (ऋ. ५.१३.६)। ऋग्वेद में अन्यत्र यही नाम एक विशेषण के रूप में प्रयुक्त किया गया है (ऋ. ५.४४.१३)।

सुतरा—श्वफल्क राजा की कन्याओं में से एक।

सुतसोम--(सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो भीमसेन एवं द्रौपदी का पुत्र था। इसकी उत्पत्ति विश्वेदेवों के अंश से हुई थी। भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था:--१. विकर्ण (म. भी. ४३. ५५); २. दुर्मुख (म. भी. ७५,३६-३७); ३. विविंशति (म. द्रो. २४.२४); ४. अश्वत्थामन् (म. क. ३९.१५-१६)। अन्त में अश्वत्थामन् के द्वारा किये हुए रात्रिसंहार के समय इसका वध हुआ (म. सौ. ८.५२)।

सुतहोत्र--(सो. क्षत्र.) क्षत्रवंशीय सुहोत्र राजा का नामान्तर (सुहोत्र २. देखिये)। इसके पुत्र का नाम शल था (शल ८. देखिये)।

सुतार--एक शिवावतार, जो वैवस्वत मन्वंतर के दूसरे युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। ध्यानयोग की सहायता से इसने मोक्ष प्राप्त किया था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:--दुंदुभि, शतरूप, हृषीक एवं केतुमत् (शिव. शत. ४)।

२. अनुशाल्व राजा का सेनापति।

सुतारा--सुप्रभ गंधर्व की कन्या (पद्म. स्व. २२)। पद्म में अन्यत्र इसे चन्द्रकान्त गंधर्व की कन्या कहा गया है (पद्म. उ. १२८)।

सुतीक्ष्ण--एक ऋषि, जो अगस्त्य ऋषि का शिष्य था। ज्ञान एवं कर्म के समुच्चय की शिक्षा अगत्स्य ने इसे दी (यो. वा. १)। रामकुण्ड पर दीर्घकाल तक तपस्या कर त्रैलोक्य में इच्छानुरूप विचरण करने का सामर्थ्य इसने प्राप्त किया था (स्कंद. ३.१.१८)। राम के वनवासकाल में, वह इसके आश्रम में दो बार आ कर ठहरा था।

सुतेजन—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में युधिष्ठिर का सहायक था (म. द्रो. १३२.४०)।

सुतीर्थ--कुरुवंशीय सुनीथ राजा का नामान्तर (सुनीथ ५. देखिये)।

सुतेमनस् शांडिल्यायन—एक आचार्य, जो अंशु धानंजय्य नामक आचार्य का शिष्य, एवं सुनीथ कापटव नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

सुत्रामन्--रौच्य मन्वन्तर का एक गोत्रकार।

सुत्वन्—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से सुमन्तु नामक आचार्य का शिष्य था।

सुत्वन् कैरिशिय भार्गायण--एक राजा, जिसे मैत्रेय कौषारव नामक आचार्य ने 'ब्राह्मण परिमर' नामक अभिचार विद्या सिखायी थी। इस विद्या के कारण अपने पाँच शत्रु राजाओं का वध कर, यह महान् राजा बन गया (ऐ. ब्रा. ८.२८.१८)।

सुदक्षिण—पांडवपक्ष का एक राजा, जिसे द्रोणाचार्य वध कर रथ से नीचे गिरा दिया था (म. द्रो. २०.४४)।

२. कामरूप देश का एक शिवभक्त राजा, जिसका रक्षण करने के लिए भीमाशंकर ने भीमासुर का वध किया था (शिव. शत. ४२.१९)।

सुदक्षिण कांबोज--एक राजा, जो कांबोज (काबुल) देश का अधिपति था। महाभारत में इसका निर्देश 'कांबोजाधिपति' (म. आ. १७७.१५), एवं 'कांबोज' (म. स. २४.२२) नाम से किया गया है। महाभारत में अन्यत्र इसे शक एवं यवन लोगों का राजा कहा गया है (म. उ. १९.२१)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, अर्जुन ने अपने पश्चिम दिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २४.२२)।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं उस पक्ष के उत्कृष्ट रथियों में इसकी गणना की जाती थी (म. उ. १६३.१)। इस युद्ध में सहदेवपुत्र श्रुतवर्मन् के साथ इसका घमासान युद्ध हुआ था (म. भी. ४३. ६४)। अन्त में अर्जुन ने इसका एवं इसके छोटे भाई का वध किया (म. द्रो. ६७-६८; क. ४०.१०५)। इसके मृत शरीर को देख कर इसकी पत्नी ने अत्यधिक विलाप किया (म. स्त्री. २५.१.५)।

सुदक्षिण काशिराज—एक राजा, जो पौंड्रक वासुदेव के साथ कृष्ण का शत्रुत्व करनेवाले काशिराज का पुत्र था।

इसके पिता का कृष्ण के द्वारा वध किये जाने पर, इसने अपने पिता का बदला लेने के लिए कृष्ण का वध करने की घोर प्रतिज्ञा की, एवं तत्प्रीत्यर्थ वाराणसी क्षेत्र में शिव की तपस्या प्रारंभ की। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर, शिव ने इसे जारणमारण की अधिष्ठात्री देवी दक्षिणाग्नि की आराधना करने का आदेश दिया।

शिव के उपर्युक्त आदेशानुसार, इसने अपने ऋत्विजों के साथ दाक्षिणाग्नि की आराधना प्रारंभ की। इस आराधना के कारण इसके यज्ञकुण्ड से एक महाभयंकर 'अभिचार' अग्नि बाहर निकली, एवं दशदिशाओं को जलाती हुयी द्वारका नगरी में पहुँच गयी। अक्षक्रीडा में

निमग्न हुए कृष्ण को वह जलानेवाली ही थी कि, कृष्ण ने अपना सुदर्शन-चक्र छोड़ कर उस अग्नि को लौटा दिया। पश्चात् उस अग्नि ने वाराणसी की ओर पुनः एक बार मुड़ कर, इसे एवं इसके ऋत्विजों को जला कर भस्म कर दिया (भा. १०.६६.२७-४२)।

सुदक्षिण क्षैमि--एक आचार्य, जिसे तिरस्कृत मान कर एक यज्ञसमारोह से निकाल दिया था। पश्चात् इसके स्थान पर, शुक्र एवं गोश्रु जाबालि नामक आचार्यों की उस यज्ञ में नियुक्ति की गयी थी (जै. उ. ब्रा. ३.६. ३; ७.१.३-६)।

सुदक्षिणा--अंशुमत राजा के पुत्र दिलीप (प्रथम) राजा की पत्नी।

सुदत्ता--श्रीकृष्ण की एक पत्नी। द्वारका में स्थित इसके प्रासाद का नाम 'केतुमत्' था (म. स. परि. १. २१.१२६४)।

सुदती--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.८)।

सुदत्त पाराशर्य--एक आचार्य, जो जनश्रुत वारक्य नामक आचार्य का शिष्य, एवं आषाढ उत्तर नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.४१; ४.१७)।

सुदमोदम--दम नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

सुदरिद्र--कांपिल्य नगरी का एक ब्राह्मण, जिसके वेदविद्यानिपुण पुत्रों के नाम धृतिमत, तत्त्वदर्शिन्, विद्याचंड, एवं सत्यदर्शिन् थे (पितृवर्तिन् देखिये)।

सुदर्शन--एक विद्याधर, जो आंगिरस ऋषि के शाप के कारण सर्प बन गया था। आगे चल कर, इसने कृष्णपिता नंद को निगल लिया, जिस कारण कृष्ण ने इसका वध कर, इसे मुक्ति प्रदान की (भा. १०.३४. १-१८)।

२. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का एक पुत्र।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.९९; श. २६.४८)।

४. कौरवपक्ष का एक राजा, जो सात्यकि के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ९४.१४)।

५. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुआ था (भा. १.९.७)।

६. अग्निदेव का एक पुत्र, जो इक्ष्वाकुवंशीय दुर्योधन की कन्या सुदर्शना का पुत्र था। ओघवत् राजा के ओघवती नामक कन्या से इसका विवाह हुआ था (भा. ९.२.१८)।

गृहस्थाश्रमधर्मांतर्गत अतिथिसत्कार आदि का आचरण करने के कारण, प्रत्यक्ष मृत्यु पर विजय प्राप्त कर यह ब्रह्मलोक में प्रविष्ट हुआ था। इसकी पत्नी ओघवती भी तपस्विनी थी, जिसने अपने तपोबल से अपना आधा शरीर एक नदी में रूपांतरित किया था। अपने बचे हुए आधे शरीर से वह अपने पति के साथ स्वर्लोक गयी (म. अनु. ३. ८४)।

७. एक राजा, जो गांधार देश के नग्नजित् राजा के द्वारा बंदी बनाया गया था। कृष्ण ने नग्नजित् के पुत्रों का वध कर, इसे बंधमुक्त किया, (म. उ. ४७.६९)।

८. एक नरेश, जो भारतीय युद्ध में पांडव पक्ष में शामील था। इस युद्ध में अश्वत्थामन् के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १७.६३)।

९. (सू. इ.) एक राजा, जो मनुवंशीय दीर्घबाहु राजा का पुत्र था। काशिराज की कन्या इसकी पत्नी थी, एवं वसिष्ठ ऋषि इनके पुरोहित थे। संपूर्ण पृथ्वी जीत कर, यह चक्रवर्ती सम्राट् बन गया था।

एक बार महाकाली देवी ने इसे सपने में आकर दृष्टांत दिया कि, पृथ्वी में जल्द ही जलप्रलय होनेवाला है। पश्चात् महालक्ष्मी के आदेशानुसार, यह अपनी पत्नी एवं पुरोहित वसिष्ठ के साथ हिमालय पर्वत के गुफा में जा छिपा। तदुपरांत उत्तर दिशा का हिम समुद्र, पश्चिम दिशा का रत्नाकर, एवं दक्षिण दिशा का वाडव समुद्र, इन तीनों में स्थित समस्त देश जलप्लावन से विनष्ट हुए।

आगे चल कर दस सालों के बाद, पृथ्वी का जलप्रलय समाप्त हो कर सारी पृथ्वी पुनः एक बार आबाद हो गयी। इस पर वैशाख शुक्ल तृतीया के दिन यह अयोध्या लौट आया, एवं पुनः एक बार राज्य करने लगा (भवि. प्रति. १.१)।

कालिका पुराण के अनुसार, जलप्लावन के पश्चात् हिमालय पर्वत का ही एक अरण्य तोड़ कर, इसने वहाँ खांडवी नामक नगरी की स्थापना की थी। कालोपरांत भैरववंश में उत्पन्न विजय नामक राजा ने इसका वध कर, इसका राज्य जीत लिया (कालि. ९२)।

१०. (सू. इ.) एक राजा, जो ध्रुवसंधि राजा का पुत्र, एवं कुरुवंशीय अग्निवर्ण राजा का पिता था (भा. ९.१२. ५)। इसकी माता का नाम मनोरमा था। देवी उपासना

का माहात्म्य करने के लिए इसकी कथा देवी भागवत में दी गयी है।

इसकी सौतेली माता लीलावती के षड्यंत्रों के कारण इसे राज्य भ्रष्ट होना पड़ा, एवं यह अपनी माता के साथ भारद्वाज ऋषि के आश्रम में रहने लगा, जहाँ इसने देवी की उपासना प्रारंभ की।

आगे चल कर, देवी की कृपा से शशिकला नामक राजकन्या ने इसका स्वयंवर में वरण किया। पश्चात् इसे अपना विगत राज्य भी देवी की कृपा से पुनः प्राप्त हुआ (दे. भा. ३.१३-२५)।

११. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था (वायु. ६९.१५६)।

१२. एक गंधर्व, जो गालव ऋषि के शाप के कारण वैताल बन गया था। 'वेतालवरदतीर्थ' में स्नान करने के कारण यह मुक्त हुआ (स्कंद. ३.१.९)।

सुदर्शना—माहिष्मती के नील (दुर्योधन) राजा की अनुपम सुंदरी कन्या, जिसकी माता का नाम नर्मदा (नदी) था। यह प्रतिदिन अपने पिता के अग्निहोत्रगृह में अग्नि को प्रज्वलित करने के लिए उपस्थित होती थी। इसके दर्शन से अग्निदेव इससे प्रेम करने लगा, एवं अन्त में इसका विवाह उसीके साथ संपन्न हुआ (म. स.२९९*)। अग्नि से इसे सुदर्शन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. २.३६)।

२. सुद्युम्न राजा की पत्नी (सुद्युम्न ५. देखिये)।

सुदान—शिवदेवों में से एक।

सुदान्त—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार हृदीक राजा का पुत्र था (वायु. ९६.१४०)।

सुदामन्—सीरध्वज जनक राजा का एक मंत्री।

२. कृष्ण के बालमित्र कुचैल का नामान्तर। भागवत में प्राप्त इसकी कथा में, इसका निर्देश सर्वत्र 'कुचैल' नाम से ही किया गया है। किन्तु लोकश्रुति में यह सुदामन् नाम से ही अधिक सुविख्यात है (कुचैल देखिये)।

श्रीकृष्ण ने इसे एक सुवर्ण नगरी प्रदान की थी, जो कई अभ्यासकों के अनुसार आधुनिक सुराष्ट्र में स्थित पोरबंदर मानी जाती है। कृष्ण की कृपा से इसे स्वर्गलोक से भी श्रेष्ठ तर 'गोलोक' की प्राप्ति हुई।

३. दशार्ण देश का एक राजा, जो चेदिराज सुबाहु एवं विदर्भराजकन्या दमयंती का पितामह था (म. व. ६६. १२)।

इसकी कुल दो कन्याएँ थीं, जिनमें से एक का विवाह विदर्भ राजा भीम से, एवं दूसरे का विवाह चेदिराज वीरबाहु से हुआ था।

४. मोदपुर देश का एक राजा (म. स. २४.१०)।

५. पाण्डवों के पक्ष का एक राजा, जिसके रथ के अश्व मृणालिनी के समान नीले, एवं श्येनपक्षी के समान वेगवान् थे (म. द्रो. २२.४२)।

६. काशिदेश का एक राजा, जो अभिभू (सुकेतु) नामक राजा का पुत्र था। अपने पिता के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित हुआ था।

७. उत्तरभारत का एक लोकसमूह, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २४.१०)।

८. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१०)।

९. एक गोप, जो कृष्ण के आठ प्रमुख गोप सखाओं में से एक था (दे. भा. ९.१८.२)। अपने अगले जन्म में यह शंखचूड नामक राक्षस बना था (शंखचूड २. देखिये)।

१०. चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

११. कंस का एक माली, जिसने मथुरा में आये हुए कृष्ण एवं बलराम को पुष्पमालाएँ अर्पित की थी (भा. १०.४१.४३-५२)।

१२. एक यादव राजा। जरासंध के द्वारा किये मथुरा नगरी के आक्रमण के समय, इस पर उस नगरी के उत्तर द्वार के संरक्षण का भार सौंपा गया था।

सुदामिनी—वसुदेवबन्धु शमीक की पत्नी। इसे सुमित्र एवं अर्जुनपाल नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

सुदास—(सो. नील.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार च्यवन राजा का पुत्र, एवं सहदेव राजा का पिता था (वायु. ९९.२०८; विष्णु. ४.१९.७१)। मत्स्य में इसे चैद्य राजा का पुत्र कहा गया (मत्स्य. ५०.१५)। इसे बृहद्रथ नामान्तर भी प्राप्त था। पौराणिक साहित्य में प्राप्त इसकी वंशावलि उत्तर पांचाल देश के सुदास पैजवन राजा से काफ़ी मिलती जुलती है, जिससे प्रतीत होता है कि ये दोनों एक ही थे (सुदास पैजवन देखिये)।

२. (सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, भागवत के अनुसार बृहद्रथ राजा का पुत्र, एवं शतानीक राजा का पिता था (भा. ९.२२.४३)। अन्य पुराणों में इसे तिमि राजा का पुत्र कहा गया है।

इसके इस औद्धत्य से क्रुद्ध हो कर प्रमति ऋषि ने इसे तत्काल वैश्य होने का शाप दिया। पश्चात् इसके द्वारा उःशाप की प्रार्थना किये जाने पर प्रमति ऋषि ने इसे उःशाप दिया, 'एक क्षत्रिय के द्वारा तुम्हारी कन्या का हरण किया जायेगा, जिस कारण अप्रत्यक्षतः तुम क्षत्रिय बनोगे'।

प्रमति ऋषि के उःशाप के अनुसार इसकी कन्या सुप्रभा का नाभाग राजा ने हरण किया, एवं इस प्रकार यह पुनः क्षत्रिय बन गया (मार्के. १११-११२)।

१३. एक ऋषि; जिसे मिलने के लिए राम अपने परिवार के साथ उपस्थित हुआ था (पद्म. पा. ११७)।

१४. एक वैदिक यज्ञकर्ता (ऋ. ८.५.६)।

सुदेव काश्यप--एक आचार्य। ब्रह्मचर्यव्रत का भंग होने पर किये जाने वाले प्रायश्चित्त का विधान इसके द्वारा बताया गया है (तै. आ. २.१८)।

सुदेवला-ऋतुपर्ण ऋषि की पत्नी (बौ. श्रौ. २०.१२)।

सुदेवा-काशी के देवराज राजा की कन्या, जो इक्ष्वाकु राजा की पत्नी थी (पद्म. भू. ४२.१-५)।

२. एक स्त्री, जिसकी कथा स्त्री के द्वारा पति के साथ किये गये दुर्व्यवहार के दुष्परिणाम कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. भू. ४७.५२)।

सुदेवी--मेरुकन्या मेरुदेवी का नामान्तर (भा. २. ७.१०)।

२. सुदास पैजवन राजा की पत्नी (ऋ. १.११२.१९; सुदास पैजवन देखिये)।

सुदेष्ण--कृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१)।

२. एक प्रमुख यादव राजा, जिसे मिलने के लिए स्वयं देवराज इंद्र उपस्थित हुआ था।

सुदेष्णा--बलि आनव राजा की पत्नी, जिसे दीर्घतमस् ऋषि से निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थेः- १. अंग; २. वंग; ३. कलिंग; ४. पुण्ड्र; ५. सुह्म (म. आ. ९८.३०; भा. ९.२३; ह. वं. १. ३१; बलि आनव देखिये)।

२. मत्स्यनरेश विराट की पत्नी, जो रथकार केकय की द्वितीय पत्नी मालवी की कन्या थी। इसे चित्रा नामान्तर भी प्राप्त था। इसके छोटे भाई का नाम कीचक था। इसके उत्तर एवं उत्तरा नामक दो संतानें थी (म. वि. परि. १.१९-३२-३७; विराट देखिये)।

३. गांधारराज सुबल की एक कन्या, जो गांधारी की छोटी बहन, एवं धृतराष्ट्र की पत्नियों में से एक थी।

सुद्यु--(सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चारुपद राजा का पुत्र, एवं बहुगव राजा पिता का पुत्र था (भा. ९.२०.३)। इसे धुंधु एवं सुद्युम्न नामान्तर भी प्राप्त थे। विष्णु में इसे अभयद राजा का पुत्र, एवं बहुगव राजा का पिता कहा गया है (विष्णु ४. १९.१)।

सुद्युम्न--वैवस्वत मनु के इल (इला) नामक पुत्र का नामान्तर (इल देखिये)।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

३. एक न्यायी राजा, जिसने शंख एवं लिखित नामक दो ऋषि बंधुओं के बीच हुए वाद का अत्यंत निःपक्षपाती वृत्ति से न्याय दिया (म. शां. २४; शंखलिखित १. देखिये)। आगे चल कर इसने लिखित ऋषि को विपुल दान प्रदान किया (म. अनु. १३७.१९)।

महाभारत में अन्यत्र इसे युवनाश्व राजा का पिता कहा गया है (म. व. १२६.९)। इस ग्रंथ में निर्दिष्ट यमसभा के वर्णन में इसका निर्देश प्राप्त है (म. स. ८.१५)।

४. एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम सुदर्शना था। राजस्थल नामक तीर्थ में स्नान करने के कारण इसे पुत्र-प्राप्ति हुई (स्कंद. ५.१.१४)।

सुधनु--(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो कुरु राजा का पुत्र एवं सुहोत्र राजा का पिता था (भा. ९.२२.४)। मत्स्य एवं वायु में इसे सुधन्वन् कहा गया है।

चेदि एवं मगध देश के ऋक्षवंशीय राजघरानों का यह मूल पुरुष माना जाता है। इसके वंश की सविस्तृत जानकारी अनेक पुराणों में दी गयी है, जहाँ उपरिचर वसु इसके वंश का प्रमुख राजा बताया गया है (उपरिचर वसु देखिये)।

२. एक संशप्तक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था (म. द्रो. १७.२०)। अंत में यह अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १७.२०-२१)।

३. पाण्डवपक्ष का एक पांचाल योद्धा, जो द्रुपद राजा का पुत्र एवं वीरकेतु का भाई था (म. द्रो. २२.१६६.*)। इसके रथ के अश्व कृष्णवर्णीय, एवं विभिन्न वर्ण के पुष्पों से सुशोभित थे (म. द्रो. १२२.१६६* पंक्ति. ३)। इसके भाई वीरकेतु के मारे जाने पर इसने अपने भाईयों सहित द्रोण पर आक्रमण किया। इस युद्ध में द्रोण ने इसे रथहीन कर के इसका वध किया (म. द्रो. ९८. ३७-४०)।

४. एक राजा, जिसे मांधातृ ने जीत लिया था (म. द्रो. परि १.८.१५)।

सुधन्वन्--एक ब्राह्मण, जो धनुर्वेद एवं अर्थशास्त्र में निष्णात था (वा. रा. अयो. १००.१४)।

२. सांकाश्य नगरी का एक राजा, जो सीरध्वज जनक राजा का समकालीन था। इसने सीरध्वज की कन्या सीता से विवाह करना चाहा। इसका यह प्रस्ताव सीरध्वज द्वारा अस्वीकार किये जाने पर, इसने मिथिला नगरी पर आक्रमण किया। पश्चात् हुए युद्ध में यह स्वयं ही मारा गया (वा. रा. बा. ७१.१६-२१)। इसकी मृत्यु के पश्चात् सांगाश्य नगरी पर सीरध्वज का बंधु कुशध्वज राज्य करने लगा।

३. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शाश्वत राजा का पुत्र था।

४. (सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सत्यधृत राजा का, वायु एवं भागवत के अनुसार सत्यहित का, एवं मत्स्य के अनुसार सत्यधृति राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.१९.८२; वायु. ९९.२२५)। भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः जह्नु एवं धनुष कहा गया है।

५. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का कनिष्ठपुत्र, जो अपने पिता के लिखित एवं शंखध्वज नामक दुष्टबुद्धि प्रधानों के षड्यंत्र के कारण मृत्यु का शिकार बननेवाला था, किन्तु कृष्णभक्ति के कारण जीवित रहा (लिखित २. देखिये)।

सुधन्वन् आंगिरस--एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो अंगिरस् ऋषि के पुत्रों में से एक था। इसने पतंचल काप्य की कन्या के शरीर में प्रविष्ट हो कर भुज्यु लाह्यायनि नामक आचार्य को आत्मज्ञानविषयक ज्ञान प्रदान किया था। इसी ज्ञान के बल से आगे चल कर भुज्यु लाह्यायनि ने याज्ञवल्क्य वाजसनेय को परास्त करना चाहा (बृ. उ. ३.३.१; भुज्यु लाह्यायनि देखिये)।

२. अंगिरस् ऋषि के पुत्रों में से एक (म. अनु. १३२.४३.)। केशिनी राजकन्या की प्राप्ति के लिए इसने विरोचन दैत्य के साथ श्रेष्ठता के संबंध में शर्त लगायी थी, जिसमें इसने उसे परास्त किया (म. स. ६१-७६; उ. ३५; विरोचन १. देखिये)।

सुधर्मन्--पूर्वदशार्ण देश का एक राजा। भीमसेन ने अपने पूर्व दिग्विजय में इससे युद्ध किया था। पश्चात् इसके पराक्रम से संतुष्ट हो कर इसे अपना सेनापति बनाया (म. स. २६.५-६)।

२. एक संशप्तक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था। अर्जुन ने इसका वध किया।

३. पाण्डव पक्ष का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में से बचे हुए वीरों में से एक था। इस युद्ध में मृत हुए वीरों की और्ध्वदेहिक क्रियाएँ धौम्य, विदुर, युयुत्सु, संजय आदि लोगों ने की, उस समय यह उपस्थित था (म. स्त्री. २६.२४.)।

४. दुर्योधन राजा का एक पुरोहित (म. शां. ४०.५; ४४.१४)।

५. धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

६. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अक्रूर एवं अश्विनी के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ४५.३३)।

७. (सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार दृढनेमि राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७१)। वायु में इसे सुवर्मन् कहा गया है।

८. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का देवगण।

९. एक दिक्पाल, जो पृथु राजा का समकालीन था (मत्स्य. ८.९)।

१०. दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

११. रौच्य मन्वन्तर का एक देवगण।

१२. प्रतर्दन देवों में से एक।

१३. काश्मीर देश के भद्रसेन राजा का शिवभक्त पुत्र (भद्रसेन ३. देखिये)।

१४. उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित बारह देव समाविष्ट थे:--१. इष; २. ऊर्ज; ३. क्षम; ४. क्षाम; ५. सत्य; ६. दम; ७. दान्त; ८. धृति; ९. ध्वनि; १०. शुचि; ११. श्रेष्ठ; १२. एवं सुपर्ण (ब्रह्मांड. २.३६.२८)।

सुधर्मन् दिशापाल--सात्वत धर्म का एक आचार्य, जो शंखपद नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था (म. शां. ३३६.३५)।

सुधर्मा--इंद्रसारथि मातलि की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम गुणकेशी था (म. उ. ९५.१९-२०)।

२. सुराष्ट्र देश के सोमकान्त राजा की पत्नी।

सुधा--काल नामक रुद्र की पत्नी (भा. ३. १२.१३)।

सुधामन्--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो घृतपृष्ठ राजा के पुत्रों में से एक था। इसका राज्य क्रौंचद्वीप में था (भा. ५.२०.२१)।

२. चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

४. लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

५. नारायण नामक शिवावतार का एक शिष्य।

६. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

सुधार्भिक—केरल देश का एक राजा, जिसके पुत्र का नाम चंद्रहास था।

सुधावत्—पितरों में से एक।

सुधिय—तामस मन्वन्तर का एक देवगण (वायु. ६२.३७)।

सुधृति—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार राज्यवर्धन राजा का पुत्र, एवं नर राजा का पिता था (भा. ९.२.२९)।

२. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार दम राजा का पुत्र था।

३. विदेह देश के सत्यधृति राजा का नामान्तर (सत्यधृति ८. देखिये)। भागवत में इसे महावीर्य राजा का पुत्र, एवं धृष्टकेतु राजा का पिता कहा गया है (भा. ९.१३.१५)।

सुनक्षत्र—मगध देश के सुक्षत्त राजा का नामान्तर। भागवत में इसे निरमित्र राजा का पुत्र, एवं बृहत्सेन राजा का पिता कहा गया है (भा. ९.२२.४७)।

२. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सहदेव राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२८४)। मत्स्य, भागवत एवं विष्णु में इसे मरुदेव राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.१२.१२)।

सुनक्षत्रा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.८)।

सुनंद—(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार प्रद्योत राजा का पुत्र था। सुनंद राजा के पश्चात्, भविष्य पुराण में प्राप्त इतिहासकथन समाप्त हो कर, भविष्यकथन प्रारंभ होता है।

इसी राजा के पश्चात् समस्त संसार म्लेंच्छमय होने की आशंका से नैमिषारण्य में रहनेवाले अठासी हज़ार ऋषि उस अरण्य को छोड़ कर हिमालय की ओर चले गये, जहाँ विशाल नगरी में विष्णुपुराण का कथन किया है (भवि. प्रति. १.४)।

२. विष्णु का एक पार्षद (भा. २.९.१४)।

३. एक गोप, जो नंदगोप का मित्र था। इसके घर उग्रतपस् नामक ऋषि ने सुनंदा नामक कन्या के रूप में जन्म लिया (पद्म. पा. ७२)।

४. एक ब्राह्मण, जिसकी कथा गीता के ग्यारहवें अध्याय का महत्त्व कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. १८५)।

सुनंदन—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुरुषभीरु राजा का पुत्र, एवं चकोर राजा का पिता था (भा. १२.१.२५)।

सुनंदा—काशिराज सर्वसेन राजा की कन्या, जो दुष्यंतपुत्र सम्राट् भरत की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम भुमन्यु था। इसे 'काशेयी सार्वसेनी' नामान्तर भी प्राप्त था (म. आ. ९०.३४)।

२. चेदि नरेश वीरबाहु की कन्या, जिसके भाई का नाम सुबाहु था। यह दमयंती की मौसेरी बहन थी (म. व. ६२.४२; दमयंती देखिये)।

३. केकय देश की एक राजकुमारी, जो कुरुवंशीय सार्वभौम राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम जयत्सेन था (म. आ. ९०.१६)।

४. वत्सप्रि राजा की पत्नी सुदावती का नामांतर। इसके पुत्र का नाम सुनय था (सुनय ३. देखिये)।

५. माहिष्मती नगरी के नीलध्वज राजा का नामांतर (जै. अ. ६१)।

६. एक गोपी, जो सुनंदगोप की कन्या थी (सुनंद ३. देखिये)।

सुनंदा मागधी—जनमेजय (प्रथम) राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम प्राचीन्वत था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'अनंता'।

सुनंदा शैब्या—शिबि देश की राजकन्या, जो प्रतीप राजा की पत्नी थी। इसके देवापि, शांतनु एवं बाह्लीक नामक तीन पुत्र थे (म. आ. ९०.४६)।

सुनय—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो परिप्लव राजा का पुत्र, एवं मेधाविन् राजा का पिता था (भा. ९. २२.४१)। इसके पुरोहित का नाम काश्यप प्रमति था (मार्क. ११४)।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार ऋतु राजा का पुत्र, एवं वीतहव्य राजा का पिता था (वायु. ७.२२)। भागवत में इसे शुनक कहा गया है।

३. एक राजा, जो वत्सप्रि भालंदन एवं सुनंदा (सुदावती) का पुत्र था (मार्क. ११४.२)।

सुनर्तकनट—शिव का एक अवतार, जो तप करनेवाले पार्वती के सम्मुख प्रकट हुआ था। शिव के

द्वारा पार्वती को दृष्टांत मिला कि, वह उसका वरण करनेवाला है।

पश्चात् बाये हाथ में सिंगी, दाहिने हाथ में डमरू एवं पीठ पर रक्तवर्णीय वस्त्र धारण करनेवाले एक विचित्र व्यक्ति के रूप में यह पार्वती के आँगन में प्रकट हुआ, एवं बाकी कुछ न कहते हुए इसने पार्वती से भिक्षा माँगी। शिव के इस रूप में भी पार्वती ने उसे पहचान लिया, एवं अपने साथ विवाह करने की प्रार्थना की (शिव. शत. ३४)।

सुनहोत्र--क्षत्रवंशीय सुहोत्र राजा का नामान्तर (सुहोत्र २. देखिये)।

सुनाभ--(सो. विदूरथ) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार अजात राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.८४)।

२. कठ देश का एक राजा, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तर दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २३.२७०*; पंक्ति. ५-७)।

३. धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ८४.१२)।

४. वरुण का एक मंत्री, जो अपने पुत्र एवं पौत्रों के साथ गौ एवं पुष्करतीर्थ में वरुण की उपासना करता था।

५. एक दानव, जो वज्रनाभ दानव का भाई था। इसकी चन्द्रवती एवं गुणवती नामक दो कन्याएँ थीं। गद एवं सांब नामक असुरों ने इसके उन कन्याओं का हरण किया (ह. वं. २.९७.१९-२०)।

सुनामन्—मथुरा के उग्रसेन राजा का पुत्र, जो कंस का भाई था। यह कंस का सेनापति, एवं उसके घुड़सवारों की सेना का सरदार था। बलराम ने इसका वध किया (भा. ९.२४.२४; म. स. १३.३३; परि. १.२१.८४७)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'सुदामन्'।

२. गरुड के पुत्रों में से एक (म. उ. ९९.२)।

३. सुकेतु राजा का एक पुत्र, जो द्रौपदीस्वयंवर में अपने पिता के साथ उपस्थित था (म. आ. १७७.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'सुदामन्'।

४. एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

५. स्कंद का एक सैनिक।

सुनीक--(प्रद्योत. भविष्य.) प्रद्योतवंशीय शुनक राजा का नामान्तर।

सुनीत—मगध देश के सुनीथ राजा का नामान्तर।

सुनीति--उत्तानपाद राजा की पत्नी, जो ध्रुव एवं कीर्तिमत् की माता थी। इसे सूनृता नामान्तर भी प्राप्त था।

सुनीथ—(सो. काश्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार संतति का, एवं विष्णु एवं वायु के अनुसार सन्नति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुकेतन था (भा. ९.१७.८)।

२. (सो. द्विमीढ.) एक राजा जो मत्स्य के अनुसार क्षेम राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७९)। भागवत विष्णु, एवं वायु में इसे सुवीर कहा गया है।

३. शिशुपाल राजा का नामान्तर (म. स. ३५, परि. १.२१.२; ३६.१३)।

४. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो सुषेण राजा का पुत्र, एवं नृचक्षु राजा का पिता था (भा. ९.२२.४१)। वायु में इसे सुतीर्थ कहा गया है।

५. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो सुबल राजा का पुत्र एवं सत्यजित् राजा का पिता था (भा. ९.१२.४९) विष्णु में इसे सुनीथ, तथा वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'सुनेत्र' कहा गया है।

६. इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१४)।

७. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.११.१५)।

८. एक वृष्णिवंशीय राजकुमार, जिसे कृष्णपुत्र प्रद्युम्न के द्वारा धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त हुई थी (म. व. १८०.२७)।

सुनीथ कापटव—एक आचार्य (वं. ब्रा. १; कापटव सुनीथ देखिये)।

सुनीथ सौचद्रथ—एक ऋषि, जिसके द्वारा रचित सूक्त में वाय्य सत्यश्रवस् नामक ऋषि को उषस् देवता से प्रकाश प्राप्त होने का निर्देश किया गया है (ऋ. ५.७९.२)। लुडविग के अनुसार, यह वाय्य सत्यश्रवस् का पिता था।

सुनीथा—अंगराजा की पत्नी, जो यम की कन्या, एवं वेन राजा की माता थी (भा. १४.१३.१८)। अपने पुत्र वेन की मृत्यु के पश्चात्, अंगराजवंश का निर्वंश न हो, इस हेतु से इसने उसके शरीर का मंथन किया, जिससे पृथु वैन्य एवं निषाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (वेन देखिये)।

इसे वेन नामक दुष्ट पुत्र क्यों उत्पन्न हुआ, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा पद्म में प्राप्त है। अपने बाल्यकाल

में इसने तपस्या में निमग्न हुए सुशंख नामक गंधर्व को त्रस्त किया, जिससे क्रुद्ध हो कर उसने इसे एक 'कुलपांसन' पुत्र को जन्म देने का शाप दिया (पद्म. सृ. ८; भू. ३०-३६)।

सुनेत्र--(सो. कुरु.) एक राजा, जो जनमेजयपुत्र धृतराष्ट्र के बारह पुत्रों में से एक था (म. आ. ८९२*)।

२. गरुड का एक पुत्र।

३. रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

४. किष्किंधा का एक वानर (वा. रा. कि. ३३)।

सुनेत्रा—कश्यप ऋषि की पत्नियों में से एक।

सुंद--एक असुर, जो सुंद एवं उपसुंद नामक सुविख्यात असुरद्वय में से एक था (सुंदोपसुंद देखिये)।

२. एक असुर, जिसकी पत्नी का नाम ताटका था। इसके सुबाहु एवं मारीच नामक दो पुत्र थे। इसके पिता का नाम जंभासुर था।

सुंदर—एक गंधर्व, जो वीरबाहु गंधर्व का पिता था। वसिष्ठ के शाप के कारण, इसे राक्षसयोनि प्राप्त हुई, किन्तु आगे चल कर श्रीविष्णु ने इसे राक्षसयोनि से मुक्त किया (स्कंद. २.१.२४)।

सुंदर शातकर्णि--(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार पुलिंदसेन राजा का पुत्र, एवं शातकर्णि राजा का पिता था (विष्णु. ४.२४.४७)।

सुंदर शांतिकर्ण--(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सोम राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३)।

सुंदरा--केकय देश की सुनंदा नामक राजकुमारी का नामान्तर (सुनंदा. ३. देखिये),

सुंदरी--नर्मदा नामक गंधर्वी की कन्या, जो माल्यवत् राक्षस की पत्नी थी।

२. एक अत्यंज स्त्री, जो शिवमंदिर की सफाई करने के कारण स्वर्गलोक को प्राप्त हुई (स्कंद. १.१.७)।

सुंदोपसुंद--एक अतिभयंकर राक्षसद्वय, जो निकुंभ दैत्य के पुत्र थे। ये दोनों भाई आपस में मिल जुल कर अत्यंत स्नेहभाव से रहते थे। दो भाईयों के आपसी भ्रातृभाव का सब से बड़ा शत्रु स्त्री ही होती है, इस तथ्य का कथन करने के लिए नारद के द्वारा इनकी कथा युधिष्ठिर को सुनाई गयी (म. आ. २००-२०४)।

ब्रह्मा से वरप्राप्ति—त्रिभुवन पर विजय पाने के लिए इन दोनों ने अत्यंत उग्र तपस्या की। इस तपस्या के कारण ब्रह्मा ने इन्हें अनेकानेक वर प्रदान किये, जिनमें मायावी विद्या, अतुल बल, इच्छारूपधारित्व, आदि वरों के साथ, अपने भाई के अतिरिक्त किसी अन्य मानव से अवध्यत्व, यह वर प्रमुख था।

उपर्युक्त वरप्राप्ति के कारण, ये दोनों अत्यंत उन्मत्त हो गये, एवं पृथ्वी पर अनन्वित अत्याचार करने लगे। ये ऋषियों के यज्ञयागों में बाधा डालने लगे, जिस कारण इस संसार के सारे यज्ञयाग बंद हो गये।

मृत्यु--अंत में ब्रह्मा ने इन दोनों में कलह निर्माण कर के इन दोनों का विनाश करने का निश्चय किया। इस हेतु उसने विश्वकर्मन् के द्वारा एक अप्रतिम लावण्यवती अप्सरा का निर्माण करवाया, जिसका नाम तिलोत्तमा था। पश्चात् ब्रह्मा की आज्ञानुसार तिलोत्तमा इन दोनों राक्षसों के सामने नृत्य करने लगी। उसे देख कर ये दोनों आपसी भ्रातृभाव की भावना को बिलकुल भूल बैठे, एवं तिलोत्तमा की प्राप्ति के आपस में झगड़ने लगे। एक दूसरे के हाथ से गदायुद्ध में इनकी मृत्यु हो गयी।

सुन्वत्--एक आचार्य, जो सुमन्तु नामक आचार्य का शिष्य था। व्यासशिष्य जैमिनि ने इसे सामवेद की एक संहिता सिखायी थी (भा. १२.६.७५)।

सुपक्ष--अजित देवों में से एक।

सुपथ--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (वायु. ९८.११)।

सुपर्ण--एक ऋषि (तै. सं. ४.३.३.२; का. सं. ३९.७)।

२. एक ऋषि, जिसने इंद्रियसंयम, एवं मनोनिग्रह के साथ तपश्चर्या की थी। उस तपस्या के कारण इसे स्वयं भगवान् पुरुषोत्तम ने सात्वत धर्म का ज्ञान सिखाया, जो इसने आगे चल कर वायुदेव को प्रदान किया (म. शां. ३३६.१८-२१)।

त्रिसौपर्ण धर्म—महाभारत के अनुसार, भगवान् पुरुषोत्तम से उपर्युक्त धर्मज्ञान की प्राप्ति इसे ब्रह्मा के तीसरे 'वाचिक-युगांतर' में हुई थी। स्वयं को प्राप्त हुए धर्म का यह तीन बार पठन करता था, जिस कारण उस धर्म को 'त्रिसौपर्ण' नाम प्राप्त हुआ। दिन में तीन बार धर्मज्ञान का पठन करने के इसी व्रत का निर्देश ऋग्वेद में 'चतुष्कपर्दा युवतिः' आदि ऋचाओं में किया गया है (ऋ. १०.११४.२-३)।

३. पक्षिराज गरुड का नामांतर। वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में सर्वत्र सुपर्ण एवं गरुड के द्वारा क्रमशः सोम

एवं अमृत प्राप्त कराने का निर्देश मिलता है। इन सारी कथाओं का मूल स्रोत एक ही है, जहाँ सूर्य के द्वारा प्राप्त नवचैतन्य को अमृत अथवा सोम माना गया है (श. ब्रा. १०.२.२.४)।

४. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४५)।

५. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक (म. आ. ५९.४१)।

६. मयूर नामक असुर का छोटा भाई, जो कालकीर्ति राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था।

७. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो अंतरिक्ष राजा का पुत्र, एवं अमित्रजित् राजा का पिता था (वायु. ९९. २८६)।

८. सुधामन् देवों में से एक।

सुपर्ण काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५९)।

सुपर्ण तार्क्ष्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११४)।

सुपर्णा—गरुड की माता विनता का नामान्तर (भा. ६. ६.२२)। ब्रह्म में इसकी कथा 'शिवमाहात्म्य' कथन करने लिए पुनरुद्धृत की गयी है (ब्रह्म. १००)।

सुपर्णी—गरुड की माता विनता का नामांतर। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, विनता एवं गरुड की सापत्न माता कद्रू इन दोनों का जन्म स्वर्ग से पृथ्वी पर सोम लाने के हेतु हुआ था। इन दोनों की आपसी ईर्ष्या आदि की बहुत सारी कथाएँ भी उस ग्रंथ में दी गयी है (श. ब्रा. ३.५.१.१–७; कद्रू देखिये)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र 'सुपर्णी' शब्द की व्युत्पत्ति 'वाचा' इस अर्थ से की गयी है (श. ब्रा. उ. ३.२.२)।

सुपर्वन्—पांडव पक्ष का राजा, जिसके कृतिपुत्र रुचिपर्व का वध किया था (म. द्रो. २५.४५)।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के मनु का एक पुत्र।

३. प्राग्ज्योतिषपुर के भगदत्त राजा का नामान्तर— (म. द्रो. २५.४५)।

सुपाटल—राम का एक वानर (वा. रा. कि. ३३)।

सुपार—रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सुपार्श्व—(सो. द्विमीढ) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार रुक्मरथ का, तथा भागवत एवं विष्णु अनुसार दृढनेमि राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७३; भा. ९. २१. २७)। भागवत एवं विष्णु में दृढनेमि से लेकर सुपार्श्व तक की पीढ़ियों का निर्देश अप्राप्य है।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार श्रुतायु राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.५.३१)। भागवत में इसे सुपार्श्वक कहा गया है।

३. दुर्योधनपक्ष का एक राजा, जो क्रुपट नामक असुर अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५५*; पंक्ति २१)।

४. एक लोकसमूह, जिनके क्रथ नामक राजा को भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में जीता था।

५. रावण का एक अमात्य, जिसने रावण को सीतावध जैसे पापकर्म करने से परावृत्त किया था (वा. रा. यु. ९२. ६०)।

६. पक्षिराज संपाति का पुत्र, जिसने सीतावध की वार्ता अपने पिता को सुनायी थी (वा. रा. कि. ५९.८)। इसके सीता की मुक्तता के कार्य में कोई भी प्रयत्न न करने के कारण, इसका पिता इस पर अत्यंत क्रुद्ध हुआ। इसी कारण यह डर से दूरवर्ती प्रदेश में भाग गया (आ. रा. ७.८)।

सुपार्श्वक—निमिवंशीय सुपार्श्व राजा का नामान्तर (सुपार्श्व २. देखिये)।

२. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अक्रूर एवं अश्विनी का पुत्र था (मत्स्य. ४५.१२)।

३. (सो. वसु.) वसुदेव एवं रोहिणी का एक पुत्र (वायु. ९६.१६८)।

सुपुंजिक—एक सैंहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका का पुत्र था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.६.१८–२२)।

सुप्रचेतस्—प्रसूत देवों में से एक।

सुप्रज्ञा—कोचरश राजा की पत्नी।

सुप्रतीक—(सो. सह.) एक राजा, जो दुर्जयामित्रकर्षण नामक राजा का उर्वशी से उत्पन्न पुत्र था। इसने एवं इसके भाइयों ने गंधर्व कन्याओं से विवाह किया था (कूर्म १.२६)।

२. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रतीकाश्व राजा का, विष्णु के अनुसार प्रतीताश्व राजा का, एवं भविष्य के अनुसार भानुरत्न राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम मरुदेव था (भा. ९.१२.१२)। वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'सुप्रतीत' एवं 'सुप्रतीप' कहा गया है।

३. एक ऋषि, जो विभावसु नामक अपने भाई के शाप के कारण हाथी बन गया। पश्चात् इसने उसे कछुआ बनने का शाप दिया (विभावसु ५. देखिये)।

४. एक दिग्गज, जो ऐरावत के पुत्रों में से एक था (म. भी. १३.३३)। यह हारितवर्णीय था, एवं वरुण का अत्यंत प्रिय वाहन था। इसके वंश में नागराज ऐरावत वामन, कुमुद, अंजन आदि हाथियों की उत्पत्ति हुई थी (म. उ. ९५.१५)। इसकी पत्नी का नाम चित्ति था, जिससे इसे प्रहारिन्, संपति एवं पृथु नामक पुत्र उत्पन्न हुए (वायु. ६९.२२५)।

५. (नाग. भविष्य) एक राजा, जो वायु के अनुसार मथुरा नगरी में राज्य करनेवाले भूमिनंद राजा का पुत्र था।

६. कृतयुग का एक राजा, जिसकी विद्युत्प्रभा एवं कांतिमती नामक दो पत्नियाँ थी। आत्रेय ऋषि की कृपा से इसकी पत्नी विद्युत्प्रभा के गर्भ में स्वयं इंद्र ने जन्म लिया, जो दुर्जय नाम से प्रसिद्ध हुआ।

सुप्रतीक औलुण्डय--एक आचार्य, जो बृहस्पतिगुप्त शायस्थि नामक आचार्य का शिष्य, एवं मित्रवर्चस् स्थैर्यकायण नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १.)।

सुप्रतीत एवं **सुप्रतीप**--इक्ष्वाकुवंशीय सुप्रतीक राजा का नामान्तर।

सुप्रभ--एक राजा, जिसे महातेजस् ऋषि ने विष्णूपासना का आदेश दिया था।

सुप्रभा--स्वर्भानु (राहु) की एक कन्या, जो नमुचि की पत्नी थी (भा. ६.६.३२)।

२. वदान्य ऋषि की एक कन्या, जो अष्टावक्र ऋषि की पत्नी थी।

३. सुरथ राजा की कन्या, जो नाभाग राजा की पत्नी थी। इसे कृपावती नामान्तर भी प्राप्त था। एक बार इसने अगस्त्य ऋषि को त्रस्त किया, जिस कारण उसने इसे वैश्ययोनि में अधःपतित होने का शाप दिया। तदनुसार यह एवं इसका पुत्र भलंदन वैश्य बन गये।

पश्चात् इसका पुत्र बड़ा होने पर इसने उसे क्षत्रियोचित राजधर्म पर उपदेश किया, जिस कारण सद्गति पा कर वह पुनः एक बार क्षत्रिय बन गया (मार्क. ११२)। इसकी कथा मार्कंडेय में निर्दिष्ट सुदेव राजा की कथा से काफी मिलतीजुलती प्रतीत होती है (सुदेव १०. देखिये)।

४. कृशाश्व प्रजापति से उत्पन्न दो कन्याओं में से एक, जिसकी बहन का नाम जया था। इन दो बहनों से आगे चल कर सौ संहारअस्त्रों का निर्माण हुआ, जिन्हें विश्वामित्र ऋषि ने प्राप्त किया (वा. रा. बा. २१.१५)।

५. आर्ष्टिषेण राजा की स्नुषा, जो उसके भर नामक पुत्र की स्त्री थी।

६. श्रीकृष्ण की एक पत्नी, जिसके द्वारका में स्थित प्रासाद का नाम सूर्यप्रभ था (म. स. परि. १.२१.१२५४)।

सुप्रवृद्ध--सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ राजा का छोटा भाई था। 'द्रौपदीहरणयुद्ध' में अर्जुन के द्वारा यह मारा गया (म. व. १२१४* पाठ.)।

सुप्लन् सार्ञ्जय--सहदेव सार्ञ्जय नामक राजा का नामान्तर।

सुबंधु गौपायन (लौपायन)--एक आचार्य, जो असमाति राथप्रोष्ठि नामक राजा का पुरोहित था (ऋ. १०.५९.८)। आगे चल कर असमाति राजा ने इसे पौरोहित्यपद से दूर कर, किरात एवं आकुलि नामक आचार्यों को अपने पुरोहित नियुक्त किये (बृहद्दे. ७.८३)।

पश्चात् इन नये पुरोहितों ने राजा की प्रेरणा से इसका वध करवाया। किंतु इसके अन्य तीन भाइयों ने कुछ सूक्तों का उच्चारण कर इसे पुनः जीवित किया (ऋ. १०.५७-६०; असमाति राथप्रोष्ठि देखिये)। एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.२४)।

सुबल--गांधार देश का एक सुविख्यात राजा, जो धृतराष्ट्रपत्नी गांधारी एवं शकुनि का पिता था। यह प्रह्लादशिष्य नग्नजित् के अंश से उत्पन्न आ था। इस कारण, इसकी सारी संतति धर्मविरोधी एवं धर्मनाशी उत्पन्न हुई।

गांधारी का विवाह--इसकी संतानों में से शकुनि एवं गांधारी राज्यशास्त्र में प्रवीण थे (म. आ. ५७.९३-९४)। भीष्म ने हस्तिनापुर के राजा धृतराष्ट्र के लिए इसकी कन्या गांधारी की माँग की। धृतराष्ट्र राजा अंधा होने के कारण इसके मन में संदेह उत्पन्न हुआ। किन्तु पश्चात् उसका उच्चकुल एवं राज्याधिकार का विचार कर इसने विवाह के इस प्रस्ताव को मान्यता दी (म. आ. १०३.१०-११)। गांधारी के विवाह के साथ, अपनी निम्नलिखित कन्याओं का विवाह भी इसने धृतराष्ट्र से कराया था:--१. सत्यव्रता; २. सत्यसेना; ३. सुदेष्णा; ४. सुसंहिता; ५. तेजश्रवा; ६. सुश्रवा; ७. विकृति; ८. शुभा; ९. शंभुवा; १०. दशार्णा (म. आ. १०३.१.११३*)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में—इस यज्ञ में यह अपने पुत्र शकुनि, अचल एवं वृषक के साथ उपस्थित हुआ था (म. स. ३१.६-७)। यज्ञ के पश्चात् नकुल ने अपने राज्य की सीमा तक इसे सन्मानपूर्वक बिदा किया था। इसका सुभग सौबल नामक और एक पुत्र भी था (सुभग सौबल देखिये)।

२. इक्ष्वाकुवंश का एक राजा, जिसका पुत्र जयद्रथ का साथी था (म. व. २४९.८)।

३. गरुड के पुत्रों में से एक (म. उ. ९९.३)।

४. एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७६)।

५. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा के पुत्रों में से एक।

६. भौत्य मनु का एक पुत्र।

७. सौराष्ट्र देश के सोमकान्त राजा का एक प्रधान (गणेश. १.२९)।

८. कृष्ण एवं बलराम का एक सखा (भा. १०.१५. २०; २२.३१)।

९. (सो. मगध. भविष्य) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार सुमति राजा का पुत्र, एवं सुनीथ राजा का पिता था (भा. ९.२२.४५-४८)।

सुबालक—पूरुवंशीय ब्रह्मदत्त राजा के अमात्य का पुत्र।

सुबाहु—रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५९.४९)।

३. एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

४. चेदि देश का एक राजा, जो वीरबाहु राजा का पुत्र था। यह दमयंती का मौसेरा भाई था, जिस कारण वह अपने वनवास काल में सैरन्ध्री के रूप में इसके यहाँ रही थी (म. व. ६२.१८; ६६.१३)।

५. एक राक्षस, जो ताटका राक्षस का पुत्र, एवं मारीच का भाई था। इसके पिता का नाम सुंद था। विश्वामित्र ऋषि के यज्ञ का विध्वंस करने के लिए यह उपस्थित हुआ था। उस समय राम दाशरथि ने इसका वध किया (म. स. परि. १.२१.५०१)।

६. रामसेना का एक वानर।

७. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो शत्रुघ्न दाशरथि राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम शूरसेन था (वायु. ८८.१८६)। इसकी पत्नी का नाम सत्यवती था। शत्रुघ्न ने इसे मथुरा (मधुरा) प्रदेश का राज्य प्रदान किया था (वा. रा. उ. १०८)।

८. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो ऋतध्वज राजा एवं मदालसा का पुत्र था। इसकी कन्या का नाम शशिकला था, जिसका विवाह सुदर्शन राजा से हुआ था (दे. भा. ३.२१.२२)। इसने अपने ज्येष्ठ भाई अलर्क पर आक्रमण किया था। किन्तु उसने स्वयं ही अपना राज्य इसे दे दिया (मार्के. ४१)।

९. एक वन्यदेशाधिपति, जो किरात, तंगण, कुलिंद आदि लोगों का अधिपति था। इसका राज्य हिमालय की तलहटी में था। पांडवों के वनवासकाल में अर्जुन को छोड़ कर बाकी सारे पाण्डव कुछ काल तक यहाँ रहे थे (म. व. १४१.२४-३०; १७४.१५)। भारतीय युद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

१०. (सो. वृष्णि.) अक्रूर के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३२)।

११. कृष्ण एवं कालिंदी का एक पुत्र।

१२. एक संशप्तक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था। इसी युद्ध में यादव राजा युयुत्सु ने इसके हाथ तोड़ डाले (म. द्रो. २३. १३-१४)।

१३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६; क. ३५. ७-८)।

१४. चोल देश का एक राजा, जिसकी कथा 'दान-माहात्म्य' कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. भू. ९४-९९)।

१५. एक क्षत्रिय, जिसकी पत्नी का नाम चंद्रकला था (पद्म. क्रि. ५)।

१६. काशीदेश का एक राजा, भीमसेन ने अपने पूर्व-दिग्विजय में इसे जीता था।

१७. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४५)।

१८. एक प्राचीन नरेश, जिसने अपने जीवन में कभी भी मांस भक्षण नहीं किया था (म. अनु. ११५.६६)।

१९. अंगराज कर्ण के सुदामन नामक पुत्र का नामान्तर।

२०. चक्रांग नगरी का एक राजा, जिसने राम दाशरथि के अश्वमेध यज्ञ के पूर्व शत्रुघ्न से युद्ध किया था। अपने पूर्वजन्म में यह ऋषि था, जो राम की निंदा करने के कारण अपनी नयी आयु में एक संसारबद्ध पुरुष बना।

शत्रुघ्न के साथ हुए युद्ध में हनुमत् ने इसे मूर्च्छित किया। हनुमत् के स्पर्श के कारण इसका उद्धार हुआ। पश्चात् अपने पुत्र दमन को राज्य प्रदान कर, यह स्वयं अश्वरक्षा के लिए सेना में शामिल हुआ।

सुबुद्धि--बभ्रुवाहन राजा का अमात्य।

सुभग सौबल—गांधारराज सुबल का एक पुत्र, जो शकुनि का छोटा भाई था। भीमसेन ने रात्रियुद्ध में इसका वध किया (म. द्रो. १३२.११३६*)।

सुभगा--कश्यप एवं प्राधा (अरिष्टा) की एक कन्या।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)।

सुभद्र—(स्वा. प्रिय.) प्लक्षद्वीप का एक राजा, जो इध्मजिह्व राजा के पुत्रों में से एक था (भा. ५.२०.३)।

२. (सो. वसु.) वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में एक।

३. कृष्ण एवं भद्रा का एक पुत्र।

४. एक गोप। इसकी कन्या का नाम भद्रा था, जो पूर्वजन्म में सत्यतपस् नामक ऋषि थी (पद्म. पा. ७२)।

५. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

सुभद्रक—रुद्रगणों में से एक।

सुभद्रा--वसुदेव एवं देवकी की एक कन्या, जो कृष्ण एवं बलराम की छोटी बहन थी (म. आ. २११. १४)। स्कंद में इसकी माता का नाम सुप्रभा दिया गया है।

नाम--इसे सुभद्रा नाम क्यों प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा स्कंद में प्राप्त है। पूर्व जन्म में यह गालव ऋषि की कन्या माधवी थी। एक बार गालव ऋषि इसे विष्णु के पास ले गये, जहाँ यह बालसुलभता से गद्दी पर बैठ गयी। इस कारण क्रुद्ध हो कर लक्ष्मी ने इसे अगले जन्म में 'अश्वमुखी' कन्या बनने का शाप दिया। इसका जन्म होते ही कृष्ण एवं बलराम ने ब्रह्म की प्रार्थना कर इसे भद्रमुखी बनाया, जिस कारण इसे 'सुभद्रा' नाम प्राप्त हुआ (स्कंद ६.८१.८४)।

सुभद्राहरण—बलराम इसका विवाह दुर्योधन से करना चाहता था। किन्तु एक बार अर्जुन ने इसे देखा, एवं श्रीकृष्ण के समक्ष इसे अपनी रानी बनाने का अपना मनोदय प्रकट किया (म. आ. २११.२०)। पश्चात् श्रीकृष्ण की सलाह से रैवतक पर्वत में हुए महोत्सव के समय अर्जुन ने यतिवेष में इसका हरण किया (म. आ. २१२)। रैवतक पर्वत से भागते समय इसने अर्जुन का सारथ्य किया था (म. आ. परि. १.२०)। आगे चल कर अर्जुन की सलाह से एक गोपी का वेश धारण कर यह द्रौपदी से मिलने गयी, एवं अपने विवाह के लिए इसने उसकी संमति प्राप्त की (म. आ. परि. १.१४. २१२–२१४)।

द्वारका में कृष्ण ने भी क्रोधित हुए बलराम का मन इस विवाह के लिए अनुकूल बनाया। पश्चात् कुंती विदुर, युधिष्ठिर आदि ज्येष्ठ लोगों की संमति कृष्ण ने ही प्राप्त कर ली। इस प्रकार सभी लोगों के आशीर्वाद के साथ इसका एवं अर्जुन का विवाह द्वारका नगरी में संपन्न हुआ (म. आ. २१३.१२)।

अर्जुन से विवाह—इसके विवाह के समय कृष्ण ने अर्जुन को निम्नलिखित वस्तु दहेज के रूप में प्रदान की थी:—एक हजार सुवर्णरथ, दस हजार दुधालु गायें, एक हजार सुवर्णालंकृत अश्व, पाँच सौ तट्टू, एक हज़ार दासी, एक लाख बाह्लीकदेशीय अश्व, दस मन सोना, एक हज़ार उन्मत्त हाथी (म. आ. २०७८–२०८५*)।

परिवार—इसके पुत्र का नाम अभिमन्यु था, जिसका विवाह उपप्लव्य नगरी में संपन्न हुआ था (म. आ. ९०. ८५; वि. ६७.२१)। पाण्डवों के वनवास के समय यह अभिमन्यु के साथ द्वारका नगरी में रही थी (म. व. २३. ४४)। अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् उसके मृतपुत्र परिक्षित् को जिलाने के लिए श्रीकृष्ण से प्रार्थना की थी (म. आश्व. ६७.१३–२४)।

अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् यह सदैव अप्रसन्न एवं हर्षशून्य रहती थी, केवल परिक्षित् को देख कर ही जीवन धारणा करती थी (म. आश्र. २८.१५–१६)। अपने महाप्रस्थान के पूर्व, परिक्षित एवं वज्र को युधिष्ठिर ने इसीके ही हाथों सौंपा दिया था।

२. सुरभि की एक धेनरूपा कन्या, जो पश्चिम दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.९)।

३. दध्यञ्च आथर्वण ऋषि की दासी।

सुभव—सुपुष्पित नामक राजा का पिता।

सुभा—अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जिसे बृहत्कीर्ति आदि सात पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. व. २०८.१)।

सुभानु—कृष्ण एवं सत्यभामा का एक पुत्र।

सुभाल—वीरवर्मन् राजा का एक पुत्र।

सुभाषण—(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार युयुध राजा का पुत्र, एवं श्रुत राजा का पिता था

(भा. ९.१३.२५)। विष्णु में इसे 'सुभास' कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम सुधन्वन् दिया गया है।

सुभीम--पांचजन्य नामक अग्नि का एक पुत्र, जो यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पंद्रह 'विनायकों' में से एक माना जाता है (म. व. २१०.११ पाठ.)।

सुभीमा--कृष्ण की एक पत्नी।

सुभुजा--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी।

सुभ्राज्--वैवस्वत मनु का पुत्र (म. आ. १.४१)।

सुभ्राज--सूर्य के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम भास्वर था (म. श. ४४. २८)।

सुभ्रु--(सो. वसु.) वसुदेव एवं रोहिणी का एक पुत्र।

सुमंगल--अत्रिकुलोत्पन्न एक ऋषि।

सुमंजस--शिव देवों में से एक।

सुमति--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भरत एवं पंचजनी के पुत्रों में से एक था। यह स्वयं जैनधर्मीय था, एवं ऋषभदेव का अनन्य उपासक था। इसी कारण जैन लोग इसे देवता मानते है।

इसकी वृद्धसेना एवं आसुरी नामक दो पत्नियाँ थी, जिनसे इसे क्रमशः देवताजित् एवं देवद्युम्न नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ५.१५.१-३)। इसके तेजस् नामक अन्य एक पुत्र का निर्देश भी प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.१४. ६२)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार नृग राजा का पुत्र, एवं भूतज्योतिस् नामक राजा का पिता था (भा. ९.२.१७)।

३. (सू. दिष्ट.) विशाल नगरी का एक राजा, जो दशरथ राजा का समकालीन था। यह सोमदत्त राजा का पुत्र, एवं जनमेजय राजा का पिता था। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'स्वमति' एवं 'प्रमाति' कहा गया है, एवं इसे जनमेजय राजा का पुत्र कहा गया है।

राम एवं लक्ष्मण जब विश्वामित्र के साथ मिथिला नगरी में जा रहे थे, उस समय वे कुछ काल तक इसके राज्य में ठहरे थे (वा. रा. बा. ४८)।

४. (सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार रंतिभार राजा का पुत्र, एवं रैभ्य राजा का पिता था (भा. ९.२०.६)।

५. (सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो सुपार्श्व राजा का पुत्र, एवं सन्नतिमत् राजा का पिता था (भा. ९. २१.२८)।

६. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार द्युमत्सेन राजा का पुत्र, एवं सुबल राजा का पिता था (भा. ९.२२.४८)। मत्स्य में इसे 'महिनेत्र' कहा गया है।

७. एक ऋषि, जो सोमदत्त ऋषि का पुत्र, एवं जनमेजय ऋषि का पिता था। यह युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. १०.७४.८)।

८. राम दाशरथि के पुत्र लव की पत्नी।

९. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का मुख्य प्रधान।

१०. बभ्रुवाहन राजा का सेनापति।

११. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

१२. वरुणसभा का एक असुर (म. स. ९.१३)।

१३. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार गय राजा का पुत्र था।

१४. नल राजा का पुरोहित (परा. मा. प्रस्तावना)।

१५. भृगुकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण, जिसे अपने दस हजार जन्मों का स्मरण था। इसने अपने पिता को आत्मज्ञान सिखाया था (मार्क. १०.१०-१८)।

१६. अमिताभ देवों में से एक।

१७. आभूतरजस् देवों में से एक।

१८. सुबाहु राजा का एक प्रधान (पद्म. पा. २६)।

१९. एक दुष्ट महाराष्ट्रीय ब्राह्मण, जो वेंकटाचल में स्थित पुष्करिणी तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (स्कंद. २.१.१४)।

२०. एक दुष्ट ब्राह्मण, जो पापविनाशन तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (स्कंद. २.१.१४)।

२१. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुआ था (म. अनु. २६.४)

२२. वरुणसभा में उपस्थित एक राक्षस (म. स. ९.१३)।

२३. वालिन् वानर की भगिनी।

सुमति आत्रेय--एक आचार्य, जो विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६१.५६)।

सुमति शैब्या--सगर राजा की पत्नी, जो अरिष्टनेमि राजा की कन्या थी। सगर राजा से इसे साठ हज़ार पुत्र

उत्पन्न हुए थे, जो 'सागर' नाम से प्रसिद्ध थे (ब्रह्मांड. ३. ६३.१५९)।

भागवत में इसे विदर्भराजा की कन्या कहा गया है (भा. ९.८.९)। इसे महती (ब्रह्मांड. ८.६४), एवं प्रभा यादवी (मत्स्य. १२.४२) आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। और्व ऋषि की कृपा से इसे साठ हज़ार पुत्र उत्पन्न हुए थे (पद्म. उ. २०–२१; म. व. १०४–१०७; पद्म. उ. २०–२१; ब्रह्मवै. २.६१.१०; सगर देखिये)।

सुमद--एक राजा, जिसने कामाक्षी देवी के कहने पर अपना राज्य शत्रुघ्न को प्रदान किया (पद्म. पा. १२–१३)।

सुमध्यमा--मदिराश्व राजा की कन्या, जो हिरण्यहस्त ऋषि की पत्नी थी (म. अनु. १३७. २४)।

सुमन--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

सुमनस्—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो उल्मुक एवं पुष्करिणी के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१३.१७)।

२. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

३. प्रसूत देवों में से एक।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

५. वरुणसभा में उपस्थित एक असुर (म. स. ९.१३)।

६. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.११)।

७. एक किरात राजा, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.२२)।

८. पितृवर्तिन् के हंसयोनि में उत्पन्न भाइयों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

सुमना—दशार्णाधिप चारुवर्ण राजा की कन्या, जिस से भद्रराजपुत्र महानंद, एवं विदर्भराज संक्रदनपुत्र वपुष्मत् ये दोनोही प्रेम करते थे। इसने अपने स्वयंवर में नरिष्यंत पुत्र दम को पति के रूप में स्वीकार किया। इस कारण इस से प्रेम करनेवाले दोनों राजपुत्रों ने इसका हरण किया। कालोपरांत दम ने महानंद का वध कर, एवं वपुष्मत् को पराजित कर इससे विवाह किया (मार्क. १३०)।

२. च्यवन ऋषि की कन्या, जिसके पति का नाम सोमशर्मन् था।

३. मधु नामक राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम वीरजन था।

४. एक केकय राजकन्या, जिसका देवलोक में रहनेवाली शांडिल्या देवी से पातिव्रत्य के संबंध में संवाद हुआ था (म. अनु. १८५)।

सुमन्त—(सो. अनु.) एक राजा, जो कूर्म के अनुसार कौशिक राजा का पुत्र था।

सुमन्तु--एक आचार्य, जो व्यास की अथर्ववेद शिष्यपरंपरा में से एक शिष्य था। व्यास ने इसे महाभारत का भी कथन किया था (भवि. ब्राह्म. १.३०–३८)। यह जैमिनि नामक आचार्य का पुत्र, एवं सुत्वन्-(सुन्वन्) नामक आचार्य का पिता था। इसके शिष्यों में कबंध नामक आचार्य प्रमुख था।

युधिष्ठिर की मयसभा में यह उपस्थित था। इसने शतानीक नामक अपने शिष्य को 'भागवत' एवं 'भविष्य पुराण' कथन किया था। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने यह उपस्थित हुआ।

२. एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से जैमिनि नामक आचार्य का शिष्य था।

३. अट्टहास नामक शिवावतार का एक शिष्य।

४. एक स्मृतिकार, जिसके द्वारा रचित स्मृति के गद्य एवं पद्य उद्धरण 'मिताक्षरा', 'विश्वरूप,' 'सरस्वतीविलास' आदि में प्राप्त हैं। मिताक्षरा में इसके निम्न–विषयों से संबंधित उद्धरण प्राप्त है:--१. ब्रह्महत्या (३.२३७); २. मद्यपान (३.२५०); ३. सुवर्ण का अपहरण (३.२५२); ४. परदारागमन (३.२५३–२५४); ५. गोहत्या (३.२६१)।

५. विदर्भ देशाधिपति भीम राजा का नामान्तर (भीम वैदर्भ देखिये)।

सुमन्तु बाभ्रव गौतम--एक आचार्य, जो वासिष्ठ अरैहण्य राजन्य नामक आचार्य का शिष्य, एवं शूष वाह्नेय भारद्वाज नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. २)।

सुमंत्र--दशरथ के अष्टप्रधानों में से एक। राम दाशरथि के वनवास के समय, यह उसे भागीरथी नदी तक पहुँचाने आया था।

राम दाशरथि के राज्यकाल में यह उसका भी अमात्य था। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्वरक्षणार्थ नौ पराक्रमी वीरों का एक दल तैयार करने की आज्ञा राम ने इसे दी थी (पद्म. पा. ११)।

२. दशरथ का एक सारथि (म. वि. ११.२४२*)।

सुमन्यु—एक राजा, जिसने शांडिल्य ऋषि को खाद्य-सामग्री का पर्वतप्राय ढेर दान के रूप में प्रदान किया (म. अनु. १३७.२२)। पाठभेद—'भूमन्यु'।

सुमहायशस्—(सो. नील.) एक राजा, जो मुद्गल राजा का पुत्र था। इसे 'ब्रह्मिष्ठ' भी कहा गया है, जो संभवतः इसकी उपाधि होगी।

सुमागध—रामसभा में उपस्थित एक विदूषक।

सुमालिन्—एक असुर, जो वृत्र का अनुयायी था। यह प्रहेति राक्षस का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.९०)। वृत्र-इंद्र युद्ध में इसने वृत्र के पक्ष में भाग लिया था। असुरों के द्वारा किये गये पृथ्वीदोहन में यह बछड़ा बना था (भा. ६.१०.२१)।

२. रावण का मातामह एवं मंत्री, जो खश राक्षस का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम केतुमती था, जिससे इसे निम्नलिखित कन्याएँ उत्पन्न हुई थी :—१. राका; २. पुष्पोत्कटा; ३. बलाका; ४. कुंभीनसी; ५. कैकसी (केशिनी)। इसकी इन कन्याओं में से केशिनी, राका, पुष्पोत्कटा एवं बलाका का विवाह विश्रवस् ऋषि से, एवं कुंभीनसी का विवाह मधु दैत्य से हुआ था (विश्रवस् एवं रावण देखिये)।

३. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

सुमाल्य—नंदवंश में उत्पन्न एक राजा (नंद ५. देखिये)।

सुमित्र—(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु, वायु एवं भागवत के अनुसार सुरथ राजा का पुत्र था। यह इक्ष्वाकुवंश का अंतिम राजा माना जाता है, जो पूरु-वंशीय क्षेमक राजा का, एवं मगधवंशीय महानंदी नंद राजा का समकालीन था। इसके ही राज्यकाल में सिकंदर ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया था। इसे 'सुमाल्य' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ९.१२.१५-१६)।

२. (सो. वृष्णि.) एक राजा, जो विष्णु, पद्म, वायु एवं भागवत के अनुसार विष्णु राजा का ज्येष्ठ पुत्र, एवं अनमित्र राजा का पिता था (भा. ९.२४.१२)।

३. एक राजा, जो शमीक एवं सुदामिनी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४४)।

४. कृष्ण एवं जांबवती का एक पुत्र, जो यादवीयुद्ध में मारा गया (भा. १०.६१.११)।

५. एक हैहय राजा, जिसने ऋषभ ऋषि के साथ 'आशा' के संबंध में तत्त्वज्ञान पर चर्चा की थी। ऋषभ ऋषि ने इसे वीरद्युम्न एवं तनु नामक मुनियों का वृत्तांत सुनाया (म. शां. १२५.८)।

६. कुलिंद नगरी के राजा का एक नाम, जिसके पुत्र का नाम सुकुमार था। भीम ने अपने पूर्वदिग्विजय में, तथा सहदेव ने अपने दक्षिणदिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २६.१०)।

७. सौवीर देश के विपुल नामक यवन राजा का नामान्तर (विपुल ३. देखिये)। यह 'दत्तमित्र' नाम से भी सुविख्यात था।

८. अर्जुनपुत्र अभिमन्यु का सारथि (म. द्रो. ३४.२९)।

९. फेनप नामक भृगुकुलोत्पन्न ऋषि का नामान्तर (फेनप २. देखिये)।

१०. पांचालराज द्रुपद का एक पुत्र, जिसे 'सौमित्र' नामान्तर भी प्राप्त था। भारतीय युद्ध में जयद्रथ ने इसका वध किया (म. आ. परि. १.१०३.१०८-१३१)।

११. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सुषेण राजा का पुत्र था।

१२. देवद्युति नामक एक ऋषि का पुत्र (पद्म. उ. १२८)।

१३. एक राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)।

सुमित्र कौत्स—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १०५)।

सुमित्र वाध्र्यश्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ६९-७०)। वध्र्यश्व का वंशज होने के कारण इसे 'वाध्र्यश्व' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। इसके वंश के 'सुमित्र' लोगों का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.६९.१; ७-८)।

सुमित्रा—मगध देशाधिपति शूर राजा की कन्या, जो इक्ष्वाकुवंशीय दशरथ राजा की तीन पत्नियों में से एक थी। इसके पुत्रों के नाम लक्ष्मण एवं शत्रुघ्न थे (दशरथ देखिये)।

एक अत्यंत विवेकशील एवं धर्मनिष्ठ राजपत्नी के नाते वाल्मीकि रामायण में सुमित्रा का चरित्रचित्रण किया गया है (वा. रा. अयो. ४४.१)। राम के वनगमन के समय इसने अपने सकुशल संभाषणों के द्वारा राम की माता कौसल्या को सांत्वना दी थी (वा. रा. अयो. ४४.३०)।

मानस में—तुलसी के द्वारा विरचित 'मानस' में वर्णित सुमित्रा केवल विवेकशील ही नहीं, बल्कि अत्यंत मित-

भाषणी एवं राजनैतिक जीवन से संपूर्णतया दूर है। अयोध्या में क्या हो रहा है, इसका कुछ भी पता इस सेवापरायण एवं सरलहृदया स्त्री को नहीं है (मानस. २.७३-७४)।

२. कृष्ण की एक पत्नी।

३. एक दुराचारी स्त्री, जो शिव को 'बिल्वपत्र' चढाने के कारण जीवन्मुक्त हुई (स्कंद. ३.३.२)।

सुमीढ—(सो. पूरु.) एक राजा, जो सुहोत्र राजा का पुत्र था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम अजमीढ एवं पुरुमीढ थे (म. आ. ८९.२६)।

सुमीह्ळ—एक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का आश्रयदाता था। इसने भरद्वाज ऋषि को सौ गायें दान में दी थी (ऋ. ६.६३.९)।

सुमुख—गरुड का एक पुत्र (म. उ. ९९.२-१२)।

२. ऐरावतकुलोत्पन्न एक नाग, जो आर्यक नामक नाग का पौत्र, वामन नामक नाग का दौहित्य, एवं चिकुर नामक नाग का पुत्र था (म. आ. ३१.१४)। इसकी पत्नी का नाम गुणकेशी था, जो इंद्रसारथि मातलि की कन्या थी।

मातलि एवं नारद के द्वारा इसका एवं गुणकेशी का विवाह जब निश्चित हो चुका, उसी समय नागों का पुरातन शत्रु गरुड इसे अपना भक्ष्य बनाना चाहता था। मातलि ने इंद्र से प्रार्थना कर इसे अमर बना दिया, एवं इस प्रकार गरुड के सारे मनोरथ विफल हो गये।

पश्चात् गरुड क्रुद्ध हो कर इंद्र एवं विष्णु से बदला लेने के विचार सोंचने लगा। विष्णु को यह ज्ञात होते ही उन्होंने गरुड की कटु आलोचना की, एवं अपने पैर के अंगुठे से सुमुख नाग को उठा कर उसे गरुड के छाती पर रख दिया। तब से यह हमेशा गरुड के छाती पर ही निवास करने लगा (म. उ. १०२-१०३)।

३. एक ऋषि, जो नारद के साथ युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित हुआ था (म. स. ५.३)।

४. रामसभा का एक वानर।

५. एक राजा। उद्दण्डता के कारण नष्ट हुए राजाओं की 'मनुस्मृति' में प्राप्त नामावलि में इसका निर्देश किया गया है (मनु. ७.४१)।

६. सुहोत्र नामक शिवावतार का एक शिष्य।

७. भरत दाशरथि राजा का प्रधान।

८. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक (म. द्रो. १०२.६९)।

सुमुखी—अश्वसेन नाग की माता। खाण्डववनदाह के समय अर्जुन के द्वारा इसके पुत्र अश्वसेन का वध हुआ था। इसी कारण यह उससे बदला लेना चाहती थी।

भारतीय युद्ध में कर्णार्जुन युद्ध के समय यह कर्ण के सर्पमुख बाण पर बैठी, एवं इस बाण के आधार से इसने अर्जुन पर हमला करना चाहा। किन्तु कृष्ण ने इसका दुष्ट हेतु जान कर अपने रथ के अश्व यकायक बिठा दिये, जिस कारण सर्पबाण के साथ यह अर्जुन के शिरस्त्राण पर जा टकरायी, एवं वहाँ से भूमि पर गिर पड़ी। पश्चात् अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. ६६.५-२४)।

२. कुबेरभवन की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु.१९.४५)।

सुमुष्टि—(सो. कुकुर.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार उग्रसेन राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.७८)।

सुमूर्तिमत्—पितरों का एक समूह, जिसे 'सुकाल' नामान्तर भी प्राप्त था (ह. वं. १.१८)।

ये वसिष्ठ के मानसपुत्र हैं, एवं स्वर्ग के उस पार स्थित 'ज्योतिर्भासिन' नामक लोक में निवास करते हैं। श्राद्ध करनेवाले ब्राह्मणों के पास इनका आना जाना रहता है। इनकी मानसकन्या का नाम गो था, जो शुक्र की पत्नी थी (मत्स्य. १५)।

सुमेध—एक ऋषि, जो संभवतः नृमेध नामक ऋषि का भाई था। शकपूत नार्मेध के द्वारा विरचित एक सूक्त में मित्रावरुण के द्वारा इसकी रक्षा करने का निर्देश प्राप्त है।

२. एक ब्राह्मण, जिसने हरिमेध को 'तुलसी माहात्म्य' कथन किया था (स्कंद. २.४.८)।

सुमेधस्—भार्गवकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

२. एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित देव शामिल थेः—१. अल्पमेधस्; २. दीप्तिमेधस्; ३. पृश्णिमेधस्; ४. प्रतिमेधस्; ५. प्रभु; ६. भूयोमेधस्; ७. मेधहन्तृ; ८. मेधजस्; ९.मेधस्; १०.मेधातिथि; ११. यशोमेधस्; १२. सत्यमेधस्; १३. सर्वमेधस्; १४. सुमेधस् (ब्रह्मांड. २.३६.५८-६०)।

३. अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. चाक्षुष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

६. एक ऋषि, जिसने राज्य से भ्रष्ट हुए सुरथ राजा को अपने आश्रम में आश्रय दिया था (सुरथ १३. देखिये)।

सुमेधा—निध्रुव काण्व ऋषि की पत्नी, जो च्यवन एवं सुकन्या की कन्या थी।

२. सीरध्वज जनक राजा की पत्नी।

३. और्व नामक ब्राह्मण की पत्नी (और्व ३. देखिये)

सुम्नयु—एक आचार्य, जो उद्दालक नामक आचार्य का शिष्य था (सां. आ. १५.१)। इसके शिष्य का नाम बृहद्दिव आथर्वण था।

सुयजुस्—एक राजा, जो भरत राजा का पौत्र, एवं भुमन्यु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम पुष्करिणी था (म. आ. ८९.२१)।

सुयज्ञ--एक आचार्य, जो शांख्यायनशाखीय गृह्य-सूत्र का रचयिता माना जाता है। इसी कारण ब्रह्मयज्ञांग-तर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.३.)।

२. (सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय तम राजा का नामांतर (तम २. देखिये)। मत्स्य में इसे पृथुश्रवस् राजा का पुत्र कहा गया है।

३. उशीनर देश का एक राजा (भा. ७.२.२८)।

४. दशरथ का एक पुरोहित, जो वसिष्ठ का पुत्र था।

५. राम दशरथि के सभा का एक सदस्य।

६. (सू. इ.) एक राजा, जो वाडव ऋषि के शाप के कारण कुष्ठरोगी एवं राज्यभ्रष्ठ हो गया (ब्रह्म.वै. २.५५)।

७. विष्णु के यज्ञ नामक अवतार का नामांतर (यज्ञ १. देखिये)।

सुयज्ञ शांडिल्य—एक आचार्य, जो कंस वारक्य नामक आचार्य का शिष्य था, एवं जयंत वारक्य नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ४. १७.१)।

सुयम—एक राक्षस, जो शतशृंग राक्षस का तृतीय पुत्र था। अंबरीष राजा के सेनापति सुदेव के द्वारा यह मारा गया (म. शां. परि. १.११ पाठ)।

सुयज्ञा—महाभौज नामक पूरुवंशीय राजा की पत्नी, जो प्रसेनजित राजा की कन्या एवं 'अयुतनायिन्' राजा की माता थी (म. आ. ९०.१९)।

सुयशस्—(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार अशोक राजा का पुत्र, एवं दशरथ राजा का पिता था (विष्णु. ४.२४.३०)।

सुयशा—काशि देश के भीमरथपुत्र दिवोदास राजा की पत्नी जिसने पुत्रप्राप्ति के लिए निकुंभ की आराधना की थी। फिर भी इसे पुत्र प्राप्ति न होने पर, दिवोदास राजा ने काशि में स्थित निकुंभ मंदिर का नाश करवाया (वायु. ९२. ४४-५१; निकुंभ ४. देखिये)।

२. बाहुद राजा की कन्या, जो अनश्वन् राजा के पुत्र परिक्षित् (द्वितीय) राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम भीमसेन था। इसे 'बहुदा सुयशा' नामांतर भी प्राप्त था। पाठभेद-'सुवेषा'।

सुयोधन--धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन का नामांतर।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार ककुत्स्थ राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.२८)।

सुर--एक असुर, जो संह्लादपुत्र बाष्कलि का पुत्र था।

सुरकृत्--विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र (म. अनु. ४. ५७)।

सुरक्ष--मगध देश के सुक्षत्र राजा का नामांतर।

सुरघु--एक राजा, जो तपस्या के कारण ज्ञानी बन गया (यो. वा. ५.६१-६४)।

सुरजा--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में इसने नृत्य किया था (म. आ. ५९. ४९ पाठ)।

सुरतचंद्रिका—सौराष्ट्र देश के भद्रश्रवस् नामक राजा की पत्नी (पद्म. ब्र. ११)।

सुरता--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में इसने नृत्य किया था (म. आ. ११४.५२ पाठ.)।

सुरथ--एक त्रिगर्तदेशीय राजा, जो जयद्रथ एवं दुःशला के पुत्रों में से एक था। युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ के समय, अर्जुन इसके देश में अश्वमेधीय अश्व के साथ उपस्थित हुआ। यह समाचार सुन कर, अर्जुन के द्वारा किये गये अपने पिता के वध का स्मरण कर यह भयभीत हुआ, एवं इसने तत्काल प्राणत्याग किया (म. आश्व. ७७)। किन्तु कृष्ण की कृपा से यह पुनः जीवित हुआ, एवं युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञसमारोह में उपस्थित रह सका (जै. अ. १.६१)।

२. एक त्रैगर्त राजकुमार, जो जयद्रथ का छोटा भाई एवं दुर्योधनपक्षीय दस संशप्तक योद्धाओं में से एक था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. १७.३६)।

३. शिबि देश का एक राजा, जो त्रिगर्तराज जयद्रथ का परम मित्र था। यह सुरत शैब्य नाम से सुविख्यात था, इसके पुत्र का नाम कोटिकाश्य था (म. व. २५०.)।

४)। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदीहरण के युद्ध में नकुल ने इसे परास्त किया (म. व. २५५.१८-२२)।

४. एक पांचाल राजकुमार, जो द्रुपद राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में यह अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३१.१२६; श. १३.३९)।

५. कृपाचार्य का एक चक्ररक्षक (म. वि. ५२.९२८* पंक्ति. ८)।

६. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.११)।

७. चंपकनगरी के हंसध्वज राजा के पाँच पुत्रों में से एक। अर्जुन के अश्वमेध-दिग्विजय के समय उसने इसका शिरच्छेद किया था (जै. अ. २०-२१)।

८. कुंडल नगरी का एक राजा, जिसने राम दाशरथि का अश्वमेधीय अश्व पकड़ रक्खा था। इसने हनुमत्, सुग्रीव आदि को कैद कर रक्खा था, एवं शत्रुघ्न को मूर्च्छित किया था। पश्चात् स्वयं राम ने युद्ध-भूमि में प्रविष्ट हो कर, इसे परास्त किया। इसके पुत्र का नाम बलमोदक था (पद्म. पा. ४९.५२; बलमोदक देखिये)।

९. (सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो जह्नु राजा का पुत्र, एवं विदूरथ राजा का पिता था (मत्स्य. ५०.३४)।

१०. सुरथद्वीप नामक देश का एक राजा, जो कुशद्वीपाधिप ज्योतिष्मत् राजा का पुत्र था (मार्क. ५०.२६)।

११. एक राजा, जो विदर्भ देश के सुदेव राजा का पुत्र था (वा. रा. उ. ७८)।

१२. एक राजा, जो नाभाग राजा की पत्नी सुप्रभा का पिता था। गंधमादन पर्वत पर तपस्या करते समय, यह कन्या इसे प्राप्त हुई थी।

१३. स्वारोचिष मन्वंतर का एक राजा, जो देवी की उपासना करने के कारण अपने अगले जन्म में सावर्णि मनु नामक राजा बन गया था।

एक बार म्लेच्छों ने इसके राज्य पर आक्रमण किया, जिस कारण राज्यभ्रष्ट हो कर यह सुमेधस् ऋषि के आश्रम में रहने पर विवश हो गया। आगे चल कर इसे एवं समाधि नामक वैश्य को सुमेधस् ऋषि ने देवी की उपासना करने का आदेश दिया। तदनुसार आराधना करने पर देवी ने समाधि वैश्य को स्वर्ग, एवं इसे राज्य पुनः प्राप्त होने का आशीर्वाद दिया।

देवी के आशीर्वाद के कारण, अपने अगले जन्म में यह विवस्वत् आदित्य का सावर्णि नामक पुत्र बन गया, एवं वैवस्वत मन्वंतर के पश्चात् उत्पन्न हुए सावर्णि मन्वंतर का अधिपति बन गया (दे. भा. ५.३२-३५; ब्रह्मवै. २.६२; मार्क. ७८-९०; शिव. उ. ४५)।

१४. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार रणक राजा का, विष्णु के अनुसार कुंडक राजा का, वायु के अनुसार क्षुलिक राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार कुलक राजा का पुत्र था। भागवत एवं विष्णु में इसके पुत्र का नाम 'सुमित्र' दिया गया है (भा. ९.१२.१५; विष्णु ४.२२.९-१०)।

सुरथा—उशीनर राजा की पत्नी, जो शिबि राजा की माता थी।

२. मत्स्यनरेश विराट की प्रथम पत्नी।

सुरपुरंजय—(किलकिला. भविष्य.) एक नागवंशीय राजा, जो ब्रह्माण्ड के अनुसार वैदेश देश का राजा था।

सुरप्रवीर—तप नामधारी पांचजन्य अग्नि का एक पुत्र, जो यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पंद्रह विनायकों में से एक माना जाता है (म. व. २१०.१३)।

सुरभ—सारस्वत नगरी के वीरवर्मन् राजा का पुत्र।

सुरभि—कामधेनु नामक गौ का नामान्तर, जो प्राचेतस् दक्षप्रजापति एवं असिक्नी की कन्या मानी जाती है। महाभारत में इसके समुद्र से प्रकट होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. २६१*)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र प्रजापति के सुरभिगंधयुक्त श्वास से इसकी उत्पत्ति का वर्णन प्राप्त है (म. अनु. ७७.१७)।

इसका निवासस्थान गोलोक में था, जो स्वर्ग से भी बढ़ कर अधिक श्रेष्ठ था। इसने ब्रह्मा की उपासना कर अमरत्व की प्राप्ति की थी (म. अनु. २९.३९)। कश्यप ऋषि से इसे नंदिनी नामक गाय कन्या के रूप में प्राप्त हुई थी, जो आगे चल कर वसिष्ठ ऋषि की होमधेनु बन गयी (म. आ. ९३.८)। इस संसार के सारे गाय एवं बैलों की यह जननी मानी जाती है। इसने कार्तिकेय को एक लाख गायें भेंट के रूप में प्रदान की थी।

सुरभि-इंद्रसंवाद—महाभारत में इसने इंद्र के साथ किये एक संवाद का निर्देश प्राप्त है, जहाँ अपने पुत्र वृषभ बैल के साथ एक किसान के द्वारा अत्यंत क्रूरता से व्यवहार करने की वात्सल्यपूर्ण शिकायत की गयी है। पुत्रस्नेह से भरपूर इस संवाद का कथन व्यास ने धृतराष्ट्र से किया था (म. व. १०)।

२. कश्यप एवं क्रोधा की कन्या, जो रोहिणी एवं गंधर्वी नामक दो कन्याओं की माता मानी जाती है (म. आ. ६०.५९)।

३. एक गाय, जो ब्रह्मा के हुंकार के उत्पन्न हुई थी। इसके बड़ी होने पर इसके वक्ष से पृथ्वी पर दूध टपकने लगा, जिससे ही आगे चल कर क्षीरसागर की उत्पत्ति हुई। इसका निवासस्थान रसातल नामक सातवें भूतल में था।

परिवार--इसकी कुल चार कन्याएँ थी, जो चार दिशाओं की प्रतिपालक मानी जाति हैं:--१. सुरूपा, (पूर्व दिशा); २. हंसिका (दक्षिण दिशा); ३. सुभद्रा (पश्चिम दिशा); ४. सर्वकामदुधा (उत्तर दिशा) (म. उ. १००)।

सुरभिमत्--एक अग्नि, जिसे अष्टकपाल नामक हविर्भाग प्रदान किया जाता है।

सुरस--गरुड एवं शुक्री के पुत्रों में से एक।

२. एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)।

सुरसा--एक नाग माता, जो कश्यप एवं क्रोधवशा की कन्याओं में से एक थी। इसके पुत्र का नाम कंक था। इसने हनुमत् की सत्वपरीक्षा ली थी, जिसमें वह सफल होने पर इसने उसे अंगिकृत कार्य यशस्वी होने का आशीर्वाद प्रदान किया था (वा. रा. सुं. १; स्कंद. ३.१.४६)।

सुरा--एक देवी, जो मद्य की अधिष्ठात्रि देवी मानी जाती है। यह वरुण एवं देवी की कन्या थी, एवं समुद्र-मंथन के समय वरुणालय (समुद्र) से उत्पन्न हुई थी (म. आ. १६.३४; विष्णु देखिये)।

सुराजि--रामसभा में उपस्थित एक विदूषक।

सुराधस् वार्षागिर--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.१००)। ऋग्वेद में अन्यत्र वृषागिरपुत्र के नाम से इसका निर्देश अंबरीष, रुद्राश्व आदि ऋषियों के साथ (ऋ. १.१००.१७)।

सुराप--विधृत नामक राजा का प्रधान (पद्म. पा. १११)।

सुरामित्र--एक मरुत्, जो मरुतों के दूसरे गण में से एक था।

सुरायण--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सुरारि--एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवपक्ष में शामिल था (म. उ. ४.२०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'अदारि'।

सुराल--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से शृंगीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था।

सुराव--एक अश्व, जो इल्वलराजा के द्वारा अगस्त्य ऋषि को प्रदान किया गया था (म. व. ९७.१५ पाठ.)।

सुराष्ट्र--एक क्षत्रियवंश, जिसमें रुषर्धिक नामक कुलपांसन राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.११)।

२. दक्षिण पश्चिम भारत का एक लोकसमूह, जहाँ के कौशिकाचार्य आकृति नामक राजा को सहदेव ने अपने दक्षिणदिग्विजय में जिता था (म. स. २८.३९)। इस देश में स्थित चमसोद्भेद, प्रभासक्षेत्र, पिंडारक, उज्जयन्त (रैवतक) आदि विभिन्न तीर्थक्षेत्रों का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. व. ८८)।

३. दशरथ राजा के अष्टप्रधानों में से एक (वा. रा. बा. ७)।

सुरुच्--पक्षिराज गरुड का एक पुत्र।

सुरुचि--उत्तानपाद राजा की पत्नियों में से एक।

२. एक अप्सरा, जो माघ माह में पूषन् नामक सूर्य के साथ भ्रमण करती है।

३. बलि वैरोचन नामक असुर की माता (स्कंद. १.१.१८)।

४. कश्यप एवं अरिष्टा का एक पुत्र।

सुरूप--(सो. क्रोष्टु.) एक पक्षी, जो शुक एवं गरुड का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो असमंजस राजा का पुत्र था (वायु. ९६.१४१)।

३. रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

४. तामस मन्वन्तर का एक देवगण।

सुरूपा--वैवस्वत मन्वन्तर के मरीचि ऋषि की कन्या, जो वारुणि आंगिरस ऋषि की पत्नी थी।

२. दशरथपत्नी कैकेयी का नामान्तर (पद्म. पा. २१६)।

३. मंकिकौशीर्तकि ऋषि की पत्नियों में से एक।

४. सुरभि की एक धेनुस्वरूपी कन्या, जो पूर्व दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.८)।

सुरेणु--संज्ञा का नामान्तर (ह. वं. १.९)। स्कंद में इसे संज्ञा की माता कहा गया है।

सुरेश्वर--शिव का एक अवतार, जो उपमन्यु वासिष्ठ ऋषि के लिए अवतीर्ण हुआ था (शिव. शत. ३२; उपमन्यु वासिष्ठ १. देखिये)।

सुरैषिण--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सुरोचन--(स्वा. प्रिय.) शाल्मलीद्वीप का एक राजा, जो भागवत के अनुसार इध्मबाहु राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.९)।

सुरोचना--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

सुरोचि--वसिष्ठ एवं अरुन्धति का एक पुत्र (भा. ४.१.४१)।

सुरोमन्--तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'सुमना।

सुलक्षण--एक राजा, जिसने माण्डव्य ऋषि को अश्व चुराने के इल्जाम में शूली पर चढ़ाया था (पद्म. उ. १२१)।

सुलभा--एक संन्यासिनी कुमारी, जो प्रधान नामक राजा की कन्या थी। यह स्वयं संन्यासमार्ग एवं योगमार्ग की पुरस्कर्ती थी, जिसने कर्मयोग एवं गृहस्थाश्रम की प्रशंसा करनेवाले मिथिलानरेश जनक राजा से तत्त्वज्ञान पर वादविवाद की थी। यही संवाद महाभारत में 'सुलभा-जनक संवाद' नाम से प्रसिद्ध है (म. शां. ३०८)।

सुलभा-जनक संवाद--कर्मयोग एवं गृहस्थाश्रम की प्रशंसा करते हुए जनक ने इसे कहा, 'मैं स्वयं गृहस्थाश्रमी हूँ, फिर भी मेरा मन विषयोपभोग की इच्छा से संपूर्णतया अलिप्त है। जिस प्रकार भूमि से बाहर रहा बीज अंकुरित नहीं होता है, उसी प्रकार मेरे मुक्त मन में विषयों की उत्पत्ति नहीं होती है'।

इतना कह कर जनक ने कहा कि, उपर्युक्त तत्वज्ञान इसे पंचशिख नामक आचार्य के द्वारा प्राप्त हुआ है। आगे चल कर जनक राजा ने अनेकानेग व्यंग्य वचन कह कर इसका तिरस्कार किया, एवं इसके नाम आदि के संबंध में पृच्छा कर इसे कोई अगण्य एवं अनधिकारी स्त्री साबित करने का प्रयत्न किया।

जनक राजा के उपर्युक्त अपमानजनक संभाषण से यह जरा भी विचलित न हुई। इसने अत्यंत शान्ति से अपनी गुरुपरंपरा का परिचय दिला कर, अपने संन्यास एवं योगशास्त्र विषयक तत्त्वज्ञान का अत्यंत सुस्पष्ट निवेदन किया, 'जिस प्रकार जतुकाष्ठ एवं जलबिंदुओं का संबंध तत्कालिक रहता है, एवं इन दोनों की मिलावट असंभव है, उसी तरह आत्मा एवं इंद्रियोपभोग का एक साथ रहना असंभव है। इसी कारण मेरा यह कहना है कि, राजा का कर्तव्य निभानेवाले व्यक्ति को मोक्षज्ञान असंभव है। यद्यपि वह उसे प्राप्त भी हो जाये, तो टिकना असंभव है।

सुलभा ने आगे कहा, 'तुम स्वयं को मोक्षधर्म के ज्ञानी कहते हो, फिर भी मैं कौन हूँ, मैं कहाँ से आयी हूँ, ऐसे मामूली प्रश्नों के उत्तर भी नहीं जानते। यदि सचमुच ही मुक्त रहते, तो ऐसी अनभिज्ञता दर्शानेवाले प्रश्न तुम नहीं पूछते। जो व्यक्ति मुक्त है, उसे मनुष्यप्राणि कहाँ से आया, एवं कहाँ जानेवाला है इसका ज्ञान अवश्य ही होना चाहिए'।

इस प्रकार अपने तत्त्वपूर्ण संभाषण के द्वारा इसने जनक राजा का आत्मज्ञान के संबंध का सारा गर्व चूर कर दिया।

सुलभा मैत्रेयी--एक तपस्विनी, जो कुणि गर्ग ऋषि की कन्या थी। आश्वलायन गृह्यसूत्र के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होती हैं, कि यह कोई सुविख्यात ऋग्वेदी तत्त्ववादिनी स्त्री होगी।

याज्ञवल्क्य ऋषि की पत्नी मैत्रेयी, एवं जनक राजा के साथ चर्चा करनेवाली सुलभा, इन दोनों ब्रह्मवादिनी स्त्रियों से यह सर्वथा भिन्न स्त्री होगी।

सुलोचन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ६०.३२)।

सुलोचना--रावणपुत्र इंद्रजित् की पत्नी, जो अपनी पति के मृत्यु के पश्चात् सती हो गयी।

२. प्लक्षद्वीप के गुणाकर राजा की कन्या। इसका विवाह तालध्वज नगरी के विक्रम राजा के माधव नामक पुत्र से हुआ था (पद्म. क्रि. ५-६; गुणाकर १. एवं माधव ५. देखिये)।

३. हरिस्वामिन् नामक एक ब्राह्मण की कन्या, जिसकी कथा काशीक्षेत्र में स्थित ज्ञानवापी का माहात्म्य कथन करने के लिए स्कंद में प्राप्त है (स्कंद. ४.१.३३)।

सुलोमन्--एक व्याध, जो अमावस्या के दिन नदी में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (पद्म. भू. ३०)।

सुवंश--(सो. वसु.) वसुदेव एवं श्रीदेवा का एक पुत्र (भा. ९.२४.५१)।

२. (सो. भज.) एक राजा, जो पद्म के अनुसार समौजस् राजा का पुत्र था।

सुवक्त्र--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४)।

सुवचोतथ्य--अंगिरस्कुलोत्पन्न एक प्रवर।

सुवर्चला--देवल ऋषि की ब्रह्मचारी कन्या। अपने, पिता के द्वारा आयोजित किये गये स्वयंवर में, इसने श्वेतकेतु औद्दालकि का वरण किया। इस स्वयंवर के समय इसका श्वेतकेतु के साथ किया तत्त्वज्ञान पर संवाद, महा-

भारत में 'श्वेतकेतु सुवर्चला संवाद' नाम से प्राप्त है (म. शां. ३०४; २२८.२२९)।

यह संवाद महाभारत के केवल कुंभकोणम् संस्करण में भी प्राप्त है; भांडारकर संहिता में वह परिशिष्ट में दिया गया है।

२. परमेष्ठिन् राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम प्रतीह था (भा. ५.१५.३)।

३. परमेष्ठिन्‌पुत्र प्रतीह राजा की पत्नी। इसके प्रतिहर्तृ आदि तीन पुत्र थे (भा. ५.१५.५)।

४. सूर्य की पत्नी (म. अनु. १४६.५; विष्णु. ३.८)।

सुवर्चस्—दधीचि ऋषि की पत्नी। इसके पति दधीचि ऋषि की अस्थियों को इंद्र ने इसे धोखा दे कर प्राप्त की (दधीचि देखिये)। देवताओं का, विशेषतः इंद्र का यह स्वार्थी कृत्य देख कर इसने उन्हें पशु बनने का एवं उनका निर्वंश होने का शाप दिया।

पश्चात् यह अपने पति के साथ सती होने के लिए प्रवृत्त हुई। उसी समय आकाशवाणी से इसे ज्ञात हुआ कि, यह गर्भवती है। यह सुन कर इसने पत्थर से अपना उदर विदीर्ण कर गर्भ बाहर निकाला, एवं उसे एक पीपलवृक्ष के पास रख कर, यह पति के मृत देह के साथ सती हो गयी (पद्म. उ. १५५; शिव. शत. २४-२५)।

इसके गर्भ से उत्पन्न हुआ दधीचि ऋषि का पुत्र, आगे चल कर पिप्पलाद नाम से सुविख्यात हुआ (पिप्पलाद १. देखिये)।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार स्वागत राजा का पुत्र था।

३. (सू. दिष्ट.) दिष्टवंशीय करंधम राजा का नामान्तर (करंधम २. देखिये)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. क. ६२.५)।

५. कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४७. १५)।

६. ब्रह्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

७. रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

८. एक राजा, जो ऐक्ष्वाकव मरु नामक राजा का पुत्र माना गया है। पौराणिक साहित्य के अनुसार, कलियुग में पृथ्वी के समस्त क्षत्रिय लोग विनष्ट होनेवाले है, एवं विद्यमान क्षत्रियकुलों में से पौरव, देवापि एवं ऐक्ष्वाकव मरु नामक केवल तीन ही वंश इस संहार से बचने वाले हैं। ये तीनों क्षत्रिय लोग अपने योगसामर्थ्य के कारण कलियुग के अंत तक क्षत्रिय राजा रहेंगे।

इनमें से ऐक्ष्वाकव मरु को उन्नीसवें युगचक्र के प्रारंभ में वर्चस् नामक पुत्र उत्पन्न होनेवाला है, जो आगे चलकर समस्त क्षत्रियकुलों का उद्धार करेगा (ब्रह्मांड. ३.७४, २५१)। अन्य पुराणों में देवापि के पुत्र का नाम सपौल अथवा सत्य दिया गया है (वायु. ९९.४३८; मत्स्य. २७३.५६-५८)।

९. एक ऋषि, जो भूति ऋषि का भाई था। एकबार इसने एक यज्ञ का आयोजन किया, जिसके लिए इसने बड़े सम्मान से भूति ऋषि को निमंत्रण दिया था (मार्कं. ९६)।

१०. एक राजा, जो सुकेति राजा का पुत्र, एवं सुनामन् राजा का भाई था। अपने भाई एवं पिता के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)।

११. एक अग्नि, जो पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २१०.१३)।

१२. एक ऋषि, जिसने सत्यवान् एवं सावित्री के विरह-दुःख से व्याकुल हुए द्युमत्सेन राजा को सांत्वना प्रदान की थी (म. व. २८२.१०)।

१३. गरुड का एक पुत्र।

१४. हिमवत् के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम अतिवर्चस् था (म. श. ४५.४२)।

सुवर्चस् वासिष्ठ—एक ऋषि, जो कुरुवंशीय सम्राट् संवरण का पुरोहित था (म. आ. ७९.३६)।

सुवर्ण—एक तपस्वी ब्राह्मण, जिसकी कांति सुवर्ण के समान थी। इसने मनु से पुष्प, धूप दीप आदि के दानविषय में चर्चा की थी (म. अनु. १५९)।

२. सावर्णि मनु का एक पुत्र।

३. रुद्रसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

४. इक्ष्वाकुवंशीय सुतपस् राजा का नामांतर (सुतपस् १५. देखिये)।

५. एक ऋषि, जो कुशध्वज ऋषि के दो पुत्रों में से एक था। इसने पैर के अंगुठे पर खड़े रह कर तीन अक्षरों के एक मंत्र का जाप किया, जिस पुण्य के बल से अगले जन्म में इसे सुवीर नामक गोप के घर एक गोपी का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

६. एक राजा, जिसकी कथा 'ॐ नमो नारायण' मंत्र का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. १०)।

७. एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था।

सुवर्णचूड--गरुड का एक पुत्र।

सुवर्णरेतस्--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक ऋषि।

सुवर्णवर्मन् काशिराज--काशी देश का राजा, जो जनमेजय पारिक्षित (अंतिम) की पत्नी वपुष्टमा का पिता था। तक्षक नाग के द्वारा परिक्षित् का वध होने के बाद, मंत्रियों ने बालराजा जनमेजय को हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बिठाया, एवं उसका विवाह इसकी कन्या वपुष्टमा से किया। इसके शतानीक एवं शंख नामक अन्य दो पुत्र भी थे (म. आ. ४०.८-९; ९०.९५)।

सुवर्णशिरस्--एक महर्षि, जो पश्चिम दिशा में रह कर अज्ञात-अवस्था में सामगान करता है (म. उ. १०८.१२)।

सुवर्णष्ठीविन्--एक राजा, जो सृंजय शैब्य (श्वैत्य) राजा का पुत्र था। इसका घर्म, मल, मूत्र, आदि सारा मलोत्सर्ग सुवर्णमय रहता था। इसी कारण, चोरों ने इसका अपहरण किया, एवं इसका वध किया (म. द्रो. परि. १.८.३१०-३२५)। आगे चल कर नारद ने इसे पुनः जीवित किया (म. द्रो. ७१.८-९)।

महाभारत में अन्यत्र प्राप्त कथा के अनुसार, इसे हिरण्यनाभ नामान्तर प्राप्त था, एवं यह गुणों में साक्षात् इंद्रतुल्य था। अपने गुणों के कारण, भविष्य में यह कहीं इंद्रपद प्राप्त न कर ले, इस आशंका से इंद्र ने व्याघ्र के द्वारा इसका वध किया। मृत्यु के समय इसकी आयु पंद्रह वर्षों की थी। आगे चल कर इसके पिता संजय के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर नारद ने इसे पुनः जीवित किया।

इसकी सुकुमारी नामक एक बहन थी, जो नारद की पत्नी थी। इसकी अकाल मृत्यु के पश्चात् पुत्रशोक से व्याकुल हुए संजय राजा को, नारद ने सोलह श्रेष्ठ प्राचीन राजाओं के जीवनचरित्र (षोडश राजकीय), एवं उनकी मृत्यु की कथाएँ सुनाई, एवं हर एक श्रेष्ठ व्यक्ति के जीवन में मृत्यु अटल बता कर उसे सांत्वना दी। नारद के द्वारा वर्णित यही 'षोडश राजकीय' आख्यान अभिमन्यु वध के पश्चात् व्यास के द्वारा युधिष्ठिर को कथन किया गया था (म. शां. परि. १)।

सुवर्णा--एक इक्ष्वाकुवंशीय राजकन्या, जो पूरुवंशीय सुहोत्र राजा की पत्नी, एवं हस्तिन् राजा की माता थी म. आ. १०.३६)।

सुवर्णाभ--एक दिक्‌पाल, जो स्वारोचिष मनु का पौत्र एवं शंखपद का पुत्र था। इसे पिता ने सात्वत धर्म का उपदेश दिया था (म. शां. ३३६.३५)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'सुधर्मन्'।

सुवर्मन्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र, जो भीम के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १०२.९८)।

२. द्विमीढवंशीय सुवर्मन् राजा का नामान्तर (सुधर्मन ८. देखिये)।

सुवर्मन् त्रैगर्त--त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई (म. वि. ३२.४)।

सुवाच्--एक ऋषि, जो पाण्डवों के वनवास काल में द्वैतवन में उनके साथ निवास करता था (म. व. २७.२४)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

सुवासन--ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सुवास्तुक--पाण्डवपक्ष का एक राजा (म. उ. ४.१३)।

सुवाह--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४५)।

सुवित्त--एक ऋषिक।

सुवित्ति--अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार। पाठभेद-'सुचित्ति'।

सुविभु--(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार विभु राजा का पुत्र, एवं सुकुमार राजा का पिता था (वायु. ९२.७१)।

सुवीर--सोमवंशीय तोंड्मान् राजा का नामांतर।

२. एक राजा, जो सौवीरी नामक राजकन्या का पिता, एवं मरुत्त राजा का श्वशुर था (मार्क. १२८)।

३. (सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंशीय सुनीथ राजा का नामान्तर (सुनीथ ३. देखिये)।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो देवश्रवस् एवं कंसावती का ज्येष्ठ पुत्र था (भा. ९.२४.४१)।

५. (सू. इ.) एक राजा, जो द्युतिमत् राजा का पुत्र, एवं दुर्जय राजा का पिता था (म. अनु. २.१०)। पौराणिक वंशावलियों में इसका नाम अप्राप्य है।

६. एक क्षत्रियवंश, जिसमें अजबिंदु नामक एक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.१३)।

७. एक राजा, जो क्रोधवश संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

८. वाराणसी में रहनेवाला एक वणिक्, जिसकी पत्नी का नाम चित्रा था (चित्रा ४. देखिये)।

९. एक गोप, जिसकी कन्या के रूप में सुवर्ण ऋषि ने जन्म लिया था (सुवर्ण ५. देखिये)।

सुवीर शैब्य—(सो. अनु.) सौवीर देश का एक राजा, जो विष्णु, मत्स्य एवं भागवत के अनुसार शिबि राजा का पुत्र था। इसीके ही कारण इसके राज्य को 'सौवीर' नाम प्राप्त हुआ था।

सुवेधन—पांडव पक्ष का एक राजा (म. द्रो. १३३. ३७)।

सुवेधस् शैरिषि—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १४७)।

सुवेषा—कुरुवंशीय परिक्षित राजा की बाहुदा सुयशा नामक पत्नी का नामान्तर (परिक्षित ३. देखिये)।

२. दशरथ राजा की पत्नी, जो पद्म के अनुसार शत्रुघ्न की माता थी।

सुव्रत—पुलह एवं श्वेता का एक पुत्र।

२. (सो. उशी.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार उशीनर राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२०)।

३. एक आचार्य, जिसे पराशर ऋषि ने 'पराशर स्मृति' कथन की थी।

४. (सो. मगध. भविष्य) एक राजा, जो भागवत एवं ब्रह्मांड के अनुसार क्षेम राजा का, एवं विष्णु के अनुसार क्षेम्य राजा का पुत्र था। वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'भुव्रत' एवं 'अनुव्रत' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम धर्मसूत्र था। इसने ६४ वर्षों तक राज्य किया (भा. ९.२२.४८)।

५. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार नृपति राजा का पुत्र था।

६. रौच्य मनु का एक पुत्र, जो मृत्यु के पश्चात् षष्ठी नामक देवी की कृपा से पुनः जीवित हुआ (ब्रह्मवै. २. ४३)।

७. एक ऋषि, जिसने विदूरथ राजा को कुजूंभ राक्षस की जानकारी बतायी थी (मार्क. ११३)।

८. मित्र के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम सत्यसंध था (म. श. ४४. ७)।

९. विधातृ के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम सुकर्मन् था।

१०. एक राजा, जो पूर्वजन्म में विदिशा के रुक्मभूषण राजा का पुत्र था (पद्म. भू. २०-२२)।

सुव्रता—दक्ष एवं वीरिणी की एक कन्या, जिसे दक्ष, धर्म, ब्रह्मा एवं रुद्र से क्रमशः दक्षसावर्णि, धर्मसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि एवं रुद्रसावर्णि नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (ब्रह्मांड. ४.१.३९-५१)।

सुशंख—एक गंधर्व, जिसके शाप के कारण सुनीथा रानी को वेन नामक दुष्ट पुत्र उत्पन्न हुआ था।

सुशर्मन्—कर्ण का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में नकुल के द्वारा मारा गया। पाठभेद (भांडारकर संहिता)— 'सुषेण'।

२. (कण्व. भविष्य.) कण्ववंश का अंतिम राजा, जो अपने बलि नामक अमात्य के द्वारा मारा गया (भा. १२. १.२२)।

३. धर्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

४. एक दुराचारी ब्राह्मण, जिसकी कथा भगवद्गीता के प्रथम अध्याय का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. १७५)।

५. एक ब्राह्मण, जो विशाल नामक ब्राह्मण का पुत्र था। बलाक नामक राक्षस ने इसकी पत्नी का हरण किया, जिसे आगे चल कर उत्तम नामक राजा ने छुड़ा कर इसे वापस दे दिया (मार्क. ६६.६७)।

सुशर्मन् त्रैगर्त प्रस्थलाधिपति—त्रिगर्त देश का सुविख्यात राजा, जो वृद्धक्षेम राजा का पुत्र था। इसी कारण, इसे 'वार्धक्षेमि' पैतृक नाम प्राप्त था। यह एवं इसके सत्यरथ, सत्यधर्मन्, सत्यवर्मन्, सत्येषु एवं सत्यकर्मन् नामक पाँच भाई अत्यंत पराक्रमी थे, एवं स्वयं को 'संशप्तक' योद्धा कहलाते थे। महाभारत में अन्यत्र इसे 'त्रिगर्त' एवं 'प्रस्थलाधिपति' भी कहा गया है (म. द्रो. १६.१९)।

विराट से युद्ध—यह शुरु से ही दुर्योधन का पक्षपाती था, एवं पाण्डवों से द्वेष करता था। पाण्डवों के अज्ञातवास में, इसने दुर्योधन के लिए विराट की गायों का हरण किया था, एवं विराट को कैद कर दुर्योधन के सम्मुख पकड़ कर लाया। किन्तु पश्चात् भीम ने इस पर हमला कर इसे कैदी बनाया, एवं इसे युधिष्ठिर के सामने लाया। उस समय युधिष्ठिर ने इसे बिना किसी शर्त के मुक्त किया (म. वि. २९-३२)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था, एवं इसने एवं इसके भाइयों ने अर्जुन का वध करने की प्रतिज्ञा की थी। किन्तु यह एवं इसके सारे

भाई अर्जुन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. २७; श. २६.४४)।

संशप्तक योद्धा--महाभारत के द्रोणपर्व में 'संशप्तक पर्व' नामक एक उपपर्व है, जहाँ इसे एवं इसके पाँचों भाइयों को 'संशप्तक योद्धा' कहा गया है (म. द्रो. १६-३१)। रण में अपने विशिष्ट प्रतिपक्षी का वध करने की, एवं उनमें यशस्विता प्राप्त न होने पर आत्महत्या करने की प्रतिज्ञा करनेवाले वीरों को 'संशप्तक योद्धा' कहा जाता था (म. द्रो. १६.३९)। इन योद्धाओं की यह प्रतिज्ञा होमहवन के साथ, एवं अग्निदेवता की साक्षी में ली जाती थी। प्रतिज्ञाग्रहण के पश्चात् ये वीर दर्भ से बने हुए वस्त्र धारण करते थे, एवं अपने वस्त्रों पर अग्नि-चर्चित घृत का प्रयोग करते थे (म. द्रो. १६. २१-३७))

जयद्रथवध के समय अर्जुन ने भी इसी प्रकार की प्रतिज्ञा की थी, किन्तु वहाँ उसे संशप्तक नहीं कहा गया है (म. द्रो. ५१.३४-३७)।

सुशर्मन् वार्धक्षेमि--पांचाल देश का एक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष में शामिल था (म. उ. १६८.१६)। वृद्धक्षेम का पुत्र होने के कारण, यह 'वार्धक्षेमि' नाम से ही अधिक सुविख्यात था (वार्धक्षेमि १. देखिये)।

सुशर्मन् शांशपायन--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६१.५६)।

सुशांति--(सो. अज.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार शांति राजा का पुत्र, एवं पुरुज राजा का पिता था (भा. ९.२१.२१)।

२. (सो. नील.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार नील राजा का पुत्र था (मत्स्य. १५०.१)।

३. उत्तम मन्वन्तर का इंद्र।

सुशारद शालंकायन--एक आचार्य, जो ऊर्जवत् औपमन्यव नामक आचार्य का शिष्य, एवं श्रवणदत्त कौहल नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

सुशील--एक गंधर्व (पद्म. स्व. २२; उ. १२८)।

सुशीला--स्ववेंदी नामक गंधर्व की कन्या (पद्म. स. २२)। पद्म में अन्यत्र इसे सुशील गंधर्व की कन्या कहा गया है (पद्म. उ. १२८)।

२. दशपुर में रहनेवाले कृष्णदेव नामक ब्राह्मण की पत्नी (पद्म. ब्र. १२)।

सुशोभना--मण्डूक राज की कन्या, जो इक्ष्वाकुवंशीय परिक्षित् राजा की एक पत्नी थी। इसके शल, दल एवं बल नामक तीन पुत्र थे।

२. चेदिराज की कन्या, जो मरुत आविक्षित की पत्नी थी (मार्क. १२८)।

सुश्यामा--एक अप्सरा, जो आर्ष्टिषेणपुत्र ऋतध्वज की पत्नी थी। इसकी कन्या का नाम वृद्धा था (ब्रह्म. १०७; वृद्धा देखिये)।

सुश्रम--(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार धर्म का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार नृपति राजा का पुत्र था।

सुश्रवस्--एक राजा, जिसने एक साथ साठ राजाओं के साथ युद्ध किया था। इसी युद्ध में इंद्र ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. १.५३.९)।

२. एक आचार्य, जो उपगु सौश्रवस नामक आचार्य का पिता था (पं. ब्रा. १४.६.८)।

३. देवताओं का एक गुप्तचर, जिसने कात्यायन ऋषि के तप की वार्ता सरस्वती को बतायी थी। इसपर सरस्वती ने कात्यायन को दृष्टान्त दे कर कहा, 'जिस ज्ञान की तुम्हें अपेक्षा है, वह सारस्वत मुनि तुम्हें बतायेंगे' (स्कंद. १.२.२.)।

४. अभूतरजस् देवों में से एक।

५. एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५.५३)।

सुश्रवस् कौश्य--एक आचार्य, जो कुश्रि वाजश्रवस नामक आचार्य का समकालीन था (श. ब्रा. १०. ५.५.१)।

सुश्रवस् वार्षगण्य--एक आचार्य, जो प्राप्तरह नामक आचार्य का शिष्य, एवं साति औष्ट्राक्षि नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

सुश्रवा--एक विदर्भ राजकन्या, जो कुरुवंशीय जयत्सेन राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम अवाचीन था (म. आ. ९०.१७ पाठ.)।

सुश्रवा सौबला--गांधारराज सुबल राजा की कन्या, जो धृतराष्ट्र की पत्नियों में से एक थी।

सुश्रुत--एक सुविख्यात शल्यचिकित्साशास्त्रज्ञ, जो 'सुश्रुत संहिता' नामक विख्यात ग्रंथ का रचयिता माना जाता है। यह गाधि राजा का पौत्र, एवं विश्वामित्र का पुत्र था (म. अनु. ४.५५)। यह शल्यचिकित्सा के आद्य

आचार्य धन्वन्तरि दिवोदास के सात शिष्यों में से एक प्रमुख शिष्य था(गरुड. १.१७५)। अन्य पुराणों में इसे शालिहोत्र का शिष्य कहा गया है (अग्नि. २९२.४४)।

सुश्रुत संहिता—आयुर्वेदीय शल्यचिकित्साशास्त्र का आद्य आचार्य धन्वन्तरि दिवोदास माना जाता है, जिसके सात शिष्यों ने मिल कर आयुर्वेदीय 'शल्यचिकित्सापद्धति' का सर्वप्रथम प्रसार किया। इन शिष्यों में से सुश्रुत ही एक आचार्य ऐसा है कि, जिसका 'सुश्रुत-संहिता' नामक ग्रंथ आज उपलब्ध है। इस ग्रंथ में, आचार्य धन्वन्तरि से प्राप्त शल्यमूल आयुर्वेदीय ज्ञान इसने तंत्र-रूप में संग्रहित किया है। यह ग्रंथ पूर्वतंत्र एवं उत्तर-तंत्र नामक दो भागों में विभाजित किया गया है।

उपलब्ध 'सुश्रुत संहिता' से प्रतीत होता है कि, सुश्रुत के द्वारा विरचित आद्य 'सुश्रुत-संहिता' के प्रतिसंस्करण का कार्य नागार्जुन के द्वारा हुआ था (सु. सं. वि. ३.१३)। 'वृद्ध सुश्रुत' नामक और एक संहिता उपलब्ध है, जो संभवतः इसके उत्तरकालीन किसी आचार्य की रचना होगी।

समवर्ती आचार्य—सुश्रुता संहिता में, औपधेनेव नामक धन्वंतरि के और एक शिष्य का निर्देश समवर्ती आचार्य के नाते प्राप्त है (सु. सं. सू. ४.९)। इसके साथ ही उरभ्र पौष्कलावत, करवीर्य, वैतरण आदि धन्वंतरि-शिष्यों का भी निर्देश भी इसके ग्रंथ में प्राप्त है।

परिवार—इसके पुत्रपौत्रदि संतानों का निर्देश वाग्भट (अष्टांगसंग्रहसूत्र पृ. १५२); कात्यायन (महाभाष्य १. पृ. ४०६); एवं पाणिनि (पा. सू. ६.२.३६ कार्तकौजपादिगण); आदि में प्राप्त है।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार सुवर्चस् राजा का पुत्र, एवं जय राजा का पिता था (ब्रह्मांड. ३.६४.२१)। विष्णु में इसे सुभाष राजा का पुत्र कहा गया है (विष्णु. ४.५.३१)।

सुषामन्—एक व्यक्तिनाम (ऋ. ८.२५.२२), जो संभवतः ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट वरोसुषामन् नामक व्यक्ति का अपभ्रष्ट रूप होगा (ऋ. ८.२३.२८)। सायणाचार्य के अनुसार, ये दोनों भी नाम व्यक्तिनाम न हो कर, किसी अन्य वस्तु के थे।

सुविनंदिन्—(किलकिला. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार कृतनंद राजा का पुत्र था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे भूतिनंद कहा गया है।

सुषेण—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५७.१६)।

२ (सो. पूरु.) एक राजा, जो अविक्षित्पुत्र परिक्षित् राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.४८)।

३. जमदग्नि एवं रेणुका के पुत्रों में से एक। रेणुका का वध करने की जमदग्नि ऋषि की आज्ञा इसने अमान्य की थी। इस कारण उसने इसे शाप दिया। आगे चल कर, परशुराम ने जमदग्नि के शाप से इसे मुक्त कराया(म. व. १३६.१०–१७)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ७.२८; द्रो. १०२.९४)। इसके वध का निर्देश महाभारत में दो स्थानों पर प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह एक व्यक्ति न हो कर एक ही नाम के दो व्यक्ति थे।

५. एक यादव राजा, जो बभ्रु राजा का पुत्र, एवं सभाक्ष राजा का पिता था (ह. वं. २.३८)।

६. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार वृष्णिमत् राजा का, भागवत के अनुसार वृष्टिमत् राजा का, एवं वायु के अनुसार कतिमत् राजा का पुत्र था।

७. कंस के द्वारा मारा गया देवकी का एक पुत्र।

८. स्वारोचिष मनु का एक पुत्र।

९. एक मरुत्, जो मरुतों के द्वितीय गण में समाविष्ट था।

१०. सुतपस् देवों में से एक (सुतपस् १६. देखिये)।

११. एक गंधर्व, जो माघ माह के पूषन् के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३९)।

१२. कर्ण का एक पुत्र एवं चक्ररक्षक, जो दुर्योधन पक्ष का प्रमुख योद्धा था (म. क. ३९.४०)। यह द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था। भारतीय युद्ध में यह उत्तमौजस् के द्वारा मारा गया (म. क. ५३.१०.-११)।

१३. कर्ण का एक पुत्र (म. श. ५.३)। भारतीय युद्ध में यह नकुल के द्वारा मारा गया (म. श. ९.४७-४९)।

१४. कर्ण का एक पुत्र, जिसने भारतीय युद्ध में केकयाधिपति उग्रधन्वन् के साथ युद्ध किया था। अंत में यह यादव राजा सात्यकि के द्वारा मारा गया (म. क. ६०.४–६)।

सुषेण वानर— एक सुविख्यात वानरप्रमुख, जो धर्म नामक वानर का पुत्र, एवं वानरराज वालि का श्वशुर

था। यह एक सुविख्यात युद्धविशारद ही नहीं, बल्कि वैद्यक शास्त्रज्ञ भी था। सीता शोध के लिए, पश्चिम दिशा में गये हुए वानरदल का यह प्रमुख था।

राम-रावण युद्ध में---इस युद्ध में लक्षावधि वानर सैनिकों को ले कर, यह राम के पक्ष में शामिल हुआ था। (म. व. २६७.२)। विद्युन्मालिन् राक्षस से युद्ध कर, इसने उसका वध किया था (वा. रा. यु. ४३. १४)।

रावणपुत्र इंद्रजित् का वध होने के पश्चात्, रावण ने लक्ष्मण पर अमोघ शक्ति फेंकी, जिस कारण लक्ष्मण मूर्च्छित हो गया, एवं हजारों वानर आहत हो गये। उस समय, इसने विशल्यकरिणी, सावर्ण्यकरिणी, संजीवनी संधानी आदि औषधियों का उपयोग कर, लक्ष्मण की मूर्च्छा भंग की। उसी समय, मूर्च्छना लानेवाली औषधियों का उपयोग कर आहत वानर सैनिकों के शरीर में घुसे हुए शस्त्र बाहर निकाले (वा. रा. यु. ९१.२४-२७) लक्ष्मण के लिए आवश्यक औषधियाँ महादेव पर्वत से लाने की आज्ञा इसने हनुमत् को दी थी, किंतु उन ओषधियों का ज्ञान न होने के कारण, हनुमत् उस पर्वत को ही अपने हाथ पर उठा कर ले आया (वा. रा. यु. १०१)।

राम के राज्याभिषेक के समय यह उपस्थित था, उस समय दक्षिण समुद्र का पानी इसने राज्याभिषेक के लिए इसने उन्हें अर्पित किया था (वा. रा. यु. १२८. ५४)।

परिवार---इसकी कन्या का नाम तारा था, जिसका विवाह वानरराज वालिन् से हुआ था। इसके मैंद एवं द्विविद अन्य नामक दो पुत्र भी थे (वा. रा. कि. ४२.१)।

सुसत्य---एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

सुसंधि--(सू. इ.) एक राजा, जो महुश्रुत राजा का पुत्र, एव अमर्ष राजा का पुत्र था (वायु. ८८.२११)।

सुसंभाव्य---रैवत मनु का एक पुत्र।

सुसामन्---एक धनंजयगोत्रीय ब्राह्मण, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सामगान करने के लिए उपस्थित था (म. स. ३०.३४)।

सुस्वधा--आज्यप पितरों का सामूहिक नाम। ये निपुत्रिक थे, एवं कामदुघलोक में निवास करते थे (पद्म. सृ. १९)।

सुस्वर---गरुड का एक पुत्र।

सुस्वरा--स्वरवेदी गंधर्व की कन्या (पद्म. उ.१२८)।

सुहनु--वरुण की सभा में उपस्थित एक असुर (म. स. ९.१३)।

सुहवि--(सो. पूरु.) एक राजा, जो भरत राजा का पौत्र, एवं भुमन्यु का पुत्र था। इसकी माता का नाम पुष्करिणी था (म. आ.; सुहोत्र ६. देखिये)।

सुहविस् आंगिरस---एक वैदिक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १४.३.२५)।

सुहस्त--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३२.११३५*)।

सुहस्त्य घौषेय---एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ४१)। 'घोषा' का पुत्र होने के कारण, इसे घौषेय मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा। सायण के अनुसार, घौषेय इसका मातृक नाम न हो कर, वह 'सुहस्त्य' का ही समानार्थी शब्द है।

सुहू--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो उग्रसेन का पुत्र था (भा.९.२४.२४)।

सुहोत्र---एक शिवावतार, जो व्यास की सहायता के लिए अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:--१. सुहोत्र; २. दुर्मुख; ३. दुर्दभ; ४. दुरतिक्रम (शिव. शत. ४)।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार क्षत्रवृद्ध का, एवं वायु के अनुसार धर्मवृद्ध राजा का पुत्र था (भा. ९.१७.२-३)। यह काश्यवंश का सर्वप्रथम राजा माना जाता है। इसके काश्य (कश्यप), कुश (काश), एवं गृत्समद नामक तीन पुत्र थे। पौराणिक साहित्य में अन्यत्र इसके 'सुनहोत्र', एवं 'सुतहोत्र' नामांतर प्राप्त हैं (अग्नि. २७७; ब्रह्म. १३)।

३. (सो. अज.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार सुधनुष् राजा का पुत्र, एवं च्यवन राजा का पिता था (भा. ९.२२)। वायु में इसे सुधन्वन् राजा का पुत्र कहा गया है।

४. (सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो सहदेव पांडव का पुत्र था। इसकी माता का नाम माद्री विजया था, जिसे सहदेव ने स्वयंवर का प्रण जीत कर प्राप्त किया था (म. आ. ९०.८७)।

विष्णु, मत्स्य एवं वायु में, इसे नकुल पांडव का पुत्र कहा गया है, किंतु यह असंभव प्रतीत होता है।

५. एक ऋषि, जो वनवासकाल में पांडवों के साथ निवास करता था (म. व. २७.२४)।

६. एक राजा, जो भरत राजा का पौत्र, एवं भुमन्यु का पुत्र था। इसे 'सुहोतृ', 'सुहवि', 'सुयजु' आदि नामांतर भी प्राप्त थे। इसकी माता का नाम पुष्करिणी था।

यह अत्यंत दानशूर एवं अतिथिप्रिय राजा था। इसकी दानशूरता से प्रसन्न हो कर, इन्द्र ने इसके राज्य में एक वर्ष तक सुवर्ण की वर्षा की थी। इस सुवर्णवर्षा से प्राप्त सारी संपत्ति इसने ब्राह्मणों में बाँट दी थी (म. द्रो. परि. १.८.३६०-३८३; शां. २९.२२१)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम इक्ष्वाकुकन्या सुवर्णा था, जिससे इसे अजमीढ, सुमीढ एवं पुरुमीढ नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

इसकी निम्नलिखित अन्य पत्नियाँ एवं पुत्र भी थेः—१. **धूमिनी**—ऋक्ष; २. **नीली**—दुःषन्त, परमेष्ठिन्; ३. **केशिनी**—जह्नु, जन एवं रुपिन् (म. आ. ८९.२०-२८)।

महाभारत में अन्यत्र इसके हस्तिन् नामक पुत्र का निर्देश प्राप्त है, जिसके वंश में आगे चल कर विकुंठन, अजमीढ एवं संवरण आदि राजा उत्पन्न हुए। इनमें से संवरण राजा 'वंशकर' हुआ, जिसने हस्तिनापुर का पूरु वंश आगे चलाया (म. आ. ९०.३५-३९)।

७. रामसेना का एक वानर।

८. (सो. अमा.) एक राजा, जो वायु के अनुसार जह्नु राजा का पुत्र, था। इसकी माता का नाम कावेरी था (वायु. ९१.७)।

९. (सो. अमा.) एक राजा, जो कांचनप्रभ (कांचन) राजा का पुत्र, एवं जह्नु राजा का पिता था (विष्णु. ४.७.३)। इसकी पत्नी का नाम केशिनी था। भागवत में इसे 'होत्रक' कहा गया है।

१०. (सो. पूरु.) एक राजा, जो बृहत्क्षत्र नामक राजा का पुत्र, एवं हस्तिन् राजा का पिता था (वायु. ९९.१६५)।

सुहोत्र धौषेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.४१)।

सुहोत्र भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.३१-३२)।

सुह्म—(सो. अनु.) एक राजा, जो बलि आनव राजा के पुत्रों में से एक था (बलि आनव देखिये)।

२. पूर्व भारत का एक जनपद, जिसे भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में जीता था (म. स. २७.१४)।

सुहृदय—घटोत्कचपुत्र बर्बरिक का नामांतर (बर्बरिक देखिये)।

सूक्त—एक मंत्रद्रष्टा आचार्य, जो प्राणदेवता का माहात्म्य कथन करनेवाले मंत्र का रचयिता माना जाता है (ऐ. आ. २.२.२)। ऐतरेय आरण्यक में इस शब्द का 'वैदिक मंत्रसमुदाय' अर्थ अभिप्रेत है, जो ऋग्वेद मंडल, सूक्त एवं मंत्र में विभाजित हैं।

सूक्ष्म—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

सुक्ष्मायणि—अठ्ठाईस व्यासों में से एक (व्यास पाराशर्य देखिये)।

सूत—एक जातिविशेष, जो पुराणों के पठन आदि का कार्य करती थी (रोमहर्षण 'सूत' देखिये)।

२. विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र (म. अनु. ४.५७)।

३. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुआ था (म. आ. ६६.११*)।

सूनामुख—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

सूनु आर्भव—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७६)। यह संभवतः ऋभु ऋषि का पुत्र होगा।

सूनृता—रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के स्वधाम नामक अवतार की माता, जो सत्यसह नामक ऋषि की पत्नी थी (भा. ८.१३.२९)।

२. उत्तानपादपत्नी सुनीति का नामान्तर।

सूरि—शिवदत्त ब्राह्मण का एक पुत्र, जिसे ऋषि शाप के कारण मृगयोनि प्राप्त हुई थी। आगे चल कर अगस्त्याश्रम में राम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.३५)।

सूर्मी अथवा **सूर्म्या**—अनुह्राद नामक राक्षस की पत्नी।

सूर्य—एक देवता, जिसके लिए वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में 'सवितृ', 'विवस्वत्' 'पूषन्' आदि विभिन्न नामान्तर दिये गये है। संभवतः सूर्य की विभिन्न अवस्थाओं को प्रतीकरूप मान कर सूर्यदेवता को ये नामांतर प्राप्त हुए होंगे (सवितृ, पूषन् एवं विवस्वत् देखिये)।

अथर्ववेद में सूर्य के सात नाम (सप्तसूर्याः) दिये गये हैं, जो संभवतः सूर्य के सात रश्मियों का प्रतिनिधित्व करते हैं (अ. वे. १३.३.१०; सवितृ देखिये)।

महाभारत में इसके निम्नलिखित बारह नाम दिये गये है:—१. दिवस्पुत्र, २. बृहद्भानु, ३. चक्षु, ४. आत्मा, ५. विभावसु, ६. सवितृ, ७. ऋचीक, ८. अर्क, ९. भानु,

१०. आशावह, ११. रवि, १२. विवस्वत् (म. आ. १.४०)।

सूर्यदेवता के कल्पना का उद्गम--आधुनिक भौतिक शास्त्र के अनुसार पृथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से होने की कल्पना स्वीकृत की गयी है। वैदिक साहित्य में इसी कल्पना को स्वीकार किया गया है, जहाँ सूर्य को इस विश्व का आत्मा एवं पिता माना गया है:--

आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं।
सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥

(ऋ. १.११५.१)।

(इस विश्व के चर एवं अचर वस्तुओं की आत्मा सूर्य ही है)।

इसी कल्पना के अनुसार सूर्यपत्नी अदिति अथवा दिति को विश्व की माता कहा गया है, एवं दितिपुत्र दैत्य को एवं अदितिपुत्रों को 'आदित्य' कहा गया है।

पौराणिक साहित्य में कश्यप ऋषि को सूर्य का ही प्रतिरूप माना गया है, एवं उसकी अदिति एवं दिति नामक दो पत्नियाँ दी गयी है, जो क्रमशः दिन एवं रात का प्रतिनिधित्व करती है। इन दोनों का पुत्र अग्नि है, जो पृथ्वी में सूर्य का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार सूर्य एवं उससे संबंधित. देवतापरिवार का संबंध सृष्टिउत्पत्ति एवं सृष्टि संचालन कार्य से स्पष्ट रूप से होता है।

सूर्य उपासना--सूर्य की गति, उपासना एवं इसके एकसौ आठ नामों का जाप प्राचीन काल से भारतवर्ष में प्रचलित है। इसी उपासना का उपदेश धौम्य ऋषि ने युधिष्ठिर को किया था (म. व. ३.१६-३३; १६०. २४-३७)।

सूर्य उपासना के ग्रंथ--विश्वामित्र ऋषि के द्वारा विरचित 'गायत्रीमंत्र' एवं विभिन्न 'सौर सूक्त' ऋग्वेद में प्राप्त है, जो सूर्य देवताविषयक सर्वाधिक प्राचीन साहित्य कहा जा सकता है। उपनिषद ग्रंथों में से 'सूर्योपनिषद,' सूर्योपासना से ही संबंधित है। 'सूर्य गीता' नामक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जो 'गुरुज्ञानवासिष्ठ तत्वसारायण' नामक ग्रंथ में अंतर्भूत है (कर्मकाण्ड. ३.१-५)। पौराणिक साहित्य में से 'भविष्य' एवं 'ब्रह्मवैवर्त' पुराण 'सौर' पुराण माने जाते हैं।

शाकद्वीप से सूर्यप्रतिमा तथा सूर्योपासना भारत में सर्वप्रथम आयी, जिसका का स्वरूप वैदिक सूर्य उपासना से कई अंश में भिन्न था (सांब देखिये)।

सूर्य सौवश्व--एतश नामक ऋषि का शत्रु, जिसे इसने आहत किया था (ऋ. १.६१.१५; ४.१७.१४; एतश देखिये)।

सूर्यक--(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार विश्वाखयूप राजा का पुत्र था।

सूर्यतेजस्--एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

सूर्यदत्त--विराट का एक भाई, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. उ. १६८.१४; वि. ३०. १३; द्रो. १३३.३९; क. ५.८३)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'सुदर्शन'।

सूर्यध्वज--एक राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१०)।

सूर्यनेत्र--गरुड़ का एक पुत्र।

सूर्यभास--कौरवपक्ष का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४७.१५)।

सूर्यवर्चस--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था। यह कार्तिक माह के विष्णु नामक आदित्य के साथ भ्रमण करता है। अपने अगले जन्म में यह घटोत्कच पुत्र बर्बरिक बन गया।

सूर्यवर्मन्--त्रिगर्त देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा करनेवाले अर्जुन से परास्त हुआ था (म. आश्व. ७३.११)। इसी युद्ध में इसका केतुवर्मन् नामक भाई मारा गया।

सूर्यशत्रु--लंका का एक राक्षस (वा. रा. यु. ९)।

सूर्यश्री एवं सूर्यसावित्री--एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३३-३४)।

सूर्यासावित्री--एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री (ऋ. १०. ८५)। इसके द्वारा रचित सूक्त में इसके विवाह का वर्णन प्राप्त है। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे सवितृकन्या कहा गया है, एवं अश्विनों के विवाहरथ में इसके आरूढ होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.११६.१७; ११९.५)। ऐतरेय ब्राह्मण में, अश्विनों के द्वारा होड़ में विजय प्राप्त करने पर उनका विवाह इसके साथ संपन्न होने का निर्देश स्पष्ट रूप से प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ४.७; प्रजापति देखिये)।

अश्विनों के साथ इसका विवाह होने का उपर्युक्त वर्णन वस्तुस्थितिनिदर्शक है, या रुपकात्मक है यह कहना मुश्किल है।

सूर्याक्ष--रामसेना का वानर।

२. एक राजा, भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। यह क्रथ नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था।

सृगाल—एक राजा, जो स्त्रीराज्य का अधिपति था। कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. शां. ४.७)। पाठभेद—'शृगाल'।

सृंजय—उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

२. (सू. नाभाग.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार नाभाग राजा का पुत्र था।

३. (सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कालनर राजा का पुत्र, एवं जनमेजय राजा का पिता था। वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'कालनल' एवं 'कोलाहल' राजा का पुत्र कहा गया है। मत्स्य में इसका संजय नामान्तर प्राप्त है। यह प्रारंभ से ही कृष्ण का विरोधक था, जिसने इसको परास्त किया था।

४. (सो. नील) एक राजा, जो पंचजन नामक राजा का पिता था (ह. वं. १.३२)। संभवतः सृंजय पांचाल एवं यह दोनों एक ही होंगे (सृंजय पांचाल देखिये)।

५. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत, मत्स्य एवं वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र, एवं धनु एवं वज्र नामक राजाओं का पिता था (मत्स्य. ४६.३)। इसकी पत्नी का नाम राष्ट्रपाली था, जो कंस राजा की भगिनी थी। कई पुराणों में इसके पुत्रों के नाम कृश एवं दुर्मर्षण दिये गये हैं।

६. क्षत्रवंशीय संजय राजा का नामांतर (संजय २. देखिये)।

७. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष में शामिल था (म. द्रो. ३४.५; ३९.१७)।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में इन लोगों का उल्लेख तृत्सु लोगों के साथ प्राप्त है, जहाँ तृत्सु राजा दिवोदास एवं सृंजय राजा की एकसाथ ही प्रशस्ति की गयी है, एवं उन दोनों को तुर्वशों के शत्रु बताये गये हैं (ऋ. ६.२७.७)। शतपथ ब्राह्मण में भी देवभाग श्रौतर्षि को कुरु एवं सृंजय लोगों का पुरोहित बताया गया है (श. ब्रा. २.४-५)।

अथर्ववेद के अनुसार ये लोग कोई नैसर्गिक आपत्ति की शिकार बने थे, एवं इसी आपत्ति में इनके विनष्ट होने का अस्पष्ट निर्देश वहाँ प्राप्त है (अ. वे. ५.१९.१)। काठक संहिता एवं तैत्तिरिय संहिता में भी इसी तर्क की पुष्टि मिलती है, जहाँ किसी सांस्कारिक त्रुटि के कारण इनके विनष्ट होने का निर्देश प्राप्त है (का. सं. १२.३; तै. सं. ६.६.२.२)।

निवासस्थान—हिलेब्रांट के अनुसार सृंजय लोग दिवोदास के साथ सिंधु नदी के पश्चिम में कहीं निवास करते थे। कई अभ्यासक इन्हें युनानी 'सेरांगै' लोगों के साथ समीकृत करते है, एवं इनका आद्य निवासस्थान ड्रेन्जियाना में बताते है। त्सीमर के अनुसार ये लोग सिंधुघाटी के उपरि भाग में बसे हुए थे। इनके मित्र तृत्सु-गण मध्य देश में स्थित थे, इस कारण इनके सिंधु नदी के पूर्व भाग में निवास करने की संभावना प्रतीत होती है।

ऐतिहासिक निर्देश—इन लोगों के द्वारा दुष्टरितु पौंसायन नामक राजा को, एवं रेवोत्तरस् पाटव चाक्रस्थपति नामक अमात्य को अधिकारभ्रष्ट करने का निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. १२.९.३.१)। आगे चल कर रेवोत्तरस् पाटव ने कुरु राजा बाह्लिक प्रातीप्य के विरोध के विपरित भी अपने राजा को पुनः एक बार राजगद्दी पर प्रतिष्ठापित किया।

इन लोगों के राजाओं में, सृंजय दैववात, प्रस्तोक सृंजय (ऋ. ६.४७.२२); वीतहव्य सृंजय; साहदेव्य सोमक (ऋ. ४.१५.७; ऐ. ब्रा. ७.३४.९); एवं साहदेव्य सोमक के पिता सहदेव (सुप्लन्) साञ्जय (ऐ. ब्रा. ७.३४.९) का निर्देश विशेष प्रमुखता से पाया जाता है। इनमें से अंतिम दो राजाओं को पर्वत एवं नारद ने राज्याभिषेक किया था।

सृंजय दैववात—सृंजय लोगों का एक राजा, जिसने तुर्वश एवं वृचीवन्त जाति के अपने शत्रुओं पर विजय किया था (ऋ. ६.२७.७)। स्वयं इंद्र ने इसकी मदद कर तुर्वशों को इसके हाथ सौंपा दिया। देववत् का वंशज होने के कारण इसे 'दैववात' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. ४.१५.१)। इसके यज्ञाग्नि का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है।

सृंजय पांचाल—(सो. नील.) पांचाल देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार हर्यश्व राजा का, एवं वायु के अनुसार रिक्ष राजा का पुत्र था। भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'संजय' एवं 'जय' कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम क्रमशः भर्म्याश्व एवं भद्राश्व दिया गया है।

सृंजय वैतहव्य—एक लोकसमूह, जो संभवतः सृंजय लोगों का ही नामान्तर था। भृगु ऋषि की हत्या करने के कारण, इन लोगों का नाश हुआ (अ. वे. ५.१९.१)।

सृंजय वैशालि--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो वायु एवं विष्णु के अनुसार धूम्राश्व राजा का पुत्र, एवं सहदेव राजा का पिता था (वायु. ८६.१९; विष्णु. ४.१.५३)। ब्रह्मांड में इसे धूम्राश्व राजा का पुत्र कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६१.१४)। भागवत में इसे 'संयम' कहा गया है।

सृंजय शैब्य--एक राजा, जो शिबि राजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम कैकेयी था, जिससे इसे सुवर्णष्ठीविन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इसकी कन्या का नाम दमयंती (मदयंती) अथवा श्रीमती था, जिसका विवाह नारद से हुआ था (नारद. ३. देखिये)।

इसके पुत्र सुवर्णष्ठीविन् की चोरों के द्वारा हत्या होने पर यह अत्यधिक शोक करने लगा। इस पर इसके दामाद नारद ने इसे सांत्वना देने के लिए सोलह श्रेष्ठ राजाओं (षोडश राजकीय) का एक आख्यान सुनाया, जिसमें मानवीय जीवन में मृत्यु की नित्यता, एवं तद्हेतु शोक करने का वैफल्य बहुत ही सुंदर प्रकार से विशद किया था (म. द्रो. परि. १.८.३२५-८७२; सुवर्णष्ठीविन् एवं नारद २. देखिये)। पश्चात् नारद ने इसके पुत्र सुवर्णष्ठीविन् को पुनः जीवित किया।

सृंजय होत्रवाहन--एक राजर्षि, जो काशिराज की कन्या अंबा का मातामह, एवं परशुराम का मित्र था। अंबा के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर यह अपने मित्र परशुराम के पास गया, एवं इसने उसे भीष्म से मिल कर उसका मन अंबा से विवाह करने के लिए अनुकुल बनाने के लिए प्रार्थना की (म. उ. १७५.१५-२७; ३०)। पाण्डवों के वनवासकाल में इसने उनके साथ निवास किया था (म. व. २७.२४)।

सृतंजय--मगधवंशीय श्रुतंजय राजा का नामान्तर (श्रुतंजय ३. देखिये)।

सृबिंद--इंद्र का एक शत्रु, जिसका उसने वध किया।

सृष्टि--(सो. वृष्णि.) उग्रसेन राजा का आठवाँ पुत्र (भा. ९.२४.२४)।

२. ध्रुव एवं भूमि का एक पुत्र।

३ ब्रह्मा की सभा में उपस्थित एक देवी (म. स. १३२*)।

सेक--एक लोकसमूह, जिसे सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २८.२९७*)।

सेचक--धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'मैचक'।

सेतु--(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार द्रुह्यु राजा का पुत्र, एवं अरुद्ध राजा का पिता था (मत्स्य. ४८.६; वायु. ९९.७)। भागवत में इसे बभ्रु राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम 'आरब्ध' बताया गया है (भा. ९.२३.१४)। विष्णु में इसे 'सेतुपुत्र' अथवा 'आरद्वत' कहा गया है। महाभारत में निर्दिष्ट अंगारसेतु अथवा अंगार राजा संभवतः यही होगा (अंगार देखिये)।

सेदुक--एक राजा, जो वृषदर्भ राजा का मित्र था (वृषदर्भ देखिये)।

सेन--(सो. अनु.) अनुवंशीय हेम राजा का नामान्तर।

सेनक--एक वैयाकरण (पा. सू. ५.४.११२)।

सेनजित्--(सो. अज.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार विषद राजा का पुत्र, एवं रुचिराश्व राजा का पिता था (भा. ९.२१.२३)। रुचिराश्व के अतिरिक्त इसके दृढहनु, काश्य एवं वत्स नामक अन्य तीन पुत्र थे।

विष्णु एवं वायु के अनुसार यह विश्वजित् राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार अश्वजित् राजा का पुत्र था। इसके द्वारा प्रणीत नीतिशास्त्र (राजधर्म) का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. शां. २६.१३-२९)।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो कृशाश्व राजा का पुत्र, एवं युवनाश्व राजा का पिता था (भा. ९.६.२५)। अन्य पुराणों में इसे प्रसेनजित् कहा गया।

३. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो बृहत्कर्म राजा का पुत्र था। यह अधिसोमकृष्ण पौरव, एवं दिवाकर ऐक्ष्वाक आदि राजाओं का समकालीन था। इसके ही शासनकाल में पुराणों का लेखन हुआ।

४. एक अप्सरा, जो फाल्गुन माह के सूर्य के साथ भ्रमण करती है (भा. १२.११.४०)।

५. एक मरुत्, जो मरुतों के दूसरे गण में समाविष्ट था।

सेनानी--एकादश रुद्रों में से एक (म. भी. ६०.२७)।

सेनापति--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ६०.२७)।

सेनाबिंदु--एक क्षत्रिय राजा, जो तुहुण्ड नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२०)। इसे

क्रोधहन्तृ नामान्तर भी प्राप्त था। इसकी राजधानी देवप्रस्थ नगरी में थी।

द्रौपदीस्वयंवर में यह उपस्थित था (म. आ. १७७. ८)। अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय, उलूकराज के साथ इस पर आक्रमण कर इसे राज्यभ्रष्ट किया था (म. स. २४.९)।

भारतीय युद्ध में यह पाण्डवपक्ष में शामिल था, एवं इसकी श्रेणि 'रथसत्तम' थी (म. उ. १६०.१९)। यह श्रीकृष्ण एवं भीमसेन के समान पराक्रमी माना जाता था। इसके रथ के अश्व पीले रेशम के वर्ण के थे, एवं उन पर स्वर्ण का जीन लगा हुआ था (म. द्रो. २२. १६३*)। इसी युद्ध में यह कर्ण के द्वारा मारा गया (म. क. ३२.३७)।

सेयन--विश्वामित्र का एक पुत्र।

सैंहिकेय--एक सुविख्यात राक्षससमूह, जो विप्रचित्ति दानव एवं सिंहिका के पुत्र थे। इस समूह में कुल एक सौ राक्षस थे (विप्रचित्ति देखिये)।

सैंहिकेय साल्व--एक असुर, जिसका परशुराम ने देवताओं की आज्ञा से वध किया (विष्णुधर्म १.५२)।

सैतव--एक आचार्य, जो पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. २.५.२१; ४.५.२७)। इसके शिष्यों में गौतम (बृ. उ. २.६.२; ४.६); एवं आग्निवेश्य (श. ब्रा. १४.७.३.२७) प्रमुख थे।

सैत्य—अंगिराकुलोत्पन्न एक प्रवर।

सैन्धव—सिंधु देश के निवासियों का सामूहिक नाम (म. व. ५१.२१)।

सैन्धवायन—विश्वामित्र का एक पुत्र, एवं विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

२. एक आचार्य, जो व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा में से शौनक नामक आचार्य का शिष्य था।

सैबलक--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'सर्वशौलाब'।

सैरांध्रि—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सैरंध्री—विराट नगर में अज्ञातवास के समय द्रौपदी के द्वारा धारण किया गया नाम।

२. केकयराज की एक कन्या, जो मरुत्त आविक्षित राजा की पत्नी थी (मार्क. १२८)।

सैषिरिरि—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सोक्ति--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सोदन्ति--एक आचार्य, जिस पर विश्वामित्र ऋषि ने विजय प्राप्त की थी (पं. ब्रा. १४.५.१३)।

सोभरि काण्व—एक आचार्य, जिसे ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. ८.१९.२२; १०३)। इसके द्वारा विरचित सूक्त में इसके सोभरि नामक पिता का, एवं इसके परिवार के लोगों का कई बार उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ८.५.२६; १९.३२; २२.१५)। त्रसदास्यु के द्वारा इसे पचास वधुओं की प्राप्ति होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में इसी कथा का संकेत प्राप्त है। किन्तु वहाँ इसे सौभरि कहा गया है (सौभरि देखिये)।

सोम--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१२४.१;५-९)।

२. चंद्रमा का नामांतर। यह एक प्रजापति एवं स्वायंभुव मन्वन्तर के अत्रि ऋषि का पुत्र था। इसकी सत्ताईस पत्नियाँ थी, जो दक्ष प्रजापति की कन्या थी (चन्द्र एवं दक्ष देखिये)। सप्तर्षियों के द्वारा किये गये पृथ्वीदोहन के समय यह बछडा बना था। इसके नगरी का नाम विभावरी था, जो मेरु पर्वत की उत्तर में स्थित थी (मत्स्य. २६६.२६)।

३. एक अग्नि, जो भानु एवं निशा के दो पुत्रों में से एक था। इसकी बहन का नाम रोहिणी था (म. व. २११. १५)।

४. सवितृ एवं पृश्णि के पुत्रों में से एक।

५. अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

६. सुख देवों में से एक।

७. एक शिवावतार।

८. एक वसु, जो धर्म एवं वसु के पुत्रों में से एक था (विष्णु. १.१५.१११)।

९. सोमतन्वी नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सोम प्रातिवेश्य--एक आचार्य, जो प्रतिवेश्य नामक आचार्य का शिष्य था (सां आ. १५.१)।

सोम शुष्मायण—अट्ठाईस व्यासों में से एक।

सोमक—कृष्ण एवं कालिंदी का एक पुत्र।

२. सोमकवंशीय क्षत्रियों का सामूहिक नाम।

सोमक साहदेव्य (सार्जय)—(सो. नील.) सृंजय लोगों का एक राजा (ऋ. ४.१५.७-१०; सृंजय १. देखिये)। सहदेव का वंशज होने से इसे 'साहदेव्य' पैतृक नाम, एवं सृंजयों का वंशज होंने से इसे 'सांर्जय' वांशिक नाम प्राप्त हुआ होगा (ऐ. ब्रा. ७.३४; श. ब्रा. २.४.४.४)। पर्वत

एवं नारद ऋषि इसके पुरोहित थे (ऐ. ब्रा. ७.३४.९)। यह वामदेव ऋषि का आश्रयदाता था, एवं इसने उसे अनेकानेक अश्व प्रदान किये थे (ऋ. ४.१५८.८)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे पांचाल देश का राजा कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम सहदेव बताया गया है (भा. ९.२२; ह. वं.१.३२; ब्रह्म. १३. वायु. ३७)। इसके द्वारा अपने पुत्र का नरमेध किये जाने की कथा महाभारत एवं विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (म. व. १२७-१२८)।

पुत्र का नरमेध—इसकी कुल सौ पत्नियाँ थी। किन्तु जंतु (जह्नु) नामक केवल एक ही पुत्र था। एक बार चिंटी ने जंतु को काट लिया, जिस कारण इसके अंतःपुर की सभी पत्नियाँ रोने लगी। इस प्रसंग को देख कर इसे मन ही मन अत्यंत दुःख हुआ, एवं इसने सोचा कि, राजा के लिए केवल एक ही पुत्र रहना दुःख का मूल हो सकता है। पश्चात् अधिक पुत्र प्राप्त होने के उद्देश्य से एक नरमेध करने की, एवं उसमें इसके जन्तु नामक इकलौते पुत्र का हवन करने की कल्पना इसके पुरोहित ने इसे दी। तदनुसार इसने अपने पुत्र जन्तु को बलि दे कर एक नरमेध किया, जिससे उत्पन्न हुए धुएँ से इसे पृषत् आदि सौ पुत्र उत्पन्न हुए।

मृत्यु के पश्चात्—अपनी मृत्यु के पश्चात् यह स्वर्गलोक को प्राप्त हुआ, किन्तु इसको नरमेध की सलाह देनेवाले इसके पुरोहित को नर्क प्राप्त हुआ। अपने पुरोहित को छोड़ कर स्वयं स्वर्गोपभोग लेने को इसने इन्कार किया, एवं यह स्वयं नर्क में रहने के लिए गया। इसकी यह पुरोहितनिष्ठा देख कर यमधर्म अत्यंत प्रसन्न हुआ, एवं उसने इन दोनों को स्वर्ग में स्थान दिया।

सोमकान्त—सुराष्ट्र देश का एक गणेशभक्त राजा, जो कुष्ट रोग से पीडित था। भृगु ऋषि के द्वारा 'गणेशपुराण' का श्रवण किये जाने पर इसका कुष्ट नष्ट हुआ, एवं यह पूर्ववत् आरोग्यसंपन्न रहा (गणेश. १.१९)।

सोमकीर्ति—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र (म. आ. १०८.८)।

सोमतन्वी—अंगिरस् कुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'सोम' एवं 'तन्वी'।

सोमदक्ष कौश्रेय—एक आचार्य (क. सं. २०.८; २१.९; मै. सं. ३.२.७)।

सोमदत्त—(सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो प्रतीप राजा का पौत्र, एवं बाह्लीक राजा का पुत्र था। इसके भूरिश्रवस् एवं शल नामक तीन पुत्र थे, जिनमें से भूरिश्रवस् इसे रुद्र की कृपा से प्राप्त हुआ था। अपने इन पुत्रों के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९; १४)।

शिनि यादव से शत्रुत्व—देवकी के स्वयंवर के समय शिनि नामक यादव ने अपने मित्र वसुदेव के लिए देवकी का हरण किया। उस समय इसके शिनि से विरोध करते ही उसने इसे भूमि पर पटक कर एक लात मार दी, एवं इसकी चुटियाँ पकड़ कर इसे खूब पीटा। शिनि के द्वारा छोड़ दिये जाने पर, अपने इस अपमान का बदला लेने के लिए इसने रुद्र कि घोर तपस्या की, एवं शिनि का वध करनेवाला एक पुत्र उससे माँग लिया। रुद्र के प्रसाद से प्राप्त हुआ इसका पुत्र आगे चल कर भूरिश्रवस् नाम से सुविख्यात हुआ।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था। इस युद्ध में इसके पुत्र भूरिश्रवस् ने शिनि-यादव के पुत्र युयुधान सात्यकि की ठीक वही अवस्था की, जो शिनि राजा ने देवकी स्वयंवर के समय इसकी की थी। इस प्रकार भूरिश्रवस् ने अपने पिता के अपमान का बदला ले ही लिया।

इसी समय सात्यकि का रक्षण करने के लिए उपस्थित हुए अर्जुन ने भूरिश्रवस् का अत्यंत निर्घृण वध किया (भूरिश्रवस् देखिये)। आगे चल कर सात्यकि ने ही इसका वध किया (भा. ९.२२.१८; म. द्रो. ११९१.३१; १३७)।

२. एक ब्रह्मराक्षस, जिसने कल्माषपाद राजा से तत्त्वज्ञान पर संवाद किया था (कल्माषपाद देखिये)।

३. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार कृशाश्व राजा का पुत्र, एवं सुमति नामक राजा का पिता था (म. ९.२.१.३५)। इसने सौ अश्वमेध यज्ञ कर उत्तम गति प्राप्त की थी।

४. (सो. नील.) नीलवंशीय सुदास राजा का नामांतर (सुदास देखिये)।

सोमदत्ति सावर्णि—एक आचार्य, जो व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था।

सोमदा—ऊर्मिला नामक गंधर्व की कन्या, जिसे चूली नामक ऋषि से ब्रह्मदत्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। यही ब्रह्मदत्त आगे चल कर राजा बन गया।

सोमधेय—पूर्व भारतीय लोकसमूह, जिसे भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में परास्त किया था (म. स. २७.९)। पाठभेद-'सोपदेश'।

सोमनाथ--शिव का एक अवतार, जो काठियावाड प्रदेश में अवतीर्ण हुआ था। इसने चंद्र के सारे कष्ट दूर किये, जिस कारण 'चंद्रकुण्ड' नामक नामक स्थान में चंद्र ने इसकी पूजा की।

इसकी पूजा आदि करने से राजयक्ष्मा कुष्ट आदि व्याधियाँ दूर होती है ऐसी उपासकों की श्रद्धा है (शिव. शत. ४२)। इसके उपलिंग का नाम उपकेश है (शिव. कोटी. १)।

सोमप--पितरों का एक समूह, जो मानस (सुमनस) नामक स्वर्ग में निवास करते है। इन्हें ब्रह्मत्व प्राप्त हुआ था, एवं ये मूर्तिमान् धर्म ही माने जाते है। मनु के सहित सारी चर सृष्टि इन्हींकी ही संतान मानी जाती है। इनकी मानसकन्या का नाम नर्मदा था (मत्स्य. १५; पद्म. सृ. ९; ह. वं. १.१८)।

२. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. जमदग्निपत्नी रेणुका का प्रतिपालक पिता।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. अनु. ९१.३४)।

५. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३४)।

सोमभोजन--गरुड का एक पुत्र।

सोमराजन्--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसका 'सोम-राजायन' नामान्तर प्राप्त है।

सोमवाह--अगस्त्यकुलोत्पन्न गोत्रकार।

सोमवित्--(सो. अज.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सहदेव राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.३३)।

सोमशर्मन्--(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार शालिशुक राजा का पुत्र, एवं शतधन्व राजा का पिता था (भा. १२.१.१४)।

२. शिकशर्मन् नामक ब्राह्मण का पितृभक्त पुत्र, जो अपने अगले जन्म में प्रह्लाद बन गगा (पद्म. भू. ४-५)।

३. वामनक्षेत्र का एक ब्राह्मण, जिसे विष्णु की कृपा से सुव्रत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

सोमशुष्म सात्ययज्ञि--एक भ्रमणशील ब्राह्मण, जो विदेह देश के जनक राजा से आ मिला था (श. ब्रा. ११. ६. २. १)। जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में निर्दिष्ट सत्ययज्ञ प्राचीनयोग्य नामक आचार्य संभवतः यही होगा (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

सोमशुष्मन् वाजरत्नायन--एक आचार्य, जिसने शतानीक राजा का राज्याभिषेक किया था (ऐ. ब्रा. ८. २१.५)।

सोमश्रवस्--एक तपस्यापरायण ऋषि, जो जनमे-जय (द्वितीय) राजा का पुरोहित था (म. आ. ३.१२)। यह श्रुतश्रवस् ऋषि को एक सर्पिणी से उत्पन्न हुआ पुत्र था।

यह सदैव मूकव्रत से रहता था, एवं ब्राह्मण के द्वारा माँग किये जाने पर उसे पूरी करने का इसका गुप्त व्रत था। जनमेजय के द्वारा इस व्रत को स्वीकार किये जाने पर ही, इसने उसका पौरोहित्य का कार्य स्वीकृत किया था।

आगे चल कर इसी व्रत के कारण ही, आस्तीक ऋषि की माँग पूरी करने के लिए जनमेजय को अपना सर्पसत्र बंद करना पड़ा (म. आ. ३.१८)।

सोमाहुति भार्गव--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. २. ४-७)।

सोम्य--(आंध्र. भविष्य) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरींद्रसेन राजा का पुत्र था।

सोहंजि--(सो. सह.) सहदेववंशीय संवर्त राजा का नामांतर (संवर्त एवं साहंजि देखिये)।

सौकारायण--एक आचार्य, जो काशायण नामक आचार्य का शिष्य, एवं माध्यंदिनायन नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ४.६.२. काण्व)। शतपथ ब्राह्मण में इसे त्रैवणि नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (श. ब्रा. १४.७.३.२७)।

सौचकि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौचित्ति--सत्यधृति नामक पांडवपक्षीय योद्धा का पैतृक नाम (म. उ. परि. १.१४.१२; सत्यधृति देखिये)।

सौचीक--अग्नि नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.५१.२)।

सौजन्य--एक देव, जो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १९५)।

सौजात आराह्लि--एक आचार्य, जिसके यज्ञाहुति के संबंध के मतों का निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है।

सौटि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौति रोमहर्षणसुत--एक सुविख्यात पुराण प्रवक्ता आचार्य, जो रोमहर्षण सूत नामक पुराणप्रवक्ता आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था। यह व्यास की पुराण-शिष्यपरंपरा एवं महाभारत परंपरा का प्रमुख आचार्य

था। इसी कारण पौराणिक साहित्य में इसका निर्देश 'महामुनि' एवं 'जगद्गुरु' आदि गौरवात्मक उपाधियों के साथ किया गया है (विष्णु. ३.४.१०)। इसका सही नाम उग्रश्रवस् था।

कुरुक्षेत्र में समन्त पंचक क्षेत्र में, शौनकादि नैमिषारण्यवासी ऋषियों को महाभारत की कथा कथन करने का ऐतिहासिक कार्य इसने किया। इसी कारण महाभारत-परंपरा में इसका नाम व्यास एवं वैशंपायन इतना ही आदरणीय माना जाता है।

महाभारत की परंपरा--महाभारत की कथा तीन विभिन्न आचार्यों के द्वारा तीन विभिन्न प्रसंगों में कथन की गयी थी। इस कथा का आद्य प्रवक्ता व्यास था, जिसने अपना 'जय' नामक ग्रंथ अपने शिष्य वैशंपायन को कथन किया। उसी ग्रंथ को काफ़ी परिवर्धित कर 'भारत' नाम से वैशंपायन ने उसे जनमेजय राजा को कथन किया था।

आगे चल कर सौति ने इसी ग्रंथ को अनेकानेक आख्यान एवं उपाख्यान जोड़ कर, एवं उसमें 'हरिवंश' नामक एक स्वतंत्र परिशिष्टात्मक ग्रंथ की रचना कर, उसे शौनकादि आचार्यों को कथन किया। सौति का यही ग्रंथ 'महाभारत' नाम से प्रसिद्ध हुआ, एवं 'महाभारत' का आज उपलब्ध संस्करण सौति के द्वारा विरचित ही है।

इसी कारण, उपलब्ध महाभारत संस्करण के प्रवर्तक आचार्य यद्यपि व्यास एवं वैशंपायन है, उसका रचयिता सौति है। सौति के द्वारा विरचित महाभारत के उपलब्ध संस्करण काल २०० इ. पू. माना जाता है।

महाभारत का विस्तार--भारत एवं महाभारत के कथन के समय, वैशंपायन एवं जनमेजय; तथा सौति एवं शौनक के दरम्यान जो प्रश्नोत्तर हुए, एवं तत्त्वज्ञान पर जो संवाद हुए, इसके कारण ही यह महाभारत ग्रंथ प्रतिदिन बढता ही रहा, यहाँ तक कि, महाभारत के उपलब्ध संस्करण में लगभग एक लाख श्लोक संख्या है।

महाभारत का कथन--जनमेजय के सर्पसत्र में वैशंपायनप्रोक्त 'भारत' ग्रंथ इसने सुना था। पश्चात् शौनक ऋषि के द्वारा नैमिषारण्य में द्वादशवर्षीय सत्र नामक एक यज्ञ का आयोजन किया गया। वहाँ शौनक ऋषि के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर इसने 'महाभारत' का कथन किया (म. आ. १.५; ४)।

महाभारत का प्रारंभ--इस ग्रंथ का प्रारंभ कौन से श्लोक से होता है इस संबंध में विद्वानों में एकवाक्यता नहीं है। कई अभ्यासकों के अनुसार, महाभारत का आरंभ 'नारायणं नमस्कृत्य' श्लोक से होता है (म. आ. १.१)। किन्तु अन्य कई अभ्यासक इस ग्रंथ का प्रारंभ 'आस्तिक पर्व' से (म. आ. १३), एवं अन्य कई अभ्यासक उसे उपरिचर बसु की कथा से (म. आ. ५७) मानते हैं।

महाभारत के उपलब्ध संस्करण--इस ग्रंथ के मुंबई, कलकत्ता एवं मद्रास (कुंभकोणम्) ये तीन पाठ प्रकाशित हो चुके हैं। इस ग्रंथ का एक काश्मीरी पाठ भी उपलब्ध है।

उपर्युक्त सारे पाठों को एकत्रित कर, एवं अनेकानेक प्राचीन पाण्डुलिपियों का संशोधन कर, इस ग्रंथ का प्रमाणभूत एवं चिकित्सक संस्करण पूना के भांडारकर प्राच्यविद्या संशोधन मंदिर के द्वारा प्रकाशित किया गया है। इस संस्करण के सारे खंड प्रकाशित हुए हैं, केवल हरिवंश ही बाकी है।

हरिवंश--इस ग्रंथ को महाभारत का खिल (परिशिष्ट) पर्व कहा जाता है, एवं इसकी रचना एकमात्र सौति के द्वारा ही हुई है। व्यास एवं वैशंपायन के द्वारा विरचित 'महाभारत' में भारतीय युद्ध का सारा इतिहास संग्रहित हुआ, किन्तु यादववंश में पैदा हुए कृष्ण की एवं उसके वंशजों की जानकारी वहाँ कहीं भी नहीं है। इस त्रुटि की पूर्ति करने के लिए सौति ने 'हरिवंश' की रचना की, जिसका कथन 'महाभारत' के 'स्वर्गारोहणपर्व' के पश्चात् सौति के द्वारा किया गया।

सौत्रामणि--पांचालराजा द्रुपद की पत्नी, जिसे कौकिली नामान्तर भी प्राप्त था (म. आ. परि. १.७९.९६)।

सौदन्ति--एक पुरोहितसमुदाय, जो सुदन्त के वंशज थे (पं. ब्रा. १४.३.१३)। विश्वामित्र ऋषि के स्पर्धक के रूप में इनका निर्देश प्राप्त है।

सौदामिनी--एक पक्षिणी, जो कश्यप एवं विनता की कन्या थी।

सौदास--सुदास राजा के पुत्रों के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम। इन्होंने वसिष्ठ के पुत्र शक्ति को अग्नि में फेंक दिया था (जै. उ. ब्रा. २.३९०)। अपने पुत्र का वध होने पर वसिष्ठ ने इनसे प्रतिशोध लेना चाहा, एवं अन्त में उसे इस कार्य में सफलता प्राप्त हुई (तै. सं. ७. ४.७.१; कौ. ब्रा. ४.८; पं. ब्रा. ४.७.३)।

२. कोसल देश के मित्रसह कल्माषपाद राजा का नामान्तर, जो सुदास राजा का पुत्र होने के कारण उसे प्राप्त हुआ था (कल्माषपाद देखिये)।

३. (सो. नील.) नीलवंशीय सहदेव राजा का नामान्तर (सहदेव ३. देखिये)।

सौदेव—सुदेवपुत्र दिवोदास राजा का नामान्तर (दिवोदास २. देखिये)।

सौद्युम्नि—इक्ष्वाकुवंशीय युवनाश्व राजा का पैतृक नाम (म. व. १२६.९; युवनाश्व ३. देखिये)।

२. पूरुवंशीय भरत दौष्यन्ति राजा का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.४.१२)।

सौधिक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौनकर्णि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौनंदा—विदूरथराजा की कन्या मुदावती का नामान्तर।

सौपुरि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौपुष्पि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौबल—गांधार देश के शकुनि राजा का पैतृक नाम।

२. सर्पि वात्सि नामक आचार्य का एक शिष्य (ऐ. ब्रा. ६.२४.१६)।

सौबुधि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौभग—बृहच्छ्लोक नामक आदित्य का एक पुत्र (भा. ६.१८.८)।

सौभद्र—(सो. वसु.) वसुदेव एवं रथराजी के पुत्रों में से एक।

२. सुभद्रापुत्र अभिमन्यु का मातृक नाम।

सौभपति—सौभ देश के शाल्व राजा का नामान्तर।

सौभर—पथिन् नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे 'सोभरि' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८ माध्यं.)।

सौभरि—एक ऋषि, जिसने मांधातृ राजा की पचास कन्याओं के साथ विवाह किया था। ऋग्वेद में एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते निर्दिष्ट सोभरि काण्व नामक ऋषि संभवतः यही होगा। ऋग्वेद में इसके द्वारा त्रसदस्यु राजा की पचास कन्याओं के साथ विवाह करने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.१९.३६)। विष्णु में इसे बह्वृच् कहा गया है (विष्णु. ४.२)।

पौराणिक साहित्य में—मांधातृ राजा की सौ कन्याओं के साथ इसका विवाह किस प्रकार हुआ, इसकी कथा पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। एक बार यमुना नदी के किनारे तपस्या करते समय, इसने रतिसुख में निमग्न एक मछली का जोड़ा देखा, जिसे देख कर इसके मन में विवाह की इच्छा उत्पन्न हुई। तदनुसार यह मांधातृ राजा के पास गया, एवं इसने उसकी एक कन्या विवाह के लिए माँगी।

इसे बहुत बुढ़ा देख कर राजा के मन में इस प्रस्ताव के प्रति घृणा उत्पन्न हुई। इसी कारण इसे परेशान करने के हेतु उसने झूटी नम्रता से कहा 'मेरी पचास कन्याओं में से जो भी कन्या आपका वरण करे उससे आप विवाह कर सकते हैं'।

मांधातृ का कपट पहचान कर इसने अपने बुढ़े रूप का त्याग कर, एक नवयुवक का रूप धारण किया, एवं इसी वेष में यह उसके अंतःपुर में गया। इसके नये रूप को देख कर मांधातृ की सभी कन्याओं ने इसका वरण किया। आगे चल कर अपनी हर एक पत्नी से इसे सौ सौ पुत्र उत्पन्न हुए।

इसप्रकार संसारसुख का यथेष्ट अनुभव लेने के पश्चात् इसके मन में पुनः एक बार वैराग्यभावना उत्पन्न हुई, एवं यह वन में चला गया। इसकी पत्नियाँ भी विरागी बन कर इसके साथ वन में चली गयी (भा. ९.६.३८-५५; विष्णु. ४.२.३; पद्म. उ. २६२; गरुड १.१३८)।

२. एक ऋषि, जिसने गरुड को शाप दे कर, उसे यमुना नदी में आने में प्रतिबंध डाल दिया था (भा. १०.१७.१०)।

३. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से देवमित्र नामक आचार्य का शिष्य था।

४. एक ऋषि, जिसका आश्रम विंध्य पर्वत पर स्थित था। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय अर्जुन इसके आश्रम में आया था, जहाँ इसने उसे उद्दालक ऋषि के द्वारा चंडी को दिये गये शाप की पुरातन कथा सुनायी थी। आगे चल कर इसने अर्जुन के द्वारा चंडी का उद्धार कराया (जै. अ. ९६)।

सौमदत्ति—यादव राजा भूरिश्रवस् का पैतृक नाम।

२. सावर्णि मनु का पैतृक नाम।

सौमनस्य—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार यज्ञबाहु राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.९)।

सौमाप—मानुतंतव्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.३.२)।

सौमापि—प्रियव्रत नामक ऋषि का पैतृक नाम, जो उसे सोमाप ऋषि का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (सां. श्रौ. १५.१)।

सौमायन--बुध नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे सोम का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (पं. ब्रा. २४.१८.६).।

सौमुक--विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक गोत्र कार।

सौम्य--एक पितरविशेष (भा. ४.१.६३)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादवराजा, जो मत्स्य के अनुसार रुषद् राजा का पुत्र था।

३. बुध ग्रह का पैतृक नाम।

सौयवसि--अजीगर्त ऋषि का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७. १५.६; सां. श्रौ. १५.१९.२९)।

सौर--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौरभेय--एक ऋषि, जो दीर्घतमस् ऋषि का गुरु था (म. आ. ९८.१०३८*; पंक्ति १-२)।

सौरभेयी--एक अप्सरा, जो वर्गा नामक अप्सरा की सखी थी, एवं एक ब्राह्मण के शाप के कारण ग्राह बनी थी। आगे चल कर अर्जुन ने इसका ग्राहयोनि से उद्धार किया (म. आ. २०८.१९; स. १०.११)।

सौरि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौर्य--एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित वैदिक सूक्तद्रष्टाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:--१. अभितपस् (ऋ. १०.३७); २. धर्म. (ऋ. १०.१८१.३); ३. चक्षुस् (ऋ. १०.१५८); ४. विभ्राज् (ऋ. १०.१७०)।

सौर्यायणिन् गार्ग्य--एक आचार्य, जो पिप्पलाद के पास 'स्वप्नविद्या' के संबंध में प्रश्न पूछने गया था (प्र. उ. १.१.४.१)।

सौवर्चनस--संश्रवस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. सं. १.७.२.१)।

सौवीर--सुवीर शैब्य नामक राजा का नामान्तर।

२. एक लोकसमूह, जिसका निर्देश सिंधु लोगों के साथ प्राप्त है। इन लोगों का विपुल नामक राजा अर्जुन के द्वारा मारा गया था (म. आ. परि. १.८०.४५)।

सौवीरी--सुवीर राजा की कन्या, जो मरुत्त आविक्षित राजा की पत्नी थी (मार्क. १२८).।

२. पूरुवंशीय मनस्यु राजा की पत्नी (म. आ. ८९. ७)। पाठभेद--'शूरसेनी'।

सौवेष्ट--अंगिरस्‌कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौश्रवस--उपगु नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १४.६.८)। इसीके वंशज आगे चल कर 'सौश्रवस' नाम से सुविख्यात हुए (का. सं. १३.१२)।

सौश्रवस काण्व--एक आचार्य (का.सं. १३.१२)।

सौश्रुति--दुर्योधनपक्षीय एक राजा, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् का भाई था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. १९.१०)।

सौश्रोमतेय--आषाढि नामक आचार्य का मातृक नाम, जो उसे 'सुश्रोमता' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ होगा (श. ब्रा. ६.२.२.१.३७)।

सौषद्मन--विश्वन्तर नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे सुषद्मन् का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (ऐ. ब्रा. ७.२७.१; ३४.७)।

सौसुक--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौह--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौह सोक्ति--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौहोत्र--एक पैतृक नाम, जो अजमिहळ एवं पुरुमिहळ नामक आचार्य बंधुओं के लिए प्रयुक्त किया गया है (ऋ. ४.४३-४४)।

स्कंद--देवों का सेनापति, जो तारकासुर का वध करने के लिए इस पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था। सात दिनों की आयु में ही इसने तारकासुर का वध किया। पुराणों में सर्वत्र इसे शिव एवं पार्वती का, अथवा अग्नि का पुत्र माना गया है, एवं इसे 'छः मुखोंवाला' (षण्मुख) कहा गया है।

जन्मकथा--इसके जन्म के संबंध में विभिन्न कथाएँ महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं। ब्रह्मांड के अनुसार, एकबार शिव एवं पार्वती जब एकान्त में बैठे थे, उस समय इंद्र ने अष्टवसुओं में से अनल नामक अग्नि के द्वारा उनके एकान्त का भंग किया। इस कारण शिव के वीर्य का आधा भाग भूमि पर गिर पड़ा। अग्नि के इस औद्धत्य के कारण पार्वती अत्यंत क्रुद्ध हुई, एवं उसने अग्नि को शाप दे कर शिव का वीर्य धारण करने पर उसे विवश किया।

शिव के वीर्य को अग्नि ज्यादा समय तक धारण न कर सका, इसलिए उसने उसे गंगा को दे दिया। गंगा ने भी उसे कुछ काल तक धारण कर भूमि पर छोड़ दिया। आगे चल कर उसी वीर्य से स्कंद का जन्म हुआ (ब्रह्मांड. ३.१०.२२-६०; वायु. ११.२०-४९)।

महाभारत में--इस ग्रंथ में इसकी जन्मकथा कुछ भिन्न प्रकार से दी गई है। एक बार सप्तर्षियों के यज्ञ में, अग्नि सप्तर्षियों के पत्नियों पर कामासक्त हुआ, एवं अपनी अप्रिय पत्नी स्वाहा को छोड़ कर उनसे रमण करने के लिए प्रवृत्त हुआ। अग्निपत्नी स्वाहा को यह ज्ञात होते ही वह अरुंधती के अतिरिक्त अन्य छः सप्तर्षि पत्नियों में

समाविष्ट हुई। पश्चात् उसे ही सप्तर्षिपत्नियाँ समझ कर अग्नि ने उससे संभोग किया। स्वाहा ने अग्नि से प्राप्त उसका सारा वीर्य एक कुण्ड में रख दिया, जिससे आगे चल कर स्कंद का जन्म हुआ (म. व. २१३-२१४)। छः ऋषिपत्नियों के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण, इसे छः मुख प्राप्त हुए थे। अमावस्या के दिन इसका जन्म हुआ था।

यही कथा महाभारत एवं विभिन्न पुराणों में कुछ फर्क से दी गयी है (म. व. २२०.९-१२; पद्म. सृ. ४४; स्कंद. १.१.२७; मत्स्य. १५८.२७-२८; वा. रा. बा. ३६)।

नामान्तर--महाभारत में इसके विभिन्न नामान्तर निम्न प्रकार दिये गये हैं :--१. **स्कंद**; जो नाम इसे 'स्कन्न' वीर्य से उत्पन्न होने के कारण, अथवा दानवों का स्कंदन करने के कारण प्राप्त हुआ था; २. **षाण्मातुर**, जो नाम इसे छः ऋषिपत्नियों के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण प्राप्त हुआ था; ३. **कार्तिकेय**, जो नाम इसे छः कृत्तिकाओं के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण प्राप्त हुआ था; ४. **विशाख**, जो नाम इसे अनेक शाखा (हाथ) होने के कारण प्राप्त हुआ था; ५. **षण्मुख**, जो नाम इसे इसके छः मुख होने के कारण प्राप्त हुआ था; ६. **सेनानी** अथवा **देव सेनापति**, जो नाम इसे देवों का सेनापति होने के कारण प्राप्त हुआ था; ७. **स्वाहेय**, जो नाम इसे अग्निपत्नी स्वाहा का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था (म. व. परि. १.२२); ८. **सनत्कुमार**--(ह. वं. १. ३; म. व. २१९)।

अस्त्रप्राप्ति--इसका जन्म होते ही विभिन्न देवताओं ने इसे निम्नलिखित अस्त्र प्रदान किये :--१. **विष्णु**--गरुड, मयूर एवं कुक्कुट आदि वाहन; २. **वायु**-पताका; ३. **सरस्वती**--वीणा; ४. **ब्रह्मा**--अज; ५. **शंभु**--मेंढक; ६. **जृंभदैत्य**--अपराजिता नामक शक्ति, जो इस दैत्य के मुख से उत्पन्न हुई थी (ब्रह्मांड. ३.१०.४५-४८)। इसका उपनयन संस्कार विश्वामित्र ऋषि ने किया (म. व. २१५.९)।

तारकासुर वध--तारकासुर का वध करने के लिए स्कंद ने अवतार लिया था। ब्रह्मा ने तारकासुर को अवध्यत्व का वर देते हु कहा था कि, इस सृष्टि में केवल सात दिन का अर्भक ही केवल उसका वध कर सकता है। इसी कारण जन्म के पश्चात् सात दिनों की अवधि में ही इसने तारकासुर से युद्ध कर, उसका वध किया (पद्म. सृ. ४४; मत्स्य. १६०)। महाभारत में इसके द्वारा तारकासुर के साथ, महिषासुर का भी वध करने का निर्देश प्राप्त है (म. श. ४५.६४; अनु. १३३.१९; व. २२१.६६)।

इसका जन्म अमावास्या के दिन हुआ, एवं शुक्ल षष्ठी के दिन इसने तारकासुर का वध किया। तारकासुर का वध करने के पूर्व शुक्ल पंचमी के दिन देवों ने इसे क्रौंच पर्वत पर (ब्रह्मांड. उ. ३.१०); स्थाणुतीर्थ में (म. श. ४१.७); अथवा वारुणितीर्थ में (पद्म. स्व. २७) सेनापत्य का अभिषेक किया। उसी दिन से यह देवों का सेनापति माना गया। शुक्ल पंचमी का इसका अभिषेक दिन, एवं शुक्ल षष्ठी का तारकासुर के वध का दिन कार्तिकेय की उपासना करनेवाले लोग विशेष पवित्र मानते हैं।

अन्य पराक्रम--तारक एवं महिषासुर के अतिरिक्त इसने त्रिपाद, ह्रदोदर, बाणासुर आदि राक्षसों का वध किया था (म. श. ४५.६५-८१)। इसने क्रौंचपर्वत का अपने बाण से विदरण किया था, एवं अपने 'शक्ति' से हिमालय पर्वत उखाड देने की प्रतिज्ञा की थी (म. शां. ३१४.८-१०)।

ब्रह्मचर्यव्रत--तारकासुर के वध के पश्चात् पार्वती के अत्यधिक लाड प्यार से यह समस्त देवस्त्रियों पर अपनी पापवासना का जाल बिछाने लगा, एवं बलात्कार करने लगा। इसके स्वैराचार की शिकायत देवस्त्रियों ने पार्वती के पास की। इस पर पार्वती ने इसे सन्मार्ग पर लाने के हेतु, सृष्टि की हर एक स्त्री में अपना ही रूप दिखाना प्रारंभ किया। उन्हें देखते ही इसे कृतकर्मों का अत्यधिक पश्चात्ताप हुआ, एवं इसने पार्वती के पास जा कर प्रतिज्ञा की, 'आज से संसार की सारी स्त्रियाँ मुझे माता के समान ही हैं' (ब्रह्म. ८१)।

स्त्रियों के प्रति इसकी अत्यधिक विरक्त वृत्ति के कारण आगे चल कर इसका दर्शन भी उनके लिए अयोग्य माना जाने लगा। आज भी स्कंद का दर्शन स्त्रियाँ नहीं लेती है, एवं इसकी प्रतिमा के दर्शन से स्त्री को सात जन्म तक वैधव्य प्राप्त होता है, ऐसी जनश्रुति है। इस जनश्रुति के लिए पौराणिक साहित्य में कहीं भी आधार प्राप्त नहीं है; केवल मराठी 'शिवलीलामृत' ग्रंथ में यह कथा प्राप्त है (शिवलीला. १३)।

परिवार--इसकी पत्नी का नाम देवसेना था, जिससे इसे शाख, विशाख, एवं नैगमेय नामक पुत्र प्राप्त हुए थे। पौराणिक साहित्य में शाख, विशाख, एवं नैगमेय को स्कंद के पुत्र नहीं, बल्कि भाई बताये गये हैं, एवं वे अनल नामक वसु एवं शांडिल्या के पुत्र बताये गये हैं

(वसु. १. देखिये)। महाभारत के अनुसार, एक बार इन्द्र के द्वारा इसके पीठ पर वज्र प्रहार करने से, उसी प्रहार से इसका विशाख नामक पुत्र, एवं कन्यापुत्र आदि पार्षद उत्पन्न हुए (म. व. २१७.१; २१९)।

कई अभ्यासकों के अनुसार इसकी पत्नी देवसेना एक स्त्री न हो कर, देवों के उस सेना का प्रतिरूप है, जिसका आधिपत्य इस पर सौंपा गया था।

स्कंद के पार्षद—इसके सैनापत्य के अभिषेक के समय विभिन्न देवताओं के द्वारा इसे अनेकानेक पार्षद, एवं महापार्षद दिये गये, जिनकी नामावलि महाभारत में दी गयी है (म. व. २१३-२२१; श. ४४-४५)।

मातृका—स्कंद के सप्तमाताओं को मातृका कहा जाता है, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार प्राप्त है:—१. काकी; २; हलिमा; ३. माता; ४. हली; ५. आर्या; ६. बाला; ७. धात्री। इन सप्तमाताओं के ब्राह्मी, माहेश्वरी आदि विभिन्नगण भी प्राप्त हैं। इन मातृकाओं की, एवं इसकी, शिशुओं के आरोग्यप्राप्ति के लिए पूजा की जाती है।

स्कंद की अनुचरी मातृकाओं की नामावलि भी महाभारत में सविस्तृत रूप में प्राप्त है (म. व. २१३-२२१)। इन मातृका, एवं उनके साथ उपस्थित पुरुषग्रह ' स्कंद के ग्रह मांने जाते हैं (म. व. २१९)। कई अभ्यासकों के अनुसार, ' स्कंदापस्मार ' आदि ' स्कंदग्रह ' अपस्मार आदि व्याधियों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

३. धर्मपुत्र आयु नामक वसु का एक पुत्र (आयु ८. देखिये)।

स्कंदस—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्कंदस्वाती—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो स्वाती राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.६)।

स्कंध—एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

२. धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था।

स्कंभ—एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

स्तनयित्नु—धर्मपुत्र विद्योत के पुत्रों का सामूहिक नाम (भा. ६.६.५)।

स्तनित—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्तंब—शाक्तपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. स्वारोचिष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

स्तंबमित्र शार्ङ्ग—एक शार्ङ्गक पक्षी, जो मंदपाल ऋषि एवं जरितृ शार्ङ्गी का पुत्र था। खांडववनदाह से इसे अग्नि ने मुक्त कराया (म. आ. २२३.१२)।

२. एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४२.७-८)।

स्तंभ—स्वारोचिष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

स्तुति—(स्वा. प्रिय.) प्रतिहर्तृ राजा की पत्नी, जिससे इसे अज, एवं भूमन् नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ५.१५.५)।

स्तुत्यव्रत—(स्वा. प्रिय) एक राजा, जो कुशद्वीप के हिरण्यरेतस् राजा का पुत्र था। इसके राज्य का नाम इसीके ही कारण ' स्तुत्यव्रत ' नाम से प्रसिद्ध हुआ (भा. ५.२०.१४)।

स्तुभ—भानु नामक अग्नि के छः पुत्रों में से एक।

स्तोक—एक गोप, जो कृष्ण का मित्र था (भा. १०. १५.२०)।

स्थंडिलेयु—(सो. पूरु.) एक राजा, जो रौद्राश्व राजा के दस पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम 'घृताची' था (भा. १०.२०.४)।

स्थपति—जनमेजय राजा का एक सूत, जिसका मूल नाम लौहिताक्ष था। इसे स्थलमापनादि अनेक शास्त्र अवगत थे (म. आ. ४७.१४; ५३.१२)।

स्थल—(सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार बल राजा का पुत्र था।

स्थलपिंड—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्थलेयु—एक राजा, जो रौद्राश्व राजा के दस पुत्रों में एक था।

स्थविर कौंडिन्य—एक वैयाकरण, जिसके द्वारा ' नकार ' का उच्चार सानुनासिक एवं तीव्रतर बताया गया है (तै. प्रा. १७.४)।

स्थविर जातुकर्ण्य—जातुकर्ण्य नामक आचार्य की एक उपाधि, जिसका शब्दशः अर्थ ' श्रेष्ठ ' होता है (कौ. ब्रा. ६५.१)।

स्थविर शाकल्य—एक उच्चारशास्त्रज्ञ आचार्य (ऋ. प्रा. १८५)। शतपथ ब्राह्मण में एक तत्त्वज्ञ आचार्य के नाते इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ मानवीय प्राण में चक्षु, कर्ण आदि पंच इंद्रियाँ सूक्ष्मरूप से विद्यमान होने के इसके मत का निर्देश प्राप्त है (ऐ. आ. ३. २.१.६; सां. आ. ७.१६)। पाठभेद-' स्थवीर '।

स्थाणु--ग्यारह रुद्रों में से एक। यह ब्रह्मा का पौत्र, एवं 'स्थाणु' का पुत्र था (म. आ. ६०.३)। इसका प्रजापति से संवाद हुआ था (म. शां. २४९.१-१२)।

२. ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो ग्यारह रुद्रों का पिता माना जाता है (म. आ. ६०.३)।

३. इन्द्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१९)।

स्थान--सुख देवों में से एक।

स्थिरक गार्ग्य--एक आचार्य, जो वसिष्ठ चैकिताने नामक आचार्य का शिष्य, एवं मशक गार्ग्य नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. २.)।

स्थूण--विश्वामित्र का एक पुत्र।

२. स्थूणाकर्ण नामक यक्ष का नामांतर।

स्थूणकर्ण--एक ऋषि, जो पांडवों के वनवासकाल में उनके साथ द्वैतवन में निवास करता था (म. स. २७. २३)।

स्थूणाकर्ण--एक यक्ष, जिसने शिखण्डिन् को अपना पुरुषत्व प्रदान किया था (शिखण्डिन् देखिये)। यह कुबेर का अनुचर था (म. उ. १९२.२०-२२)। पाठभेद-'स्थूण'।

स्थूलकर्ण--एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

स्थूलकेश--एक ऋषि, जिसने जंगल में अनाथ पड़ी हुई प्रमद्वारा को पालपोस कर बड़ा किया था। आगे चल कर यही कन्या इसने कुरु ऋषि को विवाह में प्रदान की था (म. आ. ८)।

स्थूलशिरस्--एक ऋषि, जो 'अश्वशिरस्' ऋषि का पुत्र था। इसने विश्वावसु नामक गंधर्व को कबंध राक्षस बनने का शाप दिया था (यवक्रीत देखिये)।

स्थूलाक्ष--एक राक्षस, जो दूषण राक्षस का अमात्य था (वा. रा. अर. २३-३०)।

स्थैरकायन--मित्रवर्चस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (वं. ब्रा. १)।

स्थौर--अग्नियूप (अग्नियूथ) नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.११६)।

स्थौलाष्ठीवि--एक वैयाकरण (नि. १०.३.१)।

स्नातप--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्पर्श--तुषित देवों में से एक।

स्फूर्ज--एक राक्षस, जो पौष माह में भग नामक सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.४२)।

२. एक राक्षस, जो यातुधान राक्षस का पुत्र, एवं निकुंभ राक्षस का पिता था (ब्रह्मांड. ३.७.९५)।

स्फोटन--एक व्याकरणकार (अ. प्रा. १.१०३; २.३८)।

स्फोटायन--एक व्याकरणकार (पा. सू. ६.१. १२३)।

स्मदिभ--इन्द्र का एक शत्रु, जिसे उसने तुग्र के साथ कुत्स के अधिकार में सौंपा था (ऋ. १०. ४९.४)।

स्मय--स्वारोचिष मन्वंतर का एक प्रजापति।

२. धर्म एवं पुष्टि का एक पुत्र।

स्मर--मरीचि एवं ऊर्णा के पुत्रों में से एक।

स्मरदूती--जालंधर दैत्य की वृंदा नामक पत्नी की एक सखी (पद्म. ३.९)।

स्मृत--स्वारोचिष मनु का एक पुत्र।

स्मृति--धर्म एव मेधा के पुत्रों में से एक।

२. अंगिरस कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. दक्ष की कन्या, जो अंगिरस् ऋषि की पत्नी थी।

स्यातपायन--जपातय नामक पराशरकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

स्यावास्य--शिखण्डिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

स्यूमरश्मि--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७७-७८)। यह अश्विनों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, एवं अपने बाणों से उन्होंने इसकी रक्षा की थी (ऋ. १.११२.१६)। इसके घर में इंद्र सोमपान के लिए उपस्थित हुआ था।

२. एक ऋषि, जो कपिल ऋषि का शिष्य था। गोरूप धारण करनेवाले कपिल ऋषि से इसका प्रवृत्ति एवं निवृत्ति मार्ग के विषय में संवाद हुआ था (म. शां. २६०-२६२)।

स्योद--भव्य देवों में से एक।

स्रवस्--स्वायंभुव मन्वन्तर के जित देवों में से एक।

स्वकेतु--निमिवंशीय सुकेतु राजा का नामान्तर।

स्वधर्मन्--वैवस्वत मनुपुत्र धृष्ट के पुत्रों में से एक (पद्म. सृ. ८)।

स्वधा--दक्ष की एक कन्या, जो पितरों को हविर्भाग पहुँचानेवाले अंगिरस् ऋषि की पत्नी थी। इसकी वयुना एवं धारिणी नामक दो कन्याएँ; एवं पितर तथा अथर्व आंगिरस नामक दो पुत्र थे (भा. ४.१.६३; ६.६.९)।

स्वधामन्--उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण।

२. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार, जो सत्यसह एवं सुनृता के पुत्रों में से एक था।

स्वनद्रथ--एक राजा, जो मेधातिथि का आश्रय दाता था (ऋ. ८.१.३२)। लुडविग के अनुसार यह आसङ्ग का ही नामान्तर था (लुडविग, ऋग्वेद का अनुवाद-३. १५९)।

स्वनय भावयव्य--सिंधु देश का एक राजा, जिसने कक्षीवत् को उपहार प्रदान किया था (ऋ. १.१२६.१)। बृहस्पति की कन्या रोमशा इसकी पत्नी थी। (ऋ. १.१२६.६-७; बृहद्दे. ३.१४५-१५५; सा.श्रौ. १६.११.५)। इसे 'स्वनय भाव्य' नामान्तर भी प्राप्त था।

स्वभूमि--(सो. कुकुर.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार उग्रसेन राजा का पुत्र था।

स्वमति--(सू. दिष्ट.) दिष्टवंशीय प्रमति राजा का नामान्तर (प्रमति ५. देखिये)।

स्वमूर्धन्--एक देव, जो भृगुऋषि का पुत्र था।

स्वमृडीक--सत्य देवों में से एक।

स्वयंप्रभा--एक अप्सरा, जो मेरुसावर्णि की कन्या, एवं हेमा नामक अप्सरा की सखी थी। इसे प्रभावती नामान्तर भी प्राप्त था।

इसकी सखी हेमा ने अपने स्वर्गवास के समय, मय के द्वारा तैयार किया गया दैवी स्थान इसे प्रदान किया था। उसी स्थान के कारण इसे अनेकानेक दैवी शक्तियाँ प्राप्त हुई थी। सीताशोध के लिए निकले हुए अंगदादि वानरों को इसने ही समुद्र के तट पर पहुँचाया था। आगे चल कर, राम के दर्शन से मुक्ति प्राप्त कर यह स्वर्गलोक चली गयी (वा. रा. कि. ५०-५२)।

स्वयंप्रभु--अट्ठाईस व्यासों में से एक।

स्वयंभु ब्रह्मन्--अट्ठाईस व्यासों में से एक।

स्वयंभू--एक आचार्य, जो श्राद्धविधि का प्रथम पुरस्कर्ता माना जाता है (म. अनु. १९१)।

स्वयंभोज--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार शिनिराजा का पुत्र, एवं हृदिक राजा का पिता था (भा. ९.२४.४६)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः प्रतिक्षत्र एवं प्रतिक्षिप्त राजा का पुत्र कहा गया है।

स्वरक्षस--अट्ठाईस व्यासों में से एक।

स्वरपुरंजय--एक राजा, जो वायु के अनुसार मथुरा नगरी में राज्य करता था।

स्वरवेदिन्--एक गंधर्व, जिसकी कन्या का नाम सुस्वरा था।

स्वरा--मद्रदेशीय राजकन्या (पद्म. उ. १०५)।

२. उत्तानपाद एवं सूनृता की कन्याओं में से एक।

स्वराज्--कर्दम प्रजापति की एक कन्या, जो अथर्व आंगिरस की कन्या थी। इसके अयास्य, उतथ्य, उशिति, गौतम एवं वामदेव नामक पाँच पुत्र थे (ब्रह्मांड. ३.१.१०२)।

स्वराष्ट्र--एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम उत्पलावती, एवं पुत्र का नाम तामस मनु था (तामस ३. देखिये)।

स्वरूप--वरुणलोक का एक असुर (म. स. ९.१४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'सुरूप'।

स्वरोचिष्--एक राजा, जो कलि राजा का पौत्र, एवं स्वरोचिष (द्युतिमत्) मनु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम वरुथिनी था।

इसे समस्त प्राणियों की भाषाएँ जानने की विद्या, एवं 'पद्मिनीविद्या' ज्ञात थी, जो इसे क्रमशः मंदारविद्याधर की कन्या विभावरी, एवं पार यक्ष की कन्या कलावती से प्राप्त हुई थी (मार्क. ६१)।

'पद्मिनी' विद्या के बल से इसने पूर्वदिशा में पूर्वकामरूप में विजय, उत्तर दिशा में नंदवती नगर, एवं दक्षिण में ताल नगर नामक नगरों का निर्माण किया। एक बार एक हंसयुगल ने इसे कामासक्त कह कर इसकी आलोचना की, जिस कारण विरक्त हो कर यह वन में चला गया (मार्क. ६३)।

परिवार--इसकी मनोरमा, विभावरी एवं कलावती नामक तीन पत्नियाँ थी, जिससे इसे क्रमशः विजय, मेरुमन्द, एवं प्रभाव नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे। आगे चल कर एक वनदेवता से इसे स्वारोचिष अर्थात् द्युतिमत् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो आगे चल कर चक्रवर्ती सम्राट् बन गया।

स्वर्ग--धर्म एवं यामी का एक पुत्र, जिसके पुत्र का नाम नंदिन् था (भा. ६.६.६)।

स्वर्जित् नाग्नजित--एक राजा (श. ब्रा. ८.१.४.१०)।

स्वर्णर--एक यज्ञकर्ता (ऋ. ८.३.१२; १२.२)।

स्वर्णरोमन्--(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो महारोमन् जनक का पुत्र था।

स्वर्णा--एक अप्सरा, जो वृन्दा की माता थी (पद्म. उ.४)।

स्वर्भानवी--आयु राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम नहुष था (म. आ. ७०.२३)।

स्वर्भानु-एक असुर, जिसके द्वारा सूर्य को ग्रस्त करने का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. ५.२०.५-९)। पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राहु ग्रह संभवतः यही हैं (राहु देखिये)।

इसने सूर्य को अंधःकार से आवृत किया, एवं सारी सृष्टि हीनदीन बन गयी। आगे चल कर देवताओं ने साम का पठन कर इस ग्रहण को दूर किया (पं. ब्रा. ४.५.२; ६.१३)। यह ग्रहण अत्रि के द्वारा (पं. ब्रा. ६.६.८); सोम एवं रुद्र के द्वारा (श. ब्रा. ५.३.२.२) दूर होने का निर्देश भी प्राप्त है।

देवताओं के द्वारा ग्रहण नष्ट करने पर, उस विनष्ट अंधःकार से अनेक वर्ण के मेंढक उत्पन्न हुए, जिनके वर्ण क्रमशः काले, लाल, एवं सफ़ेद थे। इन सारे मेंढकों को आदित्य को दे कर देवताओं ने विभिन्न ओषधियों का निर्माण किया (तै. सं. २.१.२२; सां. ब्रा. २४.३)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है (भा. ६.६.३; म. आ. ५९.२४; विष्णु. १.२१.५)। इसकी कन्या का नाम प्रभा (सुप्रभा) था (विष्णु. १.२१.५), जिसका विवाह नमुचि (भा. ६.६.३२), अथवा नहुष से हुआ था (ब्रह्मांड. ३.६.२३-२५)।

२. एक सैंहिकेय असुर, जो जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था।

स्वर्वीथि--(स्वा. उत्तान.) वत्सर राजा की पत्नी, जो पुष्णार्ण आदि पाँच पुत्रों की माता थी (भा. ४.१३.१२)।

स्वश्न--एक असुर, जो इंद्र का शत्रु था। इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. २.१४.५)।

स्वश्रव--अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

स्वश्व--एक राजा, जिसके पुत्र के रूप में स्वयं सूर्य ने जन्म लिया था। एक बार इसका एवं एतश राजा का युद्ध चालु था, उस समय इंद्र ने एतश के पक्ष को सहायता की। इस कारण यह एवं इसका पुत्र पराजित हुए (ऋ. ४.१७.१४)।

स्वसृप--कौशिक ऋषि के पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

स्वस्तिकर--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वस्तितर--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वस्त्यात्रेय--एक ऋषिसमुदाय, जिसका निर्देश ऋग्वेद में वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते प्राप्त है (ऋ. ५.५०-५१)। महाभारत में इन्हें अत्रिकुलोत्पन्न ऋषि कहा गया है (म.आ. ८.२०)। हरिवंश में इनकी संख्या दस बतायी गयी है (ह. वं. १.३१.१७; प्रभाकर एवं अत्रि देखिये)।

स्वस्थली--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वह्न--स्वारोचिष मन्वन्तर के देवगणों में से एक।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार यक्ष एवं दक्षिणा का पुत्र था (भा. ४.१.७)।

स्वागज--शक्तिपुत्र पराशर ऋषि का नामान्तर।

स्वागत--(सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार शकुनि राजा का पुत्र था।

स्वाति--सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा जो मेघस्वाति राजा का पुत्र था।

स्वातिवर्ण--(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार कुन्तलस्वाति राजा का पुत्र था।

स्वायंभुव मनु--एक सुविख्यात राजा, जो स्वायंभुव नामक पहले मन्वंन्तर का अधिपति मनु माना जाता है। 'मनुस्मृति' नामक सुविख्यात धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ का कर्ता यही माना जाता है (मनु स्वायंभुव देखिये)।

राज्यविस्तार--भागवत में नवखण्डात्मक पृथ्वी का वर्णन प्राप्त है, जिनमें से भरतखंड नामक नौवाँ खण्ड आधुनिक भारतवर्ष माना जाता है। इस खण्ड में से ब्रह्मावर्त नामक प्रदेश में स्थित बर्हिष्मती नगरी का सर्वाधिक प्राचीन राजा स्वायंभुव मनु माना जाता है।

पृथ्वी का सम्राट्--भागवत में स्वायंभुव मनु को समस्त पृथ्वी का सम्राट् कहा गया है (भा. ३.२१.२५; २२.२९)। उस समय सारी पृथ्वी समतल एवं अखण्ड थी, वह आज की तरह समुद्रों में विभाजित न थी।

परिवार--इसकी पत्नी का नाम शतरूपा (बार्हिष्मती) था, जिससे इसे प्रियव्रत एवं उत्तानपाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। इनमें से अपने ज्येष्ठ पुत्र प्रियव्रत को स्वायंभुव ने अपना पृथ्वी का सारा राज्य प्रदान किया।

प्रियव्रत के राज्यकाल में पृथ्वी में स्थित समुद्रों का विस्तार हुआ, एवं सारी पृथ्वी सात द्वीप एवं सात समुद्रों में विभाजित हुई। प्रियव्रत के कुल दस पुत्र थें, जिनमें से तीन बाल्यकाल से ही वन में चले गये। इसी कारण अपना सात द्वीपों का पृथ्वीव्याप्त राज्य प्रियव्रत ने अपने उर्वरित सात पुत्रों में बाँट दिये।

प्रियव्रत के द्वारा अपने सात पुत्रों में विभाजित किये गये सात द्वीपों के नाम, एवं उनका आधुनिककालीन संभाव्य भौगोलिक स्थानआदि निम्नलिखित तालिका में दिया गया है। प्राचीन-कालीन सप्तद्वीपात्मक पृथ्वी की भौगोलिक जानकारी की दृष्टि से यह तालिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानी जाती है:—

पुत्र का नाम	द्वीप	संभाव्य आधुनिक स्थान
अग्निध्र	जंबूद्वीप	एशिया खण्ड (इसी खण्ड में अग्निध्र की बार्हिष्मती नामक नगरी थी)।
इध्मजिह्व	प्लक्षद्वीप	यूरप खण्ड।
यज्ञबाहु	शाल्मलिद्वीप	अटलँटिस् खण्ड, जहाँ वर्तमानकाल में अटलँटिक महासागर है।
हिरण्यरेतस्	कुशद्वीप	आफ्रिका खण्ड।
घृतपृष्ठ	क्रौंचद्वीप	उत्तर अमरिका खण्ड।
मेधातिथि	शाकद्वीप	दक्षिण अमरिका खण्ड।
वीतिहोत्र	पुष्करद्वीप	दक्षिण ध्रुव खण्ड (अँटार्टिका खण्ड)।

जंबूद्वीप की जानकारी—अग्निध्र को जंबूद्वीप का राज्य प्राप्त हुआ, जो आगे चल उसने अपने अपने नौ पुत्रों में विभाजित किया। प्राचीन जंबूद्वीप (एशिया-खण्ड) के भौगोलिक विभाजन की जानकारी प्राप्त करने की दृष्टि से, अग्निध्र का यह राज्यविभाजन अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है:—

पुत्र का नाम	द्वीपविभाग
इलावृत	इलावृतवर्ष।
रम्यक	रम्यकवर्ष।
हिरण्य	हिरण्यवर्ष।
कुरु	उत्तरकुरुवर्ष।
भद्राश्व	भद्राश्ववर्ष।
किंपुरुष	किंपुरुषवर्ष।
नाभि	नाभिवर्ष, जो आगे चल कर अजनाभवर्ष अथवा भारतवर्ष नाम से सुविख्यात हुआ।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे ब्रह्मा का का पुत्र कहा गया है, एवं सृष्टि एवं प्रजा की वृद्धि के लिए इसका निर्माण ब्रह्मा के द्वारा किये जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (मत्स्य. ३.३१)। इसे विराज नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. ३.४५)।

जन्म के समय यह अर्धनारी देहधारी था। आगे चल कर ब्रह्मा ने इसे आज्ञा दे कर, इसके शरीर के स्त्री एवं पुरुषात्मक दो भाग किये गये जिसमें से पुरुष देह भाग से यह, एवं स्त्री देहभाग से इसकी पत्नी शतरूपा बन गयी (मार्क. ५०; विष्णु. १.७२; भा. ३.१२.५३; वायु. १.१.१०)।

स्वाग्रव—कुशांब लातव्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ८.६.८)।

स्वायष्ट—श्वेतपराशर कुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

स्वार—शिव देवों में से एक।

स्वारोचिष मनु—द्वितीय मन्वन्तर का अधिपति मनु, जो अग्नि का पुत्र माना जाता है (भा. ८.१.१९)। मार्कंडेय में इसे स्वरोचिष् राजा का वनदेवी से उत्पन्न पुत्र माना गया है। स्वरोचिष् का पुत्र होने के कारण, इसे स्वारोचिष पैतृक नाम प्राप्त हुआ (मार्क. ६३; स्वरोचिष् देखिये)।

देवी भागवत में इसे प्रियव्रत का पुत्र कहा गया है। इसने अपने बाल्यकाल में ही देवी की मृण्मय मूर्ति बना कर, एवं केवल सूखे पत्ते खा कर देवी की अत्यंत कठोर उपासना की, जिस कारण इसे मन्वन्तराधिपत्य प्राप्त हुआ (दे. भा. १०.८)।

स्वाह—(सो. क्रोष्टु.) क्रोष्टुवंशीय श्वाहि राजा का नामान्तर।

स्वाहा—स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्ष एवं प्रसूति की एक कन्या, जो अग्नि की पत्नी थी। इसने अपने पूर्वायुष्य में अत्यधिक तप किया, जिस कारण देवों को हविर्भाग पहुँचाने का शुभकार्य इस पर सौंपा गया।

अग्नि से इसे पावक, पवमान एवं शुचि नामक तीन अग्निस्वरूपी पुत्र, एवं स्वारोचिष मनु नामक मन्वन्तराधिप राजपुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मवै. २.४०; भा. ४.१.६०)।

एक बार इसने सप्तर्षियों की पत्नियों का रूप धारण कर अग्नि से संभोग किया, जिस कारण इसे 'स्कंद' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. व. २१४-२२०; स्कंद १. देखिये)। आगे चल कर स्कंद ने अपनी माता को आशीर्वाद दिया, 'तुम समस्त प्राणिमात्र के लिए पूज्य

रहोगी, एवं अग्नि में आहुति देते समय लोग 'स्वाहा' कह कर तुम्हारा नाम लेते रहेंगे' (म. व. २२०.५)।

२. वैवस्वत मन्वन्तर के बृहस्पति एवं तारा की एक कन्या, जो वैश्वानर अग्नि की पत्नी थी। इसके काम, अमोघ एवं उक्थ नामक तीन पुत्र थे (म. व. २०९.२३-२५)।

३. माहिष्मती के नीलध्वज राजा की कन्या, जो अग्नि की पत्नी थी (जै. अ. १५)।

स्वाहि--(सो. क्रोष्टु.) क्रोष्टुवंशीय श्वाहि राजा का नामान्तर।

स्वाहेय--स्कंद का मातृक नाम।

स्विष्टकृत्--एक अग्नि, जो बृहस्पति एवं तारा का एक पुत्र था (म. व. २०९.२१)।

स्विष्टयन--शौनक नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. ११.४.१.२-३)।

ह

हंस--ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करता रहा (भा. ४.८.१)।

२. कृतयुग में उत्पन्न श्री विष्णु का एक अवतार, जिसने सनकादि आचार्यों को ब्रह्मा की उपस्थिति में योग की शिक्षा प्रदान की थी। इसे 'यज्ञ' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ११.१३.१९-४१)।

यह प्रजापति था, एवं इसने साध्यदेवों को मोक्षसाधन का कथन किया था। इसके द्वारा साध्यदेवों को दिया गया यही उपदेश महाभारत में 'हंसगीता' नाम से उपलब्ध है (म. शां. २८८)। भागवत में और एक 'हंसगीता' दी गयी है, जिसमें 'भिक्षुगीता' भी समाविष्ट है (भा. ११.११-१३)।

३. साध्य देवों में से एक।

४. एक गंधर्व, जो कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक था। इसीके ही अंश से धृतराष्ट्र का जन्म हुआ था (म. आ. ६१.७७)।

५. शिवदेवों में से एक।

६. (सो. वसु.) वसुदेव एवं श्रीदेवा के पुत्रों में से एक।

७. जरासंध का एक मंत्री, जो शाल्वाधिपति ब्रह्मदत्त का पुत्र था। इसके भाई का नाम डिम्भक था, एवं ये दोनों अस्त्रविद्या में परशुराम के शिष्य थे (ह. वं. ३.१०३)। महाभारत में इसके भाई का नाम 'डिभक' दिया गया है। ये दोनों भाई जरासंध के मंत्री, एवं सलाहगार के नाते काम करते थे।

शिक्षा--इसके मित्रों में विचक्र एवं जनार्दन प्रमुख थे। इनमें से जनार्दन, इसके पिता के मित्रसह नामक मित्र का पुत्र था।

हंस, डिम्भक एवं जनार्दन इन तीनों मित्र की शिक्षा एवं विवाह एक साथ ही हुआ था। आगे चल कर इसने एवं डिम्भक ने शिव की कड़ी तपस्या की, जिससे प्रसन्न हो कर शिव ने इन्हें युद्ध में अजेयत्व, एवं स्वसंरक्षणार्थ दो भूतपार्षद इन्हें प्रदान किये थे। उसीके साथ ही साथ इन्हें रुद्रास्त्र, माहेश्वरास्त्र, ब्रह्मशिरास्त्र आदि अनेकानेक अस्त्र भी शिवप्रसाद से प्राप्त हुए थे (ह. वं. ३.१०५)।

दुर्वासस् का शाप--शिव से प्राप्त अस्त्रशस्त्रों के कारण, ये दोनों भाई अत्यंत उन्मत्त हुए, एवं सारे संसार को त्रस्त करने लगे। एक बार इन्होंने दुर्वासस् ऋषि को त्रस्त करना प्रारंभ किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर उस क्रोधी मुनि ने इन्हें विष्णु के द्वारा विनष्ट होने का शाप दिया (ह. वं. ३.१०७-१०८)। आगे चल कर अपने शाप का वृत्त दुर्वासस् ने द्वारका में जा कर कृष्ण से कथन किया, एवं इन उन्मत्त भाईयों की वध करने की प्रार्थना उससे की।

राजसूय यज्ञ--अगले साल इन्होंने राजसूय यज्ञ किया, एवं तद्हेतु करभार प्राप्त करने के लिए अपने मित्र जनार्दन को इन्होंने कृष्ण के पास भेजा (ह. वं. ३. ११३-११५)। कृष्ण ने इन्हें करभार देने से इन्कार किया, एवं युद्ध का आह्वान दिया। पश्चात् संपन्न हुए युद्ध में कृष्ण ने इसके मित्र विचक्र का वध किया,

एवं इसे लत्ताप्रहार कर पाताल में ढकेल दिया। वहाँ पाताल के सर्पों के दंश से इसकी मृत्यु हो गयी (ह. वं. ३.१२८)।

महाभारत के अनुसार, अपने भाई डिम्भक के वध की वार्ता सुन कर, इसने स्वयं ही यमुना नदी में कूद कर आत्महत्या कर ली (म. स. १३.४०-४२)।

जरासंध का विलाप—इनके वध की वार्ता ज्ञात होते ही जरासंध राजा ने अत्यधिक शोक किया, एवं दीर्घकाल तक विलाप करता रहा। आगे चल कर भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में जरासंध पर आक्रमण किया, उस समय भी उसने अपने इन दोनों स्वर्गीय मंत्रियों का स्मरण किया था (म. स. १३.३६)।

८. जरासंध की सेना का एक राजा, जो कृष्ण एवं जरासंध के दरम्यान हुए सत्रहवें युद्ध में बलराम के द्वारा मारा गया (म. स. १३.४२-४३)।

९. एक श्रेष्ठ पक्षी, जो कश्यपपत्नी ताम्रा का पौत्र, एवं ताम्राकन्या धृतराष्ट्री की संतान मानी जाती है (म. आ. ६०.५६)।

महाभारत में हंस पक्षियों का निर्देश अनेकबार आता है। सुवर्ण से विभूषित एक हंस ने नल एवं दमयंती के संदेश एक दूसरे को पहुँचा कर, उनमें अनुराग उत्पन्न किया था (म. व. ५०.१९-३२)।

भीष्म की मृत्यु के समय, सप्तर्षियों ने हंस का रूप धारण कर उसे दक्षिणायन में प्राणत्याग करने से रोका था (म. भी. ११४.९०)। एक हंस एवं काक का रूपकात्मक आख्यान भी कर्णार्जुन युद्ध के समय निर्दिष्ट है (म. क. २८.१०-५४)।

हंसकायन—एक क्षत्रिय लोकसमूह, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेंट ले कर उपस्थित हुआ था।

हंसचूड—कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०.१६)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'अंगचूड'।

हंसजिह्व—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हंस-डिम्भक—शाल्वदेव का एक राजाद्वय, जो जरासंध के प्रमुख मंत्री एवं सलाहगार थे (हंस ७. देखिये)।

हंसध्वज—चंपक नगरी का एक विष्णुभक्त राजा, जिसके विदूरथ, चंद्रकेतु, चंद्रसेन आदि बन्धु थे। इसके मंत्रियों के नाम सुमति, सुगति, तुष्ट एवं श्रद्धालु थे, एवं शंख एवं लिखित नामक बंधुद्वय इसके पुरोहित थे। अपने राज्य में इसने एकपत्नीव्रत का पुरस्कार किया था।

अर्जुन से युद्ध—युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय, अर्जुन के द्वारा रक्षण किया गया अश्व इसने पकड़ लिया, जिस कारण इसके सुधन्वन् एवं सुरथ नामक दो पुत्रों का अर्जुन ने वध किया।

पश्चात् अत्यधिक क्रुद्ध हो कर यह स्वयं युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ, एवं अर्जुन से युद्ध करने लगा। इससे युद्ध करने पर अर्जुन की निश्चित ही मृत्यु होगी, यह जान कर कृष्ण ने इन दोनों में मध्यस्थता की, एवं अश्वरक्षण के कार्य में अर्जुन की सहायता करने की इससे प्रार्थना की।

परिवार—इसके सुरथ, सुधन्वन्, सुदर्शन, सुबल एवं सम नामक पाँच पुत्र थे (जै. अ. १७.२१)।

हंसवक्त्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७०)।

हंसिका—सुरभि नामक कामधेनु की एक गोस्वरूपी कन्या, जो दक्षिण दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'हंसका'।

हंसी—भगीरथ राजा की कन्या, जो कौत्स ऋषि की पत्नी थी (म. अनु. २००.२६)।

हंडिदास—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हनुमत् अथवा **हनूमत्**—एक सुविख्यात वानर, जो सुमेरु के केसरिन् नामक वानर राजा का पुत्र, एवं किष्किंधा के वानरराजा सुग्रीव का अमात्य था। एक कुशल एवं संभाषणचतुर राजनीतिज्ञ, वीर सेनानी एवं निपुण दूत के नाते इसका चरित्र-चित्रण वाल्मीकि रामायण में किया गया है।

वाल्मीकि रामायण में इसे शौर्य, चातुर्य, बल, धैर्य, पाण्डित्य, नीतिमानता एवं पराक्रम इन दैवी गुणों का आलय कहा गया है—

> **शौर्यं, दाक्ष्यं, बलं, धैर्यं, प्राज्ञता नयसाधनम्।**
> **विक्रमश्च प्रभावश्च हनूमति कृतालयाः॥**
> (वा. रा. उ. ३५.३)।

इस प्रकार निपुण राजनीतिज्ञ, समयोचित मंत्रणा देनेवाला सचिवोत्तम, एवं महापराक्रमी वीर पुरुष हो कर भी यह विनम्रता, निरभिमानता, दीनता, वाणी की मनोहारिता आदि सत्त्वगुणों से भी भरपूर था। इसी कारण एक पराक्रमी वीरपुरुष के नाते नहीं, बल्कि राम के परमभक्त एवं दासानुदास के नाते ही लोग इसे पहचानते हैं, एवं यही सेवापरायणता इसका सर्वश्रेष्ठ बिरुद माना गया है।

'हनुमत्' एक द्राविड शब्द--'रावण' शब्द की भाँति 'हनुमत्' भी एक द्राविड शब्द है, जो 'आणमंदी' अथवा 'आणमंती' का संस्कृत रूप है; 'अण्' का अर्थ है 'नर', एवं 'मंदी' का अर्थ है 'कपि'। इस प्रकार एक नरवानर के प्रतीकरूप में हनुमत् की कल्पना सर्वप्रथम प्रसृत हुई। इसी नरवानर को आगे चल कर देवतास्वरूप प्राप्त हुआ, एवं उत्तरकालीन साहित्य में राम एवं लक्ष्मण के समान हनुमत् भी एक देवता माना जाने लगा।

गुणवैशिष्ट्य--हनुमत् की इस देवताविषयक धारणा में इसका अर्थ वानराकृति रूप यही सब से बड़ी भूल कही जा सकती है। सुग्रीव, वालिन् आदि के समान यह वानरजातीय अवश्य था, किन्तु बंदर न था, जैसा कि, आधुनिक जनश्रुति मानती है। वाल्मीकिरामायण में निर्दिष्ट अन्य वानरजातीय वीरों के समान यह संभवतः उन आदिवासियों में से एक था, जिनमें वानरों को देवता मान कर पूजा की जाती थी (वानर देखिये)।

हनुमत् के व्यक्तित्व की यह पार्श्वभूमि भूल कर, उसे एक सामान्य वानर मानने के कारण इसका स्वरूप, पराक्रम एवं गुणवैशिष्ट्यों को काफ़ी विकृत स्वरूप प्राप्त हुआ है, जो उसके सही स्वरूप एवं गुणवैशिष्ट्यों को धूँधला सा बना देता है।

हनुमत् देवता का मूल स्त्रोत--कई अभ्यासकों के अनुसार, प्राचीन काल में हनुमत् कृषिसंबंधी एक देवता था, जो संभवतः वर्षाकाल का, एवं वर्षाकाल में उत्पन्न हुए वायु का अधिष्ठाता था। इसी कारण हनुमत् का बहुत सारा वर्णन वैदिक मरुत् देवता का स्मरण दिलाता है। यह वायुपुत्र बादलों के समान कामरूपधर, एवं आकाशगामी है। यह दक्षिण की ओर से, जहाँ से वर्षा आती है, सीता अर्थात् कृषि के संबंध में समाचार राम को पहुँचाता है। इस प्रकार इंद्र के समान हनुमत् का भी संबंध वैदिककालीन वर्षादेवता से प्रतीत होता है।

आँठवी शताब्दी तक यह रुद्रावतार माने जाने लगा, एवं इसके ब्रह्मचर्य पर जोर दिया जाने लगा। बाद में महावीर हनुमत् का संबंध, प्राचीन यक्षपूजा (वीरपूजा) के साथ जुड़ गया, एवं बल एवं वीर्य की देवता के नाते इसकी लोकप्रियता एवं उपासना और भी व्यापक हो गयी है। आनंद रामायण के अनुसार, पृथ्वी के सभी वीर हनुमत् के ही अवतार है :--

ये ये वीरास्त्वत्र भूम्यां वायुपुत्रांशरूपिणः।

(आ. रा. ८.७.१२३)।

हनुमत् देवता का सद्यःस्वरूप--भारतवर्ष के सभी प्रदेशों में हनुमत् की उपासना अत्यंत श्रद्धा से आज की जाती है, जहाँ इसे साक्षात् रुद्रावतार एवं सदाचरण का प्रतीक रूप देवता माना जाता है। आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करनेवाले शिव की, एवं व्यावहारिक कामनापूर्ति करनेवाले हनुमत्, भारत के सभी ग्रामों में आज सब से अधिक लोकप्रिय देवता हैं। इनमें से हनुमत् की उपासना आरोग्य, संतान आदि की प्राप्ति के लिए, एवं भूतपिशाच आदि की पीड़ा दूर करने के लिए की जाती है। हनुमत् का यह 'ग्रामदेवता स्वरूप' वाल्मीकि रामायण में निर्दिष्ट हनुमत् से सर्वथा विभिन्न है, एवं वह ई. स. ८ वी शताब्दी के उत्तरकाल में उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है।

जन्म--जैसे पहले ही कहा जा चुका है, यह सुमेरु के राजा केसरिन् एवं गौतमकन्या अञ्जना का पुत्र था। यह अञ्जना को वायुदेवता के अंश से उत्पन्न हुआ था, एवं इसका जन्मदिन चैत्र शुक्ल पुर्णिमा था।

इसके जन्म के संबध में अनेकानेक कथाएँ पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, जो काफ़ी चमत्कृतिपूर्ण प्रतीत होती हैं। शिवपुराण के अनुसार, एक बार विष्णु ने मोहिनी का रूप धारण कर शिव को कामोत्सुक किया। पश्चात् मोहिनी को देख कर स्खलित हुआ शिव का वीर्य सप्तर्षियों ने अपने कानों के द्वारा अंजनी के गर्भ में स्थापित किया, जिससे यह उत्पन्न हुआ (शिव. शत. २०)।

आनंदरामायण के अनुसार, दशरथ के द्वारा किये गये पुत्रकामेष्टियज्ञ में उसे अग्नि से पायस प्राप्त हुआ, जो आगे चल कर उसने अपने पत्नियों में बाँट दिया। इसी पायस में से कुछभाग एक चील उड़ा कर ले गयी। आगे चल कर, वहीं पायस चील के चोंच से छूट कर तप करती हुयी अञ्जनी के अंजुलि में जा गिरा। उसी पायस के प्रसाद से इसका जन्म हुआ।

भविष्यपुराण में इसके कुरूपता की मीमांसा इसे शिव एवं वायु का अंशावतार बता कर की गयी है। एक बार शिव ने अपने रौद्रतेज के रूप में, अंजनी के पति केसरिन् वानर के मुह में प्रवेश किया, एवं उसीके द्वारा अंजनी के साथ संभोग किया। पश्चात् वायु ने भी केसरिन् वानर के शरीर में प्रविष्ट हो कर अंजनी के साथ रमण किया। इन दो देवताओं के संभोग के पश्चात् अंजनी गर्भवती हुई, एवं उसने एक वानरमुख वाले पुत्र को जन्म दिया, जो हनुमत् नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसका विरूप मुख देख

कर अंजनी ने उसे पर्वत के नीचे फेंकना चाहा, किंतु वायु की कृपा से यह जीवित रहा (भवि. प्रति. ४.१३. ३१.३६)।

नामांतर— वाल्मीकि रामायण एवं महाभारत में इसे सर्वत्र 'वायुपुत्र', 'पवनात्मज', 'अनिलात्मज', 'वायुतनय' आदि उपाधियों से भूषित किया गया है।

इसके अतिरिक्त इसे निम्नलिखित नामांतर भी प्राप्त थे :—१. **मारुति**, जो नाम इसे मरुतपुत्र होने के कारण, प्राप्त हुआ था; २. **हनुमत्**, जो नाम इसे इन्द्र के वज्र के द्वारा इसकी हनु टूट जाने के कारण प्राप्त हुआ था; ३. **वज्रांग** (बजरंग)), जो नाम इसे वज्रदेही होने के कारण प्राप्त हुआ था; ४. **बलभीम**, जो नाम इसे अत्यंत बलशाली होने के कारण प्राप्त हुआ था।

अस्त्रप्राप्ति—यह बाल्यकाल से ही बलपौरुष से युक्त है, जिसके संबंध में चमत्कृतिपूर्ण कथाएँ विभिन्न पुराणों में प्राप्त हैं। एक बार अमावास्या के दिन अंजनी फल लाने गयी, उस समय भूखा हुआ हनुमत् खाने के लिए फल ढूँढने लगा। पश्चात् उदित होनेवाले रक्तवर्णीय सूर्यबिंब को देख कर यह उसे ही एक फल समझ बैठा, एवं उसे प्राप्त करने के लिए सूर्य की ओर उड़ा। उड़ान करते समय इसने राह में स्थित राहु को धक्का लगाया, जिससे क्रोधित हो कर इंद्र से इसकी शिकायत की।

इंद्र ने अपना वज्र इस पर प्रहार किया, एवं यह एक पर्वत पर मूर्च्छित हो कर गिर पड़ा। अपने पुत्र को मूर्च्छित हुआ देख कर वायुदेव इंद्र से युद्ध करने के लिए उद्यत हुआ। यह देख कर समस्त देवतागण घबरा गया, एवं अंत में स्वयं ब्रह्मा ने मध्यस्थता कर हनुमत् एवं इंद्र में मित्रता प्रस्थापित की।

उस समय इंद्र के सहित विभिन्न देवताओं ने इसे निम्नलिखित अनेकानेक अस्त्र एवं वर प्रदान कियेः—१. **इंद्र**—वज्र से अवध्यत्व एवं हनुमत् नाम; २. **सूर्य**—सूर्यतेज का सौवाँ अंश, एवं अनेकानेक शास्त्र एवं अस्त्रों का ज्ञान; ३. **वरुण**— वरुणपाशों से अबद्धत्व; ४. **यम**— आरोग्य, युद्ध में अजेयत्व एवं चिरउत्साह; ५. **ब्रह्मा**— युद्ध में भयोत्पादकत्व, मित्रभयनाशकत्व, कामरूपधारित्व एवं यथेष्टगामित्व; ६. **शिव**— दीर्घायुष, शास्त्रज्ञत्व एवं समुद्रोल्लंघनसामर्थ्य (पद्म. पा. ११४; उ. ६६; नारद १. ७९)।

ऋषियों से शाप—देवताओं से प्राप्त अस्त्रशस्त्रों के कारण यह अत्यधिक उन्मत्त हुआ, एवं समस्त सृष्टि को त्रस्त करने लगा। एक बार इसने भृगु एवं अंगिरस् ऋषियों को त्रस्त किया, जिस कारण उन्होंने इसे शाप दिया, 'अपने अगाध दैवी सामर्थ्य का तुम्हें स्मरण न रहेगा, एवं कोई देवतातुल्य व्यक्ति ही केवल उसे पहचान कर उसका सुयोग्य उपयोग कर सकेगा'।

सुग्रीव का मंत्री—सूर्य ने इसे व्याकरण, सूत्रवृत्ति, वार्तिक, भाष्य, संग्रह आदि का ज्ञान कराया, एवं यह सर्वशास्त्रविद् बन गया। पश्चात् सूर्य की ही आज्ञा से यह सुग्रीव का स्नेही एवं बाद में मंत्री बन गया (शिव. शत. २०)।

सीताशोध के लिए किष्किंधा राज्य में आये हुए राम एवं लक्ष्मण से परिचय करने के हेतु सुग्रीव ने इसे ही भेजा था। उस समय भिक्षुक का रूप धारण कर यह पंपासरोवर गया, एवं अत्यंत मार्मिक भाषा में अपना परिचय राम को दे कर, किष्किंधा राज्य में आने का उसका हेतु पूछ लिया।

संभाषणचातुर्य—उस समय इसकी वाक्‌चातुर्य एवं संभाषण पद्धति से राम अत्यधिक प्रसन्न हुआ :—

> **अविस्तरमसंदिग्धमविलम्बितमव्यथम्।**
> **उरस्थं कण्ठगं वाक्यं वर्तते मध्यमस्वरम्॥**
> **संस्कारक्रमसंपन्नाम्, अद्रुतामविलम्बिताम्।**
> **उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदयहर्षिणीम्॥**
> (वा. रा. कि. ४.३१-३२)।

(हनुमत् का संभाषण अविस्तृत, स्पष्ट, सुसंस्कारित एवं सुसंगत है। वह कंठ, हृदय एवं बुद्धि से एकसाथ उत्पन्न हुआ सा प्रतीत होता है। इसी कारण इसका संभाषण एवं व्यक्तित्व श्रोता के हृदय के लिए प्रसन्न, एवं हर्षजनक प्रतीत होता है)।

पश्चात् इसकी ही सहायता से राम एवं सुग्रीव में मित्रता प्रस्थापित हुई। तदुपरांत राम एवं सुग्रीव में जहाँ कलह के, या मतभेद के प्रसंग आये, उस समय यह उन दोनों में मध्यस्थता करता रहा। वालिन्‌वध के पश्चात् विषयोपभोग में लिप्त सुग्रीव को इसने ही जगाया, एवं राम के प्रति उसके कर्तव्य का स्मरण दिलाया (वा. रा. कि. २९)।

सीताशोध— सीताशोध के लिए दक्षिण दिशा की ओर निकले हुए वानरदल का यह प्रमुख बना, एवं सीताशोध के लिए निकल पड़ा। इस कार्य के लिए जाते समय रास्ते में यह कण्डुक ऋषि का आश्रम, लोध्र-

वन् एवं सुपर्णवन आदि होता हुआ तपस्विनी स्वयंप्रभा के आश्रम में पहुँच गया। स्वयंप्रभा ने इसे एवं अन्य वानरों को समुद्रकिनारे पहुँचा दिया। वहाँ जटायु का भाई संपाति इससे मिला, एवं सीता का हरण रावण के द्वारा ही किये जाने का वृत्त उसने इसे सुनाया। उसी समय लंका में स्थित अशोकवन में सीता को बंदिनी किये जाने का वृत्त भी इसे ज्ञात हुआ (वा. रा. कि. ४८-५९)।

समुद्रोल्लंघन—लंका में पहुँचने में सब से बड़ी समस्या समुद्रोल्लंघन की थी। इसके साथ आये हुए बाकी सारे वानर इस कार्य में असमर्थ थे। अतएव इसने अकेले ही समुद्र लांघने के लिए छलांग लगायी। राह में इसे आराम देने के लिए मेरुपर्वत समुद्र से उभर आया। देवताओं के द्वारा भेजी गयी नागमाता सुरसा ने इसके सामर्थ्य की परीक्षा लेनी चाही, एवं पश्चात् इसे अंगीकृत कार्य में यशस्वी होने का आशीर्वाद दिया।

आगे चल कर लंका का रक्षण करनेवाली सिंहिका राक्षसी इससे युद्ध करना चाही, किन्तु इसने उसे परास्त किया। पश्चात् एक सूक्ष्माकृति मक्खी का रूप धारण कर यह लंब पर्वत पर उतरा, एवं वहाँ से लंका में प्रवेश किया (वा. रा. सुं. १; म. व. २६६)। वहाँ लंका-देवी को युद्ध में परास्त कर यह सीता शोध के लिए निकल पड़ा।

अशोकवन में—सीता की खोज करने के लिए इसने लंका के सारे मकान ढूँढे। पश्चात् रावण के सारे महल, शयनागार, भंडारघर, पुष्पक विमान आदि की भी इसने छानबीन की। किन्तु इसे कहीं भी सीता न मिली। अतः सीता की सुरक्षा के संबंध में यह अत्यंत चिंतित हुआ, एवं अत्यंत निराश हो कर वानप्रस्थ धारण करने का विचार करने लगा—

> **हस्तादानो मुखादानो नियतो वृक्षमूलिकः।**
> **वानप्रस्थो भविष्यामि अदृष्ट्वा जनकात्मजाम्॥**
> (वा. रा. सुं. १३.३८)।

(सीताशोध के कार्य में अयशस्विता प्राप्त होने के कारण यही अच्छा है कि, मैं वानप्रस्थ का स्वीकार कर, एवं विरागी बन कर यहीं कहीं फलमूल भक्षण करता रहूँ)।

सीता से भेंट—अंत में यह नलिनी नदी के तट पर स्थित अशोकवन में पहुँच गया, जहाँ राक्षसियों के द्वारा यातना पाती हुई सीता इसे दिखाई दी। वहाँ एक पेड़ पर बैठ कर इसने रामचरित्र एवं स्वचरित्र का गान किया, एवं अपना परिचय सीता से दिया। राम के द्वारा दी गयी अभिज्ञान की अंगूठी भी इसने उसे दी (वा. रा. सुं. ३२-३५)।

पश्चात् अपने पीठ पर बिठा कर सीता को बंधनमुक्त कराने का प्रस्ताव इसने उसके सम्मुख रखा, किन्तु सीता के द्वारा उसे अस्वीकार किये जाने पर (सीता देखिये), इसने उसे आश्वासन दिया कि, एक महीने के अंदर राम स्वयं लंका में आ कर उन्हें मुक्त करेंगे (वा. रा. सुं. ३८)।

लंकादहन—सीताशोध का काम पूरा करने के पश्चात् इसने चाहा कि यह रावण से मिले। अपनी ओर रावण का ध्यान खींच लेने के हेतु इसने अशोक-वन का विध्वंस प्रारंभ किया। यह समाचार मिलते ही उसने पहले जंबुमालिन्, एवं पश्चात् विरूपाक्षादि पाँच सेना-पतियों के साथ अपने पुत्र अक्ष को इसके विनाशार्थ भेजा। किन्तु इन दोनों का इसने वध किया। पश्चात् इंद्रजित् ने इसे ब्रह्मास्त्र से बाँध कर रावण के सामने उपस्थित किया (वा. रा. सुं. ४१-४७)।

रावण ने इसके वध की आज्ञा दी, किन्तु बिभीषण के के द्वारा समझाये जाने पर इसके वध की आज्ञा स्थगित कर दण्डस्वरूप इसकी पूँछ में आग लगाने की आज्ञा दी (वा. रा. सुं. ५२)। इस समय अपनी माया से पूँछ बढ़ाने की, एवं रावणसभा में कोलाहल मचाने की चमत्कृतिपूर्ण कथा आनंदरामायण में प्राप्त है (आ. रा. सार. ९)। यहाँ तक की इसने रावण के मूँछदाढ़ी में आग लगायी।

पश्चात् इसने अपनी जलती पूँछ से सारी लंका में आग लगायी। पश्चात् इसे यकायक होश आया कि, लंका-दहन से सीता न जल जाये। यह ध्यान आते ही, यह पुनः एक बार सीता के पास आया, एवं उसे सुरक्षित देख कर अत्यंत प्रसन्न हुआ। बाद में सीता को वंदन कर एक छलांग में यह पुनः एक बार महेंद्र पर्वत पर आया (वा. रा. सुं. ५७-६१)।

सुग्रीव से भेंट—सीता का शोध लगाने का दुर्घट कार्य यशस्वी प्रकार से करने के कारण सुग्रीव ने इसका अभि-नंदन किया। पश्चात् राम ने भी एक आदर्श सेवक के नाते इसकी पुनः पुनः सराहना की (वा. रा. यु. १. ६-७)। उस समय राम ने कहा, 'हनुमत् एक ऐसा आदर्श सेवक है, जिसने सुग्रीव के प्रेम के कारण एक अत्यंत दुर्घट कार्य यशस्वी प्रकार से पूरा किया है

(भृत्यकार्यं हनुमता सुग्रीवस्य कृतं महत्) (वा. रा. यु. १.६)।

राम-रावण युद्ध में—इस युद्ध में समस्त वानरसेना का एकमात्र आधार, सेनाप्रमुख एवं नेता एक हनुमत् ही था। इस युद्ध में इसने अत्यधिक पराक्रम दिखा कर निम्नलिखित राक्षसों का वध कियाः—१. जंबुमालिन् (वा. रा. यु. ४३); २ धूम्राक्ष (वा. रा. यु. ५१-५२; म. व. २७०.१४); ३. अकंपन (वा. रा यु. ५५-५६), ४. देवान्तक एवं त्रिशिरस् (वा. रा. यु. ६९-७१); ५. वज्रवेग (म. व. २७१.२४)।

रामरावण युद्ध के छठवे दिन रावण के ब्रह्मास्त्र के द्वारा मूर्च्छित हुए लक्ष्मण को हनुमत् ने ही राम के पास लाया। पश्चात् इसके स्कंध पर आरूढ हो कर राम ने रावण को आहत किया (वा. रा. यु. ५९; राम दाशरथि देखिये)।

इंद्रजित के द्वारा किये गये अदृश्ययुद्ध में जब वानरसेना का निर्घृण संहार हुआ, तब इसने ही हिमाचल के वृष शिखर पर जा कर वहाँ से संजीवनी, विशल्यकरिणी, सुवर्णकरिणी, एवं संधानी नामक औषधी वनस्पतियाँ ला कर वानरसेना को जीवित किया (वा. रा. यु. ७४)। पश्चात् युद्ध के अंतिम दिन रावण के द्वारा लक्ष्मण मूर्छित होने पर यह पुनः एक बार हिमालय के औषधि पर्वत गया था। काफ़ी ढूँढने पर वहाँ इसे वनस्पतियाँ न प्राप्त हुई। इस कारण सारा शिखर यह अपने बायें हस्त पर उठा कर ले आया (वा. रा. यु. १०१)। वाल्मीकि रामायण के अनुसार, इसने दो बार द्रोणागिरि उठा कर लाया था (वा. रा. यु. ७४; १०१)।

युद्ध में इसके दिखाये पराक्रम के कारण राम ने अत्यधिक प्रसन्न हो कर कहा थाः—

न कालस्य, न शक्रस्य, न विष्णोर्वित्तपस्य च।
कर्माणि तानि श्रूयन्ते यानि युद्धे हनूमतः॥
(वा. रा. उ. ३५.८)।

(इस युद्ध में हनुमत् ने जो अत्यधिक पराक्रम दिखाया है, वह इंद्र, विष्णु एवं कुबेर के द्वारा भी कभी किसी युद्ध में नहीं दिखाया गया है)।

अयोध्या में—युद्ध समाप्त होने पर अयोध्या के सभी लोगों का कुशल देख आने के लिए, एवं भरत को अपने आगमन की सूचना देने के लिए राम ने इसे भेजा था (वा. रा. यु. १२५-१२७; म. व. २६६)। राम के राज्याभिषेक के समय इसने समुद्र का जल लाया था, जिसके फलस्वरूप सीता ने इसे अपना हार इसे भेंट में दिया था।

ब्रह्मचर्य—प्राचीन वाङ्मय में इसे सर्वत्र 'ब्रह्मचरिन्' 'जितेंद्रिय' 'ऊर्ध्वरेतस्' आदि 'उपाधियों' से भूषित किया गया है। राम के अश्वमेधीय यज्ञ के समय हुए युद्ध में शत्रुघ्न आहत हुआ, उस समय इसने अपने ब्रह्मचर्य के बल से उसे पुनः जीवित किया था (पद्म. पा. ४५.३१)।

चिरंजीवित्व—प्राचीन साहित्य में इसे सर्वत्र चिरंजीव माना गया है। इसके चिरंजीवत्व के संबंध में एक कथा पद्म में दी है। युद्ध के पश्चात् राम की सेवा करने के हेतु, यह उसके साथ ही अयोध्या में रहने लगा। इसकी सेवावृत्ति से प्रसन्न हो कर राम ने इसे ब्रह्मविद्या प्रदान की, एवं वर प्रदान दिया, 'जब तक रामकथा जीवित रहेगी तब तक तुम अमर रहोंगे' (पद्म. उ. ४०)।

किंतु पद्म में अन्यत्र राम-रावणयुद्ध के पश्चात्, इसका सुग्रीव के साथ किष्किंधा में निवास करने का निर्देश प्राप्त है (पद्म. सृ. ३८)।

महाभारत में इसे चिरंजीव कहा गया है, एवं इसका स्थान अर्जुन के रथध्वज पर वर्णन किया गया है। (म. व. १४७.३७)। इसके द्वारा भीम का गर्वहरण करने का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. व. १४६. ५९-७९)।

पांडित्य—इसे ग्यारहवाँ व्याकरणकार कहा गया है, एवं इसके द्वारा विरचित 'महानाटक' अथवा 'हनुमन्नाटक' का निर्देश प्राप्त है

परिवार—इसके ब्रह्मचारी होने के कारण इसका अपना परिवार कोई न था। फिर भी इसके पसीने के एक बूँद के द्वारा एक मछली से इसे मकरध्वज अथवा मत्स्यराज नामक एक पुत्र उत्पन्न होन का निर्देश आनंद-रामायण में प्राप्त है (आ. रा. ७.११; मकरध्वज देखिये)।

मानस में—तुलसी के मानस में चित्रित किया गया हनुमत् एक सेनानी नहीं, बल्कि अधिकतर रूप में राम का परमभक्त हैं। यद्यपि मानस में इसके समुद्रोल्लंघन, अशोक वाटिकाविध्वंस, लंकादहन, मेघनादयुद्ध, कुंभकर्णयुद्ध आदि पराक्रमों का निर्देश प्राप्त है, फिर भी इन सारे पराक्रमों की सही पार्श्वभूमि इसकी राम के प्रति अनन्य भक्ति की है। इसी कारण तुलसी कहते हैं:-

'महावीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आपु बखाना।
(मानस. १.१६.१०)।

हन्तृ—अमिताभ देवों में से एक।

हय—तुषित एवं साध्य देवों में से एक।

हयग्रीव—विष्णु का एक अवतार। यह अश्वमुखी होने के कारण इसे 'हयग्रीव' नाम प्राप्त हुआ था। इसे 'हयशिरस्' 'अश्वशिरस्' नामांतर भी प्राप्त थे (विष्णु देखिये)।

स्वरूपवर्णन—अगस्त्य ऋषि को कांची नगरी में इसके दिये दर्शन का वर्णन ब्रह्मांड में प्राप्त है, जहाँ इसे शंख, चक्र, अक्षवलय एवं 'पुस्तक' (ग्रंथ) धारण करनेवाला कहा गया है (ब्रह्मांड. ४.५,९.३५-४०)।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में सर्वत्र इसे विष्णु का नहीं, बल्कि यज्ञ का अवतार कहा गया है। किन्तु तैत्तिरीय आरण्यक में यज्ञ को विष्णु का ही एक प्रतिरूप कथन किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि, वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट हयग्रीवकथा का स्रोत एक ही है, जिसका प्रारंभिक रूप वैदिक साहित्य में पाया जाता है।

पंचविंश ब्राह्मण में हयग्रीव अवतार की कथा निम्न-प्रकार बतायी गयी हैं। एक बार अग्नि, इंद्र, वायु एवं यज्ञ (विष्णु) ने एक यज्ञ किया। इस यज्ञ के प्रारंभ में यह तय हुआ था कि, यज्ञ को जो हविर्भाग प्राप्त होगा, वह सभी देवताओं में बाँट दिया जायेगा। उस समय यज्ञ को सर्वप्रथम हविर्भाव प्राप्त हुआ, जिसे ले कर वह भाग गया। इस कारण बाकी सारे देव इसका पीछा करने लगे।

अपने दैवी धनुष की सहायता से यज्ञ ने सभी देवताओं को हरा दिया। अन्त में एक दीमक के द्वारा देवों ने यज्ञ के धनुष की प्रत्यंचा कटवा दी, एवं इस प्रकार असहाय हुए यज्ञ का मस्तक कटवा दिया। तत्पश्चात् अपने कृतकर्म के लिए यज्ञ देवों से माफी माँगने लगा। इस पर देवों ने अश्विनों के द्वारा एक अश्वमुख यज्ञ के कबंध पर लगा दिया (पं. ब्रा. ७.५.६; तै. आ. ५.१; तै. सं. ४.९.१)।

पौराणिक साहित्य में—यही कथा स्कंद पुराण आदि पौराणिक साहित्य में कुछ मामूली फर्क के साथ दी गयी है। एक बार देवाताओं की प्रतियोगिता में विष्णु सर्वश्रेष्ठ देव सिद्ध हुआ। इस कारण क्रुद्ध हो कर, ब्रह्मा ने उसे उसका मस्तक टूट जाने का शाप दिया। आगे चल कर एक अश्वमुख लगा कर यह देवताओं के यज्ञ में शामिल हुआ। यज्ञसमाप्ति के पश्चात् इसने धर्मारण्य में तप किया, जहाँ शिव की कृपा से इसका अश्वमुख नष्ट हो कर इसे अपना पूर्वरूप प्राप्त हुआ।

हयग्रीव असुर का वध—पौराणिक साहित्य में हयग्रीव एवं मधुकैटभ असुरों का वध करने के लिए श्रीविष्णु का हयग्रीव नामक अवतार होने का निर्देश प्राप्त है। एक बार हयग्रीव नामक असुर ने पृथ्वी में स्थित वेदों का हरण किया। उस पर ब्रह्मादि सारे देव हयग्रीव की शिकायत ले कर विष्णु के पास गये। पश्चात् विष्णु आदि देव हयग्रीव के पास पहुँच गये, जहाँ इन्होंने देखा कि, वह असुर भूमि पर अपने धनुष रख कर पास ही सो गया है। तदुपरांत विष्णु ने पास ही स्थित दीमक की सहायता से हयग्रीव असुर के धनुष की प्रत्यंचा को तोड़ डाला, एवं उसका नाश किया।

हयग्रीव के धनुष की प्रत्यंचा टूटते ही विष्णु का स्वयं का मुख भी टूट गया, जो आगे चल कर विश्वकर्मन् की सहायता से पुनः जोड़ा गया। उस समय विश्वकर्मन् ने विष्णु को जो मुख प्रदान किया था, वह अश्व का था। इस कारण हयग्रीव असुर का वध करनेवाले इस अवतार को 'हयग्रीव' नाम प्राप्त हुआ (दे. भा. १.५)।

देवी भागवत के अनुसार, हयग्रीव असुर को देवी का आशीर्वाद था कि, केवल 'हयग्रीव' नाम धारण करनेवाला व्यक्ति ही उसका वध कर सकती है। इस कारण हयग्रीव का अवतार ले कर विष्णु को इसका वध करना पड़ा। विष्णु के इस अवतार का निर्देश महाभारत में भी प्राप्त है (म. उ. १२८.४९; शां. १२२.४६; ३२६.५६)।

रसातल में रहनेवाले मधु एवं कैकटक नामक राक्षसों का वध भी इसी अवतार के द्वारा होने का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. शां. ३३५.५२-५५; भा. ५. १८.१-६)।

क्रम-पाठ—इसीके आराधना से पंचाल ऋषि ने वेदों का क्रमपाठ प्राप्त किया था (म. शां. ३३५.६९-७१)।

२. एक असुर, जो कश्यप एवं दिति के पुत्रों में से एक था (पद्म. उ. २३०)। इसका जन्म पूर्वकल्प की रात्रि में हुआ था। पृथ्वीप्रलय के समय इसने वेदों का हरण किया जिन्हें हयग्रीव का अवतार ले कर श्रीविष्णु ने पुनः प्राप्त किया (हयग्रीव देखिये)। भागवत के अनुसार, इसका

वध हयग्रीव अवतार के द्वारा नहीं, बल्कि विष्णु के मत्स्यावतार के द्वारा हुआ था (भा. ८.२४.९-५७)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक एक था। यह वृत्र का (भा. ६.१०.१९); हिरण्यकशिपु का (भा. ७.२.४); एवं तारकासुर का अनुगामी था।

४. एक असुर, जो नरकासुर का प्रमुख अनुयायी, एवं उसके राज्य की रक्षा करनेवाले पाँच प्रमुख असुरों में से एक था। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. स. परि. १. १९.१३७७; उ. १२८.४९)।

५. एक राजा, जिसने क्षात्रधर्मानुसार उत्तम रीति से राज्य कर मुक्ति प्राप्त की थी (म. शां. २५.२२-३३)।

६. विदेहवंश का एक कुलांगार राजा (म. उ. ७२. १५)।

हयशिरस्--विष्णु के हयग्रीव नामक अवतार का नामांतर (हयग्रीव देखिये)।

हर—एकादश रुद्रों में से एक (मत्स्य. ५.२९)।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। यह सुबाहु राक्षस के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.२४)।

३. एक असुर, जो विभीषण का अमात्य था। यह मालिन् राक्षस का पुत्र था।

४. रामसेना का एक प्रमुख वानर (वा. रा. यु. २७.३)।

हरकल्प--एक सैंहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था। परशुराम ने इसका वध किया (वायु. ६८.१९)।

हरप्रीति—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार गण। पाठभेद-'रसद्वीचि'।

हरयाण--एक दाता, जिसने विश्वमनस् को दान प्रदान किया था (ऋ. ८.२५.२२)। ऋग्वेद में इसका निर्देश उक्षण्यायन एवं वरोसुषामन् के साथ प्राप्त है। सायणाचार्य के अनुसार, ये तीनों स्वतंत्र व्यक्ति न हो कर, हरयाण एवं उक्षण्यायन ये दोनो नाम एक ही वरोसुषामन् की उपाधियाँ होगी (नि. ५.१५.)।

हरि—श्रीकृष्ण का एक नाम, जो चतुर्व्यूह में से एक माना जाता है (म. शां. २११.८-१७)।

२. एक असुर, जो तारकाक्ष नामक असुर का पुत्र था। इसने तपस्या के द्वारा ब्रह्मा को प्रसन्न कर, असुरों के तीनों पुरों में मृतसंजीवनी वापियों का निर्माण किया था।

३. अकंपन राजा का पुत्र, जो अस्त्रविद्या में पारंगत एवं युद्ध में इंद्र के समान पराक्रमी था। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था, जहाँ कौरव योद्धाओं के द्वारा इसकी मृत्यु हो गयी (म. द्रो. परि. १.२८. ४७; शां. २४८.७)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'अविकंपक'।

४. पांडव पक्ष का एक चेदि राजा, जो भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया था (म. क. ४०.५०)।

५. यज्ञ एवं दक्षिणा के पुत्र सुयम का नामांतर। देवताओं का दुःख हरण करने के कारण ब्रह्माने इसे यह नाम प्रदान किया था (भा. २.७.२)।

६. तामस मन्वंतर का एक देवगण।

७. तामस मन्वंतर का एक अवतार, जो हरिमेधस् एवं हरिणी के पुत्रों में से एक था। विष्णु के इसी अवतार ने गजेन्द्र का उद्धार किया था (भा. ८. ३१)।

८. गरुड के पुत्रों में से एक।

९. अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

१०. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार ऋषभ एवं जयन्ती के पुत्रों में से एक था। इसीने ही निमि को 'भागवतोत्तमधर्म' का उपदेश किया था (भा. ११.२.४५)।

११. रावण पक्ष का एक असुर।

१२. हरिहरपुर का एक कर्मठ ब्राह्मण, जिसके दुराचारी पत्नी को एक व्याघ्र ने खा डाला (पद्म. उ. १८७)।

हरिकर्णी--अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हरिकेश--गंधमादन पर्वत में रहनेवाले रत्नभद्र नामक यक्ष का एक पुत्र, जो शिव के कृपाप्रसाद से गणेश बन गया (मत्स्य. १८०; पूर्णभद्र २. देखिये)।

२. वसुदेव के श्यामक नामक भाई का एक पुत्र। इसकी माता का नाम शरभूमि था (भा. ९.२४.४२)।

हरिजटा--एक राक्षसी, जो रावण के द्वारा अशोकवन में सीता के संरक्षणार्थ रक्खी गयी थी (वा. रा. सुं. २३.५)।

हरिण—ऐरावतकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

२. एक नेवला, जिसका निर्देश महाभारत के बिडालोपाख्यान में प्राप्त है (म. शां. १३६.३० पाठ)।

हरिणाश्व—एक राजा, जिसे रघुराजा के द्वारा दिव्य खड्ग की प्राप्ति हुई थी। वही खड्ग आगे चलकर इसने शुनक राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७७)।

हरिणी—तामस मन्वंतर के हरि नामक अवतार की माता, जिसके पति का नाम हरिमेधस् था।

२. हिरण्यकशिपु असुर की एक कन्या, जो विश्वपति नामक असुर की पत्नी थी। इसे रोहिणी नामांतर भी प्राप्त था (म. व. २११.१८)।

हरित—(सू. इ.) एक राजा, जो हरिश्चंद्र राजा का पौत्र, एवं रोहित राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम चंप था। मत्स्य में इसे वृक कहा गया है (भा.१०.८.१)।

२. शाल्मलिद्वीप में स्थित हरितवर्ष का एक राजा, जो स्वायंभुव मनु के वपुष्मत् नामक पुत्र का पुत्र था (मार्क. ५०.२८; ब्रह्मांड. २.३२.३२)।

३. रुद्रसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

४. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्व राजा का पुत्र था।

५. (सो. यदु.) यदु राजा का एक पुत्र, जो उसे धूम्रवर्णा नामक नागकन्या से उत्पन्न हुआ था। इसने समुद्रद्वीप में स्वतंत्र राज्य की स्थापना की। आगे चलकर उसी द्वीप में स्थित मद्गुर नामक गणों का यह प्रमुख बन गया (ह. वं. २.३८.२; २९.३४)।

हरित काश्यप—एक आचार्य, जो शिल्प काश्यप नामक आचार्य का शिष्य, एवं असित वार्षगण नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ६.५.३ काण्व.)।

हरितक—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हरिताश्व—दक्षिण देश का एक राजा, जो इल राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. ८)।

हरिदत्त—एक ब्राह्मण, जो हिमालय में रहनेवाले विमल नामक ब्राह्मण का पुत्र था (पद्म. उ. २०७; विमल ३. देखिये)।

हरिदास—एक वानर राजा, जो पुलह एवं श्वेता के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१८१)।

हरिद्रक—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग।

हरिधामन्—एक ऋषि, जो बीस अक्षरों से युक्त कृष्णमंत्र का पाठ करने से, अगले जन्म में रंगवेणी नामक गोपी बन गया (पद्म. पा. ७२)।

हरिप्रिया—कृष्ण की एक पत्नी (पद्म. पा. ७०)।

हरिप्रीति—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हरिबभ्रु—युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित ऋषि (म. स. ४.१४)।

हरिभद्रा—कश्यप एवं क्रोधा की एक कन्या, जो पुलह ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्रों में वानर, किन्नर, एवं किंपुरुषयोनि के लोग प्रमुख थे (ब्रह्मांड. ३.७. १७२)।

हरिमंत आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ७२)।

हरिमित्र—एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'कमला एकादशी' के व्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है।

हरिमेध—एक व्यक्ति, जिसे सुमेध ऋषि ने तुलसी-माहात्म्य कथन किया था (स्कंद. २.४.८)।

हरिमेधस्—तामस मन्वन्तर के अवतार का पिता।

२. एक राजा, जिसके द्वारा किये गये सर्पसत्र को आधारभूत मान कर, जनमेजय ने अपना सर्पसत्र आयोजित किया था। इसकी कन्या का नाम ध्वजवती था, जो पश्चिम दिशा में निवास करती थी (म. उ. १०८.१३)।

हरिलोमन्—रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ७३)।

हरिवर्मन्—(सो. तुर्वसु.) एक राजा, जिसके पुत्र का नाम एकवीर था। वंशावलि में इसका नाम अप्राप्य है (एकवीर देखिये)।

हरिवर्ष—(स्वा. प्रिय.) निषध देश का एक राजा, जो आग्नीध्र एवं पूर्वचित्ति का पुत्र था (भा. ५.२.१९-२३)। आगे चल कर इसका देश इसके ही 'हरिवर्ष' नाम से सुविख्यात हुआ (मार्क. ५०.३५)। यह देश हेमकूट पर्वत के उत्तर में स्थित था, जहाँ से अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय करभार प्राप्त किया था।

हरिवर्ष आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. ८.९.४.५)।

हरिवाहन—(सो. ऋक्ष.) ऋक्षवंशीय मणिवाहन राजा का नामान्तर।

हरिवीर—एक राजा, जो अपने नास्तिक मतों के कारण विदैवत नामक पिशाच बन गया (पद्म. पा. ९५; विदैवत देखिये)।

हरिशर्मन्—एक विष्णुभक्त ब्राह्मण, जिसकी कथा अन्नदान का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. २०-२१)।

हरिश्चंद्र वैधस त्रैशंकव—एक सुविख्यात इक्ष्वाकु-वंशीय राजा, जो त्रिशंकु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सत्यवती था (म. स. ११.१३९*)। देवराज वसिष्ठ इसका गुरु था। शैब्या तारामती इसकी पत्नी थी (दे. भा. ७.१८; रोहित १. देखिये)।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे 'वैधस' (वेधस् राजा का वंशज), एवं 'ऐक्ष्वाक' (इक्ष्वाकु राजा का वंशज) कहा गया है। ऐतरेय ब्राह्मण में इसकी कुल सौ पत्नियाँ होने का निर्देश प्राप्त है, एवं वरुण देवता को अपना रोहित नामक पुत्र बलि के रूप में प्रदान करने के इसके आश्वासन का अस्पष्ट निर्देश वहाँ प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ७.१४.२; सां. श्रौ. १५.१७)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे समस्त भूपालों का सम्राट् कहा गया है, एवं अपने जैत्र नामक रथ में बैठ अपने शस्त्रों के प्रताप से सातों द्वीपों पर विजय प्राप्त करने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। इसके द्वारा किये गये राजसूय यज्ञ के कारण इसे इंद्रसभा में स्थान प्राप्त हुआ था, एवं इसके ही उदाहरण से प्रभावित हो कर पाण्डु राजा ने अपने पुत्र युधिष्ठिर से राजसूय यज्ञ करने का संदेश स्वर्ग से भेजा था (म. स. ११.५२-७०)।

विश्वामित्र से विरोध—अपने पिता त्रिशंकु के समान इसका पुरोहित सर्वप्रथम विश्वामित्र ही था। किन्तु आगे चल कर इक्ष्वाकुवंश के भूतपूर्व पुरोहित वसिष्ठ देवराज की प्रेरणा से अपने राजसूय यज्ञ के समय इसने विश्वामित्र ऋषि का अपमान किया। पश्चात् इस अपमान के कारण विश्वामित्र ने इसका पौरोहित्य छोड़ दिया, एवं देवराज वसिष्ठ पुनः एक बार इसका पुरोहित बन गया (विश्वामित्र देखिये)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में विश्वामित्र ऋषि के द्वारा इसे अनेकानेक प्रकार से त्रस्त करने की कल्पनारम्य कथाएँ प्राप्त हैं (मार्क. ८-९)। ब्रह्म के अनुसार, विश्वामित्र के दक्षिणा की पूर्ति के लिए इसे स्वयं को, अपनी पत्नी तारामती को, एवं पुत्र रोहित को बेचना पड़ा। इनमें से तारामती एवं रोहित को इसने एक वृद्ध ब्राह्मण को, एवं स्वयं को एक स्मशानाधिकारी चांडाल को बेच दिया।

आगे चल कर, विश्वामित्र ने अपनी माया से रोहित का सर्पदंश के द्वारा वध कराया। अपने पुत्र की मृत्यु से शोकविह्वल हो कर यह एवं तारामती अग्निप्रवेश के लिए उद्यत हुए। किन्तु वसिष्ठ एवं देवों ने इस आपत्प्रसंग से इसे बचाया, एवं इसका विगत वैभव एवं राज्य पुनः प्राप्त कराया (ब्रह्म. १०४; मार्क. ७-८)। पुराणों में निर्दिष्ट ये सभी कथाएँ, वसिष्ठ एवं विश्वामित्र का पुरातन विरोध कल्पनारम्य पद्धति से चित्रित करने के लिए दी गयी प्रतीत होती है।

पुत्रबलि—यह दीर्घकाल तक निःसंतान था। आगे चल कर वरुण की कृपाप्रसाद से इसे रोहित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके बड़ा होते ही पुत्रबलि के रूप में प्रदान करने का आश्वासन इसने दिया था। किन्तु आगे चल कर रोहित ने अपनी बलि देने से इन्कार कर दिया, एवं वह अरण्य में भाग गया। वरुण को दिया गया आश्वासन पूर्ण न होने के कारण यह 'वरुण रोग' (जलोदर) से पीडित हुआ। यह ज्ञात होते ही रोहित अरण्य से लौट आया, एवं अपने स्थान पर शुनःशेप नामक ब्राह्मणकुमार उसने यज्ञबलि के लिए तैयार किया। किन्तु विश्वामित्र ने शुनःशेप की रक्षा की (रोहित एवं शुनःशेप देखिये)।

हरिश्रवस्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

हरिस्वामिन्—एक ब्राह्मण, जिसकी कन्या का नाम सुलोचना था (सुलोचना देखिये)।

हारिषेण—ब्रह्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

हरी—कश्यप एवं क्रोधा की एक कन्या, जो इस संसार के सिंह, वानर, अश्व एवं लकडबग्घों की माता मानी जाती है (म. आ. ६०.६२)।

हर्यक्ष—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पृथु राजा एवं अर्चिस् का पुत्र था। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् यह उसके पूर्व साम्राज्य का अधिपति बन गया।

२. कुण्डल नगरी के सुरथ राजा का पुत्र। इसके पिता के द्वारा राम के अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिये जाने के समय, इसने राम की सेना के साथ युद्ध किया था (पद्म. पा. ४९)।

हर्यंग—(सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार चंप राजा का पुत्र, एवं भद्ररथ राजा का पिता था (मत्स्य. ४८.९८-९९)।

अपने पिता चंपक को यह पूर्णभद्र वैभाण्डकि ऋषि की कृपा से उत्पन्न हुआ था। वायु में इसे चित्ररथ राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ९९.१०७)। इसके द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में, इसके गुरु पूर्णभद्र ने अपने मंत्रप्रभाव से इंद्र का ऐरावत लाया था (ब्रह्म. १३.४३; ह. वं. १.३१; मत्स्य. ४८.९८)।

हर्यद्वन्त—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वायु के अनुसार जय राजा का पुत्र था (वायु. ९३.९)। विष्णु एवं भागवत में इसे क्रमशः हर्षवर्धन एवं हर्यवन कहा गया है।

हर्यन्त प्रागाथ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७२)।

हर्यश्व—प्राचेतस दक्ष के दस हजार पुत्रों का सामुहिक नाम।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु, एवं वायु के अनुसार दृढाश्व राजा का पुत्र, एवं निकुंभ राजा का पिता था (भा. ९.६.२४)। मत्स्य में इसे प्रमोद राजा का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. १२.३३)।

३. (सू. इ.) अयोध्या नगरी का एक राजा, जो भागवत के अनुसार अनरण्य राजा का, विष्णु के अनुसार पृषदश्व राजा का, एवं वायु के अनुसार त्रसदस्यु राजा का पुत्र था।

एक बार ययातिकन्या माधवी के साथ गालव ऋषि इसकी राजसभा में आये, एवं उन्होंने दो सौ श्यामकर्ण अश्वों की माँग इससे की। पश्चात् इसने गालव को दो सौ अश्व दे कर, एक संतान पैदा कराने के लिए माधवी को अपनी पत्नी बना ली। माधवी के गर्भ से इसे वसुमनस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रोत्पत्ति के बाद इसने माधवी को गालव ऋषि के पास वापस दे दिया (म. उ. ११४.२०)।

परिवार—माधवी के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित दो पत्नियाँ थीः—१. मधुमती, जो मधु दैत्य की कन्या थी, एवं जिससे इसे मधु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ह. वं. २.३७); २. दृषद्वती, जिससे इसे अरुण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. ३.६३.७५)।

४. काशीदेश का एक राजा, जो काशीराज सुदेव राजा का पिता, एवं दिवोदास का पितामह था। हैहय राजा वीतहव्य के पुत्रों ने इसका वध किया (म. अनु. ३०.१०-११)।

५. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो धृष्टकेतु जनक राजा का पुत्र, एवं मनु राजा का पिता था।

हर्यश्वि—नीलपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हर्यात्मन्—अट्ठाईस व्यासों में से एक।

हर्ष—धर्म के तीन पुत्रों में से एक। इसकी माता का नाम तुष्टि, एवं अन्य दो भाइयों के नाम शम एवं काम थे। इसकी पत्नी का नाम नन्दा था (म. आ. ६०. ३१-३२)।

हर्षण—विश्वरूप नामक असुरपुरोहित का पुत्र, जिसकी माता का नाम विष्टि था। यमधर्म की उपासना कर इसने अपने मातापितरों का दुष्टरूप नष्ट किया (ब्रह्म. १६५)।

हर्षवर्धन—क्षत्रवंशीय हर्यद्वन्त राजा का नामांतर।

हल—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हलधर—बलराम का नामान्तर (बलराम देखिये)।

हलमय—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'हल्यम'।

हला—अत्रिऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८.७५)।

हलिक—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१. १५)।

हलीसक—वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.५)। पाठभेद—'हलीमक'।

हवन—ग्यारह रुद्रों में से एक (म. अनु. १५०.१३)।

हवि—स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक था।

हविःश्रवस्—(सो. कुरु.) एक राजा, जो धृतराष्ट्र (प्रथम) राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.५१)।

हविघ्न—स्वारोचिष् मनु का एक पुत्र।

२. एक धर्मप्रवण नरेश (म. अनु. १६५.५८)।

हविर्धान—एक तपःसिद्ध राजा, जो विजिताश्व एवं नभस्वती के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम हविर्धानी था, जिससे इसे बर्हिषद, गय, शुक्ल, सत्य, जितव्रत एवं कृष्ण नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ४. २४.८)।

हविर्धान आंगि—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११.१२)।

हविर्धानी—हविर्धान राजा की पत्नी।

हविर्भू—कर्दम एवं देवहुति की एक कन्या, जो पुलस्त्य ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्रों के नाम अगस्त्य एवं विश्रवस् थे (भा. ३.२४.२२)।

हविष्कृत् आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य, जिसका निर्देश हविष्मत् आंगिरस नामक आचार्य के साथ प्राप्त है (पं. ब्रा. ११.१०.९-१०; २०.११.३; तै. सं. ७.१.४.१)।

हविष्पंद—विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

हविष्मत्—चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. इंद्रसभा का एक ऋषि (म. स. ७.११)।

४. मरीचिगर्भलोक में निवास करनेवाला एक पितृसमुदाय, जिसकी पूजा क्षत्रियों के द्वारा की जाती है। इनकी पत्नी का नाम कुहू था। इनकी मानसकन्या का

नाम यशोदा था, जो अंशुमत् राजा की पत्नी, एवं दिलीप राजा की माँ थी।

५. एक देव, जो अंगिरस् एवं सुरूपा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १८६)।

हविष्मत् आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य, जिसका निर्देश हविष्कृत् आंगिरस नामक आचार्य के साथ प्राप्त है (हविष्कृत् आंगिरस देखिये)।

हविष्मती—अंगिरस् ऋषि की पाँच कन्याओं में से एक (म. व. २०८.६)।

हवीन्द्र--स्वारोचिष मन्वन्तर का प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि का एक पुत्र था।

हव्य—स्वायंभुव मनु का एक पुत्र।

२. हव्यवाहन नामक दक्षसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षि का नामान्तर।

३. सुख देवों में से एक।

४. आद्य देवों में से एक।

हव्यघ्न--एक राक्षस, जो भरद्वाज ऋषि के यज्ञाग्नि के धुएँ से उत्पन्न हुआ था। एक बार भरद्वाज ऋषि ने गौतमी नदी के किनारे अपनी पैठीनसी नामक पत्नी के साथ एक यज्ञ प्रारंभ किया। उस यज्ञ के धुएँ में से यह उत्पन्न हुआ, एवं हविर्द्रव्य भक्षण करने लगा।

भरद्वाज ऋषि के द्वारा पूछे जाने पर इसने कहा, 'मै ब्रह्मा के द्वारा शापित एक अभागी व्यक्ति हूँ, एवं मेरा नाम कृष्ण है। मेरी प्रार्थना है कि, आप मुझे गंगोदक, सुवर्ण एवं गोघृत एवं सोम से 'प्रोक्षण' करे, जिससे मैं मुक्त हो जाऊँगा'।

इसकी प्रार्थना के अनुसार, भरद्वाज ऋषि ने प्रोक्षण किया, जिस कारण यह मुक्त हुआ (ब्रह्म. १३३)।

हव्यप--रैवत मनु का एक पुत्र।

२. रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

हव्यवत्--रैवत मनु का एक पुत्र।

हव्यवाह--धर नामक वसु का एक पुत्र।

२. पवमान नामक अग्नि का एक पुत्र।

हव्यवाहन--दक्षसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

हस्त—दक्ष की कन्या, जो सोम की पत्नी थी।

२. वसुदेव एवं रोचना के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.४९)।

हस्तिकर्ण--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.१४)।

हस्तिदान--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

हस्तिन्--(सो. पूरु.) एक सुविख्यात पूरुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार बृहत्क्षत्र राजा का, एवं वायु के अनुसार सुहोत्र राजा का पुत्र था (भा. ९.२१.२०-२१; वायु. ९९.१६५)। महाभारत में इसे सुहोत्र एवं जयंती का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी पत्नी का नाम त्रैगर्ती यशोदा (यशोधरा) दिया गया है, जिससे इसे विकुंठन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.३६)। इसीने ही हस्तिनापुर नगर को नया वैभव प्राप्त करा दिया, जिस कारण उस नगर को 'हस्तिनापुर' नाम प्राप्त हुआ।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र (प्रथम) राजा का एक पुत्र।

हस्तिपद, हस्तिपिण्ड एवं हस्तिभद्र—कश्यपकुलोत्पन्न तीन नाग (म. आ. ३१.९; १४; उ. १०१.१३)।

हस्तिमुख-रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

हस्तीन्द्र--स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो कश्यप ऋषि का एक पुत्र था।

हारव—एक राक्षस, जो ब्रह्मा के अश्रुबिन्दुओं से उत्पन्न हुआ था। शिवलिंग से निकली हुई एक ज्योति के कारण, यह भस्म हुआ (स्कंद. ५.२.४८)।

हार-हूण--पश्चिमभारत का एक लोकसमूह, जिसे नकुल ने अपने पश्चिमदिग्विजय में जीता था (म. स. २९.११)।

हारिकर्णि--अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हारिकर्णीपुत्र--एक आचार्य, जो भरद्वाजीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.४.३०)।

हारितक--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार

हारितायन--सासिसाहारितायन नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

हारिद्रव--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो मैत्रायणीय शाखान्तर्गत माना जाता है। निरुक्त में इसके प्रणीत मतों का निर्देश 'हारिद्राविक' नाम से किया गया है (नि. १०.५)।

इसके द्वारा लिखित 'हारिद्राविक ब्राह्मण' नामक ग्रंथ का उद्धरण प्राप्त है, किन्तु वह ग्रंथ मूल स्वरूप में आज अप्राप्य है।

हारिद्रुमत गौतम—एक आचार्य, जो सत्यकाम जाबाल नामक आचार्य का शिष्य था (छां. उ. ४.४.३)।

हारीत—एक अंगिरसकुलोत्पन्न तत्त्वज्ञ, जिसके द्वारा प्रणीत संन्यास मार्ग का तत्त्वज्ञान 'हारीतगीता' नाम से सुविख्यात है। यही 'हारीतगीता' भीष्म ने युधिष्ठिर को कथन की (म. शां. २६९)।

२. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था। शरशय्या पर पडे हुए भीष्म से भी यह मिलने आया था (म. व. २७.२३.)।

३. एक स्मृतिकार, जिसके पुत्र का नाम कमठ था (स्कंद. १.२.५१)। इसके द्वारा विरचित 'लघुहारीत स्मृति' एवं 'वृद्ध हारीत स्मृति' नामक दो स्मृति ग्रंथ आनंदाश्रम स्मृतिसमुच्चय में प्राप्त है।

इसमें से 'लघुहारीत स्मृति' में ११७ श्लोक है, एवं उसमें प्रायश्चित्त का विचार किया गया है।

अन्य स्मृतिग्रंथ—इसके द्वारा विरचित 'वृद्धहारीत स्मृति' के ११ अध्याय, एवं ३५४ श्लोक है, एवं उसमें श्रीविष्णु की उपासना आदि की जानकारी प्राप्त है। इसकी अन्य एक स्मृति व्यंकटेश्वर प्रेस के स्मृतिसंग्रह में प्राप्त है, जिसमें सात अध्याय हो कर चातुर्वर्ण्य के आचारादि का विवेचन वहाँ प्राप्त है।

अभिमत—ब्रह्मचर्य एवं अभक्ष्य के संबंध में इसके मतों के उद्धरण आपस्तंब एवं बौधायन धर्मसूत्र में प्राप्त है (आप. ध. १.१३.१०; १८.२; १९.१२; बौ. ध. २. १.२.२१)। ब्रह्मवादिनी स्त्रियों को उपनयन, एवं वेदाध्ययन का अधिकार मिलना चाहिये, ऐसा इसका अभिमत था (स्मृतिचं. १.२४)। इसके स्मृति में राजधर्म--विषयक भी अनेक अभिमत प्राप्त हैं, जो बहुशः अन्य स्मृतियों से लिए गये हैं।

अन्य ग्रंथ-इसके नाम पर एक शिक्षा ग्रंथ भी प्राप्त है।

४. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार युवनाश्व राजा का, एवं विष्णु के अनुसार मांधातृ राजा का पुत्र था (भा. ९.७.१)। 'आंगिरस हारीत' नामक सुविख्यात ब्राह्मण इसीके ही वंशज माने जाते है।

५. विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

६. एक आचार्य, जो व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था।

७. एक वैखानसवृत्ति ब्राह्मण, जिसने दिलीप राजा को माघस्नान का माहात्म्य कथन किया था। इस संबंध में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए, इसने दिलीप राजा को वसिष्ठ ऋषि से मिलने के लिए कहा था।

८. मौलिस्थान (मुलतान) में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जिसके पुत्र के रूप में स्वयं नृसिंह देवता ने जन्म लिया था (पद्म. उ. १७७)।

९. एक वैयाकरण (तै. प्रा. १४.१८)।

हार्दिक्य—(सो. अंधक.) कृतवर्मन् नामक सुविख्यात यादव राजा का नामांतर (म. द्रो. ९०.८; भा. १०.७५. ६; कृतवर्मन् देखिये)। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसका पुत्र मार्तिकावत नगर की राजगद्दी पर अधिष्ठित हुआ (म. मौ. ८.६७)। यह अश्वपति नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष में शामिल था (म. उ. १९.१७)।

हाल—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक सुविख्यात आंध्रवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार अरिक्तवर्ण राजा का, ब्रह्मांड एवं भागवत के अनुसार अनिष्टकर्मन् राजा का, एवं वायु के अनुसार नेमिकृष्ण राजा का पुत्र था। भागवत में इसे हालेय कहा गया है।

हालाहल—एक असुर, जो शिव एवं विष्णु के द्वारा मारा गया (दे. भा. ७.२९-३०)।

हालिङ्ग—एक आचार्य (श. ब्रा. १०.४.५.१)।

हालेय--आंध्रवंशीय हाल राजा का नामांतर (हाल २. देखिये)।

हासिनी--कुबेरभवन की एक अप्सरा (म. अनु. १९.१५)।

हाहा--एक गंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ११४.४८)। यह कुबेरसभा का एक सदस्य था। यह ज्येष्ठ माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३५)। पाठभेद-'हा हा'।

हिंसा—लोभ एवं विकृती की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी।

हिंस्र--कौशिक ऋषि का एक पुत्र (पितृवर्तिन् देखिये)।

हिडिंब--एक नरमांसभक्षक राक्षसराज, जो किर्मीर राक्षस एवं हिडिंबा राक्षसी का भाई था (म. व. १२. ३२)। यह शाल के वृक्ष पर रहता था, एवं जंगल से जानेवाले पांथस्थों को भक्ष्य बनाता था। एक बार इसके जंगल में पांडव आ कर सो गये। उन्हें देख कर इसने अपनी बहन हिडिंबा को उनके पास भेजा, एवं उनका वध करने के लिए कहा। दैववशात् हिडिंबा राक्षसी भीमसेन पर मोहित हो गयी, एवं इसके द्वारा कहे गये कार्य को भूल बैठी। यह ज्ञान होते ही इसने भीमसेन पर आक्रमण

किया, एवं उससे युद्ध करना चाहा। पश्चात् हुए युद्ध में यह भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. आ. १३९-१४२)।

हिडिंबा अथवा **हिडिंबी**—एक राक्षसी, जो राक्षसराज हिडिंब की बहन, भीमसेन पांडव की पत्नी, एवं घटोत्कच की माता थी। इसे कमलपालिका नामांतर भी प्राप्त था (म. आ १४३.१५६५*; पंक्ति. ४)। आसुरीसिद्धि के कारण, भूत एवं भविष्यकालीन घटनाओं का ज्ञान इसे रहता था (म. आ. परि. १.८७.४)।

युधिष्ठिर की शर्त के अनुसार, केवल एक ही पुत्र उत्पन्न होने के काल तक, यह भीमसेन की पत्नी बनी थी। भीमसेन से घटोत्कच नामक पुत्र उत्पन्न होने पर, यह उससे बिदा हो गयी (म. आ. १३९-१४३; भीमसेन पांडव देखिये)।

हिमवत्—एक पर्वत, जिसे पौराणिक साहित्य में एक देवता माना गया है। इसकी पत्नी का नाम 'पितृकन्या' मैना था, जिससे इसे क्रौञ्च एवं मैनाक नामक दो पुत्र, एवं अपर्णा, एकपर्णा, एवं एकपाटला नामक तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई थी। इसकी तीन कन्याओं का विवाह क्रमशः महादेव, असित एवं जैगीषव्य से हुआ था (ह. वं. १;१८.१५-२४; मत्स्य. १३.८-९)।

हिरण्मय—(स्वा. प्रिय.) हिरण्मयवर्ष का एक राजा, जो आग्नीध्र राजा का पुत्र था (भा. ५.२.१९)। इसकी पत्नी का नाम श्यामा था। मार्कंडेय मे इसे 'हिरण्य' कहा गया है (मार्कं ५०. ३७)।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

हिरण्य—अंगिरस्‌कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. आग्नीध्रपुत्र हिरण्मय राजा का नामांतर।

हिरण्यक—एक दैत्य, जिसने वसिष्ठ के एक यज्ञ पर आक्रमण किया था। इसके आते ही सारे देव भयभीत हो कर छिप गये। किन्तु आगे चल कर वसिष्ठ ने इसका निवारण किया (ब्रह्म. १०३)

हिरण्यकशिपु—एक सुविख्यात असुर, जो दैत्य कुल का आदिपुरुष माना जाता हैं। दैत्यवंश में उत्पन्न हुए तीन इंद्रो में यह एक था; बाकी दो इन्द्रों के नाम प्रह्लाद, एवं बलि थे (वायु. ९७.८७-९१)। इन तीन दैत्य इन्द्रों के पश्चात, इंद्रपद देवताओं के पक्ष में हमेशा के लिए चला गया (नारद. पूर्व. ११)। इस प्रकार हिरण्यकशिपु, प्रह्लाद, एवं बलि ये तीन सर्वश्रेष्ठ सम्राट् कहे जा सकते हैं।

वंशकर दैत्य—कश्यप एवं दिति की 'दैत्य' संतानों में हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष, एवं वज्रांग ये तीन पुत्र, एक सिंहिका नामक कन्या प्रमुख माने जाते हैं। हिरण्याक्ष एवं हिरण्यकशिपु दैत्यों के वंशकर प्रतीत होते हैं, क्यों कि, बहुत सारे दैत्यकुल इन्हीं के पुत्रपौत्रों के द्वारा निर्माण हुए (वायु. ६७.५०; ब्रह्मांड. ३.५ ३)। मगध देश का सुविख्यात राजा जरासंध भी इसी के ही अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५)।

जन्म—इसे हिरण्यकशिपु नाम क्यों प्राप्त हुआ इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। एक बार कश्यप ऋषि ने अश्वमेध यज्ञ किया। उस यज्ञ में प्रमुख ऋत्विजों के लिए सुवर्णासन रक्खे हुए थे। उस समय कश्यपपत्नी दिति गर्भवती थी, एवं दस हजार वर्षों से अपना गर्भ पेट में पाल रही थी। यज्ञ के समय वह यज्ञमंडप में प्रविष्ट हुई, एवं होतृ के लिए रक्खे हुए मुख्य सुवर्णासन पर जा बैठी। पश्चात् उसी सुवर्णासन में वह प्रसूत हुई, एवं उसका नवजात बालक वहीं सुवर्णासन पर अधिष्ठित हुआ। इस प्रकार जन्म से ही सुवर्णासन पर अधिष्ठित होने के कारण, इसे 'हिरण्यकशिपु' नाम प्राप्त हुआ (ब्रह्मांड ३.५.७-१२; वायु. ६७.५९)।

तपश्चर्या—इसके भाई हिरण्याक्ष का विष्णु के द्वारा वध होने के पश्चात यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं इसने अपने भाई के वध का बदला लेने के लिए ब्रह्मा की कठोर आराधना प्रारंभ की। ब्रह्मा को प्रसन्न करने के लिए, इसने 'अधःशिर' रह कर सौ वर्षों तक कड़ी तपश्चर्या की। इस तपस्या के कारण ब्रह्मा अत्यधिक प्रसन्न हुआ, एवं उसने इसे पृथ्वी के किसी भी शत्रु से अवध्यत्व प्रदान किया। अवध्यत्व प्रदान करते समय ब्रह्मा ने इसे वर दिया कि, घर में या बाहर, दिन में या रात में, मनुष्य से अथवा पशु से, शस्त्र से अथवा अस्त्र से, सजीव से या निर्जीव से, शुष्क से या आर्द्र से, यह अवध्य रहेगा।

अत्याचार—ब्रह्मा के इस वर के कारण, इसे अपने बल का बड़ा ही घमंड उत्पन्न हुआ, एवं समस्त देवताओं का शत्रु बन कर यह पृथ्वी में अनेकानेक अत्याचार करने लगा।

प्रह्लादजन्म—यह जब तपस्यार्थ गया था, उस समय इसकी पत्नी कयाधु गर्भवती थी। इसकी अनुपस्थिति में नारद ने उसे विष्णुभक्ति का उपदेश दिया, जो

उसके गर्भ में स्थित बालक ने भी सुन लिया, जिस कारण वह जन्म से पूर्व ही विष्णुभक्त बन गया।

इस प्रकार हिरण्यकशिपु जैसे देवताविरोधी असुर के घर में ही, प्रह्लाद के रूप में एक सर्वश्रेष्ठ विष्णुभक्त का जन्म हुआ। आगे चल कर प्रह्लाद को शिक्षा देने के लिए नियुक्त किये गये गुरु ने भी उसे विष्णुभक्ति के पाठ सिखाये।

हिरण्यकशिपु को यह ज्ञात होते ही, इसने प्रह्लाद की विष्णुभक्ति नष्ट करने के लिए हर तरह के प्रयत्न किये, यही नहीं, प्रह्लाद का काफ़ी छल भी किया। किंतु प्रह्लाद अपने विष्णुभक्ति पर अटल रहा (प्रह्लाद देखिये)।

वध—एक बार यह अपने पुत्र प्रह्लाद की विष्णुभक्ति के संबंध में कटु आलोचना कर रहा था। उस समय पास ही स्थित एक खंबे के ओर दृष्टिक्षेप कर, इसने बडी ही व्यंजना से प्रह्लाद से कहा, 'सारे चराचर में भरा हुआ तुम्हारा विष्णु इस खंबे में भी होना चाहिये। तुम इसे बाहर आने के लिए क्यों नहीं कहते?'

इतना कहते ही उक्त खंबे से श्रीविष्णु का रौद्र नृसिंहावतार प्रकट हुआ; एवं उन्होंने अपने नाखुनों से सायंकाल के समय इसका वध किया। नृसिंह स्वयं अर्धमनुष्य एव अर्धपशु था। इस कारण, ब्रह्मा से प्राप्त अवध्यत्व के वरदान का भंग न करते हुए भी वह इसका वध कर सका।

पश्चात् प्रह्लाद के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, नृसिंह ने इसके सारे पूर्वपापों से इसे मुक्तता प्रदान की (नृसिंह देखिये)।

परिवार—इसकी निम्नलिखित तीन पत्नियाँ थी:— १. जंभकन्या कयाधु (भा. ६.१८.१२); २. उत्तानपादकन्या कल्याणी (पद्म. उ. २३८); ३. कीर्ति (वा.रा. सुं. २० २८)।

अपनी उपर्युक्त पत्नियों से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:—१. प्रह्लाद; २. संह्लाद; ३. ह्लाद; ४. अनुह्लाद ५. शिबि; ६. बाष्कल (भा. ६.१८.१३; विष्णु. १.१७. १४०; ह. वं. १.३; वायु. ६७.७०; म. आ. ५९.१८)।

अपने इन पुत्रों के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित कन्याएँ भी थी:—१. सिंहिका (भा. ६.१८.१३); २. हरिणी अथवा रोहिणी (म. व. २११.१८); ३. भृगुपत्नी दिव्या (वायु. ६५.७३; ६७.६७; ब्रह्मांड. ३.१.७४; भृगु देखिये)।

वंश—इसके पुत्रों से आगेचल कर, विभिन्न दैत्यवंशों का निर्माण हुआ, जिनकी संक्षिप्त जानकारी निम्न प्रकार है:—

(१) **प्रह्लाद शाखा**:—प्रह्लाद—विरोचन—गवेष्ठिन्, कालनेमि, जंभ, बाष्कल, शंभु।

(अ) **विरोचन शाखा**:—विरोचन—बलि, बाण (सहस्रबाहु,) कुंभनाभ, गर्दभाक्ष, कुशि आदि।

(ब) **गवेष्ठिन् शाखा**:—गवेष्ठिन्—शुंभ, निशुंभ, विश्वक्सेन।

(क) **कालनेमि शाखा**:—कालनेमि—ब्रह्मजित्, क्षत्रजित्, देवान्तक, नरान्तक।

(ड) **जंभ शाखा**:—जंभ—शतदुंदुभि, दक्ष, खण्ड।

(इ) **बाष्कल शाखा**:—बाष्कल—विराध, मनु, वृक्षायु, कुशालीमुख।

(फ) **शंभु शाखा**:—शंभु—धनक, असिलोमन्, नाबल, गोमुख, गवाक्ष, गोमत्।

२. **ह्रद शाखा**:—ह्रद—निसुंद, सुंद।

(अ) **निसुंद शाखा**:—निसुंद—मूक, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया।

(ब) **सुंद शाखा**:—सुंद—मारीच, जो राम के द्वारा मारा गया।

(३) **संह्लाद शाखा**:—संह्लाद—निवातकवच।

(४) **अनुह्लाद शाखा**:—अनुह्लाद—वायु (सिनीवाली) —हलाहलगण।

(५) **सिंहिका शाखा**:—सिंहिका—सैंहिकेय गण (ब्रह्मांड. ३.५.३३-४५; वायु. ६७.७०-८१; म. आ. ५९.१७-२०)।

२. एक दानव, जिसने एक अर्बुद वर्षों के लिए सारे देवताओं का ऐश्वर्य शिव की कृपा से प्राप्त किया था। आगे चल कर इसने मेरुपर्वत को भी हिलाया था (म. अनु. १४.७३-७४)।

हिरण्यकेशिन्—एक सुविख्यात आचार्य, जो कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय शाखान्तर्गत हिरण्यकेशिन् नामक शाखा का सूत्रकर्ता माना जाता है। इसके द्वारा प्रणीत शाखा खाण्डवीय शाखा का पोटविभाग माना जाता है।

इसका सही नाम सत्याषाढ था, जिस कारण इसके द्वारा प्रणीत श्रौतसूत्र 'सत्याषाढ श्रौतसूत्र' नाम से प्रसिद्ध है। आद्य कल्प में यह ब्रह्मदत्त नाम से सुविख्यात था (महादेव कृत वैजयंती प्रस्तावना, १२-१४)। स्कंदोपपुराण के अनुसार, इसने सह्याद्रि के पूर्व में स्थित परशुराम क्षेत्र में हरणकाशि नदी के तट पर कड़ी तपस्या की, जिस कारण यह अनेकानेक सूत्रग्रंथों की रचना कर सका।

ग्रंथ--इसके द्वारा विरचित 'सत्याषाढ श्रौतसूत्र' सुविख्यात है, जिसके निम्नलिखित उपभाग समाविष्ट हैं:- १. सत्याषाढ धर्मसूत्र (अ. २६-२७); २. सत्याषाढ गृह्यसूत्र (अ. १९-२०); ३. शुल्बसूत्र (अ. २५)। इस सूत्र पर महादेव दिक्षित के द्वारा 'वैजयंती' नामक भाष्य प्राप्त है। इस सूत्रग्रंथ का अंतिम भाग भरद्वाज सूत्रों से लिया गया है। इस सूत्र का आपस्तंब सूत्रों से भी काफ़ी साम्य प्रतीत होता है।

हिरण्यकेशिन् लोग--इस शाखा के लोग सह्याद्रि के पश्चिम में स्थित चिपलून आदि गाँवों में रहते हैं। इन लोगों का निर्देश पाँचवी शताब्दी इ. स. के कोंगणी राजाओं के ताम्रपट में प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, हिरण्यकेशिन् आचार्य, एवं इसके द्वारा विरचित सूत्रों का रचनाकाल पाँचवी शताब्दी इ. स. पूर्व में कहीं होगा (इन्डि. ॲन्टि. ४.१३६)।

हिरण्यगर्भ--उत्तम मन्वन्तर में उत्पन्न ऊर्ज नामक ऋषि का पिता।

हिरण्यगर्भ प्राजापत्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२१)।

हिरण्यद--इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१६)।

हिरण्यदत् वैद--एक तत्त्वज्ञानी आचार्य (ऐ. ब्रा. ३. ६.३; ऐ. आ. २.१.५)। इसके द्वारा वषट्कार का वर्णन किया है, एवं मानवीय प्राण अग्निरूप होने का अभिमत इसके द्वारा प्रकट किया गया है (ऐ. ब्रा. ३.७)।

हिरण्यधनुस्--एक निषाद राजा, जो एकलव्य का पिता था (म. आ. १२३.२४)। इसे हिरण्यधेनु नामान्तर भी प्राप्त था।

हिरण्यनाभ--हिरण्यनाभ कौथुमि नामक आचार्य का नाम (कौथुमि देखिये)।

हिरण्यनाभ कौसल्य--कोसल देश का एक राजा, जिसके पुरोहित का नाम पर आटनार था (सां. श्रौ. १६.९.१३)। प्रश्नोपनिषद में भी इसका निर्देश प्राप्त है। यह स्वयं सामवेदी श्रुतर्षि, एवं योगाचार्य था। इसके पुत्र का नाम पुष्प था।

पौराणिक साहित्य में--भागवत के अनुसार यह विधृति राजा का, एवं विष्णु तथा वायु के अनुसार यह व्यास की परंपरा में से सुकर्मन् नामक आचार्य का शिष्य था, एवं इसके शिष्य का नाम कृत था। इसने सामवेद की १०५ संहिताएँ बना कर उन्हें अपने विभिन्न शिष्यों में बाँट दी थी (वायु. ८८.२०७)।

यह स्वयं योगाचार्य भी था, एवं योगविषय में पौष्यंजि नामक आचार्य का शिष्य, एवं याज्ञवल्क्य नामक आचार्य का गुरु था।

हिरण्यरेतस्--(स्वा. प्रिय.) कुशद्वीप का एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रियव्रत राजा के पुत्रों में से एक था। इसके निम्नलिखित सात पुत्र थे:--१. वसु; २. वसुदान; ३. दृढरुचि; ४. नाभिगुप्त; ५. सत्यव्रत; ६. विविक्त एवं ७. वामदेव।

अपने इन पुत्रों को इसने अपना कुशद्वीप का राज्य प्रदान किया था, जो आगे चल कर उन्हीं पुत्रों के नाम से सुविख्यात हुआ (भा. ५.१.२५; २०.१४)।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हिरण्यरोमन् अथवा **हिरण्यलोमन्**--रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

२. रुक्मिणी के पिता भीष्मक का नामांतर (म. उ. १५५.१)।

हिरण्यवर्मन् दाशार्ण--एक राजा, जिसने अपनी कन्या का विवाह शिखण्डिन् के साथ किया था। आगे चल कर शिखण्डिन् के क्लीवत्व की जानकारी होते ही, कुंपित हो कर इसने द्रुपद राजा पर आक्रमण किया (म. उ. १९०-१९३; शिखण्डिन् देखिये)।

हिरण्यवाह--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.६)। पाठभेद--'हिरण्यबाहु'।

हिरण्यशृंग--कुबेर का एक दूत।

हिरण्यस्तूप आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऐ. ब्रा. १.३२)। ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में ऋग्वेद के अन्य कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय भी इसे दिया गया है (ऋ. १.३१-३५; ९.४; ६९)। ऐतरेय ब्राह्मण में आंगिरस नाम से इसका स्पष्ट उल्लेख किया गया है (ऐ. ब्रा. ३.२४.११)।

एक व्यक्ति के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद एवं शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (ऋ. १०.१४९.५; श. ब्रा. १.६. ४.२)।

हिरण्यहस्त--वध्रिमती नामक स्त्री का एक पुत्र, जो उसे अश्विनों के द्वारा प्रदान किया गया था (ऋ. १. ११६.१३; ११७.२४; ६.६२.७; १०.३९.७)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे श्याव कहा गया है (ऋ. १०.६५.१२)।

२. एक प्राचीन ऋषि, जिसे मदिराश्व राजा ने अपनी सुमध्यमा नामक कन्या विवाह में दी थी (म. अनु. ५३. २३;१३७.२४; शां. २२६.३५)।

हिरण्याक्ष—एक दैत्य, जो कश्यप एवं दिति का एक पुत्र, तथा हिरण्यकशिपु का भाई था। यह स्वायंभुव मन्वंतर में उत्पन्न हुआ था (लिंग. १.९४)।

विष्णु से युद्ध—यह अत्यधिक पराक्रमी था, एवं देवों को काफ़ी त्रस्त करता था। अन्त में इसके भय से सारे देवगण भाग गये। पश्चात् विष्णु ने इसके साथ युद्ध प्रारंभ किया। इस युद्ध में प्रारंभ से ही विष्णु की विजय होने लगी। यह देख कर यह पृथ्वी ले कर भागने लगा। किन्तु विष्णु ने इसका पीछा किया एवं वराह रूप धारण कर इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

भागवत के अनुसार यह पृथ्वी ले कर समुद्र में भाग गया। वराहरूपी विष्णु ने पानी से पृथ्वी बाहर निकाली। इस समय वराह के पाँव के नीचे दब कर यह मारा गया (भा. ३.२८)।

इसके वध के पश्चात् इसके भाई हिरण्यकशिपु ने इसके वध का बदला देवों से लेना चाहा। किन्तु अन्त में वह भी नृसिंह अवतार के द्वारा मारा गया (हिरण्यकशिपु देखिये)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम रुषाभानु था, जिससें इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थेः-१. उत्कुर (शंबर) २. शकुनि; ३. कालनाभ; ४. महानाभ; ५. विक्रान्त (सुविक्रान्त); ६. भूतसंतापन (मृतसंतापन) (वायु. ६७.६७-६८; ब्रह्मांड. ३.५.३०-३२)। विष्णु एवं भागवत में इसके पुत्रों की नामावलि में झर्जर, धृत, वृक एवं हरिश्मश्रु ये पुत्र अधिक दिये गये हैं (विष्णु. १. २०.३; भा. ७.२.१५)। इसके ये सारे पुत्र-पौत्रादि परिवार के साथ तारकासुरयुद्ध में विनष्ट हुए।

२. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

३. एक असुर, जो वैश्वानरकन्या का पति था (भा. ६.६.३४)। मत्स्य में इसे मयासुरकन्या उपदानवी का पति कहा गया है।

४. विश्वामित्र का एक पुत्र।

५. वसुदेव के श्याम नामक एक भाई का पुत्र। इसकी माता का नाम शरभू अथवा शूरभूमि था (भा. ९. २४.४२)।

हीक—एक पिशाच, जो विपाशा नदी के तट पर निवास करता था। इसके साथी का नाम बही था (म. क. ३०.४४; वाहीक एवं बाह्लीक देखिये)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'बाह्लीक'।

हीन—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सहदेव राजा का पुत्र, एवं जयसेन राजा का पिता था (भा. ९.१७.१७)।

हुंड—एक राक्षस, जो विप्रचित्ति दानव का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम विहुंड था। पार्वती की कन्या अशोकसुंदरी पर इसका प्रेम था। किन्तु विवाह के प्रस्ताव को उसने नकार दिया। पश्चात् इसने स्त्री रूप धारण कर उसका हरण किया, उस समय उसने इसे शाप दिया, 'मेरा भावी पति नहुष तुम्हारा वध करेगा'।

नहुष से होनेवाले संभाव्य वध की आशंका से इसने उसका वध करना चाहा, किन्तु इसके सारे प्रयत्न असफल हुए। अन्त में उसने इसका वध किया (पद्म. भू. ११३-११८)।

हुत—अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. सुख देवों में से एक।

हुतहव्यवह—धर नामक वसु के दो पुत्रों में से एक। दूसरे वसु का नाम द्रविण था (म. आ. ६०.२०)।

हूण—एक लोकसमूह, जो मध्य एशिया से आये हुए विदेशीय जातिसमूह में से एक था। नकुल ने अपने पश्चिम दिग्विजय में इन लोगों को जीता था (म. स. २९. ११)।

हूहू—एक गंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था। यह कुबेर की सभा का, एवं इंद्र की सभा का सदस्य था (म. स. परि. १.३.२; व. ४४.१४)। अर्जुन के जन्मोत्सव में भी यह उपस्थित था (म. आ. ११४. ४८)।

देवल ऋषि के शाप से इसे नक्रयोनि प्राप्त हुई थी। किन्तु आगे चल कर गजेंद्र के साथ इसे भी मुक्ति प्राप्त हुई (भा. ८.४.३; आ. रा. सार. ९)। यह आषाढ माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३६)।

हृत्स्वाशय आल्लकेय माहावृष राजन्-एक आचार्य, जो सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्राचीनयोगी का शिष्य, एवं जनश्रुत काण्ड्विय नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

हृदिक अथवा **हृदीक**--(सो. क्रोष्टु.) एक भोजवंशीय यादव, जो कृतवर्मन् का पिता था (म. आ. ५७.५२५*)। भागवत, विष्णु एवं वायु में इसे स्वयंभोज राजा का पुत्र कहा गया है। कृतवर्मन् के अतिरिक्त इसके देवबाहु, शतधनु एवं देवमीढ नामक अन्य पुत्र भी थे (भा. ९. २४.२६)।

मत्स्य एवं पद्म में इसे विदूरथपुत्र राज्याधिदेव राजा का पुत्र कहा गया (पद्म. सृ. १३)।

हृद्य--इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७. ११)।

हृषीक--सुतार नामक शिवावतार का एक शिष्य।

हृषीकेतु--कपिल ऋषि के कोप से बचे हुए चार सगरपुत्रों में से एक (पद्म. उ. २०)।

हेति अथवा **हेतृ**--एक असुर, जो प्रहेति नामक असुर का भाई था। इसकी पत्नी का नाम कालकन्या भया था, जिससे इसे विद्युत्केश नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ६.१०.२०; वा. रा. उ. ४.१४)। यह वृत्रानुयायी असुरों में से एक था।

इसकी कन्या का नाम सुकेशी, एवं इसके भाई प्रहेति की कन्या का नाम मित्रकेशी था। इन दोनों कन्याओं का विवाह दुर्जय नामक असुर से हुआ था, जिनसे उसे क्रमशः प्रभव एवं सुदर्शन नामक पुत्र उत्पन्न हुए थें (वराह. १०)।

चैत्र माह के साथ भ्रमण करनेवाले असुरों की नामावलि में इसका निर्देश प्राप्त है।

हेम--(सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, उशद्रथ राजा का पुत्र, एवं सुतपस् राजा का पिता था (भा. ९.२३.४)। मत्स्य में इसे 'सेन' कहा गया है।

हेमकंपन--एक राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३१.८५)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) --'सेमपंकज'।

हेमकान्त--वंगाधिपति कुशकेतु राजा का पुत्र। इसने शतर्ची नामक ऋषि का वध करने के कारण इसे ब्रह्महत्त्या का पातक लग गया था। आगे चल कर त्रित नामक ब्राह्मण को पानी पिलाने के कारण, यह ब्रह्महत्त्या के पातक से मुक्त हुआ (स्कंद २.७.१२)।

हेमकुण्डल--निषधपुर का एक व्यापारी, जिसकी कथा 'दानमाहात्म्य' कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. स्व. ३०)।

हेमकूट--वरुणपुत्र एक वानर, जिसकी जानकारी रावण के शार्दूल नामक गुप्तचर ने उसे कथन की थी (वा. रा. यु. ३०)।

हेमगुह--कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.९)।

हेमचंद्र--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विशाल राजा का पुत्र एवं सुचंद्र राजा का पिता था (भा. ९.२.३४)।

हेमधन्वन्--धर्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

हेमधर्म--अविक्षित् राजा की पत्नी वरा का पिता (मार्क. ११९.१६)।

हेमनेत्र--कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०. १६)।

हेमप्रभा--कांचनपुर के वल्लभ नामक ब्राह्मण की स्त्री, जिसकी कथा 'परिवर्तिनी एकादशी' का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. ब्र. १६)।

हेमप्रभावती--त्रेतायुग के श्रीधर नामक ब्राह्मण की स्त्री, जिसकी कथा 'बालव्रत' का माहात्म्य वर्णन करने के लिए पद्म में दी गयी हैं (पद्म. ब्र. २.५)।

हेमालिन्--कुबेर का एक यक्ष, जिसकी कथा 'योगिनी एकादशी' के व्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. ५२)।

२. खर राक्षस का एक अमात्य (वा. रा. अर. २३.३२)।

३. द्रुपद का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १३१.२८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) -'रुक्ममालिन्'।

हेमवर्ण--गरुड का एक पुत्र

२. रोचमान राजा का पुत्र, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था। इसके अश्व कमल के रंग के थे।

हेमवर्मन्--दशार्णाधिपति हिरण्यवर्मन् का नामान्तर।

हेमसदन--एकादश रुद्रों में से एक।

२. मगध देश का राजा, जिसके पुत्र का नाम बुध था (स्कंद. १.२.४०)।

हेमा--एक अप्सरा, जो मयासुर की पत्नी थी। मय के निवासस्थान में से इंद्र के द्वारा भगाया दिये जाने पर, इसने वह स्थान अपनी सखी स्वयंप्रभा को दे दिया (वा. रा. कि ५०-५२, उ. १२. मय १ देखिये)।

हेमांग--(सू. इ.) एक राजा, जिसकी कथा विद्वत् परामर्ष माहात्म्य कथन करने के लिए स्कंद में दी गयी है (स्कंद. १.१६)।

हेमांगद्--(सो. वसु.) बसुदेव एवं रोचना का एक पुत्र

२. (सू. इ.) एक राजा (स्कंद. २.६)।

हेमांगी--द्रविड देश के वीरवर्मन् राजा की पत्नी, जिसकी कथा पद्म में प्रयागक्षेत्र का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गयी है (पद्म. उ. २२१-१२२)।

हेरंब--शिवकांची का एक शिवभक्त, जिसकी कथा शिव एवं विष्णु का विरोध चित्रित करने के लिए पद्म में दी है गयी है (पद्म. उ. २२२)।

हैतनामन आह्नत--एक आचार्य (मै. सं. ३.४.६)।

हैमवत--एक यक्ष, जो मणिवर एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

हैमवती--पार्वती का पैतृक नाम।

२. विश्वामित्र ऋषि की पत्नी (म. उ. ११५.१३)।

३. कृष्ण की एक पत्नी, जो उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके साथ सती हो गयी (म. मौ. ८.७१)।

हैमिनी--विक्रान्त राजा की पत्नी, जिससे इसे चैत्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। जातहरिणी ने इसके पुत्र का हरण किया था, किन्तु आगे चल कर, इसके पति विक्रान्त ने अपने पुत्र को पुनः प्राप्त कराया (मार्के. ७३)।

हैरण्यनाभ--पर आटनार नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.४.४)।

हैहय--क्षत्रियों का एक कुल, जिसका संहार परशुराम ने किया था। इस वंश में उत्पन्न निम्नलिखित राजाओं का निर्देश महाभारत में प्राप्त है:--१. कार्तवीर्य अर्जुन, जो परशुराम के द्वारा मारा गया (म. स. परि. १.२१. ४३०-४९०); २. परपुरंजय, जिसने हैहय वंश की प्रतिष्ठा कतिपय बढ़ायी थी (म. व. १८२.३-५); ३. उदावर्त, जो एक कुलांगार नरेश था (म. उ. ७२.१३); ४. अर्जुन कार्तवीर्य, जो कृतवीर्य राजा का पुत्र था (म. शां. ४९.३०.४३); ५. सुमित्र (म. शां. १२५.९)।

चांद्रसेनीय कायस्थ प्रभु ज्ञाति का आद्य पुरुष चंद्रसेन हैहयवंशीय ही था (कायस्थ धर्मप्रदीप)। किन्तु हैहय वंशावलि में उसका नाम अप्राप्य है।

२. (सू. शर्याति.) शर्याति वंश में उत्पन्न एक राजा, जो हैहय वंश का आद्य संस्थापक माना जाता है। यह वत्स राजा का पुत्र था, एवं इसे वीतहव्य नामान्तर प्राप्त था (म. अनु. ३०.७-८; वीतहव्य देखिये)। आगे चल कर, यह भृगु ऋषि का शिष्य बन कर ब्राह्मण हुआ (म. अनु. ३०.५४-५७)।

होड--एक ऋषि, जिसने बकुलासंगम पर तप किया था (पद्म. उ. १३८)।

होतृ--पारावत देवों में से एक।

होत्रक--(सो. अमा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कांचन राजा का पुत्र, एवं जह्नु राजा का पिता था (भा. ९.१५.३)। वायु में इसे सुहोत्र कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम कांचनप्रभ दिया गया है।

होत्रवाहन--सृंजय नामक राजर्षि का पैतृक नाम।

होम--सुख देवों में से एक।

ह्रदोदर--एक राक्षस, जो स्कंद के द्वारा मारा गया (म. श. ४५.६६)।

ह्रस्वकर्ण--रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६.)।

ह्रस्वरोमन्--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार स्वर्णरोमन् राजा का पुत्र, एवं सीरध्वज एवं कुशध्वज जनक राजाओं का पिता था (भा. ९.१८.१३)। विष्णु में इसे सुवर्णरोमन् राजा का पुत्र कहा गया है।

ह्राद--एक नाग, जो बलराम के परंधाम गमन के समय स्वागत के लिए उपस्थित था (म. मौ. ५.१५)।

२. हिरण्यकशिपु एवं कयाधु का एक पुत्र।

ह्री--ब्रह्मा की सभा में उपस्थित एक देवी, जो स्कंद के अभिषेक के समय उपस्थित थी (म. स. १३२*; श. ४४.१२)। अर्जुन के इंद्रलोक जाते समय, उसकी मंगलकामना के लिए द्रौपदी ने इस देवी का स्मरण किया था (म. व. ३८.१४९*)।

ह्रीनिषेध--एक दैत्यराज, जो एक समय इस पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०. ५०)।

ह्रीमत्--एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३१)।

परिशिष्ट १

जैन ग्रंथों में निर्दिष्ट

श्री वर्धमान महावीर के समकालीन प्रमुख व्यक्ति

अजित केशि कंबलिन्--एक आचार्य, जो वर्धमान महावीर के सात विरोधकों में से एक था। इसका तत्त्वज्ञान 'उच्छेदवाद' नाम से सुविख्यात था। इसका तत्त्वज्ञान 'सर्व नास्ति' इस आद्य तत्त्व पर आधारित था, एवं दान, यज्ञ, पापपुण्य, स्वर्ग, दैवी माहात्म्य ये सारे मिथ्या है, ऐसा इसका अभिमत था। इसके अनुसार मानवीय शरीर, चार मूलद्रव्यों से बना हुआ था, जिसमें मृत्यु के पश्चात् वह विलीन होता है। इसी कारण, मृत्यु के पश्चात् आत्मा को सद्गति या दुर्गति प्राप्त होने का वर्णन यह सरासर कल्पनारम्य एवं झूट मानता था (सूय. १.१.१. ११-१२)।

इंद्रभूति गौतम--महावीर का सर्वप्रथम शिष्य।

किस संकिच्च--आजीवक सांप्रदाय के पूर्वाचार्यो में से एक (गोशाल मंखलीपुत्त देखिये)।

गोशाल मंखलीपुत्त--एक आचार्य, जो आजीवक (नग्न) सांप्रदाय के प्रवर्तकों में से एक था। पाली सूत्रों में इसे 'मंखली गोशालो' कहा गया है। इसके द्वारा प्रणीत तत्त्वज्ञान 'संसार विशुद्धि' नाम से सुविख्यात है। इसके पूर्वाचार्यों में नंद वच्च, किश संकिच्छ ये दो आचार्य प्रमुख थे (मज्झिम. ३६; ७६)।

'संसार विशुद्धि' तत्त्वज्ञान--इसके द्वारा प्रणीत इस तत्त्वज्ञान के अनुसार, हर एक प्राणिमात्र के लिए संसार नित्य एवं अपरिहार्य है, एवं इस संसारचक्र से कोई भी प्राणि मुक्ति नहीं पा सकता।

महाभारतादि ग्रंथों में निर्दिष्ट मंकि नामक आचार्य यही माना जाता है (मंकि देखिये)।

गोष्ठा माहिल--वर्धमान महावीर के प्रतिस्पर्धियों में से एक। वर्धमान के सात पाखंडी प्रतिस्पर्धियों में इसका समावेश किया जाता था।

चन्द्र प्रद्योत--अवंती का एक राजा, जो वैशालि के चेटक राजा की कन्या शिवा का पति था। इसे 'चन्द्रप्रद्योत महासेन' नामांतर भी प्राप्त था। इसकी कन्या का नाम वासवदत्ता था, जो वत्सदेश के उदयन राजा को विवाह में दी गयी थी। कौशांबी के शतानीक राजा के मृगावती नामक पत्नी का यह हरण करना चाहता था। किन्तु वर्धमान महावीर ने इसे इस पापी हेतु से परावृत्त किया। यह स्वयं जैनधर्मीय था, एवं इसने अपनी आठो ही पत्नियों को जैन धर्म की दीक्षा दी थी।

त्रिशला--वर्धमान महावीर की माता, जो लिच्छवी देश के चेटक राजा की बहन थी।

नंद वच्छ--आजीवक सांप्रदायों के पूर्वाचार्यों में से एक (गोशाल मंखलिपुत्त देखिये)।

निगंठ नातपुत्त-जैन धर्मसांप्रदाय के संस्थापक वर्धमान महावीर का नामांतर (महावीर वर्धमान देखिये)।

नेमिनाथ--जैनों का बाइसवाँ तीर्थंकर, जो कृष्ण का चचेरा भाई था। वर्तमानकालीन जैन धर्म के पुनरुत्थान का यह आद्य जनक माना जाता है, जिसकी परंपरा आगे चल कर पार्श्वनाथ एवं वर्धमान महावीर ने चलायी।

शूरसेन देश के शौरिपुर नामक नगरी में इसका जन्म हुआ। बाल्यावस्था में ही यह शौरिपुर का त्याग कर के द्वारका नगरी आ पहुँचा। द्वारका में कृष्ण ने प्रवृत्ति का मार्ग अपनाया, एवं इसने निवृत्ति का। पश्चिम एवं दक्षिण भारत में इसने जैन धर्म की प्रतिष्ठापना की, जहाँ प्राप्त तीर्थंकरों की प्रतिमा में इसकी प्रतिमाएँ सर्वाधिक संख्या में पायी जाती हैं।

काठियावाड में स्थित गिरनार (ऊर्जयन्त) पर्वत में इसका निर्वाण हुआ, जहाँ इसके नाम का तीर्थस्थान आज

भी उपलब्ध है। कई अभ्यासकों के अनुसार, पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट अरिष्टनेमि राजा संभवतः यही होगा।

पकुध काच्चायन—एक आचार्य, जो 'अशाश्वत वाद' नामक सिद्धांत का आद्य जनक माना जाता है। वर्धमान महावीर के सात प्रमुख विरोधकों में से यह एक था। प्रश्नोपनिषद् में निर्दिष्ट ककुद कात्यायन संभवतः यही होगा। श्वेत दिगंबर सांप्रदाय के 'सूयगड' नामक सूत्रग्रंथ में इसका निर्देश प्राप्त है (सूय, ३.१.१५–१६)।

पार्श्वनाथ—जैनों का तेइसवाँ तीर्थंकर, जिसका काल ७५० इ. पू. माना जाता है। जैन धर्म की तात्त्विक विचारप्रणाली निर्माण करने का श्रेय इसे दिया जाता है, जिसका परिवर्धन एवं प्रचार करने का काम आगे चल कर जैनों का चोवीसवाँ तीर्थंकर वर्धमान महावीर एवं उसके शिष्यों ने किया (महावीर वर्धमान देखिये)।

बनारस का राजा अश्वसेन का यह पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम वामा था। यद्यपि यह राजा का पुत्र था, फिर भी इसने अपनी सौ वर्ष की आयु में से सत्तर वर्ष धार्मिक तत्त्वचिंतन में, एवं निर्वाण प्राप्ति के हेतु तपस्या में व्यतीत किये। इसने साधकों के लिए एक चतुःसूत्री युक्त आचरण संहिता का प्रणयन किया था। इस आचरण संहिता का अनुगमन करनेवाले इसके अनेक अनुयायी उत्पन्न हुए, जिनमें महावीर के मातापिता सिद्धार्थ एवं त्रिशला प्रमुख थे। इनके अनुयायियों में मगध देश के लोग प्रमुख थे।

कुशस्थली नगरी के प्रसेनजित् राजा की प्रभावती नामक कन्या से इसका विवाह हुआ था, जिसे इसने कलिंग देश के यवन राजा से छुड़ाया था।

इसकी राजप्रतिमा परस्पर सटे हुए दो नागशिरों से बनी थी, जो इसकी हरएक प्रतिमा एवं इसके द्वारा खोदी गयी हरएक गुफा पर पायी जाती है।

केशी-गौतमसंवाद—इसके द्वारा साधकों के लिए निर्माण किये गये आचारसंहिता में इसके पश्चात् २५० वर्षों के बाद उत्पन्न हुए महावीर ने पर्याप्त परिवर्तन किये, एवं इसके द्वारा विरचित आचरण के बहुतसारे नियम अधिकतर कठोर बनाये। कौन सी सामाजिक परिस्थिति के कारण महावीर को ये परिवर्तन अवश्यक प्रतीत हुए, इसका विवरण करनेवाला एक संवाद 'उत्तराध्ययन सूत्र' में प्राप्त है, जो पार्श्वनाथशिष्य केशिन्, एवं महावीरशिष्य गौतम के बीच हुए संवाद के रूप में वर्णित है।

यह संवाद श्रावस्ती में तिंदुक उद्यान में हुआ था, जिसमें भिक्षुओं के लिए ब्रह्मचर्यपालन की, एवं श्वेतवस्त्रों की आवश्यकता पुनरुच्चारित की गयी थी। इस संवाद में महावीर शिष्य गौतम ने कहा था, 'प्रारंभ में भिक्षु सीधेसाधे एवं विरक्त प्रकृति के थे। आगे चलकर वे अधिक चंचल प्रकृति के हो गये, एवं धर्माचरण की ओर उनकी प्रवृत्ति कम होने लगी। इसी कारण नये नियमों का निर्माण महावीर को करना पड़ा'।

पूरण कस्सप—एक आचार्य, जो महावीर के सात विरोधकों में से एक था। इसका तत्त्वज्ञान 'अक्रियावाद' नाम से सुविख्यात है, जिसके अनुसार पाप एवं पुण्य की सारी कल्पनाएँ असत् एवं कल्पनारम्य मानी गयी थीं। इसके तत्त्वज्ञान के अनुसार, खून चोरी व्यभिचार आदि से मनुष्यप्राणी को पाप नहीं लगता था, एवं गंगास्नान दानधर्म आदि से पुण्यप्राप्ति नहीं होती थी। इस प्रकार, इसका तत्त्वज्ञान चार्वाक के तत्त्वज्ञान से काफी मिलता जुलता प्रतीत होता है (संयुत्त. २.३.१०)।

भद्रबाहु—एक सुविख्यात जैन आचार्य, जो दक्षिण भारत में श्रवण बेलगोल ग्राम में प्रसूत हुए 'श्वेतांबर जैन सांप्रदाय' का आद्य जनक माना जाता है। इसकी जीवन विषयक सारी सामग्री 'भद्रबाहुचरित्र' नामक ग्रंथ में प्राप्त हैं।

बारह वर्षों का अकाल—अवन्ति देश के संप्रति चंद्रगुप्त राजा का यह राजपुरोहित था, एवं इसने उसे जैनधर्म की दीक्षा दी थी। एकबार एक वणिक् के घर यह धर्मोपदेशार्थ गया था, जहाँ उस वणिक् के साठ दिन के एक छोटे शिशु ने इसे 'चले जाओ' कहा। यह दुःश्चिन्ह समझ कर, यह अपने पाँचसौ शिष्यों को साथ लेकर, अवन्ति देश छोड़ कर दक्षिण देश चला गया। पश्चात् अवन्ति देश में लगातार बारह वर्षों तक अकाल उत्पन्न हुआ, जिससे देशांतर के कारण यह एवं इसके शिष्य बच गये।

श्रवण बेलगोल में—श्रवण बेलगोल में पहुँचते ही इसने 'श्वेतांबर जैन' सांप्रदाय की स्थापना की। इसके साथ ही 'संप्रति मौर्य' दक्षिण में आया था, एवं इसकी सेवा करता रहा।

वृद्धकाल आते ही इसने अपना सारा शिष्यपरिवार अपने प्रमुख शिष्य विशाखाचार्य को सौंप दिया, एवं यह अपनी मृत्यु की राह देखने लगा। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसके प्रिय शिष्य संप्रति मौर्य राजा ने

'संलेखना' (प्रायोपवेशन) की। इसका निर्वाणकाल २९७ ई. पू. माना जाता है।

जैन साहित्य में प्राप्त परंपरा के अनुसार, सम्प्रति मौर्य को ही चंद्रगुप्त मौर्य माना गया है। किंतु वह असंभव प्रतीत होता है।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध है.— १. श्रीमंडलप्रकरणवृत्ति (ज्योतिष); २. चतुर्विंशातिप्रबन्ध; ३. दशवैकालिकानिर्युक्ति; ४. आवश्यकसूत्रनियुक्ति; ५. उत्तराध्यायनसूत्रनिर्युक्ति; ६. आचारांगसूत्रनिर्युक्ति; ७. सूत्रकृतांगसूत्रनिर्युक्ति; ८. दशश्रुतस्कंधसूत्र; ९. कल्पसूत्र; १०. व्यवहारसूत्र; ११. सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्र; १२. श्रीभाषितसूत्र।

महावीर वर्धमान—जैन धर्म का अंतिम एवं चोबीसवाँ तीर्थंकर, जो उस धर्म का सर्वश्रेष्ठ संवर्धक माना जाता है। अपने से २५० साल पहले उत्पन्न हुए पार्श्वनाथ नामक तत्त्वज्ञ के धर्मविषयक तत्त्वज्ञान का परिवर्धन कर, महावीर ने अपने धर्मविषयक तत्त्वज्ञान का निर्माण किया। इसीसे आगेचल कर जैनधर्मियों के प्रातःस्मरणीय माने गये तेइस तीर्थंकरों की कल्पना का विकास हुआ, जिसमें पार्श्वनाथ एवं वर्धमान क्रमशः तेईसवाँ एवं चोबीसवाँ तीर्थंकर माने गये हैं।

जैन साहित्य में हर एक तीर्थंकर का विशिष्ट शरीरिक चिन्ह (लांछन) वर्णन किया गया है, जहाँ वर्धमान का लांछन 'सिंह' बताया गया है। इसका एक और भी मंगलचिन्ह प्रचलित है, जो 'वर्धमानक्य' नाम से सुविख्यात है।

विश्व के धार्मिक इतिहास में महावीर एक ऐसी असामान्य विभूति है, जिसने राजाश्रय अथवा किसी भी प्रमुख आधिभौतिक शक्ति का आश्रय न ले कर, केवल अपनी श्रद्धा के बल से जैनधर्म की पुनः-स्थापना की। अपनी सारी आयुष्य एक सामान्य मनुष्य के समान व्यतीत कर, इसने तीर्थंकरों के द्वारा प्रतिपादित आत्मकल्याण का मार्ग शुद्धतम एवं श्रेष्ठतम रूप में अंगीकृत किया, एवं अपने सारे आयुष्य में उसी मार्ग का प्रतिपादन किया।

अपने इसी प्रयत्न के कारण यह जैन धर्म के पच्चीससौ वर्षों के इतिहास में उस धर्म की प्रेरक शक्ति बन कर रह गया। इस धर्म के विद्यमान व्यापक स्वरूप एवं तत्त्वज्ञान का सारा श्रेय इसीको दिया जाता है। इसी कारण इसे 'अर्हत्' (पूज्य,) 'जिन' (जेता,) 'निर्ग्रंथ' (बंधनरहित) एवं 'महावीर' (परम पराक्रमी पुरुष) कहा गया है। जैन वाङ्मय में इसे 'वीर,' 'अतिवीर,' 'सन्मतिवीर' आदि उपाधियाँ भी प्रदान की गयी हैं। इसी 'जिन' के अनुयायी होने के कारण, इस धर्म के अनुयायी आगे चल कर 'जैन' नाम से सुविख्यात हुए।

बुद्ध का समकालीन—गौतम बुद्ध के ज्येष्ठ समवर्ती तत्त्वज्ञ के नाते महावीर का निर्देश 'दीघनिकाय' आदि बौद्ध ग्रंथों में प्राप्त है। मगध देश के अजातशत्रु राजा से मिलने आये छः श्रेष्ठ धार्मिक तत्त्वज्ञों में महावीर एक था, जिसका निर्देश बौद्ध ग्रंथों में 'निगंठ नातपुत्त' नाम से किया गया है। अजातशत्रु राजा से मिलने आये अन्य पाँच धार्मिक तत्वज्ञों के नाम निम्नप्रकार थेः— १. मक्खली गोसार, जो सर्वप्रथम महावीर का ही शिष्य था, किन्तु उसने आगे चलकर आजीवक नामक स्वतंत्र संप्रदाय की स्थापना की; २. **पूरण कस्सप**, जो 'आक्रियावाद' नामक तत्वज्ञान का जनक था; ३. **अजित केशि कंबलिन्**, जो 'उच्छेदवाद' नामक तत्त्वज्ञान का जनक माना जाता है, ४. **पकुध काच्यायन**, जो 'अशाश्वत ज्ञान' नामक तत्त्वज्ञान का जनक माना जाता है, ५. **संजय बेलट्ठीपुत्त**, जिसका तत्त्वज्ञान 'विक्षेपवाद' नाम से प्रसिद्ध है।

जन्म—वृजि नामक संघराज्य में वैशालि नगरी के समीप स्थित कुण्डग्राम में इसका जन्म हुआ। ५९९ ई. पू. इसका जन्मवर्ष माना जाता है। यह ज्ञातृक वंश में उत्पन्न हुआ था, एवं इसके पिता का नाम सिद्धार्थ था, जो 'वृजिगण' में से एक छोटा राजा था। इसकी माता का नाम त्रिशला, एवं जन्मनाम वर्धमान था। आधुनिककालीन बिहार राज्य में मुज़फ्फरपुर जिले में स्थित बसाढ़ ग्राम ही प्राचीन कुण्डग्राम माना जाता है।

इसकी माता त्रिशला वैशालि के लिच्छवी राजा चेटक की बहन थी। इसी कारण पिता की ओर से इसे 'ज्ञातृकपुत्र', 'नातपुत्त', 'काश्यप' आदि पैतृक नाम, एवं माता की ओर से इसे 'लिच्छविक' एवं 'वेसालिय' नाम प्राप्त हुए थे।

समकालीन नृप—वैशालि के चेटक नामक राजा के परिवार की सविस्तृत जानकारी जैन साहित्य में प्राप्त है, जिससे महावीर के समकालीन राजाओं की पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। चेटक राजा के कुल दस पुत्र, एवं सात कन्याएँ थी, जिनमें से ज्येष्ठ पुत्र सिंह अथवा सिंहभद्र वृजिराज्य का ही सेनापति था। चेटक की सात कन्याओं में से चंदना एवं ज्येष्ठा 'ब्रह्मचारिणी' महावीर की

अनुगामिनी थीं। बाकी पाँच कन्याओं का विवाह निम्नलिखित राजाओं से हुआ था :--१. मगधराजा बिंबिसार; २. कौशांबीनरेश शतानीक; ३. दशार्णराज दशरथ; ४. सिंधुसौवीरनरेश उदयन; ५. अवंतीनरेश चण्डप्रद्योत। चेटक राजा के परिवार के ये सारे राजा आगे चल कर महावीर के अनुयायी बन गये।

उपर्युक्त राजाओं के अतिरिक्त निम्नलिखित राजा भी महावीर के समकालीन एवं अनुयायी थेः— १. दधिवाहन(चंपादेश); २. जितशत्रु (कलिंग); ३. प्रसेनजित् (श्रावस्ति); ४. उदितोदय (मथुरा); ५. जीवंधर (हेमांगद); ६. विद्रदाज (पौदन्यपूर); ७. विजयसेन (पलाशपुर); ८. जय (पांचाल); ९. हस्तिनापुरनरेश।

तपस्या—कलिंगनरेश जितशत्रु की कन्या यशोदा के साथ महावीर का विवाह हुआ था। किन्तु आगे चल कर इसके मन में विरक्ति उत्पन्न हुई। तीस वर्ष की आयु में अपने ज्येष्ठ बन्धु की आज्ञा ले कर इसने घर छोड़ दिया (६७०. ई. पू.)। कई अभ्यासकों के अनुसार, यशोदा के साथ इसके विवाह का प्रस्ताव जब हो रहा था, उसी समय अर्थात् विवाह के पूर्व ही इसने अपना घर छोड़ दिया।

पश्चात् बारह वर्षों तक यह अनेकानेक वनों में घूमता एवं तपस्या करता रहा। अन्त में ५४७ इ. पू. में बिहार प्रान्त में जृंभकग्राम में ऋजुकुल्या नदी के किनारे एक शालवृक्ष के नीचे ध्यानावस्था में ही इसे केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। इस प्रकार यह सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, अर्हत् एवं परमात्मन् बन गया। केवलज्ञान प्राप्ति के समय इसकी आयु ४२ वर्ष की थी।

प्रथम समवशरणसभा—केवलज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् यह पंचशैलपुर नामक नगरी के समीप में स्थित विपुलाचल नामक पर्वत पर आ पहुँचा। वहाँ श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन इसने 'प्रथम समवशरण सभा' का आयोजन किया, जहाँ इसने जैनधर्म का तत्त्वज्ञान उपस्थित साधकों को अर्धमागधी लोकभाषा में कथन किया। वर्धमान का यह सर्वप्रथम धर्मप्रवचन गौतम बुद्ध के द्वारा सारनाथ में किये गये 'धर्मचक्रप्रवर्तन' के प्रथम प्रवचन इतना ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस प्रवचन के लिए उपस्थित श्रोताओं में मगध देश का सुविख्यात सम्राट् श्रेणिक बिंबिसार प्रमुख था।

शिष्यशाखा—वर्धमान का तत्वज्ञान इतना प्रभावी साबित हुआ कि, इसके जीवनकाल में ही लगभग पाँच लाख लोगों ने जैन धर्म को स्वीकार किया। वर्धमान का यह शिष्यसमुदाय मुनि, श्रावक, आर्यिका एवं श्राविका इन चार संघों में विभाजित था। इनमें से तापसजीवन का आचरण कर धर्मप्रचार का कार्य करनेवाले धर्मप्रचारक एवं प्रचारिका को 'मुनि' एवं 'आर्यिका' कहा जाता था। गृहस्थधर्म का आचरण कर जैन धर्मतत्त्वों का पालन करनेवाले जैनधर्मानुयायी 'श्रावक' एवं 'श्राविका' कहलाते थे।

जाति, वर्ण, वर्ग, लिंग आदि भेदों के निरपेक्ष रह कर, हरएक व्यक्ति को यह अपने तत्त्वज्ञान का उपदेश प्रदान करता था, एवं कौनसा भी भेदाभेद न मान कर हर व्यक्ति को इसके धर्म में प्रवेश प्राप्त होता था। इस प्रकार इसके श्रावक एवं श्राविका शिष्यपरिवार में भारत के सभी भागों के, सभी वर्णों के, एवं सभी जातियों के स्त्री पुरुष समाविष्ट थे। भारत के बाहर भी गांधार, कपिशा, पारसिक आदि देशों में इसका शिष्यपरिवार उत्पन्न हुआ था। इसके श्राविकासंघ के प्रमुखत्व का कार्य मगधसाम्राज्ञी चेलना पर सौंपा गया था।

धर्मसंगठन—जैन धर्म के प्रचारकार्य का व्रत आजन्म पालन करनेवाले मुनि, एवं आर्यिका कुल नौ गणों (वृंदों) में विभाजित थे, एवं उनके संचालन का कार्य ग्यारह गणधरों पर निर्भर था। वर्धमान का प्रमुख शिष्य गौतम गणेश महावीर उनका सर्वोच्च प्रमुख माना जाता था। वर्धमान के ग्यारह गणधरों के नाम निम्नप्रकार थेः—१. इंद्रभूति गौतम; २. अग्निभूति; ३. वायुभूति; ४. आर्यव्यक्त; ५. सुधर्म; ६. मण्डिकपुत्र; ७. मोयपुत्र; ८. अकंपित; ९. अचल; १०. मैत्रेय; ११. कौण्डिन्यगोत्रीय प्रभास।

धर्मप्रचार का कार्य करनेवाले आर्यिका 'संघ' की अध्यक्षा महासती चंदना थी, जो वैशालि के चेटक राजा की ज्येष्ठ कन्या थी।

पर्यटन—अपने तत्वज्ञान के प्रचारार्थ वर्धमान भारतवर्ष के तत्कालीन सारे जनपदों में, एवं ग्रामों में लग तार तीस वर्षों तक घूमता रहा। इन जनपदों में से मिथिला, मगध, कलिंग, एवं कोशल जनपदों में इसका संचार अधिकतर रहता था। इसी कार्य में यह गांधार, कपिशा जैसे बृहत्भारतीय देशों में भी गया। जैसे पहले ही कहा जा चुका है कि, भारत के बहुतसारे जनपदों के प्रमुख इसके शिष्यों में शामिल थे। यही नहीं, इनमें से अनेक

राजा आगे चल कर जैन मुनि बन कर स्वयं ही धर्मप्रसार का कार्य करने लगे।

निर्वाण—इस प्रकार धर्मसाधना एवं धर्मप्रसार का कार्य अत्यंत यशस्वी प्रकार से निभाने के पश्चात्, मल्ल देश के पावा नगरी में स्थित कमलसरोवरान्तर्गत द्वीप प्रदेश में वर्धमान का निर्वाण हुआ। इसके निर्वाण का दिन कार्तिक कृष्ण अमावास्या; समय प्रातःकाल में सूर्योदय के पूर्व; एवं साल ५२७ इ. पू. (विक्रम. पूर्व. ४७०; शक. पूर्व. ६०५) माना जाता है।

इसके निर्वाण के समय, लिच्छवी राजा चेटक एवं मल्लराजा व्रात्यक्षत्री हस्तिपाल उपस्थित थे। पश्चात् मल्ल एवं लिच्छवी के जनपदों के नौ नौ राजप्रमुखों ने एकत्रित आ कर इसका निर्वाणविधि सुयोग्य रीति से निभाया, एवं उसी रात्रि को जैन धर्म की परंपरा के अनुसार दीपोत्सव भी मनाया। कई अभ्यासकों के अनुसार, भारतवर्ष में दीपावलि का त्यौहार वर्धमान के निर्वाण के समय किये गये दीपोत्सव से ही प्रारंभ हुआ। इसके निर्वाण के साथ साथ 'महावीर निर्वाणसंवत्' का प्रारंभ हुआ, जो 'वीरसंवत्' नाम से जैनधर्मीय लोगों में आज भी प्रचलित है।

आचारसंहिता—महावीर के द्वारा प्रणीत धर्मविषयक तत्त्वज्ञान इसके पंचसूत्रात्मक आचारसंहिता में संग्रहित है, जो इसके २५० साल पहले उत्पन्न हुए पार्श्वनाथ के द्वारा प्रणीत चतुःसूत्रात्मक आचारसंहिता से काफ़ी मिलती जुलती है।

महावीर के द्वारा प्रणीत पंचसूत्रात्मक आचारसंहिता के सूत्र निम्नप्रकार हैः— १. किसी भी जीवित प्राणी अथवा कीटक की हिंसा न करना (अहिंसा); २. किसी भी वस्तु का किसी के दिये बगैर स्वीकार न करना (अयाचित्व); ३. अनृत भाषण न करना (सत्य); ४. आजन्म ब्रह्मचर्यत-व्रत का पालन करना (ब्रह्मचर्य); ५. वस्त्रों के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु का संचय न करना (अपरिग्रह)।

वर्धमान के इस तत्त्वज्ञान में से पहले तीन तत्त्व पार्श्व के तत्त्वों से बिलकुल मिलते जुलते है। अंतिम दो तत्त्व पार्श्व के 'अपरिग्रह' नामक एक ही तत्त्व से लिये गये हैं, फर्क केवल इतना है कि, जहाँ पार्श्व ब्रह्मचर्य को अपरिग्रह में ही समाविष्ट करता है, वहाँ वर्धमान ब्रह्मचर्य को स्वतंत्र तत्त्व बता कर उसे ज्यादा महत्त्व प्रदान करते हैं। पार्श्व एवं वर्धमान के अपरिग्रह की व्याख्या में अन्य एक फर्क है कि, जहाँ पार्श्व वस्त्र का भी संग्रह न कर अच्चेलक (नग्न) रहना पसंद करते है, वहाँ वर्धमान के द्वारा अपने अनुयायियों को श्वेतवस्त्र परिधारण करने की एवं उनका संग्रह करने की संमति दी गयी है।

पार्श्व एवं वर्धमान के इस तत्त्वसाधर्म्य के कारण, इन दोनों आचार्यों के अनुयायियों ने श्रावस्ती में एक महासभा बुला कर इन दोनों सम्प्रदायों को सम्मिलित करने का निर्णय लिया। आगे चल कर, इन दोनों सांप्रदायों के सम्मीलन के द्वारा जैन धर्म का निर्माण हुआ (उत्तराध्ययन सूत्र. २३)।

अहिंसा तत्त्व की महत्ता—दैनंदिन मानवीय जीवन में अहिंसा तत्त्व को सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से जितना सुस्पष्ट, उँचा एवं व्यापक रूप वर्धमान के द्वारा दिया गया है, उतना अन्य किसी भी धर्मद्रष्टा नें नहीं दिया होगा। इस प्रकार अहिंसाचरण को दिया यह सर्वोच्च विकसित रूप वर्धमान के आचारसंहिता का एक प्रमुख वैशिष्ट्य कहा जा सकता है।

वर्धमान का अनेकान्तवाद—आचार संहिता के साथ ही साथ, आत्मज्ञान एवं मुक्ति प्राप्त करने के लिए वर्धमान का एक स्वतंत्र तत्त्वज्ञान भी था, जो 'अनेकान्तवाद' नाम से सुविख्यात है। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार आत्मा को सद्‌गति केवल सदाचरण से ही प्राप्त होती है, जिसका मूल दैनंदिन मानवीय जीवन में अहिंसाचरण ही कहा जा सकता है।

वर्धमान का कहना था कि, इंद्रियोपभोग के आधिक्य से आत्मा मलिन हो जाती है। इसी कारण आत्मा की पवित्रता अबाधित रखने के लिए सर्वोत्कृष्ट मार्ग इंद्रियदमन है, जो केवल सद्विचार एवं सद्धर्म से साध्य हो सकता है।

वर्धमान का क्रियावाद—जैन सूत्रों में कुल ३६३ सांप्रदायों का निर्देश प्राप्त है, जिनमें निम्नलिखित चार प्रमुख थे— १. क्रियावाद; २. अक्रियावाद; ३. अज्ञानवाद; ४. विनयवाद। इनमें से महावीर स्वयं 'क्रियावाद' सांप्रदाय का पुरस्कर्ता था। इस सांप्रदाय के अनुसार, मानवीय आयुष्य का बहुत सारा दुःख मनुष्य के अपने कर्मों के परिणामरूप ही होते है, एवं इस दुःख के बाकी सारे कारण प्रासंगिक होते हैं। मानवीय जीवन के ये दुःख जन्म, मृत्यु एवं पुनर्जन्म के दुश्चक्र से उत्पन्न होते हैं। इस दुःख से छुटकारा पाने के लिए आत्मज्ञान एवं सदाचरण ये ही दो मार्ग उपलब्ध है।

बौद्धधर्म से तुलना—यद्यपि वर्धमान एवं गौतम बुद्ध दोनों भी अनीश्वरवादी एवं वैदिक धर्म के विरोधी थे, फिर इन दोनों के धार्मिक तत्त्वज्ञान में पर्याप्त फर्क है। जहाँ बुद्ध इंद्रियोपभोग के साथ साथ तपःसाधना को भी त्याज्य मान कर इन दोनों के बीच का 'मध्यम मार्ग' प्रतिपादन करते है, वहाँ वर्धमान तप एवं कृच्छ्र को जीवन-सुधार का मुख्य उपाय बताता है। तपःसाधना को पाप-नाशन का सर्वश्रेष्ठ उपाय माननेवाले जैन तत्त्वज्ञान की 'अंगुत्तर' एवं 'टीका निपात' आदि ग्रंथों में व्यंजना की गयी है।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित बारह ग्रंथ उपलब्ध हैं, जो इसके तत्त्वज्ञान का संग्रह कर इसके निर्वाण के पश्चात् ग्रंथनिबद्ध किये गये है। इन सारे ग्रंथों की रचना अर्धमागधी भाषा में की गयी हैः— १. आचारांग, २, सूत्रकृतांग; ३. स्थानांग; ४. समवायांग; ५. भगवती; ६. अंतकृद्दशांग; ७. अनुत्तरोपपातिकदशांग; ८. विपाक; ९. उपासकदशांग; १०. प्रश्नव्याकरण; ११. ज्ञाताधर्मकथा; १२. दृष्टिवाद।

परंपरा—वर्धमान की मृत्यु के पश्चात्, जैन धर्म की परंपरा अबाधित रखने का कार्य इसके शिष्य प्रशिष्यों ने किया। इसके इन शिष्य प्रशिष्यों में निम्नलिखित प्रमुख थेः—

(१) **इंद्रभूति गौतम**—वर्धमान के निर्वाण के पश्चात् यह प्रमुख गणधर बन गया। वर्धमान के धर्मविषयक तत्त्वज्ञान को, एवं उपदेशों को सुव्यस्थित रूप में गठित एवं वर्गीकृत करने का कार्य इसने किया। ५१५ इ. पू. में इसका निर्वाण हुआ।

बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध एवं न्यायसूत्र के अक्षपाद गौतम का यह समकालीन था। किंतु फिर भी इन दोनों व्यक्तियों से यह सर्वथा भिन्न व्यक्ति था।

(२) **अर्हत् केवली सुधर्माचार्य**—यह इंद्रभूति गौतम के पश्चात् जैन धर्म संघ का प्रधान गणधर बन गया। ५०३ इ. पू. में इसका निर्वाण हुआ।

(३) **जंबुस्वामिन्**—यह अर्हत् केवली के पश्चात् जैनधर्म संघ का प्रमुख बन गया। अपने पूर्वायुष्य में यह चम्पा के कोट्याधीश वणिक का पुत्र था। किन्तु आगे चल कर जैन मुनि बन गया। मथुरा नगरी के समीप स्थित चौरासी नामक स्थान पर इसने घोर तपस्या की थी। अन्त में इसी स्थान पर ४६५ इ. पू. में इसका निर्वाण हुआ।

(४) **विष्णुकुमार**; (५) **नंदिमित्र**; (६) **अपराजित**; (७) **गोवर्धन**; (८) **श्रुतकेवलि भद्रबाहु**—ये पाँच आचार्य जंबुस्वामिन् के पश्चात् क्रमशः जैन संघ के आचार्य बन गये। इनमें से अंतिम आचार्य भद्रबाहु का निर्वाण ३६५ इ. पू. में हो गया।

सांप्रदायभेद—भद्रबाहु की मृत्यु के पश्चात् जैनधर्म 'उदीच्य' (श्वेतांबर) एवं 'दाक्षिणात्य' (दिगंबर) इन दो सांप्रदायों में विभाजित हुआ। इ. पू. ३ री शताब्दी में मध्यदेश के द्वादशवर्षीय अकाल के कारण, भद्रबाहु नामक जैन आचार्य अपने सहस्रावधि शिष्यों के साथ मध्यप्रदेश छोड़ कर दक्षिण भारत की ओर निकल पड़े। पश्चात् ये लोग कर्नाटक देश में 'श्रवण बेलगोल' नामक स्थान में आ कर स्थायिक हुए, एवं आगे चल कर 'दाक्षिणात्य' अथवा 'दिगंबर' सांप्रदाय नाम से प्रसिद्ध हुए।

आचार्य स्थूलभद्र के नेतृत्व में बहुत सारे जैन मुनि मध्यदेश में ही रह गये, जो आगे चल कर, 'श्वेतांबर जैन' नाम से प्रसिद्ध हुए।

उपर्युक्त सांप्रदायों की संक्षिप्त जानकारी निम्नप्रकार हैः—

१. **दिगंबर जैन**—आचार्य भद्रबाहु के नेतृत्व में श्रवण-बेलगोल में स्थायिक हुए जैन लोग आगे चल कर दक्षिण भारत के विभिन्न प्रदेशों में जैन धर्म का प्रसार करने लगे। दक्षिण भारत में आने के पश्चात् अपने कठोर नियम, आचारविचार, एवं तात्त्विकता से ये पूर्व जैसे ही अटल रहे। इसी कारण भारत के अन्य सभी सांप्रदायों से ये अधिक सनातनी, एवं तत्त्वनिष्ठुर साबित हुए।

२. **श्वेतांबर जैन**—आचार्य स्थूलभद्र के नेतृत्व के मध्य देश में रहनेवाले जैन श्रवणों को अत्यंत दुर्धर अकाल से सामना देना पड़ा। इसी दुरवस्था के कारण, इनके आचारविचार, शिथिल पड़ गये, एवं इन लोगों की ज्ञान साधना भी क्षीण होती गयी। इन लोगों का केंद्र-स्थान सर्वप्रथम मगध देश के पाटलिपुत्र नगर में था, जिस कारण इन्हें 'मागधी' नामान्तर प्राप्त था। आगे चल कर ये लोग पाटलिपुत्र छोड़ कर उज्जैनी में आ कर रहने लगे। अन्त में ये लोग सौराष्ट्र में बलभीपुर नगर में निवास करने लगे। ये ही लोग पहली शताब्दी के अन्त में श्वेतांबर जैन नाम से सुविख्यात हुए।

(३) **मथुरा निवासी जैन**—उत्तरापथ प्रदेश में जैनों के अनेक उपनिवेश थे, जो आगे चल कर मथुरानगरी

में निवास करने लगे। दिगंबर एवं श्वेतांबर जैनों से ये सर्वथा विभिन्न थे, एवं इन लोगों की आचारपद्धति दिगंबर एवं श्वेतांबर पंथियों की आचारपद्धति के समन्वय से उत्पन्न हुई थी।

संप्रति मौर्य—मगध देश का एक राजा, जो अशोक राजा का पौत्र, एवं कुनाल का पुत्र था। इसे चंद्रगुप्त (द्वितीय) नामांतर भी प्राप्त था। इसका राज्य काल २१६ ई. पू.–२०७ ई. पू. माना जाता है।

यह जैन धर्म का एक श्रेष्ठ पुरस्कर्ता था, एवं बौद्ध धर्म के इतिहास में अशोक का जो महत्त्व है, वहीं महत्त्व इसे जैन धर्म के इतिहास में दिया जाता है। जैन धर्म के प्रचार के लिए इसने अनेकानेक धर्मोपदेशक गांधार कपिशा आदि देशों में भेज दिये थे। यही नहीं इसने अपने सैन्यदल के अनेक योद्धाओं को भिक्षुवेष में धर्म-प्रचारार्थ भेजा था।

दक्षिण भारत में आगमन—एक बार इसके राज्य में लगातार बारह वर्षों तक अकाल उत्पन्न हुआ। इस कारण, अपने गुरु भद्रबहु के साथ यह दक्षिण भारत में स्थित श्रवणबेलगोल नामक नगर में आया। भद्रबाहु के निर्वाण के पश्चात् इसने चंद्रगिरि पर्वत पर प्राणत्याग किया।

इसकी मृत्यु के पश्चात् शालिशुक मगध देश के राज गद्दी पर बैठा। तिब्बती साहित्य में इसके उत्तराधिकारी का नाम वृषसेन दिया गया है, जो संभवतः इसके उस प्रदेश में स्थित राज्य का राजा बन गया होगा।

सिद्धार्थ—वर्धमान महावीर का पिता, जो लिच्छवी-गण में से एक गण का राजा था।

परिशिष्ट २

बौद्ध ग्रंथों में निर्दिष्ट गौतम बुद्ध के समकालीन प्रमुख व्यक्ति

आडार कालाम—गौतम बुद्ध का एक गुरु, जिसने उसे 'अकिंचन्नायतन' नामक ज्ञान का उपदेश प्रदान किया था। किन्तु उस विद्या से समाधान न होने पर बुद्ध अन्यत्र चला गया।

आनंद—गौतम बुद्ध का प्रमुख शिष्य, जो उसका चचेरा भाई था। इसके पिता का नाम अमितोदन था, जो गौतम बुद्ध के पिता शुद्धोदन का छोटा भाई था।

गौतम बुद्ध को आत्मज्ञान होने के पश्चात् बीस वर्षों की कालावधि में नाग श्यामल, नागित, चण्ड, राध, मेघीय आदि अनेक लोग उसके सेवक के नाते काम करते थे। बुद्ध की उत्तर आयु में उसे एक विश्वासु मित्र एवं सेवक की आवश्यकता उत्पन्न हुई, उस समय उसने बाकी सारे लोगों को दूर कर आनंद की इस कार्य के लिए नियुक्ति की। तत्पश्चात् पचीस वर्षों तक यह हर एक प्रकार से बुद्ध की सेवा करता रहा (थेरगाथा. ५.१०३९)।

बुद्ध से संवाद—गौतम बुद्ध ने अनेकानेक धार्मिक विषयों पर संवाद किये थे, जिनमें निम्न लिखित प्रमुख थेः—

१. निरोध (संयुत्त. ३. २४); २. लोक (संयुत्त. ४. ५३) ३. वेदना (संयुत्त. ४. २१९–२२१) ४. भव (अंगुत्तर. १.२२३); ५. समाधि (अंगुत्तर. ५. ७); संघभेद (अंगुत्तर. ५. ७५)।

इसके मित्रों में सारीपुत्त, मौद्गलायन, महाकश्यप, अनुरुद्ध रैवत आदि प्रमुख थे (मज्झिम १.२१२)।

बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् यह दीर्घकाल तक जीवित रहा। धम्मपद के अनुसार मृत्यु के समय इसकी आयु १२२ वर्षों की थी (धम्म. २. ९९)।

आम्रपालि (अम्बपालि)—वैशाली की एक गणिका, जो गौतमबुद्ध की अनन्य उपासिका थी। अपने निर्वाण के पूर्व गौतम बुद्ध कोटिग्राम गया था, जिस समय इसने उसे वैशाली में अपने घर भोजन के लिए आमंत्रित किया था। उसी समय 'आम्रपालिवन' नामक सुविख्यात उपवन एवं बौद्धसंघ के लिए भेंट में दिया था (विनय. १. २३१.२३३; दीघ. २.९५–९८)। इसके द्वारा लिखित कई धार्मिक गीत 'थेरी गाथा' में समाविष्ट हैं (थेरीगाथा २०६–२०७)।

उपालि--बुद्ध का एक प्रमुख शिष्य, जिसे स्वयं बुद्ध के द्वारा 'विनय पिटक' की शिक्षा प्राप्त हुई थी (दीपवंश ४.३.५)।

इसका जन्म कपिलवस्तु के एक नाई-कुटुम्ब में हुआ था। शाक्य देश के अनिरुद्ध आदि राजपुत्रों के साथ यह बुद्ध से मिलने गया, जहाँ बुद्ध ने अन्य सभी व्यक्तियों से पहले इसे 'प्रव्रज्या' प्रदान की, एवं इसे अपना शिष्य बनाया। 'प्रव्रज्या' प्रदान करने के पश्चात् उपस्थित सभी राजकुमारों को बुद्ध ने आज्ञा दी कि, वे इसे वंदन करे। बौद्धधर्मसंघ में सामाजिक प्रतिष्ठा से भी बढ़ कर अधिक महत्त्व व्यक्ति की धर्मविषयक निष्ठा को है, इस तत्त्व का साक्षात्कार कराने के हेतु बुद्ध ने इसके साथ इतने बहुमान से बर्ताव किया।

विनयपिटक का अधिकारी व्यक्ति--स्वयं बुद्ध के द्वारा इसे विनयपिटक का सर्वश्रेष्ठ आचार्य कहा गया था (अंगुत्तर, १.२४)। इस ग्रंथ के अर्थ के संबंध में जहाँ कहीं शंका उपस्थित होती थी, तब इसीका ही मत अंतिम माना जाता था। इस संबंध में भारुकच्छक एवं कुमार कश्यप की कथाओं का निर्देश बौद्ध साहित्य में पुनः पुनः पाया जाता है (विनय. ३.२९)। राजगृह में हुई बौद्ध सभा में विनयपिटक के अधिकारी व्यक्ति के नाते इसने भाग लिया था (धम्मपद. ३.१४५)। गौतमबुद्ध एवं उपालि के दरम्यान हुए 'विनय' संबंधित से संवाद पर आधारित 'उपालि पंचक' नामक एक अध्याय बौद्ध ग्रंथों में प्राप्त है (विनय. ५.१८०-२०६)।

'गौतम बुद्ध'--बुद्धधर्म का सुविख्यात संस्थापक, जो बौद्ध वाङ्मय में निर्दिष्ट पच्चीस बुद्धों में से अंतिम बुद्ध माना जाता हैं। बोध प्राप्त हुए साधक को बौद्ध वाङ्मय में 'बुद्ध' कहा गया है, एवं ऐसी व्यक्ति धर्म के ज्ञान के कारण अन्य मानवीय एवं दैवी व्यक्तियों से श्रेष्ठ माना गया है।

बुद्धों की नामावलि--'दीपवंश' जैसे प्राचीनतर बौद्ध ग्रंथ में बुद्धों की संख्या सात बतायी गयी हैं, एवं उनके नाम निम्न प्रकार दिये गये है :--१. विपश्य; २. शिखिन् ३. वेश्यभु; ४. ककुसंध; ५. कोणागमन; ६. कश्यप; ७. गौतम (दीप. २.५, संयुक्त. २.५)।

'बुद्धवंश' जैसे उत्तरकालीन बौद्ध ग्रंथ में बुद्धों की संख्या पच्चीस बतायी गयी है, जिनमें उपनिर्दिष्ट बुद्धों के अतिरिक्त निम्नलिखित बुद्ध विपश्य से पूर्वकालीन बताये गये हैं :--

१. दीपंकर; २. कौंडन्य; ३. मंगल; ४. सुमन, ५. रेवत; ६. शोभित, ७. अनोमदर्शिन्; ८. पद्म; ९. नारद १०. पद्मुत्तर; ११. सुमेध; १२. सुजात; १३. प्रियदर्शन; १४. अर्थदर्शिन्; १५. धर्मदर्शिन्; १६. सिद्धांत; १७. तिष्य; १८. पुष्य।

जन्म--गौतम के पिता का नाम शुद्धोदन था, जो श्रावस्ती से साठ मील उत्तर में एवं रोहिणी नदी के पश्चिम तट पर स्थित शाक्यों के संघराज्य का प्रमुख था। शाक्यों की राजधानी कपिलवस्तु में थी, जहाँ गौतम का जन्म हुआ था। प्राचीन शाक्य जनपद कोसल देश का ही भाग था, इसी कारण गौतम 'शाक्रीय' एवं 'कोसल' कहलाता था (मज्झिम. २.१२४)।

गौतम की माता का नाम महामाया था, जो रोहिणी नदी के पूरब में स्थित कोलिय देश की राजकन्या थी। आषाढ माह की पौर्णिमा के दिन महामाया गर्भवती हुई, जिस दिन बोधिसत्त्व ने एक हाथी के रूप में उसके गर्भ में प्रवेश किया। दस महीनों के बाद कपिलवस्तु से देवदह नगर नामक अपने मायके जाते समय लुंबिनीवन में वह प्रसूत हुई। वैशाख माह की पौर्णिमा बौद्ध का जन्मदिन मानी गयी है। इसी दिन, इसकी पत्नी राहुलमाता, बोधिवृक्ष, इसका कंथक नामक अश्व, एवं छन्न एवं कालुदाई नामक इसके नौकर पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए। गौतम का जन्मस्थान लुम्बिनी आधुनिक काल में 'रुम्मिनदेई' नाम से सुविख्यात है, जो नेपाल की तराई में बस्ती नामक जिले की सीमापर स्थित है। इसके जन्म के पश्चात् सात दिनों के बाद इसकी माता की मृत्यु हुई। जन्म के पाँचवे दिन इसकी नामकरणविधि सम्पन्न हुई, जिसमें इसका नाम 'सिद्धार्थ' रक्खा गया।

स्वरूपवर्णन--इसका स्वरूपवर्णन बौद्ध साहित्य में प्राप्त है। यह लंबे कद का था। इसकी आँखे नीली, रंग गोरा, कान लटकते हुए, एवं हाथ लंबे थे, जिनकी अंगुलियाँ घुटने तक पहुँचती थी। इसके केश घुंघराले थे, एवं छाती चौड़ी थी।

इसकी आवाज अतिसुंदर एवं मधुर थी, जिसमें उत्कृष्ट वक्ता के लिए आवश्यक प्रवाह, माधुर्य, सुस्पष्टता, तर्कशुद्धता एवं नादमधुरता ये सारे गुण समाविष्ट थे (मज्झिम. १.२६९; १७५)। बौद्ध साहित्य में निर्दिष्ट महापुरुष के बत्तीस लक्षणों से यह युक्त था।

बाल्यकाल एवं तारुण्य--उसकी आयु के पहले उन्तीस वर्ष शाही आराम में व्यतीत हुए। इसके रम्य, सुरम्य,

एवं शुभ नामक तीन राजप्रसाद थे, जहाँ यह वर्ष के तीन ऋतु व्यतीत करता था (अंगुत्तर. १.१४५)। सोलह वर्ष की आयु में सुप्रबुद्ध की कन्या यशोधरा (भद्रकच्छा अथवा बिंबा) से इसका विवाह संपन्न हुआ, जो आगे चलकर राहुलमाता नाम से सुविख्यात हुई। कालोपरांत अपनी इस पत्नी से इसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे अपने आध्यात्मिक जीवन का बंधन मान कर उसका नाम 'राहुल' (बंधन) रख दिया।

विरक्ति--इसकी मनोवृत्ति शुरु से ही चिंतनशील, एवं वैराग्य की ओर झुकी हुयी थी। आगे चल कर एक बूढ़ा, एक रोगी, एवं एक लाश के रूप में इसे आधिभौतिक जीवन की त्रुटियाँ प्रकर्ष से ज्ञात हुईं, एवं लगा कि, क्षुद्र मानवीय जंतु जिसे सुख मान कर उसमें ही लिप्त रहता है, वह केवल क्षणिक ही नहीं, बल्कि समस्त मानवीय दुःखों का मूल है। उसी समय इसने एक शांत एवं प्रसन्नमुख संन्यासिन् को देखा, जिसे देख कर इसका संन्यास जीवन के प्रति झुकाव और भी बढ़ गया।

महाभिनिष्क्रमण--पश्चात् आषाढ माह की पौर्णिमा की रात्रि में इसने समस्त राजवैभव एवं पत्नीपुत्रों को त्याग कर, यह अपने कंथक नामक अश्वपर आरुढ हो कर कपिलावस्तु छोड़ कर चला गया। पश्चात् शाक्य, कोल्य, एवं मल्ल राज्यों को एवं अनुमा नदी को पार कर, यह राजगृह नगर पहुँच गया। इसे गौतम का महाभिनिष्क्रमण कहते है।

तपःसाधना--राजगृह में बिंबिसागर राजा से भेंट करने के उपरान्त यह तपस्या में लग गया। आधिभौतिक गृहस्थधर्म से यह पहले से ही ऊब चुका था। अब यह संन्यास देहदण्ड का आचारण कर तपस्या करने लगा। सर्वप्रथम यह आडार, कालम एवं उद्रक रामपुत्र आदि आचार्यों का शिष्य बना, किन्तु उनकी सूखी तत्त्वचर्चा से ऊब कर यह उरुवेला में स्थित सेनानीग्राम में गया, एवं वहाँ पंचवर्गीय ऋषियों के साथ इसने छः वर्षोंतक कठोर तपस्या की। इस तपस्या के पश्चात् भी इसका मन अशान्त रहा, इस कारण यह हठयोगी तापसी का जीवन छोड़ कर सामान्य जीवन बिताने लगा। इस समय इसे प्रतीत हुआ कि, मानवी शरीर को अत्यधिक त्रस्त करना उतना ही हानिकारक है, जितना उसे अत्यधिक सुख देना है।

पश्चात् यह अकेला ही देहाती स्त्रियों से भिक्षा माँग कर धीरे धीरे स्वाध्य प्राप्त करने लगा। इसी कालमें, सुजाता नामक स्त्री पीने पीपल के वृक्ष के नीचे बैठ हुए इसे वृक्ष-देवता समझ कर लगातार पाँच दिनों तक सुवर्ण पात्र में पायस खिलायी।

परमज्ञानप्राप्ति--वैशाख-पौर्णिमा के दिन नैरंजरा नदी में स्थित सुप्रतीर्थ में इसने स्नान किया, एवं वही स्थित शालवन में सारा दिन व्यतीत किया। पश्चात् श्रोत्रिय के द्वारा दिये गये घांस का आसन बना कर, यह बोधि वृक्ष के पूर्व भाग में बैठ गया। उसी समय, गिरिमेखल नामक हाथी पर आरूढ़ हो कर, मार (मनुष्य की पापी वासनाएँ) ने इस पर आक्रमण किया, एवं अपना चक्रायुध नामक अस्त्र इसपर फेंका। इसने मार को जीत लिया, एवं इसके चित्तशान्ति के सारे विक्षेप नष्ट हुए।

पश्चात् उसी रात्रि में इसे अपने पूर्वजन्मों का, एवं विश्व के उत्पत्ति कारणपरंपरा (प्रतीत्य समुत्पाद) का ज्ञान हुआ, एवं दिव्यचक्षु की प्राप्ति हुई। बाद में उसे वह बोध (ज्ञान) हुआ, जिसकी खोज़ में यह आज तक भटकता फिरता था। उसी दिन इसे ज्ञात हुआ, कि संयमसहित सदाचरण एवं जीवन ही धर्म का सार है, जो इस संसार के सभी यज्ञ, शास्त्रार्थ एवं तपस्या से बढ़ कर हैं।

पश्चात् यह तीन सप्ताहों तक बोधिवृक्ष के पास ही चिंतन करता रहा। इसी समय इसके मन में शंका उत्पन्न हुई कि, अपने को ज्ञात हुआ बोध यह अपने पास ही रक्खें, अथवा उसे सारे संसार को प्रदान करें। उसी समय ब्रह्मा ने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर इसे आदेश दिया कि, 'उत्थान' (सतत उद्योगत रहना) एवं 'अप्रमाद' (कभी ढील न खाना) यही इसका जीवन कर्तव्य है। ब्रह्मा के इस आदेश के अनुसार, इसने स्वयं को प्राप्त हुए बोध का संसार में प्रसार करना प्रारंभ किया।

धर्मचक्रप्रवर्तन--अपने धर्मरूपी चक्र का प्रवर्तन (सतत प्रचार करना) का कार्य इसने सर्व प्रथम सारनाथ (वाराणसी) में प्रारंभ किया, जहा इसने पाँच तापसों के समुदाय के सामने अपना पहला धर्मप्रवचन दिया। इसने कहा, 'संन्यासियों को चाहिये कि, वे दो अन्तों (सीमाओं) का सेवन न करे। इनमें से एक 'अन्त' काम एवं विषय सुख में फँसना है, जो अत्यंत हीन ग्राम्य एवं अनार्य है। दूसरा 'अन्त' शरीर को व्यर्थ कष्ट देना है, जो अनार्य एवं निरर्थक है। इन दोनों अन्तों का त्याग कर 'तथागत' ठीक समझनेवाले (बुद्ध) ने

ध्यम प्रतिपदा ' (मध्यम मार्ग) को स्वीकरणीय माना जो विचारप्रणाली आँखें खोल देनेवाली एवं ज्ञान ा करनेवाली है '।

मध्यम मार्ग का प्रतिपादन करनेवाला बुद्ध का यह श प्रवचन ' धर्मचक्रप्रवर्तन सूत्र ' नाम से सुविख्यात जिस प्रकार राजा लोग चक्रवर्ती बनने के लिए अपने का चक्र चलाते है, वैसे ही इसने धर्म का चक्र र्तित किया। वे चातुर्मास्य के दिन थे, जिसमें संन्यासियों लिए यात्रा निषिद्ध मानी गयी है। इसी कारण चार नों तक यह सारनाथ में ही रहा। इसी काल में ने 'अन्तलखखण सूत्र' नामक अन्य एक प्रवचन किया, इसके शिष्यों में साठ भिक्षु एवं बहुत से उपासक हस्थ अनुयायी) शामिल हो गयें।

बुद्धसंघ की स्थापना--अपने उपर्युक्त भिक्षुओं को ने ' संघ ' (प्रजातंत्र) के रूप में संघटित किया, किसी एक व्यक्ति की हुकूमत न हो कर, संघ की सत्ता चलती थी। चातुर्मास्य समाप्त होते ही इसने पने संघ के भिक्षुओं आज्ञा दी, ' अब तुम जनता के के लिए घूमना प्रारंभ करो। मेरी यही इच्छा है कोई भी दो भिक्षु एक साथ न जाये, किन्तु अलग ान पर जा कर धर्मोपदेश करता रहे '।

'गयाशीर्ष' में---चातुर्मास्य के पश्चात् यह सेनानी- म एवं उरुवेला से होता हुआ गया पहुँच गया। वहाँ आदिन्त परियाय ' नामक सुविख्यात प्रवचन दिया, स कारण इसे अनेकानेक नये शिष्य प्राप्त हुए। नमें तीन काश्यप बन्धु भी थें, जो बड़े विद्वान् कर्मकाण्डी एवं जिनके एक सहस्त्र शिष्य थें। इसका प्रवचन सुन उन्होंनें यज्ञों की सभी सामग्री विरंजना नदी में बहा , एवं वे इसके शिष्य बन कर इसके साथ निकल पडे। श्यप बन्धुओं के इस बर्तन का काफी प्रभाव मगध की नता पर पड़ा।

राजगृह में---पश्चात् यह अपने शिष्यों के साथ ाजगृह के श्रेणिक बिंबिसार राजा के निमंत्रण पर उस गरी में गया। वहाँ राजा ने इसका उचित आदरसत्कार किया, एवं राजगृह में स्थित वेलुवन बुद्धसंघ को भेंट में दिया। इसी नगर में रहनेवाले सारिपुत्त एवं मौद्गलायन नामक दो सुविख्यात ब्राह्मण बुद्ध के अनुयायी बन गये, जो आगे चलकर ' अग्रश्रावक ' (प्रमुख शिष्य) कहलाये जाने लगे (विनय. १-२३)।

इसी काल में बुद्ध के विरोधकों की संख्या भी बढ़ती गयी, जो इसे पाखंडी मान कर अपने वंध्यत्व, आदि आपत्तियों के लिए इसे जिम्मेदार मानने लगे। किन्तु इसने इन आक्षेपों को तर्कशुद्ध एवं सप्रमाण उत्तर दे कर स्वयं को निरपराध साबित किया (विनय १.)

कपिलवस्तु में---इसका यश अब कपिलवस्तु तक पहुँच गया, एवं इसके पिता शुद्धोदन ने इसे खास निमंत्रण दिया। पश्चात् फाल्गुन पौर्णिमा के दिन, यह अपने बीस हज़ार भिक्षुओं के साथ कपिलवस्तु की ओर निकल पड़ा (थेरगाथा ५२७.३६)। कपिलवस्तु में यह न्यग्रोधाराम में रहने लगा, एवं वहीं इसने 'वेशान्तर जातक' का प्रणयन किया। दूसरे दिन इसने अन्य भिक्षुओं के साथ कपिलवस्तु में भिक्षा माँगते हुए भ्रमण किया। पश्चात इसका पिता शुद्धोदन अन्य अन्य भिक्षुओं के साथ इसे अपने महल में ले गया, जहाँ इसकी पत्नी यशोधरा के अतिरिक्त सभी स्त्री पुरुषों ने इसका उपदेश श्रवण किया।

पश्चात् यह सारीपुत्त एवं मौद्गलायन इन दो शिष्यों के साथ यशोधरा के महल में गया, एवं उसे ' चण्डकिन्नर जातक ' सुनाया। इसे देखते ही यशोधरा गिर पड़ी एवं रोने लगी। किन्तु पश्चात् उसने अपने आप को सम्हाला, एवं इसका उपदेश स्वीकार लिया। पश्चात् इसके पुत्र राहुल के द्वारा ' पितृदाय ' की माँग किये जाने पर इसने उसे भी प्रव्रज्या (संन्यास) का दान किया।

यह सुन कर शुद्धोदन को अत्यधिक दुःख हुआ, जिससे द्रवित हो कर इसने यह नियम बनाया कि, अपनी मातापिताओं की संमति के विना किसी भी बालक को भिक्षु न बना दिया जाय।

इसकी इस कपिलवस्तु की भेंट में ८० हजार शाक्य लोग भिक्षु बन गये, जिनमें आनंद एवं उपलि प्रमुख थे। आगे चल कर आनंद इस का ' उपस्थापक ' (स्वीय सहायक) बन गया, एवं उपालि इस के पश्चात् बौद्ध संघ का प्रमुख बन गया।

पुनश्च राजगृह में---एक वर्ष के भ्रमण के पश्चात् यह पुनः एक बार राजगृह में लौट आया, जहाँ श्रावस्ती का करोड़पति सुदत्त अनाथपिंडक इसे निमंत्रण देने आया। इस निमंत्रण का स्वीकार कर यह वैशाली नगरी होता हुआ श्रावस्ती पहुँच गया। वहाँ सुदत्त ने राजकुमार जेत से ' जेतवन ' नामक एक बगीचा खरीद कर, उसे बुद्ध एवं उसके अनुयायियों के निवास के लिए दान में दे

दिया। यह बगीचा खरीदने के लिए सुदत्त ने जेत को उतने ही सिक्के अदा किये, जितने उस बगीचे में बिछाये जा सकते थें।

इसी काल में श्रावस्ती के विशाखा ने इसे 'पूर्वाराम' नामक वन इसे भेंट में दिया। श्रावस्ती के उग्रसेन ने भी इसी समय बौद्धधर्म का स्वीकार किया (धम्मपद, ४.५९)।

शुद्धोदन का निधन—इसे परमज्ञान होने के पश्चात् इसके पिता शुद्धोदन का देहान्त हुआ। इसके पिता की मृत्यु के पश्चात्, इसकी माता महाप्रजापति गौतमी एवं अन्य शाक्य स्त्रियों ने बौद्ध भिक्षुणी बनने की इच्छा प्रकट की। इसने तीन बार उस प्रस्ताव का अस्वीकार किया, किन्तु आगे चल कर आनंद की मध्यस्थता के कारण इसने स्त्रियों को बौद्धधर्म में प्रवेश करने की अनुज्ञा दी।

तत्पश्चात् भिक्षुणी के संघ की अलग स्थापना की गयी, एवं जिस प्रकार वृद्ध भिक्षु 'थेर' (स्थविर) नाम से प्रसिद्ध थे, उसी प्रकार वृद्ध भिक्षुणियाँ 'थेरी' (स्थविरी) कहलायी जाने लगी। इन दो बुद्धसंघों का साहित्य क्रमशः 'थेरगाथा' एवं 'थेरीगाथा' में संग्रहित है।

भ्रमण गाथा—तदुपरांत अपनी आयु का ४५ वर्षों तक का काल इसने भारत के विभिन्न सोलह जनपदों में भ्रमण करने में व्यतीत किया, जिसकी संक्षिप्त जानकारी निम्न प्रकार हैः-- १. छठवें साल में—श्रावस्ती, जहाँ इसने 'यमकपाठिहारिय' नामक अभियानकर्म का दर्शन अपने भिक्षुओं को दिया (धम्मपद. ३.१९९); २. सातवें साल में—मंकुलपर्वत; ३. आठवें साल में--भर्ग (मनोरथ-पूरणी. १.२१७); ४. नौवें साल में--कौशांबी; ५. दसवें साल में—पारिलेयक्कवन; ६. ग्यारहवें साल में-एकनाला ग्राम; ७. बारहवें साल में--वेरांजाग्राम; ८. तेरहवें साल में—चालिकपर्वत; ९. चौदहवें साल में--श्रावस्ती; १०. पद्रहवें साल में--कपिलवस्तु; ११. सोलहवें एवं सत्रहवें साल में—अलावी; १२ अठारहवें एवं उन्नीसवें साल में-चालिकपर्वत; १३. बीसवें साल में—राजगृह।

घटनाक्रम—प्रचलित बौद्ध साहित्य से प्रतीत होता है कि, पच्चीस वर्ष की आयु में इसे परमज्ञान की प्राप्ति हुई। उसके बाद के पच्चीस साल इसने भारत के विभिन्न जनपदों के भ्रमण में व्यतीत किये। इस भ्रमणपर्व के पश्चात् पच्चीस साल तक यह जीवित रहा, किन्तु बौद्धजीवन से संबंधित इस पर्व की अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है।

उपलब्ध सामुग्री से प्रतीत होता है कि, वर्षाकाल के चार महिने यह श्रावस्ती के जेतवन, एवं पूर्वाराम में व्यतीत करता था, एवं बाकी आठ महिने विभिन्न स्थानों में घूमने में व्यतीत करता था।

भ्रमणस्थल--बुद्ध के द्वारा भेंट दिये गये स्थानों में निम्नलिखित प्रमुख थेः-- अग्गालवचेतीय; अनवतप्त सरोवर, अंधकविंद, आम्रपालीवन, अंबयष्टिकावन, अश्वपुर, आपण, उग्रनगर, उत्तरग्राम, उत्तरका, उत्तरकुरु, उरुवेलाकप्प, एकनाल, ओपसाद, कजंगल, किंबिला, कीटगिरि, कुण्डधानवन, केशपुत्र, कोटिग्राम, कौशांबी, खानुमत, गोशिंगशालवन, चंडालकप्प, चंपा, चेतीयगिरि, जीवकंब्रवन, तपोदाराम, दक्षिण गिरि, दण्डकप्प, देवदह, नगरक, नगारविंद, नालंदा, पंकधा, पंचशाला, पाटिकाराम, बेलुव, भद्रावती, भद्रिय, भगनगर, मनसाकेत, मातुला, मिथिला, मोरणिवाप, रम्यकाश्रम, यष्टिवन, विदेह, वेनागपुर, वेलुद्वार, वैशालि, साकेत, श्यामग्राम, शालवाटिक, शाला, शीलावती, सीतावन, सेतव्य, हस्तिग्राम, हिमालय पर्वत।

देवदत्त से विरोध—बुद्ध के महानिर्वाण के पूर्व की एक महत्त्वपूर्ण घटना, इसका देवदत्त से विरोध कही जा सकती है। परिनिर्वाण के आठ साल पहले मगध देश का सुविख्यात सम्राट् एवं बुद्ध का एक एकनिष्ठ उपासक राजा बिंबिसार मृत हुआ। इस सुसंधी का लाभ उठा कर देवदत्त नामक बुद्ध के शिष्य ने बौद्धधर्म का संचालकत्व इससे छीनना चाहा। इसी कार्य में मगध देश के नये सम्राट अजातशत्रु ने देवदत्त की सहायता की। गृध्रकूट पर्वत से एक प्रचंड शीला गिरा कर देवदत्त ने इसका वध करने का प्रयत्न किया। यह प्रयत्न तो असफल हुआ, किन्तु आहत हो कर इसे जीवक नामक वैद्यकशास्त्रज्ञ का औषधोपचार लेना पड़ा।

इसके वध का यह प्रयत्न असफल होने पर, देवदत्त ने अपने पाँच सौ अनुयायियों के साथ एक स्वतंत्र सांप्रदाय स्थापन करना चाहा, जिसका मुख्य केंद्र गयाशीर्ष में था। किन्तु सारीपुत्त एवं मौद्गलायन के प्रयत्नों से देवदत्त का यह प्रयत्न भी असफल हुआ, एवं वह अल्पावधी में ही मृत हुआ।

अंतीमयात्रा—बुद्ध के अंतीमयात्रा का सविस्तृत वर्णन 'महापरिनिर्वाण' एवं 'महासुदर्शन' नामक सूत्र ग्रंथों में प्राप्त है। गृध्रकूट से निकलने के पश्चात यह अंबयष्टिका, नालंदा, पाटलिग्राम, गोतमद्वार, गोतमतीर्थ,

कोटीग्राम आदि ग्रामों से होता हुआ वैशाली नगरी में पहुँच गया। वहाँ लिच्छवी के नगरप्रमुख के निमंत्रण का अस्वीकार कर, बुद्ध ने आम्रपाली गणिका के आमंत्रण का स्वीकार किया। उसी समय आम्रपाली ने वैशालि में स्थित अपना 'आम्रपालीवन' इसे अर्पित किया। पश्चात् यह वैशालि से वेलुवग्राम गया, जहाँ यह बीमार हुआ।

महापरिनिर्वाण--बीमार होते ही इसने आनंद से कहा "मेरा अवतारकार्य समाप्त हो चुका है। जो कुछ भी मुझे कहना था वह मैंने कहा है। अब तुम अपनी ही ज्योति में चलो, धर्म की शरण में चलो'। पश्चात् इसने जन्मचक्र से छुटकारा पाने के लिए एक चतुःसुत्री कथन की, जिसमें पवित्र आचरण, तपःसाधन, ज्ञान-साधना एवं विचारस्वातंत्र्य का समावेश था।

पश्चात् मल्लों के अनेक गाँवों से होता हुआ यह पावा पहुँच गया, वहाँ चुन्द नामक लुहार ने 'सूकरमद्दव' नामक सूकरमाँस से युक्त पदार्थ का भोजन इसे कराया, जिस कारण रक्तातिसार हो कर कुशीनगर के शालवन में इसका महापरिनिर्वाण (बूझना) हुआ। महापरिनिर्वाण के पूर्व अपना अंतीम संदेश कथन करते हुए इसने कहा था, 'संसार की सभी सत्ताओं की अपनी अपनी आयु होती है। अप्रमाद से काम करते रहो, यही 'तथागत' की अंतिम वाणी है'।

महापरिनिर्वाण के समय इसकी आयु अस्सी वर्ष की थी, एवं इसका काल इ. पूर्व ५४४ माना जाता है।

दाहकर्म--कुशीनगर के मल्लों ने इसका दाहकर्म कर, एवं इसकी धातुओं (अस्थियाँ) को भालाधनुषों से घिर कर आठदिनों तक नृत्यगायन किया। पश्चात् इसकी धातु निम्नलिखित राजाओं ने आपस में बाँट लिये:—१. अजातशत्रु (मगध) २. लिच्छवी (वैशालि); ३. शाक्य (कपिलवस्तु); ४. बुलि (अल्लकप्प); ५. कोलिय (रामग्राम); ६. मल्ल (पावा); ७. एक ब्राह्मण (वेठद्वीप)। बुद्ध की रक्षा पिप्पलीवन के मोरिय राजाओं ने ले ली।

पश्चात् बुद्ध की अस्थियों पर विभिन्न स्तूप बनवाये गये। किसी पवित्र अवशेष के उपर यादगार के रूप में वास्तु बनवाने की पद्धति वैदिक लोगों में प्रचालित थी। बौद्ध सांप्रदायी लोगों ने उसका ही अनुकरण कर बुद्ध के अवशेषों पर स्तूपों की रचना की।

तत्त्वज्ञान--बुद्ध का समस्त तत्वज्ञान तात्त्विक एवं नैतिक मार्गों में विभाजित किया जा सकता है। किन्तु सही रूप में, वे दो विभिन्न तत्त्वज्ञान एक ही तत्वज्ञान के दो पहलू कहे जा सकते है। इस तत्वज्ञान में मानवीय जीवन दुःखपूर्ण बताया गया है, एवं उस दुःख को उत्पन्न करनेवाले कारणों को दूर कर उससे छुटकारा पाने का संदेश बुद्ध के द्वारा दिया गया है। मानवीय जीवन की इस दुःखरहित अवस्था को बुद्ध के द्वारा 'निर्वाण' कहा गया है।

बुद्ध के द्वारा प्रणीत 'निर्वाण' की कल्पना परलोक में 'मुक्ति' प्राप्त कराने का आश्वासन देनेवाले वैदिक हिंदुधर्म से सर्वस्वी भिन्न है। मुमुक्षु साधक को इसी आयु में मुक्ति मिल सकती है, एवं उसे प्राप्त करने के लिए चित्तशुद्धि एवं सदाचरण की आवश्यकता है, यह तत्त्व बुद्ध ने ही प्रथम प्रतिपादन किया, एवं इस प्रकार धर्म को 'परलोक' का नही, बल्कि 'इहलोक' का साधन बनाया।

इस निर्वाणप्राप्ति के लिए 'मध्यममार्ग' से चलने का आदेश बुद्ध के द्वारा दिया गया है, एवं देहदण्ड एवं शारीरिक सुखोपभोग इन दोनों आत्यंतिक विचारों का त्याग करने की सलाह बुद्ध के द्वारा ही गयी है। बुद्ध के द्वारा प्रणीत 'मध्यममार्ग' के तत्त्वज्ञान में, निर्वाणप्राप्ति के निम्नलिखित आठ मार्ग बताये गये है:—१. सुयोग्य धार्मिक दृष्टिकोन, जो हिंसक यज्ञयाग, एवं परमेश्वरप्रधान धार्मिक तत्वज्ञान से अलिप्त है; २. सुयोग्य मानसिक निश्चय, जो जातीय, वर्णीय एवं सामाजिक भेदाभेद से अलिप्त है; ३. सुयोग्य संभाषण, जो अनृत, काम, क्रोध, भय आदि से अलिप्त है; ४. सुयोग्य वर्तन, जो हिंसा, चौर्यकर्म एवं कामक्रोधादि विकारों से अलिप्त हैं; ५. सुयोग्य जीवन, जो हिंसा आदि निषिद्ध व्यवसायों से अलिप्त है; ६. सुयोग्य प्रयत्नशीलता, जो व्यक्ति के मानसिक एवं नैतिक उन्नति की दृष्टिकोन से प्रेरित है; ७. सुयोग्य तपस्या, जिसमें निर्वाण के अतिरिक्त अन्य कौनसे भी विचार निषिद्ध माने गये हैं; ८. सुयोग्य जागृति, जिसमें मानवीय शरीर की दुर्बलता की ओ सदैव ध्यान दिया जाता है।

बुद्ध की चतुःसूत्री—बुद्ध के अनुसार, निर्वाणेच्छु साधक के लिए एक चतुःसूत्रीय आचरण संहिता बतायी गयी है, जिसमें मेत्त (सारे विश्व से प्रेम), करुणा, मुदित (सहानुभूतिमय आनंद), उपेख्य (मानसिक शांति) ये चार आचरण प्रमुख कहे गये हैं।

प्रमुख बौद्ध सांप्रदाय—बुद्ध की मृत्यु के पश्चात्, बौद्ध संघ अनेकानेक बौद्ध सांप्रदायों में विभाजित हुआ,

जिनमें निम्नलिखित प्रमुख थेः— १. **स्थविरवादिन्**, जो बौद्ध संघ में सनातनतम सांप्रदाय माना जाता है; २. **महासांघिक**, जो उत्तरकालीन महायान-सांप्रदाय का आद्य प्रवर्तक सांप्रदाय माना जाता है। बौद्ध संघ में सुधार करने के उद्देश्य से यह सांप्रदाय सर्वप्रथम मगध देश में स्थापन हुआ, एवं उसने आगे चल कर काफी उन्नति की।

(१) **स्थविरवादिन्**—इस सांप्रदाय के निम्नलिखित उपविभाग थेः— १. **सर्वास्तिवादिन्** (उत्तरी पश्चिम भारत; प्रमुख पुरस्कर्ता–कनिष्क); २. **हैमवत**, (हिमालय पर्वत); ३. **वात्सिपुत्रीय**, (आवंतिक, अवंतीदेश; प्रमुख-पुरस्कर्त्री—हर्षवर्धनभगिनी राज्यश्री); ४. **धर्मगुप्तिक**, (मध्यएशिया एवं चीन); ५. **महिशासक** (सिलोन);

(२) **महासांधिक सांप्रदाय**—इस सांप्रदाय के निम्नलिखित उपविभाग थे;— १. **गोकुलिक** (कुक्कुलिक); २. एकव्यावहारिक; ३. चैत्यक; ४. बहुश्रुतीय; ५. प्रज्ञप्तिवादिन्; ६. पूर्वशैलिक; ७. अपरशैलिक; ८. राजगिरिक ९. सिद्धार्थिक।

बौद्धधर्म के प्रसारक—इस धर्म के प्रसारकों में अनेक विभिन्न राजा, भिक्षु एवं पाली तथा संस्कृत ग्रंथकार प्रमुख थे जिनकी संक्षिप्त नामावलि नीचे दी गयी हैः—

(१) राजा—बिंबिसार, अजातशत्रु, अशोक, मिनँडर (मिलिंद), कनिष्क, हर्षवर्धन।

(२) भिक्षु—सारीपुत्त, आनंद, मौद्गलायन, आनंद, उपालि।

(३) पाली ग्रंथकार—नागसेन, बुद्धद, बुद्धघोष, धम्मपाद।

(४) संस्कृत ग्रंथकार—अश्वघोष, नागार्जुन, बुद्धपालित, भावविवेक, असंग, वसुबंधु, दिङ्नाग, धर्मकीर्ति।

बौद्धधर्म के प्रमुख तीर्थस्थान—बौद्धसाहित्य में बुद्ध के जीवन से संबंधित निम्नलिखित आठ प्रमुख तीर्थस्थानों (अष्टमहास्थानानि) का निर्देश प्राप्त हैः— १. **लुम्बिनीवन**, जहाँ बुद्ध का जन्म हुआ था; २. **बोधिगया**, जहाँ बुद्ध को परमज्ञान की प्राप्ति हुई थी; ३. **सारनाथ** (इषिपट्टण), जहाँ बुद्ध के द्वारा धर्मचक्रप्रवर्तन का पहला प्रवचन हुआ था; ४. **कुशिनगर**, जहाँ बुद्ध का महापरिनिर्वाण हुआ था; ५. **श्रावस्ती** (कोसलदेश की राजधानी), जहाँ तीर्थिक सांप्रदाय के लोगों को पराजित करने के लिए बुद्ध ने अनेकानेक चमत्कार दिखाये थे; ६. **संकाश्य**, जहाँ अपनी माता मायादेवी को मिलने के लिए बुद्ध कुछ काल तक तुषित स्वर्ग में प्रविष्ट हुआ था; ७. **राजगृह**, (मगधदेश की राजधानी), जहाँ देवदत्त के द्वारा छोडे गये नालगिरि नामक वन्य हाथी को इसने अपने चमत्कार-सामर्थ्य से शांत किया; ८. **वैशालि**, जहाँ कई बानरों ने बुद्ध को कुछ शहद ला कर अर्पण किया था।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे विष्णु का नौवाँ अवतार कहाँ गया है, एवं असुरों का विनाश तथा धर्म की रक्षा करने के लिए इसके अवतीर्ण होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (मत्स्य. ४७.२४७)।

पुराणों में अन्यत्र इसे दैत्य लोगों में अधर्म की प्रवृत्ति निर्माण करनेवाला मायामोह नामक अधम पुरुष कहा गया है (शिव. रुद्र. युद्ध. ४; पद्म. सृ. १३.३६६-३७६)। किंतु पौराणिक साहित्य में प्राप्त बुद्ध का यह सारा वर्णन सांप्रदायिक विद्वेष से प्रेरित हुआ प्रतीत होता है।

जीवक—एक सुविख्यात वैद्यकशास्त्रज्ञ, जो राजगृह के शालावती नामक गणिका का पुत्र था। यह मगध देश के बिंबिसार एवं अजातशत्रु राजाओं का वैद्य था।

पैदा होते ही माता ने इसका परित्याग किया था। तत्पश्चात् बिंबिसार राजा के पुत्र अभय ने इसे पालपोस कर बड़ा किया। इसने तक्षशीला में सात वर्षों तक वैद्यक-शास्त्र का अध्ययन किया, एवं आयुर्वेद शास्त्रांतर्गत 'कौमारभृत्य' शाखा में विशेष निपुणता प्राप्त की। मगध देश लौटने पर यह सुविख्यात वैद्य बना। यह बुद्ध का अनन्य उपासक था, एवं इसने राजगृह के आम्रवन में एक विहार बाँध कर वह बुद्ध को प्रदान किया था (सुमंगल. १.१३३)। बुद्ध ने इसके लिए 'जीवक सुत्त' का उपदेश दिया था। इसीके कहने पर बुद्ध ने अपने भिक्षुओं को टहलने का व्यायाम करने के लिए कहा।

देवदत्त—गौतम बुद्ध का एक शिष्य, जो उसके मामा सुप्रबुद्ध का पुत्र था। इसकी माता का नाम अमिता था।

बुद्ध की परमज्ञान प्राप्ति के पश्चात् उसके जन्मग्राम कपिलवस्तु में से जो कई शाक्य लोग बौद्ध बने, उनमें यह प्रमुख था। बौद्ध होने के पश्चात् कुछ काल तक बौद्धसंघ में इसका बड़ा सम्मान था। अपने बारह श्रेष्ठ शिष्यों में गौतमबुद्ध ने इसका निर्देश किया था (संयुत्तनिकाय. १८३)।

बुद्ध के परिनिर्वाण के आठ वर्ष पहले, इसके मन में इच्छा उत्पन्न हुई कि, गौतमबुद्ध को हटा कर यह बौद्ध संघ का प्रमुख बने। इस हेतु मगध देश के सम्राट अजातशत्रु की सहायता इसने प्राप्त किया, एवं उसकी

सहायता से बुद्ध का वध करने के दो तीन प्रयत्न भी किये। वे प्रयत्न असफल होने पर इसने बौद्ध संघ में विभेद निर्माण करने का भी प्रयत्न किया। इस प्रयत्न में असफलता प्राप्त होने के कारण, अत्यंत निराश अवस्था में जेतवन में इसकी मृत्यु हुई (विनय. ४.६६; गौतम बुद्ध देखिये)।

प्रसेनजित्—कोशल देश का एक सुविख्यात राजा, जो गौतम बुद्ध का परम मित्र एवं शिष्य था। यह महाकोशल राजा का पुत्र था, एवं इसकी शिक्षा तक्षशिला में हुई थी, जिस समय मल्लराजकुमार बंधुल एवं लिच्छवी राजकुमार महालि इसके सहाध्यायी थे। शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् अपने पिता के द्वारा यह कोशल देश का राजा बनाया गया। राजा होने के पश्चात् अल्पावधि में ही इसका बुद्ध से परिचय हुआ, एवं यह बौद्धधर्म का निःसीम उपासक बना था।

इसकी बहन कोसलादेवी का विवाह मगध सम्राट् बिंबिसार से हुआ था। आगे चल कर, बिंबिसार के पुत्र अजातशत्रु ने अपने पिता का वध किया, एवं वह स्वयं मगध देश का राजा बन गया। प्रसेनजित् की बहन कोसलादेवी पतिनिधन के दुख से मृत हुई। तत्पश्चात् इसने अजातशत्रु पर आक्रमण कर उसे कैदी बनाया। पश्चात् इसने उससे संधि की, एवं अपने वजिरा नामक बहन उसे विवाह में दे दी (जातक. २. २३७)।

बिंबिसार श्रेणिय शिशुनाग—मगध देश का एक सुविख्यात सम्राट्, जो गौतम बुद्ध एवं वर्धमान महावीर के अनन्य उपासकों में से एक था। इसे 'श्रेण्य' एमं 'हर्यणक' नामांतर भी प्राप्त थे। इसका राज्यकाल ५२८ इ. पू. —५०० इ. पू. माना जाता है।

इसके पिता का नाम भट्टिय था, जो कुमारसेन राजा का सेनापति था। भट्टिय ने तालजंघ राजा के द्वारा कुमारसेन का वध करवा कर, इसे मगध देश के राजगद्दी पर बैठाया। राज्य पर आते ही इसने अंगराज ब्रह्मदत्त पर आक्रमण कर, अंगदेश का राज्य मगध राज्य में शामिल किया। पश्चात् लिच्छवी राजकुमारी चेल्लना एवं कोशलराजकुमारी से विवाह कर इसने कोशल एवं वृजि देशों से मैत्री संपादन की। महावग्ग के अनुसार, इसके राज्य का विस्तार तीन सौ योजन था, एवं उसमें अस्सी हज़ार ग्राम थे।

इसके पूर्वकाल में मगध देश की राजधानी गिरिव्रज नगरी में थी। इसने उसे बदल कर 'राजगृह' नामक नयी राजधानी बसायी। इस नगर की रचना महागोविंद नामक स्थापत्यविशारद के द्वारा की गयी थी।

बौद्ध साहित्य में—बौद्ध साहित्य के अनुसार, बिंबिसार एवं गौतम बुद्ध शुरू से ही अत्यंत परम मित्र थे, एवं सारनाथ में किये गये 'धर्मचक्रप्रवर्तन' के प्रवचन के पश्चात् गौतम बुद्ध सर्वप्रथम इससे ही मिलने आया था। तत्पश्चात् अपने परिवार के ग्यारह लोगों के साथ यह बौद्ध बन गया। अपने सारे जीवनकाल में यह बौद्धधर्म की सहायता करता रहा (विनय. १.३५)।

धार्मिक दृष्टिकोण—बौद्ध एवं जैन साहित्य में, बिंबिसार के द्वारा बौद्ध एवं जैन धर्मों को स्वीकार किये जाने के निर्देश प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में भी इसके द्वारा अनेक ब्राह्मणों की परामर्ष लेने का उल्लेख किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि, यह किसी भी एक धर्म को स्वीकार न कर, तत्कालीन भारतीय परंपरा के अनुसार सभी धर्मों का एवं धर्मप्रचारकों की समान रूप से परामर्श लेता था। इसके काल में बौद्धधर्म संघ विशेष क्रियाशील एवं संगठित था, जिस कारण जैन एवं पौराणिक साहित्य की अपेक्षा बौद्ध साहित्य में इसका निर्देश एवं कथाएँ विशेषरूप से पायी जाती हैं।

अजातशत्रु, उदयन, महापद्म नंद, चंद्रगुप्त मौर्य आदि बौद्धकालीन सम्राट् जैन, हिन्दु एवं बौद्ध धर्म का समानरूप से आदर करते थे, जिससे प्रतीत होता है कि तत्कालीन राजा किसी एक धर्म को स्वीकार न कर सभी धर्मों को आश्रय प्रदान करते थे।

मृत्यु—बिंबिसार का अन्त अत्यंत दुःखपूर्ण हुआ। इसके पुत्र अजातशत्रु को बुद्ध के एक शिष्य देवदत्त ने अपनी सिद्धि के प्रभाव से मोहित किया। पश्चात् देवदत्त ने अजातशत्रु को अपने पिता बिंबिसार का वध करने की मंत्रणा दी। किन्तु यह प्रयत्न असफल हुआ, एवं उस प्रयत्न में अजातशत्रु देवदत्त के साथ पकड़ा गया। पश्चात् इसने अजातशत्रु को क्षमा कर उसे मगधदेश का राज्य प्रदान किया, एवं यह स्वयं राज्यनिवृत्त हुआ।

राज्यसत्ता प्राप्त होते ही अजातशत्रु ने इसे कैद कर लिया, एवं इसे भूखा प्यासा रख कर इस पर अनन्वित-अत्याचार करना प्रारंभ किया। इसका कोठरी में घूमना फिरना बंद करने के लिए नाई के द्वारा उसके पैरों में व्रण उत्पन्न कराये, एवं उसमें नमक एवं मद्यार्क भरवाया। पश्चात् अजातशत्रु ने कोयले के द्वारा इसके पाँव जला दिये। उसी क्लेश में इसकी मृत्यु हो गयी।

समकालीन राजा—इसके समकालीन राजाओं में निम्नलिखित प्रमुख थेः—१. कोसलराज **प्रसेनजित्**, जो इसका सब से बड़ा मित्र था, एवं जिसके कोसलादेवी नामक बहन से इसने विवाह किया था; २. तक्षशिला का राजा **पुष्कलाति** ३. उज्जैनी का राजा **चंद्र प्रद्योत**, जिसकी ऋग्णपरिचर्या के लिए इसने अपना राजवैद्य जीवक उज्जैनी नगरी में भेजा था; ४. रोरुक देश का राजा **रुद्रायण**।

पत्नियाँ—इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थी :—१. **कोसलादेवी**, जो कोसल देश के महाकोशल राजा की कन्या, एवं प्रसेनजित् राजा की बहन थी। इसके विवाह के समय महाकोशल राजा ने बिंबिसार राजा को काशीनगरी दहेज के रूप प्रदान की थी; २. **क्षेमा**; ३. **पद्मावती**, जो उज्जैनी नगरी की गणिका थी।

परिवार—इसके निम्नलिखित पाँच पुत्र थेः—१. अजातशत्रु; २. विमल; ३. दर्शक; ४, अभय; ५. शीलवन्त। इसकी मृत्यु के बाद, अजातशत्रु मगध देश का राजा बन गया।

वैशालि के आम्रपालि नामक गणिका से इसे द्वीमल कोंडन्न नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इनके अतिरिक्त इसके सीसव, जयसेन नामक दो पुत्र, एवं चंडी नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी।

महामौद्गलायन (महामोग्गलान)—गौतम बुद्ध के दो प्रमुख शिष्यों में से एक। इसका जन्म राजगृह के समीप कोलितग्राम में हुआ था, जिस कारण इसे 'कोलित' नाम प्राप्त हुआ था। यह जन्म से ब्राह्मण था, एवं इसकी माता का नाम मौद्गलायनी (मोग्गलानी) था। गौतमबुद्ध का अन्य एक शिष्य सारीपुत्त इसके ही ग्राम का रहनेवाला था, एवं इसका परम मित्र था।

इसका पिता कोलितग्राम का ग्रामप्रमुख था, एवं इसी कारण अत्यंत श्रीमान् था। किन्तु बाल्यकाल से ही अत्यंत विरक्त होने के कारण, इसने एवं सारीपुत्त ने संन्यास लेने का निश्चय किया, एवं ये दोनों संजय नामक ऋषि के शिष्य बन गये। किन्तु मनःशांति प्राप्त न होने पर ये दोनों जंबुद्वीप में आदर्श गुरु की खोज़ में घूमते रहे। अंत में राजगृह में स्थित वेलुवन में इनकी गौतम बुद्ध से भेंट हुई। पश्चात् ये उसके शिष्य बन गये, एवं बुद्ध ने इन दोनों को अपने प्रमुख शिष्य के नाते नियुक्त किया।

बुद्ध के शिष्यों में यह अपने सिद्धि (इद्धि) के कारण, एवं सारीपुत्त अपने संभाषणकौशल्य के कारण विशेष सुविख्यात थे। कालशिला नामक ग्राम में निर्ग्रंथ नामक लोगों के द्वारा यह मारा गया। इसकी मृत्यु सारीपुत्त के मृत्यु से दो हप्ते बाद हुई (सारथ्थ. ३.१८१)।

माया अथवा **महामाया**—गौतम बुद्ध की माता, जो देवदहग्राम के अंजन नामक शाक्य राजा की कन्या थी। इसकी माता का नाम यशोधरा था। इसके दण्डपाणि एवं सुप्रबुद्ध नामक दो भाई, एवं महाप्रजापति नामक बहन थी। महाप्रजापति का विवाह भी शुध्दोदन राजा से हुआ था।

यह अत्यंत सात्त्विक प्रवृत्ति की थी, एवं मद्यमांसादि का कभी भी सेवन न करती थी। इस-प्रकार बुद्ध जैसे महान् धर्मप्रवर्तक की माता होने के लिए सारे आवश्यक गुण इसके पास थे।

बुद्ध के जन्म के समय इसकी आयु ४०-५० वर्षों की थी (संमोह. २७८)। कपिलवस्तु के समीप ही स्थित लुबिनीवन में इसके पुत्र गौतम बुद्ध का जन्म हुआ। गौतम बुद्ध के जन्म के पश्चात् सात दिनों के बाद इसकी मृत्यु हुई।

यशोधरा—गौतमबुद्ध की पत्नी, जो राहुल की माता थी। इसे भद्रकच्छा, बिंबादेवी, बिंबासुंदरी, सुभद्रका एवं राहुलमाता आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। कई अभ्यासकों के अनुसार, इसका सही नाम बिंबा था, एवं इसके बाकी सारे नाम उपाधिस्वरूप थे।

इसका एवं गौतम बुद्ध का जन्म दिन एक ही था। सोलह साल की आयु में इसका गौतम बुद्ध से विवाह हुआ था। गौतम बुद्ध के द्वारा बौद्ध धर्म की स्थापना किये जाने के पश्चात्, इसने भी बौद्धधर्म की दीक्षा ली (गौतम बुद्ध देखिये)।

राहुल—गौतम बुद्ध का इकलौता पुत्र। इसका जन्म उसी दिन हुआ था, जिस दिन गौतम बुद्ध को सर्वप्रथम बाह्य विश्व का निरीक्षण करने का अवसर प्राप्त हुआ। आगे चल कर इसने अपने पिता से दाय के रूप में बौद्धधर्म की दीक्षा देने की प्रार्थना की थी। इस प्रार्थना के अनुसार, बुद्ध ने इसे दीक्षा दी, एवं इसे कई महत्त्वपूर्ण सूत्रों का उपदेश प्रदान किया। इसकी सात वर्ष की आयु में बुद्ध ने इसे 'अंबयष्टिका राहुलोवादसूत्र' का उपदेश दिया, एवं कभी भी अनृत भाषण न करने के लिए कहा। बुद्ध ने इसे 'महाराहुलोवादसूत्र' का उपदेश दिया था।

इसकी मृत्यु तावतिंश नामक स्थान में हुई, जिस समय गौतम बुद्ध एवं सारीपुत्त उपस्थित थे (दीघ. २. ५४९)।

सारिपुत्र उपतिश्य (सारिपुत्त)-गौतम बुद्ध का एक प्रमुख शिष्य। यह उपतिश्य ग्राम का रहनेवाला था, जिस कारण इसे यह उपाधि प्राप्त हुई थी। यह ब्राह्मणकुल में उत्पन्न हुआ था, एवं इसके मातापितरों के नाम क्रमशः रूपसारि एवं वगन्त थे। इसकी माता के नाम के कारण ही इसे सारीपुत्त नाम प्राप्त हुआ था। संस्कृत साहित्य में इसका निर्देश 'शालिपुत्र,' 'शारिसुत' एवं 'शारद्वतीपुत्र' नाम से भी प्राप्त हैं। इसके चण्ड, उपसेन एवं रेवत नामक तीन भाई थे, जो सारे बौद्ध धर्म के उपासक थे।

बुद्ध का शिष्य होने के पहले इसने संजय नामक गुरु के पास विद्या प्राप्त की थी। गौतम बुद्ध ने इसे राजगृह में 'वेदान्तपरिग्रहसूत्र' का उपदेश दिया था, एवं यह अर्हत बन गया। पश्चात् यह बुद्ध का सर्वश्रेष्ठ शिष्य बन गया, एवं स्वयं बुद्ध ने इसके ज्ञान एवं साधना के संबंध में प्रशंसा की थी (अंगुत्तर. १.२३)। इसी कारण इसे 'धम्मसेनापति' उपाधि प्राप्त हुई।

बौद्धधर्म संघ का व्यवस्थापन का कार्य इस पर ही निर्भर था। इस प्रकार देवदत्त जब स्वतंत्र धर्मसांप्रदाय की स्थापना करनेवाला था, उस समय मध्यस्थता के लिए बुद्ध ने इसे भेजा था।

इसकी मृत्यु बुद्ध के निर्वाण के पूर्व ही नालग्रामक नामक गाँव में हुई थी। इसकी मृत्यु से बुद्ध को अत्यधिक दुःख हुआ, किंतु मृत्यु की नियता ध्यान में ला कर बुद्ध ने अपना मन काबू में लाया।

सुदत्त—श्रावस्ति का सुविख्यात वणिक्, जो गौतम बुद्ध के निष्ठावन्त शिष्यों में से एक था। बौद्धधर्म की दीक्षा लेने के पश्चात् इसे अनाथपिंडक नाम प्राप्त हुआ था। इसने गौतम बुद्ध को अत्यंत सम्मान के साथ श्रावस्ति नगरी में बुलाया, एवं श्रावस्ति के राजकुमार जेत से जेतवन नामक उपवन खरीद कर उसे बौद्ध को धर्मसंघकार्य के लिए प्रदान किया (जातक. १.९२; गौतम बुद्ध देखिये)।

परिशिष्ट ३

सिकंदर के आक्रमणकालीन उत्तर पश्चिम भारतीय लोकसमूह एवं गणराज्य

अभिसार—एक गणराज्य, जो वितस्ता एवं असिक्री नदियों के बीच में हिमालय की उपत्यका में बसा हुआ था। आधुनिक कश्मीर के दक्षिण हिमालय के निचले पहाडों के राजौरी, भिम्भर एवं पुंच प्रदेश में यह देश प्राचीन काल में बसा हुआ था। यह देश प्राचीन केकय देश के उत्तर में स्थित था, एवं यहाँ का राजा केकयराज पोरस का मित्र था। सिकंदर के साथ पोरस के द्वारा किये गये युद्ध में, यह पोरस की सहायता करना चाहता था। किन्तु इसकी सहायता के पूर्व ही सिकंदर ने पोरस राजा को परास्त किया (सिकंदर देखिये)।

अंबष्ठ (**संबष्टाई**)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में सिंधु तथा चिनाब नदियों के संगम के समीप स्थित तीन छोटे गणराज्यों में से एक था। अन्य दो जनपदों के नाम क्षुद्र एवं वसाति थे। अपने देश लौट जाते समय, सिकंदर ने इन लोगों को परास्त किया था।

आग्रेय (अगलस्सी, अगिरि, अगेसिनेई)—दक्षिण पंजाब का एक जनपद, जो शिबि जनपद के पूर्व भाग में स्थित था। यह देश आधुनिक झंग-मघियाना प्रदेश में बसा हुआ था। अपने देश वापस जाते समय शिबि जनपद के पश्चात् सिकंदर ने इन लोगों के साथ युद्ध किया था।

इस आग्रेय गण का प्रवर्तक अग्रसेन था, एवं इनकी प्रधान नगरी का नाम ही अग्रोदक था, जो सतलज नदी के पूर्वदक्षिण में बसी हुई थी। सिकंदर के समय यह गण अत्यंत शक्तिशाली था, एवं ग्रीक लेखकों के अनुसार इनकी जिस सेना ने सिकंदर के साथ युद्ध किया था,

उसमें चालिस हज़ार पदाति, एवं तीन हज़ार अश्वारोही सैनिक थे।

इन लोगों को जीत कर सिकंदर ने मालव गण के लोगों को जीता था, जिससे प्रतीत होता है कि, ये दोनों गण एक दूसरे के पड़ोस में थे। महाभारत के कर्णदिग्विजय में भी इन दोनों गणों का एकत्र निर्देश प्राप्त है (म. व. परि. १.२४.६७)।

आश्वकायन (अस्सकेन, अस्सकेनाई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में गौरी एवं सुवास्तु नदियों की घाटी में स्थित था। ये लोग एवं इनके समीप ही स्थित 'अस्पस' ये दोनों मिल कर आधुनिक अफगाण लोग बने थे। इन लोगों की राजधानी मस्सग नगरी में थी, जो दुर्ग के समान बनी हुई थी। उस नगरी की रक्षा का काम वाहीक देश से लाये गये सात हजार 'भृत' सैनिकों पर सौंपा गया था। सिकंदर ने भृत सैनिकों का विश्वासघात से वध किया, एवं इस देश को अपने आधीन कर लिया (पा. सू. नडादि. ७५)।

आश्वायन (अस्पस आस्पिसिओई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में अलिशांग एवं कुनार नदियों की घाटी में निवास करते थे। भारतवर्ष पर आक्रमण करने के पूर्व सिकंदर ने इन लोगों को जीता था (पा. सू. ४.१.११०)।

यह गणराज्य हस्तिनायन (अस्तकेनोई) लोकसमूह के समीप बसा हुआ था (पा. सू. ६.४.१७४)।

कठ (कठिओई)—एक गणराज्य, जो पंजाब में इरावती नदी के पूर्वभाग में बसा हुआ था। आधुनिक अमृतसर (तरनतारन) प्रदेश में संभवतः इस गणराज्य के लोगों का निवास था। इन लोगों की राजधानी सांगल नगरी में थी। पाणिनि के अष्टाध्यायी में वाहीक देश की राजधानी के नाते से सांकल नामक ग्राम का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः यही होगा (पा. सू. ४.२.७५)।

कठोपनिषद् का निर्माण संभवतः इसी जाति के तत्त्वचिंतकों के द्वारा हुआ था। ग्रीक लेखकों के अनुसार इन लोगों में यह रिवाज था कि, नवजात बच्चों में जो भी बच्चे कुरुप एवं निर्बल हो, वे राजदूतों के द्वारा पकड़वा कर मरवा दिये जाते थे। कठोपनिषद् में नचिकेतस् नामक बालक को उसके पिता द्वारा यम को प्रदान करने की जो कथा आती है, वह संभवतः इसी रिवाज की परिचायक होगी। इसी ढंग का रिवाज ग्रीस के स्पार्टा नामक जनपद में भी प्रचलित था।

सिकंदर के आक्रमण के समय, इन लोगों ने अत्यंत वीरता के साथ उसका सामना किया। सांगल की रक्षा करने के लिए इन लोगों ने उस नगरी के चौगिर्द शकट-व्यूह की रचना की, एवं सिकंदर के साथ बड़ा भारी मुकाबला किया। इस युद्ध में प्रारंभ में इन लोगों की जीत हो रही थी, किंतु केकयराज पौरस पीछे से पाँच हजार भारतीय सैनिकों के साथ सिकंदर की सहायता करने आ पहुँचा, जिस कारण इन्हें युद्ध में हार मानना पड़ी।

इस युद्ध में १७,००० वीरों ने अपने जीवन की बलि दी। इस युद्ध के कारण सिकंदर इतना संत्रस्त हो गया कि, सांगल के परास्त हो जाने पर उसने उसे भूमिसात् करने का आदेश दिया। सिकंदर इस नीति का अनुसरण तभी करता था, जब वह अपने शत्रु से हतप्रभ हो जाता था।

इन लोगों में सौंदर्य को बहुत महत्त्व दिया जाता था। एवं राजपुरुषों का चुनाव करते समय भी, सौंदर्य को ही सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता था। इस जाति के स्त्रीपुरुष अपना विवाह स्वेच्छा से करते थे, एवं उनमें सती की प्रथा भी विद्यमान थी।

केकय—उत्तरीपश्चिम भारत का एक जनपद, जो वितस्ता (जेहलम) नदी के पूर्वभाग में बसा हुआ था। सिकंदर के आक्रमणकाल में इस देश के राजा का नाम पोरस था, जिसने सिकंदर का अत्यंत कड़ा प्रतिकार किया। किन्तु अंत में सिकंदर के हाथों परास्त हो कर, उसे सिकंदर की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी (सिकंदर देखिये)।

क्षत्तृ (क्सॅथ्रोई)—एक जनपद, जो सिंधु एवं चिनाब नदियों के संगम के समीप स्थित तीन छोटे जनपदों में से एक था (अम्बष्ठ देखिये)।

क्षुद्रक (ऑक्सिड्राकोई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में व्यास (बिआस) नदी के किनारे मालवगण के पूर्वभाग में बसा हुआ था। अपने पड़ोस में रहनेवाले मालव लोगों से इनका प्राचीनकाल से वैर था। अपने देश वापस जानेवाले सिकंदर के द्वारा इन दो गणों पर हमला किये जाने पर, ये दोनों एक हो गये, एवं इन्होंने उससे इतना गहरा मुकाबला किया कि, यद्यपि ये युद्ध में विजय प्राप्त न कर सके, फिर भी सिकंदर ने इनके साथ अत्यंत सम्मानपूर्वक संधि की (मालव देखिये)।

पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में, इन लोगों के द्वारा अकेले ही अपने शत्रु पर विजय प्राप्त करने का निर्देश प्राप्त है (एकाकिभिः क्षुद्रकैः जितम्) (महा. १.८३;३२१;४१२)। यह निर्देश संभवतः सिकंदर के साथ इन लोगों के किये युद्ध के उपलक्ष्य में ही किया गया होगा।

गांधार (पश्चिम)—एक गणराज्य, जो सिंधुनदी के पश्चिमतट पर बसा हुआ था। सिकंदर के राज्यकाल में इन लोगों के राजा का नाम हस्ति था। सिकंदर के हे-फिस्तियन एवं पर्डिक्कस नामक दो सेनापतियों ने इस देश को जीत लिया था। इस देश की राजधानी पुष्करावती थी, जिसे जीतने में सिकंदर के सेनापतियों को एक माह लग गया। इससे प्रतीत होता है कि, सिकंदर के काल में यह जनपद काफ़ी बलशाली था।

गांधार (पूर्व)—एक जनपद, जो सिंधुनदी के पूर्व तट पर बसा हुआ था। इसकी राजधानी तक्षशिला थी। सिकंदर के आक्रमण के समय, इस देश का राजा आम्भि (ऑम्फिस) था। आम्भि राजा ने सिकंदर की अधीनता स्वयं ही स्वीकार कर ली।

ग्लुचुकायन (ग्लौगनिकाई)—एक गणराज्य, जो उत्तरी पश्चिम भारत में केकय जनपद के समीप ही स्थित था। पतंजलि के महाभाष्य में वाहीक देश में स्थित 'ग्लुचुकायन' गण का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः ये ही होगा (महा. २.२९६-२९७)।

इस गणराज्य में कुल ३७ ग्राम थे, जिन पर सिकंदर ने विजय प्राप्त की थी, एवं इस देश का शासन अपने मित्र केकयराज पोरस के हाथों सौंप दिया।

नुसा—एक गणराज्य, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में गौरी नदी के पूर्व तट पर बसा हुआ था। गौरी नदी के पश्चिम तट पर बसे हुए अस्सकेन (अश्वक, अफगाण) लोगों पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् सिकंदर ने इन लोगों को जीत लिया था।

पातानप्रस्थ (पातालेन)—दक्षिण सिंध में स्थित एक गणराज्य, जो सिंधु नदी के मुहाने के प्रदेश में स्थित था। इसका स्थान हैद्राबाद (सिंध) के इर्द गिर्द कहीं होगा। अपने देश लौट जाते समय सिकंदर ने इन लोगों के साथ युद्ध किया था। इस युद्ध में ये परास्त हुए, एवं अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिए अपना प्रदेश छोड़ कर अन्यत्र चले गये।

पाणिनीय व्याकरण में पातानप्रस्थ नामक ग्राम और लोगों का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः यही होंगे (महा. २.२९८)। किन्तु कई अभ्यासक इनका सही नाम 'पात्ताल' मानते है। सिकंदर के आक्रमणकाल में इस राज्य में दो कुलपरंपरागत राजाओं का शासन था, जो कुलवृद्धों की सभा की सहायता से राज्य का संचालन करते थे। ग्रीक लेखकों ने इन लोगों की शासन-विधि की तुलना ग्रीक जनपद स्पार्ता के साथ की है।

ब्राह्मणक—उत्तर सिंध का एक गणराज्य, जो मूचिकर्ण जनपद के दक्षिण में स्थित था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इन लोगों के साथ युद्ध किया था, एवं बहुत से ब्राह्मणक लोगों की लाशे खुले रास्ते पर टँगवा दी।

मद्र—एक गणराज्य, जो पंजाब में असिक्री एवं इरावती (रावी) नदियों के बीच के प्रदेश में स्थित था। सिकंदर के आक्रमण के समय इस देश का राजा पोरस (कनिष्ठ) था, जो केकयराज पोरस का भतिजा था। सिकंदर के इस देश के आक्रमण के समय, केकयराज पोरस उसका मित्र एवं सहायक बना था। इसी कारण मद्रराज पोरस ने भी सिकंदर का कोई प्रतिकार न किया, एवं उसकी अधीनता स्वीकृत की।

मालव (मल्लोई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में इरावती (रावी) नदी के तट पर बसा हुआ था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इन्हें एवं व्यास नदी के तट पर स्थित क्षुद्रक लोगों को परास्त किया था।

मालव एवं क्षुद्रक पंजाब के सब से अधिक पराक्रमी एवं स्वाधीनताप्रिय लोग माने जाते थे। सिकंदर के आक्रमण के समय इनके पास कोई खड़ी सेना न थी। इसी कारण इनके बहुत सारे जवान अपने खेतों में ही काटे गये। उसी अवस्था में इन्होंने सिकंदर के साथ गहरा मुकाबला किया।

पश्चात् इन्हें एवं क्षुद्रकों को सिकंदर ने परास्त किया, एवं इन्हें संधि करने पर विवश किया। संधि करते समय इन्होंने सिकंदर से कहा, 'आज तक हम सदा स्वतंत्र रहे हैं, किन्तु सिकंदर के लोकोत्तर पुरुष होने के कारण, हम स्वेच्छापूर्वक उसकी अधीनता स्वीकृत करते है'।

मूचिकर्ण (मुसिकनोई)—उत्तर सिंध का एक जनपद, जो ब्राह्मणक जनपद के उत्तर भाग में स्थित था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इस देश पर आक्रमण किया।

एक गणराज्य के नाते पाणिनीय व्याकरण में इसका निर्देश प्राप्त है। कई अभ्यासकों के अनुसार, इसका सही नाम मूषिक था। इनकी राजधानी का नाम रोरुक था, जो आधुनिक काल में रोरी नाम से सुविख्यात है। रोरी नामक ग्राम के समीप अरोर नामक एक पुरानी वस्ती भी है, जो अब उजड़ी हुई दशा में है।

ग्रीक ग्रंथकारों के अनुसार, ये लोग सात्त्विक भोजन करते थे, एवं नियमित जीवन बिताते थे। इस कारण इनकी आयु एक सौ तीस वर्षों की होती थी। एक ग्राम के सब लोग इकट्ठे बैठ कर भोजन करते थे। इन लोगों में दास प्रथा का अभाव था, एवं सब लोगों को एक दृष्टि से देखा जाता था।

वसाति (ओस्सदिओई)—एक जनपद, जो दक्षिण पंजाब में सिंधु एवं चिनाब नदियों के संगम पर स्थित तीन छोटे जनपदों में से एक था (अम्बष्ठ देखिये)।

शकस्थान—एक जनपद, जो प्राचीन भारत की पश्चिम सीमा पर स्थित था। यह देश सेतुमन्त (हेतुमन्त = आधु. हेलमन्द) नदी के तट पर बसा हुआ था। भारतवर्ष पर आक्रमण करने के पूर्व, सिकंदर ने इस देश को ३३० इ. पू. में जीता था।

शिबि (सिबोही)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में वितस्ता एवं चिनाब के संगम के दाये ओर स्थित था। सिकंदर के अपने देश लौटते समय इन लोगों ने बिना लड़े ही उसकी अधीनता स्वीकृत की थी।

सिकंदर (अलेक्झांडर)—एक सुविख्यात मकदूनियन (मॅसिडोनियन) जगज्जेता सम्राट्, जो ३२७ इ. पू.-३२३ इ. पू. के दरम्यान उत्तरी-पश्चिम भारत पर किये गये आक्रमण के कारण, प्राचीन भारतीय इतिहास में अमर हो चुका है।

इसके भारतीय आक्रमण के इतिहास की जो प्रमाणित सामाग्री उपलब्ध है, उसमें इ. पू ४ थी शताब्दी में उत्तरी पश्चिम भारत में स्थित संघराज्यों की अत्यंत महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। सिकंदर के भारतीय आक्रमण के उपलक्ष्य में, उत्तरी पश्चिम भारत के संघराज्यों की जो जानकारी टॉलेमी आदि ग्रीक इतिहासकारों के द्वारा पायी जाती है, वह पाणिनीय व्याकरण में निर्दिष्ट जनपदों की जानकारी से काफ़ी मिलती जुलती है।

इस काल का इतिहास कथन करने वाले महाभारत, पुराणों जैसे जो भी ग्रंथ उपलब्ध हैं, उनमें उत्तर पश्चिम भारत के प्राचीन जनपदों की उपर्युक्त जानकारी अप्राप्य है। इसी कारण सिकंदर के उत्तरी पश्चिम भारतीय आक्रमण का इतिहास प्राचीन भारतीय इतिहास में एक अपूर्व महत्त्व रखता है।

अपनी चतुरंगिणी सेना के साथ सारा भारतवर्ष पादाक्रांत करने के लिए आये हुए जगज्जेता सिकंदर को उत्तर पश्चिम भारतीय जनपदों पर विजय प्राप्त करने के लिए साढेतीन वर्षों तक रातदिन झगड़ना पड़ा। इससे उन जनपदों की शूरता एवं पराक्रम पर काफ़ी प्रकाश पड़ता है। विशाल इरानी साम्राज्य को चार साल में जीतनेवाले सिकंदर को भारत की उत्तरी पश्चिम विभाग में साढ़े तीन वर्ष लगे, एवं वहाँ पग-पग पर सख्त सामना करना पड़ा। इस प्रकार एक आँधी की भाँति इस प्रदेश पर आक्रमण करनेवाले सिकंदर को अन्त में एक बगूले की तरह लौट जाना पड़ा।

उत्तरी पश्चिम भारत में स्थित जनसत्ताक पद्धति के छोटे छोटे राज्यों का स्वतंत्र अस्तित्व सिकंदर के आक्रमण के कारण विनष्ट हुआ, यही नहीं, प्रबल परकीय आक्रमण के सामने इस पद्धति के छोटे राज्य असहाय साबित होते हैं, यह नया राजनैतिक साक्षात्कार भारतीय राजनीतिज्ञों को प्रतीत हुआ। इसी अनुभूति से शिक्षा पा कर आर्य चाणक्य ने आगे चल कर बलाढ्य साम्राज्यरचना का अभिनव प्रयोग चंद्रगुप्त मौर्य के द्वारा कराया, एवं उसे प्राचीन भारत के सर्वप्रथम एकतंत्री एवं सामर्थ्यसंपन्न साम्राज्य का अधिपति बनाया।

भारतवर्ष पर आक्रमण—३३० इ. पू. के अन्त में सिकंदर ने सर्वप्रथम भारत की पश्चिम सीमा पर स्थित शकस्थान पर हमला किया। उस प्रदेश को जीत कर इसने दक्षिण अफगाणिस्तान पर हमला किया, एवं वहाँ स्थित हरउवती (आधु. अरगन्दाब) प्रदेश को जीत लिया। पश्चात् इसने वहाँ सिकन्दरिया (अलेक्झांड्रिया) नामक नये नगरी की स्थापना की।

पश्चात् इसने बल्ख देश पर आक्रमण किया, तथा वक्षु नदी (आमुदरिया) एवं सीर नदी के बीच में स्थित सुग्ध (सोग्डिआना, समरकंद) देश अपने कब्जे में ले लिया। सुग्ध के इसी युद्ध में सिकंदर को शशिगुप्त नामक किसी भारतीय राजा से युद्ध करना पड़ा, जो संभवतः कंबोज महाजनपद का राजा था।

इस प्रकार बल्ख एवं सुग्ध पर अपना अधिकार जमा कर यह काबूल की घाटी में आ उतरा। काबूल घाटी से सीधे भारतवर्ष पर हमला करने के पूर्व, इसने

इस घाटी के उत्तरभाग में स्थित 'आश्वायन', 'आश्वकायन' (एवं उसकी राजधानी 'मस्सग') आदि गणराज्यों पर आक्रमण किया। मस्सग की इसी लड़ाई में इसने वाहीक देश के सात हजार भृत सैनिकों को विश्वासघात से वध किया। पश्चात् इसने गौरी नदी के पश्चिम तट पर स्थित नुसा जनपद को जीत लिया। इस प्रकार छः मास तक निरंतर युद्ध कर के, सिकंदर उत्तरी अफगाणिस्थान में स्थित जातियों एवं जनपदों को जीतने में यशस्वी हुआ।

भारतवर्ष में प्रवेश--काबूल से तक्षशिला तक का रास्ता उस समय खैबर घाटी से नहीं, बल्कि पश्चिम गांधार देशान्तर्गत पुष्करावती नगरी हो कर जाता था। इसी कारण सिकंदर ने पश्चिम गांधार देश के हस्ति राजा से एक महिने तक युद्ध कर उसे परास्त किया, एवं यह आगे बढ़ा। सिन्धु नदी के पश्चिम तट पर स्थित विविध जनपदों पर विजय पा कर सिकंदर भारतवर्ष की सीमा में प्रविष्ट हुआ।

उस समय सिन्धु नदी के पूर्व तटवर्ती प्रदेश पर पूर्व गांधार देश का अधिराज्य था, जिनके राजा का नाम आम्भि था। इस प्रदेश की राजधानी तक्षशिला नगरी में थी। आम्भि ने स्वेच्छापूर्वक सिकंदर की अधीनता स्वीकार कर ली। पश्चात् ओहिंद (अटक) नामक नगरी के पास सिकंदर ने नौकाओं से द्वारा पूल का निर्माण किया, एवं यह तक्षशिला आ पहुँचा।

केकयराज पोरस से युद्ध-- सिन्धु एवं वितस्ता (जेहलम) नदियों के बीच पूर्व गांधार देश बसा हुआ था, उसी प्रकार वितस्ता नदी के पूर्व भाग में केकय जनपद था, जो उस युग में वाहीक देश (पंजाब) का सब से शक्तिशाली राज्य था। वितस्ता एवं असिक्नी (चिनाब) नदी के बीच एवं केकयदेश की उत्तर में अभिसार देश (आधुनिक पुंच एवं राजौरी) था, जिसका राजा केकयराज पोरस का मित्र था, एवं उसकी सहायता करना चाहता था।

इन दोनों देशों के सैन्य मिलने के पहले ही, सख्त गरमी की चिन्ता न कर सिकंदर वितस्ता नदी के किनारे आ पहुँचा। उस समय पोरस वितस्ता नदी के पूर्व तट पर, अपनी छावनी डाले हुए शत्रु के आक्रमण की प्रतीक्षा कर रहा था, एवं दिन के उजाले में वितस्ता नदीको पार करना असंभव था। इसी कारण एक बरसाती रात में सिकंदर ने पोरस की छावनी से बीस मिल पहिले भाग से अपनी बहुसंख्य सेना पार करा दी। इस समय पोरस ने अपनी सेना पुनः एक बार इकठ्ठा कर सिकंदर से जोर से युद्ध किया।

पोरस का सैन्यबल--सैन्यबल की दृष्टि से पोरस सिकंदर से काफ़ी भारी था। ग्रीक लेखक प्लुटार्क के अनुसार, पोरस के सैन्य में बीस हज़ार पदाती, दो हजार अश्वारोही, एक हज़ार रथ, एवं एक सौ तीस हाथी थे। किन्तु सिकंदर के फुर्तिले सवारों के आगे उसका कोई बस न चला। अन्त में युद्ध में परास्त हो कर, वह आहत अवस्था में सिकंदर के सामने लाया गया। उस समय सिकंदर ने आगे बढ़ कर उसका स्वागत किया एवं पूछा 'आपके साथ कैसा बर्ताव किया जाये?' उस समय पोरस ने अभिमान से कहा, 'जैसा राजा राजाओं के साथ करता है'।

पोरस से मित्रता--सिकंदर ने पोरस के साथ वैसा ही बर्ताव किया, एवं उसे उसका राज्य वापस दे दिया। आगे चल कर पोरस ने सिकंदर के भारत आक्रमण में बहुमूल्य सहायता दी। केकय देश में प्राप्त किये विजय के उपलक्ष्य में सिकंदर ने केकय देश में दो नये नगरों की स्थापना कीः—१. बुकेकला--यह नगर उसी स्थान पर बसा हुआ था, जिस स्थान पर सिकंदर ने वितस्ता नदी पार की थी; २. निकीया--यह नगर सिकंदर एवं पोरस के रणभूमि पर स्थापन किया गया था।

केकय के परास्त हो जाने पर अभिसार ने भी सिकंदर की अधीनता स्वीकार ली।

ग्लुचुकायन पर विजय--केकयराज्य के पूर्व भाग में असिक्नी नदी के किनारे ग्लुचुकायन नामक एक छोटासा गणराज्य था। सिकंदर ने उसे जीत कर, उसे पोरस के हाथ सौंप दिया।

कठ देश पर आक्रमण—पश्चात् सिकंदर ने असिक्नी एवं इरावती (रावी) नदियों के बीच में स्थित मद्रदेश पर आक्रमण करना चाहा। किन्तु इस देश के पोरस (कनिष्ठ) राजा ने बिना युद्ध किये ही सिकंदर का अधिकार स्वीकार लिया। पश्चात् सिकंदर ने इरावती (रावी) नदी के पूरब में स्थित कठ (आधुनिक अमृतसर प्रदेश) जनपद पर आक्रमण किया। उस देश के सांकल नामक राजधानी में कठों के द्वारा रचे गये शकटव्यूहों का भेद कर, इसने उन पर विजय प्राप्त की। इस युद्ध में सत्रह हजार से भी अधिक कठवीरों ने अपने प्राण समर्पण किये।

इस युद्ध से सिकंदर इतना परेशान हुआ कि, सांकल पर विजय प्राप्त कराने के पश्चात्, उसने उसे भूमिसात् करने का आदेश अपने सैनिकों को दे दिया। इसके पहले इरानी साम्राज्य की राजधानी 'पार्सिपोलिस' को भी इसी ढँग से इसने भूमिसात् कराया था। इससे प्रतीत होता है कि, जो शत्रु इसे विशेष कर त्रस्त करता था, उसके राज्य को यह भूमिसात् करवाता था।

यवनसेना का विद्रोह--कठों को परास्त कर सिकंदर की सेनाएँ विपाशा (व्यास) नदी के पश्चिमी तट पर आ पहुँची। उस समय सिकंदर चाहता था कि, विपाशा नदी को पार कर भारतवर्ष में आगे बढ़े, एवं अपने साम्राज्य का और भी अधिक विस्तार करे।

किन्तु इसकी सेना की हिम्मत हार चुकी थी। उन्हें ज्ञात हुआ कि, व्यास नदी के पूर्व में जो जनपद हैं, वह कठों से भी अधिक पराक्रमी हैं, एवं उनके आगे नंद का विशाल साम्राज्य है, जिनकी सेना अनंत है। इसी कारण इसकी सेना ने विपाशा नदी को पार करने से इन्कार कर दिया।

अपनी सेना को उत्साहित करने का इसने अनेक प्रकार से प्रयत्न किया, एवं उनके सम्मुख अनेक व्याख्यान दियें। किन्तु अपने प्रयत्न में इसे सफलता न प्राप्त हुई। अन्त में अत्यंत निराश हो कर यह अपने शिबिर में जा बैठा, एवं कई दिन बाहर न आया। फिर भी इसके सैनिकों के न मानने पर, इसने व्यास नदी के पश्चिमी तट पर देवताओं को बलि दिया, एवं सैन्य को वापस लौट जाने की आज्ञा दी।

सिकंदर की वापसी—वापस जाने के लिए, सिकंदर ने दक्षिण पंजाब एवं सिंध के रास्ते से लौट जाने का निश्चय किया, एवं उस कार्य में दो हजार नावों का बेड़ा बनवाया। पश्चात् बिना किसी विघ्नबाधा के यह वितस्ता (जेहलम) नदी के किनारे आ पहुँचा (३२६ ई. पू.)।

वितस्ता नदी के किनारे इसने एक बड़े दरबार का आयोजन किया, एवं उत्तरी पश्चिम भारत में जीते हुए प्रदेश में निम्नलिखित शासनव्यवस्था जाहीर कीः-१. **केकराज पोरस**-विपाश एवं वितस्ता नदी के बीच में स्थित प्रदेश; २ **गांधारराज आंभि**-वितस्ता एवं सिंधु नदी के बीच में स्थित प्रदेश; ३ **सेनापति फिलिप्स**—सिंधु नदी के पश्चिम में स्थित भारतीय प्रदेश।

शिबि एवं आग्रेय-पश्चात् वितस्ता नदी के समीप स्थित सौभूति लोगों को परास्त कर, इसने जलमार्ग से अपनी वापसी यात्रा प्रारंभ की। इस यात्रा में इसका विशाल जहाजी बेड़ा वितस्ता नदी में चल रहा था, एवं इसकी स्थलसेना नदी के दोनों तट पर उसका अनुगमन करती थी। पश्चात् बिना किसी लड़ाई के, यह वितस्ता एवं असिक्नी नदी के संगम पर आ पहुँचा। वहाँ स्थित शिबि लोगों ने इसका अधिकार मान लिया। किन्तु आग्रेय (आगलस्सी) नामक लोगों ने इसका विरोध किया। उन लोगों का निवासस्थान शतद्रु (सतलज) नदी के पूर्व दक्षिण में स्थित प्रदेश में था। अपनी ४० हजार पदाती एवं ३ हजार अश्वरोही सैनिकों के साथ, इन लोगों के अग्रसेन नामक राजा ने सिकंदर से जोरदार सामना किया। सिकंदर ने इन लोगों को युद्ध में परास्त किया। किन्तु नगरी इसके हाथ आने के पूर्व हीं, उन लोगों ने उसे भस्मसात् किया था।

मालव एवं क्षुद्रक-- असिक्नी नदी के दक्षिण की ओर, इरावती (रावी) नदी के बाये तट पर मल्ल (मल्लोई) एवं क्षुद्रक (ओक्सिड्राकोई) लोग निवास करते थे। शिबि आग्रेय आदि लोगों के समान वे लोग भी 'शस्त्रोपजीवी' थे। पहले तो सिकंदर के सैनिक इन लोगों से लड़ाई करने में काफी ड़रते थे। किन्तु सिकंदर ने उन्हें समझाया कि, क्षुद्रक एवं मालवियों से सामना किये बिना स्वदेश लौटना संभव नहीं है। पश्चात् सिकंदर ने क्षुद्रक-मालवों में से मालवों पर अचानक हमला कर दिया, एवं बहुत से मालव कृषक अपने खेतों में ही लड़ते हुए मारे गये। मालवों के साथ युद्ध करने में सिकंदर की छाती पर सख्त चोट लगी, जो भविष्य में उसकी अकाल मृत्यु का कारण बनी। इस घाव के कारण सिकंदर इतना क्रुद्ध हुआ कि, इसने कत्लेआम का आदेश दिया। स्त्री-पुरुष-वृद्ध एवं बालक किसी की भी यवन सैनिकों ने परवाह न की, एवं हजारों नर-नारी सिकंदर के क्रोध के शिकार बन गये।

इस बीच में क्षुद्रकसेना मालवों की सहायता के लिए आ गयी। मालवों के साथ युद्ध करने से सिकंदर इतना त्रस्त हुआ कि, इसने उनके साथ संधि करना उचित समझा। क्षुद्रक लोगों ने भी सिकंदर जैसे जगज्जेता वीर के साथ युद्ध करना निरर्थक समझा। इसी कारण दोनों पक्षों में संधि हुई, उस समय क्षुद्रकों एवं मालवों ने कहा, 'आज तक हम स्वतंत्र रहे हैं। सिकंदर के लोकोत्तर पुरुष होने के कारण हम स्वेच्छापूर्वक उसकी अधीनता स्वीकृत करते हैं'।

कई अभ्यासकों के अनुसार, सिकंदर क्षुद्रक लोगों का पराभव करने में असमर्थ रहा, जिसका अस्पष्ट निर्देश पतंजलि के व्याकरणमहाभाष्य में पाया जाता है (एकाकिभिः क्षुद्रकैः जितम्) (महा. १.८३; ३२१; ४१२)। इसी कारण क्षुद्रकों से संधि कर लेने में सिकंदर ने अपना कल्याण समझा होगा।

अंबष्ठ, क्षतृ एवं वसाति—मालव एवं क्षुद्रकगणों के साथ समझौता कर सिकंदर दक्षिण की ओर चलने लगा। सिंधु एवं चिनाब नदियों के संगम के समीप अंबष्ठ, क्षतृ आदि छोटे-छोटे गणराज्य बसे हुए थे। उनमें से अंबष्ठ गण को सिकंदर ने युद्ध में परास्त किया, एवं अन्य दो गणराज्यों ने युद्ध के बिना ही सिकंदर की अधीनता स्वीकृत कर ली। सिंधु एवं चिनाब के संगम पर सिकंदर ने अलेक्झांड्रिया (सिकंदरिया) नामक नगरी की स्थापना की।

मूचिकर्ण एवं ब्राह्मणक––उत्तरी सिंध में पहुँचने के पश्चात् मूचिकर्ण नामक लोगों से सिकंदर को सामना करना पड़ा, जो लड़ाई उन लोगों के रोरुक नामक नगरी में संपन्न हुई। उन लोगों को परास्त कर सिकंदर दक्षिण की ओर आगे बढ़ा। वहाँ ब्राह्मणक नामक गणराज्य के लोगों से इसे युद्ध करना पड़ा। सिकंदर ने क्रूरता के साथ उन लोगों का वध किया, एवं बहुत से ब्राह्मणक लोगों की लाशों को खुले मार्ग पर लटकवा दिया, ताकि अन्य लोग उन्हें देखें, एवं यवनों के विरुद्ध युद्ध करने का साहस न करे।

पातानप्रस्थ––पश्चात् सिकंदर सिंध प्रान्त के उस भाग में पहुँचा, जहाँ सिंधुनदी दो धाराओं में विभक्त हो कर समुद्र की ओर आगे बढ़ती है। इस प्रदेश में स्थित पातानप्रस्थ गणराज्य के लोग सिकंदर का मुकाबला करने में असमर्थ रहे, एवं अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अपना प्रदेश छोड़ कर अन्यत्र चले गये।

वापसी एवं मृत्यु––इस प्रकार सिंधु नदी के मुहाने पर पहुँचने के पश्चात् सिकंदर ने अपनी सेना को जलसेना एवं भूमिसेना में विभक्त किया। इनमें से जलसेना को जल सेनापति नियार्कस के आधिपत्य में समुद्रमार्ग से जाने की आज्ञा इसने दी, एवं भूमिसेना के साथ यह स्वयं मकरान के किनारे किनारे भूमिमार्ग से अपने देश की ओर चल पड़ा। पश्चात् अपने देश पहुँचने के पूर्व ही ३२३ ई. पू. में बॅबिलोन में इसकी मृत्यु हो गयी।

सुग्ध (सोग्डिआना)––एक बृहद्भारतीय जनपद, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में सीर नदी के प्रदेश में बसा हुआ था। सिकंदर के आक्रमण के समय, इस देश में ईरानी एवं भारतीय दोनों प्रकार के आर्यों की बस्तियाँ एवं नगरराज्य थे।

सौभूति (सौफाइतिज)––एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में वितस्ता नदी के समीपवर्ती प्रदेश में बसा हुआ था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इन लोगों को परास्त किया था। इन्हें 'सुभूत' एवं 'सौभुत' नामांतर भी प्राप्त था (पा. सू. ४.२.७५; संकलादि गण)।

ग्रीक विवरण से ज्ञात होता है कि, इन लोगों के सारे गुणवैशिष्टय एवं रीतिरिवाज कठ लोगों के समान ही थे, एवं ये लोग शारीरिक सौन्दर्य को अधिकतर महत्त्व प्रदान करते थे। कठ लोगों के समान इनमें यह रिवाज था कि कुरूप एवं निर्बल बच्चों को बचपन में ही मरवा दिया जाता था (कठ देखिये)।

हरउवती––दक्षिण अफगाणिस्तान में स्थित एक देश, जो आधुनिक काल में कंधार नाम से प्रसिद्ध है। शकस्थान देश को जीतने के बाद, सिकंदर ने इस देश को जीत लिया, एवं वहाँ सिकंदरिया नामक नगरी की स्थापना की। वही नगर आधुनिककाल में कंदाहार नाम से सुविख्यात है।

परिशिष्ट ४

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजवंश

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजवंशों में निम्नलिखित राजवंश प्रमुख थे:—

(१) सूर्यवंश—(सू.), जो मनु वैवस्वत के द्वारा स्थापित किया गया था।

(२) सोमवंश—(सो.), जो सोमपुत्र पुरूरवस् ऐल के द्वारा स्थापित किया गया था।

(३) स्वायंभुव वंश—(स्वा.), जो स्वायंभुव मनु के द्वारा स्थापित किया गया था।

(४) भविष्य वंश—जिसमें भारतीय युद्धोत्तर अनेकानेक राजवंश सम्मिलित थे।

(५) मानवेतर वंश,—जिसमें वानर, रक्षस् आदि मानवेतर वंश समाविष्ट किये जाते हैं।

(१) सूर्यवंश (सू.)

इस वंश का आद्य संस्थापक वैवस्वत मनु माना जाता है। वैवस्वत मनु ने भारतवर्ष का अपना राज्य अपने नौ पुत्रों में बाँट दिया। इन नौ पुत्रों में से पाँच पुत्र एवं एक पौत्र 'वंशकर' साबित हुए, जिन्होंने अपने स्वतंत्र राजवंश स्थापित किये:—

पुत्र का नाम	राजवंश	देश
इक्ष्वाकु	इक्ष्वाकुवंश (सू. इ.)	अयोध्या
निमि 'इक्ष्वाकुपुत्र'	निमिवंश (सू. निमि.)	विदेह
नाभानेदिष्ट	दिष्टवंश (सू. दिष्ट.)	वैशाली
शर्याति	शर्याति वंश (सू. शर्याति.)	आनर्त
नृग	नृग वंश (सू. नृग.)	—
नरिष्यन्त	नरिष्यंतवंश (सू. नरिष्यंत)	—

मनु राजा के उपर्युक्त पाँच पुत्र एवं एक पौत्र यद्यपि वंशकर साबित हुए, फिर भी उनमें से केवल चार पुत्र ही दीर्घजीवी राज्य स्थापित कर सके। बाकी दो पुत्रों का वंश भी अल्पावधि में ही विनष्ट हुआ।

मनु के बाकी तीन पुत्र करूष, धृष्ट एवं पृषध्र क्रमशः करूष एवं धृष्ट नामक क्षत्रिय, एवं पृषध्र नामक शूद्र वर्णों के जनक बन गये, एवं अल्पावधि में ही विनष्ट हुए।

मनु के वंशकर पुत्रों के द्वारा स्थापित किये गये वंशों की जानकारी निम्नप्रकार है:—

इक्ष्वाकु वंश—(सू. इ.)—मनु के ज्येष्ठ पुत्र इक्ष्वाकु को मध्यदेश का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ अयोध्या नगरी में उसने सुविख्यात इक्ष्वाकु वंश की प्रतिष्ठापना की। इक्ष्वाकु के वंशविस्तार के संबंध में पुराणों में दो विभिन्न प्रकार की जानकारी प्राप्त है। इनमें से छः पुराणों की जानकारी के अनुसार, इक्ष्वाकु को कुल सौ पुत्र थे, जिनमें विकुक्षि, निमि, दण्ड, शकुनि एवं वसाति प्रमुख थे। इसके पश्चात् विकुक्षि अयोध्या का राजा बन गया। निमि ने विदेह देश में स्वतंत्र निमिवंश की स्थापना की। बाकी पुत्रों में से शकुनि उत्तरापथ का, एवं वसाति दक्षिणापथ का राजा बन गया (वायु. ८८. ८-११; ब्रह्मांड. ३.६३. ८-११; ब्रह्म. ७.४५-४८; शिव. ७.६०.३३-३५)।

अन्य पुराणों के अनुसार, इक्ष्वाकु के सौ पुत्रों में विकुक्षि, दण्ड एवं निमि प्रमुख थे। इनमें से विकुक्षि अयोध्या का राजा बन गया, जिसके कुल १२९ पुत्र थे। उन पुत्रों में से पंद्रह पुत्र मेरु के उत्तर भाग में स्थित प्रदेश के, एवं बाकी ११४ पुत्र मेरु के दक्षिण भाग में स्थित प्रदेश के राजा बन गये (मत्स्य. १२. २६-२८; पद्म. पा. ८. १३०-१३३; लिंग. १.६५.३१-३२)।

इक्ष्वाकुवंश में कुल कितने राजा उत्पन्न हुए इस संबंध में एकवाक्यता नहीं है। यह संख्या विभिन्न पुराणों में निम्नप्रकार दी गयी है:—१. भागवत-८८; २. वायु-९१; ३. विष्णु-९३; ४. मत्स्य-६७। इनमें से मत्स्य में प्राप्त नामावलि संपूर्ण न हो कर केवल कई प्रमुख राजाओं की है, जिसका स्पष्ट निर्देश इस नामावलि के अंत में प्राप्त है (मत्स्य. १२.५७)। पुराणों में प्राप्त इक्ष्वाकुवंश की वंशावलियों में भागवत में प्राप्त वंशावलि सर्वाधिक परिपूर्ण

प्रतीत होती है, जो आगे दी गयी 'पौराणिक राजाओं की तालिका' में उद्धृत की गयी है।

ब्रह्म, हरिवंश, एवं मत्स्य में प्राप्त इक्ष्वाकुवंश की नामावलि अपूर्ण सी प्रतीत होती है, जो क्रमशः नल, मरु एवं स्वगण राजाओं तक ही दी गयी है।

प्रमुख राजा—इस वंश में निम्नलिखित राजा विशेष महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं:—१. पुरंजय (ककुत्स्थ); २. श्रावस्त; ३. कुवलाश्व 'धुंधुमार' ४. युवनाश्व (द्वितीय) 'सौद्युम्नि'; ५. मांधातृ 'यौवनाश्व' ६. पुरुकुत्स; ७. त्रसदस्यु; ८. त्रैय्यारुण; ९. सत्यव्रत 'त्रिशंकु' १०. हरिश्चंद्र; ११. सगर (बाहु); १२. भगीरथ; १३. सुदास; १४. मित्रसह कल्माषपाद सौदास; १५. दिलीप (द्वितीय) खट्वांग; १६. रघु; १७. राम दाशरथि; १८. हिरण्यनाभ कौसल्य; १९. बृहद्वल।

पाठभेद एवं मतभेद—भागवत में प्राप्त दृढाश्व एवं हर्यश्व राजाओं के बीच प्रमोद नामक एक राजा का निर्देश मत्स्य में प्राप्त है। कल्माषपाद सौदास से लेकर, दिलीप खट्वांग तक के राजाओं के नाम ब्रह्म, हरिवंश, एवं मत्स्य में भागवत में प्राप्त नामावलि से अलग प्रकार से दिये गये है, जिसमें सर्वकर्मन्, अनरण्य, निघ्न, अनमित्र, दुलीदुह आदि राजाओं के नाम प्राप्त हैं।

पौराणिक साहित्य में कई राजा ऐसे भी पाये जाते हैं, जो इक्ष्वाकुवंशीय नाम से सुविख्यात हैं, किन्तु जिनके नाम इक्ष्वाकुवंश के वंशावलि में अप्राप्य हैं:—१. असमाति ऐक्ष्वाक; २. क्षेमदर्शिन्; ३. सुवीर चौतिमत।

कई अभ्यासकों के अनुसार, क्षेमधन्वन् से ले कर बृहद्रथ राजाओं तक की प्राप्त नामावलि एक ही वंश के लोगों की वंशावलि न होकर, उसमें दो विभिन्न वंश मिलाये गये हैं। इनमें से क्षेमधन्वन् से लेकर हिरण्यनाभ कौसल्य तक की वंशशाखा पुष्य से लेकर बृहद्रथ तक के शाखा से संपूर्णतः विभिन्न प्रतीत होती है। प्रश्नोपनिषद् में निर्दिष्ट हिरण्यनाभ कौसल्य व्यास की सामशिष्यपरंपरा में याज्ञवल्क्य नामक आचार्य का गुरु था। प्रश्नोपनिषद् में निर्दिष्ट हिरण्यनाभ कौसल्य, एवं पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट हिरण्यनाभ कौसल्य ये दोनों एक ही व्यक्ति थे। इस अवस्था में इक्ष्वाकुवंशीय वंशावलि में हिरण्यनाभ कौसल्य को दिया गया विशिष्टस्थान कालदृष्टि से असंगत प्रतीत होता है।

स्कंद में इक्ष्वाकुवंशीय राजा विधृति एवं पूरुवंशीय राजा परिक्षित् को समकालीन माना गया है। भागवत के वंशावलि के अनुसार, इन दो राजाओं में अठारह पीढ़ियों का अन्तर था। यह असंगति भी उपर्युक्त तर्क को पुष्टि प्रदान करती है।

इसके विरुद्ध इस वंशावलि को पुष्टि देनेवाली एक जानकारी भी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। कलियुग के अन्त में जिन दो राजाओं के द्वारा क्षत्रियकुल का पुनरुद्धार होनेवाला है, उनके नाम पौराणिक साहित्य में मेरु ऐक्ष्वाक, एवं देवापि पौरव दिये गये हैं। भागवत के वंशावलि में इन दोनों राजाओं को समकालीन दर्शाया गया है, जो संभवतः उसकी ऐतिहासिकता का प्रमाण हो सकता है।

राम दाशरथि के पश्चात् उसके पुत्र लव ने श्रावस्ती में स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। लव के काल से अयोध्या के इक्ष्वाकुवंश का महत्त्व कम हो कर, उसका स्थान 'श्रावस्ती उपशाखा' ने ले लिया। इसी शाखा में आगे चल कर प्रसेनजित् नामक राजा उत्पन्न हुआ, जो गौतम बुद्ध का समकालीन था। गौतम बुद्ध के चरित्र में श्रावस्ती के राजा प्रसेनजित् का निर्देश बार-बार आता है, किन्तु उस समय अयोध्या के राजगद्दी पर कौन राजा था, इसका निर्देश कहीं भी प्राप्त नहीं है।

अंतिम राजा—अयोध्या के इक्ष्वाकु वंश का अंतिम राजा क्षेमक माना जाता है, जो मगध देश के महापद्म नंद राजा का समकालीन माना जाता है।

दिष्ट वंश—(सू. दिष्ट.) इस वंश के संस्थापक का नाम नाभानेदिष्ट अथवा नेदिष्ट था, जो मनु के नौ पुत्रों में से एक था। कई पुराणों में उसका नाम दिष्ट दिया है, एवं उसे मनु राजा का पौत्र एवं मनुपुत्र धृष्ट राजा का पुत्र कहा गया है। पौराणिक साहित्य में से सात पुराणों में, एवं महाभारत रामायण में, इस राजवंश का निर्देश प्राप्त है, जहाँ कई बार इसे 'वैशाल राजवंश' कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६१.३१८; वायु. ८६.३-२२; लिंग. १.६६.५३; मार्क. ११०-१३३; विष्णु. ४.१.१६; गरुड. १३८.५-१३; भा. ९.२.२३; वा. रा. बा. ४७.११; म. आश्व. ४.४)।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त दिष्ट वंश की जानकारी प्रमति (सुमति) राजा से समाप्त होती है, जो अयोध्या के दशरथ राजा का समकालीन था। प्रमति तक का संपूर्ण वंश भी केवल वायु, विष्णु, गरुड एवं भागवतपुराण में ही पाया जाता है। बाकी सारे पुराणों में प्राप्त नामावलियाँ किसी न किसी रूप में अपूर्ण हैं।

इस वंश में उत्पन्न प्रथम दो राजाओं के नाम भलंदन एवं वत्सप्री थे। इनमें से भलंदन आगे चल कर वैश्य बन गया। इसी वंश में उत्पन्न हुए संकील, वत्सप्री एवं वत्स नामक आचार्यों के साथ, भलंदन का निर्देश एक वैश्य सूक्तद्रष्टा के नाते प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.३२.१२१-१२२; मत्स्य. १४५.११६-११७)। किंतु ऋग्वेद में, इनमें से केवल वत्सप्रि भालंदन के ही सूत्र प्राप्त हैं (ऋ. ९.६८; १०. ४५-४६)। इन्हीं सूक्तों की रचना करने के कारण भलंदन पुनः एक बार ब्राह्मण बन गया (ब्रह्म. ७.४२)।

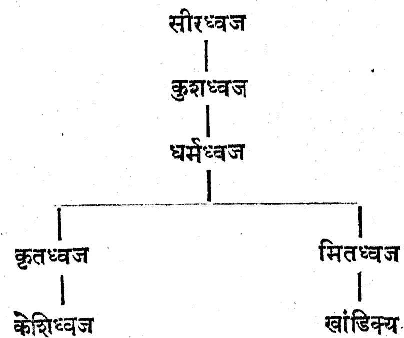
इसी वंश में उत्पन्न हुए विशाल राजा ने वैशालि नामक नगरी की स्थापना की। उसी काल से इस वंश को 'वैशाल' नाम प्राप्त हुआ।

निमि वंश—(सू. निमि.) इस वंश की स्थापना मनु राजा के पौत्र एवं इक्ष्वाकु राजा के पुत्र निमि 'विदेह' राजा ने की। निमि के पुत्र का नाम मिथि जनक था, जिस कारण इस राजवंश को जनक नामान्तर भी प्राप्त था। इस राजवंश के राजधानी का नाम भी 'मिथिला' ही था, जो विदेह राजा ने अपने पुत्र मिथि के नाम से स्थापित की थी।

इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६४.१-२४; वायु. ८९.१-२३; विष्णु. ४.५.११-१४; गरुड. १.१३८.४४-५८; भा. ९. १३)। वाल्मीकि रामायण में भी इस वंश की जानकारी प्राप्त है, किन्तु वहाँ इस वंश की जानकारी सीरध्वज तक ही दी गयी है।

इस वंश के राजाओं के संबंध में पौराणिक साहित्य में काफ़ी एकवाक्यता है। किन्तु विष्णु, गरुड एवं भागवत में शकुनि राजा के पश्चात् अंजन, उपगुप्त आदि बारह राजा दिये गये हैं, जो वायु एवं ब्रह्मांड में अप्राप्य हैं। इन दो नामावलियों में से विष्णु, भागवत आदि पुराणों की नामावलि ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक सुयोग्य होती है। किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार, शकुनि एवं स्वागत के बीच में प्राप्त बारह राजा निमिवंश से कुछ अलग शाखा के थे, एवं इसी कारण इस शाखा को आद्य निमिवंश से अलग माना जाता हैं (ब्रह्मांड. ३.६४; वायु. ८९; भा. ९.१३)।

इस वंश का सब से अधिक सुविख्यात राजा सीरध्वज जनक था, जिसके भाई का नाम कुशध्वज था (ब्रह्मांड. ३.६४.१८-१९; वायु. ८९.१८; वा. रा. बा. ७०.२-३)। कुशध्वज सांकाश्या पुरी का राजा था। किन्तु भागवत में सीरध्वज राजा का पुत्र माना गया है, एवं उसका वंशक्रम निम्न प्रकार दिया गया है—



उपर्युक्त जनक राजाओं में से केशिध्वज एक बड़ा तत्त्वज्ञानी राजा था, एवं उसका चचेरा भाई खांडिक्य एक सुविख्यात यज्ञकर्ता था। केशिध्वज जनक एवं खांडिक्य की एक कथा विष्णु में दी गयी है, जिससे इस वंशावलि की ऐतिहासिकता पर प्रकाश पड़ता है (विष्णु. ६.६.७-१०४)।

महाभारत में देवरात जनक राजा को याज्ञवल्क्य का समकालीन कहा गया है, किन्तु वंशावलियों का संदर्भ अच्छी प्रकार से देखने से प्रतीत होता है कि, याज्ञवल्क्य के समकालीन जनक का नाम देवराति न हो कर जनदेव अथवा उग्रसेन था।

पौराणिक साहित्य में निम्नलिखित राजाओं को जनक कहा गया है:—१. सीरध्वज २. धर्मध्वज (विष्णु. ४.२४.५४); ३. जनदेव, जो याज्ञवल्क्य का समकालीन था; ४. दैवराति; ५. खांडिक्य; ६. बहुलाश्व, जो श्रीकृष्ण से आ मिला था; ७. कृति, जो भारतीय युद्ध में उपस्थित था। ये सारे राजा 'विदेह', 'जनक', 'निमि' आदि बहुविध नामों से सुविख्यात थे, किन्तु उनका 'सू. निमि.' वर्णन ही ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक उचित प्रतीत होता है। ये सारे राजा आत्मज्ञान में प्रवीण थे (विष्णु. ६.६.७-९)।

पौराणिक साहित्य में निम्नलिखित राजाओं को निमिवंशीय कहा गया है, किन्तु उनके नाम निमि वंश की वंशावलि में अप्राप्य है:—१. कराल; २. एंद्रद्युम्नि; ३. उग्र; ४. जनदेव; ५. पुष्करमालिन्; ६. माधव ७. शिखिध्वज।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में निम्नलिखित निमिवंशीय राजाओं का निर्देश प्राप्त है:—१. कुणि (शकुनि) २. रंजन (अंजन); ३. उग्रदेव; ४. क्रतुजित्। ये सारे राजा वैदिक यज्ञकर्म में अत्यंत प्रवीण थे।

वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट उपर्युक्त बहुत सारे राजाओं के नाम पौराणिक साहित्य में प्राप्त वंशावलियों में अप्राप्य हैं। संभव है कि, इन सारे राजाओं ने क्षत्रिय धर्म का त्याग कर ब्राह्मण धर्म स्वीकार लिया होगा। इस वर्णान्तर के कारण उनका राजकीय महत्त्व कम होता गया, जिसके ही परिणाम स्वरूप पौराणिक राजवंशों में से उनके नाम हटा दिये गये होंगे।

नभग वंश--(सू. नभग.) मनु के पुत्र नभग के द्वारा प्रस्थापित किये गये वंश का निर्देश पुराणों में अनेक स्थान पर प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६३.५-६; भा. ९.४-६; ब्रह्म. ७.२४; वायु. ८८.५-७)। इनका राज्य गंगानदी के दोआब में कहीं बसा हुआ था। इस वंश में नाभाग, अंबरीष, विरूप, पृषदश्व, रथीतर आदि राजा उत्पन्न हुए। किंन्तु आगे चल कर सोमवंशीय ऐल राजाओं के आक्रमण के कारण इनका राज्य आदि सारा वैभव चला गया, एवं ये लोग वर्णान्तर कर के अंगिरसगोत्रीय रथीतर ब्राह्मण बन गये।

नरिष्यन्त वंश--(सू. नरि.) मनु के पुत्र नरिष्यन्त के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस वंश का निर्देश पुराणों में अनेक स्थान पर प्राप्त है (भा. ९.२.१९-२२; वायु. ८६.१२-२१)। इस वंश में उत्पन्न राजाओं में निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:--१. चित्रसेन; २. दक्ष; ३. मीढ्वस; ४. कूर्च; ५. इंद्रसेन; ६. वीतिहोत्र ७.सत्यश्रवस; ८. उरुश्रवम्; ९. देवदत्त; १०. कालीन जातुकर्ण्य; ११. अग्निवेश्य।

आगे चल कर, ये लोग क्षत्रियधर्म छोड़ कर ब्राह्मण बन गये, एवं आग्निवेश्यायान नाम से सुविख्यात हुए। दिष्ट राजवंश में भी नरिष्यंत नामक एक उपशाखा का निर्देश पाया जाता है, किन्तु वे लोग आद्य नरिष्यंत शाखा से बिलकुल विभिन्न थे।

नृग वंश (सू. नृग.)—मनु के इस पुत्र के वंश का निर्देश भागवत में पाया जाता है, जिसमें सुमति, वसु, ओघवत् नामक राजा प्रमुख थे (भा. ९.२.१७-१८)।

शर्याति वंश (सू. शर्याति)-मनु के शर्याति नामक पुत्र ने गुजरात देश में आकार इस स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। शर्याति राजा के पुत्र का नाम आनर्त था, जिसके ही कारण,प्राचीन गुजरात देश को आनर्त नाम प्राप्त हुआ था। गुजरात में स्थित हैहय राजवंशीय राजाओं से इन लोगों का अत्यंत घनिष्ठ संबंध था।

शर्याति राजवंश की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (भा. ९.३; ह. वं. १.१०. ३१-३३; वायु. ८६.२३-३०; ब्रह्मांड. ३.६१.१८-२०; ६३.१; ४; ब्रह्म. ७.२७-२९)। इस वंश में निम्नलिखित राजा उत्पन्न हुए थे.-१. आनर्त; २. रोचमान रेवत; ३. ककुद्मत्। इन में से ककुद्मत् राजा की कन्या रेवती बलराम को विवाह में दी गयी थी। इनकी राजधानी कुशस्थली (द्वारका) नगरी में थी।

इस वंश के आद्य संस्थापक शर्याति राजा की कन्या का नाम सुकन्या था, जिसका विवाह च्यवन ऋषि से हुआ था। शर्यातिकन्या सुकन्या एवं च्यवन ऋषि की कथा वैदिक साहित्य में प्राप्त है।

(२) सोमवंश (सो.)

सोमवंश का महत्त्व--पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट बहुतसारा राजकीय इतिहास सोमवंश में उत्पन्न हुए राजाओं का, एवं उनके वंशजों का इतिहास कहा जा सकता है। यद्यपि प्राचीन इतिहास के प्रारंभ में सूर्यवंश में उत्पन्न हुए राजाओं का भारतवर्ष में काफी प्राबल्य था, फिर भी उत्तरकालीन इतिहास में उनकी राजसत्ता अयोध्या, विदेह एवं वैशालि राज्यों से ही मर्यादित रही। उक्त उत्तरकालीन इतिहास में मांधातृ एवं सगर ये केवल दो ही सूर्यवंशीय राजा ऐसे थें, जिन्होंने समस्त उत्तरभारतवर्ष पर अपना स्वामित्व प्रस्थापित किया था।

उत्तरकालीन भारतीय इतिहास में अयोध्या, विदेह एवं वैशालि इन तीन देशों को छोड़ कर बाकी सारे उत्तरभारत,एवं उत्तरीपश्चिम दक्षिणी भारत पर सोमवंशीय राजाओं का ही राज्य था, जिनकी संक्षिप्त जानकारी निम्नलिखित है:-

(१) **पौरव शाखा**—इनका राज्य काशी एवं शूरसेन देश छोड़कर गंगा एवं यमुनानदियों के समस्त समतल प्रदेश में स्थित था। इस वंश के राज्यों में हस्तिनापुर, पांचाल, चेदि, वत्स, करूष, मगध एवं मत्स्य आदि राज्य प्रमुख थे।

(२) **यादव शाखा**---इन लोगों का राज्य पश्चिम में राजपुताना मरुभूमि से लेकर उत्तर में यमुना नदी तक फैला हुआ था।

(३) **अनु शाखा**--इन लोगों के एक शाखा का राज्य पंजाब देश में था, जिनमें सिंधु, सौवीर, कैकेय, मद्र, वाहीक, शिबि एवं अंबष्ठ प्रमुख थे। इन लोगों के दूसरी एक शाखा का राज्य पूर्व बिहार, बंगाल एवं ओरिसा में था, जहाँ इन लोगों के अंग, वंग, पुण्ड्र, सुह्म एवं कलिंग राज्य प्रमुख थे।

(४) **द्रुह्यु शाखा**--इन लोगों का राज्य गांधारदेश में था, एवं कई अभ्यासकों के अनुसार इनका विस्तार उत्तरी पश्चिमभारत की सीमाभाग पर स्थित म्लेच्छ लोगों तक फैला हुआ था।

(५) **तुर्वसु शाखा**--इन लोगों का उत्तरभारत में स्थित राज्य तो नष्ट हुआ था। किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार, दक्षिण भारतवर्ष के पाण्ड्य, चोल एवं केरल राजवंश इन्हींसे उत्पन्न हुए थे।

(६) **काश्य शाखा**--इन लोगों का राज्य काशिदेश में था। इसी कारण ययाति से उत्पन्न पाँच वंशों का राज्य सारी पृथ्वी पर था, ऐसा स्पष्ट निर्देश पौराणिक साहित्य में था (वायु. ९३.१०३.९९-४७२; ब्रह्मांड. ३.६८.१०५-१०६)। पौराणिक साहित्य में प्राप्त इस निर्देश से यादव, तुर्वसु, आनव, द्रुह्यु एवं पौरव इन पाँच उपशाखाओं का निर्देश अभिप्रेत है।

स्थापना-बुध का इला से उत्पन्न पुत्र पुरूरवस् ऐल सोमवंश का संस्थापक माना जाता है। यद्यपि इन लोगों का राज्य प्रतिष्ठान (आधुनिक प्रयाग) प्रदेश में था। फिर भी इन लोगों का मूलस्थान हिमालय प्रदेश में कहीं था, पुरूरवस् के द्वारा स्थापित किया गया राज्य ऐल राज्य नाम से सुविख्यात था, जो सात द्वीपों में विभाजित था। यही राज्य आगे चल कर, पुरूरवस् के आयु, एवं अमावसु नामक दो पुत्रों के पुत्रपौत्रों में विभाजित हुआ। इन्हीं से आगेचल कर सोमवंश के निम्नलिखित शाखाओं का निर्माण हुआः--

(१) **अमावसु शाखा (सो. अमा.)**--पुरूरवस् राजा के अमावसु नामक पुत्र के द्वारा यह स्थापित की गयी थी, एवं कान्यकुब्ज देश पर राज्य करती थी।

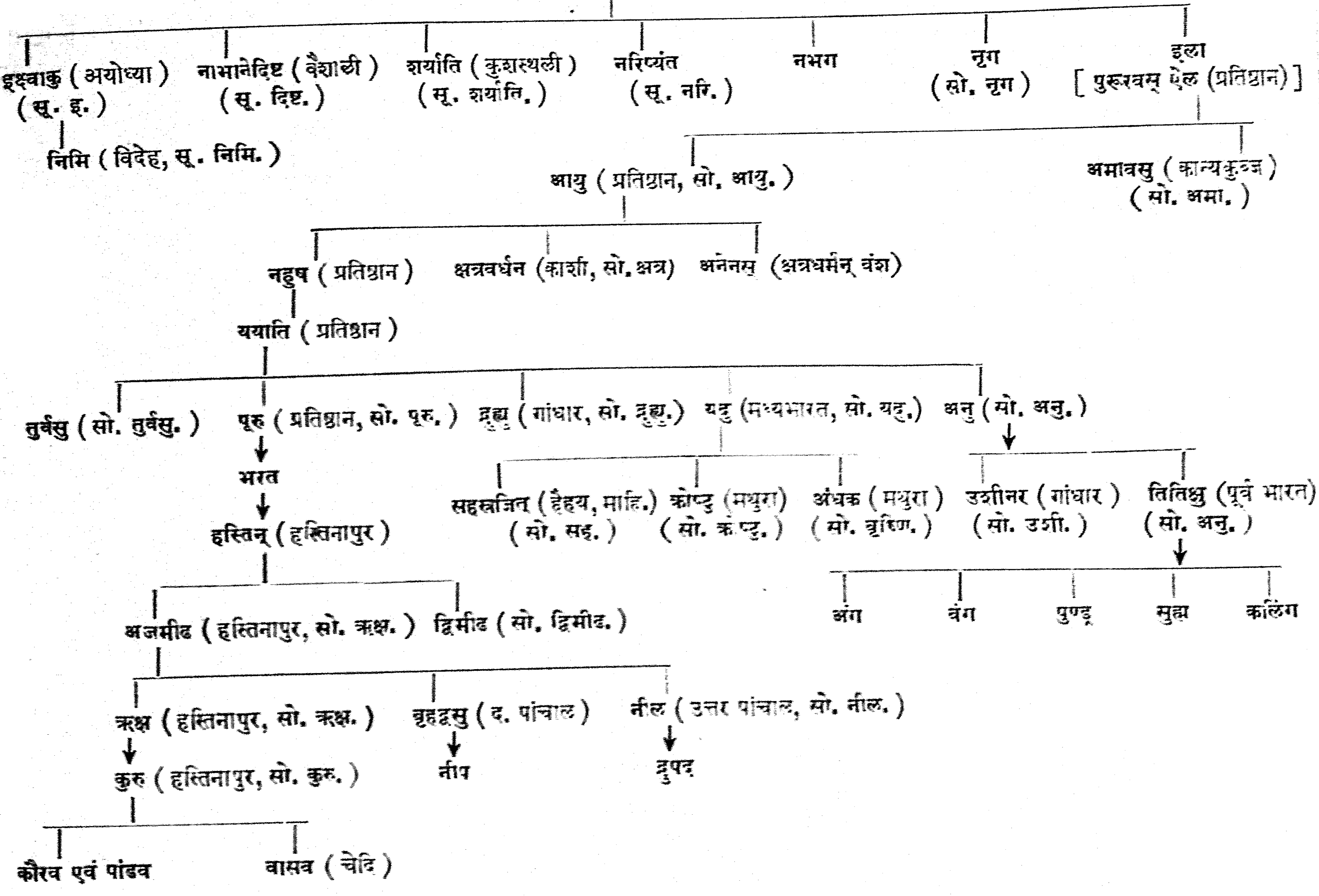
(२) **आयु शाखा (सो. पुरूरवस्.)**--पुरूरवस् के ज्येष्ठ पुत्र आयु के अनेनस्, नहुष, क्षत्रवृद्ध, रम्भ एवं रजि नामक पाँच पुत्र थे। इनमें से अनेनस् के द्वारा आयु नामक स्वतंत्र राजवंश (सो. आयु.) की स्थापना की गयी। आयु के बाकी पुत्रों के द्वारा स्थापित किये गये राजवंश पूरुवंश (सो. पूरु.) सामुहिक नाम से सुविख्यात हुए, जिनमें निम्नलिखित राजवंश प्रमुख थेः- **१. क्षत्रवृद्धवंश**--(सो. क्षत्र), जो आयु राजा के पुत्र क्षत्रवृद्ध के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं काशी देश में राज्य करता था; **२. यदुवंश,** (सो. यदु.) जो आयु राजा के पौत्र यदु के द्वारा स्थापित किया गया था; **३. तुर्वसुवंश** (सो. तुर्वसु.), जो आयुराजा के पौत्र तुर्वसु के द्वारा स्थापित किया गया था; **४. द्रुह्युवंश** (सो. द्रुह्यु.), जो आयुराजा के पौत्र द्रुह्यु राजा के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं गांधार देश में राज्य करता था; **५. अनुवंश** (सो. अनु.) जो आयु राजा के पौत्र अनुराजा के द्वारा स्थापित किया गया था; **६. पूरुवंश**--(सो. पूरु.), जो आयुराजा के पौत्र पूरुराजा के द्वारा स्थापित किया गया था।

(अ) **यदुवंश की उपशाखाएँ**--इस राजवंश की निम्नलिखित उपशाखाएँ प्रमुख थीं:--१. सहस्त्रजित् शाखा (सो. सह.), जो वंश यदुपुत्र सहस्त्रजित् के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं जो 'हैहय' सामूहिक नाम से सुविख्यात था; २. क्रोष्टु शाखा (सो. क्रोष्टु.), जो वंश क्रोष्टु के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं 'यादव' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध था।

(आ) **अनुवंश की उपशाखाएँ**--इस वंश की निम्नलिखित उपशाखाएँ प्रमुख थीं:--१. उशीनर शाखा (सो. उशी.), जो वंश अनुवंश में उत्पन्न उशीनर राजा के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं जिसमें सौवीर, केकय, मद्रक आदि उपशाखाएँ प्रमुख थी; २. तितिक्षु शाखा (सो. तितिक्षु.), जो वंश अनुवंश में उत्पन्न तितिक्षु राजा के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं जिसमें अंग, वंग आदि अनेक उपशाखाएँ समाविष्ट थी।

(इ) **पूरुवंश की उपशाखाएँ**--इस वंश के लोग 'भरत' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे, एवं उनकी निम्नलिखित शाखाएँ प्रमुख थीं:--**१. अजमीढ शाखा** (सो. अज.), जो अजमीढ के द्वारा स्थापित की गयी थी, एवं जिसकी हस्तिनापुर के कुरु (सो. कुरु.), एवं उत्तर पांचाल के नील (सो. नील.) ये दो शाखाएँ प्रमुख थीं; **२. द्विमीढ शाखा**--(सो. द्विमीढ.), जो भरतवंश में उत्पन्न द्विमीढ राजा के द्वारा स्थापित की गयी थी।

सोमवंश के उपर्युक्त राजवंशों की एवं उनकी विभिन्न शाखाओं की जानकारी अकारादि क्रम से नीचे दी गयी हैः--


सूर्य एवं सोमवंशों का विस्तार
वैवस्वत मनु
इक्ष्वाकु (अयोध्या) (सू. इ.)
नाभानेदिष्ट (वैशाली) (सू. दिष्ट.)
शर्याति (कुशस्थली) (सू. शर्याति.)
नरिष्यंत (सू. नरि.)
नभग
नृग (सो. नृग)
इला [पुरूरवस् ऐल (प्रतिष्ठान)]
निमि (विदेह, सू. निमि.)
आयु (प्रतिष्ठान, सो. आयु.)
अमावसु (कान्यकुब्ज) (सो. अमा.)
नहुष (प्रतिष्ठान)
क्षत्रवर्धन (काशी, सो. क्षत्र)
अनेनस् (क्षत्रधर्मन् वंश)
ययाति (प्रतिष्ठान)
तुर्वसु (सो. तुर्वसु.)
पूरु (प्रतिष्ठान, सो. पूरु.)
द्रुह्यु (गांधार, सो. द्रुह्यु.)
यदु (मध्यभारत, सो. यदु.)
अनु (सो. अनु.)
भरत
हस्तिन् (हस्तिनापुर)
सहस्रजित (हैहय, माहि.) (सो. सह.)
क्रोष्टु (मथुरा) (सो. क्रोष्टु.)
अंधक (मथुरा) (सो. वृष्णि.)
उशीनर (गांधार) (सो. उशी.)
तितिक्षु (पूर्व भारत) (सो. अनु.)
अंग
वंग
पुण्ड्र
सुह्म
कलिंग
अजमीढ (हस्तिनापुर, सो. ऋक्ष.)
द्विमीढ (सो. द्विमीढ.)
ऋक्ष (हस्तिनापुर, सो. ऋक्ष.)
बृहद्वसु (द. पांचाल)
नील (उत्तर पांचाल, सो. नील.)
कुरु (हस्तिनापुर, सो. कुरु.)
नीप
द्रुपद
कौरव एवं पांडव
वासव (चेदि)

अजमीढ वंश (सो. अज.)-अजमीढपुत्र बृहदिशु के द्वारा इस वंश की स्थापना हुई, जिसकी संपूर्ण जानकारी छः पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९९.१६६; ह. वं. १.२०. १८-७६; भा. ९.२१-२२; मत्स्य. ४९.७-५९)। इस राजवंश का राज्य दक्षिण पांचाल देश में था, एवं इनकी राजधानी कांपिल्य नगरी में थी। इस राजवंश के संस्थापक अजमीढ राजा को प्रियमेध, ऋक्ष, बृहदिशु एवं नील नामक चार पुत्र थे। इनमें से बृहदिषु ने हस्तिनापुर के मुख्य राज्य की परंपरा आगे चलायी, एवं इस प्रकार वह हस्तिनापुर ऋक्षवंशीय (सो. ऋक्ष.) राजवंश का वंशकर राजा साबित हुआ। इसी वंश से आगे चल कर हस्तिनापुर के कुरुवंश (सो. कुरु.) की उत्पत्ति हुई।

अजमीढ राजा के पुत्रों में से नील ने आगे चल कर क्रिवि देश में उत्तर पांचाल (सो. नील.) राजवंश की स्थापना की।

इस राजवंश की वंशावलि के संबंध में पौराणिक साहित्य में एकवाक्यता नहीं है। इनमें से लगभग पूरि वंशावलि मत्स्य में दी गयी है, जो 'पौराणिक राजवंशों की तालिका' में उद्धृत की गयी है। भागवत में प्राप्त नामावलि में बहुत सारे राजाओं के नाम अनुल्लिखित हैं। गरुड में अंतिम तीन राजाओं के नाम नहीं दिये गये हैं। विष्णु के नामावलि में अंतिम राजा जनमेजय का नाम अप्राप्य है। मत्स्य में काव्य राजा के पुत्र का नाम समर दिया गया है।

अनु वंश—(सो. अनु.) ययाति राजा के पुत्र अनु के द्वारा स्थापित किये गये इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ९९.१२; ब्रह्म. १३. १५-२१; भा. ९.२३.१-३; मत्स्य. ४८.१०)। अनु राजा से आठवीं पीढी में उत्पन्न हुए महामनस् राजा को उशीनर एवं तितिक्षु नामक दो पुत्र थे, जिन्होंने क्रमशः उशीनर एवं तितिक्षु राजवंशों की स्थापना की। उनमें से उशीनर शाखा में से केकय, मद्रक, आदि वंश उत्पन्न हुए, एवं तितिक्षु राजवंश में से अंग, वंग, कलिंग, सुह्म, पुंड्र आदि उपशाखाओं का निर्माण हुआ। अनिल, कोटिक सुरथ, आदि वंश के लोग भी अनुवंशीय ही माने जाते हैं।

इस वंश की जानकारी के संबंध में पौराणिक साहित्य में प्रायः सर्वत्र एकवाक्यता है। केवल ब्रह्म एवं हरिवंश में इस वंश के आद्य संस्थापक का नाम ययातिपुत्र अनु के जगह पूरुवंशीय रौद्राश्व राजा का पुत्र कक्षेयु दिया गया है। ययाति राजा के अन्य एक पुत्र द्रुह्यु के गांधार शाखा का कई हिस्सा कई स्थानों पर अनु का ही मानकर कई पुराणों में दिया गया है। किन्तु वह गलत प्रतीत होता है।

अनेनस् वंश—आयु राजा के अनेनस् नामक पुत्र से 'क्षत्रधर्मन्' सामूहिक नाम धारण करनेवाले एक राजवंश की स्थापना हुई, जिसमें निम्नलिखित राजा समाविष्ट थे:- अनेनस्- क्षत्रधर्मन्-प्रतिक्षत्र- संजय-जय- विजय कृति- हर्यत्त्वत-सहदेव- अदीन- जयत्सेन- संकृति-कृतधर्मन् (ब्रह्मांड. ३.६८.७-११; वायु. ९३.७-११)।

अंधक वंश-यदुपुत्र अंधक राजा के द्वारा प्रस्थापित इस वंश की जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, जहाँ इस वंश की कुकुर, एवं भजमान नामक दो शाखाएँ दी गयीं हैं। उनमें से कुकुर वंश में देवक, उग्रसेन, आदि राजा उत्पन्न हुए थे, एवं भजमान (अंधक) वंश में प्रतिक्षत्र, कृतवर्मन्, कंवलबर्हिष, असमौजस् आदि राजा उत्पन्न हुए थे (ह. वं. १.३४)।

अमावसु वंश—(सो. अमा.) पुरूरवस् के पुत्र अमावसु का वंश सात पुराणों एवं रामायण में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६६.२२-६८; वायु. ९१.५१-११८; ब्रह्म. १०.१३; ह. वं. १.२७; विष्णु. ४.७.२; वा. रा. बा. ३२-३४)। अमावसु स्वयं कान्यकुब्ज देश का राजा था, एवं उसके वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:— अमावसु-भीम-कांचनप्रभ-सुहोत्र-जह्नु।

अग्नि एवं महाभारत में इस वंश की मूल पुरुष अमावसु ही बताया गया है, किंतु इसमें उत्पन्न जह्नु राजा को 'भरतवंशीय' एवं अजमीढ राजा का पुत्र कहा गया है (अग्नि. २७७.१६-१८)। किन्तु यह जानकारी अनैतिहासिक प्रतीत होती है। जह्नु के आठवें पीढ़ी में उत्पन्न विश्वामित्र ऋषि को ऋग्वेद एवं अन्य वैदिक साहित्य में 'भरत' एवं 'भरतर्षभ' जरूर कहा गया है (ऋ. ३. ५३.१२; ऐ. ब्रा. ७.३.५; सां. श्रौ. १५.२५); किंतु वहाँ आद्य विश्वामित्र नहीं, बल्कि भरत राजा सुदास राजा के राजपुरोहित का कार्य करनेवाले आद्य विश्वामित्र के किसी वंशज का निर्देश अभिप्रेत है। इस प्रकार भरत राजा का पुरोहित होने के कारण विश्वामित्र ऋषि स्वयं अमावसुकुलोत्पन्न हो कर भी 'भरतर्षभ' कहलाया।

आनव वंश—अनु राजा के वंश में उत्पन्न हुए बलि आनव के अंग, वंग आदि पाँच पुत्रों ने पूर्व भारत में पाँच स्वतंत्र वंशों की स्थापना की। इन पाँच पुत्रों के

द्वारा स्थापन किये गये राजवंश 'आनव' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे। इन आनव वंशों में अंग, वंग, पुण्ड्र सुह्म एवं कलिंग राजवंश समाविष्ट थे, जिनका राज्य गंजम से ले कर गंगा नदी के त्रिभुज प्रदेश तक फैला हुआ था। कई अभ्यासकों के अनुसार, इन लोगों के द्वारा समुद्र के मार्ग से इन देशों पर आक्रमण किया गया था, एवं इन प्रदेशों में स्थित सौद्युम्न लोगों को उत्कल पहाडियों के प्रदेश में ढकेल दिया था।

आयु वंश—आयु राजा के अनेनस् नामक पुत्र का वंश आयु वंश (सो. आयु.) अथवा अनेनस् वंश नाम से सुविख्यात है (पुरूरवस् देखिये; ह. वं. १.२९)।

उशीनर वंश--(सो. उशी.) ययातिपुत्र अनु के राजवंश की पश्चिमोत्तर भारत में स्थित शाखा उशीनर वंश नाम से सुविख्यात थी (अनु देखिये)।

ऋक्ष वंश--(सो. ऋक्ष.) हस्तिनापुर के हस्तिन् राजा के अजमीढ एवं द्विमीढ नामक दो पुत्र थे। इनमें से अजमीढ एवं उसके पुत्र ऋक्ष का हस्तिनापुर में राज्य करनेवाला वंश ऋक्षवंश नाम से प्रसिद्ध है। इस वंश के चौथे पुरुष कुरुपुत्र जह्नु से हस्तिनापुर में कुरुवंश का राज्य प्रारंभ हुआ। इसी वंश में उत्पन्न वसुपुत्र बृहद्रथ ने आगे चल कर मगधदेश में राज्य करनेवाले मगधवंश की स्थापना की। इन दो उपशाखाओं के अतिरिक्त ऋक्ष शाखा में उत्पन्न हुए राजा ऋक्षवंशीय (सो. ऋक्ष.) माने जाते हैं।

ऐल वंश--पुरूरवस् एवं मनुकन्या इला से उत्पन्न सोमवंश का नामांतर (सोम वंश देखिये)।

करूष वंश (सो. कुरु.) इस वंश की स्थापना कुरुवंश में उत्पन्न वसु राजा के करूष (मत्स्य) नामक पुत्र के द्वारा की गयी थी। इसी वंश के लोगों ने करूष देश की स्थापना की (पूरु देखिये)।

काश्य वंश (सो. क्षत्र.)—काशीदेश में राज्य करने वाले इस राजवंश की स्थापना पुरुरवस् के पौत्र, एवं आयुराजा के पुत्र क्षत्रवृद्ध ने की। इन वंश के पहले चार राजाओं के नाम क्षत्रवृद्ध, सुनहोत्र (सुहोत्र,) काश (काश्य) एवं दीर्घतपस् थे (क्षत्रवृद्ध देखिये)।

कुकुर वंश–यादव वंश की एक उपशाखा, जो यादव-वंशीय अंधक राजा एवं उसके पुत्र कुकुर के द्वारा स्थापित की गयी थी (ब्रह्म. १५; अंधक वंश देखिये)।

कुरुवंश–(सो. पूरु.) हस्तिनापुर के ऋक्ष राजा के वंश में उत्पन्न हुए एक उपशाखा को कुरुवंश कहते थे, जिसमें कुरुराजा से ले कर पाण्डवों तक के राजा समाविष्ट थे। इश वंश की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९९.२१७-२१८; ब्रह्मांड १३. १०८-१२३; ह. वं. ३२. १८०१-१८०२)।

कुशांब वंश (सो. कुरु.)--इस वंश की स्थापना कुरुवंशीय वसु राजा के कुशांब नामक पुत्र के द्वारा की गयी थी। इसी वंश के लोगों ने कौशांबि देश की स्थापना की।

कृष्ण वंश—यादववंश की वृष्णि शाखा में उत्पन्न हुए कृष्ण का सविस्तृत वंश, एवं उसके परिवार की जानकारी हरिवंश में दी गयी है (ह. वं. १.३५)।

क्रोष्टु वंश (सो. क्रोष्टु.)--यदुराजा के पुत्र क्रोष्टु ने मथुरा नगरी के यादव वंश की स्थापना की। इसीके नाम से मथुरा देश का यादव वंश क्रोष्टु नाम से सुविख्यात हुआ। आगे चल कर इसी वंश के ज्यामघ, भजमान, वृष्णि एवं अंधक शाखाओं का निर्माण हुआ (ब्रह्म. १४. १५; यदु देखिये)।

क्षत्रवृद्ध वंश (सो. क्षत्र.)--काशीदेश के इस सुविख्यात राजवंश की स्थापना आयुराजा के पौत्र एवं क्षत्रवृद्ध राजा के पुत्र सुनहोत्र (सुहोत्र) ने की। इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड ३.६६.२; वायु. ९२.६६-७४; ९३. ७-११; ब्रह्म. ११.३२; ह. वं. १.२९; विष्णु. ४.८; भा. ९.१७. २-५)। काशीदेश में राज्य करने के कारण, इस वंश को काश्य नामान्तर भी प्राप्त था। पौराणिक साहित्य में वृद्धक्षत्र राजा का वंश भी प्राप्त है, जो प्रायः क्षत्रवृद्ध वंश से ही मिलता जुलता है।

इस वंश के पहले चार राजाओं के नाम क्षत्रवृद्ध, सुनहोत्र, काश (काश्य) एवं दीर्घतपस् थे। भारतीय युद्ध के काल में इस वंश के सुबाहु एवं अभिभू (सुविभु) काशी देश में राज्य करते थे। भागवत में प्राप्त इस वंश की वंशावलि में काश्य एवं दीर्घतपस् के दरम्यान काशी एवं राष्ट्र इन दो राजाओं के नाम अन्य पुराणों से अधिक पाये जाते हैं।

दिवोदास एवं प्रतर्दन ये सुविख्यात राजा इसी वंश में उत्पन्न हुए थे। किन्तु दिवोदास (प्रथम) से ले कर दिवोदास (द्वितीय) तक के राजाओं का निश्चित काल एवं वंशक्रम समझ में नहीं आता है। हरिवंश, ब्रह्म एवं अग्नि पुराणों में इस वंश के आद्य पुरुष के नाते आयुपुत्र सुहोत्र का नहीं, बल्कि पौरववंशीय सुहोत्र राजा का नाम दिया गया

है। किन्तु इस वंश में उत्पन्न हुए दिवोदास एवं प्रतर्दन राजा पौरववंशीय सुहोत्र राजा से काफ़ी पूर्वकालीन थे, यह बात ध्यान में रखते हुए यह जानकारी अनैतिहासिक प्रतीत होती है।

इस वंश के राजपुरोहित भरद्वाज थे। हैहय राजाओं से इस वंश के लोगों का अनेकानेक पीढ़ियों तक युद्ध चलता रहा।

काशीदेश के राजाओं के निम्नलिखित राजाओं का निर्देश पौराणिक साहित्य में पाया जाता है। किन्तु क्षत्रवृद्धवंश की नामावलि में उनका नाम अप्राप्य है:--१. अजातरिपु; २. धृतराष्ट्र वैचित्र्यवीर्य; ३. सुबाहु; ४. सुवर्णवर्मन्; ५. होमवाहन; ६. ययाति; ७. अंबा का पिता।

क्षत्रवृद्ध के अन्य एक पुत्र का नाम प्रतिक्षत्र था, जिसने भी अपने स्वतंत्रवंश की स्थापना की। प्रतिक्षत्र के इस वंश में उत्पन्न हुए १०-१३ राजाओं का निर्देश पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। किंतु उनका काल एवं राज्य आदि के संबंध में निश्चित जानकारी अप्राप्य है।

चेदि अथवा **चैद्य वंश**--(सो. कुरु.) इस वंश की स्थापना कुरुवंशीय चैद्योपरिचर वसु राजा के प्रत्यग्रह नामक पुत्र के द्वारा की गयी थी। कई अभ्यासकों के अनुसार, इस वंश का संस्थापक विदर्भपुत्र चिदि था। किंतु इन दोनों राजाओं के जीवनचरित्र में 'चैद्य' वंश की जानकारी अप्राप्य है।

इस वंश का सब से सुविख्यात राजा शिशुपाल था, जो कृष्ण एवं पाण्डवों का समकालीन था, निम्नलिखित राजाओं का निर्देश पौराणिक साहित्य में 'चैद्य' नाम से किया गया है, किन्तु चैद्य वंश की वंशावलि में उनका निर्देश अप्राप्य है:--१. दमघोष, जिसके पुत्र का नाम धृष्टकेतु, एवं पौत्र का नाम शिशुपाल सुनीथ था; २. कशु चैद्य ३. कौशिक ४. चित्र; ५. चिदि कौशिकपुत्र; ६. दण्डधार; ७. देवापि ८. शलभ; ९. सिंहकेतु; १०. हरि; ११. जह्नु।

जह्नु वंश--सुविख्यात कुरु वंश का नामान्तर।

ज्यामघ वंश--यादववंश की एक उपशाखा, जो परावृत राजा के पुत्र ज्यामघ के द्वारा स्थापित की गयी थी (भा. ९.२४; वायु. ९५; ब्रह्म. १५.१२-२९; विष्णु. ४.१६; भा. ९.२४)।

तितिक्षु वंश--(सो. अनु.) पूर्व हिंदुस्थान का एक राजवंश, जिसका विस्तार आगे चल कर पूर्व हिंदुस्थान में स्थापित हुए अंग, वंग आदि आनव वंशों में हुआ। अनुवंशीय सम्राट् महामनस् को उशीनर एवं तितिक्षु नामक दो पुत्र थे, जिनमें से तितिक्षु ने पूर्व भारत में स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की।

तुर्वसु वंश--ययाति राजा के तुर्वसु नामक पुत्र के द्वारा इस वंश की स्थापना हुई, जिसमें निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:-- तुर्वसु-वह्नि-गर्भ-गोमानु-त्रिसानु-करंधम मरुत्त। मरुत्त राजा को कोई पुत्र न होने के कारण, उसने पूरुवंशीय राजा दुष्यन्त को गोद में लिया, एवं इस प्रकार तुर्वसु वंश पूरुवंश में सम्मिलित हुआ।

किंतु कई पुराणों में इनकी एक दाक्षिणात्य शाखा का निर्देश प्राप्त है, जिसे पांडव चोल, केरल, आदि राजवंशों की स्थापना का श्रेय दिया गया है (पद्म. उ. २९०.१-२)। पार्गिटर के अनुसार, किसी तुर्वसु राजकन्या के द्वारा इन दाक्षिणात्य वंशों की स्थापना की गई होगी।

इस वंश की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.७४.१-४; वायु. ९९.१-३; भा. ९.२३. १६-१८; मत्स्य. ४८.१-५)। अग्नि में गांधार लोगों को इसी वंश में शामिल किया गया है, किंतु गांधार लोग तुर्वसुवंशीय न होकर द्रुह्युवंशीय थे।

वैदिक साहित्य में कुरुंग को तुर्वसुवंशीय कहा गया है। इसी साहित्य में इसे म्लेंच्छों का राजा कहा गया है। हरिवर्मन् नामक एक तुर्वसुवंशीय राजा का निर्देश कई ग्रंथों में प्राप्त है, किन्तु इसके वंश के वंशावलि में उसका नाम अप्राप्य है।

द्रुह्यु वंश (सो. द्रुह्यु.) ययाति राजा के द्रुह्यु नामक पुत्र के द्वारा स्थापना किये गये इस वंश का विस्तार प्रायः पश्चिमोत्तर भारत में था (ब्रह्म. १३.१४८; ह. वं. १.३२; मत्स्य. ४८.६-१०; विष्णु. ४.१६; भा. ९.२३.१४-१५; ब्रह्मांड. ३.७४.७; वायु. ९९.७-१२)।

द्रुह्यु राजा के बभ्रु एवं सेतु नामक दो पुत्र थे, जिनके अंगारसेतु, गांधार, धृत, प्रचेतस् आदि वंशजों के द्वारा इस वंश का विस्तार हुआ। पौराणिक साहित्य के अनुसार, प्रचेतस् के वंशजों ने भारतवर्ष के उत्तर में स्थित म्लेच्छ देशों में नये राज्यों का निर्माण किया।

इसी वंश का जो वर्णन ब्रह्म एवं हरिवंश में प्राप्त है, वहाँ गांधार के बाद उत्पन्न हुए राजा गलती से अनुवंशीय राजा बतलाये गये है। इन लोगों का निर्देश वैदिक साहित्य में भी प्राप्त हैं।

द्विमीढ वंश--(सो. द्विमीढ.) पूरुवंशीय हस्तिन् राजा के अजमीढ एवं द्विमीढ नामक दो पुत्र थे, जिनमें से अजमीढ हस्तिनापुर का राजा हो गया, एवं द्विमीढ ने स्वतंत्र

राजवंश की स्थापना की, जो द्विमीढ राजवंश नाम से प्रसिद्ध हुआ (ह. वं. १.२०; विष्णु. ४.१९.१३; भा. ९.२१; २७-३०; वायु. ९९.१८४; १९३; मत्स्य. ४९. ७०-७९)। जनमजेय राजा के पश्चात् यह वंश कुरुवंश में शामिल हुआ।

वायु में प्राप्त द्विमीढवंशीय राजाओं के नाम एवं वंशक्रम की तालिका 'पौराणिक राजवंशों की नामावलि' में दी गयी है। मत्स्य एवं हरिवंश में इस राजवंश की स्थापना अजमीढ राजा के द्वारा की जाने का निर्देश गलती से किया गया है। विष्णु में द्विमीढ राजा को भल्लाट राजा का पुत्र कहा गया है, जो निर्देश भी अनैतिहासिक प्रतीत होता है।

वायु एवं विष्णु में प्राप्त इस वंश की नामावलि में उन्नीस राजाओं के नाम प्राप्त हैं। विष्णु, भागवत एवं गरुड में इनमें से सुवर्मन्, सार्वभौम, महत्पौरव एवं रुक्मरथ राजाओं के नाम अप्राप्य हैं। भागवत में उग्रायुध राजा को नीप कहा गया है। इस राजा ने भल्लाटपुत्र जनमेजय राजा का वध कर दक्षिण पांचाल देश की राजगद्दी प्राप्त की। पश्चात् भीष्म ने उग्रायुध राजा का वध किया।

नीप वंश—(सो. पूरु.) इस वंश की स्थापना पार राजा के पुत्र नीप राजा ने की। इस वंश में उत्पन्न हुए जनमेजय दुर्बुद्धि नामक कुलांगार राजा का उग्रायुध ने वध किया, एवं इस प्रकार नीपवंश नष्ट हो कर द्विमीढवंश में सम्मीलित हुआ (मत्स्य. ४९; ह. वं. १.२०)।

नील वंश—उत्तर पांचाल देश का एक सुविख्यात राजवंश, जो अजमीढपुत्र नील के द्वारा स्थापित किया गया था। इस वंश में उत्पन्न हुए नील से लेकर पृषत् तक के सोलह राजाओं का निर्देश पुराणो में अनेक स्थानों पर प्राप्त है (वायु. ९३.५५-१०४; ब्रह्म. १३.२-८; ५०-६३; ८०-८१; ह. वं. १.२०.३१-३२; विष्णु. ४. १९; भा. ९.२०-२१; म. आ. ८९-९०; मत्स्य. ४९. १-४२)। इस वंश के भर्म्याश्व राजा को 'पांचाल' सामूहिक नाम धारण करनेवाले पाँच पुत्र थे, इसी कारण इनके राज्य को 'पांचाल' नाम प्राप्त हुआ।

यह राजवंश बहुत ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्यों कि, इस वंश में उत्पन्न हुए मुद्गल, वध्र्यश्व, दिवोदास, सुदास, च्यवन, सहदेव, सोमक, पिजवन आदि राजाओं का निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है।

इस वंश का अंतिम राजा द्रुपद था, जिसे जीत कर द्रोण ने उत्तर पांचाल देश का राज्य अपने आधीन किया, एवं दक्षिण पांचाल देश का राज्य उसे दे दिया। इसी वंश की एक शाखा (अहल्या-शतानंद) आगे चल कर 'आंगिरस ब्राह्मण' बन गयी।

पुरूरवस् वंश—पुरूरवस् राजा एवं मनुकन्या इला से उत्पन्न 'सोमवंश' का नामांतर। पुरूरवस् से ले कर आयु, नहुष, ययाति, एवं यदु तक का राजवंश पुरूरवस् वंश (सो. पुरूरवस्.) नाम से सुविख्यात है। पुरूरवस् से ले कर आयुपुत्र अनेनस् तक का वंश 'आयु वंश' (सो. आयु.) नाम से सुविख्यात है।

पूरु वंश—(सो. पूरु.) ययातिपुत्र पूरु से उत्पन्न हुआ वंश पूरु वंश नाम से सुविख्यात है। इस वंश के तीन प्रमुख भाग माने जाते हैं:—१. सो. पूरु, जिसमें पूरु से ले कर अजमीढ तक के राजा समाविष्ट थे; २. सो. ऋक्ष, जिसमें अजमीढ से ले कर कुरु तक के राजा समाविष्ट थे; ३. सो. कुरु, अथवा सो जह्नु, जिसमें कुरुपुत्र जह्नु से ले कर पाण्डवों तक के राजा समाविष्ट थे। इन तीनों वंशों की जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ९३.५५-१०४; ब्रह्म. १३.२-८; ५०-६३; ८०-८१; ह. वं. १. २०.३१-३२; विष्णु. ४.१९; भा. ९.२०-२१; म. आ. ८९-९०; मत्स्य. ४९.१-४३)।

(१) सो. पूरु. वंश--इस वंश के मतिनार राजा तक सभी पुराणों में एकवाक्यता है। किन्तु महाभारत में प्राप्त वंशावलि कुछ अलग ढँग से दी गयी है। वहाँ रौद्राश्व एवं रुचेयु राजाओं के नाम अप्राप्य है, एवं अहंयाति तथा मतिनार राजाओं के बीच निम्नलिखित दस राजाओं का समावेश किया गया है:—१. सार्वभौम; २. जयत्सेन; ३. अवाचीन; ४. अरिह; ५. महाभौम; ६. अयुतानयिन्; ७. अक्रोधन; ८. देवातिथि; ९. ऋच्; १०. ऋक्ष। किन्तु महाभारत के द्वारा दी गयी यह नामावलि अनैतिहासिक प्रतीत होती है, क्यों कि, वहाँ इन राजाओं के द्वारा अंग, कलिंग एवं विदर्भ राजकन्याओं के साथ विवाह करने का निर्देश प्राप्त है, जो राज्य इस काल में अस्तित्व में नहीं थे। इससे प्रतीत होता है कि, इन राजाओं को पूरुवंश के तृतीय कालविभाग (सो. कुरु) में सुरथ एवं भीमसेन के दरम्यान अंतर्भूत करनेवाली पौराणिक परंपरा सही प्रतीत होती है।

तंसु एवं दुष्यंत के दरम्यान उत्पन्न हुए राजाओं की नामावलि महाभारत एवं पौराणिक साहित्य में अपूर्ण एवं अस्पष्ट रूप से प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में दुष्यंत राजा की मातामही का नाम इलिना दिया गया है।

महाभारत में उसी इलिना का निर्देश 'इलिन (अनिल)' राजा के नाम से किया गया है।

(२) सो. ऋक्ष. वंश—हस्तिन् राजा को अजमीढ एवं द्विमीढ नामक दो पुत्र थें। इसमें से अजमीढ एवं ऋक्ष से ले कर कुरु तक का वंश ऋक्ष वंश (सो. ऋक्ष) नाम से सुविख्यात था। इस शाखा के राजाओं की नामावलि के संबंध में महाभारत एवं पुराणों में एकवाक्यता है, किन्तु फिर भी इन दोनों में प्राप्त नामावलि अपूर्ण सी प्रतीत होती है। विशेष कर ऋक्ष राजा के पूर्वकालीन एवं उत्तरकालीन राजाओं के संबंध में वहाँ प्राप्त जानकारी अत्यंत संदिग्ध प्रतीत होती है। आगे चल कर ऋक्ष के वंश से ही कुरुवंश का निर्माण हुआ।

(३) सो. कुरु. वंश—कुरुवंश की स्थापना करनेवाले कुरु राजा को परिक्षित्, जह्नु एवं एवं सुधन्वन् नामक तीन पुत्र थे। इनमें से परिक्षित् राजा को जनमेजय (प्रथम) नामक पुत्र, एवं श्रुतसेन एवं भीमसेन नामक पौत्र थे। परिक्षित् राजा के इन पौत्रों का निर्देश राजा के नाते कहीं भी प्राप्त नहीं है। इससे प्रतीत होता है कि, राजा के ज्येष्ठ पुत्र हो कर भी उनका राज्याधिकार नष्ट हो चुका था। इस प्रकार परिक्षित् (प्रथम) के पश्चात् जह्नु राजा के पुत्र सुरथ हस्तिनापुर का राजा बन गया, एवं उसी राजा से कुरुवंश को कुरु नाम प्राप्त हुआ। सुरथ से ले कर अभिमन्यु तक के राजाओं के संबंध में पौराणिक साहित्य में काफ़ी एकवाक्यता है।

कुरु राजा का तृतीय पुत्र सुधन्वन् के वंशज वसु ने मगध एवं चैद्य राजवंशों की स्थापना की (मगध वंश देखिये)।

पौराणिक साहित्य में निम्नलिखित राजाओं को कौरव कहा गया है, किन्तु कौरव वंशावलि में उनका नाम अप्राप्य है:— १. अभिप्रतारिन् काक्षसेनि; २. उच्चैःश्रवस्; ३. कौपेय; ४. पौरव; ५. बाह्निक प्रातिपीय; ६. ब्रह्मदत्त चैकितानेय।

प्रतिक्षत्र वंश—इस वंश की स्थापना क्षत्रवृद्धपुत्र प्रतिक्षत्र राजा के द्वारा हुई थी (क्षत्रवृद्ध देखिये)। पौराणिक साहित्य में इस वंश का निर्देश अनेक स्थानों पर प्राप्त है (भा. ९.१७.१६-१८; वायु. ९३.७-११; ब्रह्म. ११.२७-३१; ह. वं. १.२९.१-५)।

बालेय क्षत्रिय वंश—बलि आनव राजा के द्वारा पूर्व भारत में स्थापना किये गये अंग, वंग आदि वंशों से उपन्न लोगों का सामुहिक नाम (अनु वंश देखिये)।

बभ्रु वंश—बभ्रु दैवावृध नामक यादवराजा के द्वारा स्थापन किये गये इस वंश के नृप भोज मर्तिकावतिक नाम से सुविख्यात थे (ब्रह्म. १'.३९-४५)। यह वंश यादव-वंशांतर्गत क्रोष्टु वंश की ही उपशाखा माना जाता था (ह. वं. १.३७)।

भजमान वंश—(सो. क्रोष्टु.) यादव राजा अंधक-पुत्र भजमान के द्वारा स्थापित इस वंश को अंधक वंश नामान्तर भी प्राप्त था (यदु देखिये; ब्रह्म. १५.३२-४५; विष्णु. ४.१४; भा. ९.२४)।

भरत वंश—(सो. पूरु.) पूरुवंशीय सम्राट् भरत राजा के वंश में उत्पन्न हुई पूरुवंश की सारी शाखाएँ भरत-वंशीय कहलाती थी। इन उपशाखाओं में अजमीढ शाखा, द्विमीढ़ शाखा एवं उत्तर एवं दक्षिण पांचाल के पूरुवंशीय राजवंश समाविष्ट थे (वायु. ९९.१३४; मत्स्य. २४.७१; ब्रह्म. १३.५७)।

भोज वंश—(सो. सह.) हैहय वंश की पाँच उप-शाखाओं में से एक। अन्य चार उपशाखाओं के नाम वीतिहोत्र, शर्याति, अवंती एवं तुण्डिकेर थे (हैहय एवं बभ्रु वंश देखिये)।

मगध वंश-इस राजवंश की स्थापना कुरुपुत्र सुधन्वन् राजा के वंश में उत्पन्न हुए वसु राजा के द्वारा की गयी थी। वसुराजा की मृत्यु के पश्चात् उसका पूर्वभारत में स्थित साम्राज्य उसके निम्नलिखित पुत्रों में निम्नप्रकार बाँट दिया गया :— १. बृहद्रथ (मगध); २. प्रत्यग्रह (चेदि); ३. कुशांब (कौशांबी); ४. यदु (करूष); ५. मावेल्ल (मत्स्य)।

मगध राजवंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (विष्णु. ४.१९.१९; वायु. ९९.२१७-२१९; भा. ९.२२. ४९; ह वं. १.३२; ८८.९८)। इनमें से ब्रह्म की वंशावलि बृहद्रथ राजा के पौत्र ऋषभ राजा तक दी गयी है। विष्णु एवं भागवत में जरासंध को बृहद्रथ राजा का पुत्र कहा गया है। किन्तु वस्तुतः वह बृहद्रथ राजा की तेरहवी पीढ़ी में उत्पन्न हुआ था।

यदु वंश अथवा **यादव वंश**—इस सुविख्यात राज-वंश का प्रारंभ यदुपुत्र क्रोष्टु के द्वारा हुआ। कालक्रम की दृष्टि से इस वंश के कालखण्ड माने जाते हैं:— १. क्रोष्टु से सात्वत तक; २. सात्वत से प्रारंभ होनेवाला बाकी उर्वरित भाग।

(१) क्रोष्टु से सात्वत तक—इस वंश की जानकारी बारह पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९६.२५५; ब्रह्मांड. ३.

७०.१४; वायु. ९४-९६; ब्रह्म. १३.१५३-२०७; ह. वं. १.३६; २. ३७-३८; पद्म. सृ. १२-१३; विष्णु. ४. १२; भा. ९.२३.३०-३४)। महाभारत मेंभी इस वंश की जानकारी प्राप्त है (म. अनु. २५१.२६)।

क्रोष्टु से ले कर परावृत्त तक के राजाओं के संबंध में सभी पुराणों में प्रायः एकवाक्यता है। फिर भी कई पुराणों में पृथुश्रवस्, उशनस्, रुक्मकवच, एवं निर्वृत्ति राजाओं के पश्चात् एक पीढ़ी ज्यादा दी गयी है। परावृत्त राजा को दो पुत्र थे, जिनमें से ज्यामघ नामक उनका कनिष्ठ पुत्र यदुवंश का वंशकर राजा साबित हुआ। उसने एवं उसके पुत्र विदर्भ ने सुविख्यात विदर्भराज्य की स्थापना की। विदर्भराजा के ज्येष्ठपुत्र रोमपाद ने विदर्भ का राज्य आगे चलाया। उसी के वंश में क्रथ (भीम), देवक्षत्र, मधु आदि राजा उत्पन्न हुए, एवं उसी वंश में उत्पन्न हुए सात्वत राजा ने इस वंश का वैभव चरम सीमा पर पहुँचाया। मधु से ले कर सात्वत तक के राजाओं के नामावलि के संबंध में पुराणों में एकवाक्यता नहीं है।

विदर्भ राजा के द्वितीय पुत्र का नाम कौशिक था, जिसने चेदि देश में नये राजवंश की स्थापना की।

विदर्भ राजा के तृतीय पुत्र का नाम लोमपाद था, जिसके वंश में उत्पन्न हुए तेरह राजाओं की नामावलि भागवत एवं कूर्म में निम्न प्रकार दी गयी हैः-१ लोमपाद; २. बभ्रु; ३. आहृति; ४. श्वेत; ५. विश्वसह; ६. कौशिक; ७. सुयंत; ८. अनल; ९. श्वेनि; १०. द्युतिमंत; ११. वपुष्मन्त; १२. बृहन्मेधस्; १३. श्रीदेव; १४. वीतरथ (भा. ९.२४.१-२)। किन्तु इस वंश का राज्य कहाँ था, इस संबंध में कोई भी जानकारी वहाँ नहीं दी गयी है।

(२) **सात्वत के पश्चात्**—(सो. वृष्णि.) सात्वत राजा ने इक्ष्वाकुवंशीय शत्रुघातिन् राजा से मथुरा नगरी को जीत कर वहाँ अपना राज्य प्रस्थापित किया। सात्वत राजा को भजमान, देवावृध, वृष्णि, अंधक नामक चार पुत्र थे, जिनके द्वारा प्रस्थापित किये गये वंश वृष्णि (सो. वृष्णि.) सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। इस वंश की निम्नलिखित शाखाएँ थीः-

(अ) **भजमान शाखा**—भजमान एवं उसके वंश में उत्पन्न हुए अन्य राजा मथुरा में ही राज्य करते थें।

(आ) **देवावृध शाखा**—देवावृध एवं उसका पुत्र बभ्रु ने मार्तिकावत नगरी में राज्य करनेवाले भोज राजवंश की स्थापना की।

(इ) **अंधक शाखा**—अंधक राजा को कुल चार पुत्र थें, जिनमें कुकुर एवं भजमान प्रमुख थें। इन दो पुत्रों ने क्रमशः कुकुर एवं अंधक नामक राजवंशों की स्थापना की। ये दोनों वंश मथुरा प्रदेश में राज्य करते थे, एवं उनमें क्रमशः कंस एवं कृष्ण उत्पन्न हुए थें।

(४) **वृष्णि शाखा (क्रोष्टु शाखा)**--वृष्णि राजा को सुमित्र (अनमित्र), युधाजित्, देवमीढुष एवं अनमित्र (माद्रीपुत्र) नामक चार पुत्र थें, जिन्होंने चार स्वतंत्र वंशों की स्थापना की। इन वंशों में उत्पन्न हुए प्रमुख यादव निम्न प्रकार थें :—१. **सुमित्र शाखा**-सत्राजित्, भंगकार, २. **युधाजित् शाखा**—श्वफल्क, अक्रूर; ३. **देवमीढुष शाखा**--वसुदेव, बलराम एवं कृष्ण; ४. **अनमित्र (माद्री-पुत्र) शाखा**--शिनि, युयुधान सात्यकि, असंग आदि।

अन्य शाखाएँ—उपर्युक्त यादव राजाओं में से शूर-पुत्र वसुदेव का वंश वसुदेव वंश (सो. वसु.) नाम से सुविख्यात है। अंधकवंश ही एक उपशाखा विदूरथवंश (सो. विदू.) नाम से सुविख्यात हैं, जिसमें विदूरथपुत्र राजाधिदेव से ले कर तमौजस तक के राजा समाविष्ट थे।

वायु एवं मत्स्य में यादववंश की क्रमशः ग्यारह, एवं एक सौ शाखाएँ दी गयी है (वायु. ९६.२५५; मत्स्य. ४७.२५-२८)।

इन शाखाओं का विस्तार केवल मथुरा में ही नहीं, बल्कि दक्षिण हिंदुस्थान में भी हुआ था (ह. वं. २. ३८.३६-५१)।

यदु राजा का अन्य एक पुत्र सहस्रजित् ने सुविख्यात हैहयवंश की स्थापना की, जो यादववंश की ही एक शाखा मानी जाती है (हैहय वंश देखिये)।

"पौराणिक वंशों की तालिका" में दी गयी यादववंश की जानकारी विष्णुपुराण का अनुसरण कर दी गयी है। अन्य पुराणों में प्राप्त जानकारी वहाँ कोष्ठक में दी गयी है।

ययाति वंश--ययाति राजा के यदु, पूरु, तुर्वसु, द्रुह्यु, अनु आदि पाँच पुत्रों के द्वारा उत्पन्न हुए राज-वंश 'ययाति वंश' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे (वायु. ९३.१५-२८)।

रजि वंश—आयु राजा के रजि नामक पुत्र के द्वारा उत्पन्न हुआ वंश 'रजि वंश' नाम से सुविख्यात है। आगे चल कर इसी वंश से 'राजेय क्षत्रिय' नामक लोकसमूह का निर्माण हुआ (वायु. ९२.७४-९९)।

रम्भ वंश--आयुपुत्र रम्भ के द्वारा स्थापन किया गया वंश 'रम्भवंश' नाम से सुविख्यात है (भा. १०.१७.१०)। इस वंश के संबंध में अन्य कोई भी जानकारी उपलब्ध नहीं है।

वसुदेव वंश (सो. वसु.)—यादववंशांतर्गत देवमीढुष शाखा में से शूरपुत्र वसुदेव राजा का वंश 'वसुदेव वंश' नाम से सुविख्यात है (ब्रह्म. १५.३०)।

वासव वंश--कुरुवंशीय सुधन्वन् राजा के वसु नामक पुत्र ने पूर्व हिंदुस्थान में स्थित यादवों का चेदि साम्राज्य जीत लिया, एवं उसे अपने पाँच पुत्रों में बाँट दिया। वे पाँच वंश वासव वंश नाम से सुविख्यात थे।

विदूरथ वंश (सो. विदू.)--सात्वतवंशांतर्गत भजमान शाखा में से विदूरथपुत्र राजाधिदेव से ले कर तमोजस् तक के राजा विदूरथवंशीय (सो. विदू.) कहलाते हैं (यदु देखिये)।

विष्णु वंश--यादववंशीय कृष्णवंश को वायु में विष्णु-वंश कहा गया है (वायु. ९६-९८)।

वृष्णि वंश--यादववंशांतर्गत सात्वत राजा के वृष्णि नामक पुत्र का वंश वृष्णि नाम से सुविख्यात है (ब्रह्म. १४.२-१५;३१; ह. वं. १.३४; भा. ९.२४.१२-१८; यदु देखिये)।

सहस्रजित् वंश (सो. सह.)--यदु राजा के पुत्र सहस्रजित् के द्वारा प्रस्थापित किये गये 'हैहय वंश' का नामान्तर (हैहय वंश देखिये)।

सात्वत वंश--यदुवंशांतर्गत इस वंश शाखा का संस्थापक सात्वत माना जाता है। इस वंश की भजमान, देवावृध, अंधक एवं वृष्णि नामक चार शाखाएँ मानी जाती हैं (म. शां. ३३६.३१-४९)। सात्वत धर्म की जानकारी भी महाभारत में प्राप्त है।

हैहय वंश (सो. सह.)--यदुराजा के सहस्रजित् नामक पुत्र के द्वारा स्थापित किये गये इस राजवंश की जानकारी पौराणिक साहित्य में सर्वत्र प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६९.३; वायु. ९४.१-१०; विष्णु. ४.११.३; भा. ९. २३.२०-२८; ब्रह्म. १३.१५४; ह. वं. १. ३३)। इस वंश का मुख्य राज्य मालवा में नर्मदा नदी के किनारे माहिष्मती नगरी में था, एवं उनकी वीतिहोत्र, शर्याति, भोज, आनर्त (अवंती) एवं तुण्डिकेर (कुण्डिकेर) ये पाँच शाखाएँ प्रमुख थी। हरिवंश एवं ब्रह्म के अनुसार, भरत लोगों का अंतर्भाव भी 'हैहय समूह' में किया जाता था।

इनमें से प्रमुख राजा का नाम तालजंघ था। किन्तु आगे चल कर वह सारे हैहय वंश की उपाधि बन गयी। भार्गव ऋषि इन लोगों के पुरोहित थे, एवं इनका उपास्य दैवत दत्त आत्रेय था। इसके अतिरिक्त वसिष्ठ, पुलस्त्य आदि ऋषियों से भी इनका घनिष्ठ संबंध था।

परशुराम जामदग्न्य से इसका प्राणांतिक शत्रुत्व हुआ था, जिसने इन्हें जड़मूल से उखाड़ देने की कोशिश की थी। किन्तु अन्त में अपने इन प्रयत्नों में परशुराम असफल हुआ, एवं इनका अस्तित्व अबाधित रहा।

इस वंश के निम्नलिखित राजा विशेष प्रख्यात थेः—कार्तवीर्य अर्जुन, एकवीर, कुमार, शशिबिंदु, भृत, शंख। इसी वंश में उत्पन्न हुआ वीतहव्य राजा राज्यभ्रष्ट हो कर भृगुवंश का एक श्रेष्ठ ऋषि बन गया। इसी कारण पौराणिक साहित्य में उसे राजा न समझ कर उसके वंश-शाखा की कोई भी जानकारी वहाँ नहीं दी गयी है। महाभारत में वीतहव्य से ले कर शौनक तक के वंश की जानकारी प्राप्त है। कई अभ्यासकों के अनुसार, वीतहव्य ही हैहयवंश का अंतिम राजा माना गया है।

(३) स्वायंभुव मनु वंश (स्वा.)

प्राचीन भारतखण्ड के ब्रह्मावर्त नामक प्रदेश में स्थित बर्हिष्मती नगरी का सर्वाधिक प्राचीन राजा स्वायंभुव मनु था, जिसका वंश 'स्वायंभुव मनु वंश' नाम से सुविख्यात है। इस वंश की उत्तानपाद एवं प्रियव्रत नामक दो शाखाएँ प्रमुख मानी जाती हैं।

उत्तानपाद वंश-(स्वा. उत्तान.)--स्वायंभुव मनु के उत्तानपाद नामक ज्येष्ठ पुत्र के द्वारा प्रस्थापित किये गये उत्तानपाद वंश की सविस्तृत जानकारी भागवत में प्राप्त है (भा. ४.८)। वहाँ हविर्धान राजा के पुत्रों तक इस वंश की जानकारी दी गयी है। इस वंश में ध्रुव, पृथु वैन्य आदि सुविख्यात राजा उत्पन्न हुए थे।

नाभि वंश--(नाभि.) स्वायंभुव मनुपुत्र प्रियव्रत राजा के कनिष्ठ पुत्र नाभि का स्वतंत्र वंश विष्णुपुराण में दिया गया है (विष्णु. २.१)।

प्रियव्रत वंश-(स्वा. प्रिय.)--स्वायंभुव मनु के कनिष्ठ पुत्र प्रियव्रत के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस

वंश की सविस्तृत जानकारी भागवत में दी गयी है (भा. ५.१; विष्णु. २.११)। प्रियव्रत राजा के कुल सात पुत्र थें, जिनमें उसने अपने सप्तद्वीपात्मक पृथ्वी का राज्य विभाजित कियाः— १. आग्नीध्र (जंबुद्वीप); २. इध्मजिह्व (प्लक्षद्वीप); ३. यज्ञबाहु (शाल्मलिद्वीप); हिरण्यरेतस् (कुशद्वीप); ५. घृतपृष्ठ (क्रौंचद्वीप); ६. मेधातिथि (शाकद्वीप); ७. वीतिहोत्र (पुष्करद्वीप)।

प्रियव्रत राजा के ज्येष्ठपुत्र आग्नीध्र का वंश भी भागवत में दिया गया है, जहाँ उसके पुत्रों के नाम निम्न प्रकार बताये गये हैः—१. इलावृत; २. रम्यक; ३. हिरण्य; ४. कुरु; ५ भद्राश्व; ६. किंपुरुष; ७. नाभि।

(४) भविष्य वंश (भविष्य.)

कलियुग का प्रारंभ—पौराणिक साहित्य के अनुसार, भारतीय युद्ध के अंतिम दिन त्रेतायुग की समाप्ति हो कर कलियुग का प्रारंभ हुआ। डॉ. फ्लीट के अनुसार, इस युग का प्रारंभ भारतीय युद्ध के अंतिम दिन नहीं, बल्कि कृष्ण के निर्याण के दिन हुआ था, जिसका काल भारतीय युद्ध के बीस साल बाद माना जाता है। इसी वर्ष में युधिष्ठिर ने राज्यत्याग कर हस्तिनापुर का राज्य अपने पौत्र परिक्षित को दे दिया। इस प्रकार परिक्षित के राज्यारोहण से ही कलियुग का प्रारंभ होता है, ऐसा डॉ. फ्लीट का अभिमत है। किन्तु पौराणिक साहित्य में सर्वत्र भारतीय युद्ध का अंतिम दिन ही कलियुग का प्रारंभ माना गया है।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त प्राचीन भारतीय राजाओं की वंशावलियाँ भारतीय युद्ध से ही समाप्त होती हैं। इस युद्ध के उत्तरकाल में भारतवर्ष में उत्पन्न हुए राजाओं की जानकारी केवल मत्स्य, वायु, ब्रह्मांड, विष्णु, भागवत एवं गरुड पुराणों में ही केवल दी गयी है।

यह जानकारी पौराणिक साहित्य में भूतकाल में उत्पन्न हुए राजाओं के नाते नहीं, बल्कि भविष्य में उत्पन्न होनेवाले राजाओं के भविष्यवाणी के रूप में दी गयी है, जिसका प्रणयन श्री व्यास के द्वारा किया गया है। इसी कारण, पौराणिक साहित्य में प्राप्त कलियुग के राजाओं की जानकारी को 'भविष्य वंश' सामूहिक नाम दिया गया है।

भविष्य राजवंशों का मूल स्रोत—पार्गिटर के अनुसार कलियुगीन राजाओं की पुराणों में प्राप्त बहुतसारी जानकारी सर्वप्रथम 'भविष्य पुराण' में ग्रथित की गयी थी, जिसकी रचना दूसरी शताब्दी के पश्चात् मगध देश में पाली अथवा अर्धमागधी भाषा में, एवं खरोष्ट्री लिपि में दी गयी थी। भविष्य पुराण के इस सर्वप्रथम संस्करण की रचना आंध्र राजा शातकर्णि के राज्यकाल में (द्वितीय शताब्दी का अंत) की गयी थी। भविष्यपुराण के इस आद्य संस्करण में तत्कालीन सूत एवं मगध लोगों में प्रचलित राजवंशों के सारे इतिहास की जानकारी ग्रथित की गयी थी। कालोपरांत भविष्य पुराण के इसी संस्करण में उत्तरकालीन राजवंशों की जानकारी ग्रथित की जाने लगी, एवं इस प्रकार इस एक ही ग्रंथ के अनेकानेक संस्करण उत्तरकाल में उपलब्ध हुए।

भविष्य पुराण के इन अनेकानेक संस्करणों को आधारभूत मान कर विभिन्न पुराणों में प्राप्त भविष्यवंशों की जानकारी ग्रथित की गयी है। इस प्रकार मत्स्य पुराण में ई. स. ३ री शताब्दी के मध्य में उपलब्ध भविष्यपुराण के संस्करण का आधार लिया गया है, एवं उसमें आंध्र राजवंशों के अधःपतन के समय तक के राजाओं की जानकारी दी गयी है।

इसी प्रकार वायु एवं ब्रह्मांड में ३ री शताब्दी के मध्य में उपलब्ध भविष्य पुराण के संस्करण का आधारग्रंथ के नाते उपयोग किया हुआ प्रतीत होता है। इसी कारण इन दोनों ग्रंथों में चंद्रगुप्त (प्रथम) के अंत तक (इ. स. ३२०) के राजवंशों का निर्देश पाया जाता है। इस प्रकार इन ग्रंथों में प्रयाग, साकेत, मगध इन देशों पर गुप्त राजाओं का आधिपत्य होने का निर्देश प्राप्त है, एवं इन देशों के परवर्ती प्रदेश पर नाग, मणिधान्य लोगों का राज्य होने का निर्देश स्पष्टरूप से प्राप्त है। समुद्रगुप्त के भारतव्यापी साम्राज्य का निर्देश वहाँ कहीं भी प्राप्त नहीं है, जिससे इन पुराणों की रचना का काल निश्चित हो जाता है।

विष्णु एवं भागवत पुराण में चतुर्थ शताब्दी के अंत में उपलब्ध भविष्य पुराण का उपयोग किया गया है, एवं उसका रचनाकाल नौवीं शताब्दी माना जाता है। गरुडपुराण में भी इसी भविष्य पुराण का उपयोग किया गया है। किन्तु इस पुराण का रचनाकाल अनिश्चित है।

महत्त्व—भविष्य वंश में निर्दिष्ट राजवंशों में से आंध्र, मगध, प्रद्योत, शिशुनाग आदि वंशों की ऐतिहासिकता प्रमाणित हो चुकी है। इस कारण इन वंशों की पौराणिक

साहित्य में प्राप्त जानकारी इतिहासाध्यायन की दृष्टि से काफ़ी महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। किन्तु अन्य कई वंश ऐसे भी हैं, जिनकी ऐतिहासिकता अनिश्चित एवं विवादग्रस्त है।

भविष्य पुराण का उपलब्ध संस्करण--भविष्यपुराण के उपरिर्निर्दिष्ट संस्करणों में से कोई भी संस्करण आज उपलब्ध नहीं है। इस ग्रन्थ के आज उपलब्ध संस्करण में बहुत सारी प्राचीन ऐतिहासिक सामग्री लुप्त हो चुकी है, एवं जो भी सामग्री आज उपलब्ध है, उसमें मध्ययुगीन एवं अर्वाचीन कालीन अनेकानेक राजाओं की जानकारी भविष्यकथन के रूप में इतनी भद्दी एवं अनैतिहासिक पद्धति से दी गयी है कि, इतिहास के नाते उसका महत्त्व नहीं के बराबर है। उपलब्ध भविष्य पुराण के प्रतिसर्ग पर्व में निर्दिष्ट किये गये मध्ययुगीन एवं अर्वाचीन प्रमुख राजाओं कि एवं अन्य व्यक्तियों की नामावलि निम्नप्रकार है --अकबर (४.२२); आदम (१.४); इत्र (२.५); खुर्दक (४.२२); गंगासिंह (३. ४-५; ४.१); गजमुक्ता (३.६); गववर्मन् (४.४); गोविंदशर्मन् (४.७); गोरख (३.२४; ४.१२); घोरवर्मन् (४.४); चंडिका (३.१५); चतुर्वेदिन् (२.६; ४.२१); चन्द्रकान्ति (३.३२); चंद्रगुप्त चपहानि (४. २); चंद्रदेय (४.३); चंद्रभट्ट (३.३२); चंद्रराय (४. २); चरउ (२.४) चामुंड (३.९); चित्रगुप्त (४. १८); चित्रिणी (४.७); चूडामणि (२.१२); जयचंद्र (३.६; ४.३); जयदेव (४.९.३४-६६;); जयंत (३.२३); जयपाल (४.३.); जयवान् (३.४१); जयशर्मन् (३.५); जयसिंह (४.२); जूज (१.२५); तालन (३.७); दुर्मुख (८-९); नादर (४.२२); न्यूह (१.५); पद्मिनी (३.३०); पृथ्वीराज (३.५-६); प्रमर (१.६; ४.१); बाबर (४.२२); बुद्धसिंह (२. ७); मध्वाचार्य (४.८; १९); महामत्स्य (४.२२); महामद (३.३); लार्डल (४.२०); विक्टावती (४. २२); शंकराचार्य (४.२२)।

उपर्युक्त व्यक्तियो में से जूज, महामद एवं विकटावती क्रमशः जीझस खाइस्ट, महंमद पैगंबर, महारानी व्हिक्टोरिया के संस्कृत रूप हैं।

भविष्यवंश—पौराणिक साहित्य में प्राप्त भविष्यवंशों की जानकारी अकारादि क्रम से नीचे दी गयी है:—

आंध्र (भृत्य) वंश--इस वंश के राजाओं की संख्या मत्स्य, वायु, एवं विष्णु में क्रमशः ३०, २२ (१८), एवं २४ दी गयी है। ब्रह्मांड, भागवत एवं विष्णु के अनुसार, इन राजाओं ने ४५६ वर्षों तक, एवं मत्स्य के अनुसार ४६० (३६०) वर्षों तक राज्य किया। इन राजाओं का काल ई. स. पू. २२०-ई. स. २२५ माना गया है।

इस वंश में उत्पन्न राजाओं की नामावलि, एवं उनका संभाव्य राज्यकाल निम्नप्रकार है:--१. सिमुक (सिंधुक, शिप्रक)-२३ वर्ष; २. कृष्ण (भात)- १० वर्ष; ३. श्रीशातकर्णि (श्रीमल्लकर्णि)-१०; ४. पूर्णोत्संग (पौर्णमास)-१८ वर्ष; ५. स्कंधस्तंभ-१८ वर्ष; ६. शातकर्णि (शांतकर्णि, सातकर्णि)-५६ वर्ष; ७. लंबोदर-१८ वर्ष; ८. आपीतक (आपीलक, दिविलक)-१२ वर्ष; ९. मेघस्वाति-१८ वर्ष; १०. स्वाति (पटुमत्, अटमान्)-१८ वर्ष; ११. स्कंदस्वाति-७ वर्ष; १२. मृगेंद्रस्वातिकर्ण-३ वर्ष; १३. कुंतलस्वातिकर्ण-८ वर्ष, १४. स्वातिवर्ण-१ वर्ष; १५. पुलोमावी- ३६ वर्ष; १६. अरिष्टकर्ण (अनिष्टकर्ण)- २५ वर्ष; १७. हाल- ५ वर्ष; १८. मंतलक (पत्तलक, मंदुलक)- ७ वर्ष; १९. पुरिकषेण (प्रविल्लसेन, पुरीषभीरु)- २१ वर्ष; २०. सुंदरशातकर्णि (सुनंदन)-१ वर्ष; २१. चकोरशातकर्णि-६ माह २२ शिवस्वाति-२८ वर्ष; २३. गौतमीपुत्र शातकर्णि (गोतमीपुत्र); २४. पुलोमत्-२८ वर्ष; २५. शातकर्णी (शिवशातकर्णि)-२९ वर्ष; २६. शिवश्री- ७ वर्ष; २७. शिवस्कंध- ३ वर्ष; २८. यज्ञश्री शातकर्णि- २९ वर्ष; ३०. विजय- ६ वर्ष; ३१. चंडश्री- १० वर्ष; ३२. पुलोमत् (द्वितीय)- ७ वर्ष।

उपर्युक्त राजाओं में से पुरुषभीरु राजा से उत्तर-कालीन राजाओं की ऐतिहासिकता अन्य ऐतिहासिक साधनों के द्वारा सिद्ध हो चुकी है। मेघस्वाति राजा के द्वारा २७ ई. पू. में काण्वायन राजाओं का विच्छेद किये जाने का निर्देश प्राप्त है।

काण्वायन (शुंगभृत्य) वंश-इस वंश का संस्थापक वसुदेव था, जो शुंगवंश का अंतिम राजा देवभूति (देवभूमि, क्षेमभूमि) का अमात्य था। उसने देवभूति को पदच्युत किया,एवं वह स्वयं काण्वायन वंश का पहला राजा बन गया।

इस वंश के कुल चार राजा थे, जिन्होंने ४५ वर्षों तक राज्य किया। इस वंश का पहला राजा वसुदेव एवं अंतिम राजा सुशर्मन् था। दक्षिण प्रदेश में उदित आंध्र लोगों ने सुशर्मन् को राज्यभ्रष्ट किया, एवं इस प्रकार

काण्वायन वंश का राज्य समाप्त हुआ। इस वंश के 'द्विज' उपाधि से प्रतीत होता है कि, काण्वायन राजा ब्राह्मण थे। इनका राज्यकाल ई. स. ७२-२७ माना जाता है।

इस वंश के निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:-- १. वसुदेव- ९ वर्ष; भूमिमित्र- १४ वर्ष; ३. नारायण- १२ वर्ष; ४ सुशर्मन्- १० वर्ष।

नंद वंश--मगधदेश में राज्य करनेवाले इस वंश में कुल नौ राजा हुए, जिन्होंने सौ वर्षों तक राज्य किया। इनका राज्यकाल ४२२ ई. पू. से ३२२ ई. पू. तक माना जाता है।

इनका सर्वप्रथम राजा महापद्म नंद था, जो महानंदिन् राजा को एक शूद्र स्त्री से उत्पन्न हूआ था। उसने ८८ वर्षों तक राज्य किया, एवं पृथ्वी के समस्त क्षत्रियों का उच्छेद किया। उसके पश्चात् उसके आठ पुत्रों में से सुकल्प राजा राजगद्दी पर आरूढ हुआ, एवं उसके पश्चात् अन्य सात नंदवंशीय राजा हुए। अंत में कौटिल्य नामक ब्राह्मण ने इस वंश को जड़मूल से उखाड़ दिया, एवं मगध का राज्य मौर्यवंशीय राजाओं के हाथ चला गया।

भविष्यपुराण में नंदवंशीय राजाओं की नामावलि निम्नप्रकार दी गयी हैं:--१. नंदसुत; २. प्रनंद; ३. परानंद; ४. समानंद; ५. प्रियानंद; ६. देवानंद; ७. यज्ञदत्त; ८. मौर्यानंद; ९. महानंद।

प्रद्योत वंश--मगधदेश के इस राजवंश की स्थापना शुनक (पुलिक) के द्वारा की गयी थी, जिसने अवंति के राजाओं में से एक राजा का वध कर, अपने पुत्र प्रद्योत को राजगद्दी पर बिठाया। इस वंश में कुल पाँच राजा उत्पन्न हुए थे, जिन्होंने १३८ वर्षों तक राज्य किया था। इनका राज्यकाल ई. पू. ६८९-५५२ माना जाता था। ये राजा मगध के बार्हद्रथ वंश के राजाओं से काफ़ी उत्तरकालीन माने जाते हैं।

इस वंश के निम्नलिखित राजा प्रमुख माने जाते हैं:- १. प्रद्योत-२३ वर्ष; २. पालक-२४ वर्ष; ३. [illegible]यूप-५० वर्ष; ४. अजक-२१ वर्ष; ५. नंदिवर्धन-[illegible] वर्ष।

मगध वंश (बार्हद्रथ वंश)--भारतीय युद्ध के समय इस वंश का जरासंधपुत्र सहदेव राज्य करता था। इस युद्ध में सहदेव के मारे जाने के बाद, उसका पुत्र सोमाधि गिरिव्रज का राजा बन गया।

इस प्रकार मगधदेश का भविष्यवंश सोमाधि राजा से प्रारंभ होता है, एवं रिपुंजय राजा से समाप्त होता है। इस वंश में से सेनाजित् राजा के राज्यकाल में मत्स्य, वायु एवं ब्रह्मांड पुराणों की रचना की गयी थी। बृहद्रथ से ले कर रिपुंजय तक इस वंश में कुल बत्तीस राजा हुए, एवं उन्होंने एक हजार वर्षों तक राज्य किया। इनमें से मत्स्य पुराण की रचना के पश्चात् उत्पन्न हुए श्रुतंजय राजा के पश्चात् सोलह राजा हुए, एवं उन्होंने ७२३ वर्षों तक राज्य किया।

इन राजाओं की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, यहाँ इस वंश के केवल प्रमुख राजाओं की जानकारी दी गयी है (ब्रह्मांड. ३.७४; वायु. ९९.२९६-३०९; मत्स्य. २७३; विष्णु. ४.२३; भा. ९.२२)।

इस वंश में उत्पन्न हुए प्रमुख राजाओं के नाम एवं उनमें से हर एक का राज्यकाल निम्नप्रकार था:--१. सोमाधि (सोमापि, मार्जारि)--५८ वर्ष; २. श्रुतश्रवस् (श्रुतवत्)--६४ वर्ष; ३. अयुतायु (अप्रतिवर्मन्; अयुतायुत)--२६ वर्ष; ४. निरमित्र--४० वर्ष; ५. सुक्षत्र--५६ वर्ष; ६. बृहत्कर्मन्--२३ वर्ष; ७. सेनाजित् (सेनजित्, कर्मजित्)--२३ वर्ष; ८. श्रुतंजय--४० वर्ष; ९. विभु (महाबाहु)--२८ वर्ष; १०. शुचि--५८ वर्ष; ११. क्षेम--२८ वर्ष; १२. सुव्रत (अनुव्रत)--६४ वर्ष; १३. सुनेत्र (धर्मनेत्र)--३५ वर्ष; १४. निवृति (नृपति)--५८ वर्ष; १५. त्रिनेत्र (सुश्रम)--२८ वर्ष (३८ वर्ष); १६. दृढसेन (द्युमत्सेन)--४८ वर्ष; १७. महीनेत्र (सुमति)--३३ वर्ष; १८. सुचल--३२ वर्ष; १९. सुनेत्र (सुनीत)--४० वर्ष; २० सत्यजित्--८३ वर्ष; २१. विश्वजित (वीरजित्)--२५ वर्ष; २२ रिपुंजय--५० वर्ष।

मौर्य वंश--मगध देश के इस वंश की स्थापना चंद्रगुप्त मौर्य के द्वारा हुई। इस वंश में कुल दस राजा थे, जिन्होंने कुल १३७ वर्षों तक राज्य किया। इस वंश का शासनकाल ई. स. पू. ३२१-१८४ माना जाता है।

इस वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:- १. चंद्रगुप्त-२४ वर्ष; २. बिंदुसार (भद्रसार)-२५ वर्ष; ३. अशोकवर्धन (अशोक)-२६ वर्ष; ४. कुनाल (सुयशस्)-८ वर्ष; ५. बंधुपालित (दशरथ)-८ वर्ष; ६. संप्रति-९ वर्ष; ७. शालिशुक-१३ वर्ष; ८. देवधर्मन्-७ वर्ष; ९. शतवर्मन्-८ वर्ष; १०. बृहद्रथ-७ वर्ष।

शिशुनाग वंश--इस वंश का संस्थापक काशी देश का राजा शिशुनाग था। उसने मगध देश के प्रद्योत वंशीय अन्तिम राजा नन्दिवर्धन को पदच्युत कर,

अपना स्वतंत्र राजवंश मगध देश में प्रस्थापित किया। इस वंश के कुल दस राजा थे, जिन्होंने ३६० वर्षों तक राज्य किया। इस वंश का सर्वाधिक सुविख्यात राजा अजातशत्रु था, जिसके राज्यकाल में बौद्ध धर्म का उदय हुआ।

इस वंश के निम्नलिखित राजा प्रमुख माने जाते हैं:- – १. शिशुनाग–४० वर्ष; २. काकवर्ण–३६ वर्ष ३. क्षेमधर्मन्–२० वर्ष; ४. क्षत्रौजस् (अजातशत्रु प्रथम)–४० वर्ष; ५. बिंबिसार श्रेणिक–२८ वर्ष; ६. अजातशत्रु द्वितीय–२५ वर्ष; ७. दर्शक–२५ वर्ष; ८. उदधिन्–३३ वर्ष; ९. नन्दिवर्धन–४० वर्ष; १०. महानन्दिन्–४३ वर्ष।

शुंग वंश—इस वंश की स्थापना पुष्यमित्र शुंग ने की थी, जो मगध देश के अंतिम मौर्यवंशीय राजा बृहद्रथ का सेनापति था। उसने बृहद्रथ राजा का वध कर शुंगवंश की स्थापना की। इस वंश में कुल दस राजा थे, जिन्होंने कुल एक सौ बारह वर्ष तक राज्य किया। पुष्यमित्र स्वयं शूद्रवर्णीय था। शुंगवंश का राज्यकाल ई. स. पू. १८४–ई. स. पू. ७२ तक माना जाता है।

इस वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थेः-१. पुष्यमित्र –३६ वर्ष; २. अग्निमित्र–८ वर्ष; ३. वसुज्येष्ठ–७ वर्ष; ४. वसुमित्र–१० वर्ष; ५. अंध्रक–२ वर्ष; ६. पुलिंदक–३ वर्ष; ७. घोष–३ वर्ष; ८. वज्रमित्र–९ वर्ष; ९. भागवत–३२ वर्ष; १०. देवभूमि–१० वर्ष।

अन्य भविष्य वंश–उपर्युक्त प्रमुख वंशों के अतिरिक्त निम्नलिखित 'भविष्य वंशों' का निर्देश भी पौराणिक साहित्य में पाया जाता है:— १. अवन्ती; २. आभीर; ३. ऐक्ष्वाक, जिसका अंतिम राजा सुमित्र माना जाता है; ४. कलिंग; ५; काशी; ६. कुरु; ७. कैलकिल; ८. गर्दभिल; ९. तुषार; १०. नंद; ११. पंचाल; १२. पौरव, जिनका अंतिम राजा क्षेमक माना जाता है; १३. मुरुंड; १४. मैथिल; १५. मौन; १६. यवन; १७. शक; १८. शूरसेन; १९. हूण (ब्रह्मांड. ३.७४; वायु. ९९.२०७-४६४; विष्णु. ४.२४; भा. १२.१; मत्स्य. २७३)। इन में से बहुत सारे वंश ऐतिहासिक साबित हो चुके हैं। गर्दभिल, मौन, मुरुंड ऐसे थोड़े ही वंश हैं कि, जिनकी ऐतिहासिकता अब तक सिद्ध नहीं हो पायी है।

(५) मानवेतर वंश

पौराणिक साहित्य में देव, गंधर्व, दानव, अप्सरा, राक्षस, यक्ष, नाग, गरुड आदि अनेकानेक मानवेतर वंशों का निर्देश प्राप्त है। इनमें से बहुत सारे मानवेतर वंशों को पौराणिक साहित्य में कश्यप ऋषि की संतान मानी गयी है, जिसकी तेरह पत्नियों के द्वारा पृथ्वी के सारे मानवेतर वंशों का निर्माण होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है:--

सप्तर्षियों की संतान–पौराणिक साहित्य एवं महाभारत में अन्यत्र राक्षस, यक्ष, एवं गंधर्व आदि को पुलह, पुलस्त्य, अगस्त्य जैसे सप्तर्षियों की संतान कहा गया है। (म. आ. ६०.५४१)। जिस प्रकार समस्त मानवजाति का पिता मनु वैवस्वत माना जाता है, उसी प्रकार समस्त मानवेतर सृष्टि के प्रणयन का श्रेय सप्तर्षियों को दिया गया प्रतीत होता है। पुलस्त्य एवं पुलह ऋषियों का सविस्तृत वंशवर्णन वायु में प्राप्त है (वायु. ७०.३१-६३; ६४-६५)।

वानरवंश—ब्रह्मांड पुराण में वानरों को पुलह एवं हरिभद्रा की संतान कहा गया है, एवं उनके ग्यारह प्रमुख कुल दिये गये हैं:— १. द्वीपिन्; २. शरभ; ३. सिंह; ४. व्याघ्र; ५. नील; ६. शल्यक; ७. ऋक्ष; ८. मार्जार. ९. लोभास; १०. लोहास; ११. वानर; १२. मायाव (ब्रह्मांड. ३.७.१७६; ३२०)।

राक्षसवंश—वायु में राक्षसों को पुलह, पुलस्त्य एवं अगस्त्य ऋषियों की संतान कहा गया है (वायु. ७०.५१ –६५)। दैत्यों में से हिरण्यकशिपु एवं हिरण्याक्ष का स्वतंत्र वंशवर्णन भी प्राप्त है (वायु. ६७; ब्रह्मांड ३.५)।

पौराणिक साहित्य में असुर, दानव, दैत्य एवं राक्षस-जातियों का स्वतंत्र निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. २५.८; १७; ३०; ३७; २६.१७)। किन्तु आगे चल कर इन जातियों का स्वतंत्र अस्तित्व नष्ट हो कर, अनार्य एवं दुष्ट जाति के लोगों के लिए ये नाम प्रयुक्त किये जाने लगे।

कश्यप ऋषि की मानवेतर संतति

वंशविशेष	कश्यपपत्नी	संतान
देवगंधर्व	(१) अरिष्टा	तुंबरु, हंस, वरेण्य आदि देवगंधर्व।
	(२) मुनि	अर्कपर्ण, उग्रसेन आदि सोलह देवगंधर्व।
अप्सरा	(१) अरिष्टा	अनवद्या, अरुणा आदि अप्सरा।
	(२) खशा	आलंबा, उत्कन्चोत्कृष्टा आदि अप्सरा।
	(३) मुनि	अजगंधा, अनपाया आदि अप्सरा।
नाग	(१) कद्रू	अक्रूर, धृतराष्ट्रादि नागकुल।
	(२) सुरभि	अंगारक, अहिर्बुध्न्य आदि सर्प।
राक्षस, दैत्य एवं दानव	(१) खशा	अकंपन, अश्व आदि राक्षस।
	(२) दनु	पुलोमत्, विप्रचित्ति, हिरण्यकशिपु आदि दानव।
	(३) दनायु	वृत्र आदि दानव।
	(४) दिति	हिरण्याक्ष, वज्रांग आदि दैत्य।
	(५) पुलोमा	पौलोम एवं कालकेय राक्षससमूह।
	(६) सिंहिका	सैंहिकेय असुर।
	(७) सुरसा	यातुधानादि राक्षससमूह।
	(८) कालका	कालकंज राक्षससमूह।
पक्षी	(१) विनता	गरुड, आरुणि आदि पक्षिराज।
	(२) ताम्रा	क्रौंची, गृध्रिका आदि पक्षी।
आदित्य	अदिति	बारह आदित्य।

परिशिष्ट ५

पुराणों में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट विभिन्न वंशावलियों का निर्देश इससे पहले ही किया जा चुका है। इन राजाओं की जो जानकारी उपलब्ध है, उससे उनका निश्चित कालनिर्णय एवं उनके समकालीन अन्य राजाओं की पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। इसी जानकारी को मूलाधार मान कर पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका अगले पृष्ठ पर दी गयी है, जहाँ इन राजाओं की नामावलि सूर्य एवं सोम वंशों के विभिन्न उपशाखाओं के अनुक्रम से दी गयी है।

यह तालिका विभिन्न राजाओं के समकालीनत्व का ख्याल रख कर दी गयी है, एवं हर एक राजा की पीढ़ी का स्पष्ट रूप से निर्देश किया गया है, जहाँ वैवस्वत मनु की पीढ़ी पहली मानी गयी है। इस तालिका के निरीक्षण के लिए निम्नलिखित सूचनाएँ महत्त्वपूर्ण प्रतीत होती हैः–

(१) पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका संपूर्ण नहीं है, एवं उनमें बहुत सारे नाम अप्राप्य हैं। पौराणिक साहित्य में से सबसे प्रदीर्घ इक्ष्वाकु-वंश भी इस न्यूनता से अलिप्त नहीं है। पौराणिक साहित्य में अप्राप्य राजाओं के नाम तालिका में (...) इस प्रकार बताये गये हैं।

(२) जिन राजाओं की समकालीनता स्पष्टरूप से सिद्ध हो चुकी है, उनके नाम तालिका में स्पष्ट अक्षरों में दिये गये हैं, एवं जिनकी समकालीनता केवल तर्काधिष्ठित ही है, उनके नाम सादे अक्षरों में दिये गये है।

(३) इन राजाओं में से जिन राजाओं का निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है, उनके आगे (*) चिन्ह लगाया गया है।

(४) तालिकाओं में निर्दिष्ट प्रमुख राजाओं के समकालीनता के प्रमाण जब 'प्राचीन चरित्रकोश' में दिये गये उन व्यक्तियों के चरित्र में प्राप्त हैं, उनके नाम अधोरेखांकित किये गये हैं। इसी कारण समकालीनता का स्पष्टीकरण तालिकाओं में नहीं दिया गया है।

(५) तालिका के दाहिनी एवं बायी ओर दिये गये क्रमांक पीढ़ीयों के निर्देशक नहीं, बल्कि अनुक्रम के निर्देशक हैं।

(६) पौराणिक साहित्य, रामायण एवं महाभारत में प्राप्त वंशावलियों में उन्हीं राजपुरुषों के एवं राजाओं के नाम दिये गये हैं, जो राजगद्दी पर अधिष्ठित थे। राजपरिवार के अन्य सदस्यों के, अथवा वर्णांतर से ब्राह्मण वैश्यादि हुए राजाओं के नाम वहाँ अप्राप्य है। इसी कारण इक्ष्वाकु, निमि एवं हैहय वंश में से अनेक राजपुरुषों के नाम इस वंशावलि में नहीं दिये गये हैं।

(७) तालिका के चौदहवे स्तंभ में दिये गये संभाव्य-काल परंपरागत पौराणिक साहित्य में प्राप्त परंपरा के अनुसार दिये गये हैं।

	सू. इ. (अयोध्या)	सू. निमि. (मिथिला)	मू. दिष्ट. (वैशाली)	सो. अमा. (कान्यकुब्ज)	सो. पुरूरवस् (प्रतिष्ठान)	सो. तुर्वसु.
१	२	३	४	५	६	७
१	मनु	मनु	मनु	मनु	मनु	...
२	* इक्ष्वाकु	* इक्ष्वाकु	* नाभानेदिष्ट	इला	इला	...
३	विकुक्षि (शशाद)	निमि	...	पुरूरवस्	* पुरूरवस्	...
४	ककुत्स्थ	...	...	अमावसु	आयु	...
५	अनेनस्	मिथि जनक	* भलंदन	...	* नहुष, रजि	...
६	पृथुरोमन्	...	* वत्सप्री	भीम	ययाति	...
७	विश्वरंधि	...	...	...	* पूरु	* तुर्वसु
८	चंद्र (आर्द्र)	उदावसु	प्रांशु	...	जनमेजय १.	...
९	युवनाश्व १.	...	...	कांचनप्रभ	प्राचीन्वत् (अविद्ध)	...
१०	शा (श्रा) वस्त	...	प्रजानि	...	प्रवीर	...
११	...	नंदिवर्धन	...	...	अविद्ध	...
१२	...	...	खनित्र	सुहोत्र १.	मनस्यु	वह्नि
१३	...	...	क्षुप	...	अभय	...
१४	बृहदश्व	सुकेतु	विंश	...	सुद्युम्न, धुंधु	...
१५	कुवलयाश्व	...	विविंश	जह्नु	बहुगवि	...
१६	दृढाश्व	...	...	...	...	...
१७	प्रमोद	देवरात	...	सुहोत्र २.	संयाति	...
१८	हर्यश्व १.	...	खनिनेत्र	...	...	भर्ग
१९	निकुंभ	...	...	अजक	भद्राश्व (रौद्राश्व)	...
२०	बर्हणाश्व	...	...	...	...	...
२१	(संहताश्व)	...	...	बलाकाश्व	ऋतेयु (ऋचेयु)	...
२२	कृशाश्व	...	अतिभूति	...	...	...
२३	(प्र) सेनजित्	...	करंधम	कुश	अन्तिनार	भोनाग
	(रेणु)	...	...	(मूर्तरय अमूर्तरजस्)	...	...
२४	युवनाश्व २.	...	अविक्षित्	...	तंसु	...
२५	* मांधातृ	बृहद्रथ	मरुत्त	कुशाश्व–कुशिक	...	...
२६	* पुरुकुत्स	...	नरिष्यन्त	* गाधि किंवा	...	...
२७	* त्रसदस्यु	...	दम	* गाथिन्	...	...
२८	(संभूत)	महावीर्य	राज्यवर्धन	...	...	...
२९	अनरण्य	...	सुधृति	...	...	...
३०	त्रसदश्व	...	नर	...	...	...
३१	हर्यश्व २.	...	केवल	...	...	त्रिसानु
३२	(वसुमत् और वसुमनस्)	सुधृति	बंधुमत्	...	...	...
		...	...	...	...	करंधम
३३	त्रिधन्वन्	...	वेगवत्	...	...	...
३४	* त्रैय्यारुण	...	बुध	...	...	...
३५	त्रिबंधन	...	तृणबिंदु	...	...	...
३६	...	...	विशाल (विश्रवस)	...	...	...
३७	सत्यव्रत त्रिशंकु	धृष्टकेतु	हेमचंद्र	विश्वामित्र	...	* मरुत्त

सो. द्रुह्यु.	सो. सह. (हैहय) (माहिष्मती)	सो. यदु.	सो. अनु.	सो. अनु. तितिक्षु	सो. क्षत्र. (काशी)	संभाव्य काल	अन्य राजा एवं महत्त्वपूर्ण घटना	
८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
						इ. पू.		
...	...	...	...	...	मनु	३१००	हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु	१
...	...	...	...	...	इल	...	प्रल्हाद	२
...	...	...	...	...	पुरूरवस्	...	बलि	३
...	...	...	...	...	आयु	...	विप्रचित्ति, तारक	४
...	...	...	...	...	क्षत्रवृद्ध	...	वृषपर्वन्	५
...	...	...	...	...	...	३०००	षण्डामर्क, देवासुर-संग्राम	६
...	...	...	...	...	...	...	...	७
द्रुह्यु	*यदु	*यदु	*अनु	...	सुनहोत्र, प्रति-	...	...	८
...	सहस्रजित्	क्रोष्टु	...	...	क्षेत्र	...	...	९
...	...	...	...	...	काश्य	...	...	१०
...	शतजित्	वृजिनीवत्	...	...	काशिराज	...	...	११
...	...	...	...	...	राष्ट्र	...	...	१२
बभ्रु	हैहय	स्वाहि	सभानर	...	दीर्घतपस्	...	...	१३
...	...	...	...	...	धर्म	...	...	१४
...	धर्मनेत्र	रशादु	...	...	धन्वतरि	...	...	१५
...	कुंति	...	...	...	...	...	...	१६
...	साहंजि	...	...	...	केतुमत्	...	...	१७
सेतु	महिष्मत्	चित्ररथ	कालानल	...	...	...	...	१८
...	...	...	...	...	भीमरथ	...	...	१९
...	भद्रश्रेण्य	...	...	...	दिवोदास १.	...	...	२०
...	...	...	...	...	अष्टारथ	...	...	२१
...	...	...	...	...	...	...	...	२२
...	...	...	सृंजय	...	...	...	...	२३
...	...	...	...	...	...	...	...	
रिपु (मांधातृ)	...	...	...	...	...	...	...	२४
...	...	शशबिन्दु	...	...	...	...	...	२५
अंगार	दुर्दम	...	...	...	...	२७५०	...	२६
गांधार	...	...	पुरंजय	...	...	...	...	२७
...	...	...	...	...	...	...	...	२८
धर्म	...	पृथुश्रवस्	...	...	...	...		२९
...	...	(तम)	जनमेजय	...	...	...	रावण	३०
धृत	धनक (कनक)	...	...	...	...	...	...	३१
...	...	उशनस्	महाशाल	...	...	...	...	३२
...	...	[शिनेयु]	...	...	...	...	...	
...	...	...	...	...	...	...	...	३३
दुर्गमा	कृतवीर्य	मरुत्त	महामनस्	...	हर्यश्व	...	वृष जान	३४
...	...	कंबलबर्हिष	उशीनर	तितिक्षु	...	...		३५
...	...	रुक्मकवच	शिबि	...	सुदेव	...	...	३६
प्रचेतस्	...	...	...	...	...	...	...	३७
...	कार्तवीर्य	(परावृत्त)	...	...	*दिवोदास २.	२५५०	...	

	सू. इ. (अयोध्या)	सू. निमि. (मिथिला)	सू. दिष्ट. (वैशाली)	सो. अमा. (कान्यकुब्ज)	सो. पूरु. (प्रतिष्ठान)	सो. तुर्वसु
३८	* हरिश्चंद्र	...	सुचंद्र	...	...	...
	...	...	पुष्कराक्ष	...	...	...
३९	रोहित	...	...	मधुच्छंदस	...	...
४०	हरित, चंप	...	...	(अष्टक लौहि)	...	* दुष्यन्त
४१	विजय	हर्यश्व	...	...	...	शरूथ
४२	भरुक	मरु	...	नय	...	जनापीड
४३	वृक	...	...	...	...	(आंडीर)
४४	बाहु (फल्गुतंत्र)	प्रतीपक	धूम्राश्व	...	...	पांड्यादि
४५	सगर	...	...	...	...	...
४६	असमंजस्	...	...	...	* दुष्यन्त	...
४७	...	कृतिरथ	...	...	* भरत	...
४८	अंशुमत्	...	...	...	भरद्वाज	...
४९	...	...	...	...	वितथ	...
५०	दिलीप १.	देवमीढ	...	...	भुवन्मन्यु	...
५१	...	...	...	...	बृहत्क्षत्र	...
५२	...	...	संजय	...	सुहोत्र	...
	...	...	...	...	...	...
५३	...	विस्रुत	...	...	हस्तिन्	सो. अज.
५४	* भगीरथ अथवा	...	...	...	* अजमीढ	दक्षिण पांचाल
५५	भगीरथ	...	...	...	ऋक्ष, * जह्नु	बृहद्विषु
५६	श्रुत	महाधृति	...	...	...	बृहद्वसु
५७	नाभाग	...	...	...	...	बृहत्कर्मन्
५८	अम्बरीष	...	...	...	...	जयद्रथ
५९	सिंधुद्वीप	कृतिरात	सहदेव	...	...	विश्वजित्
६०	अयुतायु	...	...	...	...	...
६१	ऋतुपर्ण	...	...	...	...	...
६२	सर्वकाम	...	...	...	...	...
६३	सुदास	महारोमन्	...	...	...	...
६४	मित्रसह कल्माषपाद	...	...	...	...	...
६५	...	...	...	...	...	...
६६	अश्मक	...	...	...	...	सेनाजित्
६७	मूलक	...	...	...	...	...
६८	दशरथ १.	स्वर्णरोमन्	कृशाश्व	...	...	...
६९	ऐडविड	...	...	...	...	...
७०	विश्वसह १.	...	...	...	...	...
७१	दिलीप खट्वांग २.	...	...	...	...	रुचिराश्व
७२	दीर्घबाहु	ह्रस्वरोमन्	...	...	...	...
७३	रघु	...	...	...	...	...
७४	अज	...	...	...	संवरण	...
७५	दशरथ २.	सीरध्वज	प्रमति	...	कुरु	...

सो. नील.	सो. सह. (हैहय) (माहिष्मती)	सो. यदु.	सो. अनु.	सो. अनु. (तितिक्षु)	सो. क्षत्र. (काशी)	संभाव्य काल	अन्य राजा एवं महत्त्वपूर्ण घटना	
...	(वृषण) ...	ज्यामघ	केकय (गोपति)	... ...	... ...		... ...	३८
...	...	...	...	...	...		...	३९
...	जयध्वज ...	विदर्भ ...	मद्रक	...	...		...	४०
...	...	क्रथ ...	...	वृषद्रथ ...	...		...	४१
...	...	कुंति ...	...	...	...		...	४२
...	...	धृष्ट ...	...	सेन ...	...		...	४३
...	तालजंघ वीतिहोत्र	निर्वृति ...	...	...	...		...	४४
...	(* वीतहव्य)	(विदूरथ)			* प्रतर्दन		...	४५
...	अनंत ...	दशार्ह ...	...	सुतपस् ...	वत्स		...	४६
...	दुर्जय ...	व्योमन् ...	...	बलि ...	अलर्क		रावण ...	४७
...	सुप्रतीक ...	जीमूत ...	...	अंग ...	... ...		...	४८
...	...	विकृति ...	...	...	सन्नति		...	४९
...	...	भीमरथ	...	...	सुनीथ		...	५०
...	...	रथवर ...	...	...	... ...		...	५१
...	...	दशरथ ...	...	दधिवाहन (अनपान)	सुकेतु		... ...	५२
सो. नील	सो. द्विमीढ. ...	एकादशरथ	...	...	... ...		...	५३
उत्तर पांचाल	द्विमीढ ...	शकुनि ...	...	...	धर्मकेतु		...	५४
नील ...	यवीनर ...	करंभक ...	...	...	... ...		...	५५
सुशांति ...	...	देवरात	...	...	सत्यकेतु		...	५६
पुरुजानु ...	...	देवक्षत्र	...	...	... ...		...	५७
रिक्ष ...	धृतिमत् ...	देवन ...	...	...	विभु		...	५८
भर्म्याश्व ...	...	मधु ...	...	दिविरथ	...		...	५९
...	सत्यधृति ...	पुरुवस ...	...	...	सुविभु		...	६०
...	...	पुरुद्वत् ...	...	...	... ...		...	६१
मुद्गल ...	दृढनेमि	...	...	...	सुकुमार		...	६२
(ब्रह्मिष्ठ)	...	...	...	...	... ...		...	६३
...	...	...	...	धर्मरथ	... ...		...	६४
...	...	...	...	...	धृष्टकेतु		...	६५
वध्र्यश्व ...	...	...	...	...	... ...		...	६६
...	...	...	...	...	... ...		...	६७
...	सुवर्मन्	...	...	...	... ...		...	६८
...	...	...	...	...	वेणुहोत्र		...	६९
...	सार्वभौम	...	...	...	... ...		...	७०
...	...	...	...	...	... ...		...	७१
...	...	...	...	...	भर्ग ...		...	७२
...	महत्पौरव	...	...	...	... ...		...	७३
...	...	...	...	...	... ...		...	७४
* दिवोदास	...	जन्तु	...	चित्ररथ (लोमपाद)	... ...		...	७५

	सू. इ. (अयोध्या)	सू. निमि. (मिथिला)	सू. दिष्ट. (वैशाली)	सो. मगध.	सो. कुरु.	सो. अज. (दक्षिण पांचाल)
७६	राम	कुशध्वज	※ परिक्षित्	सुधन्वन्	जह्नु	पृथुसेन
७७	कुशलव	भानुमत	※ जनमेजय	सुहोत्र	सुरथ	...
७८	अतिथि	प्रद्युम्न शतद्युम्न		च्यवन	(ऋक्ष)	...
७९	निषध	मुनि		कृत	सार्वभौम	...
८०	नल	ऊर्जवह	सो. चैद्य.	वसु चैद्य	जयत्सेन	...
८१	नभ	सुतद्वाज	प्रत्यग्रह	बृहद्रथ	अराधिन्	...
८२	पुंडरीक	*कुणि (शकुनि)	...	(कुशाग्र)	महासत्त्व (महाभौम)	पार १.
८३	क्षेमधन्वन् (पौंडरीक)	*रंजन (अंजन)	...	ऋषभ	अयुतायु	...
८४	देवानीक	(*उग्रदेव)	...	पुष्पवत्	अक्रोधन	...
८५	अहीन	*क्रतुजित्	...	सत्यहित	देवातिथि	...
८६	पारियात्र	अरिष्टनेमि	...	सुधन्वन्	ऋक्ष २.	नीप
८७	बल (दल)	श्रुतायु	...	ऊर्ज	भीमसेन	...
८८	स्थल	सुपार्श्व	...	नभस्	दिलीप	...
८९	उक्थ	संजय	...	(संभव)	...	समर
९०	वज्रनाभ	क्षेमारि	...	...	...	...
९१	खगण	अनेनस्	...	...	...	पार २.
९२	विधृति	मीनरथ	...	...	...	...
९३	(व्युषिताश्व	सत्यरथ	...	...	...	पृथु
९४	विश्वसह २.)	उपगु	...	...	...	...
९५	हिरण्यनाभ	स्वागत	...	...	...	...
९६	पुष्य	सुवर्चस्	...	...	...	सुकृति
९७	ध्रुवसंधि	श्रुत	...	...	...	...
९८	सुदर्शन	सुश्रुत	...	...	...	...
९९	अग्निवर्ण	जय	...	...	...	...
१००	शीघ्र	विजय	...	...	प्रतीप	ब्रह्मदत्त
१०१	मरु	ऋत	...	...	...	विश्वक्सेन
१०२	प्रसुश्रुत	सुनय	...	...	(ऋष्टिषेण)	उदक्सेन
१०३	(सु) संधि	...	...	...	शंतनु	भल्लाट
१०४	अमर्षण	वीतहव्य	दमघोष	...	भीष्म	जनमेजय
१०५	सहस्वत्	...	...	जरासंध	विचित्रवीर्य	द्रुपद
१०६	विश्वसाह्व	धृति	शिशुपाल	...	(धृतराष्ट्र,	...
१०७	प्रसेनजित्	...	...	...	पांडु)	...
१०८	तक्षक	बहुलाश्व	...	सहदेव	युधिष्ठिर	...
१०९	बृहद्बल	कृत किंवा कृती	...	...	अभिमन्यु	धृष्टद्युम्न
११०	बृहद्रण	महावशिन्	...	सोमापि	परिक्षित्	...
१११	...	...	...	श्रुतश्रवस	जनमेजय	...
११२	उरुक्रिय	...	...	अयुतायु	शतानीक	...

सो. नील. (उत्तर पांचाल)	सो. द्विमीढ.	सो. यदु.	सो. यदु.	सो. अनु.	सो. क्षत्र.	संभाव्य काल	अन्य राजा एवं महत्त्वपूर्ण घटना	
मित्रयु ...	रुक्मरथ ...	भीम सात्वत	... ...	चतुरंग ...	... ...	१९५०	रावण	७६
मैत्रेय (सोम)	... ...	अंधक ...	भजमान, वृष्णि	... ...	... ...		... ...	७७
(*सृंजय) ...	सुपार्श्व ...	कुकुर ...	... ...	... ...	... ...		... ...	७८
च्यवन ...	... ...	धृष्ट ...	विदूरथ ...	... ...	... ...		... ...	७९
* * पंचजन,					... ...		... ...	
(पिजवन)					... ...		... ...	
* सुदास ...	... ...	(वृष्णि	शूर ...	... ...	... ...		दाशराज्ञ युद्ध ...	८०
* सहदेव ...	सुमति ...	धृति) ...	शमिन् ...	पृथुलाक्ष	... ...		... ...	८१
* सोमक ...	... ...	कपोतरोमन	प्रतिक्षत्र ...	चंप ...	... ...		... ...	८२
					... ...		... ...	
जन्तु-पृषत्	... ...	... ...	... ...	हर्यंग ...	... ...		... ...	८३
					... ...		... ...	
... ...	सन्नतिमत् ...	... ...	स्वयंभोज ...	भद्ररथ ...	... ...		... ...	८४
... ...	... ...	(तैत्तिरि)	... ...	बृहत्कर्मन्	... ...		... ...	८५
... ...	... ...	... ...	हृदीक ...	बृहद्रथ ...	... ...		... ...	८६
... ...	... ...	... ...	... ...	बृहद्भानु	... ...		... ...	८७
... ...	सनति ...	विलोमन्	... ...	... ...	... ...		... ...	८८
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	८९
... ...	... ...	भव ...	... ...	बृहन्मनस	... ...		... ...	९०
... ...	... ...	(नल)	... ...	... ...	... ...		... ...	९१
... ...	कृत किंवा कृति	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	९२
... ...	कृति	अभिजित्	... ...	... ...	... ...		... ...	९३
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	९४
... ...	... ...	... ...	... ...	जयद्रथ ...	... ...		... ...	९५
... ...	... ...	पुनर्वसु	... ...	...	... ...		... ...	९६
... ...	... ...	... ...	...	...	... ...		... ...	९७
... ...	... ...	आहुक	देवमीढूष ...	बृहद्रथ	... ...		... ...	९८
... ...	... ...	... ...			... ...		... ...	९९
... ...	... ...	... ...	... ...		... ...		... ...	१००
... ...	... ...	... ...	... ...		... ...		... ...	१०१
... ...	... ...	... ...	... ...		... ...		... ...	१०२
पृषत् ...	उग्रायुध कार्ति	उग्रसेन	... ...		... ...		... ...	१०३
द्रोण ...	क्षेम ...	... ...	शूर ...	दृढरथ ...	... ...		... ...	१०४
... ...	सुवीर ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	१०५
... ...	नृपंजय ...	... ...	... ...	जनमेजय	... ...		... ...	१०६
... ...	बृहद्रथ ...	... ...	वसुदेव ...	अधिरथ	... ...		... ...	१०७
... ...	... ...	कंस ...		कर्ण ...	... ...	१४००	... ...	१०८
अश्वत्थामन्	... ...		कृष्ण	वृषसेन	... ...		भारतीय युद्ध ...	१०९
		... ...		... ...	... ...		... ...	
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	११०
... ...	... ...	... ...	वज्र ...	... ...	... ...		... ...	१११
... ...	... ...	... ...	अचल ...		... ...		... ...	११२

क्र.	सू. इ.	सो. पूरु.	सो. मगध.	अन्य व्यक्ति
११३	वत्सव्यूह	...	निरमित्र	
११४	...	...	सुनक्षत्र	
११५	प्रतिव्योमन्	...	बृहत्सेन	
११६	...	...	...	
११७	भानु	...	बृहत्कर्मन्	
११८	दिवाकर	असीमकृष्ण	सेनाजित्	
वायु, ब्रह्मांड एवं मत्स्य पुराणों के रचनाकाल ये राजा राज्य करते थे।				
११९	सहदेव	निमिचक्र	सुतंजय	
१२०	बृहदश्व	उक्थ	विप्र	
१२१	भानुमत्	चित्ररथ	शुचि	
१२२	प्रतीकाश्व	कविरथ	क्षेम	
१२३	सुप्रतीक	वृष्टिमत्	निर्वृत्ति	
१२४	मरुदेव	सुषेण	सुव्रत	
१२५	सुनक्षत्र	सुनीथ	धर्मसूत्र	
१२६	पुष्कर	नृचक्षु	शम	
१२७	अंतरिक्ष	सखीनल	सुमति	
१२८	सुतपस्	परिप्लव	सुबल	
१२९	...	सुनय	सुनीथ	
१३०	...	मेधाविन्	सत्यजित्	
१३१	...	नृपंजय	विश्वजित्	
१३२	...	...	पुरंजय	
१३३	...		अवंती राजा	
१३४	अमित्रजित्	दुर्व	वीतिहोत्र	
१३५	बृहद्राज		प्रद्योत	
१३६	...	तिमि	पालक	
१३७	बर्हि	...	विशाखयूप	
१३८	कृतंजय	...	अजक	
१३९	...	बृहद्रथ	नंदिवर्धन	
१४०	रणंजय	...	शिशुनाग (ई. पू. ६४२)	
१४१	...	सुदास	काकवर्ण	
१४२	संजय	...	क्षेमधर्मन्	
१४३	...	...	क्षेत्रज्ञ	
१४४	शाक्य	शतानीक	बिंबिसार	
१४५	शुद्धोद	...	(काण्वायन	महावीर
१४६	लांगल	...	भूमिमित्र)	
	प्रसेनजित्	उदयन	अजातशत्रु	गौतम बुद्ध
१४७	...	...	(ई. स. पू. ४९१–४५९)	
१४८	क्षुद्रक	वहीनर ...	दर्भक	

क्र.	सू. इ.	सो. पूरु.	मगध देश	अन्य व्यक्ति
१४९	रणक	दंडपाणी	अजय (उदय)	
१५०	सुरथ	निरमित्र	नंदिवर्धन	
१५१	सुमित्र	क्षेमक	महानंदि नंद	सिकंदर
१५९	...	...	सुमाल्यादि ८	(ई. पू.
१६०	...	...	चंद्रगुप्त मौर्य	३३०–
	...		(ई. स. पू.	३२६)
	...		३२२-१८५).	
१६१	...	आंध्र	बिन्दुसार	
१६२	...	...	अशोक (ई. स.	
	...		पू. २३७)	
१६३	...	शिप्रक	सुयशस्	
	...	ई. स. पू. २४०	(संपदि)	
१६४	...	कृष्ण	दशरथ	ॲटिओकस
१६५	...	...	संगत	(सीरिया
१६६	...	...	शालिशूक	और
१६७	...	...	सोमशर्मन्	बॅक्ट्रिया
१६८	...	श्रीमल्लकर्णि	शतधन्वन्	ई. पू.
१६९	...	पूर्णोत्संग	बृहद्रथ	२०६)
१७०	खारवेल जैन	ई.स.पू.१८४-७२	पुष्यमित्र शुंग	मिलिंद
			शातकर्णि	(मिनॅन्डर;
१७१	...	...	अग्निमित्र	ई. पू.
१७२	...	....	सुज्येष्ठ	१५०)
१७३	...	...	वसुमित्र	
१७४	...	...	आर्द्रक	
१७५	...	...	पुलिंदक	
१७६	...	...	घोषवसु	
१७७	...	लंबोदर	वज्रमित्र	कनिष्क
१७८	...	अपीतक	भागवत	कुशान
१७९	...	...	देवभूति	शक
१८०	...	मेघस्वाति	वसुदेव काण्व	कुशान
	...	...	(ई. स. पू.	साम्राज्य
	...		७३–२७)	ई. स.
१८१	...	स्वाति	भूमित्र	९०–२२०
१८२	...	स्कंधस्वाति	नारायण	ई. तक
१८३	...	मृगेन्द्र स्वातिकर्ण		
१८४	...	कुन्तल स्वातिकर्ण	सुशर्मन्	
१८५	...	... स्वातिकर्ण...		
१८६	...	अरिक्तकर्ण ...		
	...	(नेमिकृष्ण)		
१८७	...	हाल		
	... ('गाथा सप्तशती' का कर्ता)			
१८८	...	मंदुलक		

क्र.	आंध्र		शक सत्रप (उज्जैन)	अन्य व्यक्ति
१८९	पुरींद्रसेन	...	...	...
१९०	सौम्य	...	...	...
१९१	*सुंदरशांति-कर्ण	...	चष्टण ई. स. ८०	...
१९२	चकोर स्वातिकर्ण	...	...	...
१९३	*शिवस्वाति	...	...	...
१९४	*गौतमीपुत्र	...	...	...
१९५	*पुलोमत्	...	जयदामन्	...
१९६	*शातकर्णि	...	रुद्रदामन	...
१९७	*शिवश्री	...	दामजदश्री	...

क्र.	आंध्र		शक सत्रप (उज्जैन)	अन्य व्यक्ति
१९८	शिवस्कंध	...	...	...
१९९	*यज्ञश्री	...	जमदामन्	...
२००	विजय	...	रुद्रसिंह	...
२०१	चंडश्री	...	रुद्रसेन	...
	...		संघदामन्	
२०२	...	...	दामसेन	...
२०३	*पुलोमा इ. स. २११-२२५)	...	(ई. स. २२३)	...

* चिन्हांकित राजाओं के प्रस्तरलेख अथवा सिक्के उपलब्ध हैं, जिनके कारण उनकी ऐतिहासिकता सुनिश्चित है।

परिशिष्ट ६

पुराणों में निर्दिष्ट ऋषियों के वंश

प्राचीन राजाओं की तरह, प्राचीन ऋषियों के वंश भी पौराणिक साहित्य में उपलब्ध हैं। किन्तु जहाँ राजवंश राजाओं के कुलों का अनुसरण कर तैयार किये गये हैं, वहाँ ऋषियों के वंश प्रायः सर्वत्र शिष्यपरंपरा के रूप में हैं, जो सही रूप में 'विद्यावंश' कहे जा सकते हैं।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त ऋषियों के वंश राजाओं के वंशों जैसे परिपूर्ण नहीं हैं, एवं उनमें काफ़ी त्रुटियाँ भी हैं। इसी कारण ऐतिहासिक दृष्टि से ऋषियों के वंश इतने महत्त्वपूर्ण प्रतीत नहीं होते हैं, जितने राजाओं के वंश माने जाते हैं।

ऋषिवंश की कल्पना का विकास--जिस प्रकार प्राचीन सभी राजवंश वैवस्वत मनु से उत्पन्न माने जाते हैं, उसी प्रकार सभी प्राचीन ऋषि वंश आठ ब्रह्ममानसपुत्र ऋषियों से उत्पन्न माने जाते हैं। इन ब्रह्ममानसपुत्रों के नाम पौराणिक साहित्य में निम्नप्रकार दिये गये हैं:— १. भृगु; २. अंगिरस्; ३. मरीचि; ४. अत्रि; ५. वसिष्ठ; ६. पुलस्त्य; ७. पुलह; ८. क्रतु।

इन आठ ब्रह्ममानसपुत्रों में से पुलस्त्य, पुलह एवं क्रतु की संतान मानवेतर जाति हुई, एवं उनसे कोई भी ब्राह्मण वंश उत्पन्न नहीं हुआ। बाकी बचे हुए पाँच ब्रह्ममानस पुत्रों में से अंगिरस्, वसिष्ठ एवं भृगु इन तीन ऋषियों के द्वारा ही प्राचीन ऋषिवंशों (मूलगोत्र) का निर्माण हुआ। पुराणों में प्राप्त चार मूल गोत्रकार ऋषियों में अत्रि एवं कश्यप ऋषियों का नाम अप्राप्य है, जिससे प्रतीत होता है कि, अत्रि एवं कश्यप कुलोत्पन्न ब्राह्मण अन्य मूलगोत्रकार ऋषियों से काफी उत्तरकालीन थे।

उपर्युक्त पाँच प्रमुख ब्राह्मण वंशों की जानकारी नीचे दी गयी है:—

आंगिरस वंश--अंगिरस ऋषि के द्वारा स्थापित किये गये इस वंश की जानकारी ब्रह्मांड, वायु एवं मत्स्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.१.१०१-११३; वायु. ६५.

९७–१०८; मत्स्य. १९६)। इनमे से पहले दो ग्रंथों में इस वंशों की जानकारी दी गयी है, एवं अंतिम ग्रंथ में इस वंश के ऋषियों की एवं गोत्रकारों की नामावलि दी गयी है। इस जानकारी के अनुसार, इस वंश की स्थापना अथर्वन अंगिरस् के द्वारा की गयी थी। इस वंश के निम्नलिखित ऋषियों का निर्देश प्राप्त हैं:— १. अयास्य आंगिरस, जो हरिश्चंद्र के द्वारा किये गये शुनःशेप के बलिदान के यज्ञ में उपस्थित था; २. उशिज आंगिरस एवं उसक तीन पुत्र उचथ्य, बृहस्पति एवं संवर्त, जो वैशाली के करंधम, अविक्षित् एवं मरुत्त आविक्षित राजाओं के पुरोहित थे; ३. दीर्घतमस् एवं भारद्वाज, जो क्रमशः उचथ्य एवं बृहस्पति के पुत्र थे। इनमें से भरद्वाज ऋषि काशि के दिवोदास (द्वितीय) राजा का राजपुरोहित था। दीर्घतमस् ऋषि ने अंग देश में गौतम शाखा की स्थापना की थी; ४. वामदेव गौतम; ५. शरद्वत् गौतम, जो उत्तरपंचाल के दिवोदास राजा के अहल्या नामक बहन का पति था; ६. कक्षीवत् दैर्घतमस औशिज; ७. भरद्वाज, जो उत्तरपंचाल के पृषत् राजा का समकालीन था।

आत्रेय वंश—अत्रिऋषि के द्वारा स्थापित किये गये इस वंश की जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.८.७३–८६; वायु. ७०.६७–७८; लिंग. १.६३.६८–७८)। पौरव राजवंश से संबंधित इस वंश की जानकारी ब्रह्म एवं हरिवंश में प्राप्त है (ब्रह्म. १३.५–१४; ह. वं. ३१.१६५८; १६६१–१६६८)। इस वंश के ऋषि एवं गोत्रकारों की नामावलि मत्स्य में दी गयी है (मत्स्य. १९७)। पौराणिक साहित्य में आत्रेय वंश के आद्य संस्थापक अत्रि ऋषि एवं प्रभाकर को एक माना गया है, एवं उसे सोम का पिता कहा गया है।

इस वंश के निम्नलिखित ऋषि विशेष सुविख्यात माने जाते हैं:— १. प्रभाकर आत्रेय (अत्रि ऋषि,) जिसका विवाह पौरव राजा भद्राश्व (रौद्राश्व) एवं घृताची के दस कन्याओं के साथ हुआ था; २. स्वस्त्यात्रेय, जो प्रभाकर के दस पुत्रों का सामूहिक नाम था, एवं उनसे ही आगे चलकर, आत्रेयवंश के ऋषियों का जन्म हुआ था; ३. दत्त आत्रेय; ४. दुर्वासस्।

निम्नलिखित आत्रेय ऋषियों का निर्देश सूक्तद्रष्टा के नाते प्राप्त है:—१. अत्रि; २. अर्चनानस् ३, श्यावाश्व; ४. गविष्ठिर; ५. बल्गूतक (अविहोत्र, कर्णक); ६. पूर्वातिथि। पार्गिटर के अनुसार, श्यावाश्व एवं बल्गूतक ये दोनों एक ही व्यक्ति के नाम थे।

अत्रिऋषि के गोत्रकार—निम्नलिखित ऋषियों का निर्देश आत्रेय वंश के गोत्रकार के नाते प्राप्त है:— १. श्यावाश्व; २. मुद्गल (प्रत्वस्); ३. बलारक (वाग्भूतक ववल्गु); ४. गविष्ठिर (मत्स्य. १४५.१०७–१०८)।

काश्यप वंश—कश्यपऋषि के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस वंश की जानकारी चार पुराणों में प्राप्त है (वायु. ७०.२४–२९; ब्रह्मांड. ३.८.२८–३३; लिंग. १.६३.४९–५५; कूर्म. १.१९.१–७)। इस वंश के ऋषियों एवं गोत्रकारों की नामावलि मत्स्य में दी गयी है (मत्स्य.१९७)।

पौराणिक साहित्य में काश्यपवंश की वंशावलि निम्न प्रकार दी गयी है:— कश्यप–वत्सार एवं असित–निध्रुव रैभ्य, एवं देवल। ये ही छः ऋषि आगे चल कर 'काश्यप ब्रह्मवादिन्' नाम से सुविख्यात हुए।

इस वंश के निम्नलिखित ऋषि विशेष सुविख्यात माने जाते हैं:— १. कण्व काश्यप, जो दुष्यंत एवं शकुंतला का समकालीन था; २. विभांडक काश्यप, जो ऋश्यशृंग ऋषि का पिता था; ३. असित काश्यप, जो देवल ऋषि का पिता था; ४. धौम्य; ५. याज, जो द्रुपद राजा का पुरोहित था।

भार्गव वंश—भृगुऋषि के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ६५.७२–९६; ब्रह्मांड. ३.१.७३–१००; मत्स्य १९५.११–४६)। इनमें से पहले दो ग्रंथों में भार्गववंश की सविस्तृत वंशावलि दी गयी है, एवं अंतिम ग्रंथ में इस वंश के ऋषि एवं गोत्रकारों की नामावलि दी गयी है।

महाभारत के अनुसार भृगु ऋषि के उशनस् शुक्र एवं च्यवन नामक दो पुत्र थे। उनमें से शुक्र एवं उसका परिवार दैत्यों के पक्ष में शामिल होने के कारण नष्ट हुआ। इस प्रकार च्यवन ऋषि ने भार्गव वंश की अभिवृद्धि की। महाभारत में दिया गया च्यवन ऋषि का वंशक्रम निम्नप्रकार है:—च्यवन (पत्नी-मनुकन्या आरुषी)–और्व—ऋचीक—जमदग्नि—परशुराम।

भृगुऋषि के पुत्रों में से च्यवन एवं उसका परिवार पश्चिम हिंदुस्तान में आनर्त देश से संबंधित था। उशनस् शुक्र उत्तर भारत के मध्यविभाग से संबंधित था।

इस वंश के निम्नलिखित व्यक्ति प्रमुख माने जाते हैं: — १. ऋचीक और्व; २. जमदग्नि; ३. परशुराम; ४. इंद्रोत शौनक; ५. प्राचेतस वाल्मीकि।

क्षत्रिय ब्राह्मण--भार्गववंश में अनेक ब्राह्मण ऐसे भी थे कि, जो स्वयं भार्गव न हो कर भी इस वंश में शामिल हो गये थे। ये ब्राह्मण 'क्षत्रिय ब्राह्मण' कहलाते थे, एवं उनमें निम्नलिखित लोग शामिल थे:— १. मत्स्य; २. मौद्गलायन; ३. सांकृत्य; ४. गार्ग्यायन; ५. गार्गीय; ६. कपि; ७. मैत्रेय; ८. वध्र्यश्व; ९. दिवोदास (मत्स्य. १४९.९८-१००)।

भार्गव समूह--मत्स्य में निम्नलिखित भार्गववंशीय 'समूहों' (पक्ष) का निर्देश प्राप्त है:—१. वत्स; २. विद; ३. आर्ष्टिषेण; ४. यास्क; ५. वैन्य; ६. शौनक; ७. मित्रयु (मत्स्य. १९५)। एकवीस भार्गव सूक्तद्रष्टाओं का निर्देश ब्रह्मांड में प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.३२.१०४-१०६)।

वसिष्ठ वंश--अयोध्या के राजपुरोहित के नाते काम करनेवाले वसिष्ठ वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ७०.७९-९०; ब्रह्मांड. ३.८.८६-१००; लिंग. १.६३.७८-९२)। इस वंश के ऋषियों एवं गोत्रकारों की नामावलि मत्स्य में दी गयी है (मत्स्य. २००-२०१)। इस वंश में उत्पन्न निम्नलिखित ऋषि विशेष महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं:— १. देवराज; २. आपव; ३. अथर्वनिधि; ४. वारुणि; ५. श्रेष्ठभाज्; ६. सुवर्चस्; ७. शक्ति; ८. मैत्रावरुणि। वसिष्ठ वंश की अन्य एक शाखा जातूकर्ण लोग माने जाते हैं।

पौराणिक ऋषिवंशों की तालिका

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट विभिन्न ऋषिवंशों की एवं ऋषियों की तालिका नीचे दी गयी है। इस तालिका में भार्गव, आंगिरस, वासिष्ठ, एवं अन्य ऋषिवंशों में उत्पन्न ऋषियों की नामावलि उनके समकालीनत्व के अनुसार दी गयी है। तत्कालीन राजकीय इतिहास में इन ऋषियों का संभाव्य स्थान कहाँ था, इसकी सूचना प्राप्त करने के लिए, इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं की संपूर्ण तालिका इस तालिका के साथ ही दी गयी है। इस तालिका में निर्दिष्ट इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं की नामावलि पौराणिक राजवंशों की तालिका में से पुनरुद्धृत की गयी है।

क्र.	समकालीन राजा (इक्ष्वाकु वंश)	भार्गव	वासिष्ठ	आंगिरस	अन्य ऋषि
१.	मनु	...	वसिष्ठ	...	...
२.	इक्ष्वाकु	च्यवन	वसिष्ठ	...	...
३.	विकुक्षि शशाद	...	वसिष्ठ	...	...
५.	अनेनस्	उशनस् शुक्र	...	बृहस्पति	...
१८.	संहताश्व	...	...	...	प्रभाकर आत्रेय
३०.	त्र्यैय्यारुण	ऊर्व	वरुण	...	...
३१.	...	ऋचीक और्व	आपवारुणि	...	दत्त एवं दुर्वासस् आत्रेय
३२.	सत्यव्रत त्रिशंकु	जमदग्नि, अजीगर्त	देवराज	...	विश्वामित्र
३३.	हरिश्चंद्र	...		... ...	मधुच्छंदस, ऋषभ रेणु, अष्टक, कति (कत), गालव विश्वामित्र,
३४.	रोहित	...	...	... ...	शुनःशेप देवराज, विश्वामित्र
३५.	हरित, चंप	परशुराम, शुनःशेप	...	...	...
३६.	वृक	...	...	अथर्वन्	...
३९.	बाहु (असित)	...	...	उशिज	कश्यप
४०.		अग्नि और्व, वीतहव्य	अथर्वनिधि (प्रथम), आपव	उचथ्य बृहस्पति, संवर्त	

क्र.	समकालीन राजा (इक्ष्वाकु वंश)	भार्गव	वासिष्ठ	आंगिरस	अन्य ऋषि
४१.	सगर			दीर्घतमस्, भरद्वाज, शरद्वंत (१ ला)	... ...
४२.	असमंजस	...	...		विश्वामित्र (शकुंतलापिता) कण्व काश्यप अगस्त्य (एवं लोपामुद्रा)
४३.	अंशुमत्		...	कक्षीवत् (१ ला)	
	दिलीप (प्रथम)	...	...	शंयु	...
४४.	श्रुत		...	विदथिन्—भरद्वाज (भरत ने गोद में लिया)	...
४६.			... ...		... ...
		...	...		
४७.		...	...		
४९.	सिंधुद्वीप	...	...	गर्ग, नर	
५०.	अयुतायु		...	उरुक्षय संकृति	...
५१.	ऋतुपर्ण		...	ऋजिश्वन्	...
५२.	सर्वकाम		...	कपि	...
५४.	मित्रसह कल्माषपाद	... ...	अष्ठभाज	भरद्वाज (अजमीढ़ के समवेत)	... ...
५५.	अश्मक	...	...	कण्व	...
५६.	मूलक	...	...	मेधातिथि काण्व	...
६०.	दिलीप (खट्वांग)	...	अथर्वनिधि (२)	...	शांडिल्य—काश्यप
६१.	दीर्घबाहु	...		मौद्गल्य ...	... ...
६२.	रघु	वध्र्यश्व		पायु, शरद्वंत(द्वितीय)	अर्चनानस्—आत्रेय
६३.	अज	दिवोदास		सौभरि—काण्व	विर्मांडक—काश्यप
६४.	दशरथ	मित्रायु, परुःशेप दैवोदासि	वसिष्ठ (दशरथ के समवेत)	... ...	ऋष्यशृंग एवं रेभ काश्यप, श्यावाश्व आत्रेय
६५.	राम	मैत्रेय, प्रतर्दन दैवोदासि प्रचेतस्	...	पज्रिय कक्षीवत् (द्वितीय)	अंधिगु—आत्रेय आत्रेयः
६७.	कुश	सुमित्र वाध्र्यश्व	वसिष्ठ (सुदास के समवेत)		
६८.	अतिथि	... ...	शक्ति, शतयातु		विश्वामित्र (सुदास के समवेत), निध्रुव काश्यप
६९.	निषध	...	पराशर, शाक्त्य, सुवर्चस्	वामदेव	...
७०.	नल	...	...	बृहदुक्थ	...
७१.	नभस्	देवापि शौनक	...	...	...
७३.	क्षेमधन्वन्	इंद्रोत—शौनक	...	...	वैभांडकि—कश्यप

क्र.	समकालीन राजा (इक्ष्वाकुवंश)	भार्गव	वासिष्ठ	आंगिरस	अन्य ऋषि
८६.	सुदर्शन	...	...	...	जैगीषव्य
८७.	अग्निवर्ण	...	...	...	शंख एवं लिखित,
		...	...	...	कण्डरीक,
		...	...	...	बाभ्रव्य पांचाल
८९.	मरु		सगर	...	...
९०.	प्रसुश्रुत	...	पराशर–सागर		...
९१.	सुसंधि	...	जातुकर्ण्य	भरद्वाज	असित–काश्यप, विष्व–क्सेन (जातुकर्ण्य)
		...			
९२.	अमर्ष एवं सहस्वन्त	...	कृष्ण द्वैपायन–व्यास		अग्निवेश
		...			
९३.	विश्रुतवंत	...	शुक	कृप, द्रोण,	असित–देवल, धौम्य एवं याज, काश्यपवंशीय ऋषि
		...			
		...			
९४.	बृहद्बल	वैशंपायन	भूरिश्रवस् आदि अन्य-ऋषि	अश्वत्थामन्, पैल	लोमश, जैमिनि, सुमन्तु

परिशिष्ट ७

कालनिर्णयकोश

१ प्राचीन कालगणनापद्धति

पौराणिक साहित्य में तीन प्रमुख कालगणनापद्धतियाँ उपलब्ध हैं:— १. युगगणनापद्धति, जो सत्य, त्रेता, द्वापर, कलि आदि युगों की कल्पना पर अधिष्ठित है; **२. मन्वन्तर कालगणनापद्धति**–जो स्वायंभुव, स्वारोचिष आदि चौदह मन्वन्तरों की कल्पना पर अधिष्ठित है; **३. सप्तर्षियुग की कल्पना**–जो आकाश में स्थित सप्तर्षि ग्रहों के स्थिति के मापन पर आधारित है, एवं इस प्रकार खगोलशास्त्र से संबंधित है।

युगगणनापद्धति—पौराणिक साहित्य में प्राप्त युगगणना पद्धति के अनुसार, ब्रह्मा का एक दिन एक हजार पर्यायों में विभाजित किया गया है, जिनमें से हर एक पर्याय निम्नलिखित चार युगों से बनता है:—

कृतयुग—	१७,२८,००० वर्ष
त्रेतायुग—	१२,९६,००० वर्ष
द्वापरयुग—	८,६४,००१ वर्ष
कलियुग—	४,३२,००० वर्ष
	४३,२०,००१ वर्ष

∴ **ब्रह्मा का एक दिन**—४३,२०,००१ × १,०००
=४,३२,००,००,००१ वर्ष
(विष्णु. ३.२.४८)

एक उपपत्ति—सुप्रसिद्ध इतिहासकार जयचंद्र विद्यालंकार के अनुसार, यद्यपि पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट युगों की कल्पना शास्त्रीय एवं ऐतिहासिक है, फिर भी वहाँ दी गयी हर युग की कालमर्यादा अतिशयोक्तिपूर्ण है।

इसी कारण जयचंद्रजी ने कृतयुग, त्रेतायुग, एवं द्वापरयुग के पौराणिक कालविभाजन की समीक्षा राजनैतिक दृष्टि से करने का सफल प्रयत्न किया है। इस समीक्षा में उन्होंने वैवस्वत मनु से ले कर भारतीय युद्ध तक ९४ पीढ़ीयों का परिगणन करनेवाले पार्गिटर के सिद्धान्त को ग्राह्य माना है, एवं उसी सिद्धान्त को भारतीय युद्ध तक कृत, त्रेता एवं द्वापरयुग समाप्त होने के जनश्रुति से मिलाने का प्रयत्न उन्होंने किया है। इन दोनों सिद्धान्तों को एकत्रित कर वे सगर राजा (४० वीं पीढ़ी) के साथ कृतयुग की समाप्ति, राम दाशरथि (६५ वीं पीढ़ी) के साथ त्रेतायुग का अंत, एवं कृष्ण (९५ वीं पीढ़ी) के देहावसान के साथ द्वापरयुग की समाप्ति ग्राह्य मानते हैं। (वायु. ९९-४२९)। उनका यहीं सिद्धांत निम्नलिखित तालिका में ग्रथित किया गया हैः—

युग	पीढ़ीयाँ	ऐतिहासिक कालमर्यादा	कालमर्यादा
कृतयुग	१-४० पीढ़ीयाँ	प्रारंभ से सगर राजा तक	४० × १६ = ६४० वर्ष
त्रेतायुग	४१-६५ पीढ़ीयाँ	सगर राजा से राम दाशरथि तक	२५ × १६ = ४०० वर्ष
द्वापरयुग	६६-९५ पीढ़ीयाँ	रामदाशरथि से कृष्ण तक	३० × १६ = ४८० वर्ष
कलियुग	—	भारतीय युद्ध के पश्चात्	(१०५० वर्ष)
कुल पीढ़ीयाँ -९५		पहले तीन युगों की कालमर्यादा-१,५२० वर्ष	

जयचन्द्रजी के अनुसार, कृत, त्रेता एवं द्वापर युगों की कुल कालावधि क्रमशः ६५०,४००, एवं ४७५ साल मानी गयी है। भारतीय युद्ध का काल १४२० ई. पू. निर्धारित करते हुए वे कृतयुग, त्रेतायुग, एवं द्वापरयुग का कालनिर्णय निम्नप्रकार करते हैं :—

कृतयुग—२९५० ई. पू.-२३०० ई. पू.

त्रेतायुग—२३०० ई. पू.-१९०० ई. पू.

द्वापारयुग—१९०० ई. पू.-१४२५ ई. पू.

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट वंशावलियाँ संपूर्ण न हो कर उनमें केवल प्रमुख राजा ही समाविष्ट किये गये हैं। इस बात पर ध्यान देते हुए, केवल उपलब्ध राजाओं के पीढ़ीयों के परिगणन के आधार पर कालनिर्णय का कौनसा भी सिद्धांत व्यक्त करना अशास्त्रीय प्रतीत होता है। फिर भी पौराणिक जानकारी को तर्कशुद्ध एवं ऐतिहासिक चौखट में बिठाने का एक प्रयत्न इस नाते जयचंद्रजी का उपर्युक्त सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है।

मन्वन्तर कालगणना पद्धति—पौराणिक साहित्य में उपलब्ध अन्य एक कालपरिगणनापद्धति 'मन्वन्तर पद्धति' नाम से सुविख्यात है। इस परिमाणपद्धति के अनुसार, कुल चौदह मन्वन्तर दिये गये हैं, जिनके अधिपति राजाओं को मनु कहा गया है। चौदह मन्वन्तर मिल कर एक कल्प बन जाता है। मन्वन्तर कालगणना पद्धति के परिमाण पौराणिक साहित्य में निम्नप्रकार दिये गये है :-

२ त्रुटि = १/२ निमेष.
२ आधा निमेष = १ निमेष.
२५ निमेष = १. काष्ठा.
३० काष्ठा = १ कला.
३० कला = १ मूहूर्त.
३० मुहूर्त = १ अहोरात्र.
२५ अहोरात्र दिन = १ पक्ष.
२ पक्ष = १ महीना.
६ महीने = १ अयन.
२ अयन = १ वर्ष
४३ लक्ष २० हजार वर्ष = १ पर्याय (महायुग), जिसमें कृत, त्रेता, द्वापर एवं कलि के प्रत्येकी एक युग समाविष्ट है।
७१ पर्याय = १ मन्वन्तर.
१४ मन्वन्तर = १ कल्प.

(भवि. ब्राह्म. २; मार्क. ४३; विष्णु. १.३; मत्स्य. १४२; स्कंद. ६.१५४; ७.१.१०५; पद्म. सृ. ३)।

पौराणिक साहित्य के अनुसार, वराहकल्प में से स्वायंभुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत एवं चाक्षुष नामक छः मन्वन्तर अब तक हो चुके है, एवं वर्तमान काल में वैवस्वत मन्वन्तर शुरू है। इस मन्वन्तर के पश्चात् सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि,

रौच्य एवं भौत्य नामक सात मन्वन्तर क्रमशः आनेवाले हैं।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त कल्पना के अनुसार, मनु वैवस्वत को इस सृष्टि का पहला राजा माना गया है, एवं उस साहित्य में निर्दिष्ट सूर्य, सोम आदि सारे वंश उसीसे उत्पन्न माने गये हैं। यदि भारतीय युद्ध का काल १४०० ई. पू. माना जाये, तो मनु वैवस्वत का काल इस युद्ध के पहले ९५ पीढ़ीयाँ अर्थात् (९५ × १८ वर्ष + १४०० =) ३११० ई. पू. साबित होता है।

कल्पों की नामावलि—मन्वंतरों के साथ-साथ कल्पांतरों की नामावलि भी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, किन्तु अतिशयोक्त कालमर्यादाओं के निर्देश के कारण, ये सारी नामावलियाँ अनैतिहासिक एवं कल्पनारम्य प्रतीत होती हैं। इनमें से मत्स्य में प्राप्त नामावलि विभिन्न पाठभेदों के साथ नीचे दी गयी है:— १. श्वेत (भव, भुव, भवोद्भुव); २. नीललोहित (तप); ३. वामदेव (भव); ४. रथंतर (रंभ); ५. रौरव (रौक्म, ऋतु); ६. देव (प्राण, क्रतु); ७. बृहत् (वह्नि); ८. कंदर्प (हव्यवाहन); ९. सद्य (सावित्र); १०. ईशान (भुव, शुद्ध); ११. तम (ध्यान, उशिक); १२. सारस्वत (कुशिक); १३. उदान (गंधर्व); १४. गरुड (ऋषभ); १५. कौर्म (षडज्); १६. नारसिंह (मार्जालिय, मज्जालिय) १७. समान (समाधि, मध्यम); १८. आग्नेय (वैराजक); १९. सोम (निषाद); २०. मानव (भावन, पंचम); २१. तत्पुरुष (सुप्तमाली, मेघवाहन) २२. वैकुंठ (चिंतक, चैत्रक); २३. लक्ष्मी (अर्चि, आकूति) २४. सावित्री (विज्ञाति, ज्ञान); २५. घोरकल्प (लक्ष्मी, मनस्, सुदर्श); २६. वाराह (भावदर्श, दर्श); २७. वैराज (गौरी, बृहत्); २८. गौरी (अंध, श्वेतलोहित); २९. माहेश्वर (रक्त); ३०. पितृ (पीतवासस्); ३१. सित (असित); ३२. विश्वरूप (वायु. २१; लिंग. १.४; मत्स्य. २८९; स्कंद ७.१०५)।

वसंतारंभकाल—ज्योतिर्विज्ञानीय तत्त्व का आधार ले कर प्राचीन वैदिक साहित्य का कालनिर्णय करने का अद्वितीय प्रयत्न लोकमान्य तिलकजी ने किया। उन्होंने प्रमाणित आधारों पर सिद्ध किया कि, जिस समय कृत्तिका नक्षत्र में वसंतारंभ था, एवं उसी नक्षत्र के आधार पर दिन-रात की गणना की जाती थी, उस समय ब्राह्मण ग्रंथों का निर्माण हुआ था। उसी प्रकार, वैदिक मंत्रसंहिताओं की रचना भी मृगशिरा नक्षत्र के काल में की गयी थी। खगोल एवं ज्योतिःशास्त्र के हिसाब से, कृत्तिका एवं मृगशिरा नक्षत्रों में वसंतसंपात क्रमशः आज से ४५०० एवं ६५०० सालों के पूर्व थी। इसी हिसाब से ब्राह्मण ग्रंथ एवं वैदिक संहिता का काल क्रमशः २५०० ई. पू. एवं ४५०० ई. पू. लगभग निश्चित किया जाता है।

सप्तर्षि शक—ज्योतिर्विज्ञान की कल्पना के अनुसार, आकाश में स्थित सप्तर्षि तारकापुंज की अपनी गति रहती है, एवं वे वह सौ साल में एक नक्षत्र भ्रमण करते हैं। इस प्रकार समस्त नक्षत्र मंडळ का भ्रमण पूर्ण करने के लिए उन्हें २७०० साल लगते हैं, जिस कालावधि को 'सप्तर्षि चक्र' कहते है।

सप्तर्षिकाल एवं शक का निर्देश पौराणिक साहित्य में प्राप्त हैं (वायु. ९९.४१८-४२२; भा. १२.२. २६-३१; ब्रह्मांड. ३.७४.२३१-२४०; विष्णु. ४.२४. ३३; मत्स्य. २७३.३९-४४)। इस शक को 'शककाल' एवं 'लौकिक काल' नामांतर भी प्राप्त थे। काश्मीर के ज्योतिर्विदों के अनुसार, कलिवर्ष २७ चैत्रशुक्ल प्रतिपदा के दिन इस शक का प्रारंभ हुआ था। इसी कारण इस शक में क्रमशः ४६ एवं ६५ मिलाने से परंपरागत शकवर्ष एवं ई. स. वर्ष पाया जाता है। अल्बेरुनी के ग्रंथ में (शक ९५२) 'सप्तर्षि शक' का निर्देश प्राप्त है, जहाँ उस समय यह शक मुलतान, पेशावर आदि उत्तर पश्चिमी भारत में प्रचलित होने का निर्देश प्राप्त है। आधुनिक काल में यह शक काश्मीर, एवं उसके परवर्ति प्रदेश में प्रचलित है। सुविख्यात 'राजतरंगिणी' ग्रंथ में भी इसी शक का उपयोग किया गया है।

भारतीय युद्ध का कालनिर्णय—प्राचीन भारतीय इतिहास में भारतीय युद्ध एक ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना है कि, जिसका कालनिर्णय करने से बहुत सारी घटनाएँ सुलभ हो सकती हैं।

पुलकेशिन् (द्वितीय) के सातवीं शताब्दी के ऐहोल शिलालेख में भारतीय युद्ध का काल ३१०२ ई. पू. दिया गया है। सुविख्यात ज्योतिर्विद आर्यभट्ट के अनुसार कलियुग का प्रारंभ भी उसी समय तय किया गया है।

किंतु फ्लीट के अनुसार, भारतीय युद्ध के कालनिर्णय की आर्यभट्ट की परंपरा काफ़ी उत्तरकालीन एवं अनैतिहासिक है। वृद्धगर्ग, वराहमिहिर आदि अन्य ज्योतिर्विद

एवं कल्हण जैसे इतिहासकार भारतीय युद्ध का काल कलियुग के पश्चात् ६५३ वर्ष, अर्थात् २४४९ ई. पू. मानते हैं। भारतीय ज्योतिषशास्त्र की इन दो परस्पर विरोधी परंपराओं से ये दोनों कालनिर्णय अविश्वसनीय प्रतीत होते हैं।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त राजवंश एवं पीढ़ीयों के आधार से भारतीय युद्ध का कालनिर्णय करने का सफल प्रयत्न पार्गिटर ने किया है। मगध देश के राजा महापद्मनंद से पीछे जाते हुए जनमेजयपौत्र अधिसीमकृष्ण तक छब्बीस पीढ़ीयों की गणना कर, पार्गिटर ने भारतीय युद्ध का काल ९५० ई. पू. सुनिश्चित किया है (पार्गि. १७९-१८३)।

किन्तु पौराणिक साहित्य एवं महाभारत में प्राप्त निर्देशों के अनुसार परिक्षित् राजा का जन्म, एवं महापद्म नंद राजा के राज्यारोहण के बीच १०१५ वर्ष बीत चुके थे। महापद्म नंद का राज्यारोहण का वर्ष ३८२ ई. पू. माना जाता है। इसी हिसाब से भारतीय युद्ध का काल १०१५ + ३८२ = १३९७ इ. पू. सिद्ध होता है। इसी काल में पौराणिक राजवंशों के ९५ पीढ़ीयों के काल में १७१० वर्षों का काल मिलाये जाने पर वैवस्वत मनु का काल निश्चित होता है। यह काल निश्चित करने से ययाति, मांधातृ, कार्तवीर्य अर्जुन, सगर, राम दाशरथि आदि का काल सुनिश्चित किया जा सकता है।

कई प्रमुख शक--सप्तर्षि शक के अतिरिक्त पौराणिक साहित्य में कई अन्य शकों का निर्देश पाया जाता है, जिनमें निम्नलिखित शक प्रमुख माने जाते हैं:--

१. परशुराम शक--इस शक का प्रारंभ शालिवाहन शक वर्ष ७४७ में हुआ। इसकी परिगणना, एक हज़ार साल का एक चक्र, इस हिसाब से होती है। इस प्रकार इस शक का चतुर्थ चक्र सांप्रत चालू है। सौर पद्धति के अनुसार इस शक का परिगणन किया जाता है।

दक्षिण भारत के केरल प्रांत में मंगलोर से लेकर कन्याकुमारी तक एवं तिनीवेल्ली जिले में यह पाया जाता है। इस शक का प्रारंभ केरल प्रांत में कन्या माह से, एवं तिनीवेल्ली जिले में सिंह माह से प्रारंभ होता है। ईसवी सन में से ८२५ साल कम करने से परशुराम शक का हिसाब हो सकता है।

२. विक्रम संवत्-इस संवत् का प्रारंभ ई. स. पू. ५७ माना जाता है। इस संवत् का प्रचार, गुजरात एवं बंगाल के अतिरिक्त बाकी सारे उत्तर भारत में पाया जाता है। नर्मदा नदी के उत्तर प्रदेश में इस संवत् का प्रारंभ चैत्र माह में होता है, एवं माह का परिगणन पौर्णिमा तक रहता है। गुजरात प्रदेश में इस संवत् का वर्ष कार्तिक माह में शुरु होता है।

३. कलियुग संवत्--(भारतीय युद्ध संवत् अथवा युधिष्ठिर संवत्)-इस संवत् का प्रारंभ ई. पू. ३१०२ में माना जाता है। स्कंद पुराण में यह प्रयुक्त है।

२. ग्रंथों का कालनिर्णय

वेद, उपवेद, उपनिषद्, स्मृति, महाभारत, पुराण आदि प्रमुख प्राचीन ग्रंथों का कालनिर्णय नीचे अकारादि क्रम से दिया गया है। इस कालनिर्णय के लिए उपयोग किये गये आधार ग्रंथों की नामावलि, एवं उनके लिए प्रयुक्त संक्षेप निम्नप्रकार हैं:—

गी. र.—गीतारहस्य (लो. बा. गं. टिळक)

धा. र.--धर्मरहस्य (के. ल. दप्तरी)

पु. नि.--पुराण निरीक्षण (त्र्यं. गु. काळे)

भा. का. नि.--भारतीय युद्धकालनिर्णय (के. ल. दप्तरी)

भा. ज्यो.--भारतीय ज्योतिःशास्त्र का इतिहास (शं. बा. दिक्षित)

भा. सा.--भारत सावित्री

म. उ.—महाभारत का उपसंहार (चिं. वि. वैद्य)

रा. का. नि.--रामचंद्रजन्मकालनिर्णय (के. ल. दप्तरी)

ह. प्र.—हरप्रसादशास्त्री की प्रस्तावना (Descriptive Catalogue of Sanskrit Manuscripts in the Collections.

ध. शा.-History of Dharmashastra (डॉ. पां. वा. काणे)

भारतीय विद्याभवन--History and Culture of Indian People (भारतीय विद्याभवन)

स्मिथ--The Early History of Indian People (व्हिन्सेन्ट स्मिथ)

रॅप्सन--Cambridge History of India, Vol. I (ई. जी. रॅप्सन)

डॉ. बेलवलकर-Systems of Sanskrit Grammar (डॉ. बेलवलकर)

ई. पू.--ईसा पूर्व

शा. पू.—शालिवाहन शक के पूर्व

卐 卐 卐

अग्नि पुराण--ई. स. ६००-९०० (हजरा); ई. स. ५००-५५० (पु. नि. १०२); ई. स. ८००-९०० (ह. प्र. १४७)।

अपरार्ककृत याज्ञवल्क्यस्मृतिभाष्य--ई. स. ११००-११३० (डॉ. काणे)।

अष्टांगहृदय--६ वी शताब्दी।

अथर्ववेद संहिता--ई. पू. ४०००-ई. पू. १०००; कई सूक्त ई. पू. ४००० के पूर्व।

आदि पुराण--ई. स. १२०३-१२२५ (हजरा)।

आपस्तंब गृह्य, धर्म एवं श्रौतसूत्र--ई. पू. ८००-४०० (डॉ. काणे); ई. पू. ३ री शताब्दी के पूर्व (गी. र. ५६१-५६२); ई. पू. १४२० (चिं. वि. वैद्य, संस्कृत वाङ्मय का इतिहास (अंग्रेजी), ३.७३)।

आर्यभटकृत 'आर्यभटीयम्'-- ई. स. ४७६-५००।

आश्वलायन गृह्य एवं श्रौतसूत्र--ई.स. पू.८००-४००; ई. स. पू. १०० (म. उ. ५३)।

ईश्वरकृष्णकृत सांख्यकारिका-- ई. स. २५०-३२५।

उत्पलकृत वराहमिहिर ग्रंथो के भाष्यग्रंथ--ई. स. ७८०-८७०।

उपनिषद्--उपलब्ध उपनिषद ग्रंथों के कालदृष्टि से तीन विभाग माने जाते है :-

(१) ब्राह्मण ग्रंथों के समकालीन उपनिषद ग्रंथ-- ई. पू. १००० के पूर्व; १. ऐतरेय उपनिषद; २. कौषीतकी उपनिषद; ३. तैत्तिरीय उपनिषद; ४. बृहदारण्यक उपनिषद; ५. छांदोग्य उपनिषद; ६. केन उपनिषद। इन उपनिषदों का काल पाणिनि के पूर्वकालीन माना जाता है।

(२) बुद्ध के पूर्वकालीन उपनिषद--१. कठ; २. श्वेताश्वतर; ३. ईश; ४. मुण्डक; ५. प्रश्न ६.महानारायण उपनिषद।

(३) बुद्धोत्तरकालीन उपनिषद (सांप्रदायिक उपनिषद ग्रंथ)--१. जाबाल उपनिषद, २. परमहंस उपनिषद; ३. सुबाल उपनिषद आदि।

उपवर्षकृत पूर्वमीमांसा एवं वेदांतसूत्र--ई. पू. १००-ई. स. १००।

उशनस्स्मृति--(स्मृति देखिये)।

ऋग्वेद--प्राचीनतम सूक्त ई. पू. ४००० (डॉ. काणे); ई. पू. २००० (ब्लुमफिल्ड); ई. पू. २५००-ई. पू. २००० (विन्टरनिट्ज)। ऋग्वेदसंहिता का सर्व सामामान्य रचनाकाल ई. पू. ४०००--ई. पू. १५००; ऋक्ससंहिता का संहिताकरण (कृष्णद्वैपायन व्यास के द्वारा)- ई. पू. २०००--ई. पू. १५००)।

एकाम्र पुराण (ओरिसा)--१० वीं-११ वीं शताब्दी (हजरा)।

ऐतरेय ब्राह्मण--ई. पू. ४०००-ई. पू. १०००।

कपिलकृत सांख्यसूत्र--ई. पू. ६ वी शताब्दी।

कल्कि पुराण--१८ वी शताब्दी (हजरा)।

कपिल संहिता--ई. स. ११००-१२०० (ह. प्र. २१८)।

कल्हणकृत राजतरंगिणी--ई. स. ११५०-ई. स. ११६०।

कात्यायन वररुचिकृत वार्तिक--ई. पू. ३००-ई. पू. २०० (पाणिनिकालीन भारतवर्ष, डॉ. अगरवाल); ई. पू. ५००-इ. पू. ४०० (पु. नि. २९१); ई. पू. ६००-ई. पू. ४०० (डॉ. बेलवलकर)।

कात्यायन श्रौतसूत्र (पारस्कर सूत्र)--ई. पू. ८००-ई. पू. ४०० (डॉ. काणे); ई. पू. १००० (चिं. वि. वैद्य, संस्कृतवाङ्मय का इतिहास)।

कात्यायन स्मृति--ई. स. ४००-७०० (डॉ. काणे, २१८)।

कालिका पुराण--ई. स. १००० (हजरा)।

काशिका (वामन एवं जयादित्य कृत)--ई. स. ६५०-६६०।

कुमारिलभट्टकृत तंत्रवार्तिक एवं श्लोकवार्तिक--ई. स. ६५०-७००।

कुल्लुककृत मनुस्मृतिभाष्य--ई. स. ११५०-१३००।

कूर्म पुराण--ई. स. २ री शताब्दी (ह. प्र. १८७); ई. स. ५०० के पूर्व (पु. नि. १४७)।

कौटिलीय अर्थशास्त्र--ई. पू. ३००-ई. पू. १००।

गरुड पुराण--ई. स. ६५०- ई. स. ९५० (हजरा); ई. स. ३ री शताब्दी (ह. प्र. १९३)।

गर्ग संहिता--ई. पू. १४५ (म. उ. ४७); ई. स. १० वी शताब्दी (ह. प्र. २१७)।

गौडपादकृत सांख्यकारिकाटीका एवं युक्तिदीपिका--ई. स. ७००-७५०।

गौतम धर्मसूत्र --ई. पू. ६००-ई. पू. ४०० (डॉ. काणे); ई. पू. ६०० (ध. र. २३०); ई. पू. ३५० (डॉ. जायसवाल); पुनर्संस्करण ई. पू. २०० ।

चरक संहिता—ई. पू. २ री शताब्दी, जो काल आचार्य चरक कनिष्क राजा के समकालीन होने के कारण निश्चित किया गया है। इस ग्रंथ का उपलब्ध संस्करण दृढबल वाग्भट के द्वारा किया गया है, जिसका काल ई. पू. १ ली शताब्दी माना जाता है।

चार्वाक दर्शन—युधिष्ठिरशक ६६१ ।

जातूकर्ण्य स्मृति-ई. स. २००-४०० (डॉ. काणे)।

जैन सूत्र—ई. पू. ३०० । इन सूत्रों में निम्नलिखित ग्रंथ समाविष्ट हैं:--१. आचारांग सूत्र; २. सूत्रकृतांग; ३. स्थानांग; ४. समवायांग; ५. भगवती सूत्र; ६. ज्ञाताधर्मकथा; ७. उपासकदशांग; ८. अंतकृद्दशां; ९. अनुत्तरौपपातिकदशांग; १०. प्रश्नव्याकरण; ११. विपाक; १२. दृष्टिवाद ।

जैमिनि अश्वमेध--ई. पू. १०० (पु. नि. ८२)।

जैमिनिकृत पूर्वमीमांसा—ई. पू. ४००-ई. पू. २०० ।

तैत्तिरीय संहिता—ई. पू. ४०००-ई. पू. १०००; कई सूक्त ई. पू. ४००० के पूर्व (डॉ. काणे); ई. पू. २३५० (लो. तिलक, ओरायन); ई. पू. १४२६ (वेदकालनिर्णय पृष्ठ २६)।

त्रिपिटक—ई. पू. १ ली शताब्दी। बौद्ध धर्म के ये अनुश्रुतिग्रंथ विनयपिटक (७ ग्रंथ), सुत्तपिटक (५ संकलन), अभिधम्मपिटक (७ ग्रंथ) इन तीन विभागों में विभाजित है।

देवल स्मृति—ई. स. ४००-६०० (डॉ. काणे. पृ. २२१)।

देवी पुराण--७ वीं शताब्दी का उत्तरार्ध (हजरा)।

धर्मसिंधु (काशीनाथ उपाध्याय कृत)—ई. स. १७९० ।

नंदी पुराण--८ वीं-९ वीं शताब्दी (हजरा)।

नारद पुराण--ई. स. ७००-१००० (हजरा)। इस पुराण में अन्य पुराणों की एक सूची प्राप्त है, जिसका काल ई. स. ५०० के पूर्व का माना जाता है (पु. नि. ९४)।

नारद स्मृति—ई. स. १००-४०० (डॉ. काणे.)।

नृसिंह पुराण—९ वी शताब्दी (हजरा); ई. स. १४०० के पूर्व (ह. प्र.)।

निरुक्त (यास्ककृत)--ई. पू. ८००-५००

पतंजलिकृत योगसूत्र--ई. पू. १००-ई. स. ३००; १५० ई. पू. (डॉ. भांडारकर) (म. उ. ५८)।

पतंजलिकृत व्याकरण महाभाष्य--ई. पू. १५०-ई. स. १०० (म. उ. ५८); ई. पू. १४० (पु. नि. २८९)।

पद्म पुराण--ई. स. १४ वीं शताब्दी; उत्तरकाण्ड-ई. स. ९००-१५०० (हजरा)।

पराशर स्मृति--ई. स. १००-५०० (डॉ. काणे, पृ. १५५)।

पाणिनिकृत अष्टाध्यायी--ई. पू. ५००-ई. पू. ३००; ई. पू. १२००-ई. पू. ६०० (पु. नि. २९१-९२); ई. पू. ४८०-४१० (डॉ. आगरवाल)।

पारस्कर गृह्यसूत्र-ई. पू. ५००; वर्तमान संस्करण-२०० ई. पू. (डॉ. जायसवाल)।

पुलस्त्य स्मृति--ई. स. ४००-७०० (डॉ. काणे, २२८)।

बृहस्पति स्मृति--ई. स. २००-४०० (डॉ. काणे, २१०); ई. स. ७ वीं शताब्दी (सेक्रेड बुक्स ऑफ दी ईस्ट, ३३.२७६)।

बौधायन धर्मसूत्र--ई. पू. ५००-२०० (डॉ. काणे, ३०)।

बौधायन श्रौतसूत्र--ई. पू. ८००-४०० (डॉ. काणे, गीतारहस्य ५६२)।

बौधायन स्मृति--ई. पू. ४०२ (स्मृति देखिये)।

ब्रह्म पुराण--मूल रचना-ई. स. ५ वीं शताब्दी के पूर्व; ई. स. १० वीं-१२ वीं शताब्दी; वासुदेवमहात्म्य अ. १७६-२१३-१३ वी शताब्दी (हजरा)।

ब्रह्मवैवर्त पुराण--ई. स. ८००-९०० (ह. प्र. १५९)।

ब्रह्मांड पुराण--ई. स. ३००-६०० (हजरा); ई. स. ४०० के पूर्व (पु. नि. १४३); ई. स. ४ थी-५ वी शताब्दी (ह. प्र.)।

बृहद्धर्म पुराण--१३ वीं-१४ वीं शताब्दी।

बृहस्पति स्मृति--ई. स. ३००-५००।

भगवद्गीता—ई. पू. २०० (विंटरनिट्ज); ई. पू. ५०० (गी. र. ५६४); ई. पू. ५००-२०० (डॉ. काणे.); ई. पू. २०००-१००० चिं. वि. वैद्यकृत संस्कृत-वाङ्मय का इतिहास); ई. पू. ११९७ (ध. र. १६६-१७२)।

भगवद्गीताकथन की तिथि-- मार्गशीर्ष शुक्ल १३ (भारतसावित्री, नीलकंठी टीका); मार्गशीर्ष शुक्ल ११ (ज. स. करंदीकर); मार्गशीर्ष अमावास्या (ध. र.)।

भविष्य पुराण--६ वी-७ वी शताब्दी (हजरा)।

भविष्योत्तर पुराण--ई. स. १०० (हजरा)।

भागवत--५ वीं-१० वीं शताब्दी (हजरा); ५ वीं शताब्दी के मध्य में (कृष्णमूर्ति शर्मा); ९ वीं शताब्दी (डॉ. काणे); ई. स. ८०० के पूर्व में (पु. नि. ९०); ई. स. ३९८ (ध. र.)।

भासकृत नाट्यकृतियाँ--ई. स. २००-३०० (गी. र. ५५५); ई. पू. २००-३०० (पं. गणपतिशास्त्री)।

मत्स्य पुराण--ई. स. २००-४०० (हजरा); ई. स. २ री शताब्दी के पूर्व में (ह. प्र. १९१; पु. नि. १५२)।

मनु स्मृति--ई. पू. २००-ई. स. १०० (डॉ. काणे); ई. पू. १५२ (स्मृति देखिये)।

महाभारत--ई. पू. १४०० (हिस्ट्री ऑफ इंडियन कल्चर अँड पीपल), जो कालनिर्णय पुराणों में प्राप्त कलियुगीन राजाओं की वंशावलि, एवं आचार्यों की नामावलि के आधार पर तय किया गया है। इसी ग्रंथों के आधार से पार्गिटर ने भारतीय युद्ध का काल ९५० ई. पू. तय किया है। किन्तु इस कालनिर्णय की अपेक्षा ई. पू. १४०० ही अधिक सुयोग्य प्रतीत होता है।

ज्योतिषशास्त्रीय अनुमान--आर्यभट के अनुसार भारतीय युद्ध का काल ई. पू. ३१०२ तय किया गया है। वृद्धगर्ग, वराहमिहिर एवं कल्हण के अनुसार २४४९ ई. पू. माना गया है।

डॉ. जायसवाल के अनुसार महाभारत की आधारभूत सामग्री यद्यपि प्राचीन है, फिर भी उसका उपलब्ध संस्करण ई. पू. १५० में तैयार किया गया है, एवं ई. स. ५०० तक उस संस्करण में अनेकानेक नई सामग्री का जोड देने का कार्य शुरू था।

डॉ. सुखटणकर के अनुसार, महाभारत की रचना सर्वप्रथम बद्रिकाश्रम में हुई, एवं ई. पू. ३ री --२ री शताब्दी तक भृगुवंशीय ब्राह्मणों के द्वारा उसके संपादन, परिवर्तन एवं संशोधन का कार्य होता ही रहा। चिं. वि. वैद्य एवं जयचन्द्र विद्यालंकार के अनुसार, महाभारत का मूल रचनाकाल ३५० ई. पू. एवं ५०० ई. पू. माना जाता है।

माठरकृत माठरवृत्ति--(सांख्यकारिकाभाष्य) ई. स. ४००-५००।

मार्कंडेय पुराण--ई. स. ३००-६०० (हजरा); 'सप्तशती' आख्यान--ई. स. ९९८। शंकराचार्य, बाणभट्ट एवं मयुरभट्ट ने अपने ग्रन्थों में इस पुराण का निर्देश किया है।

मेधातिथिकृत मनुस्मृतिभाष्य--ई. स. ८२५-९००।

मैत्र्युपनिषद्--ई. पू. १९०० (चिं. वि. वैद्यकृत संस्कृत वाङ्मय का इतिहास)।

यमस्मृति--(स्मृति देखिये)।

यास्ककृत निरुक्त--ई. पू. ७००।

याज्ञवल्क्यस्मृति--ई. पू. ३००-ई. स. १०० (डॉ. काणे, १८४); ई. पू. १०२ (ध. र. २२७)।

युक्तिदीपिका (सांख्यकारिकाभाष्य)--ई. स. ६००-६५०।

लगधकृत ऋग्वेदी वेदांगज्योतिष--ई. पू. १२६९-११८१ (लो. टिळक-ओरायन ३७-३८); ई. पू. १४०० (भा. ज्यो. ८८)।

लिखित स्मृति--ई. पू. ४०२-२०२ (डॉ. काणे, २३७)।

वररुचिकृत प्राकृतप्रकाश-ई. स. ६ वीं शताब्दी।

वराह पुराण-ई. स. १० वीं शताब्दी के पूर्व (हजरा)।

वराहमिहिरकृत 'बृहज्जातक,' 'बृहत्संहिता,' एवं 'पंचसिद्धांतिका'-ई. स. ५००-५७५।

वसिष्ठ धर्मसूत्र--ई. पू. ५००-३०० (डॉ. काणे)

वसिष्ठ स्मृति--ई. पू. ६०० (डॉ. काणे)।

वाग्भट--ई. स. ४ थी शताब्दी।

वाचस्पतिकृत योगसूत्रभाष्य--ई. स. ८२०-९००।

वात्स्यायन कामसूत्र--ई. स. ३०० (चकलदार)।

वात्स्यायन न्यायसूत्रभाष्य--ई. स. ४०० (डॉ. विद्याभूषण)।

वामन पुराण--ई. स. ६००-९०० (हजरा); ई. स. २ री शताब्दी (ह. प्र. १८३)।

वायु पुराण--ई. स. ३५०-५५० (हजरा); मूलग्रंथ की रचना ई. पू. २०३८ (ध. र. १६४); उपलब्ध संस्करण ई. स. ६२० (पार्गि. ५०); ई. स. ४०० (पु. नि. ७०)।

वाल्मीकि रामायण--वाल्मीकि कृत आदिकाव्य--ई. पू. ३००; वाल्मीकि का प्रचलित रामायणग्रंथ-ई. पू. २ री शताब्दी।

अन्य मत--डॉ. याकोबी -ई. पू. ६ वीं शताब्दी; डॉ. मॅक्डोनेल-ई. पू. ६ वीं शताब्दी; डॉ. मोनियर विल्यम्स-ई. पू. ५ वीं शताब्दी; श्री. चिं. वि. वैद्य-ई. पू. ५ वी शताब्दी; डॉ. कीथ-ई. पू. ४ थी शताब्दी; डॉ. विंटरनित्स-ई. पू. ३ री शताब्दी।

विलुप्त धर्मसूत्रग्रंथ (काठक, कालापक, मौद्क, पैप्पलाद, आर्थवण आंगिरस)-ई. पू. ७००।

विश्वरूपकृत बृहदाणरयकोपनिषदभाष्य--ई. स. ७९०-८५०; याज्ञवल्क्य स्मृतिभाष्य-ई. स. ७९०-८५०।

विष्णु पुराण--ई. स. ३००-५०० (हजरा); ई. स. ५ वी शताब्दी (पार्गि. ८०); ई. स. ३ री शताब्दी (ह. प्र.)।

विष्णुधर्मसूत्र--ई. स. १००-५५० (डॉ. काणे)।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण--ई. स. ६००-९०० (हजरा)।

वेदांगज्योतिष (लगधकृत)—ई. पू. ८००-४००।

वेदांतसूत्र--ई. पू. १५०-१०० (म. ज. ५१)। उपलब्ध वेदांतसूत्रों में जैन, बौद्ध एवं पांचरात्र धर्मसिद्धांतों का खंडन प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ का उपलब्ध संस्करण बुद्धोत्तरकालीन है।

व्याडिकृत 'संग्रह' (व्याकरणग्रंथ) --ई. पू. ३००।

व्यासकृत योगसूत्रभाष्य--ई. स. ४००-५००।

व्यासस्मृति—ई. स. २००-५०० (डॉ. काणे, २३८)।

शंकराचार्यकृत गीता, उपनिषद, एवं ब्रह्मसूत्र-भाष्य—ई. स. ७८८-८२० (डॉ. काणे. २६१)।

शंखस्मृति—ई. पू. ४०२-२०२ (डॉ. काणे. २.३७)।

शतपथ ब्राह्मण—ई. पू. ४०००-१००० (डॉ. काणे); ई. पू. ३१०० (भा. ज्यो. १२८); ई. पू. २५०० (रामायण समालोचना ८.४१); ई. पू. १४२२ (विविधज्ञानविस्तार १९२८, पृ. २७)। इस ग्रन्थ का उत्तरार्ध काफ़ी उत्तरकालीन माना जाता है, जिसका काल ई. स. पू. ११२२ माना जाता है।

शबरकृत पूर्वमीमांसाभाष्य—ई. स. २००-४००।

शाकटायनकृत उणादि सूत्रपाठ--ई. पू. १००० (डॉ. बेलवलकर)।

शिव पुराण—ई. स. ९ वीं शताब्दी (हजरा)।

शौनक गृत्समदकृत ऋग्वेदानुक्रमणी--ई. पू. २०५० (पु. नि. २८५-२८६)।

संवर्त स्मृति--(स्मृति देखिये)।

सत्याषाढ श्रौतसूत्र--ई. पू. ८००-४००।

सांब पुराण--ई. स. ९ वीं शताब्दी।

सायण कृत ऋक्संहिता भाष्य—ई. स. १३००-१३८६।

सुश्रुत संहिता—काल अनिश्चित, किंतु ८ वीं शताब्दी में इस ग्रन्थ की ख्याति विदेश में पहुँची थी।

स्कंद पुराण--ई. स. ७ वीं शताब्दी-९ वीं शताब्दी।

स्मृति--विभिन्न स्मृतिग्रंथों की जानकारी कालानुक्रम से नीचे दी गयी है:—

(१) गौतम स्मृति--ई. पू. ६०२।

(२) वसिष्ठ स्मृति--ई. पू. ६०२ (गौतमस्मृति के उत्तरकालीन)।

(३) शंखलिखित स्मृति--ई. पू. ४०२-२०२।

(४) बौधायन स्मृति—ई. पू. ४०२।

(५) विष्णु स्मृति--ई. पू. १७५।

(६) मनु स्मृति—(भृगुप्रोक्त)--ई. पू. १५२

(७) बृहस्पति स्मृति—ई. पू. १२७।

(८) व्यास स्मृति—महाभारतकालीन।

(९) अत्रिस्मृति
(१०) अंगिरस्स्मृति
(११) आपस्तंबस्मृति
(१२) उशनस्स्मृति
(१३) कात्यायनस्मृति
(१४) दक्षस्मृति
(१५) पराशरस्मृति
(१६) यमस्मृति
(१७) याज्ञवल्क्यस्मृति
(१८) शातातपस्मृति
(१९) हारितस्मृति
} ई. पू. १०२

स्मृतिचंद्रिका (देवन्नभट्टकृत)--ई. स. १२००-१२२५।

हरदत्तकृत गौतमसूत्रभाष्य—ई. स. ११५०-१३००।

हाल सातवाहनकृत गाथासप्तशती--ई. स. १९-१०२ (पु. नि. २१९)।

३. व्यक्तियों का कालनिर्णय

अजातशत्रु (शिशु. भविष्य.)--ई. पू. ४८८ (डॉ. दप्तरी); मृत्यु. ई. पू. ५२७ (रॅप्सन)।

अधिसीम कृष्ण--(सो. पूरु. भविष्य) जनमेजय राजा के इस प्रपौत्र से कलियुग का प्रारंभ होता है। पार्गिटर के अनुसार, इस राजा से लेकर महापद्म नंद तक छब्बीस पीढीयाँ (२६×१८=४६८ वर्ष) बीत गयी थीं।

कृत, त्रेता, द्वापर, एवं कलि इन चार युगों के १००० साल बीत जाने के बाद द्वादशवर्णीय सत्र किया जाता था। उनमें से द्वितीय द्वादशवर्णीय सत्र के समय यह राज्य करता था (डॉ. दप्तरी)।

अभिमन्यु--विवाह-आषाढ शुक्ल एकादशी, मृत्यु-मार्गशीर्ष शुक्ल द्वादशी (भा. का. नि.); पौष कृष्ण अष्टमी (भा. सा.)।

अशोक--(मौर्य. भविष्य.) राज्याभिषेक-ई. पू. २७३ (गौरीशंकर ओझा)।

आंध्र--(भविष्य.) इस राजवंश का प्रारंभ ई. पू. २४०, एवं समाप्ति ई. स. २२५ मानी जाती है (स्मिथ)। इस वंश के राजाओं ने ई. पू. ५५ में मगध देश जीत लिया था (डॉ. दप्तरी)।

अपिशालि (व्याकरणकार)--ई. पू. ७५०-ई. पू. ७००।

आयु--(सो. पुरुरवस्.) ई. पू. २१८७-ई. पू. २१०० (पु. नि. ३२७); ई. पू. २१०२ (डॉ. दप्तरी ६.३)।

इक्ष्वाकु--ई. पू. २६०० (पु. नि. ३१५); ई. पू. २१२७ (डॉ. दप्तरी)।

इडविडा--ई. पू. १६६४ (रा. का. नि. ४६)।

उदयन--(सो. कुरु. भविष्य.) ई. पू. ६०० (पु. नि. २७९)।

उपवर्ष (पाणिनीय परंपरा का व्याकरणकार)--ई. पू. १२००-ई. पू. ९००।

उलूक--वध-पौष अमावास्या (भा. सा.)।

कंस--वध-ई. पू. १२३७ (डॉ. दप्तरी)।

कर्ण--वध-पौष कृष्ण १४ (भा. सा.)।

कलि (युग)--इस युग का प्रारंभ ई. पू. ३१०२ माना जाता है।

कल्कि--इस अवतार का प्रारंभ ई. पू. ४०२ में माना जाता है (डॉ. दप्तरी)।

कश्यप--इस ऋषि का काल ई. पू. ५६९४ माना जाता है (पु. नि. ३०९)।

काकवर्ण--(शिशु. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ७०० के पूर्व (पु. नि. ३२४); ई. पू. ५७२-ई. पू. ५५४ (डॉ. दप्तरी)।

काण्व वंश--(काण्व. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ७०० के पूर्व (पु. नि. ३२४); ई. पू. १००-ई. पू. ५५ (डॉ. दप्तरी)।

किलकिल वंश (कैनकिल)--समाप्ति-ई. स. ५५० (पु. नि. २३७)।

कृष्ण--(सो. वृष्णि.) ई. पू. १२५१-११७५ (डॉ. दप्तरी); निर्वाण ई. पू. १२८९। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से कृष्ण एवं उसके परिवार का काल ई. पू. १९५०-१४०० माना जाता है।

२. (आंध्र. भविष्य.) ई. पू. १६८-ई. पू. १५० (पु. नि. २१)।

क्षेमक वंश--(सो. पूरु. भविष्य.) ई. पू. ३८४ (पु. नि. २७९; ३२७); समाप्ति-ई. पू. ८०१।

गर्ग (यादवपुरोहित)-ई. पू. ११८१ (पु. नि. २५०)।

गुप्त वंश--राज्यकाल-ई. स. ३१९-४९९ (पु. नि. ४२७)।

गोनर्द राजा (गोनंद राजा)--राज्यकाल-ई. पू. १०६३ (पु. नि. २४५)। कृष्ण के द्वारा वध-ई. पू. १३१५ (राजतरंगिणी १.५०-७०)।

२. ई. पू. ११९२-११८२ (पु. नि. २४६)।

गौतमीपुत्र--(आंध्र. भविष्य.) राज्यकाल-ई. स. १४२-१४३ (पु. नि. २१९)।

घटोत्कच--वध-पौष कृष्ण ११।

चंद्रगुप्त--(मौर्य. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ३२१-२९७ (रॅप्सन); राज्याभिषेक-ई. पू. ३१२ (पु. नि. १९३; २०४; ३१५; डॉ. दप्तरी)।

चाक्षुष मनु--ई. पू. २४२२ (रा. का. नि.)।

जनमेजय पारिक्षित (द्वितीय)--ई. पू. ११८७ (पु. नि. २७७)।

जयद्रथ--वध-पौष कृष्ण ९ (भा. सा.)।

जरासंध--वध-ई. पू. १२१० (डॉ. दप्तरी)।

तृणबिंदु (राजा)--ई. पू. १६९४ (रा. का. नि. ४६)।

दक्ष प्रजापति--ई. पू. ५७७४ (पु. नि. ३१४)।
२. (स्वायंभुव)-ई. पू. २६५४ (डॉ. दत्तरी)।
३. (चाक्षुष)-राज्यकाल—ई. पू. २२०६—ई. पू. २१५०।

दिवाकर--(सू. इ. भविष्य.) ई. पू. ११०६ (ध. र. १७१)।

दीर्घतमस् (ऋषि)--ई. पू. २००० (पु. नि. २८१)।

दुर्योधन—वध-पौष अमावस्या (भा. सा.)।

द्रुपद्--वध-पौष कृष्ण १३ (भा. सा.)।

द्रोण--वध-पौष कृष्ण १२ (भा. सा.)।

धृष्टद्युम्न—वध- पौष अमावस्या (भा. सा.)।

नंद वंश—(नंद. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ३८४-३१२ (पु. नि. २०२); ई. पू. ४२२-ई. पू. ३२२ (ध. र. २१७)।

नारायण--(कण्व. भविष्य.) मृत्यु- ई. पू. ६५ (डॉ. दत्तरी)।

निमि—(सू. निमि.) ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७८)।

पंचशिख (आचार्य)--ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७८)।
२. बुद्ध के समकालीन एक आचार्य (म. उ. ५९)।

परशुराम (जामदग्न्य)—जन्म-ई. पू. १५८८ (पु. नि. २६७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से परशुराम एवं उसके 'भार्गव' वंशजों का काल ई. पू. २५५०-२३५० माना जाता है (वेदिक एज, २८९)।

परिक्षित्--(सो. कुरु.) ई. पू. १२६३ (पु. नि. १९१)।

पालक--(प्रद्योत. भविष्य.) ई. स. ४७० (पु. नि. १९२)।

पुरूरवस्—ई. पू. २१७७ (पु. नि. २७७; २७९)।
इसीके राज्यकाल में पहला द्वादशवर्षीय सत्र संपन्न हुआ था (ध. र. १५०)।

पुलोमत्--(आंध्र. भविष्य.) ई. स. २४९-२५० (पु. नि. २२०); ई. स. २११-२२५ (स्मिथ)।

पुष्यमित्र—(शुंग. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. १७५-१३९ (पु. नि. २८९); ई. पू. १८४-१४८; जन्मकाल—ई. पू. २१३; अश्वमेधारंभ ई. पू. १७५ (युग पुराण)।

पृषदश्व--ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७९)।

प्रद्योत--(प्रद्योत. भविष्य.) ई. पू. ४७० (पु. नि. १९२)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से इसका राज्यकाल ई. पू. ९२०-ई. पू. ७८२ माना जाता है।

प्रसेनजित्--(सू. इ. भविष्य.) ई. पू. ६०० (पु. नि. २७९)। यह बुद्ध का समकालीन राजा था।

बलि वैरोचन--इंद्रपदप्राप्ति- ई. पू. १६७८ (डॉ. दत्तरी)।

बुद्ध--ई. पू. ७९४-ई. पू. ५१० (पु. नि. ४६७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से गौतम बुद्ध का निर्वाण काल ई. पू. ५४४ माना जाता है।

बृहद्रथ--(सो. मगध.) ई. पू. १४०१ (डॉ. दत्तरी)

भगदत्त--वध--पौष कृष्ण १० (भा. ६)।

भर्तृहरि--ई. स. ६१० (पु. नि. २९१)।

भास (कवि)--ई. स. २००-३०० (गी. र. ५५५)।

भीष्म-पतन-पौष कृष्ण ८; निर्याण-फाल्गुन कृष्ण ८।

मगध वंश—(सो. मगध. भविष्य.) राज्यकाल—ई. पू. १९२०-ई. पू. ९२०।

मनु (स्वायंभुव)--ई. पू. २६७० (रा. का. नि. ५५)।

मन्द (असुरदेश का शूद्र राजवंश)--राज्यकाल--ई. पू. ७००--ई. पू. ५५० (पु. नि. २९४)।

मन्वन्तर--विभिन्न मन्वन्तरों का कालनिर्णय निम्न-प्रकार है :-

मन्वन्तर	कालमर्यादा
स्वायंभुव मन्वन्तर	ई. पू. २७७०-२६६६
स्वारोचिष मन्वन्तर उत्तम मन्वन्तर तामस मन्वन्तर	ई. पू. २६६६-२६२२
रैवत मन्वन्तर	ई. पू. २६२२-२४२२
चाक्षुष मन्वन्तर	ई. पू. २४२२-२१५०
वैवस्वत मन्वन्तर	ई. पू. २१५० से आगे। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से वैवस्वत मनु का काल ई. पू. ३१०० माना जाता है।

(रा. का. नि. ४६-५६)

मरु--(सू. इ.) ई. पू. १३३० (ध. र. १६५)।

महानंदिन्--(शिशु. भविष्य.) ई. पू. ३८४ (पु. नि. २७९); अंत-ई. पू. ४१२ (डॉ. दप्तरी)।

महापद्म--(नंद. भविष्य.) राज्याभिषेककाल-ई. पू. ३९८ (डॉ. दप्तरी)।

महावीर--जन्म ई. पू. ५९९; निर्वाण-ई. पू. ५२७ (पु. नि. १९२-१९३)।

मांधातृ--जन्म-ई. पू. २१८० (पु. नि. २६७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से मांधातृ का काल ई. पू. २७५० लगभग माना जाता है।

मौर्य वंश--राज्यकाल-ई. पू. ३१२-ई. पू. १७५ (पु. नि. २१५); ई. पू. ३२२-ई. पू. १८५ (स्मिथ)।

ययाति--(सो. आयु.) ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७९); ई. पू. २०४२ (ध. र. २०९)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से ययाति का राज्यकाल ई. पू.३००० लगभग माना जाता है।

युधिष्ठिर--ई. पू. १२६३ (पु. नि. २६३)।

युधिष्ठिर शक--पौराणिक परंपरा के अनुसार, ई. पू. ३१०२ यह युधिष्ठिर शक का प्रारंभ माना जाता है। इस शक के प्रारंभ के संबंध में अन्य कई अभ्यासकों के अभिमत निम्नप्रकार हैः--ई. पू. २२००-ज. स. करंदीकर; ई. पू. २५२६-राजतरंगिणी; ई. पू. १९२०-आर्यभट।

यौवनाश्व--ई. पू. २१७० (पु. नि. २७९)।

रजि--(सो. पुरुरवस्.) इंद्रपदप्राप्ति-ई. पू. १६५० (डॉ. दप्तरी)। इसने प्रह्लाद से इंद्रपद की प्राप्ति की थी।

राम दाशरथि--आधुनिक इतिहास की दृष्टि से राम दाशरथि एवं उसके वंशजों का काल ई. पु. २३५०-१९५० माना जाता है।

रैवत (मनु)--ई. पू. २६२२ (रा. का. नि. ५५)।

लगध (वेदांगज्योतिष का कर्ता)-- ई. पू. १२६९-११८१ (लो. तिलक, ओरायन))

वराहमिहिर--जन्म-ई. पू. ५११८८ डॉ. (दप्तरी)।

विक्रमादित्य (विलव)--(आंध्र. भविष्य.) मगध-विजय-ई. पू. १३३ (डॉ. दप्तरी)

वृषसेन-- वध- पौष कृष्ण १२ प्रातःकाल में (भा. सा.)।

वैवस्वत मनु--ई. पु. २५५० (पु. नि. २७९); ई. पु. २१५० (रा. का. नि. ४७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से वैवस्वत मनु का काल ई. पू. ३१०० माना जाता है (मन्वंतर देखिये)

व्यास-जन्म- ई. पू. १२९३-२१८९ (डॉ. दप्तरी)।

२. भागवत का रचयिता, जो बुद्धोत्तर काल (ई. पू.-४००) में उत्पन्न हुआ था। महाभारत के शांति एवं अनुशासन पर्वों की रचना इसके द्वारा ही हुई थी।

शकुनि-- मृत्यु- पौष अमावस्या के दिन (भा. सा.)।

शंकराचार्य--ई. स. ७८८-८२० (डॉ. काणे, २६१)। जन्म-ई. स. ६१० (गी. र. ५५९)।

शतानीक--(सो. कुरु. भविष्य.) ई. पू. ६०० (पु. नि. ३२६)।

शल्य--वध- पौष अमावस्या (भा. सा.)।

शाकटायन--(व्याकरणकार)-ई. पू. १००० (डॉ. बेलवलकर)।

शालिशूक--(मौर्य. भविष्य.) ई. पू. २१९ (पु. नि. ३१७)।

शिखंडिन्--वध- पौष अमावस्या (भा. सा.)।

शिशुक--(आंध्र. भविष्य.) ई. पू. १९१-१६८ (पु. नि. २१८)।

शिशुनाग वंश--(शिशु. भविष्य.) ई. पू. ७८२-४२२; ई. पू. ६४२-३२० (स्मिथ)।

शुंग--(शुंग. भविष्य.) ई. पू. १८५-१७३।

शुचि--(सो. मगध. भविष्य.) ई. पू. ९६७-९३८ (ध. र. १७२)।

शौनक-- (सो. क्षत्र.) ई. पू. २०५० (पु. नि. २८५-२८६)।

२. ई. पू. ११०२-१०९० (पु. नि. २८६)। यह शतानीकपुत्र जनमेजय राजा का समकालीन था।

श्रीशातकर्णि-- (आंध्र. भविष्य.) ई. पू. १५०-१४० (पु. नि. २१८)।

श्वेतकेतु--ई. पू. २१०२ (ध. र. १७९)।

सहस्रार्जुन--(सो. सह.) ई. पू. १५८७-१५६७ (पु. नि. २८४)।

सावर्णि मनु-ई. पू. १६७८-१६७४(ध. र. २०६)।

सुपर्ण--(सू. इ. भविष्य.) ई. पू. ९५० (ध. र. १७१)।

सुमित्र--(सू. इ. भविष्य.) मृत्यु-ई. पू. ३८४ (पु. नि. २१४; २७९); ई. पू. ६०१ (डॉ. दप्तरी)।

सृष्टि-उत्पत्तिशक-- पौराणिक कालगणना के अनुसार लगभग दो अब्ज (वर्षों १, ९६,०८, ५३०३४ वर्ष) के पहले इस सृष्टि की उत्पत्ति हुई थी। भूगर्भशास्त्रज्ञों के अनुसार यही काल १॥ अब्ज-२ अब्ज वर्ष मानी गयी है।

धार्मिक संकल्प में ' अद्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्धे, श्रीश्वेतवाराहकल्पे, वैवस्वत मन्वन्तरे, कलियुगे इत्यादि शब्दों में इस शक का निर्देश प्राप्त है।

स्वायंभुव मनु-- ई. स. पू. ३१०२ (पु. नि. ३१५)। इसका एवं इसके वंशजों का राज्यकाल ई. पू. २६७०-२१५० माना जाता है (डॉ. दप्तरी)।

हाल--(आंध्र. भविष्य.) ई. स. ९९-१०२ (पु. नि. २१९)।

हिरण्यकशिपु (असुर)-- ई. पू. १६९०-१६७८ (डॉ. दप्तरी)।

प्रमुख चरित्रों की

व्यक्तिसूचि

(इस सूचि में दी गयी जानकारी व्यक्ति, पृष्ठांक एवं उपशीर्षक इस क्रम से दी गयी है)।

अर्जुन ...३५-४०

विद्यार्जन; परीक्षा; पराक्रम; तीर्थयात्रा; वस्तुप्राप्ति; दिग्विजय; वनवास; अज्ञातवास; कृष्णसहाय्य; भारतीय युद्ध; भीष्मवध; जयद्रथवध; युद्धसमाप्ति; अश्वमेध यज्ञ; पुत्रभेंट; हतबलता; मृत्यु; कौटुंबिक।

अहल्या ...५२-५३

जन्म; विवाह; भ्रष्टता; शाप एवं उःशाप; समर्थन; नया दृष्टिकोण; डॉ. रवींद्रनाथ टागोर का अभिमत।

इंद्र ...६८-७३

शत्रु; शस्त्रसंभार; पदमाहात्म्य; पौराणिक कल्पनाएँ; गरुड से संबंध; महाशनिवध; त्रिपुर उत्पत्ति; सुकर्माख्यान; यज्ञहविर्भाग; मरुताख्यान; सागरमंथन; वृत्रउत्पत्ति; वृत्रवध; ब्रह्महत्यामुक्ति; पुरंजयवाहन; जयापजय; पुराणों में स्थान; अधिकार; परस्परसंवाद; कृष्णसंबंध; ग्रंथनिर्मिति।

इंद्रजित् ...७३-७४

यज्ञ; इंद्र पर जय; हनुमत् से युद्ध; बिभीषण की भर्त्सना; युद्ध; मायावी युद्ध; दिव्य रथ; वध।

कच ...१०९-१११

देवकार्यार्थ गमन; गुरुसेवा; संकटपरंपरा; देवयानी-प्रणय; शाप-प्रतिशाप; गौरव।

कर्ण ...११७-१२१

शिक्षा; गोवत्सहत्या; अवहेलना; कृतज्ञता; विवाह; बुद्धिभेदयत्न; भेंट; गंधर्वयुद्ध; विराटनगरी में; दिग्विजय; राज्यविस्तार; औदार्य; शक्तिप्राप्ति; घटोत्कचवध; सैनापत्य; मृत्यु; परिवार।

कल्माषपाद ...१२४-१२५

नामप्राप्ति; वसिष्ठकोप; संयम; अन्य मत; असुर जीवन; मुक्ति; राज्याभिषेक।

कश्यप ...१२७-१३१

गोत्रकार; कुल; क्षत्रियरक्षा; पुत्रप्राप्ति; सर्पों को शाप; दैत्यसंहार; तीर्थोत्पत्ति; विष्णुवाहन गरुड; पृथ्वीरक्षा; क्षत्रियाधिपति; पृथ्वीपर्यटन; परिसंवाद; ग्रंथ; परिवार; कश्यप की स्त्रियाँ; अदितिपुत्र; अरिष्टापुत्र; अरिष्टा-कन्या; कद्रूपुत्र; कपिलापुत्र; कालकापुत्र; कालापुत्र; काष्ठापुत्र; क्रोधवशाकन्या; खशापुत्र; ग्रावापुत्र; ताम्रा-कन्या; तिमिपुत्र; दनुपुत्र; दनायुपुत्र; दयापुत्र; दितिपुत्र; धनुपुत्र; पतंगीपुत्र; पुलोमापुत्र; प्राधापुत्र; प्रोवापुत्र; मुनिपुत्र; यामिनीपुत्र; विनतापुत्र; विश्वापुत्र; सरमापुत्र; सिंहिकापुत्र; सुरभिपुत्र; सुरसापुत्र; सूर्यापुत्र;

मानसपुत्र; गोत्रकार; मंत्रकार।

कार्तवीर्य अर्जुन ...१३५-१३७

दत्त उपासना एवं वरप्राप्ति; पराक्रम; चक्रवर्तीपद; संतति।

कृष्ण ...१५८-१६४

बाललीला; कंसवध; शिक्षा; विवाह; जरासंधवध; शिशु-पालवध; यादवी; निर्याण; तत्त्वज्ञ कृष्ण; विश्वरूपदर्शन; ऐतिहासिक चर्चा।

गणपति ...१८०-१८१

अवतार; अष्टविनायक के स्थान।

गौतम ...१९५-१९६

शाखाप्रवर्तक; धर्मशास्त्रकार; धर्मसूत्रकार।

गौतम बुद्ध ...११२४-११२९

बुद्धों की नामावलि; जन्म; स्वरूपवर्णन; बाल्यकाल एवं तारुण्य; विरक्ति; महाभिनिष्क्रमण; तपःसाधना; परमज्ञानप्राप्ति; धर्मचक्रप्रवर्तन; बुद्ध संघ की स्थापना; गयाशीर्ष में; राजगृह में; कपिलवस्तु में; पुनश्च राजगृह में; शुद्धोदन का निधन; भ्रमणगाथा; घटनाक्रम; भ्रमणस्थल; देवदत्त से विरोध; अंतिम यात्रा; महापरिनिर्वाण; दाहकर्म;

तत्त्वज्ञान; बुद्ध की चतुःसूत्री; प्रमुख बौद्ध सांप्रदाय; बौद्धधर्म के प्रमुख तीर्थस्थान; पौराणिक साहित्य में।

चरक ...२०६-२०७

चरक संहिता

दत्त आत्रेय ...२६१-२६२

अवतारकार्य; आत्मज्ञान एवं शिष्यपरंपरा; आश्रम;

आयु राजा को पुत्रदान; सहस्त्रार्जुन को वरप्रदान; जन्मकाल; ग्रंथ; दत्त सांप्रदाय।

दध्यंच आथर्वण ...२६३–२६४

प्रवर्ग्य विद्या; मधुविद्या; अस्थिप्रदान।

दुर्योधन ...२८०–२८५

जन्म; अस्त्रविद्या; पाण्डवों को विषप्रयोग; लाक्षागृहदाह; विवाह; अर्धराज्यप्रदान; द्यूतक्रीडा; घोषयात्रा; वैष्णवयज्ञ; द्रौपदीसत्त्वपरीक्षा; विराट नगरी में; संजयदौत्य; कृष्णदौत्य; भारतीय युद्ध; मृत्यु; दुर्योधन का मनोगत।

दुर्वासस् आत्रेय ...२८५–२८७

जन्मकथा; स्वरूपवर्णन; अनुग्रहकथा; क्रोधकथा;

देवी ...३००–३०३

तात्त्विक चर्चा;

विभिन्न अवतार—दुर्गा; महिषासुरमर्दिनी एवं महालक्ष्मी; चामुंडा; शांकभरी; सती; पार्वती, काली एवं गौरी कालिका; मातृका;

अन्य अवतार—सिद्धांबिका; तारा; भास्करा; योगेश्वरी; त्रिपुरा; कोलंबा; कपालेशी; सुवर्णाक्षी; चर्चिता; त्रैलोक्यविजया; वीरा; हरसिद्धि; चंडिका; भूतमाला अथवा भूमाता;

देवीपीठ।

द्रोण ...३०७–३०९

जन्म; शिक्षा; हस्तिनापुर में; द्रुपदपराभव; भारतीय युद्ध; वध।

द्रौपदी ...३१०–३१३

जन्म; स्वयंवर; पंचपतित्व; द्यूत; द्रौपदी का प्रश्न; बनवास; अज्ञातवास; राज्यप्राप्ति; स्वभाव।

धन्वन्तरि ...३१५–३१७

स्वरूपवर्णन; मनसा से युद्ध; ग्रंथ।

नारद ...३६०–३६६

स्वरूपवर्णन; जन्म; पुनर्जन्म; देवों का वार्ताहर; तत्त्वज्ञ नारद; संगीतकलातज्ञ; नारदनारदी; विवाह; सुवर्णष्ठीविन्कथा; शत्रुघ्न को चेतावनी; कलियुग में; कृष्णकथाओं में नारद; इंद्रसभा में; धर्मशास्त्रकार; शिक्षाकार, अन्य ग्रंथ।

नृसिंह ...३७५–३७६

नृसिंह उपासना; नृसिंहस्थान।

पतंजलि ...३८२–३८६

नामान्तर; काल; जीवनचरित्र; व्याकरणमहाभाष्य; शुद्ध उच्चारण का महत्त्व; पूर्वाचार्य; टीकाकार; महाभाष्य का पुनरुद्धरण; अन्य ग्रंथ; योगसूत्रपरिचय; योगदर्शन।

परशुराम जामदग्न्य ...३८८–३९४

शिक्षा; शिष्य; आश्रम; रेणुकावध; अस्त्रविद्या; हैहयों से शत्रुत्व; कामधेनुहरण; युद्ध; कार्तवीर्यवध; जमदग्निवध; मातृतीर्थ की स्थापना, हैहयविनाश; निःक्षत्रिय पृथ्वी; अश्वमेध यज्ञ; नया हत्याकाण्ड; हत्याकाण्ड से बचे क्षत्रिय; शूर्पारक की स्थापना; परशुरामकथा का अन्वयार्थ; महाभारत में; रामायण में; कालविपर्यास; परशुराम सांप्रदाय के ग्रन्थ; परशुराम शक।

पराशर ...३९५–३९८

राक्षससत्र; व्यासजन्म; आदरणीय ऋषि; वेदव्यास; धर्मशास्त्रकार; ज्योतिषशास्त्रज्ञ; आयुर्वेदशास्त्रकार; पुराणइतिहासज्ञ; पराशर वंश।

परिक्षित् ...३९९–४०१

जन्म; राज्य में कलिप्रवेश; शाप; तक्षकदंश; परिक्षित् कथा का अन्वयार्थ; पौराणिककाल।

पाणिनि ...४०५–४१०

नामान्तर; मातापिता; अध्ययन; निवासस्थान; काल; पूर्वाचार्य; अष्टाध्यायी; पाणिनीय व्याकरणशास्त्र; पाणिनिकालीन भूगोल; सिक्के; परिमाणदर्शक शब्द; अष्टाध्यायी के वार्तिककार; अष्टाध्यायी के पूर्वाचार्य, पाणिनि के व्याकरणग्रंथ।

पाण्डु ...४१०–४१२

जन्म; शिक्षा; विवाह; राज्यप्राप्ति; शाप; पुत्रेच्छा; पुत्रप्राप्ति; मृत्यु।

पितर ...४१९–४२२

उत्पत्ति; प्रिय खाद्यपदार्थ; मनोविकार; पितृगण; दैवी पितर; मूर्त अथवा मानुष पितर; पितृकन्या; पितृकन्या का अन्वयार्थ; पितृवंश।

पिप्पलाद ...४२५–४२६

पैप्पलाद संहिता; अन्यग्रंथ; तत्वज्ञान।

पृथु वैन्य ४४२–४५२

पृथ्वीदोहन अथवा नवसमाजरचना; दोहक–गण; राज्यभिषेक; पृथु की राजप्रतिज्ञा; पुत्र; पृथुवंश।

प्रजापति ...४६१–४६६

सर्वप्रमुख देवता; सृष्टि आरंभ; सूर्यपूजा—अर्घ्य; इंद्र की उत्पत्ति; यज्ञारंभ; सृष्टिनिर्माण व व्यवस्था; कन्याविवाह; दुहितृगमन; प्रजापतियों की संख्या; प्रजापतियों की नामावलि।

प्रह्लाद ...४७९-४८१
जन्म; विष्णुभक्ति; इंद्रपदप्राप्ति; परिवार; संवाद; पूर्वजन्मवृत्त।

बक दाल्भ्य ...४८७-४८८
धृतराष्ट्र से विरोध; तत्त्वज्ञान; छांदोग्य उपनिषद् में।

बलराम ...४९३-४९५
बाल्यकाल; जल्दबाज स्वभाव; बलराम की तीर्थयात्रा; तीर्थयात्रा का द्वितीय पर्व।

बलि वैरोचन ...४९७-५०१
बलिकथा का अन्वयार्थ; स्वर्गप्राप्ति; समुद्रमंथन; समुद्रमंथन से प्राप्त हुए रत्न; इंद्रबलिसंग्राम; इंद्रपदप्राप्ति; प्रह्लाद के द्वारा शाप; वामन को दान; बलिबंधन; रावण का गर्वहरण; संवाद; परिवार; बलि की उपासना।

बाण ...५०२-५०५
शिवभक्ति; उषा अनिरुद्ध प्रणय; कृष्ण से युद्ध; वरप्राप्ति; उषा-अनिरुद्धविवाह; बाणकथा का अन्वयार्थ।

बादरायण ...५०५-५०६
बादरि—बादरायण भिन्नता; ब्रह्मसूत्र।

बृहस्पति ...५१८-५२३
जन्म; रूपवर्णन; गुणवर्णन; दैत्यों की पराजय; संवाद; परिवार, ग्रंथ।

बौधायन ...५२३-५२५
बौधायन शाखा; बौधायन सूत्र; बौधायनसूत्रों के विभाग; बौधायन धर्मसूत्र; टीकाकार; बौधायन स्मृति।

ब्रह्मन् ...५२६-५३१
जन्म; चतुर्मुख; शंकर से विरोध; सृष्टि का निर्माण; वेदों का निर्माण; प्रभास क्षेत्र में यज्ञ; सावित्री से शाप; गायत्री से वरदान; अन्य रचनाएँ; ब्रह्मा की कालगणना; ग्रंथ; स्थान।

भगीरथ ...५३४-५३५
गंगावतरण; भगीरथकथा का अन्वयार्थ।

भरत ...५४०-५४३
नाट्यशास्त्र की उत्पत्ति; नाट्यकला का पृथ्वी पर आगमन; भारतीय नाट्यशास्त्र; कालनिर्णय।

भरत 'जड' ...५४३-५४४
प्रथम जन्म; द्वितीय जन्म; तृतीय जन्म; रहूगण राजा से संवाद; परिवार।

भरत दाशरथि ...५४४-५४७
कैकेयी का षड्यंत्र; राम की खोज; राम से भेंट; नंदिग्राम में; युद्धप्रसंग; तुलसी रामायण में।

भरत दौःषन्ति ...५४७-५४८
जन्म; परिवार; भरतवंश।

भरद्वाज ...५४८-५५२
वेदों का अर्थागत्व; अर्थशास्त्रकार; अन्य ग्रंथ।

भागुरि ...५५४-५५५
व्याकरणशास्त्रकार; कोशकार; ज्योतिषशास्त्रकार; स्मृतिकार; साम एवं यजुःशाखाओं का आचार्य; अलंकारशास्त्रज्ञ; सांख्यदर्शनकार; दैवतशास्त्रज्ञ।

भीमसेन 'पाण्डव' ...५६१-५७१
स्वरूपवर्णन; बाल्यकाल; दुर्योधन के षड्यंत्र; नागलोक में; शिक्षा; लाक्षागृहदाह; हिडिंबाविवाह; बकासुरवध; द्रौपदी स्वयंवर; जरासंधवध; पूर्व दिग्विजय; राजसूय यज्ञ; द्रौपदीवस्त्रहरण; वनवास; गर्वहरण; कुबेर से विरोध; नहुषमुक्ति; दुर्योधन-चित्रसेन युद्ध; जयद्रथ से युद्ध; यक्षप्रश्न; अज्ञातवास; कीचकवध; भीम-कृष्णसंवाद;

भारतीय युद्ध; प्रथम दिन; चौथा दिन; छठवाँ दिन; आठवाँ दिन; नौवा दिन; दसवाँ दिन; ग्यारहवाँ दिन; चौदहवाँ दिन; पंद्रहवाँ दिन; द्रोणवध; सोलहवाँ दिन; कर्ण से युद्ध; दुःशासन वध; अठारहवाँ दिन; दुर्योधनवध; अश्वत्थामान्मणिग्रहण;

धृतराष्ट्रविद्वेष; युवराजपद; भीमजलाकी एकादशी; गर्वपरिहार; मृत्यु; परिवार।

भीष्म ...५७२-५७९
ध्येयवादी व्यक्तिमत्त्व; योग्यता; जन्म; हस्तिनापुर में; भीष्मप्रतिज्ञा; शंतनु की मृत्यु; उग्रायुधवध; विचित्रवीर्य का राज्यारोहण; अंबाविरोध; परशुराम से युद्ध; शिखण्डिजन्म; विचित्रवीर्य की मृत्यु; धृतराष्ट्र एवं पाण्डु का जन्म;

भारतीय युद्ध; कौरव पाण्डव का बलाबल; कर्ण-भीष्मविरोध; सैनापत्य; दुर्योधनआक्षेप; कृष्णभेंट; शरशय्या; प्राणत्याग; भीष्मचरित्र का एक कलंकित क्षण; कुछ धूमिल स्थल; अन्य धूमिल स्थल।

भूत ...५८१-५८१
जन्म; स्वरूपवर्णन; भूतनायक; असुरों से युद्ध।

भृगु प्रजापति ...५८५-५८६
देवदैत्यसंग्राम; देवों की परीक्षा; परिवार।

भृगु वारुणि ...५८६-५९०
जन्म; वेदोत्पत्ति; नहुष को शाप; संवाद; आश्रम; तत्त्वज्ञान; परिवार; भार्गवगण; क्षत्रिय ब्राह्मण; भृगु-आंगिरस परिवार; विवाहसंबंध; ग्रंथ; भृगुकुल के मंत्रकार।

भैरव ...५९१

ब्रह्महत्या; वंश।

मतंग ..५९८-५९९

गर्दभी से संवाद; तपस्या।

मत्स्य ...५९९-६०१

मत्स्यावतार; पुराणों में; मत्स्यकथा का अन्वयार्थ; भौगोलिक मर्यादा।

मनु आदिपुरुष ...६०५-६१०

मानवजाति का पिता; यज्ञसंस्था का आरंभकर्ता; यज्ञ से ऐश्वर्यप्राप्ति; समकालीन ऋषि; मन्वन्तरों का निर्माण; चौदह मन्वन्तर; उत्तम मन्वन्तर; तामस मन्वन्तर; रैवत मन्वन्तर; चाक्षुष मन्वन्तर; वैवस्वत मन्वन्तर; सावर्णि-मन्वन्तर; दक्षसावर्णि मन्वन्तर; ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर; धर्म-सावर्णि मन्वन्तर; रुद्रसावर्णि मन्वन्तर; रौच्य मन्वन्तर; भौत्य मन्वन्तर।

मनु वैवस्वत ...६११-६१३

सृष्टिप्रलय; विभिन्न साहित्यों में प्राप्त जलप्लावन कथा; प्रलयोत्तर मानवी समाज का आदिपुरुष; काल-निर्णय; परिवार; इलापुत्र; हिंदी साहित्य में।

मनु स्वायंभुव ...६१३-६१५

स्मृतिकार; धर्मशास्त्र की निर्मिति; मनुस्मृति का प्रणयन; मानव-धर्मशास्त्र का पुनःसंस्करण; विषयानु-क्रमणिका; मनुस्मृति में निर्दिष्ट ग्रंथ; मनुस्मृति के भाष्य; मनुस्मृति का रचनाकाल; अन्य ग्रंथ।

मय ...६१८-६२०

शिल्पशास्त्रज्ञ; खांडववन में; मयसभा; परिवार; ज्ञाति नाम।

मरुत् ...६२२-६२५

जन्म; पत्नी; वस्त्र एवं अलंकार; रथ; कार्य; गायन; झंझावात का देवता; व्युत्पत्ति; दिति के पुत्र; इंद्र-दिति संवाद; सात मरुद्गण; मरुद्गणों के स्थान।

मरुत्त आविक्षित कामप्रि ...६२५-६२६

इंद्र-मरुत्त विरोध; मरुत्त का यज्ञ; रावण से विरोध; राज्यवैभव; महाभारत में; परिवार।

महावीर वर्धमान ...१११९-११२३

बुद्ध का समकालीन; जन्म; समकालीन नृप; तपस्या; प्रथम समवशरणसभा; शिष्यशाखा; धर्मसंगठन; पर्यटन; निर्वाण; आचारसंहिता; अहिंसातत्त्व की महत्ता; वर्धमान का अनेकान्तवाद; वर्धमान का क्रियावाद; बौद्धधर्म से तुलना; ग्रन्थ; परंपरा; सांप्रदायभेद।

मांडव्य ...६३५-६३६

चोरी का इल्जाम; प्रमोदिनी से विवाह; यम से संवाद; ब्राह्मण का शाप; संवाद।

मातरिश्वन् ...६३७

अग्नि का दिव्यरूप; व्युत्पत्ति।

मातृका ...६३२-६३९

जन्मकथा; मातृकाओं की संख्या; मातृकाओं की प्राचीनता; मातृकाओं की प्रतिमा।

माधवी ...६४१-६४२

गालव ऋषि को दान; हर्यश्व से विवाह; दिवोदास से विवाह; उशीनर से विवाह; विश्वामित्र से विवाह; स्वयंवर; पुत्र; ययाति का उद्धार; ययाति को पुण्यदान; काल-विपर्यास।

मान्धातृ यौवनाश्व ...६४३-६४५

जन्म; संगोपन एवं नामकरण; पराक्रम; मतवैकल्य; संवाद; मृत्यु; परिवार।

मार्कण्डेय ...६४७-६४९

जन्म; अमरत्व; तपस्या; श्रेष्ठता; उपदेश; मार्कण्डेय-युधिष्ठिर संवाद; ग्रन्थ; परिवार; आश्रम।

माल्यवत् ...६५०-६५१

तपस्या; विष्णु से युद्ध; लंकाप्रवेश; परिवार।

मुचुकुंद ...६५४-६५५

मुचुकुंद-वैश्रवणसंवाद; कालयवन का वध; कृष्णदर्शन; संवाद; परिवार।

मृत्यु ...६६०

ब्रह्म से संवाद; सनत्सुजात-आख्यान।

मेधातिथि काण्व ...६६०

वैदिक ऋषि; काण्व शाखा।

मैत्रेय कौशारव ...६६५

नाम; दुर्योधन का शाप; व्यास-मैत्रेय-संवाद; विदुर-मैत्रेय संवाद।

मैत्रेयी ...६६६

मैत्रेयी-याज्ञवल्क्य संवाद।

म्लेच्छ ...६६८-६६९

भाषा; महाभारत में।

यक्ष ...६६९-६७०

कुबेर के सेनापति; कुबेर की सभा में; स्वरूपवर्णन; परिवार।

यदु ...६७२-६७४
शाप; परिवार; यादव वंश; सात्वत शाखा; अन्य-शाखाएँ; अठारह महारथ; आर्य संस्कृति का प्रचार; यादवनिन्दा।

यम वैवस्वत ...६७४-६७७
पहला राजा; निवासस्थान; दूत; मित्रपरिवार; यम-यमी-संबाद; आत्मसमर्पण; मृत्यु का देवता; व्युत्पत्ति; वेदोकालोपरान्त यम; यम को शाप; पितरों का प्रमुख; यम-नचिकेत संवाद; यम-गीता; महाभारत-वर्णित यम; यम की उपासना; ग्रंथ; धर्मशास्त्रकार।

ययाति ...६७७-६८२
जन्म; देवयानी से भेंट; ययाति-देवयानी संवाद; विवाह; पुत्रप्राप्ति; शुक्र से शाप; पुत्रों को शाप; यौवन प्राप्ति; विरक्तावस्था; वानप्रस्थाश्रम; उत्तर-यायात आख्यान; वाल्मीकि रामायण में; पद्म में; अश्रुबिन्दुमती से विवाह; श्रेष्ठ सम्राट; धार्मिकता; परिवार; ययातिपुत्रों के राज्य।

यवक्रीत ...६८२-६८३
तपस्या; इन्द्र से भेंट; रैभ्य से विरोध; मुक्ति।

यवन ...६८३-६८४
उपनिवेश; महाभारत में।

याज्ञवल्क्य वाजसनेय ...६८५-६९३
नाम; योग्यता; यजुःशिष्यपरंपरा; कृष्णःयजुर्वेद शुद्धीकरण; जनमेजय की राजसभा में; शुक्लयजुर्वेद का प्रणयन; ईश उपनिषद; शतपथ ब्राह्मण;
वैशंपायन से विरोध; सूर्य से वेदप्राप्ति; कालनिर्णय; दार्शनिक समस्याओं का आचार्य; जनक के दरबार में; वादविवाद के विषय; निष्प्रपंच सिद्धान्त; पुराणों में;
याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी संवाद; ध्येयात्मक अद्वैतवाद; अमरत्व की प्राप्ति; जनक- याज्ञवल्क्यसंवाद; मृत्युवर्णनः तत्त्वज्ञान; चरित्रचित्रण; आत्मगत भाषण; परिवार;
शिष्यपरंपरा; शाखाप्रवर्तक शिष्य; ग्रन्थ; शुक्ल यजुर्वेद; याज्ञवल्क्य स्मृति।

यास्क ...६९४-६९५
निरुक्त; पूर्वाचार्य; भाषाशास्त्रज्ञ।

युधिष्ठिर ...६९६-७०९
तत्त्वदर्शी राजा; चिन्तनशील व्यक्तित्व; जन्म; स्वरूप-वर्णन; ध्वज एवं आयुध; शिक्षा; यौवराज्याभिषेक; लाक्षागृहदाह; अर्धराज्यप्राप्ति; राजसूय यज्ञ; दुर्योधन-विद्वेष; द्यूतपराजय; वनवास; द्रौपदी-युधिष्ठिर संवाद; तीर्थयात्रा; नहुष-मुक्ति; घोषयात्रा; जयद्रथ की मुक्तता; यक्ष-प्रश्न; अज्ञातवास; संधि का प्रयत्न; युधिष्ठिर-कृष्ण संवाद; कृष्ण-दौत्य;
भारतीय युद्ध-पाण्डव पक्ष के योद्धा; कौरव पक्ष के देश; युद्ध-शिबिर; सांख्यिक-बलाबल; सेनाप्रमुख एवं सेनापति; युद्धप्रारंभ; प्रारंभ में; भीष्म के बाद द्रोण; कर्णवध; युधिष्ठिर- अर्जुन संवाद; दुर्योधन-वध; बचे हुए वीर;
विरक्ति; युधिष्ठिर-अर्जुन संवाद; राज्याभिषेक; गर्वहरण; धृतराष्ट्र वनगमन; महाप्रस्थान; स्वर्गारोहण; मृत्यु; स्वर्गप्रवेश; यमधर्म से भेंट; परिवार; आयु; काल-निर्णय; तिथिनिर्णय।

रक्षस् ...७११-७१४
स्वरूपवर्णन; नानाविधरूप; आहार; मनुष्यों को पीड़ा; विचरण; अग्नि से विरोध; व्युत्पत्ति; असुरों का वैयक्तीकरण; ऋग्वेद में; ईरान में असुरपूजा; उपनिषदों में; अष्टाध्यायी में; पुराणों में; सामान्य उपाधि।

रंतिदेव सांकृत्य ...७१८-७१९
यज्ञपरायणता; दानशूरता; सांकृत्य ब्राह्मण।

राधा ...७२२-७२४
जन्म; पृथ्वी पर अवतार; कृष्ण से विवाह; राधा की उपासना।

राम दाशरथि ...७२५-७४२
आदर्श पुरुषश्रेष्ठ; वैयक्तिक सद्गुणों का आदर्श; नाम; जन्म; अवतार; रूपवर्णन; नामकरण एवं शिक्षा; वसिष्ठ से उपदेशप्राप्ति; विश्वामित्रसहवास; ताटकावध; मारीच एवं सुबाहु से युद्ध; अहिल्योद्धार; सीतास्वयंवर; परशुराम से संघर्ष; यौवराज्याभिषेक; कैकेयी से संभाषण;
वनवास; दण्डकारण्यप्रवेश; राक्षसविरोध; पंचवटी में; शूर्पणखा-विरूपत्व; सीताहरण; कबंधवध; वालिआक्षेप; सीता की खोज; लंका पर आक्रमण; विभीषण से मित्रता;
सेतुबन्ध; लंका का अवरोध; दूतप्रेषण; प्रथम दिन; नागपाश; राक्षससंहार; इंद्रजित्वध; रावण-वध; अग्निपरीक्षा; दक्षिण की विजययात्रा; राक्षस संग्राम का तिथिनिर्णय; लंका का स्थलनिर्णय; वानर कौन थे? उत्तर काण्ड का विश्लेषण; अयोध्यागमन;
राज्याभिषेक; सीतात्याग; कुशलवजन्म; अश्वमेधयज्ञ; सीता का भूमिप्रवेश; देहत्याग; रामकथा का तिथि निर्णय; सर्वमान्य तिथियाँ; ताम्रपटों का निर्देश; 'कालनिर्णय रामायण' ग्रन्थ; चरित्र-चित्रण; राम चरित्र के दोष; परिवार;

वाल्मीकि रामायण; पुराणों में रामकथा; रामभक्तिसंप्रदाय; रामभक्ति से प्रभावित उपनिषद् ग्रन्थ; रामभक्ति का विकास; सांप्रदायिक रामायण ग्रन्थ; बौद्ध एवं जैन वाङ्मय में रामकथा; आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा।

रावण दशग्रीव ...७४३-७४८

नाम; स्वरूपवर्णन; जन्म; तपश्चर्या; अत्याचार; गर्वहरण; विवाह; वेदवती से शाप; विजययात्रा; पराजय; पराजय की अन्य कथाएँ; सीताहरण; रावण-सीता संवाद; रावण-बिभीषण-संवाद; सेनावर्णन; राम-रावण युद्ध; वध; परिवार; चरित्रचित्रण; महापंडित रावण; तुलसी रामायण में।

रुक्मिणी ...७५१-७५२

श्रीकृष्ण से प्रेम; श्रीकृष्ण का आगमन; रुक्मिणी-हरण; रुक्मिन् की पराजय; प्रासादवर्णन; पुत्र प्राप्ति; अग्निप्रवेश; परिवार।

रुक्मिन् ...७५२-७५३

श्रीकृष्ण से पराजय; भारतीय युद्ध में; परिवार।

रुद्र-शिव ...७५४-७६६

स्वरूपवर्णन; निवास-स्थान; तपस्यास्थान; वाहन एवं ध्वज; आयुध; पराक्रम; तैत्तिरीय संहिता में; अथर्ववेद में; ब्राह्मण ग्रन्थों में; उपनिषदों में; केन उपनिषद में; गृह्यसूत्रों में; महाभारत में;

उपासक गण; अष्ट रुद्र; एकादश रुद्र; विभिन्न पुराणों में; जन्मकथाएँ; पराक्रम; तामस रूप; शिवदेवता की उत्क्रांति; परिवार;

रुद्रोपासना; मुँहेंजोदड़ो में; पश्चिम अशिया में; सुमेर में; शिव के अवतार; शिव उपासना के सांप्रदाय; शिव उपासना का आद्य सांप्रदाय; द्रविड देश में शिवपूजा; शक्तिपूजा; शिवरात्रि; शिव उपासना के ग्रन्थ।

रैक्व सयुग्वा ...७६९-७७०

जनश्रुति से भेंट; तत्त्वज्ञान।

रोमहर्षण सूत ...७७२-७७४

कुलवृत्तांत; पुराणों की निर्मिती; शिष्यपरंपरा; पुराणों का निर्माण; पुराणकथन; मृत्यु; मृत्युतिथि; ग्रंथ; सूतजाति की उत्पत्ति; परिवार।

रोहित ...७७५

शुनःशेपाख्यान; परिवार।

लक्ष्मण दाशरथि ७७६-७८१

नाम; बाल्यकाल; वनगमन से पूर्व; वनवास; सीताहरण; राम से सांत्वना; सीता की खोज; राम-रावण युद्ध; इंद्रजित् युद्ध; राक्षससंहार; रावण से युद्ध; सीतात्याग; मृत्यु; परिवार; चरित्रचित्रण; मानस में।

लक्ष्मी ...७८१-७८४

लक्ष्मीदेवता की उत्क्रांति; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान; जन्म; भृगु से वरदान; भृगु का शाप; लक्ष्मी के अवतार; लक्ष्मी के दोष; परिवार; लक्ष्मीप्रद सूक्त।

लगध ...७८४

वेदांगज्योतिष; जन्मस्थान; कालनिर्णय।

लाट्यायन ...७८६

लाट्यायन श्रौतसूत्र; पूर्वाचार्य।

लोपामुद्रा ...७८६

जन्म; अगस्त्य से विवाह; पुत्रप्राप्ति; दक्षिण भारत में।

लोमश ...७८९-७९०

इंद्र से भेंट; तीर्थयात्रा; आख्यानकथन; वरप्रदान; ग्रन्थ; लोमशकथित रामकथा; आश्रम।

वररुचि ...७९७

प्राकृतप्रकाश; अन्य ग्रन्थ।

वराह ...७९८-७९९

वैदिक साहित्य में; पुराणों में; वराहस्थान; वराह अवतार का अन्वयार्थ।

वरुण ...७९९-८०२

वैदिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान; गुप्तचर; सृष्टि का राजा; असुर वरुण; वरुण देवता का अन्वयार्थ; जल का स्वामी; सेमेटिक साहित्य में; महाभारत में; वरप्रदान; परिवार।

वसिष्ठ ...८०४-८०६

जन्म; विश्वामित्र से शत्रुत्व; परिवार; वसिष्ठ की वंशावलि; वसिष्ठकुल के गोत्रकार; वसिष्ठ कुल में उत्पन्न प्रमुख व्यक्ति ८०४; जातुकर्ण्य लोग; वसिष्ठकुल के मंत्रकार।

वसिष्ठ 'धर्मशास्त्रकार' ...८०७-८०८

ग्रन्थ।

वसिष्ठ मैत्रावरुणि ...८०८-८१०

जन्म; विश्वामित्र से विरोध; यज्ञकर्ता आचार्य; कर्तृत्व; आश्रम; वैदिकोत्तर साहित्य में; पुराणों में; विश्वामित्र से शत्रुत्व; व्रतवैकल्य; परिवार।

वसु ...८११-८१३
पौराणिक साहित्य में; अष्टवसु; परिवार; भागवत में; अष्टावसुओं का परिवार।

वसुदेव ...८१४-८१६
कृष्णजन्म; पराक्रम; अश्वमेधयज्ञ; मृत्यु; परिवार; पत्नियाँ; पुत्र।

वसुमनस् कौशल्य ...८१७
ययाति को पुण्यदान; संवाद।

वात्स्यायन ...८२०-८२२
व्यक्तिपरिचय; कालनिर्णय; पूर्वाचार्य; कामसूत्र; कामसूत्र का तत्त्वज्ञान; श्रेष्ठत्व।

वानर ...८२२-८२३
राज्य एवं समाजव्यवस्था; पुराणों में; वानरसमूह; वानरवंश; जैन ग्रंथों में; वानर कौन थे।

वामदेव गौतम ...८२४-८२५
जन्म; संबंधित व्यक्ति; तत्त्वज्ञान; आत्मानुभूति।

वामन ...८२५-८२६
वैदिक साहित्य में; वामन अवतार की उत्क्रांति; शतपथ ब्राह्मण में; पुराणों में; वामन अवतार का अन्वयार्थ; उपासना।

वायु ...८२६-८२७
जन्म एवं स्वरूपवर्णन; पुराणों में; परिवार।

वालखिल्य ...८२८-८२९
वैदिक साहित्य में; पौराणिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; इंद्रनिर्माण; तपःसामर्थ्य; परिवार।

वालिन् ...८२९-८३१
जन्म; पराक्रम; दुंदुभिवध; सुग्रीव से शत्रुत्व; राम-सुग्रीव की मित्रता; वालिवध; राम की आलोचना; अंत्यविधि; स्वभावचित्रण।

वाल्मीकि आदिकवि ...८३२-८३७
नाम; रामायण के बाल एवं उत्तरकांड में; आश्रम; आख्यायिकाएँ; अध्यात्म रामायण में; आख्यायिकाओं का अन्वयार्थ; क्रौंचवध; रामायण की जन्मकथा; सीतासंरक्षण; रामसभा में;
पौराणिक वाङ्मय की प्रस्थानत्रयी; व्यक्तिगुणों का आदर्श; महाभारत से तुलना; रामायण की श्रेष्ठता; रामायण की ऐतिहासिकता; आदिकवि वाल्मीकि; गेय महाकाव्य; आर्ष महाकाव्य, वाल्मीकि रामायण में प्राप्त भूगोलवर्णन; रामायण का रचनाकाल; महाभारत में प्राप्त रामायण के उद्धरण; वाल्मीकि रामायण के संस्करण।

विदुर ...८४३-८४७
विदुर का हीनकुलीनत्व-एक समस्या; जन्म; पूर्वजन्म; पांडवों की सहायता; धृतराष्ट्र का सलाहगार; विदुरनीति; विदुरतीर्थयात्रा; युधिष्ठिर के राज्यकाल में; अंतिम समय; मृत्यु; अंत्यसंस्कार; परिवार।

विदुला ...८४७
विदुला-पुत्र संवाद।

विदेह ...८४८
वैदिक साहित्य में; महाभारत में।

विप्रचित्ति ...८५२-८५३
पराक्रम; परिवार।

विभीषण ...८५४-८५६
जन्म; तपस्या; रावण से विरोध; रावण की सभा में; शरणागत विभीषण; राम की सहायता, मायावी युद्ध; रावण का अंत्यसंस्कार; राज्याभिषेक; अश्वमेधयज्ञ; राम का आशीर्वाद; परिवार।

विराट ...८५८-८६०
पांडवों का अज्ञातवास; कीचकवध; सुशर्मन् से युद्ध; दुर्योधन से युद्ध; युधिष्ठिर का अपमान; उत्तरा-अभिमन्यु विपाह; भारतीय युद्ध में; मृत्यु; परिवार।

विरोचन ...८६०-८६१
प्रह्लाद की न्यायप्रियता; इंद्र-विरोचन संवाद; मृत्यु; परिवार।

विवस्वत् ...८६२-८६३
ऋग्वेद में; निवासस्थान; देवताओं का मित्र; व्युत्पत्ति; विवस्वत् देवता का अन्वयार्थ।

विशाल ...८६४-८६५
वैशालि नगरी; वैशाल राजवंश।

विश्वकर्मन् ...८६६-८६७
वैदिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; गुणवर्णन; महाभारत एवं पुराणों में; शिल्पशास्त्रज्ञ; अस्त्रों का निर्माण; परिवार; ग्रंथ।

विश्वरूप त्रिशिरस् त्वाष्ट्र ...८६९-८७०
वैदिक साहित्य में; महाभारत एवं पुराणों में; स्वरूपवर्णन; देवों का पुरोहित।

विश्वामित्र ...८७०-८७७
व्युत्पत्ति; जन्म; समवर्ती लोग; राज्यप्राप्ति; वसिष्ठ से विरोध; आपत्प्रसंग; त्रिशंकु की सहायता; त्रिशंकु का राजपुरोहित; त्रिशंकु को सदेह स्वर्गारोहण; विश्वामित्र के कार्य का महत्त्व; हरिश्चंद्र के राज्य काल में; मार्कंडेय

पुराण में; ब्रह्मर्षि पदवी की प्राप्ति; सत्त्वपरीक्षा; आश्रम; परिवार; पत्नियाँ; पुत्र;

विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रनाम; विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रकार; गाथिन् का वंशज; नदीसूक्त; वसिष्ठ से विरोध; शक्ति का वध।

विश्वेदेव ...८७७-८७८

वैदिक साहित्य में; नामावलि; ऐतरेय ब्राह्मण में; पुराणों में; नामावलि; ब्रह्मा की उपासना।

विष्णु ...८७९-८८७

वैदिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान पराक्रम; विष्णु के तीन पग; नियमबद्ध गतिमानता; एक सौर देवता; भक्तवत्सलता; अवंध्यता का देवता; व्युत्पत्ति; ब्राह्मण ग्रंथों में विष्णु का श्रेष्ठत्व; अवतारों का निर्देश; उपनिषदों में गृह्यसूत्रों में; महाभारत में;

विष्णु--उपासना के तीन स्रोत; विष्णु देवता की उत्क्रान्ति; पौराणिक साहित्य में स्वरूपवर्णन; विष्णु की उपासना; विष्णु के अवतार; नामावलि; विष्णु सांप्रदाय के ग्रंथ; विष्णु के तीर्थस्थान; कई प्रमुख वैष्णव सांप्रदाय।

विष्णुगुप्त चाणक्य ...८८७-८८९

नाम; नामांतर; जीवनवृत्तांत; कौटिलीय अर्थशास्त्र; भाषाशैली; पूर्वाचार्य; कौटिलीय अर्थशास्त्र का प्रभाव; मेगॅस्थिनिस् के 'इंडिका' से तुलना।

विष्णुयशस् कल्कि ८८९-८९०

अवतारहेतु।

वीरभद्र ...८९२-८९४

जन्म; दक्षयज्ञविध्वंस; वरप्राप्ति; पराक्रम; देवों का संरक्षणकर्ता; वीरक आख्यान; नृसिंहदमन; उपासना ग्रंथ।

वृत्र ...८९६-८९८

जन्म; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान; पराक्रम; बध; व्युत्पत्ति; सामूहिक नाम; तैत्तिरीय संहिता में; ब्राह्मण ग्रंथों में; महाभारत एवं पुराणों में; तपस्या; इन्द्र से युद्ध; बध; तत्त्वज्ञ; परिवार।

वैशंपायन ...९११-९१३

वैदिक साहित्य में; पाणिनीय व्याकरण में; कृष्णयजुर्वेद का प्रवर्तन; शिष्यशाखा; याज्ञवल्क्य का तिरस्कार; कृष्ण यजुर्वेद का प्रचार; महाभारत का कथन; 'भारत' ग्रंथ का निर्माण; 'भारत' ग्रंथ का कथन; वैशंपायन कृत आस्तीक पर्व; 'भारत' ग्रंथ का प्रचार; याज्ञवल्क्य से विरोध; ग्रंथ।

व्याडि दाक्षायण ...९१५-९१६

वंश; ऋक्प्रतिशाख्य में; पाणिनीय व्याकरण का व्याख्याता; संग्रह; कालनिर्णय; ग्रंथ।

व्यास पाराशर्य ...९१६-९२९

सनातन हिंदुधर्म का रचयिता; वैदिक साहित्य में; पाणिनीय व्याकरण में; महाभारत एवं पुराणों में; जन्मतिथि; विभिन्न नामांतर;

तपस्या; कौरव-पांडवों का पितामह; जनमेजय के यज्ञ मंडप में; पांडवों का हितचिंतक; श्रुतिस्मृति-विद्या का उपदेश; भारतीय युद्ध में; भारतीय युद्ध के पश्चात्; शुकदेव को उपदेश; उपदेशक व्यास; अश्वमेध यज्ञ में; परिवार; व्यासवंश; चिरंजीवीत्व; व्यासस्थल; अट्ठाईस व्यास; व्याससहायक शिवावतार;

कर्तृत्व; वेदसंरक्षणार्थ वेदविभाग; व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा; ऋग्वेद की प्रमुख शाखाएँ; उपलब्ध वैदिक ग्रंथ; वैदिक संहिताओं का विशुद्ध रूप; विनष्ट हुए ब्राह्मण ग्रंथ;

पुराणग्रंथों का प्रणयन; पुराणों के प्रकार; पुराणों में चर्चित विषय; पुराणों के विभिन्न प्रकार; श्लोकसंख्या; पुराणों के वक्ता; महापुराण; महापुराणों की नामावलि; महापुराणों की तालिका; पुराणों का देवतानुसार पृथकरण; गीताग्रंथ; व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा; रोमहर्षण शाखा;

महाभारत का निर्माण; इतिहास पुराण; महाभारत की व्याप्ति; महाभारत की शिष्यपरंपरा; महाभारत के पर्व; महाभारत के उपपर्व; हरिवंश; व्यास की संशयनिवृत्ति; व्यास का जीवनसंदेश।

शत्रुघ्न ...९४१-९४३

राम का यौवराज्याभिषेक; पादुकासंरक्षण; लवणवध; मधुरा की स्थापना; राम से भेंट; राम का अश्वमेध यज्ञ; दिग्विजय; मृत्यु; परिवार।

शल्य ...९५१-९५२

माद्री का विवाह; द्रौपदी स्वयंवर में; युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में, भारतीय युद्ध में; युद्धप्रसंग; कर्ण का सारथ्य; कर्ण-शल्य संवाद; सेनापति शल्य।

शाकटायन ...९५३-९५४

नाम; गुरुपरंपरा; उणादि सूत्र; दैवतशास्त्र; अन्य ग्रंथ।

शाकपूणि ...९५४

ऋग्वेदार्थ का ज्ञान।

शाकल ...९५५-९५६
ब्राह्मण ग्रंथों में; व्याकरण ग्रंथों में; शाकल शाखा; शाकल्य संहिता।

शाकल्य ...९५६
शाखाप्रवर्तक आचार्य; पदपाठ का रचयिता; व्याकरणाचार्य; पाणिनि के अष्टध्यायी में, याज्ञवल्क्य से संघर्ष; पौराणिक साहित्य में; ग्रंथ।

शांखायन ...९५७-९५८
शांखायन संहिता; शांखायन ब्राह्मण; शाखायन आरण्यक;शांखायन (कौषीतकि) उपनिषद; शांखायन श्रौतसूत्र; शांखायन गृह्यसूत्र; आचार्यपरंपरा।

शाट्यायनि ...९५८-९५९
आचार्यपरंपरा; शाट्यायन ब्राह्मण; जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण (गात्र्युपनिषद); शिष्यपरंपरा।

शांडिल्य ...९५९-९६०
यज्ञप्रक्रियों का आचार्य; शतपथ ब्राह्मण के अग्निकांड; 'बृहदारण्यक उपनिषद' में; तत्त्वज्ञान; आत्मा का स्वरूप; गोत्रकार आचार्य; ग्रंथ।

शाल्व ...९६६-९६७
जरासंधदैत्य; सौभ बिमान की प्राप्ति; प्रद्युम्न से युद्ध; कृष्ण से युद्ध; भीष्म से युद्ध; भारतीय युद्ध में।

शिखण्डिन् ...९६७-९६८
बाल्यकाल एवं विवाह; भारतीय युद्ध में; भीष्मवध; वध; भीष्मवध का पूर्ववृत्त।

शिबि औशीनर (औशीनरि) ...९७०-९७१
वैदिक साहित्य में; महाभारत एवं पुराणों में; औदार्य; औदार्य की अन्य कथाएँ; पुण्यशील राजा; दान का महत्त्व; मृत्यु; परिवार।

शिशुपाल ...९७३-९७४
जन्म; कृष्ण का विद्वेष; शिशुपाल के अनाचार; कृष्ण की निंदा; शिशुपालवध; परिवार।

शुक वैयासकि ...९७५-९७६
जन्म; विद्याध्ययन; विरक्ति; भागवत का कथन; व्यास-शुक संवाद; शुक-निर्वाण; व्यास से तुलना।

शुक उशनस् ...९७६-९७७
दैत्यों का आचार्य; संजीवनीविद्या; बार्हस्पत्यशास्त्र; परिवार।

शुनःशेप आजीगर्ति ...९७८-९७९
हरिश्चंद्राख्यान; पौराणिक साहित्य में; शुनःशेपकथा का अन्वयार्थ।

शूर ...९८०-९८१
परिवार, अन्य पत्नियाँ।

शौनक गृत्समद .. ९८५-९८७
जन्मवृत्त; पौराणिक साहित्य में; कर्तृत्व; ऋग्वेद की अनुक्रमणी; गृहपति शौनक; प्रमुख ग्रंथ; अन्य ग्रंथ; व्याकरणशास्त्रकार; शिक्षाकार शौनक; तत्त्वज्ञानी शौनक; शिष्यपरंपरा।

श्वेतकेतु औद्दालकि आरुणेय ...९९५-९९७
निवासस्थान; कालनिर्णय; बाल्यकाल; विद्यार्जन; घमण्डिपन; 'तत्त्वमसि' उपदेश; यज्ञसंस्था का आचार्य; धर्मसूत्रों में; कामशास्त्र का प्रणयिता; महाभारत में; परिवार।

संवरण ...९९९-१०००
राज्य से पदच्युति; तपती से विवाह; परिवार।

संवर्त ...१०००
संवर्त स्मृति।

संवर्त आंगिरस ...१०००
वैदिक साहित्य में; बृहस्पति से ईर्ष्या; देवताओं पर प्रभाव; कुणप-आख्यान।

सगर ...१००१-१००२
जन्म; शिक्षा; पराक्रम; अश्वमेध यज्ञ; परिवार; पुत्र।

संजय गावल्गणि ...१००४-१००५
धृतराष्ट्र का प्रतिनिधित्व; धृतराष्ट्र को उपदेश; श्रीकृष्ण की महिमा; दिव्यदृष्टि की प्राप्ति; युद्ध वार्ता कथन; युद्ध में उपस्थिति; युद्धोपरांत; वनगमन।

सत्यकाम जाबाल १००७-१००८
जन्म; शिक्षा; ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति; तत्त्वज्ञान; सृष्टि का आद्य आधिष्ठान; सत्यकाम-उपकोसल संवाद; अन्य निर्देश।

सत्यभामा १००९-१०१०
प्रासाद; सत्राजित् का वध; पारिजात वृक्ष की प्राप्ति; द्रौपदी से उपदेश; भोलापन; कृष्णनिर्वाण के पश्चात्; परिवार।

सत्यव्रत ...१०१३
तपस्या; मत्स्यावतार; आत्मज्ञान की प्राप्ति, सत्यव्रत-कथा का अन्वयार्थ।

सत्राजित् अथवा सत्राजित ...१०१४-१०१५
पूर्वजन्म; स्यमंतक मणि की प्राप्ति; श्रीकृष्ण पर चोरी का दोषारोपण; स्यमंतक मणि की खोज; कृष्ण-सत्यभामा विवाह; वध; शतधन्वन् का वध; निरुक्त में; परिवार।

सनत्कुमार ...१०१६-१०१८
ब्रह्ममानसपुत्र; गुणवर्णन; निवासस्थान; उपदेश-प्रदान; सात्वतधर्म का उपदेश; धृतराष्ट्र से उपदेश; पृथ्वी पर अवतार; तत्त्वज्ञान; 'भूमन्' तत्त्वज्ञान; ग्रन्थ ।

सप्तर्षि ...१०१९-१०२०
सप्तर्षि कल्पना का विकास; ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में; महाभारत में; दिशाओं के स्वामी ।

संपाति ...१०२१-१०२२
इंद्र से युद्ध; सीताहरण; जटायुवध, परिवार ।

सम्राज् ...१०२२-१०२३
वैदिक साहित्य में ।

सरमा देवशुनी ...१०२३-१०२४
वैदिक साहित्य में; इंद्रदौत्य; पौराणिक साहित्य में; परिवार ।

सवितृ ...१०२६-१०२७
उत्पत्ति; गुणवर्णन; स्वरूपवर्णन; पौराणिक साहित्य में; अनुचर; पत्नियाँ; परिवार; रूपकात्मक वर्णन ।

सहदेव पांडव ...१०२८-१०२९
बाल्यकाल; दक्षिण दिग्विजय; द्यूतक्रीडा एवं वनवास; भारतीय युद्ध में; भारतीय युद्ध के पश्चात्; परिवार; ग्रंथ ।

सात्यकि (युयुधान) ...१०३१-१०३४
स्वरूपवर्णन; विद्याव्यासंग; कृष्ण का सहायक; पाण्डवों का मित्र; पांडवों के वनवासकाल में; युद्ध का समर्थन; कौरवों की राजसभा में; भारतीय युद्ध में; द्रोण के सेनापत्यकाल में; कर्ण के सेनापत्यकाल में; भारतीय युद्ध के अठारहवें दिन; पराक्रम; भारतीय युद्ध के पश्चात्; मृत्यु, परिवार ।

सात्वत ...१०३४
सात्वत धर्म ।

साध्य ...१०३४-१०३५
पौराणिक साहित्य में; नामावलि; महाभारत में ।

सांब ...१०३५-१०३६
जन्म; पराक्रम; लक्ष्मणाहरण; प्रभावती का हरण; दुर्वासस् का शाप; मौसलयुद्ध; सूर्योपासना ।

सावित्री ...१०३९-१०४०
जन्म; विवाह; त्रिरात्रव्रत; यम से आशीर्वादप्राप्ति ।

सीता वैदेही १०४२-१०४५
सतीत्व की साक्षात् प्रतिमा; स्वरूपवर्णन; भूमिजा सीता; जन्मसंबंधी अन्य आख्यायिकाएँ; सीतास्वयंवर; वनवासगमन; सीताहरण; हनुमत् से भेंट; अग्निपरीक्षा; राज्ञीपद; पुत्रजन्म; देहत्याग; चरित्रचित्रण; मानस में ।

सुग्रीव १०४९-१०५१
वालिन् से शत्रुत्व; राम से मैत्री; वालिन्वध; लक्ष्मण का क्रोध; पश्चाताप; युद्ध की तैयारी; राम-रावण युद्ध में; राम का राज्याभिषेक; चरित्रचित्रण; सुग्रीवचरित्र के दोष; मानस में ।

सुदास पैजवन ...१०५६-१०५७
नाम; पुरोहित; दाशराज्ञ युद्ध; विपक्षीय राजा; अन्य पराक्रम; परिवार ।

सुशर्मन् त्रैगर्त प्रस्थलाधिपति ...१०७७-१०७८
विराट से युद्ध; भारतीय युद्ध में; संशप्तक योद्धा ।

सूर्य ...१०८१-१०८२
सूर्यदेवता की कल्पना का उद्गम; सूर्य उपासना; सूर्य उपासना के ग्रंथ ।

सृंजय ...१०८३
वैदिक साहित्य में; निवासस्थान; ऐतिहासिक निर्देश ।

सोमक साहदेव्य (सार्ञ्जय) १०८५-१०८६
पौराणिक साहित्य में; पुत्र का नरमेध; मृत्यु के पश्चात् ।

सोमदत्त ...१०८६
शिनि यादव से शत्रुत्व; भारतीय युद्ध ।

सौति रोमहर्षणसुत ...१०८७-१०८८
महाभारत की परंपरा; महाभारत का विस्तार; महाभारत का कथन; महाभारत का प्रारंभ; महाभारत के उपलब्ध संस्करण; हरिवंश ।

स्कंद ...१०९०-१०९२
जन्मकथा; महाभारत में; नामान्तर; अस्त्रप्राप्ति; तारकासुरवध; अन्य पराक्रम; ब्रह्मचर्यव्रत; परिवार; स्कंद के पार्षद; मातृका ।

स्वायंभुव मनु ...१०९५-१०९६
राज्यविस्तार; पृथ्वी का सम्राट्; परिवार; जंबूद्वीप की जानकारी; पौराणिक साहित्य में ।

हनुमत् अथवा हनूमत् ...१०९८-११०२
'हनुमत' एक द्रविड शब्द; गुणवैशिष्ट्य; हनुमत्-देवता का मूल स्रोत; हनुमत्देवता का सत्यस्वरूप;
जन्म; नामान्तर; अस्त्रप्राप्ति; ऋषियों से शाप; सुग्रीव का मंत्री; संभाषणचातुर्य; सीताशोध; समुद्रोल्लंघन; अशोकवन में; सीता से भेंट; लंकादहन; सुग्रीव से भेंट; राम-रावण युद्ध में; अयोध्या में; ब्रह्मचर्य; चिरंजीवित्व; पांडित्य; परिवार; मानस में ।

हयग्रीव ...११०३-११०४
स्वरूपवर्णन; वैदिक साहित्य में; पौराणिक साहित्य में; हयग्रीव असुर का वध; क्रमपाठ ।

विषयसूचि

(इस सूचि में विशेष महत्त्वपूर्ण विषयों का ही केवळ अंतर्भाव किया गया है)।

अग्नि के तीन प्रकार—अन्वाहार्य; आहवनीय एवं गार्हपत्य (सत्यकाम जाबाल) १००८।

अयोनिसंभव (संतान)— स्त्रीगर्भ के बिना जन्म हुई व्यक्ती (धृष्टद्युम्न, द्रोण; द्रौपदी) ३०७।
--अग्नि से (सीता) १०४३; यज्ञ से (द्रौपदी, धृष्टद्युम्न ३१०); कुंभ से (अगस्त्य, एवं वसिष्ठ) ८०८; जंघा से (और्व) १०५; द्रोण में से (द्रोण) ३०७; रक्तबिंदु से (अंधक, सीता) २३; १०४३; कान की मैल से (मधु-कैटभ) ६३०; अश्रुबिंदुओं से (बिंदुमती, मंगल) ५१० ५९६; घर्मबिंदु से (अंधक, मकरध्वज, मंगल, मधुकैटभ) २३; ५९६; ६०३।
--ब्रह्मा के शरीर के विभिन्न अवयवों से (विभिन्न पशु) ५२८–५२९; ब्रह्मा के वामांग से (शतरुपा) ९४०; मृत्तव्यक्ति के बाहिने हाथ एवं दाहिनी जंघा के मंथन से (पृथु वैन्य, निषाद) ९०७; मछली से (सत्यवती) १०११; सरस्वती नदी से (सारस्वत) १०३७।

अर्थस्य पुरुषो दासः--तात्त्विक अर्थ (भीष्म) ५७८

असुर संघ—कालकेय १३८; त्रिपुर २५२; वृत्र ८९७; सैंहिकेय १०८५।

अस्त्र—अग्नि अस्त्र (सगर) १००१; आग्नेय (और्व; द्रोण) १०५; ३०७; ऐषिक (अश्वत्थामन्) ८२;
--नारायण (अश्वत्थामन्, भीम) ४६; ५६२; ब्रह्म (रुक्मिन्, हनुमत्) ७५३; ११००;
--महावीर्य (वेदशिरस्) ९०६; मायावी (बभ्रुवाहन) ४३०; वारुण (भीम) ५६२; वैष्णव (भगदत्त) ५३४; सुदर्शन (इंद्रद्युम्न २.) ७५।

आख्यान--आख्यानकथन (लोमश) ७९०; कुणप-आख्यान (संवर्त आंगिरस) १००; यायात आख्यान (पूर्व एवं उत्तर) ६८०; वीरक आख्यान (वीरभद्र); शुनःशेप आख्यान (रोहित) ७७५; हरिश्चंद्र आख्यान (विश्वामित्र) ९७८।

आत्मसमर्पण--दधीचि २६४; यम वैवस्वत ६७५।

आत्मज्ञान (परमज्ञान) की प्राप्ति--गौतम बुद्ध ११२७; दत्त आत्रेय २६१; महावीर वर्धमान ११२०; याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६८९–६९०; वामदेव गौतम ८२५; शुक वैयासकि ९७५; सत्यकाम जाबाल १००७; सत्यव्रत १०१२।

आश्रमस्थान—जामदग्न्य ३९४; परशुराम ३९४; दत्त आत्रेय २६१; भृगु (भृगुतुंग) ५८७; लोमश ७९०; वसिष्ठ (वसिष्ठशिला; कृष्णशिला) ८०७; वामन ८२६; वाल्मीकि ८३३; विश्वामित्र ८७३; विश्रवस् ८६६; शतयूप ७०७।

आसुरी सांप्रदाय ८६१।

ऋग्वेद के सूक्त—आप्री सूक्त (विश्वेदेव) ८७७; नदी सूक्त (विश्वामित्र) ८७६; खिल सूक्त (वालखिल्य) ८२८; निद्रा सूक्त ८०९; महामृत्युंजय सूक्त ८०९।

ऋषिसमूह-- यायावर ६९४; वातरशन ८१९; वालखिल्य ८२८; विभिंदुकीय ८५४; विश्वसृज ८७०; वेदव्यास ९०६; वैखानस ९०८; स्वस्त्यात्रेय १०९५।

कामशास्त्रकार—बाभ्रव्य पांचाल ५०७; वात्स्यायन ८२०–८२२; वात्स्यायन के पूर्वाचार्य–कुचुमार; गोणिका-पुत्र; गोनर्दीय; घोटकमुख; चारायणाचार्य; दत्तका-चार्य; नंदिन् ८२१; श्वेतकेतु औद्दालकि ९९७।

कालगणना— पुराणों की १०६९–१०७०; ब्रह्मा की ५३।

कालनिर्णय—कालनिर्णयकोश ११६९-११८०; ग्रंथों का कालनिर्णय ११७२; व्यक्तियों का कालनिर्णय ११७८।
--कौटिलीय अर्थशास्त्र ८८९; पतंजलि ३८२; पाणिनि ४०६; भरत ५४३; मनुस्मृति ६१५; महाभारत १०८८; याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६८८;लगध ७८४; वात्स्यायन ८२१; वाल्मीकि रामायण ८३६; व्याडि दाक्षायण ९१६; श्वेत-केतु औद्दलकि आरुणेय ९९५।

कुलपांसन नरेश—अजबिंदु १३; अर्कज ५०१; जनमे-जय नीप (६.) २२; दुःशासन २७०; धारण ३२३; धौत-मूलक ३३२; पुरूरवस् (२.) ४३६; बाहु (३.) ५०९; वरप्र ७९७; विगाहन ८४०; शम (६.) ९४५; सहज १०२७; हयग्रीव ११०४।

कौटिलीय अर्थशास्त्र—चर्चित विषय ८८८; भाषाशैली ८८८; पूर्वाचार्य ८८८; कौटिलीय अर्थशास्त्र का प्रभाव ८८९; मेगॅस्थिनिस के इंडिका से तुलना ८८९।

क्षत्रिय ब्राह्मण-भार्गव वंशांतर्गत (भृगु वारुणि) ५८८।

गीता—अनुगीता (कृष्ण) १६३; ईश्वरगीता (व्यास) ९२७; उद्धवगीता (कृष्ण) १६३; गणेशगीता (गणपति) १८०; बोध्यगीता (बोध्य) ५२३; ब्रह्मगीता (रोमहर्षण) ७७३; भिक्षुगीता (हंस) १०९७; मंकिगीता (मंकि) ७९५; यमगीता (यम वैवस्वत) ६७६; विचख्नु गीता (विचख्नु) ४८०; व्यासगीता (व्यास) ९२७; शंकरगीता (परशुराम) ३९३; शंपाकगीता (शंपाक) ९४६; सूतगीता (रोमहर्षण) ७७३; सूर्यगीता (सूर्य) १०८२; हरीतगीता (हरित) ११०९; हंसगीता (हंस) १०९७।

गोत्रकार—अंगिरस्कुलोत्पन्न ११; अत्रि १७; कश्यप १२७; भृगु ५८९; वसिष्ठ ८०५; विश्वामित्र ८७५।

ग्रह—चंद्र २०२; बुध ५११-५१२; बृहस्पति ५१८ ५२०; मंगल ५९६; राहु (स्वर्भानु) ७४९; १०९५; शनि ९४३-९४४।

ग्रंथ—अथर्ववेद शिक्षा (मण्डूक) ५९८; अष्टाध्यायी (पाणिनि) ४०७-४०९; आपस्तंब कल्पसूत्र (आपस्तंब) ६०; आश्वलायन गृह्यसूत्र (आश्वलायन) ६७;
—ऐतरेय ब्राह्मण एवं ऐतरेय आरण्यक (महिदास ऐतरेय) ६३१; ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी (शौनक) ९८५;
—काशिका (वामन एवं जयादित्य कृत) ४०९; कौटिलीय अर्थशास्त्र (विष्णुगुप्त चाणक्य) ८८९;
—चरक संहिता (चरक) २०७; छंदःशास्त्र (पिंगल) ४१७; जैमिनि अश्वमेध (जैमिनि) २३६; जैमिनि सूत्र (जैमिनि) २३६;
—पराशर स्मृति (पराशर) ३९७; पातंजल योगसूत्र (पतंजलि) ३८५; पारस्कर गृह्यसूत्र (पारस्कर) ४१४; प्राकृत प्रकाश (वररुचि) ७९७; पितामह स्मृति (पितामह) ४२२; पैप्पलाद (पिप्पलाद) ४२९; पौराणिक साहित्य (व्यास पाराशर्य) ९२५-९२७; फिट्सूत्र (शान्तनव) ९६२; ब्रह्मसूत्र (बादरायण) ५०५; बौधायन सूत्र (बौधायन) ५२४; भगवद्गीता (कृष्ण) १६३; भारतीय नाट्यशास्त्र (भरत मुनि) ५४१; मनुस्मृति (स्वायंभुव मनु) ६१३-६१५; महाभारत (व्यास पाराशर्य; वैशंपायन; सौति) ९१६; ९१२; १०८७; मैत्रि उपनिषद (मैत्रि) ६६४;
—वाक्यपदीय (भर्तृहरि) ५५२; वात्स्यायन कामसूत्र (वात्स्यायन) ८२१; वार्तिक (कात्यायन) १३२; वाल्मीकि रामायण (वाल्मीकि) ८३५-८३७; वास्तुशास्त्र (ब्रह्मन्) ५११;
—शालिहोत्र तंत्र (शालिहोत्र) ९६५; शुक्लयजुर्वेद; शतपथ ब्राह्मण एवं याज्ञवल्क्य स्मृति (याज्ञवल्क्य वाजसनेय) ६९२-६९३; शांखायन आरण्यक, उपनिषद, ब्राह्मण, संहिता ९५७; शाट्यायनि ब्राह्मण; श्वेताश्वतर उपनिषद (श्वेताश्वतर) ९४८; संग्रह (व्याडि) ९१६; सत्याषाढ श्रौतसूत्र १११२; सुश्रुत संहिता (सुश्रुत) १०७८; हरिवंश (सौति) १०८८।

ग्रन्थों के प्रामाणिक संस्करण—कौटिलीय अर्थशास्त्र ८८९; पतंजलि महाभाष्य ३८५; महाभारत १०८८।

चक्रवर्तिन् सम्राट्—२०१; पृथु वैन्य ४४२-४५२; मांधातृ यौवनाश्व ६४३; ययाति ६८१; युधिष्ठिर ६९६; सगर १००१।

चरित्रदोष—भीष्म ५७७-५७९; राम दाशरथि ७२९; सुग्रीव १०५०।

जैन धर्म—महावीर वर्धमान जीवनचरित्र १११९; प्रथम समवशरणसभा ११२०; शिष्यशाखा ११२०; आचार संहिता ११२१; बौद्धधर्म से तुलना ११२३; परंपरा ११२२; सांप्रदाय ११२२।

जैनधर्म ग्रंथ—महावीरकृत जैनसूत्र-११२२; ११७४।

छन्दःशास्त्र—पिंगल ४१७; वैयास्क ९११।

ज्योतिषशास्त्रकार—गर्ग १८५; पराशर ३९८; भागुरि ५५५; अन्य ज्योतिषशास्त्रकार ३९८; ज्योतिषशास्त्र के पूर्वाचार्य ३९८।

तत्त्वज्ञान-अजित केशि कंबलिन (उच्छेदवाद) १११७;
—कृष्ण १६२; गोशाल मंखलिपुत्त (संसारविशुद्धि-तत्त्वज्ञान) १११७; गौतमबुद्ध ११२८;
—चार्वाक २०९;
—पकुध कात्त्यायन (अशाश्वतवाद) ११२८; पूरण कस्सप (अक्रियावाद) १११८; पतंजलि (योगदर्शन) ३८६; पंचशिख (सांख्य तत्त्वज्ञान) ३८०; पिप्पलाद ४२६; पैंग्य (पैंग्य मत) ४५५; प्रतर्दन ४६७; बक दाल्भ्य ४८७; भृगु ७८७; महावीर वर्धमान (अनेकान्तवाद, क्रियावाद) ११२१; मंकि ५९५;
—याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६९०-६९१; रैक सयुग्वा ७७०; विदुर (विदुरनीति) ८४५; वृत्र ८९८; व्यास पाराशर्य ९२९;

--शांडिल्य ९६०; शौनक (तत्त्वमासि तत्त्वज्ञान) ९८७; सनत्कुमार (भूमन् तत्त्वज्ञान) १०१८; सात्वत (सात्वत धर्म) १०३४; सुपर्ण (त्रिसौपर्ण धर्म) १०६३; सुलभा १०७४।

तिथिनिर्णय—भारतीय युद्ध ७०८; राम-रावण युद्ध ७३७-७३८।

तीर्थयात्रा—अर्जुन ३६; धौम्य ३३३; बलराम ४९४; युधिष्ठिर ६९९; लोमश ७८९; विदुर ८४५।

तीर्थस्थान--गयाशिरस् १८२; ज्योतिर्लिंग २३७; देवीपीट ३०२; पृथूदक तीर्थ (सिंधुद्वीप) १०४२; प्रभासक्षेत्र (ब्रह्मन् का यज्ञस्थान) ५२९; बौद्धधर्म के तीर्थस्थान ११२९; मातृतीर्थ (रेणुकातीर्थ) ३९१; वराहस्थान ७९९; वामनस्थान ८२६; विष्णु के तीर्थस्थान ८७९-८८७; व्यासस्थल ९१६; ९२९; शक्तिपीठ ३०१; समन्तपंचक क्षेत्र १०८८;

त्रिपुर--उत्पत्ति (इंद्र) ६९; विनाश (त्रिपुर) २५२।

दानशूरता—विभिंदु ८५३; वृषदर्भ ९०१; वृषादर्भि शैब्य ९०३; शिबि औशीनर ९७१; श्रुतवर्मन् तार्क्ष्य ९९२।

दाशराज्ञयुद्ध--१०५६; विपक्षीय राजाओं की नामावलि १०५६।

द्व्यामुष्यायण--दो वंशों के पिताओं का पुत्र (भरद्वाज) ५५०।

दिग्विजय—अर्जुन (उत्तर) ३७; कर्ण (उत्तर) ११९; नकुल ३३८; भीमसेन (पूर्व) ५६३; रावण ७४५; सहदेव (दक्षिण) १०२८; सिकंदर ११३५-११३८।

देवता--जो वैदिक, पौराणिक एवं स्त्री देवता इन तीन उपविभागों में विभाजित हैः—

--(१) **वैदिकदेवता**—अग्नि ५-६; अश्विनि ४८; आदित्य ५८; इंद्र ६८-७३; त्रित २५१; पूषन् ४४६-४४७; प्रजापति ४६१-४६५; प्रजापतियों की संख्या एवं नामावली ४६५; बृहस्पति ५१८-५२०; भग ५३२; मन्यु ६१८; मरुत् ६२२-६२५; मातरिश्वन् ६३८; मित्र ६५२; वरुण ७९९-८०२; वायु ८२६; विवस्वत् ८२६; सवितृ १०२६; सूर्य १०८१।

—(२) **अन्यदेवता**-दत्त आत्रेय २६१-२६२; कृष्ण १५८-१६४; परशुराम जामदग्न्य ३८८-३९४; पितर ४१९-४२२; ब्रह्मन् ५२६-५३१; भैरव ५९१; राम दाशरथि ७२५-७४२; रुद्र-शिव ७५४-७६६; वामन ८२५-८२६; विष्णु ८७९-८८७; शनि ९४३-९४४; हनुमत् १०९८-११०२।

(३) **स्त्रीदेवता**—देवी ३००-३०३; मातृका ६३८-६३९; रात्रि ७२२; राधा ७२२-७२४; विद्या ८४९; लक्ष्मी ७२१-७२४।

देवता उपासना--देवता कल्पना की उत्क्रांति (रुद्र-शिव, विष्णु) ७६१; ८८३;

--(१) ज्योतिर्लिंग उपासना २३७-२३९; ज्योतिर्लिंग स्थान २३८-२३९ (रुद्र-शिव देखिये); महाकाल ६२७; भीमशंकर ५६०।

--(२) **दत्त आत्रेय**--आत्मज्ञान एवं शिष्यपरंपरा २६१; दत्त आश्रम २६१; दत्त जन्मकाल २६२; दत्त-मत प्रतिपादक ग्रंथ २६२; दत्त सांप्रदाय २६२।

—(३) **देवी** उपासना--तात्त्विक पार्श्वभूमि ३००; देवीपीठ ३०२-३०३; शक्तिपीठ ९३३;

—(४) **नृसिंह** उपासना—३७५-३७६; नृसिंह-स्थान ३७६।

—(५) **परशुराम**-परशुराम के स्थान ३९४; परशुराम-जयन्ति ३९४; परशुराम सांप्रदाय के ग्रंथ ३९४; परशुराम शक ३९४।

--(६) **राम दाशरथि**--रामभक्ति सांप्रदाय ७४०; राम भक्ति से प्रभावित उपनिषद ग्रंथ ७४०; रामभक्ति का विकास ७४०; सांप्रदायिक रामायण ग्रंथ ७४०; बौद्ध एवं जैन वाङ्मय में रामकथा ७४१; आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा ७४१।

—(७) **रुद्र-शिव**—शिवदेवता की उत्क्रान्ति ७६१; शिव के अवतार ७६३; शिव उपासना के सांप्रदाय ७६४-७६५; शिवरात्री ७६५; शिव उपासना के ग्रंथ ७६५ (ज्योतिर्लिंग देखिये)।

--(८) **वामन** ९८४;

--(९) **विष्णु**—विष्णु उपासना के तीन स्रोत ८८२; विष्णु देवता की उत्क्रान्ति ८८३; विष्णु की उपासना ८८४; विष्णु के अवतारों की नामावलि ८८४ (विष्णु के अवतार देखिये); विष्णु सांप्रदाय के ग्रंथ ८८६; विष्णु के तीर्थस्थान ८८७; कई प्रमुख वैष्णव सांप्रदाय ८८७।

--(१०) **वीरभद्र**—८२६;

—(११) **वेंकटेश उपासना**—९०४-९०५।

—(१२) **सूर्य**--सप्तसूर्य १०८१; सूर्य देवता की कल्पना का उद्‌गम १०८२; सूर्योपासना १०८२; सूर्य उपासना के ग्रंथ १०८२।

-(१३) **हनुमत्**-गुणवैशिष्ट्य १०९८; हनुमत् देवता का मूल स्रोत १०९८; हनुमत् देवता का सद्यःस्वरूप १०९८।

देवतासमूह—आदित्य (ग्यारह) ९८; तुषित २४८; पितर ४४९; प्रजापति (इक्कीस) ६२१; याम ६९३; यूथग ७१०; योगेश्वर ७१०; वशवर्तिन् ८०३; वसु (अष्ट) ८११-८१३; वातस्कंध ८२०; विश्वेदेव ८७७; साध्य १०३४-१०३५; सप्तर्षि १०१९; सूर्य (सप्त) १०८१।

देवासुर-संग्राम—द्वादश देवासुर संग्राम २९१; इंद्र-वृत्रयुद्ध ८९६-८९७; इंद्र-बलियुद्ध (समुद्रमंथन के पश्चात्) ४९८; स्कंदतारकासुर-युद्ध १०९१।

देश, लोकसमूह अथवा जातिसमूह—जो वैदिक, पाणिनिकालीन, सर्वसामान्य एवं सिकंदरकालीन, इन चार उपविभागों में विभाजित हैं:—

—(१) **पाणिनिकालीन लोकसमूह**—४०८;

—(२) **वैदिक लोकसमूह**—अनु २१; तृत्सु २४९; द्रुह्यु ३०६; पक्थ ३७०; पंचजन ३७८; पंचाल ३८०; पणि ३८१; पारावत ४१४; पूरु ४४४; बाह्लिक ५०२; भरत ५४०; मूजवन्त् ६५८; यक्षु ६७०; यति ६७१; यमक ६७७;

—यौगंधर ७१०; रथकार ७१७; वारशिख ७९८; विषाणिन् ८७८; वृचिवत् ८९६; वैकरण ९०८; वैतहव्य ९०९; शांडिल ८९५; शिबि ९६९;

—(३) **सिकंदरकालीन लोकसमूह**—अभिसार ११३२; अंबष्ठ ११३२; आग्नेय ११३२; आश्वकायन ११३३; आश्वायन ११३३; कठ ११३३; केकय ११३३; क्षत्रु (क्षुद्रक) ११३३; गांधार (पश्चिम) ११३४; गांधार (पूर्व) ११३४; ग्लुचुकायन ११३४; नुसा ११३४; पातानप्रस्थ ११३४; ब्राह्मणक ११३४; मद्र ११३४; मालव ११३४; मून्चिकर्ण ११३४; वसाति ११३५; शकस्थान ११३; शिबि ११३५; सुग्ध ११३८; सौभूति ११३८; हरउवती ११३८।

—(४) **सर्वसामान्य लोकसमूह**—अश्व (विश्वामित्र) ९७०; आंध्र (मनु) ६९५; आभीर (अष्टावक्र) ४०; उत्सवसंकेत ३३२; कांबोज (मनु) ६०५; किरात (विश्वामित्र) ९७०; कुरु (कुरु ३.) १५१; कोल्लगिरेय (अर्जुन) ३५; कोलि (गरुड) १८३; गज (इरावती २.) ७६; ग्रामणीय (नकुल) ३३२; चीन (मनु) ६११; जालंधरायण २३४;

—दस्यु (कायव्य) १३४; द्रविड (मनु) ६११; द्वारपाल (नकुल) ३३८; नाग (कायव्य) १३४; नैमिषीय ३७७; पक्थ (शिष्ट) ९७४; पटच्चर ३८१; पन्नग १४०; परशु ४०३; पह्लव (नकुल, विश्वामित्र) ३३८; ९७०; पांचाल ४०४; पारद ४१३; पुण्ड्र ९७०; पुलिंद ९७०; पौरवक ४५८; प्रियमेघ (कर्ण, नकुल, भीम) ११७; ३३८; ५६१;

—मग (निक्षुभ) ३६८; मगध ५९४; मत्तमयूर ५९९; मत्स्य ६००-६०१; मत्स्याहारिन् ३३८; मद्र ६०२; मलद ७२६; महीषक ६३४; माचेल्लक ६३४; मालव ६४९; मार्तिकावत ६४९; मावेल्लक ६५१; मेकल ६६१; मूतिब (विश्वामित्र) ९७०;

—यमक ६७७; यवन (नकुल; मनु, विश्वामित्र) ६८३; ३३८; ६०५; ९७०; याद्व ६९३; रामठ ७४२; रोमक ७७१; रोहीतक ७७५; लंपाक ७८४; ललाटाक्ष ७८५;

—वर्मक ८०३; वश ८०३; वाहीक ८३८; विदर्भ (४.) ८४३; विषाणिन् (शिष्ट) ९७४; वैकर्ण ९०८; व्याध (एकलव्य) १००; शबर ९४४; शिबि ९६९;

—शक (नकुल, भीम, मनु) ३३८; ५६१; ६०५; शबर (विश्वामित्र) ९७०; शिबि ९६९; शिव (शिष्ट ९७४) शूद्र (नकुल) ३३२; श्रोणिमत् (भीम) ५६१; सप्तसिंधु १०२०; सारस्वत १०३८; साल्व १०३८; सिंहल १०४०; सिंधु १०४२; सुमित्र १०६९; सोमधेय (भीम) ५६१; सौदन्ति (विश्वामित्र) ९७५;

—हारहूण (नकुल) ३३८; हैहय (और्व) १०४

धनुष—गांडीव (अर्जुन) ५७; माहेंद्र (युधिष्ठिर) ५७; विजय (रुक्मिन) ७५३; वायव्य (भीमसेन) ५६१।

धर्मशास्त्र—मनु स्वायंभुव के द्वारा धर्मशास्त्र का निर्माण ६१४; मानवधर्मशास्त्र का पुनर्संस्करण ६४०; मनुस्मृति की विषयानुक्रमणिका ६१४।

धर्मशास्त्रकार—अंगिरस् ११, उशनस् ९१; नारद ३६५; पराशर ३९७; पितामह ४२२; पुलस्त्य ४३८; पैठीनसि ४५५; प्रचेतस् ४६०; प्रजापति ४६५; बुध ५१२; भरद्वाज ५५१; भागुरि ५९५; मनु स्वायंभुव (मनुस्मृति) ६१३; यम वैवस्वत ६७७; याज्ञवल्क्य ६९३; शंख ९३६; व्यास ९१६; विश्वामित्र ८७६।

निःक्षत्रिय पृथ्वी (परशुराम-हैहय संग्राम) ३८९-३९२; हैहयों से शत्रुत्व ३८९; युद्ध ३९०; कार्तवीर्यवध ३९०; जमदग्निवध ३९०; हैहयविनाश ३९१; निःक्षत्रिय पृथ्वी ३९१; अश्वमेध यज्ञ ३९२; नया हत्याकांड ३९२; हत्याकांड से बचे हुए क्षत्रिय ३९२; परशुरामकथा का अन्वयार्थ ३९२;

—हत्याकांड की समाप्ति, एवं परशुराम के द्वारा शूर्पारक देश की स्थापना (३९२)।

नियोगज संतति—८४१; धृतराष्ट्र ३२५; पाण्डु ४१०; हीनकुलीनत्व (विदुर) ८४४।

निर्वाण--अश्वत्थ वृक्ष के नीचे निर्वाण (कृष्ण) १६२; कुशीनगर के शालवन में महापरिनिर्वाण (गौतम बुद्ध) ११२८; पृथ्वी के विवर में प्रवेश (सीता) १०४५; महाप्रस्थान के समय देहपतन (अर्जुन, द्रौपदी, भीमसेन, नकुल एवं सहदेव) ७०७; युधिष्ठिर के दृष्टि में दृष्टि मिला कर निर्वाण (विदुर) ८४६; युद्धभूमि पर मृत्यु (कर्ण, दुर्योधन, रावण) १२१; २८४; ७४७-७४८; योगिक मार्ग से देहत्याग (बलराम) ४९५; वायुलोक से सूर्यलोक में प्रवेश (शुक) ९७६; शरशय्या पर देहत्याग (भीष्म) ५७७; सदेह स्वर्गारोहण (सत्यव्रत त्रिशंकु, युधिष्ठिर) २५४-२५५; ७०७।

निवासस्थान--यम वैवस्वत ६७४; रावण दशग्रीव (लंका) ७३५; रुद्र-शिव ७५५; लक्ष्मी ७८२; लगध ७८४; वरुण ८००; विवस्वत् ८६२; विष्णु ८७९; वृत्र; ९६; श्वेतकेतु औद्दालकि ९९५; संजय १०८३।

पक्षी--अरुण ३३; गरुड १८२-१८५; जटायु २१८; तार्क्ष्य २४४; भारुंड (पक्षीसमूह) ५५७; संपाति १०२१।

पतंजलि का व्याकरणशास्त्र--३८३-३८५; शुद्ध उच्चारण का महत्त्व ३८४; पूर्वाचार्य ३८४; टीकाकार ३८४; महाभाष्य का पुनरुद्धार ३८५; अन्य ग्रन्थ ३८५।

पाणिनि का व्याकरणशास्त्र--४०६-४०९; पूर्वाचार्य ४०६; पाणिनि का समन्वयवाद; ४०८; लोकजीवन ४०८; पाणिनिकालीन भूगोल ४०८; सिक्के ४०९; परिमाणदर्शक शब्द ४०९;

--पाणिनि की अष्टाध्यायी ४०७; अष्टाध्यायी के वार्तिककार ४०९; अष्टाध्यायी के वृत्तिकार ४०९; पाणिनि के अन्य व्याकरणग्रन्थ ४०९।

पूर्वाचार्य--चाणक्य (कौटिलीय अर्थशास्त्र) ८८८; पतंजलि (व्याकरण महाभाष्य) ३८३; पाणिनि (अष्टाध्यायी) ४०६; ४०९; यास्क (निरुक्त) ६९४; लाट्यायन (श्रौतसूत्र) ७८६; वात्स्यायन (कामसूत्र) ८२१।

पृथ्वी का पहला राजा--पृथु वैन्य ४४९-४५१; पृथ्वीदोहन ४४९; पृथु की राजप्रतिज्ञा ४५१।
--२. यम वैवस्वत ६७४।

पृथ्वीदोहन--पृथु वैन्यकृत ४४९; पृथ्वीदोहन की अन्य कथाएँ ४५०।

पौराणिक काल--व्याख्या ४०१; कलियुग का प्रारंभ ११५२।

पौराणिक साहित्य--परिचय ७२५-९२७; पुराणों का आद्यप्रवर्तक (व्यास) ९२५; आद्यनिवेदक--रोमहर्षण सूत ७७२; विभिन्न प्रकार ९२५; चर्चित विषय ९२५; श्लोक-संख्या ९२५; वक्ता ९२५; महापुराणों की तालिका ९२६; उपपुराणों की नामावलि ९२६; देवतानुसार पृथक्करण ९२७; व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा ९२७; निर्दिष्ट राजवंश ११३९-११५६; निर्दिष्ट राजा ११६६; निर्दिष्ट ऋषिवंश ११६७।

पौराणिक नामों की व्युत्पत्ति-अगस्त्य४; अपोद (धौम्य) ३३३; आस्तीक ६५; गालव; (विश्वामित्र) ८७०; ८७१; वेंकटेश (वेंकटेश) ९७४।

पूषन् ४४८; प्रातिसुत्वन् ४७०; बृहस्पति ५१८; भृगु ५८५; मरुत् मार्तांड ६४९; मिथि जनक ६५३; मुद्रवाच् ६६०; मेदिनी ६५२; यायावर ६९४, रावण ७४३; वरुण ८०१; विवस्वत् ८६३; विष्णु ८८१; वृत्र ८९७; हनुमत् १०९९।

पौराणिक कथाओं का अन्वयार्थ-अहिल्या ५३; परशुराम जामदग्न्य ३९२; परिक्षित् ४०१; पितृकन्या ४२२; पृथु वैन्य ४४९; बलि वैरोचन ४९७; बाण ५०५; भगीरथ ५३५; मत्स्य ६००; वराह ७९९; वरुण ८००; वामन १२६; विवस्वत् ८६३; सत्यव्रत १०१२; सीता (भूमिजा) १०४३।

'प्रतिग्रह' का दोषारोप--(बुडिल आश्वतराश्वि) ५११।

प्रमुख यज्ञ--द्वादशवर्षीय सत्र (नैमिषारण्य) ७३३; ब्रह्मन् का यज्ञ (प्रभास क्षेत्र) ५२९; बलि वैरोचन का यज्ञ (भृगुकच्छ) ४९९; जनमेजय का सर्पसत्र (हस्तिनापुर) २१९-२२२।

प्राणिसृष्टि--कश्यप की संतान १२९; **पक्षी**--स्तंबमित्र शार्ङ्ग १०९२; **हाथी**-ऐरावत १०२;सुप्रतीक १०६४; **-गाय**--कामधेनु; (सुरभि) १०७२; **नाग**-धृतराष्ट्र ३२८; वासुकि ८३८।

प्राचीन कालगणनापद्धति--११६९-११७२; युगगणना पद्धति ११६९; ब्रह्मा का एक दिन ११६९; आधुनिक उपपत्ति ११६९; मन्वन्तर कालगणनापद्धति ११७०; कल्पों की नामावलि ११७१; सप्तर्षियुग की कल्पना ११७१।

ब्राह्मण जातिसमूह--जातूकर्ण्य ८०५; भृगु (भार्गवगण) ५८८; रथीतर ७१८; रहूगण ७२०; विभिंदुकीय ८५४; व्यश्व ९१४: हिरण्यकेशिन् १११२।

ब्राह्मण शाखा--काण्वायन ६६२; नरक ६४७; मैत्रेय ६६६।

बौद्धधर्म-गौतमबुद्ध का जीवनचरित्र ११२४; बुद्धों की नामावलि ११२४; प्रमुख बौद्ध संप्रदाय ११२८; तत्त्वज्ञान ११२८; बौद्ध धर्म के प्रसारक ११२९; बौद्ध धर्म के प्रमुख तीर्थस्थान ११२९; बौद्धधर्म ग्रन्थ-त्रिपिटक ११२४।

भारतीय युद्ध--५६६-६७०; ७०१ ७०६; कृष्ण-दौत्य ७०१; पांडव पक्ष के देश ७०१; कौरवपक्ष के देश ७०२; कौरव एवं पांडवसेना का बलाबल ५७५-५७६; सांख्यिक बल ७०३; युद्धशिबिर ७०३; सेनाप्रमुख एवं सेनापति ७०३; युद्ध का प्रारंभ ७०४; प्रथम दिन से अठारहवें दिन तक का युद्धवृत्तांत ५६६-५७०; युद्ध से बचे हुए वीर ७०५।

भौगोलिक स्थान--जिनमें निम्नलिखित विभाग प्रमुख है :--

--(१) द्वीप--पृथ्वी के सात द्वीप, एवं उनका संभाव्य आधुनिकस्थान १०९६; सागरोपद्वीप (सगर) १००२;

--(२) वर्ष--जंबूद्वीप के सात वर्ष (इलावृत; रम्यक हिरण्य; कुरु, भद्राश्व, किंपुरुष, नाभि) १०९६;

--(३) देश-(देश, लोकसमूह, एवं गणराज्य देखिये)।

--(४) नगर--मथुरा-९४२; लंका-७३५; वैजयंत-३६९; वैशाली ८६४; श्रावस्ति ९९०; सांची १००१।

--(५) पर्वत--गृध्रकूट ५१७; हिमवत् १११०।

मन्वंतर-मानव जाति का पिता-मनु आदिपुरुष ६०५; मन्वंतरों का निर्माण ६८६१; चौदह मन्वंतर ६०६; पाठभेद-६०७; विभिन्न मन्वंतरों के मनु, ऋषि, इंद्र आदि की जानकारी (६०७-६१०)।

मंत्र--अश्लील (अभ्यग्नि ऐतशायन) २७; अष्टाक्षर (जय-विजय) २२७; उत्कर्ष (वसिष्ठ वैडव) ८१०; कन्याप्राप्ति (श्राद्धदेव) ९८९; गर्भाधान (आत्रेय) ५७;

--तीन अक्षरी (सुवर्ण २.) १०७५; दीर्घायुष्य (वत्सप्रि भालंदन) ७९४; पठण (औपमन्यव) १०४; पारीक्षित (परीक्षित्) ३९९;

--भूतखेत (कश्यप) १३१; भैरव (भैरव १.) ५९१; मोज (प्रगाथ) ४५९; (काण्व) १३१; मतभेद (भस्मासुर) ५५४; महामृत्युंजय (१ वसिष्ठ) ८०६; राम (वाल्मीकि) ८३३; वाग्भव (औत्तम; चाक्षुष) १०३; २०८;

--शांति (उपरि बभ्रव; कांकायन; कौरुपथि; जाटिकायन) ८८; १३१; १६९; २३२; शिव (दाशार्ह) २७०; शिवपंचाक्षर (धुंधमूक) ३२४; शिवपडक्षर (धुंधमूक) ३२४; पडक्षर (जमदग्नि) ३२३; संजीवनी (उशनस्; कच भृगु २.) ५८५; सामर्थ्य (परुच्छेद दैवोदासि) ४०२।

महाभारत--प्रणयन (व्यास, वैशंपायन; सौति) ९२७; ९१२; १०८८; महाभारत के पर्व एवं उपपर्व ९२८; व्यास की महाभारतशिष्यपरंपरा ९२९; महाभारत का खिलपर्व (हरिवंश) ९२८;

--प्रमुख उपपर्व--आस्तीकपर्व (वैशंपायन) ९१२; प्रजागरपर्व (विदुर) ८४५; मार्कंडेयसमस्यापर्व (मार्कंडेय) ६४८; शुकानुप्रश्न (शुक) ५७६।

मानव (मनुष्येतर) जातिसमूह--गंधर्व १८२; देव २९०-२९२; दैत्य ३०३; नाग ३५७-३५८; पिशाच ४२६-४२८; भूत ५८०; मरुत् ६२४; यक्ष ६६९; रक्षस् ७११-७१४; वानर ८२२-८२४; विद्याधर ८४९; वैताल ९०५; सर्प १२२४;

--मानवेतर वंश११५५।

मानस में प्राप्त चरित्रचित्रण--भरत दाशरथि ५४७; राम दाशरथि ७४०; रावण दाशग्रीव ७४८; लक्ष्मण ७४०; सीता १०४५; सुमित्रा १०६९; हनुमत् ११०२;

माहात्म्य--अन्नदान (रतिविदग्धा) ७१६; अरुणाचल (नंदिन्; पार्वती; वज्रांगद) ३४४; ४१५; ७९३; आकाशदीप (वालखिल्य) ८२९;

--एकादशी--अधिक माह की एकादशी (जयशर्मन्) २३८; कार्तिकी एकादशी (अंबरीष) २८; जया एकादशी (माल्यवत्; पुष्पदंती) ६५१; ४४२; पापमोचनी एकादशी (मेधाविन्) ६६३; रमा एकादशी (शोभन) ९८५; विजया एकादशी (बक दाल्भ्य) ४८८; सफला एकादशी (लुंपक) ७८७;

--कमल (लोमश, पुष्पवाहन) ४४२; ७८९; कार्तिक (देवशर्मन्) २९८; काशी (दमन) २६५; क्षीरकुण्ड (मुद्गल) ६५७;

--गंगामहात्म्य (पद्मावती) ३८७; मही ६३३; रत्नाकर ७१६; वसु (३६.) ८१६; सागर १००२; सत्यधर्मन् १००९;

--गया नदी (युगादिदेव) ६९५;

--**गीतामाहात्म्य**--कुशीबल १५४; खड्गधर १७७; चंद्रशर्मन् (२.) २०४; ज्ञानश्रुति २३७; दुःशासना (२.) २७७; देवशर्मन् (६.) २९८; धीरधी ३२३; पिंगल (६.) ४८८; बटु ४८८; माधव (६.) ६४१; मित्रवत् ६५३; शंकुकर्ण (९.) ९३५; सरभभेरुंड १०२३; सरो-

जवदना १०२४; सिद्धसमाधि १०४१; सुकर्मन् (१.) १०४६; सुनंद (२.) १०६०; सुशर्मन् (४.) १०७७;
—गोमाहात्म्य—(कल्माषपाद; च्यवन) १२५; २१५; गोदान (नचिकेतस्) ३४१;
—गौतमीमाहात्म्य (शूरसेन) ९८१; गौरीव्रत (इंद्राणी) ७६; चिताभस्ममाहात्म्य (शबर २.) ९४४;
—तुलसीमाहात्म्य (धर्मदत्त १; पवित्र १; मक्षक; शबर ३.); ३१९; ४०४; ५३२; ९४४; त्रितकूप (त्रित) २५२; दीप (निष्ठुर १.) ३७२; दीपदान (बुध १०; वृद्ध गार्ग्य) ५१३; ८९९; देवी भागवत (लोमश १.) ७९०; नदी (गौतम) १८५; पितापितृमाहात्म्य (नरोत्तम) ३४९; पातिव्रत्य (इंद्र; कौशिक) ७३; १७०; पादत्राण (शंख २.) ९३७; प्रयाग (मार्कंडेय) ६४८; ब्राह्मण (इंद्र) ६८; ७३; भागवत (वज्रनाभ ४.) ७९३; भूमिदान (भद्रमति) ५३८; माहेश्वरव्रत (शारदा २.) ९६४; माघस्नान (कार्तवीर्य); भद्रक (हारीत ७.) १३५; ५३७; ११०९;
—रामनाममाहात्म्य— (अरिष्टनेमि; जीवंती) ३२; २३५; रुद्र (आलंबायन) ६३; वाराणसी तीर्थ (वंजुल) ७९३; वेतसी-वेत्रवती संगम (धरापाल) ३१७; वैशाख (कीर्तिमत्; रूपवती; शंख २.) १४३; ७६८; ९३७; व्याघ्रेश्वर (दुंदुभि निर्ह्राद) २७८;
—शमीमाहात्म्य (पिंगल ९.) ४१८; शिवभक्ति (भद्रसार ३.) ५३८; शिवसहस्रनाम (तंडि) २४०; संगमस्नान (विदुर) ८४६; सत्यनारायण (लीलावती) ७८७; सरस्वती बीजमंत्र (सत्यतपस्) १००८; साभ्रमती (गंगा; विकर्तन) १७९; ८३९; सूर्योपासना (कौथुमि; भद्रेश्वर) १६९; ५३०।
मुख—अश्वमुख (हयग्रीव) ११०३; चतुर्मुख (ब्रह्मन्) ५२७; वानरमुख (हनुमत्) १०१९; षण्मुख (स्कंद) १०९०;
मेगॅस्थिनिस कृत इंडिका—कौटिलीय अर्थशास्त्र से तुलना ८८८।
यज्ञविशेष— अग्निचयन (कालकंज, शांडिल्यायन, सीरध्वज) १३७,९६१,१०४६; अग्निष्टोम (इंद्रजित् भंगास्वन) ७३; ५३६; अंशुग्रह (राम औपतस्विनि) ७२४; अतिरात्र (मौवायन) ५९३; अभिचार (भद्रसेन आजातशत्रव) ५३९;
—अश्वमेध (अंबरीष, इंद्रद्युम्न, इंद्रजित्, जनमेजय पारिक्षित, त्रसदस्यु पौरुकुत्स, जनक दैवराति, नल, बलि वैरोचन, बाहु, भरत दौःषान्ति, मरुत्त आविक्षित, मित्रसह कल्माषपाद, युधिष्ठिर, राम दाशरथि, वसुदेव, विजिताश्व, शर्यात मानव, श्विक्न, सगर, सुदास पैजवन) ६१;७५; ७३; २२१; २५०; २९४; ३०४; ३५०; ४९९; ५०९; ५४७; ६२५; १२४; ७०७; ७३६; ८४२; ९५०;९९९; १००१; १०५६; अश्वमेध यज्ञ का शास्त्रार्थ (मुंडिभ-औदन्य) ६५६; एकोनपंचाशद्रात्र याग (वसिष्ठ मैत्रा-वरुणि) ८०९; गोमेध (इंद्रजित्) ७३; गोवर्धन याग (इंद्र) १६;
—चतुरात्रयाग-(अत्रि जमदग्नि) १६; २२२; ज्योतिष्टोम याग-(अरुंधती, मेधातिथि) २०; ३४; ६६२; तृष्टोम क्षत्रधृति यज्ञ (वृद्धद्युम्न आभिप्रतारिण) ८९९; दाशरात्र याग- (उदंक शौल्बायन) ८३;
—सप्तरात्र याग-(कुसुरुबिंदु औद्दालकि) २५५; दाक्षायण याग-(देवभाग श्रौतर्ष, सहदेव सार्ञ्जय) २९३, १०२९; द्विरात्रयाग-(कपिवन भौवायन, चित्ररथ) ११५, २११; धनुर्याग-(कंस, कूट, चाणूर) १०७; २५५,२०९; नरमेध (शुनःशेप, सोमक साहदेव्य) ९७८; १०८६; नवमास यज्ञ (नवग्व) ३५५; नेत्रपाति यज्ञ (रजन कोणेय) ७१५; पंचरात्र याग (शौचेय सार्वसेनि) ९८५;
—पुत्रकामेष्टि यज्ञ (इल; जनक; दशरथ; दिवोदास) ७७; २२०; ७२६; २७२; बहुसुवर्णक यज्ञ (इंद्रजित्) ७३; माहेश्वर याग (इंद्रजित्) ७३।
—राजसूय यज्ञ (इंद्रजित्, कृष्ण, जैत्रायण सहोजित; मांधातृ, युधिष्ठिर, हरिश्चंद्र) ७३; १६१; २३५; ६४३; ६९७; २२२; वक्तृत्व याग (बबर प्रावाहणि) ४२९; वाजपेय यज्ञ (औपावि जानश्रुतेय; सीरध्वज) १०४; १०४६; विश्वजित् यज्ञ (बक दाल्भ्य; बलि वैरोचन; रघु) ४८७; ४९८; ७१४; वैष्णव यज्ञ (इंद्रजित्, मुद्गल) ७३; ६५७।
—शमनीचमेढ्र (कुशीतक सामश्रवस्) १५५; स्तोम (शुनस्कर्ण बाष्किह) ९७९; शांत्युदक (युवन् कौशिक) ७०९; सर्वमेध यज्ञ (विश्वकर्मन) ८६७; सप्तरात्रयाग (कुसुरुबिंद औद्दालकि, क्रतुजित जानकि) १५५; १७३; सोमयाग (वम्र, श्यापर्णा) ७९६; ९८७, सौत्रामणि (दुष्टरितु पौंस्यायन) २८७; संततिदायी यज्ञ (वीतहव्य श्रायस) ८९१)।
युद्ध—इंद्र-बलिसंग्राम (बलि वैरोचन) ४९८; तारका-सुरसंग्राम (स्कंद) १०९१; त्रिपुर संग्राम (त्रिपुर) २५२; दाशराज्ञयुद्ध (सुदास) १०५६;

—परशुराम-हैहय संग्राम ३९१-३९२ (निःक्षत्रिय पृथ्वी देखिये); बाणासुर संग्राम (बाण) ५०३; भारतीय युद्ध (भीमसेन; युधिष्ठिर) ५६६-५७०; ७०१-७०६; (भारतीय युद्ध देखिये); भूरिश्रवस्-सात्यकि युद्ध (भूरिश्रवस्) ५८३; मौसल युद्ध (कृष्ण; सांब) १६२; १०३६;

--राम-रावणयुद्ध (राम दाशरथि) ७३१-७३५; ७४७-७४८ (राम-रावण युद्ध देखिये) ।

युद्धवार्ताहर—संजय गावल्गणि १००४-१००५; युद्धवार्ता का कथन १००५; युद्धवार्ताहर संघ-वातिक ८२० ।

योद्धा—विभिन्न श्रेणि (अतिरथ; अर्धरथ; एकरथ; चक्ररक्षक; महारथ; रथ; रथमुख्य; रथयूथपयूथप; रथवर; रथसत्तम; रथिन्; रथोत्तम; रथोदार) ५७५; संशप्तक योद्धा (सुशर्मन्) १०७८ ।

राजसूय यज्ञकर्ता राजा— दो प्रमुख प्रकारः—(१) देवराजन्—जो उपाधि यह यज्ञ करनेवाले देवों के राजाओं को प्राप्त होती थी [कक्षीवत (काक्षीवत) दीर्घश्रवस्; पृथु; सिंधुक्षित] २९६; (२) मनुष्यराजन्—जो उपाधि यह यज्ञ करनेवाले मनुष्यों के राजाओं को प्राप्त होती थी (दैवोदास; वाध्र्यश्व; वैतहव्य) ।

राजनीतिशास्त्रज्ञ—मातंग ६३७; मनु प्राचेतस ६१०; विष्णुगुप्त चाणक्य ८८८-८८९; विष्णुगुप्त चाणक्य के पूर्वाचार्य ८८८-८८९; विश्ववेदिन् ८७० ;

राक्षससत्र—पराशरकृत ३९६;

रामरावणयुद्ध—७३१-७३५; ७४७-७४८; लंका पर आक्रमण ७३१; सेतुबंध ७३१; लंका का अवरोध ७३२; दूतप्रेषण ७३२; रावणसेना का वर्णन ७४७; प्रथम दिन से अंतिम दिन तक के युद्ध का वर्णन ७३२-७३४; रावणवध ७३४; राक्षस संग्राम का तिथिनिर्णय ७३५; ७३७-७३८ ।

रोगविशेष—अपस्मार (स्कंद) १०९२; कुष्ठरोग (घोषा, नंद, रजन कोणेय, विदारुण, सांब, सुयज्ञ, सोमकान्त, सोमनाथ) २००, ३४२, ७१५, ८४३, १०३६, १०७१, १०८६, १०८७; त्वक्रोग (देवापि आर्ष्टिषेण) ३००; राजयक्ष्मा (चंद्र, विचित्रवीर्य) २०२, ८४१; शीतज्वर (ज्वर) २३८ ।

वध—अपने ही शाप से मृत्यु (वृद्धक्षत्र) ८९९; अपने ही सर पर हाथ रख कर मृत्यु (भस्मासुर) ५५४; क्लेशदायक मृत्यु (बिंबिसार श्रेणिय) ११३०; वक्षःस्थल फोड़ कर मृत्यु (दुःशासन) २७७; शरीर के दो टुकडे हो कर मृत्यु (जरासंध) २३०; सामान्य श्वापद जैसा मृत्यु (कार्तवीर्य अर्जुन) ३९० ।

व्रत—अनशन (चित्रसेन) २१३; अशून्यशयन (दिव्यादेवी) २७३; उपवास (च्यवन) २१६;

--एकादशी-इंदिरा (इंद्रसेन) ७६; कमला (हरिमित्र) ११०५; त्रिस्पृशा (इंद्र; गंगा) ७१; १८०; पक्षवर्धिनी (ध्रुव १; वसिष्ठ); ३३६; ८१०; पापनाशिनी (ककुत्स्थ) १०८; योगिनी (हेममालिन्) १११४;

--गौरी (इंद्राणी; पार्वती) ६०६; ४१५; त्रिरात्र (सावित्री) १०४०; दमनक (कुशध्वज) १५२;

--द्वादशी (पुष्पवाहन; मुद्गल; मालिनी) ४४२; ६५७; ६५०; भीम (इंद्र) ६९;

--बाल (श्रीधर) ९९०; भीष्मपंचक (भृगु २०. वसिष्ठ) ५८७; ८१०; मूक (सोमश्रवस्) १०८७; राधाष्टमी (लीलावती ५.) ७८७; लक्ष्मीव्रत (श्यामबाला) ९८८; लिंगपूजा (धुंधुमूक) ३२४; सोमप्रदोष (सीमन्तिनी) १०४५;

वंश, जो राजवंश एवं ऋषियों के वंश, एवं मानवेतर वंश में विभाजित है :-

—(१) **राजवंश**—अजमीढ वंश ११४५; अनु वंश ११४५; अनेनस वंश ११४५; अंधक वंश ११४५; अमावसु वंश ११४५; आनव वंश ११४५; आंध्र वंश ११३; आयु वंश ६१; ११४५, इक्ष्वाकु वंश ११३९; उशीनर ११४६; उत्तानपाद ११५१; ऐल ११४६;

--करुष ११४६; काण्वायन ११५३; काश्य ११४६; कुकुर ११४६; कुरु ११४६; कुशांब ११४६; कृष्ण ११४६; क्रोष्टु ११४६; क्षत्रवृद्ध ११४६; चेदि (चैद्य) ११४७; जह्नु ११४७; ज्यामघ ११४७; तितिक्षु ११४७; तुर्वसु २४८; ११४७; द्रुह्यु ११४७; दिष्ट ११४०; द्विमीढ ११४७; नभग ११४२; नरिष्यंत ११४२; नृग ११४२; नंद ११५४; नाभि ११५१; निमि ११४१; नीप ११४८; नील ११४८;

--पुरूरवस् ११४८; पुरु ४४५; ११४८; प्रतिक्षत्र ११४९; प्रद्योत ११५४; प्रियव्रत ११५१; बालेय क्षत्रिय ११४९; बभ्रु ११४९; भजमान ११४९; भरत ५४८; ११४९; भोजवंश ५९१; ११४९; मगध ११४९; मनुवंश ६१२; मौर्य ११५४; यदु ६७३; ११४९; ययाति ११५०; रजि ११५०; रम्भ ११५१; वसुदेव ११५१; वासव ११५१; विदूरथ ११५१; विष्णु ११५१; वैशाल वंश ८६४; वृष्णि ९०३; ११५१; सहस्रजित् ११५१;

सात्वत ११५१; शर्याति ११४२; शिशुनाग ११५४; शुंग २१५५; हैहय ११५१।

--(२.) **ऋषिवंश**—अत्रिवंश १७;११६६; अंगिरस् वंश ११;११६५; काश्यपवंश १२९;११६६; पराशरवंश ३९८; भार्गववंश ५८८; वसिष्ठवंश ८०४;११६७; विश्वामित्रवंश ८७४।

--(३) **मानवेतर वंश**—प्रमुख मानवेतर वंश ११५५; --कश्यप वंश १२९-१३०; नागवंश ३५७; पितृवंश ४२२; पुलस्त्यवंश ४३६; पुलहवंश ४३८; भैरववंश ५९१; यक्षवंश ६६९; (मणिभद्र शाखा ५९७; मणिवर 'गुह्यक' शाखा ५९७); वानरवंश ८२३; हिरण्यकशिपुवंश ११११;

वानर— आदिमानव ७३५; राज्य एवं समाजव्यवस्था ८२२; वानरवंश ८२२; जैन ग्रंथों में ८२३।

वातिक—वृत्तनिवेदन एवं वृत्तप्रसारण करनेवाला एक लोकसमूह ८२०; संजय गावल्गणि १००४।

वाल्मीकि रामायण--रामायण की जन्मकथा ८३३; पौराणिक वाङ्मय की प्रस्थानत्रयी ८३४; व्यक्तिगुणों का आदर्श ८३४; महाभारत से तुलना ८३४; रामायण की श्रेष्ठता ८२४; रामायण की ऐतिहासिकता ८३५; आदिकाव्य ८३६; गेय महाकाव्य ८३६; आर्ष महाकाव्य ८३६; वाल्मीकि रामायण में प्राप्त भूगोलवर्णन ८३६; रामायण का रचनाकाल ८३६; महाभारत में प्राप्त रामायण के उद्धरण ८३७; वाल्मीकि रामायण के उपलब्ध संस्करण ८३७।

वास्तुशास्त्रज्ञ एवं शिल्पशास्त्रज्ञ--विश्वकर्मन् ८६६-८६७; के द्वारा निर्मित नगर ८६७; के द्वारानिर्मित अस्त्र ८६७; त्वष्टृ २५६; मय ६१८-६२०।

विद्याविशेष— अक्षहृदयविद्या (ऋतुपर्ण, नल, बृहदश्व, युधिष्ठिर) ९७; ३५२; ५१५; अग्निशिरास्त्र (अंगारपर्ण) ९; अध्यात्मविद्या (उद्दालक, उदंक शौल्बायन, धर्मारण्य) ८३; ८४; ३२२; अंतर्धानविद्या (बिभीषण) १७४; अन्नविद्या (नल);

--अश्वविद्या (ऋतुपर्ण; नकुल; नल) ९७; ३३९; अस्त्रविद्या (कृप, घटोत्कच, द्रोण, नकुल, शतानीक) १५७;१९९;३३८; ३३८;९४१; आत्मविद्या (कुशध्वज जनक, खांडिक्य कौनक) २१९;१७८;९४१; आयुर्वेद (इंदीवराक्ष) ६८; उत्खननविद्या (खनक) १७७;

--कर्ममार्ग (खांडिक्य) १७८; कामरुपीधरत्व (घटोत्कच, हनुमान) १९९,११००; गानविद्या (उत्तरा) ८२; गारुड (आकृति) ५५; गोरति (दीर्घतमस्) २७४ चाक्षुषी (अंगारपर्ण ९.); जलस्तंभनविद्या (दुर्योधन) २८४; देवहूति (दुर्वासस्) २८६; धनुर्वेद (युधिष्ठिर) ६९७; धनुष्य (धर्मव्याध, नहुष, युधिष्ठिर, सत्यध्रुति सौचित्य) ३२१,३५५,५७, १००९;

--पंचाक्षरी (दुरासद) २९८; पद्मिनी (स्वरोचिषू) १०९४; पर्वतस्तंभन (अगत्य) ४; पुष्पविद्या (उपरिचर वसु; नल) ८६, ३५२; प्रतिस्मृतिविद्या (व्यास) ९१८; प्रवर्ग्यविद्या (दधीचि) २६३; प्राणविद्या (आरुणेय, उपकौसल कामलायन, ब्रह्मदत्त चैकितानेय) ६२; ८५; ५२६; ब्रह्मविद्या (उद्दालक आरुणि; कबंधी कात्यायन; त्वष्टाधर; नारद; प्रतर्दन; बलराम; ब्रह्मन्; यदु; यम) ८४; ११५;२५७;३६०;४६६;४९३;५२६;१०३२;८९२; ब्राह्मणपरिमर १०५३; मंत्रतंत्र (अश्विनीसुत, धन्वन्तरि) मधुविद्या (दध्यञ्च) २६३; महामाया (शंबर) ९४६;

--यथेष्टगामित्व (हनुमत्) ११००; वारिविद्या (गर्ग) १८५; विषहारीविद्या (काश्यप) १०१; वैद्यकविद्या (पुनर्वसु आत्रेय; धन्वन्तरि) ३१५; ४३०; वैश्यविद्या (यति) ६७१;

--शांडिल्यविद्या (शांडिल्य) ९५९; शिल्पविद्या (त्वष्टृ) २५६; संजीवनी (कच; भृगु; शुक्र) ९७७; -सर्ववश्यता १०४६ ससर्परीविद्या (जमदग्नि; विश्वामित्र; शक्ति) २२२; ९३४; सामविद्या (चैकितानेय) २१५; सोमविद्या (नारद १; भीमवैदर्भ) ३६१; ५६०; स्थलमापनविद्या (स्थपति) १०९२; स्थापत्यविद्या (जनमेजय) २२१।

विवाह—आर्य एवं अनार्य (उपशनवी २) ८५; क्षत्रिय एवं अप्सरा (आग्नीध्र) ५५; क्षत्रिय एवं ऋक्ष (जांबवत् ३.) २३३; क्षत्रिय एवं गंधर्व (पुरूरवस्) ४३४; क्षत्रिय एवं देवता (तपती) २४१; क्षत्रिय एवं नाग (आर्यक; उलूपी) ६३; ९१; क्षत्रिय एवं पितर (दिलीप खट्वांग) १२७१; क्षत्रिय एवं ब्राह्मण (कच; गो २; देवयानी;) ११०; १९३; २९४; क्षत्रिय एवं पर्वत (गिरिका) १९०; क्षत्रिय एवं राक्षस (भीमसेन पाण्डव) ५६३; क्षत्रिय एवं शूद्र (चंद्रगुप्त) २०३; गंधर्व एवं राक्षस (सुकेश) १०४८;

--दानव एवं अप्सरा (मय) ६२०; देव एवं ग्वाला (सावित्री) १८८; देव एवं नाग (गुणकेशी) १९१; देव एवं पर्वत (गिरिका) १९०; देव एवं ब्राह्मण (उशनस्) ९१; देव एवं राक्षस (त्वष्टृ) २५६; नदी एवं अग्नि (गोपति ४.) १९४;

--पक्षी एवं ऋषि (तार्क्ष्य) २४४; ब्राह्मण एवं देव (ज्येष्ठा ३.) २६७; ब्राह्मण एवं देवता (दत्त) २६१; ब्राह्मण एवं नाग (आस्तीक) ६४; ब्राह्मण एवं पर्वत (जैगीषव्य) २३५; ब्राह्मण एवं मछुआ (गरुड) १८३-१८४; ब्राह्मण एवं शूद्र (गौतम) १९५; ब्राह्मण एवं सूत (सत्कर्मन्) १००६;

—मनुष्य एवं गंधर्व (रुचि २; शुक वैयासकि) ७५३; ८७५; मनुष्य एवं नदी (दधीच) २६३; मनुष्य एवं पितर (विरजा २; शुक वैयासकि; सुतपस्) ८७५; ९७५; १०५२; मनुष्य एवं पिशाच (षंड २.) ९३८; मनुष्य एवं राक्षस (शूर्पणखा) ९८१; मनुष्य एवं वानर (विरजा १.) ८५७; मनुष्य एवं सर्प (जनमेजय पारिक्षित; नर्मदा ३; श्रुतश्रवस् २२१; २४९; ९९२;

—राक्षस एवं ब्राह्मण (कैकसी) १६७; वानर एवं गंधर्व (नल ९.) २६१; वैश्य एवं शूद्र (श्रावण) ९८९।

विश्वरूपदर्शन—(भगवान् कृष्ण के द्वारा) १६३८; १. अक्रूर से; २. अर्जुन से; ३. उत्तंक ऋषि से; ४. दुर्योधन से; ५. भीष्म से; ६. यशोदा से)।

व्याकरणकार—अन्यतरेय २४; अग्निवेश्यायन ५५; आत्रेय ५७; आपिशालि ६०; उख्य ७९; उत्तमोत्तरीय ८२; औदुंबरायण १०४; औपमन्यव १०४; और्णवाभ १०४; कामायन, कांडायन, काण्व १३१; कात्यायन १३२; काशकृत्स्न १४१; काश्यप १४२; कुणरवाडव १४५; कृशाश्व-(स्वायव लातव्य) १५६; कौण्डरव्य १६८; कौंडिन्य १६८; क्रौष्टुकि १७४; गार्ग्य १८८; चर्मशिरस् २०८; जातूकर्ण्य २३२; दाल्भ्य २७०;

—पतंजलि ३८२-३८५; पतंजलि के पूर्वाचार्य ३८४; पाणिनि ४०५-४१०; पाणिनि के पूर्वाचार्य ४०६; पौष्करसादि; ४५९; प्लाक्षायण ४८५; प्लाक्षि ४८५; बाडभीकार (बाडबीकार) ५०२; भर्तृहरि ५५२; भागुरि ५५४; माचाकीय; रज्जुभार ७५६; रामकृष्ण ७४२; वरतंतु ७९७; वररुचि ७९७; वाडव ८१९; वात्सप्र २०; वाल्मीकि ८३१ वेदमित्र ९०६; व्याडि दाक्षायण ९१४;

--शाकटायन (उणादीसूत्रकर्ता) ९५३-९५४; शाकपूणि ९५३; शाकल्य ९५६; शांतनव ('फिट' सूत्रकार) ९६१; शैत्यायन ९८३; शौनक गृत्समद ९८५-९८७; स्फोटायन १०९३; स्थविर कौंडिन्य १०९२; स्थविर शाकल्य १०९२ हनुमत् (ग्यारहँवा व्याकरणकार) ११०२; हारीत ११०९।

वैदिक संहिता-वेदों का निर्माण ९८७; वैदिक साहित्य का अर्थागत्व (भरद्वाज); वेदसंरक्षणार्थ वेदविभाग (व्यास पाराशर्य) ९१९; वेदों का विभाजन ९२०; वैदिक संहिताओं का विशुद्ध स्वरूप ९२४; उपलब्ध वैदिक ग्रंथ ९२२; विनष्ट हुए ब्राह्मण ग्रंथ ९२४।

वैद्यकशास्त्रज्ञ--अश्विनीकुमार ४८; चरक २०६; जीवक ११२९; धन्वन्तरि ३१५-३१७; पतंजलि ३८५; पराशर ३९८; पालकाप्य (हस्त्यायुर्वेदतज्ञ) ४१६; पुनर्वसु आत्रेय ४३०; शालिहोत्र (पशुवैद्यकशास्त्रज्ञ) ९६५; सुश्रुत (शल्यचिकित्साशास्त्रज्ञ) १०७८।

वैदिक आचार्यपरंपरा—व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा (व्यास पाराशर्य) ९२०; व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा ९२३; व्यास की अथर्वशिष्यपरंपरा ९२४; व्यास की सामशिष्यपरंपरा ९२३; व्यासोत्तर वैदिक वाङ्मय का विकास ९२४।

वैद्यकशास्त्र से संबंधित देवता—अवध्यता का देवता (विष्णु) ८८१; गर्भवृद्धि का देवता (त्वष्टृ) २५६; देवों के धन्वंतरि (अश्विनीकुमार) ४८; मृत्यु का देवता (मृत्यु) ६६०; विषबाधा का निराकरण करनेवाली देवी (मनसा देवी) ६०४; अपत्यप्राप्ति (सिनीवाली) १०४१;

शक—(कालगणना)—परशुराम शक ३९४; ११७२; विक्रमसंवत् ११७२; कलिसंवत् (युधिष्ठिर शक, भारतीय युद्ध संवत्) ७०८; ११७२।

शत्रुत्व—इंद्र-मरुत्त ६२५; कौरव-पांडव ७०१-७०५; द्रोण- द्रुपद ३०८- ३०९; परशुराम- कार्तवीर्य अर्जुन ३९०-३९१; वसिष्ठ-विश्वामित्र ८०८; वालिन्-सुग्रीव ८३०।

शस्त्र--झाग एवं हिम (इंद्र) ६९; धनुष्य-बाण (मरुत्) ६२३; पाश (नरक) ३४७; फौलादी शक्ति (धृष्टकेतु) ३३१; मूसल (बलराम; जरासंध) ४९४; ५२९; वज्र (प्रजापति; इंद्र) ४६२; ६९-७०; वासवी शक्ति (घटोत्कच; कर्ण) १९९; १२०; सुदर्शनचक्र (कृष्ण; शाल्व; जलंधर) १६१; ९६६; २३१; हल (बलराम; त्रिजट) १४९४; २५१।

शाखाप्रवर्तक आचार्य—उख ७९; औदुंभारि १०४; कठ १११; कात्यायन १३२; कापेय १३३; कौंडिन्य १६८; कौथुम पाराशर्य १६९; कौशिक १७०; कौषीतकी १८१; खंडिक औद्धारि १७१; गोखल्य १९३; गोभिल १९४; गौतम१९५; चरक २०६; छगलिन् २१६; जैमिनी २३५; तलवकार २४२; तित्तिरि २४५; देवदर्श २९३; देवदत्त शठ २९३; द्राह्यायणि ३०५; पुरुषासक ४३३;

भाल्लवि ५५२; शार्दूल ९६५; (हिरण्यकेशिन्) खांडवीय ११११।

शिक्षाग्रंथ—अमरेश २७; आत्रेय; ५७; कात्यायन ३३; जयंत पाराशर्य २२७; नारद ३६६; पाणिनि ४१०; पाराशर ४१४; बाभ्रव्य पांचाल ५०६; मण्डूक (१.) ५९८; मल्ल गार्ग्य ६२७; माध्यंदिन (२.) ६४२; याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६९२; रामकृष्ण (१.) ७४२; शौनक १.९८७।

शिवावतार—चार ७६३; पाँच ७६३; दस ८६३; अठाईस ७६३-७६४; बारह ज्योतिर्लिंग २३७।

श्राद्धविधि—का प्रवर्तक (निमि; श्रीमत्) ९९०।

षोडश राजकीय—अंबरीष नाभाग २८; गय आमूर्तरयस १८२; दिलीप ऐलविल २७१; परशुराम जामदग्न्य ३८८; पृथु वैन्य ४४९; पौरव ४५८; भगीरथ ऐक्ष्वाक ५३४; भरत दौःषन्ति ५४५; मरुत्त आविक्षित ६२५; मांधातृ यौवनाश्व ६४३; ययाति नाहुष ३७७; रंतिदेव सांकृत्य ८१८; राम दाशरथि ७२५; शशबिंदु यादव ९५२; शिबि औशीनर ९६०; सुहोत्र वैतिथिन १०८१।

संवाद—इंद्र के संवाद (अंबरीष; अग्नि; गौतम; दिति; प्रतर्दन; प्रह्लाद; बृहस्पति; मातलि; मांधाता; विद्युत्प्रथ; शंबर; शुक; सुरार्थ;) १७२-७३; ६२४; ८४९; १०७२; कर्ण-शल्य संवाद ९५२;
—केशी-गौतम संवाद १११८; कौशिक-इक्ष्वाकु संवाद ६७; जनमेजय-अग्नि संवाद २२; दुर्योधन के संवाद (कृष्ण; भीष्म) २८४; धौम्य-युधिष्ठिर संवाद ३३४;
—बक दाल्भ्य के संवाद (अर्जुन; इंद्र) ४८७-४८८; बलि के संवाद (इंद्र; प्रह्लाद; शुक्र) ५००; बाध्व-बाष्कलि संवाद (बाध्व २.) ५०६; बृहस्पति के संवाद (इंद्र; उपरिचर वसु; मांधातृ; युधिष्ठिर; वसुमनस्); ५२०-५२१; ६४४; भरत-रहूगण संवाद ५४४; भीम-कृष्ण संवाद ५६६; भीष्म-कर्ण संवाद ५७६; मांडव्य के संवाद (यम; विदेहराज जनक) ३३६;
—मार्कंडेय-युधिष्ठिर संवाद (मार्कंडेयसमस्या पर्व) ६४; मुचुकुंद के संवाद (परशुराम; वैश्रवण) ६५५; ६५४; मैत्रेयी-याज्ञवल्क्य संवाद ६६६; यम के संवाद (नचिकेत; यमी) ६७६; ६७७;
—याज्ञवल्क्य के संवाद (अश्वल; उदंक शौल्बायन; उद्दालक आरुणि; उषस्त चाक्रायण; कहोल कौषीतकेय; गर्दभीविपीत भारद्वाज; गार्गी वाचक्नवी; जारत्कारव आर्तभाग; बर्कु वार्ष्ण; भुज्यु लाह्यायनि; विदग्ध शाकल्य; सत्यकाम जाबाल) ६८८-६८९;
—रावण-बिभीषण संवाद ७४७; रावण-सीता संवाद ७४६;
—लक्ष्मी के संवाद (इंद्र; प्रह्लाद; रुक्मिणी) ७८२;
—वसिष्ठ-कराल जनक संवाद ११७; वसुमनस् कौसल्य के संवाद (बृहस्पति; वामदेव) ८१७; विदुला-पुत्रसंवाद ८४७; विदुर के संवाद (धृतराष्ट्र; मैत्रेय) ८४५; ६६५; विरुप के संवाद (इक्ष्वाकु; विकृत) ८६०; विश्वावसु-याज्ञवल्क्य संवाद ८७७; वीरद्युम्न-तनुविप्र संवाद ८९२; वृत्र-उशनस् संवाद ८९८; व्यास के संवाद (मैत्रेय; शुक) ६६५;
—शिशुपाल-कृष्ण संवाद ९७३; सत्यकाम-उपकोसल संवाद १००७; सनत्कुमार-नारद संवाद १०१६; सुलभा-जनक संवाद।

सती—माद्री ६४०; रुक्मिणी ७५२; वृंदा ८९९; वसुदेव (पत्नियाँ) ८१५; वेदवती ९०६।

सत्यनिष्ठा—कौशिक ३.१७०; नाभाग ३६०; प्रह्लाद ४७९; सत्यकाम जाबाल १००८।

सत्र—(अच्युत; अंगिरस; कुण्डपायिन्; गौश्रायणि दार्तेय; नवक; नाभाग; सरमा देवशुनी) १३;५६;१४५; १९७;२७०;३५५;३६०;१०२५;
—(१) दीर्घसत्र (जनमेजय पारिक्षित; श्रुतश्रवस्) २२१; ९९२;
—(२) प्रथम द्वादशवर्षीय सत्र (अंतिनार, पुरूरवस्; रोमहर्षण; बक दाल्भ्य; सौति) २३; ४३५; ७७३; ४८७; १०८८;
—(३) ब्रह्मसत्र (नारद) ३६५;
—(४) राक्षससत्र (पराशर) ३९६;
—(५) शतसंवत्सरात्मक (श्वेतकि) ९९५;
—(६) सर्पसत्र (प्रथम) (ऐरावत; चक्र) १०२; २००; नाग ३५८;
—(७) सर्पसत्र (द्वितीय) (जनमेजय कौतस्त; चंद्रभार्गव च्यावन; मुंडवेदांग; मुद्गर; शांखायन; शिख; श्रुतश्रवस्) २२०; २०१; ६५६; ६५७; ९५८; ९६७; ९९२; सर्पसत्र के ऋत्विज २२०-२२२;
—(८) सहस्रवार्षिक सत्र (गृत्समद; निमि) १९२; ३६९।

सप्त चिरंजीव—अश्वत्थामन् ४५; कृपाचार्य १५८; ३९० परशुराम जामदग्न्य ५; बलि वैरोचन ५७०; व्यास पाराशर्य ९१८; विभीषण ८५४; हनुमत् ११०२।

सप्तद्वीपा -पृथ्वी—पृथ्वी के सात द्वीप जम्बुद्वीप, पुष्करद्वीप, शाल्मलिद्वीप, कुशद्वीप, क्रौंचद्वीप, शाकद्वीप,

पुष्करद्वीप (स्वायंभुव) १०९६; इन द्वीपों का संभाव्य आधुनिक स्थान (स्वायंभुव) १०९६।

समुद्र--लौहित्य (सलिलार्णव) ७०७।

समुद्रमंथन से निकले हुए रत्न--४९८।

सर्पसत्र--जनमेजय सर्पसत्र (प्रथम) २२१; जनमेजय सर्पसत्र (द्वितीय) २२१; मरुत्त सर्पसत्र (मरुत्त) ६२६; भामिनी ५५६।

सात्वत धर्म--१०३४; सात्वत धर्म का उपदेश १०१७;

साम--वत्सप्रि भालंदन ७९४;

--सामगायन से ईप्सित वस्तुओं का लाभ-गाय (मेधातिथि काण्व; स्वर्ग (शंमद) ९४७; वैभव की प्राप्ति (गोतम) १९३; दिवोदास अतिथिग्व २०३; सिंधुक्षित् १०४२।

स्वयंवर--कमद्यु (विमद) ८५६; कुन्ती १४६; केशिनी १६६; दमयन्ती २१५; द्रौपदी ३१०; मान्यवती ६४५; वैशालिनी ९१५; शशिकला (सुदर्शन १०.) १०५५; सीता १०४४।

सायणकृत वैदिक अर्थ--नगरिन् जानश्रुतेय ३४०; नग्नजित् गांधार ३४०; नमी साप्य ३४५; पणि ३८१।

सावित्राग्नि--देवभाग्य श्रौतर्ष २९३; प्लक्ष दय्यांपति ४८५।

सिकंदरकालीन भारतवर्ष के नगर-- अग्रोदक ११३२; मस्सग ११३३; सांगल (सांकल) ११३३; सिकंदरिया ११३५; पुष्करावती ११३४; पातानप्रस्थ (११३४); रोरुक (११३५)।

--नदियाँ-वितस्ता (जेहलम) ११३३; व्यास (विआस) ११३३; गौरी ११३४; असिक्नी ११३४; इरावती ११३४; सेतुमंत (आधु. सेलमंद) ११३५।

सुराज्य--अश्वपति कैकय ४७; कार्तवीर्य १३७; जनमेजय १. २२१; जालंदर २३४।

सूत--पुराणकथन एवं निवेदन का कार्य करनेवाला एक लोकसमूह ७७४; रोमहर्षण सूत ७७२; सौति रोमहर्षण-सुत १०८७;

सेनागणनापद्धति--भारतीय युद्धकालीन (अक्षौहिणी, गण, गुल्म, पत्ती, सेनामुख, वाहिनी, पृतना, चमू, आनीकिनी) ७०३।

सौर देवता--आदित्य ५८; पूषन् ४४६; भग ५३२; विवस्वत् ८६२; विष्णु ८७९; सवितृ १०२६; सूर्य १०८१।

स्वरूपवर्णन--दुर्वासस् २२६; धन्वंतरि ३१५; नारद ३६१; भूत ५२०; यक्ष ६६९; युधिष्ठिर ६९६; रक्षस् ७१२; राम दाशरथि ७२६; रावण दशग्रीव ७४३; रुद्र-शिव ७५५; लक्ष्मी ७८१; वरुण ७९९; वायु ८२६; वालखिल्य ८२९; विश्वकर्मन ८६६; विश्वरूप त्रिशिरस् त्वाष्ट्र ८६९; विष्णु ८७९; वृत्र ८९६; सवितृ १०२६; सात्यकि (युयुधान) १०३२; सीता वैदेही १०४२; हयग्रीव ११०३।

सृष्टि का निर्माण--मैथुनज सृष्टि का प्रारंभ (दक्ष प्राचेतस प्रजापति) २५९; प्रजापति ४६२-४६३; ब्रह्मन्-५२८-५२९।

सृष्टिप्रलय--मनु वैवस्वतकालीन सृष्टिप्रलय ६११; विभिन्न साहित्यों में जलप्लावनकथा ६११; प्रलयोत्तर मानव समाज का आदि पुरुष ६११; कालनिर्णय ६१२ हिंदी साहित्य में जलप्लावनकथा ६१२।

हीनकुलीनत्व--कर्ण ११८; विदुर ८४४।

शुद्धिपत्र

पृष्ठ एवं चरित्र		अशुद्ध	शुद्ध
३	अगस्त्य	रेत कमल पर स्खलित हुआ	रेत कुंभ में स्खलित हुआ
२४	अंधीगु श्यावाश्वि	अंधिगु श्यावाश्व	अंधीगु श्यावाश्वि
२६	अभिमति	(भा. ६.११)	(भा. ६.६.११)
५७	आत्मदेव	नाम धुंधुकारी रखा	नाम धुंधुकारि रखा
८०	उच्चैःश्रवस कौपयेय	(चै. उ. ब्रा. ३.२९.१-३)	(जै. उ. ब्रा. ३.२९.१-३)
९४	ऊर्जा	(भा. ४.१.३८)	(भा. ४.१.४०-४१)
९६	ऋचीक	(ह. वं. ११.७)	(ह. वं. १.२७)
१०१	ऐतश	संभवतः एतश की होगी	संभवतः ऐतश की होगी
१११	कठ	२. रेवती देखिये।	२. रेवती २. देखिये।
१३४	कामकटंकटा	कामकंटका	कामकटंकटा
१४१	काशिराज २.	(म. आ. ६१-६७)	(म. आ. ६१.६७)
१४५	कुणिगर्ग	गांधर्वपुत्र शुंगवत् के साथ	गालवपुत्र शुंगवत् के साथ
१५१	कुंभकर्ण	(म. व. २७१-१७)	(म. व. २७१. १७)
१५६	कृतवर्मन्	(म. मौ. ३)	(म. मौ. ४.२७)
१६३	कृष्ण	युद्धिष्ठिर	युधिष्ठिर
१६८	कौंडरव्य	कौंटरव्य	कौडरव्य
१९४	गोलभ	(वा. रा. कि. २२.२७-३७)	(वा. रा. कि. २२.२७)
२०१	चक्रवर्तिन्	(म. शां. २८)	(म. शां. २९)
२०३	चंद्रगिरि	(सू. उ.)	(सू. इ.)
२०७	चरक ३.	पृषदाच्य में प्रथम अभिधार	पृषदाज्य में प्रथम अभिधार
२४९	तैटीकि	तैटिकि	तैटीकि
२४९	तोंडमान	(भीम २३ देखिये)	(भीम २४ देखिये)
२७८	दुंदुभि	(म. व. २५.९.१०)	(म. व. २६०.१०)
२९९	देवसावर्णि	(भा. ८.१३;)	(भा. ८.१३; ३०)
३०५	द्रविडा	(वायु. १.२४.१६)	(वायु. ८६.१६)
३२२	धर्मसूत्र	(धर्म १३. देखिये)	(धर्म १६. देखिये)
३२४	धूमोर्णा	(म. अनु. २७१.११. कुं.)	(म. अनु. १६५.११)
३२८	धृतराष्ट्र	(म. आ. १०७.२-१४)	(म. आ. १०८.२-१५)
३६७	निकुंभ	(वायु. ९०.२७.५२)	(वायु. ९२.२७-५२)
३७१	निर्वृति	निर्वृत्ति	निर्वृति
३७६	नैध्रुव	नैधुव	नैध्रुव
३७८	पंचचूडा	मीष्म ने युधिष्ठिर	भीष्म ने युधिष्ठिर
३९२	परशुराम जामदग्न्य	यज्ञ के लिए एकत्रिय	यज्ञ के लिए एकत्रित
३९३	परशुराम जामदग्न्य	अंत में परशुरान ने	अंत में परशुराम ने
३९६	पराशर	पराशर के नये सत्र से	पराशर के नये सत्र को

शुद्धिपत्र

पृष्ठ एवं चरित्र		अशुद्ध	शुद्ध
४००	परिक्षित्	महाभातर	महाभारत
४१०	पाण्डु	जन्मतः पाण्डुरोग से पीड़ित	जन्मतः पण्डुरोग से पीड़ित
४२८	पीवरी	अग्निष्वान्त पितरों की कन्या	अग्निष्वात्त पितरों की कन्या
४२९	पुत्र	स्वारोचिष मनु के	स्वायंभुव मनु के
४३३	पुरुमीढ्ल सौहोत्र	पुरुमिहळ	पुरुमीहळ
४३७	पुलस्त्य	सामूहिकक नाम से	सामूहिक नाम से
४४१	पुष्कल	अश्वमेधांयज्ञ का	अश्वमेधयज्ञ का
४५८	पौरव ३.	(म. द्रो. १७१-६४)	(म. द्रो. १७१.६४)
५२७	ब्रह्मन्	ब्रह्मा से भी आयू में	ब्रह्मा से भी आयु में
५३३	भगदत्त	उसका एवं उसके सात पुत्रों को	उसको एवं उसके सात पुत्रों को
५३९	भद्रा काक्षीवती	(म. आ. १२०.३३-३६)	(म. आ. ११२.३३)
५५०	भरद्वाज	राज्याधिकारी ना कर	राज्याधिकारी बना कर
५५८	भार्गायण	(मुल्वन् कैरिशीय भार्गायण)	(मुत्वन् कैरिशिय भार्गायण)
५७०	भीमसेन	अश्वत्थामा वध	अश्वत्थामा मणिहरण
६००	मत्स्य	मकर दैत्य ने	शंख दैत्य ने
६०४	मधुच्छंदस् वैश्वामित्र	(प्रातःकालिन स्तुतिस्तोत्र)	(प्रातःकालीन स्तुतिस्तोत्र)
६१७	मन्दपाल	लपिता नामावाली दक्षिणी	लपिता नामवाली पक्षिणी
६३२	महिषासुर	शाश्वतस्थान किया। प्राप्त	शाश्वतस्थान प्राप्त किया।
७१३	रक्षस्	विरोचन दैत्य आँखों में	विरोचन दैत्य आँखों में
७२६	राम दाशरथि	पुत्रकामेष्टी यज्ञ कराया	पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराया
७३०	राम दाशरथि	शूर्पणखावध	शूर्पणखाविरूपत्व
७३१	राम दाशरथि	मसीता को ढूँढने के लिए	सीता को ढूँढने के लिए
८१९	वातरशन	(ऋ. १०.१३३.१०२;	(ऋ. १०.१३६.२;
८४१	विचित्रवीर्य	भीष्म ने बिका एवं अंबालिका	भीष्म ने अंबिका एवं अंबालिका
८५४-८५५	विभीषण	इसीने ही किया।	इसने ही किया था।
८६५	विशाल ५.	जो परिक्षित् राजा का	जो अविक्षित् राजा का
८८१	विष्णु	विष्णु कृष्यते	विष्णुकृष्यते
८९७	वृत्र	(ऋक् यजुः। साम	(ऋक, यजुः, साम)
९२९	व्यास पाराशर्य	उर्ध्वबाहुर्विरौम्येष	ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष
१००१	सगर	इसे सगर विषयुक्त नाम	इसे सगर (विषयुक्त) नाम
१००५	संज्ञा	छाया को यम से	छाया को सूर्य से
१००५	संज्ञा	यम को छाया का	सूर्य को छाया का
१०६२	सुंदर शांतिकर्ण	सुंदर शांतिकर्ण	सुंदर शांतिकर्ण
१०८६	सोमदत्त	भूरिश्रवस् का अत्यंत निर्घृण वध किया	भूरिश्रवस् के हाथ काट डाले
११२४	गौतम बुद्ध	निम्नलिखित बुद्ध विपश्य से	निम्नलिखित बुद्ध विपश्य से
१५२८	गौतम बुद्ध	प्रमुक बौद्ध सांप्रदाय	प्रमुख बौद्ध सांप्रदाय